आधुनिक

कवियों

शब्द-प्रयोग

डा० भावुक

प्रकाशक :
सरोजबाला c/o डॉ० कृष्ण भावुक,
प्राध्यापक हिंदी विभाग,
डी. ए. वी. कॉलेज, जालन्धर शहर (पंजाब)

प्रथम संस्करण, सन् १९७०

मूल्य ३५ रुपये

शब्द प्रकाशन (रजि०)
पंजीकृत संस्था न० २२२१,
सन् १९६८

मुद्रक :
श्री सुरेंद्र कुमार, व्यवस्थापक
हिंदभूमि प्रिंटिंग प्रेस,
मलकां चौक, जालन्धर शहर

इस पुस्तक का प्राप्ति-स्थान :

शब्द प्रकाशन c/o भारतीय
संस्कृत भवन, पुस्तक-विक्रेता,

माई हीरां गेट,
जालधर शहर (पंजाब)

समर्पण

दर्द के देवता

आचार्य श्री हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

व्यंग्य के प्रवक्ता

डॉ० इन्द्रनाथ मदान

और

आधुनिक कला, संस्कृति, समाजशास्त्र और सौंदर्यशास्त्र के व्याख्याता

डॉ० रमेश कुन्तल मेघ

के नाम—

किसी को
शब्द हैं सीपियां
लाखों का उलट-फेर
कभी एक मोती मिल जाएगा

—अज्ञेय, संग्रह ‘ इन्द्रधनु रौंदे हुए ये ’,
कविता ‘ शब्द ’, पृष्ठ ८४

‘ सबद ’ की चोट लगी मोरे मन में
बेधि गयो तन सारा

— स्वर्गीय आचार्य रामचंद्र वर्म्मा, पुस्तक
‘ शब्द और अर्थ ’, आरंभ

" कविता की भाषा को कुछ स्वतन्त्रता है, व्याकरण का अंकुश वहां नहीं है — यह भ्रमात्मक धारणा है। भाषा एक है, चाहे उस का गद्य में प्रयोग हो, पद्य में हो, काव्यात्मक गद्य-पद्य में हो, या दर्शन-विज्ञान में हो। व्याकरण का नियन्त्रण सर्वत्र समान है और व्याकरण है भाषा की स्वाभाविक गति का प्रतिपादन। भाषा अपनी गति-प्रकृति से चले, इस का ध्यान तो कवि को सब से ज्यादा होना चाहिए। वही तो भाषा का 'सम्यक् ज्ञाता' और 'सुप्रयोक्ता' है।"

— पं० किशोरीदास वाजपेयी, हिंदी शब्दानुशासन, पृष्ठ ३७०-३७१

—o—

" व्याकरण तो शब्द-प्रयोग पर विचार करता है और प्रयोगकृत शब्दों के रूपान्तर पर। ... यह तो शब्दों की प्रयोग-विधि समझाता है —"

— पुस्तक वही, पृष्ठ ४५-४६

अहं च भाष्यकारश्च कुशाग्रैकधिया बुधौ
नैव शब्दाम्बुधेः पार किमन्ये लघुबुद्धयः

— आचार्य दुर्गस्वामी

※

नये नये शब्दों वाक्यों की गुह्य शृंखला
बांध रही मानव मस्तक को ......

— उदयशंकर भट्ट, संग्रह 'इत्यादि', कविता 'युग-पुरुष से' २७

※

नये मूल्यों का नया युग :
है नहीं आस्था इमें अब
कर्म-विरहित शून्य शब्दों पर जरा भी
चाहना यह है कि शब्दों में निरन्तर कर्म बोले प्राण बोले

— जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द', संग्रह 'भूमि की अनुभूति', कविता दुर्भिक्ष, ११३

※

यह छोटा सा शब्द
इसी में रूप-विधान सृजन का,

— केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', संग्रह 'बैठो मेरे पास', ४९

प० नेहरू का शब्द-प्रेम

" मै शब्दो और वाक्यों का प्रेमी हू और उनका सम्यक् प्रयोग करने की चेष्टा किया करता हूं । मेरे जो भी विचार है उन्हें शब्दो के द्वारा मै स्पष्टता और सुश्रृंखलता के साथ व्यक्त करता रहना चाहता हूं "

—साप्ताहिक हिंदुस्तान, २२ मई सन् १९६६, लेख ' लेखक नेहरू', श्री ए० रंगनाथन

☆

" Oh, that my words were colours ! but their tints
May serve perhaps as outlines or slight hints.

★☆

—Byron.

" A history of language is writen not from the logician's but from the poet's point of view. "

— Owen Barfield.

★★★

" भाषा एक नगर के समान है जिसको बनाने के लिए हर-एक नागरिक अपना-अपना पत्थर लगाता है "

— एमर्सन उद्धृत ' हिंदी शब्द रचना ', माईदयाल जैन, २८

संकेताक्षर (शब्द-संक्षेप)

अ०	अकर्मक	फ़ा०	फ़ारसी
अ० क्रि०	अकर्मक क्रिया	बहु०	बहुवचन
अर०	अरबी भाषा	बहु० समास	बहुव्रीहि समास
उद० या उदा०	उदाहरण	भाव०	भाववाचक
एक०	एकवचन	भू० क्रि०	भूतकालिक क्रिया
क्रि०	क्रिया	मि०	मिस्टर
क्रि० वि०	क्रिया विशेषण	वि०	विशेषण
डॉ०	डॉक्टर	व्रज०	व्रजभाषा
तु०	तुरकी भाषा	सं०	संस्कृत
तुल०	तुलनीय	(जब साथ पुं० या स्त्री० न हो)	
दे०	देखिये	सं० पुं०	संज्ञा पुंलिंग
देश०	देशज	सं० स्त्री०	संज्ञा स्त्रीलिंग
द्व० स०	द्वन्द्व समास	स० या सक०	सकर्मक
नपुं०	नपुंसक लिंग	स० क्रि०	सकर्मक क्रिया
पं०	पंडित	सं० त०	सम्बंध तत्पुरुष समास
पा०	पाली भाषा	सूर०	सूरसागर
पुं०	पुंलिंग	स्त्री०	स्त्रीलिंग
प्र०	प्रत्यय	हिं०	हिंदी
प्रा०	प्राकृत		

ग्रंथों के शब्द-संक्षेप

अष्टा० अष्टाध्यायी, ऋग्० ऋग्वेद, वाक्य० वाक्यपदीय

पृष्ठभूमि

यह शोध-प्रबन्ध मेरे आठ वर्षों के कठोर परिश्रम का प्रतिफल है। मैं ने सन् १९६१ में शब्दों को लिपि-क्रमानुसार एकत्र करना आरंभ किया था। यही कारण है कि इस ग्रंथ में सन् १९६० तक के कविता-संग्रहों को ही समाविष्ट किया जा सका है।

इस शोध-ग्रंथ को स्वयं प्रकाशित करवाने में मैं ने लगभग २० हजार रुपया व्यय किया है। इस में पुस्तकों पर व्यय होने वाली राशि भी सम्मिलित है। एक प्रकार से यह मेरे अध्यापकीय जीवन की कुल जमा-पूंजी थी जो इस शोध-कार्य में होम हो चुकी है। मेरे एक मित्र ने लगभग इतने ही रुपयों में एक अच्छी-खासी कोठी खड़ी कर ली है। एक दूसरे मित्र ने इतना ही रुपया एक चुनाव में लगा दिया था। सोचता हूं सब के अपने अपने जीवन-मूल्य हैं। कमरतोड़ महँगाई के इस जमाने में मेरा यह दुस्साहस-पूर्ण कृत्य बहुतों के लिए आश्चर्य का विषय हो सकता है। क्या करूं ? लाखों शब्दों के जंगल में जब एक बार फँस गया तो निकलने की बात भी कभी न सोच सका। अंत तक इस बीहड़ जंगल को पूरी तरह छान लेने की पिपासा बनी ही रही। परिणाम आप के सामने है। यदि विद्वज्जगत की ओर से मुझे कुछ भी प्रोत्साहन मिला तो मैं आधुनिक

हिंदी गद्यकारों के शब्द-प्रयोगो पर भी शोध करने की योजना बनाऊगा ।

इस शोध-प्रबन्ध का मूल्यांकन करते समय कुछ बातों पर विशेष रूप से ध्यान दे:—

१. कवियों का क्रम उन के जन्म-काल के अनुसार रखा गया है ।

२. सन् १९१४ से सन् १९६० तक प्रकाशित कविता-सग्रह ही लिए गए है ।

३. कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्दो के सदर्भ देते समय सब से पहले कविता सग्रह का नाम, फिर कविता का शीर्षक और अंत मे पृष्ठ-संख्या उद्धृत की गई है । जहां कोई भी शब्द आया है उसी पृष्ठ पर उसका संदर्भ मिल जाएगा किंतु उस शब्द की व्याख्या उसी पृष्ठ पर या अगले पृष्ठों पर क्रमानुसार दी जा सकी है । शब्दों के सदर्भ या अर्थ खोजते समय इस बात को ध्यान में रखें ।

४ सम्पूर्ण शोध-प्रबन्ध में शब्द--सूचिया लिपिक्रमानुसार हैं । ऐसा करने के लिए मुझे कितना पसीना बहाना पड़ा है इसका अनुमान भुक्तभोगी सहज ही लगा लेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है ।

५. शब्दों की वर्तनी लिखने समय यथासभव छपाई सबन्धी भूले छोड दी गई हैं और निश्चित वर्तनी एक ही संग्रह के कई सस्करण देखने के बाद दी गई है ।

६. जो कविता-सग्रह अनुपलब्ध हैं या पूर्ववर्ती कविताओं के ही नये सकलन हैं उन्हें नही लिया गया है यथा पंत की चिदबरा, बच्चन की दो चट्टाने इत्यादि ।

७ कवियों के शब्द-प्रयोगो से हमारा आशय कविताओ में प्रयुक्त **शब्दों की प्रवृत्तियों** से रहा है । व्यवहार-खण्ड में इस के साथ साथ **शब्दों के व्याकरणिक अध्ययन** को भी वरीयता प्रदान की गई है । शोध-प्रबन्ध के अंत में '**निष्कर्ष**' शीर्षक के अन्तर्गत इन **शब्दों का भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन** भी हो सका है । इस प्रकार यह शोध-प्रबन्ध हिंदी भाषा के छात्र-छात्राओं के लिए परम उपयोगी है वहां अध्यापकों और शोध-कर्त्ताओं के लिए विशेष रूप मे संग्रहणीय बन गया है । यद्यपि आधुनिक हिंदी काव्य-

भाषा पर इस से पहले भी कुछ शोध-कार्य हुआ है पर मेरे शोध की दिशा सर्वथा पृथक ही रही है। मेरे परिश्रम की सार्थकता है या नहीं, इनका निर्णय केवल विद्वज्जन ही करेंगे।

८. चूंकि यह शोध-प्रबन्ध मुख्यत: शब्दों की वर्तनी और व्याकरणिक रूपों पर आश्रित है इसीलिए इस ग्रंथ का मुद्रण अत्यंत ही श्रमसाध्य रहा है। फिर भी जो त्रुटियां रह गई है मैं उनके लिए क्षमा-प्रार्थी हूं। वैसे वह ' मुद्राराक्षसों ' की ही कृपा-दृष्टि है।

इस शोध प्रबन्ध को लिखने मे मुझे अनेक विद्वानों से मौखिक और लिखित रूप मे सहायताए प्राप्त होती रही हैं। मैं उनके प्रति अत्यंत ही आभारी हूं। यह ग्रथ आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा की प्रेरणा से लिखा गया है। अत्यंत ही शोक का विषय है कि वे आज हमारे बीच नही हैं। मै उन के और ' शब्द ब्रह्म ' दोनो के आगे नतमस्तक हूं।

शब्द-शिल्पी प० किशोरीदास वाजपेयी भी मेरे प्रमुख प्रेरणा-स्रोत रहे हैं। यह और बात है कि मुझे उन के चरण स्पर्श करने का शुभ अवसर अभी तक प्राप्त नही हो पाया है। वैसे उन के सपूर्ण साहित्य का मैं ने सम्यक्रूपेण अवगाहन किया है। चाहता हूं कि जीवन की अंतिम सांस तक शब्द-पथ का यात्री बना रहूं।

१ अगस्त, सन् १९६९

शोध-प्रबन्ध की रूपरेखा

—: सिद्धान्त-खण्ड :—

—: व्यवहार-खण्ड :— (१०७–५५७)

प्रमुख आधुनिक हिंदी कवियों के शब्द-प्रयोगों का अध्ययन

—: सिद्धान्त-खण्ड :—

परिच्छेद १.

शब्द

शब्द-ब्रह्म

आचार्य यास्क ने निरुक्त में[1] और महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य के प्रथम आह्निक में '**महान् देव**' की व्याख्या की है। यास्क ने उसे '**यज्ञ**' और पतंजलि ने '**शब्द**' की संज्ञा से अभिहित किया है। पतंजलि ने ऋग्वेद के एक मंत्र[2] की व्याख्या करते हुए 'महान् देव' अर्थात् '**शब्द-ब्रह्म**' के चार सींग बताये हैं। इन्हीं को वैयाकरणों ने 'नाम', 'आख्यात' (क्रिया), 'उपसर्ग' और 'निपात' कहकर पुकारा है।[3] कालपुरुष होने के कारण शब्द-ब्रह्म के तीन पैर हैं—भूत, भविष्यत् और वर्तमान। कर्त्ता, कर्म आदि ७ विभक्तियां ही उसके ७ हाथ है। वह हृदय, कंठ और शिर इन तीन स्थानों में बंधा है और '**वृषभ**' कहलाता है। अर्थतत्त्व-वर्षण करने के कारण ही उसका यह नाम सार्थक सिद्ध होता है।

भर्तृहरि और पुण्यराज[4] ने '**शब्द-वृषभ**' के रूपक का विस्तारपूर्वक विवेचन किया है।

प्राय: आचार्यों ने अपने अपने दर्शनों और शाखाओं के अनुसार 'शब्द-तत्त्व' की व्याख्याएं की हैं। फिर भी वस्तु-तत्त्व सर्वत्र एक समान है। उदाहरणत: यास्क ने वैदिक प्रणाली के अनुसार महादेव को '**यज्ञ-पुरुष**' की संज्ञा से अलंकृत करते हुए उसकी वैदिक व्याख्या की है। उसके मतानुसार चार वेद ही महादेव के चार सींग हैं। तीन सवन (प्रात:, माध्यन्दिन, सायं) ही उसके तीन पैर हैं। गायत्री आदि ७ छन्द ही उसके ७ हाथ है। वह मंत्र, ब्राह्मण और कल्प इन तीन प्रकारों से बंधा हुआ है। वह '**महादेव**' मनुष्यों में यज्ञ अर्थात् कर्मशीलता के लिए निवास करता है।[5]

---

१. निरुक्त, दे० १३, ७

२. ऋग्वेद, दे० ४, ५८, ३

३. **अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन**, आचार्य कपिलदेव द्विवेदी, ३५

४. वाक्य० १, १३२, पुण्यराज

५. निरुक्त, १३, ७—आचार्य यास्क

शब्द की परिभाषा

महाभाष्य के आरम्भ में महर्षि पतंजलि यह प्रश्न करते हैं—शब्द क्या है? आगे वे स्वयं 'शब्द' की परिभाषा देते हुए कहते हैं—'**जिसका कुछ अर्थ है वह शब्द है।**'[1]

किन्तु आचार्य कुमारिल ने इस परिभाषा में अतिव्याप्ति का दोष दिखाते हुए इसे त्रुटिपूर्ण सिद्ध किया है। उदाहरणस्वरूप यद्यपि उठता हुआ धुआँ 'आग' के अस्तित्व की सूचना देता है तथापि कोई उसे 'शब्द' नहीं कहता। ऐसे तर्क प्रस्तुत करते हुए आचार्य कुमारिल ने शब्द की यह परिभाषा दी है—'**जो कर्णेन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया जाता है, वह शब्द है।**'

वस्तुतः शब्द का निजी स्वरूप ही पहले प्रकाशित होता है। उसका अर्थ-बोध तो बाद में होता है। इसीलिए कई आचार्यों ने शब्द की तुलना दीपक से करते हुए कहा है कि जिस प्रकार दीपक पहले स्वयं को प्रकाशित करता है तदनन्तर अन्य पदार्थों को भी प्रकाशमान करता है ठीक उसी प्रकार 'शब्द' भी ग्राह्य एवं ग्राहक दोनों होते हैं। **वे बोध्य और बोधक** गुणों का समवेत रूप कहे जा सकते हैं।[2] इसीलिए ज्ञान, शब्द और प्रदीप इन तीनों को 'प्रकाश-रूप' होने के कारण प्रवृत्ति साम्य से एक जैसा स्वीकार किया गया है।[3]

प्रसिद्ध हिन्दी कथाकार श्री भगवतीचरण वर्मा के मतानुसार शब्द केवल भावना को स्पष्ट कर सकता है, वहन नहीं कर सकता। वे 'शब्द' का कार्य बतलाते हुए कहते हैं कि—'असीम के छोटे से छोटे खण्ड की परिभाषा करके उसको रूप देना, उसकी संज्ञा निर्धारित करना—यह शब्द का काम है।'[4]

वस्तुतः यह ठीक भी है। 'शब्द' जहाँ भावाभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है वहां उसकी अपनी सीमाएं भी हैं। सच तो यह है कि शब्दों द्वारा ही इस '**शब्द-तत्त्व**' का विवेचन करना ठीक वैसा ही कार्य है 'जैसा कि जूतों के तस्मों की सहायता से अपने आपको ऊपर उठाना।'[5] फिर भी यह स्वीकार करने में किसी को कोई आपत्ति

---

१. The Philosophy of Word and Meaning, Gauri Nath Shastri, P. 103

२. वाक्य० १, ५५

३. वाक्य० (का० ३, पृ० ६८, हेलाराज), मंजूषा (पृ० ३३३-३३५, नागेश)

४. साहित्य की मान्यताएं, लेख 'साहित्य में शब्द का स्थान,' १४, १५

५. The Tyranny of Words, Stuart chase, Ch. A writer in search of his words, P. 10

नहीं हो सकती कि सम्पूर्ण मानव जाति शब्दों से इतनी अधिक प्रभावित होती रही है कि प्रत्येक युग में इस शब्द-सम्पदा ने लोगों को जादुई शक्तियां प्रदान की हैं ।[1] अतः 'शब्द-तत्त्व' के अध्ययन का महत्त्व असन्दिग्ध है ।

शब्द की परिभाषा के सम्बन्ध में पश्चिमी विद्वानों में भी पर्याप्त मतभेद रहा है । कुछ विचारक शब्दों में 'अर्थ की एकता' देखना चाहते हैं, दूसरे बलूम फ़ील्ड जैसे चिंतक 'शब्द' को 'कम से कम स्वच्छन्द रूप' अर्थात् भाषा की वह लघुतम इकाई घोषित करते हैं जो एक 'स्वतःपूर्ण कथन' के रूप में कार्य करने की क्षमता रखती है । एल० आर० पामर का यही मत है । तीसरे विद्वान् वे हैं जिन में जे० आर० फर्थ जैसे आलोचक आते हैं जो शब्दों को 'वैकल्पिक मुद्राएं' या सिक्के मानते हैं । यह स्पष्ट ही है कि इन्होंने 'ध्वनि-साम्य' को ही ध्यान में रखा है क्योंकि ध्वनियों को बदलने, जमा करने और हटाने से नये शब्दों का निर्माण किया जा सकता है ।[2]

वस्तुतः इन में से प्रत्येक परिभाषा केवल एक अंग का ही विवेचन करती है । शब्द की सर्वोत्तम परिभाषा तो वही होगी जिस में इन सब विशेषताओं का समाहार होगा ।

पद और पदार्थ

वैयाकरणों के मतानुसार शब्द और अर्थ तात्त्विक दृष्टि से नित्य है । 'वाक्य' प्रधान है और 'पद-पदार्थ' गौण ।

नाम और आख्यात को ही 'पद' के मुख्य विभाग स्वीकार किया जाता रहा है । आचार्य वार्तक्ष और औदुम्बरायण पद के ये दो ही मूलभूत प्रकार मानते हैं । 'उनका मत था कि अखण्ड वाक्य बुद्धि में सर्वदा रहता है उसी का 'प्रतिभा' रूपी 'अर्थ' से संयोग होता है । अतः 'नाम' अर्थात् अखंड वाक्य रूपी शब्द और 'आख्यात' अर्थात् 'प्रतिभा' रूपी 'अर्थ' ही पद के विभाग हैं ।'[3]

आचार्य पाणिनि ने भी 'सुप्तिङन्तं पदम्' सूत्र[4] में 'पद' को इन दो भागों में ही विभाजित किया है—'सुबन्त' (नाम) और 'तिङन्त' (आख्यात) ।

महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य के प्रथम आह्निक में ऋग्वेद के दो मंत्र[5] उद्धृत

---

१. The Meaning of Meaning, Ogden & Richards, Ch. II. The Power of Words', P. 24

२. Words and their Use, Stephen Ullmann, P. 23

३. वाक्य० २, ३४७

४. अष्टा० १, ४, १४

५. (क) ऋग्वेद, ४, ५८, ३—'चत्वारिशृङ्गा'

(ख) ऋग्० १, १६४, ४५—'चत्वारि वाक्परिमिता पदानि'

करते हुए **नाम**, **आख्यात**, **उपसर्ग** और **निपात**—पद के इन चार भागों को ही वैदिक ऋषियों के अभीष्ट भाग सिद्ध किया है।

आचार्य यास्क ने भी निरुक्त के प्रारम्भ में[1] उपर्युक्त मन्त्रों को उद्धृत करके पद को चार भागों में ही विभक्त किया है। ऋग्वेद के अनुसार इन में प्रथम तीन तो क्रियाशीलता या व्यावहारिकता की दृष्टि से अनुपयोगी हैं। चतुर्थ भाग 'निपात' ही सर्वाधिक क्रियाशील है। अतएव वही उपादेय है।[2] किन्तु इस मत का विरोध भी किया गया है।

पदार्थ को भी इसी प्रकार ४ भागो में विभाजित करते हैं—१. नामार्थ २. आख्यातार्थ ३. उपसर्गार्थ ४. निपातार्थ

पश्चिम में अरस्तु और उसके समसामयिक दार्शनिकों ने 'पद' को **नाम**, **आख्यात** और **संयोजक**—इन तीन भागों मे ही बांटा है। परवर्ती दार्शनिकों ने संयोजक को '**संयोजक**' तथा **आर्टिकल** इन दो वर्गों मे बाटकर पदों की संख्या चार तक कर दी। *मुख्यत: स्टोइक स्कूल के प्रवक्ता ही इस संख्या का समर्थन करते है।*[3]

'तर्क दीपिका' मे पद और पदार्थ के सम्बन्ध को '**शक्ति**' कहा गया है जिससे शब्द-श्रवण होने पर स्मृति मे अर्थ का बोध होता है—

अर्थस्मृत्यनुकूल: पदपदार्थ सम्बन्ध: शक्ति:[4]

इस पारिभाषिक शब्द 'शक्ति' को हृदयंगम करने के लिए हमें व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवचन, व्यवहार, वाक्यशेष, विवृति, सिद्धपद-सान्निध्य से सहायता मिलती है।[5]

पद के उपर्युक्त चार भागों को नैरुक्त अर्थात् निर्वचनशास्त्र के विशेषज्ञ ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का नाम देते है।[6] उनके विचारानुसार वाक्-तत्त्व का यही विभाजन है।

शब्द और वाक्य

अंगरेजी समीक्षक ह्विटने के अनुसार '**शब्द**' भाषा का चरमावयव है।[7] किंतु

---

१. निरुक्त १३, ७ से ९ तक
२. ऋग्वेद, १, १६४, ४५
३. निरुक्त, डॉ० लक्ष्मणस्वरूप, २८, टिप्पणी (निरुक्त भाषा टीका, सन् १९२८ ई०)
४. अर्थ-तत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, ४५
५. परमलघुमंजूषा, पृ० १०३, (चौखम्बा सं. सी. आ. बनारस, सन् १९१७ ई०)
६. निरुक्त, १३, ९
७. भाषा-रहस्य, बाबू श्यामसुन्दर दास, ७८—उद्धृत American Journal of Philology, P. 338

पूर्वी और पश्चिमी भाषाशास्त्रियों ने अर्थ-बोध के लिए 'शब्द' की अपेक्षा **'वाक्य'** को ही भाषा का चरमावयव स्वीकार किया है।[1]

आचार्य यास्क का मन्त्र है—

परः सन्निकर्षः संहिता। पद प्रकृतिः संहिता।[2]

आचार्य पाणिनि ने भी यही कहा है।[3] यहाँ 'संहिता' का अर्थ 'वाक्य' ही है।

जब परिस्थिति विशेष में एक ही शब्द प्रयुक्त हो तब भी वह शब्द 'वाक्य' का परिवेश धारण किए रहता है।[4] उदाहरणस्वरूप 'देवदत्त, गाय हाँक दो' जैसे वाक्यों में 'देवदत्त' आदि शब्दों का कोई पृथक् अस्तित्व नहीं होता।

किन्तु यह स्थिति तो मात्र अपवाद है। सामान्यतः **'शब्द-समूह को ही 'वाक्य' कहते हैं'**—'वाक्य' की यही परिभाषा अधिक प्रचलित है। परन्तु यह परिभाषा भी त्रुटिपूर्ण है। अतएव आचार्यों ने केवल **आकांक्षा, योग्यता, संनिधि** (आसत्ति) से युक्त 'शब्द-समूह' को ही 'वाक्य' की संज्ञा दी है—

वाक्यं स्याद्योग्यताकांक्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः[5]

अन्य विद्वान् इन गुणों के अतिरिक्त 'तात्पर्य' को भी अर्थबोध का एक कारण स्वीकार करते हैं।[6]

वाक्य के लक्षण

आचार्य कात्यायन और पतंजलि ने वाक्य के चार लक्षण बताए हैं—

१. सर्वप्रथम लक्षण यह है कि वाक्य मे **'क्रिया'** (आख्यात) का होना अनिवार्य है। उसके अतिरिक्त **अव्यय, कारक** और **विशेषण** इन मे से एक या सभी 'वाक्य' में रह सकते हैं।

२. उपर्युक्त लक्षण में **'क्रिया-विशेषण'** भी जोड़ना चाहिए। यह वाक्य का दूसरा लक्षण है।

३. चूंकि अव्यय, कारक और विशेषण मूलतः 'क्रिया' के ही विशेषण हुआ करते हैं अतः आचार्यों ने उपर्युक्त लक्षण का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत करते हुए कहा है—

---

१. अर्थतत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, ३३

२. निरुक्तम्, लक्ष्मणस्वरूप, १-१७

३. अष्टा० १-४-१०९

४. अर्थ-तत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, ३७

५. तर्कभाषा, डॉ० जगन्नाथ प्रसाद, (संस्क० सन् १९२२ ई०)

६. (क) वेदात परिभाषा, आगम परिच्छेद (ख) परमलघुमंजूषा

'क्रिया को 'वाक्य' कहते हैं, उसके साथ कोई विशेषण होना चाहिए।"

४. 'एक तिङन्त' को वाक्य कहते हैं। यथा—'ब्रूहि ब्रूहि' (अर्थ—बोलो, बोलो)। कैयट ने 'एक' शब्द को 'संख्यावाचक' न मानकर 'समानार्थक' कहा है। उसके मतानुसार एक वाक्य में एकार्थक दो तिङन्त भी रह सकते हैं। अतः एकार्थक तिङन्त पदों के समूह को ही 'वाक्य' कहना चाहिए।

इन मतों के अतिरिक्त और भी अनेक मत हैं।

जगदीश ने 'वाक्य' का लक्षण किया है—'आकांक्षा-युक्त शब्दों के समूह को ही 'वाक्य' कहते हैं।'[२] नैयायिक भी यही कहते हैं कि वाक्य में 'अर्थ-बोधकता' का गुण होना चाहिए। न्यायभाष्यकार आचार्य वात्स्यायन ने नैयायिकों के इसी मत का उल्लेख करते हुए साकांक्ष पदों के समूह को ही 'वाक्य' स्वीकार किया है। वात्स्यायन का यह मत उद्धृत करते हुए नागेश ने यह सिद्ध किया है कि नैयायिकों को भी 'वाक्य-स्फोट' का सिद्धान्त स्वीकार था।[३]

आचार्य विश्वनाथ ने 'योग्यता, आकांक्षा और आसत्ति से युक्त पद-समूह' को ही 'वाक्य' कहा है।[४]

१. शब्दो के परस्पर अर्थ स्पष्ट करने वाली शक्ति ही 'योग्यता' है। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मात्र पदों का समूह ही 'वाक्य' नहीं है। अन्यथा 'आग से सींचता है' को भी 'वाक्य' मानना पड़ जाता। यहा परस्पर अर्थान्विय करने में बाधा उपस्थित है इसीलिए 'योग्यता' का होना आवश्यक हो जाता है।

२. श्रोताओ की 'आकांक्षा' (जिज्ञासा) को शांत करना भी 'वाक्य' का उद्देश्य रहता है। केवल देवदत्त, राम, अशोक, आकाश आदि कहने से 'आकांक्षा' शांत नही होती अतः ये शब्द 'वाक्य' नही है।

३. 'वाक्य' में शब्द और अर्थ की अबाध रूप से उपस्थिति ही 'आसत्ति' शब्द द्वारा प्रकट की गई है।

इन में आकांक्षा' और 'योग्यता' मुख्य रूप से 'अर्थ' के और गौण रूप से 'पद-समूह' के धर्म हैं।

नैयायिकों ने 'तात्पर्य' को भी अर्थ-बोध का कारण स्वीकार किया है। वक्ता जिस अर्थ का बोध कराने के निमित्त वाक्य का प्रयोग करता है वही 'तात्पर्य' है।

---

१. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, कपिलदेव द्विवेदी, ३००

२. शब्दशक्तिप्रकाशिका, श्लोक १३

३. मंजूषा०, पृ० १

४. साहित्य-दर्पण, २, १

इसका ज्ञान प्रकरण आदि अनेक बातों से होता है। इन बातों के अभाव में शब्द का अर्थ सन्दिग्ध ही बना रहता है।[1]

अमरसिंह ने 'सुबन्त' या 'तिङन्त' पदों के समूह को 'वाक्य' कहा है। दूसरे, शब्दों में उसने 'कारक-युक्त क्रिया' को भी 'वाक्य' की संज्ञा दी है।[2]

जगदीश ने उक्त लक्षण को अस्वीकार किया है क्योंकि इस लक्षण में 'अतिव्याप्ति' और 'अव्याप्ति' दोष हैं।[3]

भर्तृहरि ने सभी प्राचीन आचार्यों के मतों का संग्रह करके 'वाक्य' के ८ लक्षण गिनाए हैं[4] जो निम्नलिखित हैं—

१. क्रियावाचक शब्द को 'वाक्य' कहते हैं।

२. क्रिया तथा उसके साथ कारक आदि के समूह को 'वाक्य' कहते हैं।

३. क्रिया, कारक आदि के समूह में रहने वाली जो जाति अर्थात् अखण्ड और नित्य अंश है, उसको 'वाक्य' कहते हैं।

४. क्रिया आदि के एक अखण्ड (नित्य) समूह शब्द अर्थात् 'स्फोट' को 'वाक्य' कहते हैं।

५. क्रिया आदि के एक विशेष क्रम को 'वाक्य' कहते हैं।

६. क्रिया आदि के अखण्डनीय बुद्धिगत समन्वय को 'वाक्य' कहते हैं।

७. आकांक्षा से युक्त पहले ही पद शब्द को 'वाक्य' कहते हैं।

८. आकांक्षा से युक्त पृथक् पृथक् सारे पदों को ही वाक्य कहते हैं।[5]

उपर्युक्त मतों में आचार्य विश्वनाथ की वाक्य सम्बन्धी परिभाषा को ही हिन्दी में अधिकतर उद्धृत किया जाता है।[6] शेष परिभाषाएं दार्शनिकों के चिन्तन-मनन से ही सम्बन्ध रखती हैं अतः साहित्य और काव्य में उनका महत्त्व कम है।

शब्द-संस्कार की आवश्यकता

महर्षि पतंजलि के अनुसार यदि 'शब्द' में एक वर्ण या एक स्वर भी अशुद्ध हो तो वह अनर्थ का भी कारण बन सकता है। वृत्र सम्बन्धी कथा से पता चलता है

१. मंजूषा०, पृ० ५२६-५२८

२. अमरकोश।

३. शब्दशक्तिप्रकाशिका।

४. वाक्य०, २, १-२

५. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, आचार्य कपिलदेव द्विवेदी, ३०७

६. हिन्दी भाषा, अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५८

कि '**इन्द्रशत्रु**' शब्द केवल स्वर की अशुद्धि के कारण वृत्र के लिए मृत्यु-वाहक सिद्ध हुआ।[१]

इसलिए पतंजलि ने शब्दों के 'ज्ञान' और 'प्रयोग' दोनों के समन्वय को स्वीकार करते हुए लिखा है—

आचारे नियमः शास्त्रपूर्वकेप्रयोगेऽभ्युदयः[२]

यही कारण है कि शब्दों में अक्षरों की 'एकता' पर बल दिया जाता है। यदि शब्दो के अक्षर-समूह में एकान्विति न हो और शब्द अक्षरों का समुदाय मात्र ही हों तो फिर एक जैसे अक्षरों से बनने वाले शब्दों के अर्थों मे अन्तर करना कठिन हो जाए यथा संस्कृत के नदी, दीन, जरा, राज आदि शब्द देखे जा सकते हैं।[३]

अतः शब्दों की एकता एक सर्वमान्य तथ्य-सिद्धान्त (Datum) है। इसी एकरूपता को बनाए रखने के लिए शब्द-प्रयोगों की शुद्धि आवश्यक हो जाती है।

शब्द-रूपों में परिवर्तन

इस विश्व में प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है। भाषा में इस परिवर्तनशीलता की चरम सीमा देखी जा सकती है। शब्द-रूपों के परिवर्तन को अवनति या उन्नति कहना नितान्त अवैज्ञानिक है।[४] जन साधारण ही भाषा को बनाते और मिटाते है। अतः उस की ठीक कसौटी भी '**लोक**' ही मानी जाएगी। महर्षि पतंजलि ने इसीलिए लोक को ही भाषा का सच्चा 'प्रमाण' स्वीकार किया है। लोक-प्रवाह में भाषा चलते चलते अनेक रूपाकारों को ग्रहण करती रहती है। शब्दो के रूप-परिवर्तन का अध्ययन इसीलिए महत्त्वपूर्ण है। किन्तु इन परिवर्तनों के कारणों का अनुशीलन उतना आवश्यक नही है जितना स्वय इन शब्द-रूपों का अध्ययन है।

जॉन बीम्स लिखते है—"**कारण ढूंढने का प्रयत्न करने की अपेक्षा यह बताना अधिक लाभदायक और रोचक होगा कि भाषाएं क्या क्या रूप बना लेती हैं**"[५]

हम ने भी इस शोध-प्रबन्ध में शब्द-रूपों को ही अपने अध्ययन का विषय बनाया है।

---

१. (क) तैत्तिरीय संहिता, कां० २, प्र० ५... (ख) शत० ब्रा० कां० १, प्र० ५ (ग) महा० आ० १, कैयट और नागेश

२. महा० आ० १

३. The Philosophy of Word & Meaning, Gauri Nath Shastri, P. 132

४. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना, ४३ (छठा संस्क०)

५. A comparative Grammer of Modern Aryan Languages, (Part 2), John Beames, P. 115

रूप-परिवर्तन के कारण

डॉ० बाबूराम सक्सेना ने भाषा के विकास संबन्धी जो कारण दिये हैं वे संक्षेपत: इस प्रकार हैं—

१. **शारीरिक विभिन्नता** के कारण भाषा रूप बदलती है। यह प्रथम मत है। किन्तु जब हम यह देखते हैं कि भिन्न-भिन्न शरीरधारी लोग, भिन्न-भिन्न जातियों के व्यक्ति एक ही भाषा को अपना लेते हैं तो इस मत का खण्डन हो जाता है।

२. **भौगोलिक भिन्नता** भाषा-भेद का कारण है। यह तर्क भी व्यावहारिक दृष्टि से निर्बल है।

३. **जातीय मानसिक अवस्था** को भी कुछ लोग भाषा-परिवर्तन का कारण मानते हैं परन्तु गहन अध्ययन से यह बात भी गलत सिद्ध होती है।[1]

४. **प्रयत्न-लाघव** को हम अवश्य भाषा-परिवर्तन का एक प्रमुख कारण मान सकते है।

डॉ० सक्सेना ने इसे आठ भागों मे विभाजित किया है—

(क) **ध्वनि-विपर्यय**—यथा नखलऊ (लखनऊ), बूड़ना (डूबना)

(ख) **ध्वनि लोप या अक्षर लोप** यथा बड़िजी (बड़ी जिज्जी) सं० वृथा (वृत+था)

(ग) **समीकरण** (i) पुरोगामी यथा सं० लग्न प्रा० लग्ग (ii) पश्चगामी यथा सं० भक्त, प्रा० भत्त, सं० सर्प प्रा० सप्प इत्यादि।

(घ) **विषमीकारण**—यथा सं० पक्व प्रा० पिक्क, सं० मुकुट प्रा० मउड

(ङ) **स्वरभक्ति**—संयुक्ताक्षरों मे विशेषत: मध्य मे कोई और ध्वनि लाना यथा सं० रत्न प्रा० रदण, भक्त (भगत), इन्द्र (इन्दर) प्रसाद (परसाद)

(च) **अग्रागम**—आरंभ में संयुक्ताक्षर आ जाने पर यथा—स्त्री, स्नान, स्कूल, स्टेशन को इ और अ लगा कर लिखना—इस्त्री, अस्नान, इस्कूल, इस्टेशन।

(छ) **उभय सम्मिश्रण**—समानार्थक दो शब्दों के मेल से तीसरे शब्द का निर्माण यथा अवधी में 'फिर' और 'पुनि' के मिश्रण से 'फिन', पालि मे 'दुवे' और 'उभयं' से 'दुभयं' बन जाता है।

(ज) **स्थान-विपर्यय**—बोलचाल मे ध्वनि के क्रम-विपर्यय यथा सं० आश्चर्य >प्रा० अच्छेरं, सं० कार्य>केर।[2]

---

१. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना, ४८-५५

२. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना, ५६-६०

इन के अतिरिक्त और भी कई कारण हैं—

(अ) **उच्चारण** के कारण भी शब्दो के रूप बदलते हैं। देशों और प्रांतों की जलवायु की भिन्नता के कारण भी लोग एक ही शब्द का भिन्न-भिन्न रीतियों से उच्चारण करते हैं और तदनुसार शब्द-रूप लिखने भी लगते हैं। किन्तु 'उच्चारण के अनुकूल लेखन केवल सैद्धांतिक दृष्टि से ही मान्य है, व्यावहारिक दृष्टि से नहीं। इसलिए जब वर्तनी में उच्चारण की अनुरूपता पर बल दिया जाता है तो उसकी सीमा को स्मरण रखना चाहिये।'[1] उदाहरणस्वरूप बोलने में तो 'साहित्तिक' ही शुद्ध है किन्तु लिखते समय हम 'साहित्यिक' ही लिखते हैं।[2]

(ब) **व्यक्तिगत रुचियां** भी कभी-कभी विशिष्ट शब्द-रूपों के लिखे जाने का कारण होती हैं। उदाहरणस्वरूप डॉ० बाबूराम सक्सेना **इतिहासिक, भूगोलिक** ही लिखते हैं जोकि अशुद्ध शब्द-रूप हैं। स्वयं उन के ही शब्द हैं—इतिहासिक आदि विकृत शब्द देख कर यदि 'पण्डित वर्ग' को दुःख हो तो मेरी सनक समझ कर क्षमा करने की उदारता दिखाएं।'[3]

इसी प्रकार कवि श्री हरिकृष्ण प्रेमी भी लिखते हैं :—'मैंने कुछ शब्दो को लिखने मे जानबूझ कर भूल की है जैसे जगत् को जगत, अन्तर् को अन्तर, महान् को महान और वक्षःस्थल को वक्षस्थल। शब्दों के रूप के प्रति अत्यधिक कठोर रहने वाले पंडित-प्रवर इसके लिए मुझे क्षमा करें।'[4]

उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त और भी कारण खोजे जा सकते हैं।

शब्दों के प्रकार

पतंजलि ने 'ऋलृक् सूत्र' की व्याख्या में अर्थ-प्रवृत्ति की दृष्टि से शब्दों के जो चार प्रकार बताए हैं वे ये हैं—१. जातिवाचक शब्द १. गुणवाचक शब्द ३. क्रियावाचक शब्द ४. यदृच्छा अर्थात् ऐच्छिक शब्द।[5]

हिन्दी में एक अन्य दृष्टि से शब्दो के चार प्रकार माने जाते हैं—१. तत्सम २. तद्भव ५. अर्द्ध-तत्सम ४ देशज।

इनके अतिरिक्त अनुकरणवाचक, विदेशी, यौगिक आदि प्रकार भी बतलाए

---

१. राष्ट्रभाषा हिन्दी-समस्याएं और समाधान, श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा, १०४,

२. राष्ट्रभाषा हिन्दी-समस्याएं और समाधान, श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा, ११५,

३. सामान्य भाषाविज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना, भूमिका, ६

४. कविता-संग्रह, अनन्त के पथ पर, द्वितीय संस्क०, पृ० भ

५. महा० आ० २, ऋलृक् सूत्र

गए हैं। ये सब भेद या प्रकार भी अर्थ के विचार से ही माने गए हैं।[1]

शब्द-शक्तियां

संस्कृत साहित्य-शास्त्र में 'शब्द' को अर्थ-युक्त करने वाली विशेषता 'शक्ति' कहलाती है। इसी 'शक्ति' के कारण शब्द की अर्थ में प्रवृत्ति देखी जाती है। इस 'शक्ति' के ३ भेद किए गए हैं— १. अभिधा २. लक्षणा ३. व्यंजना।[2]

शब्दों के वाच्यार्थ का बोध कराने वाली शक्ति **'अभिधा'** है। इस शक्ति द्वारा ज्ञात अर्थ 'मुख्यार्थ' कहलाता है।[3]

वाच्यार्थ न बन पड़ने पर जिस शक्ति के द्वारा अन्य अभिप्रेत का ज्ञान होता है वह **'लक्षणा'** शक्ति है।[4] इस शक्ति के द्वारा जाना हुआ अर्थ 'लक्ष्यार्थ' होता है। अर्थविज्ञान में शब्दों के अर्थ-परिवर्तन का अनुसंधान करने के लिए लक्षणा शक्ति से विशेष सहायता मिलती है। महर्षि पतंजलि के मतानुसार तटस्थता, तद्धर्मता, तत्समीपता और तत्साहचर्य द्वारा अन्य में अन्य का ज्ञान होता है।[5]

आचार्य मम्मट के 'काव्यप्रकाश' और विश्वनाथ के 'साहित्यदर्पण' में 'लक्षणा' शब्द-शक्ति का विस्तृत विवेचन किया गया है।

'व्यंजना' शब्द-शक्ति द्वारा वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ से भिन्न अर्थ की प्रतीति होती है। आचार्य विश्वनाथ ने 'व्यंजना' की परिभाषा इस प्रकार दी है—'जब अभिधा और लक्षणा शब्द-शक्तियां अपना-अपना अर्थ-बोध करा के विरत हो जाती है तो 'व्यंजना' शक्ति ही उस शब्द के (अधिक ठीक) अर्थ का ज्ञान कराती है। अर्थ-बोध कराने की यह शक्ति शब्द, अर्थ, प्रकृति और प्रत्यय मे निहित रहती है[6]।

अभिधा के उपभेद

आचार्य नागेश ने व्यावहारिक दृष्टि से 'अभिधा' के ३ भेद किए है—

१. **रूढ़ि** २. **यौगिक** (योगशक्ति) ३. **योगरूढ़ि**

(क) **रूढ़ि**—इस में शास्त्रकारों द्वारा निर्दिष्ट 'प्रकृति-प्रत्यय' आदि का ज्ञान

---

१. हिन्दी प्रयोग, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, परि० शब्दों के प्रकार, १-११
२. (क) मंजूषा, १६ (ख) साहित्यदर्पण, २.३
३. काव्य प्रकाश, २.८
४. काव्य प्रकाश २.६
५. महाभाष्य, ४.२.४८
६. साहित्यदर्पण, २ १२

नहीं होता। पतंजलि ने भी इस पर विस्तार से विचार किया है।[1] रूढ़ि शब्दों में व्युत्पत्ति करने के लिए क्रिया की सहायता ली जाती है। 'गो' शब्द 'गाय' अर्थ में रूढ़ि है। गमन-क्रिया के कारण ही पशु विशेष को 'गो' की संज्ञा दी गई थी। बाद में इस विशिष्ट अर्थ में रूढ़ हो जाने पर गमन-क्रिया-हीन होने पर भी गो को 'गो' ही कहा जाता रहा और किसी अन्य पशु को इस क्रिया में सक्षम होने पर भी 'गो' संज्ञा से अभिहित नहीं किया गया। यही शब्द-रूढ़ि है।

(ख) **यौगिक (योगशक्ति)**—'अश्वगन्धा' शब्द 'औषधि' विशेष अर्थ में रूढ़ हो चुका है किन्तु 'अश्व' शब्द के योग पर ध्यान रख कर जब 'अश्वगंधा' शब्द का अर्थ 'अश्वशाला' किया जाता है तो 'यौगिक रूढ' शब्दों का अस्तित्व सामने आता है।

यदि किसी प्रसंग विशेष मे उपर्युक्त दोनो अर्थ संभव हों तो प्रथम (रूढ़ि) को ही ग्रहण किया जाएगा क्योंकि '**रूढ़िर्योगापहारिणी**'—अर्थात् 'रूढ़ि' यौगिक से बलवान् होती है (आचार्य नागेश)[2]

(ग) **योगरूढ़ि**— 'पंकज' शब्द कहने पर 'प्रकृति-प्रत्यय' (पंक में जन्म लेने वाला) का तो ज्ञान होता ही है परन्तु विशेष रूप से समुदाय-बोधक रूढ अर्थ 'कमल' ही ज्ञात होता है। अत: यह योगरूढि शब्द है। 'पकज' शब्द तात्पर्य और प्रकरण-भेद से कहीं यौगिक होता है—कह्लार, कैरव आदि पकज—यहां पकज का अर्थ है 'पंक मे जन्म लेने वाले', और कहीं रूढ अर्थ का बोध कराता है यथा 'पृथ्वी पर पंकज खिले हैं'—वाक्य मे 'पंकज' के यौगिक अर्थ का निषेध कर के रूढ अर्थ 'कमल' ही लिया गया है।

लक्षणा के उपभेद

आचार्य पतञ्जलि[3], भर्तृहरि[4] और नागेश[5] ने 'लक्षणा' शब्द-शक्ति का विस्तारपूर्वक विवेचन किया है।

संक्षेप मे लक्षणा शब्द-शक्ति के लिए तीन शर्तें है—

१. मुख्य अर्थ की बाधा नही होनी चाहिए।

२. लक्ष्यार्थ का मुख्यार्थ से सम्बन्ध होना आवश्यक है।

३. रूढि या कोई प्रयोजन होना चाहिए।[6]

---

१. (क) अष्टा० ५,१,१६ (ख) अष्टा ०३,२,५६

२. मंजूषा, पृ० १०७

३. अष्टा० ४,१,४८

४. वाक्य०, २,२५२-२८०

५. मंजूषा, पृ० ११६-१५६

६. मंजूषा, पृ० ११६-११७

उपभेद

लक्षणा के कई दृष्टिकोणों से भेद किए गए है । 'गौणी' और 'शुद्धा' भेद एक दृष्टि से हैं और 'अजहत्स्वार्था' तथा 'जहत्स्वार्था' अन्य दृष्टि से । व्याकरण की पुस्तकों में इन की विस्तारपूर्वक व्याख्या की जाती रही है।[1] मम्मट और विश्वनाथ ने 'लक्षणा' शक्ति के भेदों में अत्यधिक वृद्धि की है ।

व्यंजना का निरूपण

आचार्य मम्मट[2] और विश्वनाथ[3] ने व्यंजना शब्द-शक्ति का विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। नागेश ने 'मंजूषा' में इसकी संक्षिप्त व्याख्या ही प्रस्तुत की है। मीमांसकों में महिभट्ट ने 'व्यंजना' को केवल **अनुमान-सिद्ध** कहकर इसका खण्डन करने की चेष्टा की है । उसके मतो का आचार्य मम्मट[4] और विश्वनाथ[5] दोनो ने खण्डन करते हुए 'व्यंजना' शक्ति का महत्त्व प्रतिष्ठित किया है । आनन्दवर्धन और अभिनवगुप्त ने भी इस शक्ति की स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार किया है ।

शब्द का महत्त्व

बाइबल की प्रारंभिक कहानियों में एक कहानी '**बेबिल का मीनार**' नाम से है । सृष्टि के आरम्भ मे आदि मनुष्यो ने ईश्वर को चुनौती देने के लिए मानव-शक्ति के प्रतीक रूप में एक इतना ऊंचा मीनार बनाने का निर्णय किया जो आकाश तक पहुंच सके । मीनार बनते समय ईश्वर ने उन की भाषाओं को बदल दिया। फलतः मनुष्य विचार-विनिमय करने में असमर्थ हो गये । ईश्वर ने उन की **सामान्य** (Common) **भाषा** छीन कर यह सिद्ध कर दिया कि वह मानव से अधिक शक्तिशाली है । तदनन्तर मनुष्य अधूरे मीनार को पूरा करने के लिए एकत्र भी हुए परन्तु विचार-विमर्श न कर सकने के कारण असफल रहे ।[6]

इस कथा की वास्तविकता में संदेह हो सकता है परन्तु इस से भाषा की जो उपयोगिता सिद्ध होती है उस मे कोई अविश्वास नहीं कर सकता ।

---

१. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, आचार्य कपिलदेव द्विवेदी, २५६-२५७
२. काव्यप्रकाश, द्वितीय उल्लास
३. साहित्यदर्पण, द्वितीय परिच्छेद
४. काव्यप्रकाश, पंचम उल्लास
५. साहित्यदर्पण, पंचम परिच्छेद
६. All About Language, Mario Pei, Ch. 1, 'Why Language'?, P. 9

स्टुअर्ट चेज ने 'भाषा' की उपमा 'खांडे' से देते हुए कहा है कि जिस प्रकार 'खांडा' (एक तलवार) दोनों तरफ़ से आघात करता है उसी प्रकार 'भाषा' की सहायता से मनुष्य जहां अज्ञात पर विजय प्राप्त कर लेता है वहां इस के कारण वह अपने को बुरी तरह घायल भी कर सकता है।[१] जब तक हमें शब्दों का ठीक प्रयोग करना नहीं आता तब तक हम अच्छी प्रकार लिखना या बोलना भी नहीं जान सकते।[२] अशिक्षितों के पास शब्द-सम्पत्ति कम मात्रा में होती है इसीलिए वे अपने विचारों को भली प्रकार से अभिव्यक्त करने में कठिनाइयों का अनुभव करते हैं।

पश्चिमी विचारक एमर्सन के मतानुसार 'भाषा एक नगर के समान है जिस को बनाने के लिए हर-एक नागरिक अपना अपना पत्थर लगाता है।'[३]

वस्तुत: शब्द भी 'धन' होते हैं और उनका भी मूल्य होता है। रुपयों की भांति उनकी वास्तविक कीमत ((Intrinsic worth) से कहीं अधिक उपयोगिता होती है। उन का मूल्य इस बात से निर्धारित होता है कि वे विनिमय मे क्या खरीद सकते हैं। फॉसफर मालम का विचार है कि प्रत्येक व्यक्ति शब्दों के बदले में जो वस्तु खरीदता है वह है 'अर्थबोध' (understanding)[४]

हमारे प्राचीन शास्त्रकारों और विचारकों ने 'साहित्य' को अन्य कलाओं की अपेक्षा केवल इसीलिए ऊंचा स्थान दिया था क्योंकि भावाभिव्यक्ति का श्रेष्ठ साधन 'भाषा' उसके पास है। श्री भगवतीचरण वर्मा लिखते हैं—'सामाजिक आदान-प्रदान में मानव का विकास है। इसीलिए मानव-विकास के क्रम मे हम 'शब्द' को सब से अधिक महत्त्वपूर्ण मानने को विवश है।'[५]

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और 'शब्द' उसका सामाजिक उपकरण है। हम इसे प्रबलतम शस्त्र भी कह सकते हैं। चूंकि अर्थ-बोध कराने के लिए ही शब्दों का प्रयोग किया जाता है इसलिए उनकी व्यावहारिक उपयोगिता स्वयमेव सिद्ध हो जाती है। कुमारिल ने तन्त्रवार्तिक में इसी उपयोगिता के सम्बन्ध मे लिखा है—

सर्वो हि शब्दोऽर्थप्रत्यायनार्थम् प्रयुज्यते[६]

और पतंजलि ने भी स्वीकार किया है—

---

१. The Tyranny of Words, Stuart Chase, P. 9
२. The Art of Writing, W. J. Merry, P. 1
३. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, परिच्छेद, 'शब्द रचना की आवश्यकता,' २८
४. An Approach to Poetry, Phosphor Mallam, P. 38
५. साहित्य की मान्यताएं, लेख—'साहित्य में शब्द का स्थान', १९
६. मीमांसा० सूत्र, १, ३ ८ की टीका

अर्थगत्यर्थ: शब्द प्रयोग: अर्थम् संप्रत्ययिष्यामीति शब्द: प्रयुज्यते ।[1]

शब्दों के आर्ष प्रयोग

संस्कृत साहित्य में पूर्वजों द्वारा प्रयुक्त सन्दिग्ध शब्द-रूपों को 'अशुद्ध' नहीं कहा जाता अपितु उन्हें 'आर्ष: प्रयोग:' कहकर पुकारा जाता है । आगे चलकर इन प्रयोगों की उपेक्षा कर दी जाती है और व्याकरण के अनुसार नये शब्द-रूपों के नियम बनाये जाते हैं । हिन्दी मे भी ऐसे संदेहास्पद शब्दो को 'पूर्वज शब्दों' की संज्ञा दी जानी चाहिए, ऐसा पं० किशोरीदास वाजपेयी का मत है । वे लिखते है—

'संस्कृत साहित्य में 'आर्ष: प्रयोग:' (शब्द-प्रयोगो पर विचार करते करते) सामने आता है । महान् पूर्वज लोगों का कोई शब्द-प्रयोग पाणिनि आदि के व्याकरणों से विपरीत दिखाई देता है, तो उसे 'गलत' कहने की अशिष्टता नही की जाती... गलत तो तब कहा जाता, यदि उस समय या उससे पहले तर्क-युक्त कोई निर्णय हो गया होता । परन्तु वैसे पूर्वज प्रयोगों का अनुकरण हम न करेंगे जैसे कि संस्कृत में 'आर्ष-प्रयोगों' का नहीं किया जाता ।'[2]

इस शोध-प्रबन्ध में हम ने कोष्ठकों में जो शब्द-रूप लिखे हैं वे या तो पूर्णतया शुद्ध हैं या प्राय: शिष्ट और मानक हिन्दी में प्रचलित हैं । अत: कोष्ठकों से बाहर कवियो द्वारा प्रयुक्त शब्द-रूपों को 'अशुद्ध' नहीं कहना चाहिए । वाजपेयी जी की भाँति हम उन्हें 'आर्ष' या 'पूर्वज' प्रयोग इसलिए कहना उचित नही समझते क्योंकि हो सकता है आगे चलकर यही विद्वान, श्रीमान, आदि स्वरांत शब्द-रूप ठीक मान लिए जाएं और उन्हें राष्ट्रभाषा में एक स्थायी पद दे दिया जाए ।

काव्य में शब्द-प्रयोग

संगीत, नृत्य और काव्य इन तीनों कलाओं में एक सामान्य विशेषता है 'लय' । तीनों में 'लय' का आधार वर्तमान है । संगीत में 'स्वर', नृत्य में 'अभिनय' और काव्य मे 'शब्द' इस 'लय' में और जुड़ जाते है । 'जिस प्रकार संगीत में आधार लय है, स्वर उपकरण है, नृत्य में आधार लय है, अभिनय उपकरण है उसी प्रकार काव्य में आधार लय है, शब्द केवल उपकरण है ।'[3]

सह-संवेदन

काव्य में इन्हीं शब्दों की सहायता से बिम्बों का निर्माण किया जाता है । शब्द प्राय: ऐंद्रिय अनुभूति के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानान्तरित होते रहते हैं ।

---

१. महा० १, १, ४१,

२. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३७०

३. साहित्य की मान्यताएं, भगवतीचरण वर्मा, १८

इसी का नाम '**सह-संवेदन**' है । Synaesthesia=Syn (सह)+Aesthesia (संवेदन) । मनोवैज्ञानिक इस संज्ञा से परिचित है । काव्य-बिम्बों के निर्माण में इसका विशेष महत्त्व देखा जा सकता है ।

आस्कर वाइल्ड के लिए संगीत 'गहरा गुलाबी' (Mauve) और 'तेज लाल' (Scarlet) हो सकता था, प्यास हरे रंग की हो सकती थी । आर्थर सिमन तो श्रोतव्य गन्धो' (Audible Odours) को भी सूंघते थे । स्विनबर्न ने 'आवाज' की उपमा उस गंध से दी है जो 'लपट की तरह भभक कर बुझ जाती है ।' आधुनिक काव्य और यहा तक कि डी० एच० लारेंस और वर्जीनिया वुल्फ़ के गद्य-काव्य में भी इन शब्दों का प्रयोग होता है । ये शब्द एडिथ सिटवैल की कविताओं मे विशेष रूप से उभरे है जहा 'नीरवता पत्तियों मे अंकुरित होती है' और 'रौशनी गधे की तरह रेंकती है ।'[१] इसी प्रकार वीमर मे फ़ांस लिज्ट ने आर्केस्टरा को यह कहकर चकित कर दिया था कि 'अधिक नीला स्वर निकालो ।'

उच्चकोटि की शब्दावली

साधारण बोलचाल की गद्य-भाषा से काव्य-भाषा में एक मुख्य अन्तर यह है कि काव्य की भाषा व्यक्तिनिष्ठ एवं उत्तेजनामूलक होती है ।[२] इसीलिए कई विद्वानों ने काव्य मे उच्चकोटि की शब्दावली को एक अनिवार्यता घोषित किया है । उदाहरण-स्वरूप एस० एच० केलॉग लिखते हैं—'काव्य में **उच्च शब्दावली** का प्रयोग करना हो तो साधारण हिन्दी क्रियाओं को छोड़ कर **संस्कृत संज्ञाओं या कृदन्त शब्दों** के पीछे होना, करना आदि प्रत्यय लगाने चाहिये जैसे देखना, खाना, जाना, चला जाना की अपेक्षा दर्शन करना, भोजन करना, गमन करना और प्रस्थान करना आदि का प्रयोग करना चाहिए ।'[३]

किन्तु काव्य मे उच्चकोटि की शब्दावली का महत्त्व स्वीकार करते हुए भी हम उस की बोधगम्यता पर ही बल देंगे । उदाहरणतया इन दो वाक्यो की तुलना करे—

१. सुन्दर संध्या के गायको के मधुर स्वर बतला रहे थे कि पुनर्जन्म (Rebirth) की ऋतु समीप आ रही थी ।

२. पक्षियों के गीत बता रहे थे कि वसंत आने ही वाली है ।

इन दोनों में से कौन-सा वाक्य अच्छा है, यह स्पष्ट ही है । फिर भी कुछ लोग ऐसे है जो 'आकाश' की अपेक्षा 'असीमित नीली गहराइया' कहना ही अधिक अच्छा समझते हैं । इसी प्रकार वे 'सागर' को 'अशात समुद्र' ही कहना पसंद करते हैं । यह तथाकथित अच्छी (वास्तव में खराब) लिखाई या शैली उस 'चित्र' को

१. Words and their use, Stephen Ullmann, P. 81
२. Language and reality, W.M. Urban, 164
३. The Grammer of Hindi Language, Rev. S.H. Kellog, P. 271.

अंकित करने में असफल ही रहती है जो प्रायः सभी लेखन शैलियों का उद्देश्य हुआ करता है।'[1]

अस्पष्टता और दुर्बोधता

फास्फर मालम ने भाषागत अस्पष्टता और दुर्बोधता में अन्तर किया है। उनके विचारानुसार भाषा में जो **अस्पष्टता** रहती है वह अनिवार्यतः दोष ही नहीं होती। जब यह अस्पष्टता आकस्मिक न हो कर सोद्देश्य होती है, तो 'गुण' बन जाती है।

इसके विपरीत '**दुर्बोधता**' अवश्य एक दोष है क्योंकि इस से यह पता चलता है कि कवि का काव्य के उपकरणों पर यथेष्ट अधिकार नहीं है। काव्य में कोई विचार या बिम्ब उस समय '**अस्पष्ट**' कहलाता है जब उसे तत्काल समझने की अपेक्षा अनुभव किया जाए। इसके विपरीत कोई विचार या बिम्ब '**दुर्बोध**' तब माना जाता है जब उसका अर्थ समझ और अनुभव दोनों से परे हो। यदि अस्पष्टता संध्यालोक है तो दुर्बोधता अंधेरी रात।—'Vagueness is twilight, obscurity black night।'[2]

काव्य की भाषा

यह आवश्यक नही है कि गद्य की अपेक्षा पद्य की भाषा कठिन ही हो। प्रसिद्ध दार्शनिक ज्याँ पाल सार्त्र अपने सम्बन्धी चार्ल्स श्वेज़र को कविताओं में ही पत्र लिखा करते थे। उत्तर भी उन्हें कविताओं में ही आते थे।[3]

फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि काव्य की भाषा दुरूह नहीं होनी चाहिए क्योंकि अभीष्ट प्रभाव तभी उत्पन्न किया जा सकता है जब शब्द साधारण बोलचाल का अंग बन कर आये।[4] इसीलिए काव्य-भाषा लोक-भाषा से बहुत भिन्न हो कर नहीं चल सकती। यद्यपि पाश्चात्य और पौर्वात्य समीक्षक काव्य में सामान्य शब्दों की अपेक्षा साहित्यिक शब्दों के प्रयोग पर बल देते हैं तथापि 'अर्थगर्भता और सार्वजनिक ग्राह्यता उस (काव्य-भाषा) के विशेष गुण है।'[5]

काव्य की मनोरम भूमि मे आ कर शब्दों का स्वभाव ही बदल जाता है। उन के कोशगत अर्थों की सीमा तब हमारे सामने स्पष्ट हो जाती है। इसीलिए विश्वकवि

---

१. The Art of Writing, W.J. Merry, ch. III, P. 13.
२. An Approach to Poetry, Phosphor Mallam, P. 38
३. Words, Reminiscences, Jean Paul Sartre, P. 97-98
४. The Convention and Revolt in Poetry, John Livingstone Lowes, P. 119
५. नया साहित्यः नये प्रश्न, आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी, ४

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा है—'कविता में जिस भाषा का व्यवहार होता है उसके प्रत्येक शब्द का कोश में निर्दिष्ट अर्थ मिलेगा। वह विशेष अर्थ ही शब्द की तथ्य सीमा है। इस सीमा को छोड़ कर शब्द के भीतर से असीमता को प्रकाशित करना होगा। तभी तो इतने संकेत, इतने कौशल, इतनी भंगिमाएं होती हैं।'[१]

अपनी बात स्पष्ट करने के लिए हम ज्ञानदास की ये पंक्तियां उद्धृत करते हैं—

रूपेर पाथारे आँखि डुबिया रहिल
यौवनेर वने मनपथ हाराइल

यहां '**रूप का पाथार**' क्या है? यदि उस मे आँख डूब भी गई तो रूप कैसे देखा जाएगा? **यौवन का वन** किसे कहते है? वस्तुत: कवि यहां किसी सूक्ष्म बात को कहना चाह रहा है और उसी के प्रभाव को घनीभूत करने के लिए वह इन बिम्बों की योजना कर रहा है। अत: शब्द-दुर्गों के प्राचीरों के पार झाँकने से ही 'सत्य' की उपलब्धि हो सकती है।

काव्य का क्षेत्र ही ऐसा है जिस मे 'भावाभिव्यक्ति के लिए न तो समस्त, न समासयुक्त भाषा की, न तो कठिन भाषा की और न सालंकार भाषा की आवश्यकता है। हा, हमारे शब्द शक्तिशाली अवश्य हो जो भावों को हृदयगम करा सके और अपना प्रभाव डाल सकें।'[२]

शब्दों की अनेकरूपता

ओवेन बारफील्ड लिखते हैं कि '**भाषा का इतिहास एक तार्किक** (Logician) **की अपेक्षा एक कवि के दृष्टिबिन्दु से ही लिखा जाता है।**'[३] अत: हम कह सकते हैं कि भाषा कवि की ही भान्ति निरंकुश होती है। काव्य का व्याकरण ही अलग है। इस लिए उस मे शब्द-रूपों की अनेकता मिलती है। "अनेकरूपता का होना अनुचित या आश्चर्यकर नहीं है क्योंकि उसके पीछे भाषावैज्ञानिक कारण है। पर भ्रम या संशय की स्थिति उत्पन्न न हो और भाषा में अधिक से अधिक सरलता बनी रहे इस दृष्टि से अधिक अभ्यर्हित **एकरूपता** का पक्ष ही माना जाएगा।"[४]

काव्य में शब्द-प्रयोगों का अध्ययन कई दृष्टियों से किया जा सकता है। हम ने इस शोध-प्रबन्ध में कुछ सीमित परिधियों में ही बन्ध कर शब्द-रूपो का अध्ययन किया है। मुख्यत: उस का सम्बन्ध व्याकरण से है। 'कवय: निरंकुशा:' कह कर

---

१. टैगोर का साहित्य-दर्शन, राधेश्याम पुरोहित, २७-२८
२. काव्य में अप्रस्तुत योजना, पं० रामदहिन मिश्र, ४१
३. Poetic Diction, A Study in Meaning, Owen Barfield, 93
४. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएं और समाधान, आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, १०३

हमारे प्रयत्न की कटु आलोचनाएं भी हो सकती हैं परन्तु हम उन सब के उत्तर में भाषा-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् पं० किशोरीदास वाजपेयी का यह कथन उद्धृत करते हैं—

"कविता की भाषा को कुछ स्वतन्त्रता है, व्याकरण का अंकुश वहां नहीं है'—यह भ्रमात्मक धारणा है। भाषा एक है, चाहे उसका गद्य में प्रयोग हो, पद्य में हो, काव्यात्मक गद्य-पद्य मे हो या दर्शन-विज्ञान में हो। व्याकरण का नियन्त्रण सर्वत्र समान है और व्याकरण है भाषा की स्वाभाविक गति का प्रतिपादन । **भाषा अपनी गति-प्रकृति से चले, इस का ध्यान तो कवि को सब से ज्यादा होना चाहिए । वही तो भाषा का 'सम्यक् ज्ञाता' और 'सुप्रयोक्ता' है ।**"[1]

सभी नए और पुराने कवियों के लिए वाजपेयी जी की ये पंक्तियां चेतावनी मानी जा सकती हैं। कवियों की भाषा सम्बन्धी भूलें दिखाना हमारा उद्देश्य नहीं है । हम तो यह चाहते हैं कि कविजनोचित विशेषाधिकारों (Privileges) के कारण काव्य-भाषा में शब्द-रूपों के जो परिवर्तन देखने में आते हैं उन का सुष्ठुरूपेण अध्ययन किया जाए ताकि भाषा के काव्यगत विकास का भी लेखा-जोखा हो सके । काव्य में आ कर भाषा कौन कौन सी करवटें लेती है उसका अनुशीलन मनोरंजक होने के साथ साथ भाषा-विकास की दृष्टि से बड़ा उपयोगी है । इसीलिये काव्य-भाषा में शब्दों के रूपगत प्रयोग ही हमारे अध्ययन के मुख्य विषय बने है ।



१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३७०-३७१

परिच्छेद २.

अर्थ

अर्थ की परिभाषा

पतञ्जलि के अनुसार जिस अर्थ का बोध कराने के लिए किसी शब्द का प्रयोग किया जाता है वही उस शब्द का अर्थ होता है।[1] कैयट और नागेश ने इसी अर्थ को 'वाच्यार्थ' कहा है।

'शब्द का उच्चारण करने से जो अर्थ ज्ञात होता है वही उस शब्द का अर्थ है।'[2] यह भर्तृहरि का लक्षण है।

जयन्त शब्द द्वारा '**संकेतित अर्थ**' को ही प्रयोक्ता का अभीष्ट अर्थ स्वीकार करते हैं।[3]

कुमारिल भट्ट के मतानुसार जो अर्थ शब्द के साथ सदैव '**सम्बद्ध**' रहता है वही उस शब्द का 'अर्थ' होता है।[4]

प्राचीन आचार्यों ने 'शब्द' के साथ साथ 'वर्ण' को भी अर्थयुक्त सिद्ध करने की चेष्टा की है।[5] पतंजलि कूप, सूप और यूप शब्दों का उदाहरण दे कर यह प्रतिपादित करते हैं कि **वर्ण-व्यत्यय** के कारण भी अर्थो मे परिवर्तन होते हैं। किन्तु आधुनिक आचार्य एवं भाषाशास्त्री केवल 'शब्द' को ही अर्थसंपन्न मानते हैं, 'वर्ण' को नहीं।

अर्थ का स्वरूप

भर्तृहरि ने कहा है—**शब्दा लोकनिबन्धना**[6]। अर्थात् लोक-व्यवहार के निमित्त

१. महा० ५, १, ११९
२. वाक्य०२, ३३०
३. न्यायमंजरी, पृ० २९९
४. श्लोकवार्तिक, १६०
५. महाभाष्य, १-१-२
६. वाक्य० २, २२९

ही शब्दों का प्रयोग किया जाता है। शब्दों से रहित ज्ञान की कल्पना नहीं की जा सकती। यह समस्त संसार शब्दों से बन्धा हुआ है। ज्ञान सदा शब्दों में ही निजी स्वरूप को उद्घाटित किया करता है।[1]

अर्थ शब्द से भिन्न नहीं है। वस्तुत: वह शब्द का ही आंतरिक स्वरूप है। इसलिए शब्द को शब्द से 'बहिर्भूत' माना गया है किन्तु अर्थ को 'अबहिर्भूत'[2] (अपृथक्) ही कहा गया है।

अर्थ की प्रधानता

यहां यह प्रश्न उठता है कि शब्द और अर्थ यदि परस्पर अभिन्न हैं तो फिर इन दोनों में कौन प्रधान है और कौन गौण।

पुण्यराज ने 'अर्थ' को प्रधान मानते हुए लिखा है—

शब्दार्थयोरेकात्मत्वेऽप्यर्थांशस्यैव प्राधान्यमुपयोगवशात्[3]

भर्तृहरि विषय-भेद से शब्द और अर्थ दोनों की प्रधानता स्वीकार करते हैं।[4] उनके विचारानुसार लोक में चूंकि 'शब्द' अर्थ-संयुक्त हो कर ही प्रयुक्त किया जाता है इसीलिए वही मुख्य रूप मे प्रतीत होता है। अत: हम कह दिया करते हैं कि लोक-व्यवहार की दृष्टि से 'अर्थ' ही प्रमुख है।

शास्त्रों में **विवक्षा, प्रकरण और वक्ता की इच्छा** के अनुसार शब्द और अर्थ दोनों की ही प्रधानता सिद्ध की गई है।[5]

निरुक्त के एक अंश पर विचार करते हुए दुर्गाचार्य ने 'अर्थ' को ही प्रधान कहा है—

अर्थोहि प्रधानं तद्गुणभूत: शब्द:[6]

सच तो यह है कि भावो और विचारों का ही पहले आविर्भाव होता है, भाषा तो पीछे बनती है। ये भाव-विचार ही एक प्रकार से 'अर्थ' है जिन के न होने पर शब्द की आवश्यकता ही नही होती। 'तात्पर्य यह कि अर्थ पहले होता है और शब्द बाद में।'[7] शब्दो का अपना कोई पृथक् अर्थ नहीं होता। जब कोई सुधी उन का प्रयोग

---

१. वाक्य०, १, १२३, भर्तृहरि
२. महा०,१ १, ६६
३. वाक्य० २, १३०
४. वाक्य०२, १३१, १३२
५. वाक्य०२, १३२
६. निरुक्तम्, २-१
७. अर्थ तत्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, २६

करता है तभी उन का कुछ अर्थ होता है वास्तव में शब्द तो मात्र साधन हैं।[१]

शब्द और अर्थ का सम्बन्ध

शब्द अर्थ के उत्पादक नही होते इसीलिए शब्द विशेष का उच्चारण करते ही पदार्थ की उपस्थिति नहीं हो जाती।[२] इसीलिए शब्द और अर्थ में **ज्ञाप्य-ज्ञापक या प्रकाश्य-प्रकाशक** सम्बन्ध माना गया है। कई बार शब्दों के बिना भी अर्थों का बोध करा दिया जाता है अतः 'शब्द' से पूर्व 'अर्थ' की स्थिति स्वीकार की गई है।[३] शब्द तो अर्थ-बोधन के साधन हैं, 'साध्य' नही।

शब्द और अर्थ की तुलना क्रमशः शरीर और आत्मा से की गई है। कुछ आचार्यों ने शब्द और अर्थ को एक ही आत्मा के दो भेद भी कहा है।[४] इसके अतिरिक्त '**अर्थ**' को वाणी अथवा **शब्द** का पुष्प और फल भी कहा गया है—'अर्थम् वाचः पुष्पम् फलमाह।'[५]

निरुक्त और भाषा-विज्ञान में शब्द और अर्थ के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन किया जाता है। साहित्य-शास्त्र मे भी यह विवेचन होता है। वहां अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के दृष्टिबिन्दुओं से शब्द और अर्थ में सम्बन्ध-सूत्र जोड़े जाते हैं। कोशों में भी इस सम्बन्ध की विवेचना होती है। आचार्य श्री रामचन्द्र वर्मा लिखते हैं—'कोशकार शब्दों और अर्थों के सैद्धांतिक सम्बन्ध वाले क्षेत्र से आगे बढ़ कर उनके **क्रियात्मक सम्बन्ध** वाले क्षेत्र मे प्रविष्ट होता है जहा उसका दृष्टिकोण बहुत कुछ बदल कर नया और स्वतन्त्र हो जाता है।'[६]

वैयाकरणों की दृष्टि मे शब्द और अर्थ मे कोई अन्तर नही है। यदि शब्द प्रतिभा का नित्य रूप है तो अर्थ अनित्य। प्रतिभा इन उभय रूपों मे प्रस्फुटित होती है।

अर्थविज्ञान के अनुसार '**प्रतिभा**' की तीन कोटिया है—वाक् तत्त्व, मनस् तत्त्व और प्राण तत्त्व। इन की क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद मे व्याख्याएं की गई है। दार्शनिकों ने इन्ही तत्वो को अग्नि, वायु और आकाश कह कर पुकारा है।

---

१. The Meaning of Meaning, C. K. Ogden & I. A Richards, P. 9-10

२. महा० १, १, ४५, प्रदीप

३. महा० २, १, १

४. वाक्य०, २-३१

५. निरुक्तम्, लक्ष्मणस्वरूप, १-२०

६. शब्द और अर्थ, रामचन्द्र वर्म्मा, ११

सारांश यह है कि शब्द और अर्थ अन्योन्याश्रित हैं। कालिदास ने शिव और पार्वती की अभिन्नता सिद्ध करने के लिए उनकी उपमा शब्द और अर्थ से दी है।[1] शब्द और अर्थ में सम्बन्ध वास्तविक या स्वाभाविक नहीं होता। यदि ऐसा होता तो 'लड्डू' कहने से मुँह में 'लड्डू' आ जाता, 'आग' शब्द के उच्चारण से ही जलने की अनुभूति होती और 'छुरा' कहने से ही मुँह कट जाता।[2]

अर्थ के प्रकार

अर्थों के भेद कई दृष्टियों से किये जाते हैं।

'स्वं रूपम्' ० सूत्र[3] की व्याख्या में पतंजलि ने अर्थों के दो प्रकार बताये हैं—१. **शब्द का स्वरूप** २. **अर्थ (बाह्य वस्तु या बोध्य पदार्थ)**

व्याकरण में शब्दों द्वारा प्रथम प्रकार का '**शब्दरूपगत अर्थ**' ही **प्रकाशित** है। उदाहरणतः जब वहा यह कहा जाता है कि 'अग्नि से ढक् प्रत्यय होता है' तो 'अग्नि' शब्द भौतिक अग्नि से पृथक् ही माना जाएगा। दूसरी ओर लोक-व्यवहार में 'अग्नि' कहने मे बाह्य पदार्थ विशेष का ही बोध होता है।[4]

शब्दों की अर्थों में निमित्त-भेद से चार प्रकार की प्रवृत्ति मानी गई है। दूसरे शब्दों में, अर्थ के चार प्रकार हैं—**जाति, गुण, क्रिया और द्रव्य**। 'गो' आदि शब्दो से जाति का, इसी प्रकार गुणवाची शब्दों से गुण का, 'चलना' जैसे क्रियावाची शब्दों से क्रिया का बोध होता है। चौथी श्रेणि में यदृच्छा शब्द आते हैं। इन के द्वारा व्यक्ति या द्रव्य का ही ज्ञान होता है।[5] व्यक्ति विशिष्ट ही इन के नाम रखते हैं यथा—डित्थ, कपित्थ इत्यादि।

भारत में अर्थ-विषयक अध्ययन

महर्षि व्यास ने महाभारत के वनपर्व मे पारिभाषिक अर्थ में '**अर्थविज्ञान**' शब्द का उल्लेख किया है। वे बुद्धि के गुण गिनाते हुये लिखते हैं—

शुश्रूषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा
ऊहापोहोऽर्थविज्ञानं तत्त्वज्ञानं च धीगुणाः।[6]

---

१. रघुवंश, १, १
२. न्यायसूत्र, २, १, ५३
३. अष्टा० १, १, ६७
४. महा० १, १, ६७
५. महा० आ० २
६. महाभारत, वनपर्व, २, १९

इसमें 'अर्थ-विज्ञान' शब्द है—अर्थात् 'अर्थ-तत्त्व (प्रतिभा) का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना'।

इसके सिवा ब्राह्मण ग्रंथों में अर्थ सम्बन्धी अध्ययन प्रारंभिक अवस्थाओं में मिलता है। वहां शब्दों की व्युत्पत्तियां बताते हुए अर्थ भी दिये गए है। कहीं कहीं व्युत्पत्तियां भी अशुद्ध हैं।

वैदिक काल में संहिताओं की भाषा का स्तर उन्नत करने के लिए वैदिक ऋषियों द्वारा वैदिक शब्दो के संग्रह-ग्रंथ निर्मित हुए। इन्हें **'निघण्टु'** की संज्ञा दी गई। आजकल जो एकमात्र 'निघण्टु' उपलब्ध है उसकी व्याख्या यास्क के निरुक्त में की गई है। यास्क ने निघण्टु के शब्दों की व्युत्पत्तियों पर प्रकाश डालते हुए अर्थों का भी विश्लेषण किया है। श्री लक्ष्मणस्वरूप प्लेटो और अरस्तु से भी यास्क को ऊंचा स्थान देते हैं।[१]

सच तो यह है कि अर्थ सम्बन्धी समस्याओ को प्रस्तुत करने वाले सर्वप्रथम आचार्य यास्क ही हैं। यद्यपि उन का समस्त अर्थपरक अध्ययन त्रुटिहीन नहीं है तथापि उसकी उपयोगिता मे संदेह नही किया जा सकता। आचार्य यास्क का यह निश्चित मत है कि 'अर्थ-विज्ञान' मे निष्णात होने के लिए कठोर साधना अपेक्षित है।[२]

अतः कहना होगा कि वैदिक वाङ्मय से ही अर्थ-तत्त्व की व्याख्या का श्रीगणेश होता है। वैदिक ऋषियों ने इस विवेचन को मन्त्रों में प्रस्तुत किया है। यह संपूर्ण सृष्टि 'अर्थ-तत्त्व' का ही विस्तार है। वेदो ने इसीलिए सृष्टि को **'वाक् तत्त्व'** का विकसित रूप कहा है। पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि, रावण और भर्तृहरि आदि महावैयाकरणों के अनुसार इस 'वाक्-तत्त्व' के कई नाम है **'शब्द', शब्द-तत्त्व', 'शब्द-ब्रह्म** इत्यादि।

वेदो के ही भावो को आगे चल कर ब्राह्मण ग्रंथों मे समझाने की चेष्टा परिलक्षित होती है। उपनिषदो मे भी 'वाक्-तत्त्व' को ब्रह्म मान कर इस का सविस्तार विवेचन किया गया है। वेद के छह अंगो मे निरुक्त, व्याकरण और शिक्षा मे विशेष रूप से अर्थ-तत्त्व की व्याख्या मिलती है। इसके अतिरिक्त दर्शन ग्रंथो, स्मृतियो और पुराणों में इस तत्त्व की यत्र तत्र व्याख्याएं की गई है।

अर्थ-विज्ञान और व्याकरण

महर्षि पतञ्जलि ने व्याकरण को **'शब्दानुशासन'** की संज्ञा से अभिहित किया

---

१. The Nighantu and the Nirukta, Lakshman Sarup, Introduction, P. 3

२. निरुक्त, यास्क, १३, १२

है। चूंकि वैयाकरण वाक्-तत्त्व की व्याख्या करते हैं इसलिए उन्हें वाक्-तत्त्व का यथार्थ ज्ञाता माना गया है।[1] वस्तुतः 'वाक्-तत्त्व' ही 'अर्थ' में परिवर्तित हो जाता है। अर्थों का बोध कराने में सर्वाधिक सहायता व्याकरण से ही मिलती है। 'यजुर्वेद' में व्याकरण की ओर संकेत करते हुए कहा गया है कि ब्रह्मा ने सत्य और अनृत का 'व्याकरण' किया। इस प्रकार उसने 'सत्य' के प्रति अपनी श्रद्धा और 'अनृत' के प्रति अश्रद्धा अभिव्यक्त की।[2]

आगे चल कर व्याकरण का इतना अधिक महत्त्व प्रतिपादित हुआ कि 'प्रतिभा' और यहां तक कि 'ब्रह्मा' को भी '**महावैयाकरण**' की संज्ञा से अलंकृत कर दिया गया। श्रोत्रेद्रिय द्वारा तो शब्द का 'शब्दत्व' ही उद्घाटित होता है जबकि व्याकरण द्वारा **शब्द का साधुत्व** भी ज्ञात होता है। इसीलिए पतञ्जलि ने व्याकरण को 'शब्दानुशासन' कहा है। यहा 'अनुशासन' शब्द 'विवेचन' अर्थ में है।[3]

आचार्य पाणिनि ने १० पूर्ववर्ती आचार्यों के नाम गिनाए है—१. आपिशलि २. काश्यप ३. गार्ग्य ४. गालव ५. चाक्रवर्मण ६. भारद्वाज ७. शाकटायन ८. शाकल्य ९. सेनक १०. स्फोटायन।[4]

पाणिनि व्याकरण के अतिरिक्त इन ८ व्याकरणों का उल्लेख भी है—ऐन्द्र, चान्द्र, काशकृत्स्न, कौमार, शाकटायन, सारस्वत, आपिशल और शाकल।[5]

श्री जयद्रथ के कथनानुसार ऐन्द्र व्याकरण के नष्ट होने पर भगवान् शिव ने पाणिनीय व्याकरण रचा। चूंकि पाणिनि स्वयमेव शिव के अवतार है इसलिए उन्होंने ही भूतल पर इस दिव्य व्याकरण को प्रतिष्ठित किया। उन के प्रसाद से ही अर्थ-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त होता है।

ज्ञायन्ते सम्यगेवैते यत्प्रसादेन वाचकाः[6]

भर्तृहरि ने वाक्यपदीय के द्वितीय काण्ड के अन्त मे वैयाकरणो के अर्थपरक विवेचन का इतिहास प्रस्तुत किया है।

उस ने अर्थ दो प्रकार का बताया है। १. **अपोद्धारपदार्थ** २. **स्थितलक्षण**
— (वाक्य० १, २४)

---

१. वाक्य० १, १,

२. यजुर्वेद, १९, ७७

३. महा० आ० १

४. अष्टा०६.१.९२। १.२.२५। ८.३.२०। ७.१.७४। ६.१.१३०। ७.२.६३। ३.४.१११. तथा ८.३.१८। १.१.१६ तथा ६.१.१२७। ५.४.११२। ६.१.१२३

५. परिभाषेन्दु टीका, पृ० २

६. हरचरितचिन्तामणि, अध्याय २७, श्लोक ७९ तथा १६३-१६६

आचार्य कपिलदेव द्विवेदी लिखते हैं—'व्याक्रिया या व्याकरण शब्द का जो यौगिक अर्थ किया जाता है अर्थात् विभाजन, उसी अर्थ को 'अपोद्धार' शब्द भी प्रकट करता है।......**अपोद्धार पदार्थ** अर्थात् पदविच्छेद से प्राप्य प्रकृति और प्रत्यय का अर्थ तथा वाक्यविच्छेद से प्राप्य विभिन्न पदों का अर्थ।'[1]

जिसका स्वरूप सदा स्थित (निश्चित) रहता है वह '**स्थितलक्षण**' है। '**वाक्य**' को अर्थ का साधन मानने वाले 'वाक्य' को तथा पद को अर्थ का साधन कहने वाले (यथा पदस्फोटवादी) '**पद**' को 'स्थितलक्षण' स्वीकार करते हैं।

शिशु-भाषा का अध्ययन करने से पता चलता है कि शिशु सर्वप्रथम वाक्यों द्वारा ही अर्थ-शक्ति को ग्रहण करते हैं—'**प्रथम शक्तिग्रहो वाक्य एव**'।[2]

चूंकि लोक-व्यवहार द्वारा ही वाक्यार्थ निश्चित होते हैं अतः 'स्थितलक्षण' व्याकरण के मुखापेक्षी नहीं होते। दूसरी ओर 'अपोद्धारपदार्थ' पूर्ण रूप से व्याकरण पर निर्भर होते हैं। वाक्य-रूपो में जो प्रयोग होते हैं उस के लिए '**लोक-व्यवहार**' ही एकमात्र प्रमाण है। किन्तु धातु-प्रत्यय, निपात आदि के अर्थ जानने के लिए हमें 'व्याकरण' का आश्रय लेना ही पड़ता है।

कई बार शब्दो के अर्थ व्युत्पत्तिलभ्य अर्थों से भिन्न होते है। इसीलिए पाणिनि ने **लोक-प्रसिद्धि** और **लोक-व्यवहार** को अर्थ-निर्णय का प्रमुख साधन माना है।[3]

आचार्य विश्वनाथ भी उन से सहमत है। वे कहते हैं—'**अन्यद्धि शब्दानां व्युत्पत्तिनिमित्तमन्यच्च प्रवृत्तिनिमित्तम्**।'[4] अर्थात् शब्दो की व्युत्पत्ति अन्य रूप से होती है और उनका प्रयोग भिन्न रूप से होता है।

हिन्दी व्याकरण का अर्थपरक अध्ययन

डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन' लिखते है—'भाषाशास्त्र की वह शाखा जो उच्चार के अर्थ पर विचार करती है, अर्थविचार या अर्थ-विज्ञान या अर्थोद्बोधन-शास्त्र कहाती है। इसके लिए अंग्रेजी में Semantics शब्द प्रचलित है'[5]।

वक्ता, श्रोता, देश, काल, प्रकरण आदि के अनुसार शब्दों के अर्थ बदलते रहते हैं। इसीलिए ब्रील साहब ने ठीक ही कहा है कि जो व्यक्ति अर्थों के परिवर्तनो

१. अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, २१८, २१९
२. मंजूषा, नागेश, पृ० १९
३. अष्टा० १, २, ५५ से ५६ तक।
४. साहित्यदर्पण, २, ५।
५. हिन्दी भाषा, अतीत और वर्तमान, निबन्ध 'हिन्दी व्याकरण का अर्थोद्बोधपरक अध्ययन', २०९

का इतिहास लिखते समय केवल शब्दों पर ही विचार करेगा वह या तो बहुत से तथ्य खो बैठेगा या उन की गलत तरह से व्याख्या करेगा।[1] ब्रील साहब ने अर्थ-परिवर्तन के कुछ दूसरे कारण भी बताए हैं—यथा 'दलीय युद्ध, वर्गों का मेल-मिलाप, स्वार्थों और विचारों का संघर्ष, महत्त्वाकांक्षाओं की विविधता और अभिरुचियों का प्रभाव।[2]

अब हम डॉ० सुमन के एक निबन्ध के आधार पर कुछ विशेष प्रसंगों में व्याकरण के प्रमुख अंगों में अर्थ-परिवर्तनो का वर्णन करेगे। कुछ उदाहरण देखें—

१. "यहां '**है**' गलत लिखा है—" इस वाक्य में प्रथम 'है' क्रिया न हो कर संज्ञा मानी जानी चाहिए। यही व्याकरण का अर्थपरक अध्ययन है।

२. 'मैं यहां से **चला** तो घण्टे तक पहुंच ही जाऊंगा—इस वाक्य में 'चला' क्रिया भूतकाल की नही है। यहा यह भविष्यत् काल की क्रिया है।

३. 'लडके **को** पुस्तक रखनी चाहिए'—यहां 'को' कर्म या सम्प्रदान कारक की अपेक्षा कर्ता कारक का परसर्ग है।

४. 'मैं ने उस **से** पाठ सुनाने के लिए कहा'—यहां 'से' करण या 'अपादान' कारक की बजाय कर्म कारक का परसर्ग है।

५. 'निर्धन **के** भी हृदय होता है'—बोलचाल के इस वाक्य में 'के' सम्बन्ध कारक की बजाय अधिकरण कारक का परसर्ग है।

६. पुस्तक एक रुपये **की** मिली है'—मे 'की' करण कारक का ही परसर्ग है, सम्बन्ध कारक का नही।

७. दफतर का बाबू जब साहब से कहता है—'**साहब** के ठाठ ही निराले है' तो यहा 'साहब' संज्ञा न हो कर 'आप' अर्थ में सर्वनाम है।

८. अशोक जब यह आत्मप्रशंसात्मक वाक्य कहता है—'**अशोक** उन मे नही है जो हिम्मत हार बैठते है'—तो भी 'अशोक' शब्द संज्ञा न हो कर सर्वनाम 'मैं' का ही विकल्प है।

९. 'तुम बिल्कुल **गधे** हो' वाक्य मे 'गधे' शब्द भी सज्ञा न हो कर 'मूर्ख' अर्थ में विशेषण समझना चाहिए।

१०. पत्नी जब पति के सम्बन्ध मे कहती है—'**वे** कालेज से अभी नही लौटे'। तो यहा 'वे' सर्वनाम न हो कर एक प्रकार से 'संज्ञा' ही है जिसका अर्थ है—'मेरे पति'।

---

१. An Essay on Semantics. Michel Breal.

२. Semantics, Michel Breal, P. 105

११. 'मैं' और 'मेरा' ही माया है—वाक्य में 'मैं' और 'मेरा' सर्वनाम न हो कर भाववाचक संज्ञाएं हैं।

१२. "मैं अभी **दो** मिनिट में नहाता हूं"—यहां 'दो' निश्चित संख्या का वाचक न होने के कारण **अनिश्चित** संख्यावाचक विशेषण है। 'दो' का अर्थ है—कुछ ही मिनिट। इसी प्रकार के वाक्य हैं—जब जेब में **चार** पैसे होते है, **चार** दिन की चाँदनी आदि।

१३. 'कल छुट्टी **है**'—मे 'है' क्रिया 'होगी' अर्थ मे भविष्यत् काल की है।

१४. 'तुम रुको, मैं अभी **आया**'—मे भी 'आया' क्रिया भूतकाल की न हो कर भविष्यत् काल की है।

१५. 'मैं अभी वहां **पहुंच रहा हूं**, तुम चलो'—यहा भी 'पहुंच रहा हूं' क्रिया अपूर्ण वर्तमान काल की नही, अपितु भविष्यत् काल की है। अर्थ है—'पहुंचूंगा'।

१६. बस, अब और परिश्रम किया तो समझो मैं **थका**—यहां 'थका' सामान्य भूतकाल की बजाय आसन्न भविष्यत् काल की क्रिया है। अर्थ—'थक जाऊंगा'।

१७. 'बच्चे **पिट** रहे है', फसल **कट** रही है—वाक्यों में 'पिटना' और 'कटना' क्रियाएं कर्तृवाच्य न हो कर कर्मवाच्य ही है क्योंकि बच्चे और फ़सल कर्म है, कर्त्ता नहीं।

१८. "यह '**अगर**' '**मगर**' छोड़ो, चुप कर के मेरा कर्ज़ा चुका दो"—वाक्य में 'अगर' 'मगर' अव्यय न हो कर 'संज्ञा' शब्द ही है।[1]

इस विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि व्याकरण मुख्यत: 'शब्द-रूपों' को ले कर चलता है जबकि अर्थविज्ञान 'अर्थों' की दृष्टि से शब्दों का अध्ययन करता है।

अर्थ-निर्णय के साधन

बहुत से शब्द एक ही अर्थ के वाचक होते है यथा इन्द्र, शक्र, पुरुहूत। इसके विपरीत एक ही शब्द के बहुत से अर्थ भी होते है यथा अक्ष, पाद, माष इत्यादि शब्द अनेकार्थक है।[2] आचार्य यास्क, पाणिनि, पतञ्जलि और भर्तृहरि ने शब्दों की नानार्थकता के सम्बन्ध मे विवेचन किया है। संस्कृत के अनेक कोशो में पर्यायवाची

१. यह विवेचन डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन' के निबन्ध से प्रेरित हो कर लिखा गया है, हिन्दी भाषा, हिन्दी व्याकरण का अर्थोद्बोधपरक अध्ययन, २०९-२१६

२. महाभाष्य, १.३.१.६

और नानार्थक शब्दों को सम्मिलित किया गया है । इसके अतिरिक्त संस्कृति के विकास के साथ-साथ शब्दार्थों में भी विस्तार देखने में आता है ।

'बृहद्देवता' में बताया गया है कि वैदिक मन्त्रों में अर्थ-बोध **प्रयोजन**, **प्रकरण**, **लिङ्ग**, **औचित्य**, **देश** और **काल** के अनुसार करना चाहिये ।[1]

भर्तृहरि ने अर्थ-निश्चय के इस से मिलते जुलते साधन बतलाये हैं ।[2] जो निम्नलिखित हैं—

१. **संयोग**—'संसर्ग' या 'संयोग' किसी वस्तु विशेष से सम्बन्ध को कहते हैं । इस की सहायता से भी अर्थ निश्चित किया जाता है । 'हरि' शब्द के विष्णु, सिंह, वानर आदि अनेक अर्थ हैं किन्तु 'सशंखचक्रो हरिः' में शंख और चक्र के संयोग से हरि का अर्थ 'विष्णु' ही लिया जाएगा ।

२. **विप्रयोग**—इस का अर्थ है—वियोग, पार्थक्य । इस में प्रसिद्ध वस्तुओं के 'विप्रयोग' द्वारा ही अर्थ का निर्णय होता है । 'गौ' के किरण, गाय, पृथ्वी, बैल, वणी आदि कई अर्थ हैं पर 'अवत्सा गौः' में 'गौ' का अर्थ गाय ही है ।

३. **साहचर्य**—'रामलक्ष्मणौ' मे लक्ष्मण के साहचर्य से 'राम' का अर्थ दाशरथि राम ही लेंगे, परशुराम या बलराम नही ।

४. **विरोधिता**—'कर्णार्जुनौ' में 'कर्ण' का विरोधी (शत्रु) रूप मे उल्लेख है अतः 'अर्जुन' यहा पार्थ अर्जुन ही है, कार्तवीर्य अर्जुन नही ।

५. **अर्थ**—'अर्थ' शब्द यहां प्रकरण या प्रयोजन अर्थ मे है । **गोपाल** को बुला कर लाओ वह पढाएगा' वाक्य मे 'गोपाल' का अर्थ प्रकरण के अनुसार 'गोपाल' नामक व्यक्ति है, ग्वाला नही ।

६. **प्रकरण**—प्रकरण का अर्थ है 'प्रसंग' । 'सैन्धव लाओ' वाक्य यदि भोजन के प्रसंग में कहा जाये तो 'सैन्धव' का अर्थ 'नमक' होगा किन्तु कही प्रस्थान करने से पूर्व कहा जाए तो अर्थ होगा 'घोड़ा' ।

आचार्य पतञ्जलि[3], भर्तृहरि[4], जगदीश[5], नागेश[6], यास्क[7], आदि ने '**प्रकरण**'

---

१. बृहद्देवता, २.११८
२. वाक्य० २, ३१७-३१८
३. महा०, ६, १, ८४
४ वाक्य० २, ३३५
५. शब्दशक्तिप्रकाशिका, पृ० १७३
६. महा० १, १ । उद्योत ।
७. निरुक्त, १३, १२

को अर्थ-निश्चय का सर्वप्रमुख साधन माना है। पश्चिम में भी विद्वान् ऑग्डेन औ रिचर्ड्स[1] भी ऐसा ही कहते हैं।

७. **लिङ्ग**—इसका अर्थ है 'चिन्ह'। 'कुपितो मकरध्वजः' में 'मकरध्वज' क अर्थ काम देव है, सागर या मकराकार ध्वज नहीं।

८. **सान्निध्य**—अन्य शब्द के 'सान्निध्य' (सामीप्य) द्वारा भी अर्थ निश्चि होता है। 'रामो जामदग्न्यः' में 'जामदग्न्य' के सान्निध्य से राम का अर्थ परशुरा ही है, दाशरथि राम नहीं।

९. **सामर्थ्य**—'मधुना मत्तः पिकः' में 'पिक' को मत्त करने के सामर्थ्य क दृष्टि से 'मधु' का अर्थ 'वसन्त' ही है, शहद, शराब या मधु राक्षस नहीं।

१०. **औचित्य**—जो 'उपयुक्त' हो वही ठीक अर्थ होता है। 'पातु वो दयित मुखम्' में 'मुख' का अर्थ है 'साम्मुख्य'। यहा 'मुख' शब्द 'मुँह' अर्थ में नहीं है।

११. **देश**—'गगन मे चन्द्र है'—वाक्य में 'देश' (स्थान) गगन की दृष्टि से ह 'चन्द्र' का अर्थ चन्द्रमा है, कपूर नहीं।

१२. **काल**—'निशि चित्रभानुः' और 'दिवा चित्रभानुः' मे निशा और दिन क कालानुसार 'चित्रभानु' का अर्थ क्रमशः 'अग्नि' और 'सूर्य' समझा जाएगा।

१३. **व्यक्ति**—यहां व्यक्ति का अर्थ है 'लिङ्ग'। मित्र' शब्द 'सूर्य' औ 'सुहृद्' दोनों अर्थ रखता है। पुं० होने पर सूर्य और नपुं० होने पर 'सुहृद्' अर्थ हो है इसी प्रकार गो, ग्राम आदि शब्दों का अर्थ-निश्चय भी 'व्यक्ति' (लिंग) के अनुसा करना चाहिए।

१४. **स्वर** पतञ्जलि ने इस का उदाहरण दिया है—'इन्द्रशत्रुर्वर्धस्व' शब्द वृत्र कथा[2] मे ऋत्विज् द्वारा 'इन्द्रशत्रुः' शब्द का अन्तोदात्त (तत्पुरुष समास) के स्था पर आद्युदात्त (बहुव्रीहि समास) उच्चारण कर देने पर स्वयं वृत्र ही मारा गया।

१५. सत्व-षत्व, णत्व-नत्व के भेद से भी पुण्यराज ने अर्थों का निर्णय होन स्वीकार किया है, '**प्रणायक**' का अर्थ है प्रणयनकर्त्ता (ग्रंथ-लेखक) और '**प्रनायक**' क अर्थ है नायकहीन (देश)। 'प्रगत है नायक जिसका'—बहुव्रीहि समास।

१६. **अभिनय**—चेष्टाओं, भावभंगिमाओ और मुद्राओं के द्वारा भी अर्थ क निर्णय किया जाता है। इतना, उतना, आदि शब्दों के साथ कई बार विशालता औ आकार की प्रतीति हस्त-संकेतों से कराई जाती है।

---

१. Meaning of Meaning, C. K. Ogden and Richards Ch. 3, 10

२ (क) पाणिनीय शिक्षा, श्लोक ५२ (ख) शतपथब्राह्मण, १ ६.३.१

१७. **वक्ता की भावना**—एक ही वाक्य को वक्ता 'काकुवक्रोक्ति' द्वारा भिन्न भिन्न अर्थों में प्रयुक्त कर सकता है अतः वाक्यार्थ मुख्यतः वक्ता की इच्छा पर भी निर्भर होता है।[1] वक्ता जिस अर्थ में वाक्य बोलता है वही उस का अभीष्ट अर्थ होता है।[2]

१८. **अन्वय**—कई बार वाक्य में शब्द उलट-पुलट रखे होते हैं। ऐसी स्थिति में 'अन्वय' (क्रम) को ही अर्थ-निश्चय का साधन माना जाएगा। इसे 'अर्थकृत आन्तर्य' भी कहा जाता है।

१९. **व्याख्यान**—कुछ प्रसंगों में किसी शब्द के एक से अधिक अर्थ ठीक लग सकते है। ऐसी स्थिति में आचार्यों के व्याख्यान (विवरण) के अनुसार ही अर्थ किया जाएगा। 'सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे' में 'सिद्ध' शब्द का अर्थ संदिग्ध है पर आचार्यों के व्याख्यान को ध्यान में रखकर यहा 'नित्य' अर्थ ही मानते हैं।[3]

२०. **ज्ञानरूप (बौद्ध) प्रकरण**[4] —पहले से सुनी-सुनाई बातों के आधार पर भी हम किसी शब्द का अर्थ शीघ्रतापूर्वक समझ लेते हैं। किसी पौराणिक शब्द को देख कर, यदि हम पहले से तत्सम्बन्धी कथा जानते हैं, तो शीघ्र ही उस का अर्थ हमे पता चल जाता है।

२१. **सामान्य तथा व्यावहारिक ज्ञान**—इस की सहायता से भी अर्थ-बोध मे सहायता मिलती है अतः यह भी अर्थ-निश्चय का साधन है। '**अवचनात् लोकविज्ञानात् सिद्धम्**।'[5]

२२. **शब्द का अध्याहार**—अपूर्ण वाक्यो का अर्थ-निश्चय अप्रयुक्त शब्दो के 'अध्याहार' (पूर्ति) से होता है। यथा 'घुसो', 'खाओ' का अर्थ 'घर मे घुसो', 'आम खाओ' कहने से ही निश्चित होता है।[6] हम अर्थ और प्रकरण से ही इन शब्दों का अध्याहार कर लेते है।[7]

उपर्युक्त साधनो के अतिरिक्त '**वाक्य**' '**अन्वयव्यतिरेक**' '**युक्तिसंगतता**' को

---

१. (क) वाक्य० २, ३१६ (ख) साहित्य दर्पण, परिच्छेद २।
२. (क) महा० १, १, ५५ (ख) वाक्य० २, ४०६।
३. (क) महा० आ० १ (ख) परिभाषेन्दु शेखर, परिभाषा ६।
४. परिभाषेन्दु, परिभाषा ६, नागेश।
५. महा० १, १, ६४।
६. (क) महा० १, १, ४४ (ख) वाक्य० २, ३३८, पुण्यराज
७. महा० २, २, ११

भी गिनाया जाता है परन्तु इन का समावेश पहले बताये हुए साधनों में ही हो सकता है।

आचार्य पुण्यराज ने सभी साधनों को 'सामर्थ्य' में ही अन्तर्भूत किया है। उनके मतानुसार 'सामर्थ्य का अर्थ यह है कि कौन सा अर्थ वाक्यार्थ को स्पष्ट करने वाला, प्राकरणिक और युक्तियुक्त है वही ठीक अर्थ है।'

आधुनिक भाषावैज्ञानिकों ने इसी 'सामर्थ्य' को 'प्रकरण' कहा है। हर्मन पाउल ने भी उपर्युक्त साधनों से मिलते जुलते कुछ साधन गिनाए हैं[1] पर उनके विवेचन की तुलना में भारतीय आचार्यों का अर्थ-निर्णय सम्बन्धी विवेचन अधिक विस्तृत और वैज्ञानिक है।

अर्थ-परिवर्तन

भाषा के विकास में प्रायः व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ लुप्त हो जाता है और उसके स्थान पर दूसरे अर्थ लोक में प्रचलित हो जाते है। अतः शब्द और उसकी व्युत्पत्ति मे सम्बन्ध 'नित्य' नही होता। आचार्य विश्वनाथ इस लिए लोकप्रसिद्ध अर्थों को ही अधिक संगत मानते है।[2] पश्चिमी विद्वान् स्टीफेसन स्मिथ भी लिखते है—'तुम शब्दों का सच्चा इतिहास जानने के लिए सदा शब्दो की व्युत्पत्ति पर ही निर्भर नही रह सकते। कारण यह है कि अपनी यात्राओं मे शब्द सैकड़ो बार अपने अर्थ बदलते रहते है और अपने मूल अर्थ से बहुत दूर चले जाते है।[3]

जनता ही भाषा के परिवर्तनों को स्वीकार या अस्वीकार करती है। अतः कोई व्यक्ति विशेष किसी शब्द के अर्थ मे परिवर्तन नही कर सकता। इसी लिए 'हम में से प्रत्येक को भाषा बनाने का अवसर मिलता रहता है।'[4] ध्वनि-परिवर्तनों की अपेक्षा अर्थ-परिवर्तनों मे सामाजिक प्रवृत्तियां अधिक स्पष्टता से प्रकट होती है।[5] अर्थ-परिवर्तन व्यावहारिक जगत् से एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करते हैं। इतना ही नही अर्थों की परिवर्तित अवस्थाओं के अध्ययन से प्राचीन युगों के जीवन,[6] संस्कृति,

---

१. Principles of History of Language. Ch. IV.
२. साहित्य दर्पण, २, ५
३. How to Double your Vocabulary, S. Stephenson Smith. 149
४. All about Language, Mario Pei, P. 14
५. The Gift of Tongues., Margaret Schlauch, 117
६. Language, Leonard Bloomfield, P. 427

सभ्यता, धर्म और दर्शन आदि पर भी आलोक-प्रक्षेपण होता है। अतः अर्थ-परिवर्तन के अध्ययन का बड़ा महत्त्व है।

अर्थ-परिवर्तन का वर्गीकरण

संसार के प्रसिद्ध भाषाशास्त्री इस विषय में एकमत हैं कि शब्दों के अर्थ-परिवर्तनों का निश्चित और निर्दोष वर्गीकरण प्रस्तुत करना कठिन है।

टी० जी० गोल्ड्सटकर लिखते हैं—'हम ऐसे मूलभूत नियम नहीं बना सकते जो इस बात का निर्देष करते हों कि किसी विशिष्ट शब्द के अर्थ में विस्तार ही होगा संकोच नहीं, अथवा संकोच ही होगा, विस्तार नहीं।'[1]

भारतयूरोपीय भाषाओं के पर्यायवाची शब्द-कोष की भूमिका में सी०डी० बक भी अर्थ-परिवर्तनों की अनिश्चितता स्वीकार करते हुए लिखते हैं—'जो अर्थ-परिवर्तनो के मूल कारण हैं वे भाव-संपर्क इतने गड्ड-मड्ड होते हैं कि उनका निश्चित विभाजीकरण सम्भव नही होता।'[2]

फिर भी भारतीय और पाश्चात्य भाषा-वैज्ञानिकों ने अर्थ-परिवर्तनों के कारणो का विस्तृत अध्ययन कर के उन्हें कुछ श्रेणियो में विभाजित किया है। प्रायः ये श्रेणियां तीन प्रकार की बताई जाती हैं—१. अर्थ-विस्तार २. अर्थ-संकोच ३, अर्थादेश।

हम डॉ० केशवराम पाल की इस स्थापना से सहमत नहीं हैं कि उपर्युक्त वर्ग-विभाजन सर्वप्रथम मिशेल ब्रेआल द्वारा किया गया है।[3] मिशेल ने अपनी पुस्तक Essai de Semantique में इन श्रेणियों का निर्देश किया था किन्तु उस से पहले भारत में आचार्य पतंजलि, यास्क, पाणिनि, भर्तृहरि, कैयट, नागेश आदि ने अनेक स्थलों पर इन अर्थ-परिवर्तनो की विवेचना की थी।

हम डॉ० केशवराम पाल की इस घोषणा को भी भ्रमपूर्ण मानते हैं कि—'यह असंदिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि अर्थ-परिवर्तन की उपर्युक्त तीन श्रेणियों के अतिरिक्त चौथी श्रेणी नहीं हो सकती।'[4] किसी भी भाषा के अनुसंधान में इस

---

१. Introduction to The Natural History of Language, P. 373

२. A Dictionary of selected Synonyms in the principal Indo-European Languages, Preface, P. VI C. D. Buck

३. हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों में अर्थ-परिवर्तन, डॉ० केशवराम पाल, ३३

४. हिन्दी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दो मे अर्थ-परिवर्तन, ३५

प्रकार का अन्तिम मत प्रकट करना तर्कसंगत नहीं है। हमारा यह दृढ़ विचार है कि गहन अध्ययन के उपरान्त अर्थ-परिवर्तनों की अन्य श्रेणियां भी बनाई जा सकती हैं।

अब हम उपर्युक्त तीन श्रेणियों के सम्बन्ध में विचार करेंगे—

(१) अर्थ-विस्तार

आचार्य भर्तृहरि ने अर्थ-विस्तार के सम्बन्ध मे दो बातों का संकेत किया है[1]—

(१) 'पदार्थ के एक देश की अविवक्षा'—यथा गोष्ठ, तैल शब्द।

(२) 'उपात्त अर्थ छोड़े बिना ही दूसरे अर्थ का संग्रह'—अर्थात् अपने अर्थ का बोध कराते हुए अन्य संबद्ध अर्थों को भी प्रकट करना यथा 'काकेभ्यो दधि रक्ष्यताम्'—कौओं से दही की रक्षा करना। पतंजलि के मतानुसार भी 'अर्थ-विस्तार विशेष की अविवक्षा और सामान्य की विवक्षा से होता है।'[2] उदाहरणतया 'प्रवीण'[3] शब्द 'वीणावादन मे प्रकृष्ट' व्यक्ति का वाचक था। धीरे धीरे यह शब्द 'कार्यकुशल' अर्थ में चल पड़ा। यहां विशेष अर्थ (वीणावादन) में प्रयुक्त होने वाला शब्द ही सामान्य अर्थ (कार्यकुशलता) का बोध कराने लग पड़ा है यही 'प्रवीण' शब्द का अर्थ-विस्तार है।

आचार्य पतंजलि ने 'संप्रोदश्च कटच्' सूत्र[4] के भाष्य मे गोष्ठ, तैल, गोयुग, कट और पट इन शब्दों के अर्थ-विस्तार की विवेचना की है। इन के अतिरिक्त स्याही, गवेषणा, कुशल, निपुण आदि शब्दों की भी 'विशेष' से 'सामान्य' अर्थों में परिणति देखी जा सकती है। संस्कृत मे प्रारम्भ मे ऋषभ, पुंगव और वृषभ शब्द 'बैल' इस विशिष्ट अर्थ के ही वाचक थे। अब इन सब का 'श्रेष्ठ' यह सामान्य अर्थ हो गया है यथा भरतर्षभ, नरपुंगव।

(२) अर्थ-संकोच

शब्द क अभिधा-शक्ति के रूढि, यौगिक और योग-रूढ़ि इन तीन भेदों का सम्बन्ध अर्थ-संकोच से ही है। आचार्य यास्क[5] ने अश्व, गो, तृण, परिव्राजक, भूमि आदि

---

१. वाक्य० २, ३०६—३२७

२. महा० १, २, ६८

३. महा० ५, २, २६, कैयट

४. अष्टा० ५, २, २६

५. निरुक्त, १, ४—दे० अध्याय ३,४,५।

शब्दों के उदाहरणों द्वारा 'अर्थ-संकोच' की व्याख्या की है। आचार्य पतंजलि,[1] भर्तृहरि,[2] कैयट,[3] नागेश,[4] हेलाराज[5] आदि ने भी इस विषय पर अनेक स्थलों पर विचार किया है। **देव, नूपुर, मणि, मण्डप, व्याघ्र** आदि शब्द विशिष्ट अर्थों में रूढ़ हो गए हैं।

ब्राह्मण ग्रंथों में **अग्नि, इन्द्र, ऋषि, पितृ, पुरुष, ब्रह्मन्, मातरिश्वन्, यज्ञ, विष्णु, वृत्र, सोम, हरि, हिरण्य** आदि शब्दो का व्यापक अर्थों में प्रयोग होता था तदनन्तर इन के अर्थों में संकोच हो गया। इसी प्रकार **आस्तिक, इन्द्रिय, क्षेत्रिय, नास्तिक, श्रोत्रिय** और **साक्षी** शब्दों के अर्थ भी सकुचित हो गये हैं।

अर्थ-संकोच के कई कारण बताये गए हैं यथा—**समास**[6], **उपसर्ग**[7], **विशेषण**[8], **लोकप्रसिद्धि**[9], **पारिभाषिकता, वस्तु-नामकरण, तद्धित** और **कृदन्त प्रत्यय**।[10]

इन के अतिरिक्त 'स्व-भाव' के आधार पर भी कुछ शब्द विशिष्ट अर्थों का ही ज्ञान कराते हैं। ऐसे शब्दों के आरम्भ में 'स्व' नही जोड़ा जाता। यथा 'सम्बन्धी' शब्द। इसी प्रकार 'माता के साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए' वाक्य में 'माता का निजी होना संकेतित ही रहता है। यहा 'अपनी' कहे बिना ही अर्थ-बोध हो जाता हैं।[11] यह मत पतञ्जलि का है।

सच तो यह है कि 'अर्थ-संकोच' अनेक कारणों से होते हैं। मिशेल ब्रेआल तो यहां तक कहते है कि--'किसी राष्ट्र की सभ्यता जितनी अधिक विकसित होगी अर्थों में उतने ही अधिक संकोच होंगे।'[12]

---

१ महा० आ० १—दे० अध्याय ४, ५
२. वाक्य०, का० ३, ५५६
३. महा० १, २. २२
४. (क) महा० ३. २. ५६ (ख) परिभाषेन्दु, परि० १०७ (ग) मंजूषा, १०७
५. वाक्य० का० ३, ४६५
६ (क) महा० आ० १ (ख) वाक्य० का० ३, ५५६
७. (क) यजु: प्रातिशाख्य, ८, ५४ (ख) ऋक् प्रातिशाख्य, १२, २५
८. महा० २, १, ५५
९. महा० २, २, २९
१०. महा० ७, १, ९६
११. महा० १, १, ७०
१२. Semantics, Michel Breal, P. 109

जिस मूल लेटिन शब्द से अंग्रेजी का **'मिनिस्टर'** शब्द विकसित हुआ है उस का प्रारम्भ में 'सेवक' अर्थ था। आज 'मिनिस्टर' शब्द 'मन्त्री' अर्थ में चलता है।[१] इसी प्रकार अंग्रेजी शब्द 'इन्फ़्लूएंस' (Influence) का प्राचीनकालीन ज्योतिर्विदों ने अर्थ किया था—'वह द्रव जो नक्षत्रों से निकल कर व्यक्तियों और वस्तुओं पर **'प्रभाव'** डालता है।'[२] इसी प्रकार भाषा-विज्ञान के अन्तर्गत हम अर्थ-संकोच के उदाहरणों का अध्ययन कर सकते हैं।

(३) अर्थादेश

भर्तृहरि ने अर्थादेश के दो प्रकार[३] बतलाये हैं—१. 'गौण और प्रधान का विपर्यय'—अर्थात् शब्द के मुख्य और गौण अर्थों में विपर्यय हो जाता है।

२. 'समस्त पदार्थ की अविवक्षा'—अर्थात् शब्द का वास्तविक अर्थ लुप्त (अविवक्षित) हो जाता है और उसके स्थान पर नया अर्थ हो जाता है।

वेदों में जीतना, अधिकार करना अर्थों में 'सह्' धातु मिलती है किन्तु संस्कृत में यह 'सहन करना' अर्थ में प्रचलित हो गई है। इसी प्रकार क्रान्तदर्शी, मेधावी आदि अर्थों में वेदों और महाभाष्य में 'कवि' शब्द विद्यमान है—**ता जाति कवयो विदुः**[४] आज **'कवि'** पद्यों के रचयिता को कहते हैं। इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण में **'मृग'** शब्द 'सिंह' अर्थ मे है। वेदों में **'गन्धर्व'**[५] शब्द जाति विशेष की अपेक्षा अग्नि, चन्द्रमा, यज्ञ, वायु, सूर्य आदि अर्थों मे है। इसी तरह **'अप्सरस्'** शब्द ओषधि, किरण, नक्षत्र आदि अर्थों में है। आज यह शब्द दिव्य स्त्रियों का वाचक है।[६]

ऋग्वेद में **'उष्ट्र'** शब्द का अर्थ है—एक विशेष प्रकार का भैंसा जो लालिमा लिए कालिमा-युक्त होता है।[७] 'उष्ट्र' का मूल अर्थ है—'जला हुआ' (भूरा)।

भाषावैज्ञानिकों ने इस शब्द का 'ऊंट' अर्थ देख कर आर्यों का भैंसे वाले स्थान से ऊंट वाले प्रदेश में जाना सिद्ध किया है। हमे इस स्थापना का पुष्ट प्रमाण

---

१. अर्थ-तत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, २००

२. Semantics, Michel Bıeal, P. 127-128

३. वाक्य० २, ३०६-३२७

४. महा० ४, १, ६३

५. यजु० १८, ३८—४३

६. यजु० १८, ३९—४०

७. **ऋग्वेद** (i) ८.४६.२२ (ii) १.१३८.२ (iii) ८.५ ३७ (iv) ८.६.४८ (v) ८.४६ ३१

खोजने पर भी नहीं मिला है। अतः यह धारणा निराधार है। भाषा-वैज्ञानिक 'उष्ट्र' शब्द को अर्थादेश के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं। हमारे विचारानुसार व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ 'भूरा' (रंग) से ही विकसित होता होता यह शब्द 'भूरे रंग' के एक विशेष पशु 'ऊंट' के लिए प्रयुक्त किया जाने लगा होगा। ऋग्वेद में भी 'लालिमा लिये कालिमा-युक्त'[1] भैसा भी लगभग 'गहरे भूरे रंग' का ही रहा होगा। वैसे इस सम्बन्ध मे अभी अधिक अनुसंधान अपेक्षित है।

---

१. ब्रजभाषा में इस रंग के लिए 'धूमरा, धूमरि या धूमरी' शब्द-रूप चलते हैं। दे० ब्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड।

परिच्छेद ३.

व्याकरण के कुछ प्रमुख अंग

पद्य की अपेक्षा गद्य में भाषा व्याकरणसम्मत होती है। कवि तो स्वभावतः निरंकुश हुआ करते हैं इसलिए वे कविताएं लिखते समय व्याकरण के नियमों का ध्यान नहीं रखते। फिर भी काव्य-भाषा के अध्ययन का विशेष महत्त्व है। हम ने इस शोध-ग्रंथ में मुख्यतः व्याकरण और भाषा-विज्ञान की दृष्टि से आधुनिक कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्दों का अध्ययन करने की चेष्टा की है। हमारा यह दृढ विश्वास है कि काव्य में भाषा जो अनेक करवटें बदलती है भाषा-विकास का ठीक-ठीक लेखा-जोखा प्रस्तुत करने के लिए उस का भी अनुशीलन करना आवश्यक है। इस प्रकार हमारे सामने कितने ही नए तथ्य उद्घाटित होते हैं। अभी तक हिन्दी साहित्य में यह क्षेत्र प्रायः उपेक्षित ही रहा है। समीक्षकों ने इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया है कि कवियों का भी एक अपना व्याकरण होता है। वे जाने या अनजाने भाषा का आश्रय लेते समय इस व्याकरण से बधे रहते हैं इस लिए काव्य की भाषा में जो शब्द प्रयुक्त होते हैं उन में गद्य की भाषा से लगभग मिलते-जुलते परिवर्तन देखने में आते है। हम ने व्यवहार-खण्ड के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत करते समय ग्रंथ के अन्त मे इन परिवर्तनों का वर्गीकरण किया है। आशा है इस के अध्ययन से काव्य-भाषा का वास्तविक स्वरूप बहुत कुछ स्पष्ट हो जाएगा।

अब हम व्याकरण के उन प्रमुख अंगों का सैद्धांतिक विवेचन करेंगे जिनके आधार पर ग्रन्थ में व्यवहार-खण्ड के अन्तर्गत कवियो द्वारा सन् १९१५ से सन् १९६० तक लिखे काव्य में प्रयुक्त शब्दो का अर्थगत एवं रूपगत अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। कुल शीर्षक ये है :—संज्ञा, विशेषण, क्रिया, उपसर्ग, लिंग, वचन, संधि, समास, शब्द-लोप, अन्य शब्द-विकार, नव शब्द और ध्वन्यात्मक शब्द। व्याकरण से असम्बद्ध होने के कारण 'प्रिय शब्द' शीर्षक यहा छोड़ दिया गया है।

अब हम क्रमशः व्याकरण के इन प्रमुख अंगों का अध्ययन करेंगे—

संज्ञा

एक शिशु की आरम्भिक भाषा में सर्वप्रथम स्थान 'संज्ञा' का है। इस लिए 'संज्ञा' को भाषा का प्रथम अंग बताया जाता रहा है। विचारों के आदान-प्रदान के

लिए सब से अधिक सुविधा संज्ञाओं के प्रयोग में होती है।

संभवत: आदि मानव ने सर्वप्रथम वस्तुओं के 'नामकरण' को ही अपना कर बोलना आरम्भ किया होगा। 'इस से मनुष्य पहले से कहीं अधिक चिन्तन-मनन, अभिव्यंजन और विचार-विनिमय करने में स्पष्टता और स्वतन्त्रता का अनुभव करने लगे होंगे और उनकी मानसिक शक्ति भी विकसित हुई होगी।'[१]

भाषा में 'नाम' (संज्ञा) और 'आख्यात' (क्रिया) का स्थान पहले है 'उपसर्ग' और 'निपात' (या 'अव्यय') का बाद में। महर्षि यास्क का भी कथन है—'**नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च**'।

यास्क ने शाकटायन के इस मत का उल्लेख किया है कि 'नाम' (संज्ञा) तो 'आख्यात' (क्रिया) के आधार पर बनते हैं। दूसरी ओर, गार्ग्य तथा कुछ अन्य वैयाकरण यह मानते हैं कि सभी नाम 'आख्यात' के आधार पर नहीं बनते। केवल वे नाम ही 'आख्यात' के आधार पर बनते हैं जिनका स्वर और व्याकरणिक रूप नियमित रहता है और जो प्रादेशिक विकार से युक्त होते हैं। इसका उदाहरण देते हुये कहते हैं कि गो, अश्व, पुरुष, हस्ति आदि 'पारंपरिक' (Conventional) हैं अत: इन्हें 'आख्यात' (क्रिया) के आधार पर व्युत्पन्न नही करना चाहिए।[२]

अत: भाषा मे 'नाम' और 'आख्यात' को स्वतन्त्र समझना चाहिए। उपसर्ग और निपात 'इन्हीं की सेवा में रहते हैं।'[३] 'नाम' की अपेक्षा हिन्दी व्याकरण मे 'संज्ञा' शब्द ही अधिक प्रचलित है किन्तु 'सर्वनाम' को 'सर्वसंज्ञा' और 'नाम धातु' को 'संज्ञाधातु' कोई नही कहता। पाणिनि-पद्धति मे 'नाम' शब्द ही अपनाया गया है। किन्तु हम हिन्दी व्याकरणो के अनुसार 'संज्ञा' शब्द ही ग्रहण करेंगे और अपने विवेचन मे 'नाम' को छोड कर 'संज्ञा' शब्द का ही आश्रय लेगे।

आचार्य भर्तृहरि ने यह मत प्रकट किया था कि शब्दो द्वारा 'सामान्य' अर्थ ही उद्घाटित होते है, 'विशेष' नहीं। उदाहरणस्वरूप 'गाय' शब्द से गो जाति का ही बोध होगा, आकार, रंग, संख्या आदि का नही।[४]

किन्तु काला, पीला, नीला, स्थूल, ह्रस्व आदि भी 'शब्द' ही है। इन की सहायता से रंग, आकार आदि सूचित होते है। यह तर्क प्रस्तुत करते हुये पुण्यराज यह घोषित करते है कि 'शब्द' केवल जाति के बोधक ही नही होते।

---

१. The Art of Writing, W. J. Merry. P. 7

२. अर्थ तत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, २०६

३. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, १७३

४. वाक्य०, २, १५६, भर्तृहरि

पुण्यराज के तर्क का खण्डन करते हुये कहा जा सकता है कि 'जल' और 'श्वेत' सरीखे शब्द भी किसी विशिष्ट परिमाण और गुण को सूचित नही करते अतः हम भर्तृहरि के इस मत से सहमत हैं कि शब्द मूलतः '**जातिवाचक**' ही होते हैं, आकार, परिमाण, रंग, संख्या आदि का बोध कराना उनके लिए अनिवार्य नहीं होता।

संज्ञाओं के प्रकार

अर्थ-भेद के अनुसार ही शब्दों के भी भेद निश्चित किए जा सकते हैं। '**अर्थभेदात् शब्दभेदः**'। आचार्य पतंजलि ने 'ऋलृक् सूत्र' की व्याख्या करते हुए अर्थ की दृष्टि से ही शब्दों के चार प्रकार बताये हैं—१. जातिवाचक २. गुणवाचक ३. क्रियावाचक ४. यदृच्छा अर्थात् ऐच्छिक शब्द[१]

किन्तु हिन्दी में जातिवाचक, व्यक्तिवाचक और भाववाचक—संज्ञाओं के ये तीन प्रकार ही अधिक प्रचलित हैं।

नयी संज्ञाएं

हिन्दी भाषा दिनोंदिन प्रगति के सोपानों पर अग्रसर होती जा रही है। भाषा में पूर्वप्रचलित शब्दों का बहिष्कार इतना नही हो रहा है जितना नव शब्दों का आविष्कार देखने में आ रहा है। यह भाषा-विकास की दृष्टि से बड़ा ही शुभ लक्षण है।

नव शब्दों का जो निर्माण हो रहा है वह हिन्दी प्रत्ययों की ही सहायता से किया जा रहा है। प्रत्यय वही पुराने है यथा 'आस', 'इयाना' और 'क' प्रत्यय। किन्तु उनके योग से अब नये नये शब्द बन रहे हैं।

श्री माईदयाल जैन ने इन के कुछ उदाहरण इस प्रकार दिये हैं—

१. '**आस' प्रत्यय—उघास, गवास** (गाने की इच्छा), **छपास**, (लेख, पुस्तक **आदि छपाने की तीव्र इच्छा), पनास** (पान खाने की इच्छा—'प्यास' के अनुकरण पर निर्मित शब्द), **बुलास (बोलने या भाषण** करने की **इच्छा), चमास**[२], इत्यादि।

२. '**इयाना' प्रत्यय—बिजलियाना, मुकियाना** (मुक्के मारना), **लठियाना** (लाठी से पीटना), **लतियाना**, हिन्दी' तथा 'हिन्द' से **हिन्दियाना** (हिन्दी रूप देना, हिन्दीकरण, हिन्द का बनाना)[३]

---

१. महा० आ०, २, ऋलृक् सूत्र

२. हिन्दी शब्द रचना, माईदयाल जैन, ३६

३. हिन्द शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ४१

३. 'क' प्रत्यय—घोलक, चाहक, जांचक, बिगाड़क, बेचक, मारक।[१]

इन में प्रथम दो प्रकार तो भाववाचक संज्ञाओं के हैं। 'क' प्रत्यय लगाकर बने हुए शब्द संज्ञा और विशेषण उभय रूपों में हैं। चाहक[२] जाँचक[३] और बेचक[४] शब्द जैन जी ने नहीं गिनाए हैं। ये तीनों शब्द क्रमशः सूर, रत्नाकर और तुलसी के काव्य में मिल जाते हैं।

इस शोध-ग्रन्थ में हम ने प्रत्येक कवि द्वारा प्रयुक्त संज्ञाओं के उदाहरण देते समय इन प्रत्ययों और उनके प्रयोगों पर भी विचार किया है। किन्तु 'प्रत्यय' नव शब्द-प्रयोगों का केवल एक कारण ही है। अन्य कारणों से भी नव शब्द विशेषतः संज्ञा शब्द बनते हैं। इन में सन्धि और समास प्रमुख हैं।

संज्ञा-विकार

भाषा में 'ह्रास' नाम की कोई चीज़ नहीं होती, यह हम पिछले परिच्छेदों मे देख चुके है। शब्दों का विकार या रूप-परिवर्तन मूलतः भाषा के विकास का ही लक्षण हुआ करता है अतः भाषा में कभी अवनति नही होती।

जब जब भाषा करवटें लेती है और अपने शब्द-रूपों को बदलती है तब-तब यह रूप-परिवर्तन सब से पहिले संज्ञाओ मे होता है।

डॉ० अम्बा प्रसाद 'सुमन' ने अहिल्या, ज्योत्सना, दुवारिका, दृष्टा, प्रायश्चित्, भत्स्नीं, लोकेषणा, सौदामिनी, सृष्टा, आदि संज्ञा-विकारों को उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया है।[५] ये शब्द क्रमशः अहल्या, ज्योत्स्ना, द्वारका, द्रष्टा, प्रायश्चित्त, भर्त्सना, लोकैषणा, सौदामनी (या सौदाम्नी) और स्रष्टा होने चाहिएं। इसके अतिरिक्त उन्होंने करि, कवियत्री, जागृतावस्था, निरोगता, प्रदर्शिनी, रचियता, और शशि अशुद्ध संज्ञा-रूप भी गिनाये है जो हिन्दी भाषा में लिखे- बोले जा रहे है। इन के शुद्ध रूप क्रमशः इस प्रकार हैं—करी, कवयित्री, जागरितावस्था, नीरोगता, प्रदर्शनी, रचयिता, और शशी।[६]

---

१. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ५०

२. उदा०—'कहा सुदामा के धन हौ, तौ सत्व प्रीति के **चाहक** —(सूर०)

३. उदा०—सुकवि प्रशंसनीय विधि भर्लाहि नियम बहु तोर्राहि
करहि दोष जिहि सोधन सद् **जांचक** साहस नहिं —(रत्नाकर)

४. उदा०—'द्विज स्रुति **बेचक** भूप प्रजासन
कोई नहिं मान नियम अनुसासन —(तुलसी)

५. हिन्दी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० 'सुमन', ४८-४९

६. हिन्दी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० 'सुमन', ४९-५०

डॉ० सुमन लिखते हैं—'प्रिय है दर्शन जिसका' के अर्थ में **'प्रियदर्शिनी'** अशुद्ध शब्द-रूप है और **'प्रियदर्शनी'** स्त्री० (पुं० प्रियदर्शन) शुद्ध रूप है। वस्तुत: प्रियदर्शिनी स्त्री० (पुं० प्रियदर्शी) का तो अर्थ है—'प्रिय को देखने वाली।'[१]

आजकल लोग श्रीमती इन्दिरा गांधी को भी 'प्रियदर्शिनी' कह देते हैं। 'प्रियदर्शी' का एक और अर्थ है—'प्रेमपूर्वक किसी को या दूसरो को देखने वाला—'।[२] सम्राट् अशोक की भी एक उपाधि थी 'देवानांप्रिय प्रियदर्शी'। दूसरे, संस्कृत में प्रिय-दर्शन' (अर्थ 'जो देखने में भला और सुखद प्रतीत होता हो') पुं० शब्द का स्त्री० रूप 'प्रियदर्शना' है, 'प्रियदर्शनी' नहीं। अत: हम श्रीमती गांधी के लिए 'प्रियदर्शिनी' रूप भी शुद्ध मानते है। वैसे किसी का हम से मतभेद भी हो सकता है।

प्रसिद्ध शब्द-शिल्पी आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा ने भी कुछ **विकृत संज्ञा-रूपों** का उल्लेख किया है जो इस प्रकार है—ऐक्यता, ऐतिहासिक, कौशल्य, प्रागट्य, महत्त्वाकांक्षा, वैमनस्यता, साहित्यिक, साफल्यता, साहाय्यता। इनके शुद्ध रूप ये होने चाहिये—ऐक्य, इतिहासकार (या 'इतिहासज्ञ' अर्थ में), कौशल, प्राकट्य, उच्चाकांक्षा वैमनस्य, साहित्यकार, साफल्य, साहाय्य[३]। ऐतिहासिक और साहित्यिक तो क्रमश: इतिहास और साहित्य के विशेषण है। वैमनस्य, साफल्य, और साहाय्य पहले ही भाव० संज्ञाएं हैं अत: 'तल्' प्रत्यय जोड़ कर पुन: भाव० शब्द बनाना अशुद्ध ही है।

इन सब मे **'महत्त्वाकांक्षा'** शब्द तो चल पडा है। यद्यपि वर्म्मा जी ने इस का अर्थ किया है—'किसी महत्त्व को प्राप्त करने की आकांक्षा', तथापि आज यह शब्द अंग्रेजी Ambition शब्द का हिन्दी समानक मान लिया गया है।

इसी प्रकार का एक और शब्द है **'हरीतिमा'**। यह शब्द-रूप भी 'हरा' या हरित्' से व्युत्पन्न नही है फिर भी 'हरियाली' अर्थ में कवियों ने इस का अनेक बार प्रयोग किया है।

वर्म्मा जी लिखते हैं—'ऐसे लोगों की सख्या भी कम नहीं है जो फ़ारसी 'लाल' से 'लालिमा', और हिन्दी 'हरा' से 'हरीतिमा' तक बना लेते है और ऐसे शब्दों को सं० 'कालिमा' के वर्ग मे ला रखते है।'[४]

---

१. हिन्दी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० 'सुमन', ४९-५०

२. मानक हिन्दी कोश, तीसरा खण्ड, दे० 'प्रियदर्शी'

३. अच्छी हिन्दी, दसवा संस्क०, रामचन्द्र वर्म्मा, १३१, १३२, १४६, १४७

४. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १४७

इसी प्रकार उद्देश्य के अर्थ में 'लक्ष'[1], 'पत्रकारिता' के अर्थ 'पत्रकारी'[2], निबंध के अर्थ में 'प्रस्ताव'[3] शब्द भी चल रहे हैं। भाषा में शब्द-रूपों की एकरूपता की दृष्टि से देखा जाय तो यह सब धाँधली है। काव्य में तो छन्द, तुक, लय आदि का बहाना बना कर इन शब्द-रूपो को क्षम्य सिद्ध किया जा सकता है किन्तु गद्य में हम क्या कहेंगे? जहां तक भाषा की वर्तनी का प्रश्न है उसकी एकरूपता बनाये रखने के सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते। हमें शीघ्रातिशीघ्र निश्चित शब्द-रूपों को विशिष्ट अर्थों में स्थिर करना ही होगा। इसी में भाषा का हित है।

हम ने कवियो के शब्द-प्रयोगों का अध्ययन संज्ञाओ से ही प्रारम्भ किया है। कितनी ही नयी संज्ञाएं और उन के विकृत रूप हमारे विवेचन का विषय बने हैं। काव्य में 'परम्परा' और 'प्रयोग' का ठीक ठीक लेखा-जोखा तभी संभव हो सकता है है जब शब्दों के अर्थगत और रूपगत प्रयोगों पर कड़ी दृष्टि रखी जाए। यही हमारा भी उद्देश्य रहा है।

विशेषण

इस संसार मे सभी पदार्थ और प्राणी किसी न किसी दृष्टि से दूसरे से भिन्न है। इसीलिए उन की पार्थक्याश्रयी विशेषताओं के आधार पर विशेषणो का प्रयोग किया जाता है। इन विशेषताओं का सम्बन्ध आकार, परिमाण, रंग, रूप, संख्या, स्वाद आदि से हुआ करता है। यद्यपि नील कमल के लिए 'इन्दीवर' सरीखे पृथक् शब्द भी हैं तथापि प्रत्येक नीले रंग की वस्तु का पृथक् नाम नही है। अतः 'नीला, नीले' विशेषण लगा कर ही पदार्थों का रग-बोध कराया जाता है। इसी प्रकार गुण, परिमाण, रूप आदि का ज्ञान भी विशेषण ही कराते है।

विशेषण-विशेष्य

पतजलि का कथन है कि विशेषण तथा विशेष्य का क्रम-विपर्यय भी हो सकता है अर्थात् विशेषण कभी विशेष्य बन सकता है और विशेष्य कभी विशेषण भी हो सकता है। 'कृष्णतिल' भी कहा जाएगा और 'तिलकृष्ण' भी।[4]

उल्टे-विशेषण

काव्य में भी प्रसून सुहासी, मधुप बाल, लहरें बाल, आदि में 'सुहासी' और

---

१. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १३७
२. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १४७
३. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १३४
४. महाभाष्य, २-१-३

'बाल' विशेषण संज्ञाओं के बाद आए हैं। किन्तु वे रहते विशेषण ही हैं, विशेष्य नहीं बनते। हम ने शोध-ग्रंथ में ऐसे विशेषणों के लिए **'उलटे विशेषण'** यह कामचलाऊ नाम घड़ लिया है।

नये विशेषण

आजकल संज्ञाओं की भांति विशेषणों के भी नये नये प्रयोग किए जा रहे हैं। उदाहरणत: **'आ'** हिन्दी का अपना कर्त्ताबोधक प्रत्यय है। धातु या क्रिया के आगे जोड़ कर इस प्रत्यय की सहायता से भी नये विशेषण बनाए गए हैं। यथा **कर्नाबिधा, कमतोला** (कम तोलने वाला), **गंठकटा, गंठकतरा, घसखुदा** (घास खोदने वाला), **चरकटा** (मुख्य अर्थ—चारा काटने वाला, रूढ़ अर्थ—'वालाक तुच्छ जन'), **छीला** (ईख आदि छीलने वाला), **जोता** (भूमि जोतने वाला)।[1]

इसी प्रकार **'आऊ' प्रत्यय** जोड़ कर भी कुछ योग्यतासूचक विशेषण निर्मित किए गए हैं। उदाहरण देखें—**अगाऊ, उठाऊ चूल्हा, खानाफिराऊ,** (सौदा या माल), **गिराऊ, जलाऊ, तनढंकाऊ कपड़ा, पेटभराऊ, बटाऊ, हाथीडुबाऊ पानी** आदि।[2] इनमे से अधिकतर उदाहरण जैन जी ने दिये हैं।

'आसमानी' एक विशेष रंग है। इस के पर्यायवाची के रूप में **'आकाशी'**[3] विशेषण भी सर्वथा नया है। इसी प्रकार **'नी' प्रत्यय** लगा कर भी कुछ कर्त्ताबोधक विशेषण चलाए जा रहे है—यथा **कहमुकरनी, घर-घर झांकनी, घर-घर-फिरनी**[4] इत्यादि।

उपर्युक्त उदाहरण गिनाने का उद्देश्य हिन्दी गद्य में घड़े जा रहे विशेषणों की एक झलक प्रस्तुत करना है। जिस प्रकार गद्य मे, ठीक उसी प्रकार अत्याधुनिक हिन्दी काव्य में भी विशेषणों के क्षेत्र में प्रयोगों की संख्या बढती चली जा रही है। हम ने कवियों द्वारा प्रयुक्त विशेषणों का अध्ययन करते समय अर्थ और रूप उभय दृष्टियों से उदाहरण एकत्र किये हैं।

विशेषण-विकार

आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा ने कुछ ऐसे विशेषण भी गिनाए हैं[5] जो सम्प्रति हिन्दी भाषा में अशुद्ध रूपों में चल रहे है। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

---

१. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ३५
२. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ३६
३. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ४३
४. हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ५३
५. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा

अनभिलाषी, अनुमानित, अमानुषी, आवश्यकीय, उद्देशित, क्रोधित, गौरवित, ग्रसित, निरपराधी, निराकांक्षी, निर्दयी, निर्धनी, पठित, परिप्लावित, प्रलयी, लावारिसी, व्यवहरित, व्यापित, श्रेष्ठतम, संपर्कित, सपतिका, समकोणिक और सशंकित।

इन के शुद्ध रूप ये हैं—अनभिलाष, अनुमित, अमानुष ('जो मानुष न हों'—इस अर्थ में), आवश्यक, उद्दिष्ट, क्रुद्ध, गौरवान्वित, ग्रस्त, निरपराध, निराकांक्ष, निर्दय, निर्धन, शिक्षित, परिप्लुत, प्रलयंकर, लावारिस, व्यवहृत, व्याप्त, श्रेष्ठ, संपृक्त, सपतिक, समकोण, और सशंक (या शंकित)

इन में 'अमानुषी' तो 'अमानुष' पुं० शब्द का स्त्री० रूप है। 'शिक्षित' अर्थ में 'पठित' लिखना भी अशुद्ध है। अरबी में 'लावारिस' विशेषण-रूप ही शुद्ध है, 'लावारिसी' नही।

'सपतिक'[1] स्त्री ही हो सकती अतः है यहां 'आ' स्त्री-बोधक विभक्ति लगाना व्यर्थ है। पुरुष के लिए 'सपत्नीक' शब्द का प्रयोग ही ठीक है।

कई विशेषणो के सम्बन्ध में तो भाषाविद् आज तक एकमत नही हो सके हैं। उदाहरणतया आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा **राजनैतिक** और **राष्ट्रीय** शब्द-रूपों को अशुद्ध मानते हैं और ऐसा करते समय वे संस्कृत व्याकरण-समर्थित **'राजनीतिक'** और **'राष्ट्रिय'** रूपों को ही शुद्ध घोषित करते हैं। दूसरी ओर, पं० किशोरीदास वाजपेयी लिखते हैं—"राष्ट्रीय तथा 'राजनैतिक' ही विशेषण यहां (हिन्दी में) चलेंगे। यह न हो सकेगा कि 'नैतिक' एक जगह लोग लिखें और दूसरी जगह 'नीतिक' लिखें। हिन्दी का सीधा रास्ता है।"[2]

हमें वाजपेयी जी का मत अधिक तर्कसंगत जान पड़ता है फिर भी हम ने अपने ग्रंथ में संस्कृत और हिन्दी दोनो भाषाओं की प्रकृतियो को आवश्यकतानुसार ग्रहण करने की चेष्टा की है। हिन्दी की अपनी प्रकृति और पद्धति को भी हम ने बराबर ध्यान में रखा है।

इसी प्रकार **'छह'** एक संख्यात्मक विशेषण है। वाजपेयी जी के मतानुसार 'छह' शुद्ध है, छः गलत है।[3] उन का कथन है—'विसर्गों का उच्चारण 'ह' जैसा होता है। इसी कारण 'छह' तथा 'ज्यादह' आदि को लोग 'छः, ज्यादः' लिखने लगे थे। बड़ी कठिनाई से यह गलती समझाई गई।'[4]

---

१. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १७३
२. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ५८
३. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, १५
४. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ६२

अतः हम ने भी 'छह' विशेषण रूप ही शुद्ध माना है। श्री सत्यनारायण त्रिपाठी ने इस की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी है—हिं० छः, छह<म० भा० आ० 'छ' <सं० षट् (षष्, क्षष्, क्षक्)। पाद-टिप्पणी में उन्होंने लिखा है—

'रूप-परिवर्तन की दृष्टि से 'छः' (वस्तुतः शुद्ध रूप 'छह') की व्युत्पत्ति सं० 'षट्' से संभव नहीं प्रतीत होती है। इसलिए प्रा० भा० आ० (प्राचीन भारतीय आर्य-भाषा) के षष्, क्षष्, क्षक् रूप की कल्पना की गई है।'[1]

विशेषण-विपर्यय

अंग्रेजी मे जिसे Transferred Epithet कहा गया है उसी के लिए हिन्दी में 'विशेषण-विपर्यय' शब्द प्रचलित है। हिन्दी आलोचकों ने इस की गणना अलंकारो मे भी कराई है।

वाक्य मे जहां विशेषण किसी ऐसी संज्ञा से पहले आए जिसका उस से प्रत्यक्ष रूप में कोई सम्बन्ध न दिखाई दे परन्तु गहरी दृष्टि डालने के बाद विसगति लुप्त हो जाए वहा 'विशेषण-विपर्यय' होता है। अंग्रेजी मे '**कटु आक्रोश**' (bitter resentment) और '**शीतल स्वागत**' (cold reception) ऐसे ही उदाहरण हैं जिन मे ऐंद्रियानुभूति के एक क्षेत्र से शब्द ले कर दूसरे क्षेत्र में स्थानांतरित कर दिए गए हैं। 'कटुता' वस्तुतः रसेंद्रिय का विषय है और 'शीतलता' स्पर्शेन्द्रिय का, किन्तु यहां 'कटु' और 'शीतल' को क्रमशः 'आक्रोश' और 'स्वागत' के साथ टाँक दिया गया है। '**गर्म रंग**' और '**मधुर स्वर**' मे भी यही बात है। यहां रंगों के एक विशिष्ट प्रकार और उष्णता मे जो समान विशेषता अनुभव की गई है उस का आधार वैयक्तिक आनन्द ही है।[2] चूंकि भारत एक ग्रीष्म-प्रधान देश है अतः यहां किसी नयनाभिराम रंग को 'शीतल रंग' कहने से ही आनन्द प्रकट होगा।

फ्रांस लिज्ट (Franz Liszt) ने एक बार वीमर मे 'आर्केस्ट्रा' (वाद्यकारो) को यह कह कर उद्भ्रात कर दिया था कि—'**और अधिक नीला स्वर निकालो**'।[3]

यहां संज्ञा शब्द 'स्वर' के विशेषण के रूप मे 'नीला' शब्द विशेषण-विपर्यय का एक सुन्दर उदाहरण है।

अत्याधुनिक हिन्दी कवियो ने अपनी कविताओ मे अनेक स्थलो पर विशेषणो का यह प्रकार अपनाया है। हम ने कवियों द्वारा प्रयुक्त सभी विशेषण-विपर्यय एकत्र किए

---

१. हिन्दी भाषा और लिपि का ऐतिहासिक विकास, सत्यनारायण त्रिपाठी, १२२
२, Words and their Use, Stephen Ullmann, P. 73
३. Words and their Use, Stephen Ullmann, P. 73

हैं और 'विशेषण' शीर्षक के अन्तर्गत उनका अध्ययन किया है।

क्रिया

गर्भस्थ शिशुओं की भाँति क्रियाएं भी केवल 'अनुमानगम्य' होती हैं। अदृश्यता उन की प्रधान विशेषता है। अतः क्रियाएं अमूर्त ही है, मूर्त नहीं।

'क्रिया' शब्द मे गौण क्रियाएं भी अन्तर्भूत हो जाती है यथा 'रोटी पका दो' में जो 'पकाना' क्रिया है उस में आग जलाना, पात्र एकत्र करना, भोज्य वस्तुएं चढ़ाना—आदि व्यापार सम्मिलित है।[1]

भट्टोजिदीक्षित और कौण्डभट्ट ने अकर्मक और सकर्मक धातुओ का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार धातु के दो अर्थ होते हैं—१. **क्रिया का फल** २. **व्यापार**।

किसी धातु के सम्बन्ध में हमें यह ज्ञान कैसे होता है कि यह क्रियावाची है? इस प्रश्न के उत्तर में आचार्य पतंजलि ने एक बड़ी अच्छी युक्ति बताई है। 'कृ' धातु का अर्थ है 'करना'। 'क्या करता है?' क्या करेगा? जैसे प्रश्न करने पर जो धातुएं उत्तर देती जान पड़े यथा पकाता है, सोता है इत्यादि तो 'पकाना' और 'सोना' शब्द 'क्रियावाचक' ही समझे जाएं।[2]

वाक्य में उद्देश्यात्मक शब्द पहले आते हैं और विधेयात्मक शब्द बाद में। '**उद्देश्य**' पहले से ज्ञात रहता है और '**विधेय**' अज्ञात। चूंकि 'उद्देश्य' का प्रायः पहले कथन होता है अतः उसे केवल इसीलिए प्रधान नही समझ लेना चाहिए। वाक्य में विधेयांश से सम्बन्ध रखने वाली 'क्रिया' ही प्रधान होती है। वक्ता और श्रोता दोनों की जिज्ञासा को 'क्रिया' ही शान्त करती है।

अकर्मक और सकर्मक क्रियाएं

भट्टोजिदीक्षित और कौण्डभट्ट ने 'भूषण' मे अकर्मक और सकर्मक धातुओं के सम्बन्ध में विस्तारपूर्वक विवेचन किया है।

अकर्मक धातुओं या क्रियाओं मे **फल** और **व्यापार** दोनों ही वर्तमान रहते हैं जबकि सकर्मक धातुओं में दोनों की पृथक् पृथक् सत्ता होती है।[3]

उदाहरणतया 'जाना' सकर्मक क्रिया है क्योंकि यहां जाने का 'व्यापार' कर्त्ता में है और 'फल' किसी स्थान आदि मे है। दोनों अलग अलग हैं अतः क्रिया 'सकर्मक' है। होना, रहना आदि क्रियाओं मे फल और व्यापार दोनो समाविष्ट हैं अतः ये 'अकर्मक' क्रियाएं कहलाएंगी।

---

१. वाक्य० ३, ३०६

२. महा० १, ३, १

३. वैयाकरणभूषण, भट्टोजिदीक्षित तथा कौण्डभट्ट, कारिका, १३

सकर्मक क्रियाओं का अकर्मक होना

भर्तृहरि ने सकर्मक क्रियाओं के अकर्मक हो जाने के चार कारण गिनाए हैं—

१. अप्रसिद्ध अर्थों का बोध कराने से धातु अकर्मक हो जाती है । संस्कृत में 'वह्' धातु 'ढोना, ले जाना' अर्थों में सकर्मक है पर 'नदी वहति' (अर्थ : नदी बहती है) कहने पर अकर्मक हो जाएगी ।

2. धातु में ही कर्म का समावेश हो जाने पर भी यह परिवर्तन देखने में आता है । 'प्राणों को धारण करता है' कहने की अपेक्षा 'जीता है' (√जीव्) अकर्मक क्रिया का प्रयोग किया जा सकता है । इसी प्रकार 'प्राणों को छोड़ता है' की बजाय 'मरता है' (√ मृ) अकर्मक क्रिया प्रयुक्त हो सकती है ।

३. कभी कभी कर्म का प्रयोग न करने से प्रसिद्धि के कारण क्रिया अकर्मक रह जाती है । उदाहरणतः 'बरसना' स० क्रि० है । 'मेघ बरस रहे हैं' कहने से स्वतः 'जल' की प्रतीति हो जाती है । यहां 'बरसना' क्रिया अकर्मक हो गई है । संस्कृत में √वृष् ऐसी ही है ।[1]

४. जब कर्म को अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया जाता है तब भी क्रिया अकर्मक हो जाती है । एक वाक्य देखें—'वह आलसी अध्यापक न पढाता है, न लिखाता है, न समझाता है ।' यहां पढ़ाना, लिखाना, समझाना क्रियाएं (कर्म' का कथन अभीष्ट न होने से) 'अकर्मक' रूप में ही प्रयुक्त हैं ।

उपसर्ग और काल आदि के कारण भी धातुए सकर्मक से अकर्मक हो जाया करती हैं ।

अकर्मक क्रियाओं का सकर्मक प्रयोग

संस्कृत मे 'भू' धातु 'होना' अर्थ मे है । 'अनु' उपसर्ग लगाने से 'अनुभू' धातु का अर्थ हो जाता है—'अनुभव करना' । यहा अकर्मक धातु उपसर्ग-योग से सकर्मक हो गई है ।

"उपसर्गों के जोड़े बिना भी यह परिवर्तन देखा जाता है। सस्कृत मे 'नम्' धातु अकर्मक है । दो उदाहरण देखे :—

१. नमन्ति फलिनो वृक्षाः—फलदार वृक्ष झुकते हैं ।

२. नमन्ति गुणिनो जनाः—गुणी जन नम्र होते हैं ।

परन्तु 'रामः पितरं नमति' —राम पिता को नमन (नमस्कार) करता है ।

---

१. वाक्य० ३, २३४, भर्तृहरि

यहां 'नम्' धातु का सकर्मक प्रयोग है।"[1]

हम ने कवियों के क्रिया-प्रयोगों का उपर्युक्त दृष्टियों से भी अध्ययन किया है।

साधारण क्रियाओं का प्रेरणार्थक रूप

कहीं कहीं कवियों ने 'दिखना' अर्थ में 'दिखलाना' और इसी प्रकार दूसरी प्रेरणार्थक क्रियाओं का प्रयोग किया है। वस्तुतः ऐसे क्रिया-रूपों को 'पूरबी' ही कहा जाएगा। आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा भी लिखते हैं—"....'पिसना' के अर्थ में 'पिसाना' 'छीजना' के अर्थ में 'छिजाना', और 'घिसना' के अर्थ में 'घिसाना' आदि बिल्कुल पूर्वी प्रयोग हैं और शिष्ट या मानक हिन्दी में उनका प्रचलन नहीं है।"[2]

नयी क्रियाएं

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में नमना, प्रकाशना, भाषणा जैसी क्रियाएं प्रचलित थीं। अब उन की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। आजकल अनुवादना, तिगनाना, दुगनाना, प्रगटाना, फिल्माना, सम्पादना आदि कितनी ही क्रियाएं लिखी-बोली जा रही हैं।

अपभ्रंश भाषा में संस्कृत के अनेक क्रियापद चलते थे। मध्ययुगीन ग्रन्थों में भी विशेषतः अवधी और ब्रजभाषा के ग्रंथों में तत्सम संज्ञाओं से बनी हुई क्रियाएं मिल जाती हैं। आजकल हम उन्हीं क्रियाओं के अर्थों को प्रकट करने के लिए संज्ञाओं के साथ 'करना' या 'होना' जोड़ कर 'संयुक्त क्रियाएं' प्रयुक्त कर रहे हैं। कुछ उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाएगी—

आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा ने अतुराना, अधिकाना, अनुसरना, आदरना, कदराना, कांधना, गनना, थाहना, ध्याना, निदरना, भरमना, भरमाना, भाषना, हरषना आदि क्रियाएं गिनाई है। उनके मतानुसार ये क्रियाएं अब मर चुकी हैं। हमें इन्हें पुनरुज्जीवित करना चाहिए।[3]

इन में से कुछ क्रियाएं तो अब भी चल रही हैं।

संस्कृत, अपभ्रंश, पुरानी हिन्दी और आधुनिक युग मे प्रचलित क्रिया-रूपों के तुलनात्मक अध्ययन से हमें लाभ होगा। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

---

१. हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३७५

२. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, १८५

३. अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, ३७५-३७६

संस्कृत	अपभ्रंश	पुरानी हिंदी	प्रचलित रूप
१. नमति	णमइ	नमता है	नमन करता है
२. नश्यति	णसइ	नसता है	नष्ट होता है
३. प्रकटयति	पयडइ	प्रकटता है	प्रकट होता है
४ प्रकाशते	प्यासइ	प्रकाशता है	प्रकाशित होता है
५. भक्षति	भक्खइ	भखता है	भक्षण करता है
६. मलिनायते	मइलेइ	मैलता है	मैला होता है
७. वारयति	वारइ	वारता है	वारण करता है

डॉ० हीरालाल जैन ये सब उदाहरण प्रस्तुत करने के बाद लिखते है—"ऐसे उदाहरण अनन्त हैं। यह मुझे भाषा मे उन्नति की जगह अवनति का लक्षण दिखता है। क्रियाओं का क्षेत्र घटना नहीं, बढना चाहिये था। मेरी समझ मे ऐसे क्रिया-पदों का प्रयोग हिंदी मे प्रारम्भना चाहिये।"[१]

आज प्राय: सभी विद्वान् इस विषय में एकमत हैं कि "संस्कृत से बनी क्रियाओं को संग्रह करके चालू करना चाहिये।"[२]

हमने कुछ क्रियाएं पहली भी गिनाई हैं जो हिंदी भाषा में चल रही हैं। ऐसी ही कुछ और क्रियाएं देखिये—अनुमानना, निमन्त्रना, निर्वाचना, प्रमाणना, विद्रोहना, विद्युताना, विस्तारना, संशोधना इत्यादि।

आधुनिक हिंदी कवियो ने काव्य मे ऐसी अनेक क्रियाएं प्रयुक्त की है जो गद्य मे भी चलाई जा सकती है। इस दृष्टि से हमारे अध्ययन की सार्थकता और उपयोगिता हो सकती है। हम ने ऐसी सभी क्रियाए खोज खोज कर बटोरी है और उन को अकारादि क्रम से रखा है। भावी कोष-निर्माताओं को भी हमारे शोध-कार्य से पर्याप्त सहायता मिलेगी ऐसा हमारा विश्वास है।

क्रिया-विकार

आजकल गद्य और पद्य दोनो मे विभिन्न क्रिया-रूप चल रहे है। अत: जब तक भाषाशास्त्री किसी निश्चित निष्कर्ष पर न पहुँच सके तब तक हमे 'जाये' और 'जाए' उभय क्रिया-रूपो को ग्रहण करना होगा। किन्तु यह हमारा दृढ विश्वास है कि यह स्थिति देर तक नही चल सकती, चलनी भी नही चाहिए। इसी मे हिंदी भाषा का कल्याण है।

कई वर्ष पूर्व आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा ने लिखा था—'जायगा, जावेगा,

१. सावय धम्म दोहा, स० डॉ० हीरालाल जैन, २९
२ हिन्दी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, २७२

जाएगा आदि रूपों में से 'जायगा' ही अधिक प्रचलित और अच्छा है।"[१]

परन्तु आज कोई भी आयगा, खायगा, जायगा आदि क्रिया-रूपों को शुद्ध नही मानता। इसीलिए हम ने ऐसी क्रियाओं की गिनती 'क्रिया-विकार' शीर्षक के अन्तर्गत की है और कोष्ठकों में 'ए' या 'ये' लिख दिया है।

श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा ने इस सम्बन्ध में भाषावैज्ञानिक विवेचन भी प्रस्तुत किया है और यह सुझाया है कि कहां आए, खाए आदि रूप लिखने चाहिये और कहां आयी, आये, गयी, गये आदि रूपों का प्रयोग करना चाहिये। नीचे उन का मत संक्षेपत: प्रस्तुत किया जा रहा है।

'सभाव्य भविष्यत् की निष्पत्ति के लिए धातु के 'ना' चिह्न को हटा कर जो अश बच जाता है उस मे 'ए' जोड देना पर्याप्त है=आना+ए=आए, खाना+ए=खाए"[२]

दूसरे शब्दों में संभाव्य भविष्यत् मे आये, खाये आदि क्रियाएं अशुद्ध है।

सामान्य भूत बनाते समय अ-भिन्न स्वरांत धातुओं में 'आ' जोड़ने से पहले 'य' का आगम हो जाता है। यथा आया, गया, बोया, सोया। यह भी शर्मा जी का मत है कि "शब्दों की एकरूपता को ध्यान मे रख कर यहां 'य' को (अन्त में 'ए' और 'ई' जोड कर) हम बनाए रख सकते हैं यथा आये, आयी, गये, गयी इत्यादि।"[३]

इसके विपरीत पं० किशोरीदास वाजपेयी किया, दिया, पिया, लिया, आदि का स्त्री० रूप की, दी, पी, ली आदि लिखना ही अधिक उचित समझते है। उनका मत इस प्रकार है—

"काम 'किया' और 'बात की'। पुंविभक्ति 'आ' को स्त्री-प्रत्यय 'ई' के रूप मे आते ही 'किया' के 'य्' ने इस 'ई' को देख लिया और उसके प्राण सूख गए। दोनो समस्थानीय है, सवर्ण है, परन्तु स्वर प्रबल और व्यञ्जन निर्बल। 'य' की बोलती बन्द हो गई। इ, ई और ए के साथ मिलने पर 'य्' की स्पष्ट श्रुति नही होती।...यही स्थिति 'गए' की है, क्योंकि 'ए' मे 'इ' विद्यमान है जिसे 'य्' देख लेता है।...इसी नैसर्गिक प्रक्रिया से 'किया' का 'कियई' होने पर 'य्' का लोप हो जाता है।"[४]

अत: पण्डित जी इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि "आप भी यदि एकरूपता

१. हिंदी प्रयोग, पं० रामचन्द्र वर्म्मा, परिच्छेद 'शब्दों के रूप,' १४
२. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, १०८
३. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, ११०
४. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, १०५

चाहते हैं तो 'गई-गए' लिखिए, अन्यथा 'गयी-गये' भी चल ही रहे हैं—''[1]

इस प्रकार हम ने देखा कि 'गये, गयी' क्रिया-रूपों के सम्बन्ध में दोनों विद्वान् मतभेद रखते हैं। ठीक यही बात विशेषणों के सम्बन्ध में है। आकारांत विशेषणों के बहुवचन 'ए' और स्त्री० 'ई' जोड़ कर बनाये जाते हैं। यथा 'काले, काली' इत्यादि। याकारांत विशेषणो में भी यही नियम रहना चाहिए यथा 'नयी, नये'। इतना ही नहीं कृदन्तीय विशेषण भी इसी नियम से बनाए जाएं यथा सोये लड़के, सोयी लड़की; बोये खेत, धोयी चादर।

उपर्युक्त मत प्रकट करते हुए श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा लिखते हैं—'कुछ लोग उच्चारण की दुहाई दे कर इन प्रयोगो में 'ए' और 'ई' के प्रयोग का समर्थन करते हैं।'[2]

दूसरी ओर, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन' स्वर और व्यञ्जन के आधार पर विश्लेषण करते हुए लिखते हैं—'हमारा एक नियम होना चाहिए अर्थात् पुंलिग एकवचन में भूतकालीन क्रिया के अन्त मे केवल 'स्वर' है तो बहुवचन या स्त्रीलिग में स्वर ही रहना चाहिए; जैसे हुआ, हुए, हुई, हुई। यदि क्रिया के अन्त में व्यञ्जन के साथ स्वर है अर्थात् उपधा मे व्यञ्जन है तो उसके बहुवचन तथा स्त्रीलिंग मे वह व्यञ्जन अवश्य रहना चाहिए; जैसे दिखाया, दिखाये, दिखायी, दिखायी।'[3]

इसी प्रकार विद्वानों मे अभी विचार-विमर्श चल ही रहा है अत: क्रिया-रूपो में एकरूपता नही आ पाई है।

'क्' का आगम

बोलचाल में चखना, रखना आदि क्रियाओं में विशेष रूप से जब भूतकालिक रूप बनाने होते हैं तो 'ख' से पहले 'क्' आ जाता है। यथा 'यह पुस्तक इधर रक्खी थी और तुम्हे नज़र नही आई।' इसी प्रकार आज्ञार्थक वाक्यों में भी होता है—'पैन उधर रक्खो।'

चूंकि यहा बोलने में चक्खो, रक्खो आदि रूप ही है अत: लिखना भी इन्ही रूपों मे चाहिए। यह पं० रामचन्द्र वर्म्मा का मत है।[4]

दूसरी ओर पं० किशोरीदास वाजपेयी इस मत का खण्डन करते हुए लिखते हैं—''देखा जाएगा कि अहिंदी-भाषी जन जब राष्ट्र-भाषा का प्रयोग करेंगे,

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, १०६
२. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, १११
३. हिंदी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५७
४. अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा, ३२६

तो क्या स्थिति रहेगी ! क्या सब लोग पहले मेरठ पहुंच कर उच्चारण सुनेंगे और तब कुछ बोलेंगे ?······राष्ट्रभाषा में 'पानी रखा' लिखना सही है, 'रक्खा' गलत है। ···धातु 'रख' है, 'रक्ख' नहीं। कोई पुस्तक 'रक्खता' नहीं, सब रखते हैं, जहाँ 'रक्खा' बोला जाता है, चलता रहेगा, चलता रहे। वहां 'रखा' को भी उसी तरह पढेंगे। परन्तु राष्ट्रभाषा से वह 'गलस्तन' छँट जाएगा जैसे कि रोट्टी, धोत्ती आदि से अनावश्यक तत्त्व छँटकर रोटी, धोती आदि बना लिए गए।"[1]

वाजपेयी जी का तर्क नितान्त युक्तियुक्त है, इसमें कोई संदेह नहीं। इसीलिए हम ने रक्खना, रक्खा, रक्खी, रक्खे आदि क्रिया-विकारों के उदाहरण दे कर कोष्ठकों में रखना, रखा, रखी, रखे आदि क्रिया-रूप भी लिख दिए हैं ताकि भ्रांति न हो। कोष्ठको में जो क्रियाएं रखी गई हैं वे नितान्त शुद्ध रूपों में हैं यह प्रतिपादित करना हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा लक्ष्य तो कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्द-रूपों को एक स्थान पर क्रम से सजा देना रहा है ताकि उन को आधार बना कर अधिक से अधिक शोध-कार्य किया जा सके। कोष्ठकों में हम ने वही शब्द-रूप दिए हैं जो हिन्दी भाषा में अधिकांशत: प्रचलित हैं और प्राय: शुद्ध माने जाते हैं। अपवाद यहां भी रहेंगे।

उपसर्ग

कई बार धातुओं में ही उपसर्गों के अर्थ छिपे हो सकते हैं। उदाहरणत: 'पचति' (अर्थ: 'पकाता है') में कहीं-कहीं 'प्रपचति' ('विशेष रूप से पकाता है') का अर्थ भी समाविष्ट हो सकता है परन्तु फिर भी प्र, परा, आदि उपसर्गों द्वारा ही इन निहित अर्थों का बोध होता है।[2] पतञ्जलि ने 'गतिर्गतौ' के भाष्य में धातुओं मे ही उपसर्गों के अर्थों का अन्तर्निहित होना बताया है।[3] अत: उपसर्गों को 'द्योतक' भी कहा जाता है।

उपसर्ग के विषय में दो मत और हैं—१. उपसर्ग केवल द्योतक ही नहीं वरन् विशेष अर्थों के वाचक भी है। उदाहरणतया 'स्था' धातु 'रुकना' अर्थ में है। 'प्र' उपसर्ग लगाने से 'प्रस्थान' का अर्थ हो जाता है 'चलना'।

२. उपसर्ग सहकारी होते हैं क्योंकि वे धातुओं में अर्थ-बोधन की शक्ति लाते हैं।[4]

वैयाकरणों ने प्रथम मत का खण्डन करते हुए उपसर्गों को 'द्योतक' ही

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ६३, ६४, ३१, ३२

२. वाक्य० २, १८६, भर्तृहरि।

३. महा० ८, १, ७०.

४. वाक्य० २, १६०.

स्वीकार किया है, 'वाचक' नही। उन के मतानुसार 'स्था' धातु 'चलना' अर्थ में भी है। इसी प्रकार धातुओं के अनेक अर्थ होते हैं। अतः उपसर्ग विशिष्ट अर्थों को ही द्योतित करते हैं।[१]

अनर्थक उपसर्ग

आचार्य पाणिनि ने 'अधि' और 'परि' उपसर्गों को 'अनर्थक' माना है।[२] पतञ्जलि ने पाणिनि के भाव को स्पष्ट करते हुये कहा है कि चूंकि ये उपसर्ग धातुओं के मूल अर्थों में कोई विशेषता नहीं लाते अतः 'अनर्थक' हैं। इनका प्रयोग केवल इसलिए किया जाता है ताकि अर्थ पहिले से अधिक स्पष्ट हो जाएं। इसलिए यह कहना ठीक नही है कि पाणिनि इन उपसर्गों को निरर्थक समझते थे।[३]

उपसर्ग और निपात में अन्तर

'उपसर्ग' केवल 'क्रिया' (धातु) के ही विशेष अर्थों को प्रकाशित करते है जबकि 'निपात' 'नाम' और 'आख्यात' दोनो की अर्थ सम्बन्धी विशेषताओ को प्रकट करते हैं। यही उपसर्ग और निपात मे मुख्य अन्तर है।

'नाम' (संज्ञा) द्वारा 'सिद्ध अर्थ' का प्रकाशन होता है। निपातों द्वारा 'नाम' के विशेष अर्थ ही प्रकट होते हैं इसीलिए उन्हें 'नाम' मे ही अन्तर्भूत समझा जाता है। क्रियावाचक निपात भी एक प्रकार से 'आख्यात' मे ही आ जाते हैं।

दूसरी ओर, 'उपसर्ग' भी क्रियाओ की विशेषताए प्रकट करते है इसलिए उन्हें भी 'आख्यात' मे समाविष्ट कर लेना चाहिए। ऐसा कुछ आचार्यो का मत है।[४]

संज्ञा और क्रिया के भेदो का पृथक् रूप से विवेचन करने वाले आचार्य उपसर्ग और निपात को भी पृथक् मानते है। चूंकि उपसर्ग, निपात और कर्मप्रवचनीय 'नाम' और 'आख्यात' की ही विशेषताए बताते है अतः उन्हें उन मे ही सम्मिलित कर लिया जाता है।

वैदिक संस्कृत में वाक्यों में 'उपसर्ग' कही भी जुड जाते थे। लौकिक संस्कृत में उपसर्ग केवल धातुओ से पूर्व ही जुडने लगे। उन का 'धातु' अथवा 'क्रिया' से नित्य सम्बन्ध स्थापित हो गया। अतः उपसर्ग स्वतन्त्र न हो कर धातुओ पर आश्रित है।

---

१. वाक्य० २, १६१, पुण्यराज।
२. अष्टा० १, ४, ९३
३. महा० १, ४, ९३
४. वाक्य० ३, २-३, हेलाराज

डॉ० शिवनाथ उपसर्गों की इसी विशेषता का उल्लेख करते हुए यह प्रतिपादित करते हैं कि 'प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की यह परम्परा नव्य भारतीय आर्य भाषा मे भी आई है।'[1]

संस्कृत के उपसर्ग

संस्कृत में निम्नलिखित उपसर्ग गिनाए जाते हैं—प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आ (ङ्), नि, अधि, अपि, अति, सु, उद्, अभि, प्रति, परि, उप।

संस्कृत के इन २२ उपसर्गों मे 'अ' और 'अन्' (हिं० अन) निषेधसूचक उपसर्ग नही हैं। इनके अर्थ अभाव, शून्यता, निषेध आदि हैं। 'अ' उपसर्ग संज्ञा, विशेषण और धातु आदि से पूर्व जोड़ा जाता है। कही-कही क्रियाविशेषण से पूर्व भी इसका योग देखने मे आता है यथा अदेखे, अजाने आदि में है। यही बात 'अन्' (हिं० अन) उपसर्ग के सम्बन्ध में भी है।

डॉ० भोलानाथ तिवारी लिखते है—'अनोखा, अनूठा जैसे शब्दों में भी यही (अन्) है किन्तु ओखा, ऊठा का प्रयोग न होने से इनमे उपसर्ग का पता नहीं चलता।'[2]

संस्कृत में 'अन्' उपसर्ग स्वरादि शब्दो के पूर्व जुड़ता है यथा 'अन्+आयास =अनायास'। 'अ' उपसर्ग व्यंजनादि शब्दों से पूर्व लगता है। अज्ञान, अनीति, अप्रतिष्ठा, अभाव अमुन्दर आदि शब्द देखे जा सकते हैं। किन्तु हिन्दी मे यह तद्भव शब्दो से पूर्व भी लगता है यथा अचूक, अजान, अडिग, अपढ, इत्यादि। हिन्दी में 'अन' उपसर्ग सं० अन् से निष्पन्न हुआ है और व्यजनादि शब्दों से पूर्व भी जुड़ जाता है। कुछ उदाहरण ये हैं, अनखिला, अनबन, अनभल, अनमना, अनमेल, अनमोल, अनहित इत्यादि।

तद्भव उपसर्ग

सस्कृत के तत्सम उपसर्गों से कई हिन्दी उपसर्ग विकसित हुए है यथा

१ 'उ' (सं० उद्) उदा० उतरना, उथला, उनीदा, उभरना।

२. उन (स० ऊन से विकसित)—उदा० उन्नीस, उन्तिस, उन्तालीस, उनचास, उनसठ, उनहत्तर, उन्यासी आदि में 'उन' का अर्थ है—'एक नही' या 'एक कम'।

---

१. अर्थ-तत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ, १७५

२. हिन्दी भाषा, डॉ० भोलानाथ तिवारी, १२१

३. औ—(सं० अव)—उदाहरण देखें—औगुन, औघट, औघड़, औढर।

४. क—(सं० कु) संस्कृत के २२ उपसर्गों में 'कु' नहीं है परन्तु उस का उपसर्गवत् प्रयोग मिलता है—उदा० कुकर्म, कुख्यात, कुदृष्टि, कुरूप, कुवेला इत्यादि। हि० 'क' इसी से विकसित है उदा० कपूत।

५. दु—(सं० दुर्) 'बुरा' अर्थ में हिन्दी में 'दु' उपसर्ग है। उदा० दुकाल, दुबला, दुराज, दुसह, दुहाग।

६. नि—(सं० निर्) तद्भव शब्दों के साथ ही इसका अधिकतर योग होता है—उदा० निकम्मा, निडर, निधड़क, निहत्था। 'निखालिस' में 'नि' का कोई अर्थ नहीं है।

७. पर (सं० प्र) सम्बन्ध-वाचक शब्दों के पूर्व जुड़ कर यह उपसर्ग प्रायः 'पहले की पीढ़ी का' यह अर्थ देता है। उदा०—परदादा, परनाना, परपोता। स्थानीय बोलियों में 'पड़' उच्चारण भी देखा जाता है।

८. स (सं० सु) उदा०—सपूत। यहा 'पू' पर बलाघात है, अतः 'सु' का 'उ' बदल कर 'अ' रह गया है।

फ़ारसी उपसर्ग

फ़ारसी में अरबी उपसर्गों को भी सम्मिलित करना चाहिए क्योंकि वे फ़ारसी के माध्यम से ही लोक मे प्रचलित हुए हैं। कुछ उदाहरण देखें :—

१. अल—उदा० अलग़रज़, अलमस्त, अलमस्ती।

'अलबत्ता' में भी यही उपसर्ग है। चूंकि 'बत्ता' का स्वतन्त्र रूप से प्रयोग नहीं होता इसलिए हिन्दी में यहां 'अल' उपसर्ग नहीं समझा जाता।

२. दर (फा० 'दरवाज़ा' का संक्षेप, सं० द्वार)—फारसी में दर उपसर्ग 'में' अर्थ रखता है यथाः दरअसल, दरहक़ीकत। हिन्दी मे दर-दर की ठोकरें, दर-दर की ख़ाक छानना आदि में 'दर' शब्द 'द्वार' अर्थ मे है।

३. ब (अर्थ—से, के साथ)—यह उपसर्ग फ़ारसी-अरबी संज्ञाओं के साथ जुड़ कर उन्हें क्रिया-विशेषणों मे परिवर्तित करता है उदा० बक़ौल, बख़ूबी, बतौर, बदौलत इत्यादि।

४. बा (अर्थ—से, के साथ)—उदा० बाकायदा, बामुहावरा।

५. बे (सं० वि, अर्थः बिना)—उदा० बेइज़्ज़ती, बेईमान, बेखटके, बेचारा, बेडौल इत्यादि।

६. ला (अर्थ—नही, अभाव)—यह अरबी उपसर्ग फ़ारसी से होता हुआ

हिन्दी में आया है यथा लाचार, लापरवाही।

७ हम (अर्थ—आपस में, साथ, बराबर)—यह सं० सम् उपसर्ग से मिलता जुलता फा० उपसर्ग है। उदा० हमउम्र, हमदम, हमदर्द, हमसफर इत्यादि। हिन्दी कवियों ने भी समवयस्क, समदु:खी, सहयात्री शब्द प्रयुक्त किए हैं।

अंग्रेजी उपसर्ग

प्राय: अंग्रेजी के ये ५ उपसर्ग या शब्द ही हिन्दी में प्रचलित हैं **डिप्टी, वाइस, सब, हाफ** और **हैड**। खोज करने पर और उपसर्ग भी मिल सकते हैं।

क्रमश: उदाहरण ये है—डिप्टी सुपरिंटेंडेंट, डिप्टी कलक्टर।

वाइसचांसलर, वाइसचेयरमैन, वाइसप्रिंसिपल। सबइन्स्पैक्टर, सबरजिस्ट्रार, सबपोस्टमास्टर। हाफबैंक, हाफपैंट, हाफटोन, हाफकमीज। हेडमास्टर, हेडक्लर्क, हेडआफिस इत्यादि।[1]

उपर्युक्त उपसर्गों में '**अ**' '**अन्**' (हि० अन), '**निर्**', '**दुर्**', '**प्र**', '**प्रति**', '**सम्**' और '**सु**' उपसर्ग ही कवियों ने अधिकतर ग्रहण किए हैं। फा० का '**बे**' उपसर्ग भी उन्होने प्रयुक्त किया है। यद्यपि '**अ**' और '**अन्**' उपसर्गों की संस्कृत के २२ उपसर्गों मे गिनती नहीं कराई गई है तथापि उन का संस्कृत साहित्य मे प्रयोग देख कर कर हम ने उन्हें संस्कृत के ही उपसर्ग माना है। हम इस विषय में आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा के इस मन्तव्य से सहमत हैं कि—'यदि हम उपसर्ग शब्द का प्रयोग किसी ऐसे अव्यय या शब्द के सम्बन्ध में करें जो हिन्दी अथवा किसी अन्य भाषा में उपसर्ग की तरह लगता हो तो उसके विषय मे यह आपत्ति ठीक नहीं कि इसे 'उपसर्ग' नहीं कहना चाहिए क्योंकि यह सस्कृत के उपसर्गों की सूची मे नही आया है।'[2]

लिङ्ग

'लिंग' शब्द का अर्थ है—'**चिह्न**' अर्थात् जिस से किसी चीज को पहचाना जाए। आचार्य पतञ्जलि ने 'स्त्रियाम्' सूत्र[3] और भर्तृहरि ने 'लिंगसमुद्देश'[4] का विवेचन करते हुए लिंगों के सम्बन्ध मे अपने विचार व्यक्त किए हैं।

पाणिनि व्याकरण में 'लिङ्ग' के अर्थ में '**व्यक्ति**' शब्द प्रयुक्त किया गया है। 'परन्तु इन दोनों शब्दो से **अच्छा 'जाति'** शब्द है—'वृक्ष' पुंजातीय शब्द और

---

१. हिन्दी भाषा, डॉ० भोलानाथ तिवारी, १२४, १२५, १२६.

२. शब्द और अर्थ, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, २५

३. महा० ४, १, ३

४. वाक्य०३, पृष्ठ ४२९-४४६

'लता' स्त्री-जातीय शब्द है। वृक्ष की जाति 'पुरुष' और लता की जाति 'स्त्री'।[१]

परन्तु 'लिंग' शब्द ही चल निकला है अत: हम इसी शब्द का आश्रय लेकर सारा विवेचन करेंगे।

लिङ्गों के प्रकार

मूलत: लिङ्गों के दो भेद है—**लौकिक लिङ्ग** और **व्याकरणिक लिङ्ग**। पुरुष-स्त्री, पिता-माता, लड़का-लड़की, बैल-गाय लौकिक लिङ्ग है। भाषा में इन की अपेक्षा व्याकरणिक लिङ्गों का ही अधिक महत्त्व रहता है यथा ग्रन्थ-पुस्तक, कान-नाक, पेट-पीठ, दिन-रात।[२] इन उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्याकरणिक लिंग सदा लौकिक लिंगों के अनुसार ही नही होते।

शब्दों का लिङ्ग-निर्धारण

लोक-व्यवहार के आधार पर शब्दों के लिङ्ग निर्धारित किए जाते हैं। 'पदार्थ', 'व्यक्ति' और 'वस्तु' शब्द क्रमश: पुं०, स्त्री० और नपुं० है। यही स्थिति क्रमश: 'दारा', 'स्त्री' और 'कलत्र' शब्दो की है। 'कुटीर' पुं० है और 'कुटी' स्त्री०।[३] 'तट' शब्द प्रसंग और विवक्षा-भेद से तीनो लिंगो में देखा जाता है।[४]

प्राय: सभी भाषाओं मे शब्दो का लिंग निर्धारित करते समय ये ४ साधन उपयोगी माने जाते हैं—१. अर्थ २. रूप ३. सादृश्य ४. साहचर्य[५]।

संस्कृत में लिङ्ग-निर्धारण

संस्कृत मे संज्ञा शब्दो के अनुसार ही विशेषण और सर्वनाम के लिंग निश्चित किए जाते है अत: वहां लिङ्गो का ज्ञान होना अत्यावश्यक है।

चूंकि एक ही अर्थ में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न शब्दो के लिङ्ग संस्कृत भाषा मे एक समान नही होते इसीलिए 'अर्थ' के आधार पर लिगो का निर्णय वहां नही होता। महर्षि पाणिनि के 'लिगानुशासन' मे जो नियम दिए गए है उन के आधार पर ही प्राय: शब्दो के लिङ्ग निश्चित किए जाते है। शेष शब्दो के लिए **'परम्परागत प्रयोगों'** को ही प्रमाण समझा जाता है। कदाचित् इसीलिए वहा **'लोक-व्यवहार'** को शब्दो के लिंग-निर्धारण का प्रमुख साधन स्वीकार किया जाता है।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी १७८

२, राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, ७१

३. वाक्य० ३, ४४२

४. वाक्य०, ३, ४४०

५, राष्ट्रभाषा हिंदी, देवेन्द्रनाथ शर्मा, ७६

विभिन्न भाषाओं में लिंग-व्यवस्था

भिन्न भिन्न भाषाओं में लिङ्गों की भिन्न भिन्न व्यवस्था मिलती है। गुजराती, प्राकृत, मराठी और संस्कृत भाषाओं में तीन लिङ्ग हैं—पुंलिग, स्त्रीलिग, और नपुंसक लिंग।

पंजाबी, राजस्थानी, हिंदी में दो ही लिङ्ग हैं—पुंलिंग और स्त्रीलिंग।

'उड़िया, बंगाली (बंगला), बिहारी आदि कुछ ऐसी भी भाषाएं है जिनमे लिङ्ग-भेद प्राय: नही है।'[1]

अंग्रेजी मे चार लिग है—पुंलिग, नपुंसक लिग और उभयार्थक लिग (कॉमन जेण्डर)

हिंदी में लिंग-निर्धारण

हिंदी की लिग-व्यवस्था बडी जटिल और दुरूह है। जिसके तीन कारण है :—

१. तद्भव शब्दो मे इतना अधिक रूप-परिवर्तन हो गया है कि उन का तत्सम शब्दो से सम्बन्ध स्थापित करके अब लिगो का निश्चय करना कठिन है।

२. हिंदी मे नपुंसक लिंग नही है इस से भी अनेक कठिनाइया उपस्थित होती हैं।

३ हिंदी में आ कर संस्कृत के तत्सम शब्दों के लिंग बदल गये हैं यथा आत्मा, तारा, देह इत्यादि।

संस्कृत मे जो शब्द पुं० या नपुं० (क्लीव) है उनके तद्भव रूपों को हिंदी मे प्राय: पुं० मान लिया गया है। उदाहरणत: ओष्ठ, कर्ण, दन्त और मुख के तद्भव रूप है ओठ, कान, दांत और मुंह। हिंदी मे ये सब पुं० है।

इसके विपरीत जो शब्द संस्कृत में स्त्री० है उन के तद्भव रूप हिंदी में स्त्री० ही है। यथा जीभ (सं० जिह्वा), नाक (सं० नासिका) इत्यादि।

सामान्य नियमों के अपवाद

हिंदी मे उपर्युक्त लिंग-व्यवस्था ही समान्यत: देखी जाती है। किन्तु इसके अपवाद भी वर्तमान है। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित शब्द संस्कृत में पुं० या नपुं० होने पर भी हिंदी मे पु० की अपेक्षा स्त्री० रूपों मे ही चल रहे है—

---

१. हिंदी भाषा और लिपि का ऐतिहासिक विकास, सत्यनारायण त्रिपाठी, ११४

आत्मा, आय, आयु, कुशल, गंध, जय, पुस्तक, वस्तु, शपथ, शरण, सन्तान और सामर्थ्य।

इस लिंग-परिवर्तन का एक मुख्य कारण लोक-व्यवहार में फारसी, अरबी, पंजाबी, अंगरेज़ी आदि भाषाओं के समानार्थक शब्दों का प्रचलन है। इसीलिए **उम्र, औलाद, कज़ा, कसम, चश्म, चीज़,** ताकत, पनाह, **बू, रूह,** और **हवा**—इन शब्दों के प्रभाव से क्रमशः **आयु,** सन्तान, मृत्यु, शपथ, **आँख, वस्तु, सामर्थ्य, शरण, गन्ध, आत्मा** और **वायु** शब्द भी स्त्री० हो गए हैं।[1]

श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा ने उर्दू भाषा के प्रयोगों को ही ध्यान में रख कर उपर्युक्त शब्द गिनाए हैं अन्यथा 'औलाद' शब्द अरबी में 'वलद' पुं० शब्द (अर्थ 'पुत्र') का बहुवचन रूप है अतः पुं०[2] ही है। हां उर्दू मे 'औलाद' शब्द अवश्य स्त्री० में भी लिखने-बोलने में आता है।

हिंदी में उभय लिंग

हिंदी में कुछ शब्द उभय लिंगो मे मिल जाते है यथा अग्नि, फाग, फुहार, वेणु इत्यादि।

डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन' के मतानुसार लिंग "जिसे संकेतित करते है, उसके लिंग के अनुसार ही उनका लिंग भी प्रयुक्त होता है जैसे कमला मेरी मित्र है, विमला बडी चोर है, शांतिदेवी गवर्नमेंट कालेज की प्रिंसिपल है। एक लेखक ने लिखा था—'कमला मेरा मित्र है,' यह प्रयोग ठीक नही।"[3]

कदाचित् इसी बात को ध्यान मे रख कर कवि पंत ने 'द्वार', 'मित्र' और 'शोभालंकार' को स्त्री० में लिखा है—

१. जिनकी अबोध पावनता थी जग के मंगल की **द्वार**[4]

२. बालिका मेरी मनोरम **मित्र** थी।[5]

३. जिनकी अविकच दुर्बलता ही थी जग की **शोभालंकार**[6]

---

१. राष्ट्रभाषा हिन्दी···देवेन्द्रनाथ शर्मा, ७६-८०

२. उर्दू-हिंदी शब्द-कोश, मुहम्मद मुस्तफा खाँ 'मद्दाह', दे० औलाद, वलद

३. हिंदी भाषा : अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५६

४. पल्लव, बालापन, १४२

५. पल्लव, उच्छ्वास, ५६

६. पल्लव, बालापन, १४२

द्वन्द्व समासों में लिंग

जहाँ द्वन्द्व समास होगा वहां विशेषण का लिंग प्रायः दूसरे पद के ही अनुसार होगा। यथा 'मेरे हंसी-मजाक', 'सारी दिन-रात'।

द्वन्द्व समास से पूर्व जुड़ने वाला विशेषण दोनों पदों की विशेषता प्रकट किया करता है—जैसें 'वृद्ध माता-पिता'। इसका तात्पर्य है—वृद्धा माता और वृद्ध पिता।'[1] यह एक सामान्य नियम है।

लिंग सम्बन्धी भूलें

आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा भी यह स्वीकार करते हैं कि 'हिंदी भाषा और व्याकरण मे जितना पेचीला विषय लिंग का है, उतना पेचीला और कोई विषय नहीं है।'[2]

स्वय वर्म्मा जी ने ही 'अच्छी हिंदी' शीर्षक पुस्तक में एक स्थल पर लिखा है—'संस्कृत में 'ओषधि' पुँल्लिग और 'औषध' स्त्रीलिंग हैं।'[3]

पं० किशोरीदास वाजपेयी इस भूल की ओर ध्यान दिलाते हुए कहते हैं—'संस्कृत में लोग 'ओषधि' और इसके ही दूसरे रूप 'ओषधी' का प्रयोग स्त्रीलिंग में ही किया करते हैं।......'औषध' संस्कृत में नपुंसक लिंग लोग अभी तक समझते रहे हैं।'[4]

एक अन्य स्थल पर पण्डित वाजपेयी जी लिखते है—हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि पं० सुमित्रानन्दन पन्त 'चन्द्रमा' का प्रयोग स्त्रीलिंग मे करते है, इसलिए कि यह बहुत सुन्दर है।'[5] अन्यत्र उन्होंने कहा है—'प्रभात' को 'प्रभातवेला' बना कर ही स्त्रीत्व में प्रयोग कर सकते हैं, केवल 'प्रभात' को नहीं।'[6]

किंतु पंत जी ने केवल 'प्रभात' शब्द को भी स्त्री० मे प्रयुक्त किया है। दो उदाहरण देखें—

१. प्रभात तुम्हारी मुख-छवि-सी रुचिमान्[7]

---

१. हिंदी भाषा : अतीत और वर्तमान, डॉ० 'सुमन', ५५
२. हिंदी प्रयोग, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, परिच्छेद लिंग,' १४१
३. अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा
४. अच्छी हिंदी का नमूना, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ११४
५. हिंदी शब्दानुशासन, पं० वाजपेयी, १६२
६. हिंदी शब्दानुशासन, पं० वाजपेयी, १६४
७. गुंजन, मधुवन, ५३

२. पल्लवो की यह सजल **प्रभात**[1]

इसी प्रकार लिंगो के क्षेत्र में हमने कवियो के रुचि-स्वातन्त्र्य का विस्तार-पूर्वक अध्ययन किया है । इसके साथ ही व्यवहार-खण्ड मे संस्कृत, हिंदी, ब्रज०, और अवधी भाषाओ के लिंगो से तुलनाएं भी की है । 'हिंदी' (हिं०) शब्द से हम ने खड़ी बोली-रूप की ओर ही संकेत किया है । शब्दो के लिंग देते समय वाक्यार्थों पर ही ध्यान रखा गया है, शब्द-रूपों पर नही । संस्कृत मे अर्थों की भिन्नता के अनुसार शब्दों के लिंगो में भी भिन्नता है । अत: किसी कवि द्वारा प्रयुक्त शब्द का अर्थ देखते हुए ही संस्कृत में तत्सम्बन्धी लिंग का निर्देश किया गया है ।

नये लिंग

हिन्दी मे आजकल नये पुं० और स्त्री० रूप भी घडे जा रहे है । काव्य मे यह प्रवृत्ति कही अधिक दिखाई देती है । **बहेली**, **मनौता**, **हरियाला** सरीखे पुं० शब्द नये ही है । नये स्त्री० रूप तो बहुत अधिक सख्या मे है यथा अगवानिन, अनाथन, इन्द्र-धनुषी, कुहराई, खगी, खड्डी, छात्री, डाइनी, पखिनी, पथिनी, पथिकिनी, फंदी, फेना, बटमारन, विहगी, सगिन, सागरी, सिपाहिनी इत्यादि ।

हम ने लिंगो का अध्ययन करते समय ऐसे अनेक उदाहरण संचित किए है । यद्यपि इन में से कुछ लिंगो के रूप संस्कृत व्याकरण के अनुसार बन सकते है तथापि अधिकांश नये ही है ।

वचन

लोक-व्यवहार में 'वचन' के अर्थ है—प्रतिज्ञा के रूप मे किसी की **कही** हुई बात, उक्ति, कथन, सार्थक शब्द, वाणी । उदाहरणत: 'यह श्याम जी का **वचन** है' या 'उन्होंने यह काम करने का **वचन** दिया है' ।[2]

किन्तु व्याकरण मे 'वचन' के द्वारा सज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि की संख्या का बोध होता है ।

एक से बहुत बनाने के लिए हिन्दी मुख्यत: 'बिन्दी' का ही प्रयोग करती है । 'आकारांत को छोड़ कर दूसरे शब्दों के एकवचन मे कोई परिवर्तन नही होता, चाहे वह शब्द पुं० हो या स्त्री० । शब्द के मूल रूप मे ही विभक्तिया लग जाती है ।... सम्बन्धवाचक आकारांत शब्द इस नियम से भी मुक्त है जैसे दादा को, बाबा को,

१. पल्लव, ५४

२ हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, परिच्छेद 'वचन', १२६

मामा को, चाचा को आदि ही कहेंगे, यहां 'आ' का 'ए' नहीं होगा।'[1]

यह तो एक सामान्य नियम है। परन्तु इसके कुछ अपवाद भी मिल जाते हैं।

वचन के प्रकार

लिंग की भाँति संस्कृत में वचन भी तीन है—एकवचन, बहुवचन और द्विवचन। मराठी मे भी तीन है।

कदाचित् युग्मों (जोड़ो) की प्रचुरता देख कर ही संस्कृत मे 'द्विवचन' की योजना की गई होगी। प्राकृत भाषा में 'द्विवचन' नही है। हिन्दी मे भी प्राकृत भाषा की भाँति केवल एकवचन और बहुवचन ही चलते हैं। हिन्दी मे नपुंसक लिंग का अभाव होने के कारण लिंग-निर्धारण में जैसी कठिनाइयां आती हैं वैसी 'द्विवचन' के अभाव में वचन-निर्धारण में नहीं आतीं।

वचन के रूप

एक अन्य दृष्टि से वचन दो प्रकार के हैं—**विकारी और अविकारी**। व्याकरण में वचन के द्वारा संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि मे जो रूप-परिवर्तन होते है उन्हें 'विकार' तथा परिवर्तित शब्द-रूपों को 'विकारी' कहते है।[2]

कई बार बहुवचन बनाते समय शब्द के मूल (एकवचन) रूप मे कोई 'विकार' नही आता। ऐसे शब्द-रूपों को 'अविकारी' कहा जाता है। यथा: आँख आना, आँख रखना, आँख उठना या उठाना। 'आँख फड़कना का भी इस दृष्टि से एकवचन में ही प्रयोग होता है कि दोनों आँखे एक साथ नही फड़कती।'[3]

इसी प्रकार हिन्दी कविताओं मे अनेक स्थितियो मे अविकारी वचन आते है—यथा 'जो **हाथ** छीनता है अधिकार, वह टूट जावे'। यहा लक्षणा द्वारा 'हाथ' एकवचन शब्द पूंजीपतियो का प्रतीक है।

वचन के कारण सर्वनाम के रूप भी बदलते हैं यथा 'वह' का 'वे', 'यह' का 'ये', 'किस' का 'किन', 'उस' का 'उन' इत्यादि। किन्तु कुछ स्थितियो मे कवियों ने बहुवचनों मे भी मूल एकवचनों का ही (अविकारी) रूप लिखा है। रामचन्द्र वर्म्मा भी लिखते हैं—'बहुत से लोग एकवचन में भी और बहुवचन में भी 'यह' और 'वह'

---

१. राष्ट्रभाषा हिन्दी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, ९२
२. हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, परिच्छेद 'वचन', १२७
३. शब्द और अर्थ, रामचन्द्र वर्म्मा, ४१

का ही प्रयोग करते हैं—" हम ने ऐसे सैंकड़ो उदाहरण बटोरे हैं जिन में 'एकवचन' लिख कर 'बहुवचन' का अर्थ और 'बहुवचन' लिख कर 'एकवचन' का आशय प्रकट किया गया है। विशेषत: संज्ञाओ और सर्वनामों मे ऐसे रूप अधिक हैं।

सदा बहुवचन में प्रयुक्त शब्द

हिन्दी में कुछ शब्द सदा बहुवचन में ही लिखे जाते हैं यथा **आंसू**, **दर्शन**, **प्राण**; **सामग्री**, **हस्ताक्षर** इत्यादि।[२]

संस्कृत मे 'अश्रु' कही कही एकवचन मे भी मिल जाता है। वस्तुत: '**आंसू**' की एक बूंद भी गाल पर ढुलक सकती है।

'**दर्शन**' शब्द का प्रयोग सदा बहुवचन में ही होता है। कदाचित् आदर प्रकट करने के लिए ही ऐसा विधान है। हिन्दी में किसी महान् पुरुष को प्राय: 'वे' सर्वनाम से ही निर्देशित किया जाता है। यहा 'वे' का प्रयोग आदरार्थक ही है।

'**प्राण**' शब्द भी सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होता है। शास्त्रों में 'प्राण' के १० भेद या रूप बनाये गए हैं—'प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय।'[३]

इन में पहले पांच प्राण ही मरते समय शरीर छोड़ते हैं इन्हें 'पंचप्राण' यह पारिभाषिक संज्ञा दी गई है। कदाचित् इसीलिए संस्कृत व्याकरण मे 'प्राणम्' के बहुवचनात्मक प्रयोग मिलते हैं। हिन्दी में भी इसीलिए 'प्राण' शब्द बहुवचन मे ही प्रयुक्त होता है। फेफड़ों से 'प्राण', गुदा-स्थान से 'अपान', नसों के रक्त-प्रवाह से 'व्यान', पाचन क्रिया से 'समान', और कण्ठ नालिका से 'उदान' नाम की वायु[४] निकल जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि मृत्यु के समय पाचों प्राण एक साथ निकलते हैं।

'**सामग्री**'[५] और '**हस्ताक्षर**' शब्द भी हिन्दी मे सदा बहुवचन रूप मे ही लिखे बोले जाते है।

---

१. हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, ६४, परि० 'सर्वनाम'

२. (क) अच्छी हिन्दी, रामचन्द्र वर्म्मा, २५४

(ख) हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १३५

(ग) हिन्दी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, २००

(घ) हिन्दी भाषा, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५६

३. शब्द और अर्थ, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, ६०

४. हिन्दी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५६

५. हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १३६

'अनेकों' बहुवचन की संदिग्धता विशेषण के रूप में 'अनेकों' बहु० शुद्ध है या अशुद्ध, इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है।

पं० किशोरीदास वाजपेयी के मतानुसार विशेषण के रूप में 'अनेक' शब्द मूलत: निश्चित संख्या दो का बोधक है। एक से अधिक अनेक — यानी 'दो'।

धनञ्जय के 'दशरूपक' में विष्कंभक के भेद-निरूपण में एक कारिका की पंक्ति है—

' एकानेककृत: शुद्ध: '

धनिक ने इस की व्याख्या में लिखा है —

एकेन द्वाभ्याम् वा मध्यमपात्राभ्याम् शुद्ध:

अनेक शब्द कुछ ही आगे बढ़ सकता है, दो नहीं, दो-चार नहीं! 'चार-पाँच' या इस से अधिक का बोध **'अनेकों'** से ही होगा।[1]

दूसरी ओर, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा ने 'अनेकों' बहु० शब्द को 'सर्वनाम' के रूप में शुद्ध तथा 'विशेषण' के रूप में अशुद्ध बताया है।[2] डॉ० भगीरथ मिश्र और डॉ० प्रभकार कपूर भी ऐसा ही मानते हैं।[3]

इन विद्वानों के अनुसार 'अनेकों ने यह व्रत धारण किया है' और 'अनेकों ने भोजन किया है' आदि वाक्यों में 'अनेकों' सर्वनाम के रूप में है अत: शुद्ध प्रयोग है।

श्री रामचन्द्र वर्म्मा लिखते हैं—"यदि हम 'अनेक' का प्रयोग विशेषण के रूप में न कर के संज्ञा के रूप में करें तो बात दूसरी है। उस दशा में हम कह सकते हैं— 'अनेकों का यह मत है'।[4]"

हमारा विनम्र निवेदन यह है कि यहां 'अनेकों' संज्ञा न हो कर सर्वनाम बहु० शब्द है।

आजकल हिंदी में 'अनेक' में 'दो' निश्चित संख्या का अर्थ नहीं लिया जाता अत: हम ने भी बहुत्व के सूचक के रूप में ही 'अनेक' का अर्थ ग्रहण किया है और विशेषण-रूप में इस का बहुवचन रूप 'अनेकों' अशुद्ध माना है। सर्वनाम के रूप में ही 'अनेकों' बहुवचन रूप हमें ठीक जान पड़ता है। इसी मान्यता के अनुसार हम ने कवियों द्वारा प्रयुक्त विशेषण रूप में 'अनेकों' बहु० शब्द एकत्र किये हैं जोकि नये प्रयोग हैं।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ४४७-४४८
२. (क) अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा, २५५
   (ख) हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १३६
३. अच्छी हिंदी कैसे लिखें, डॉ० भगीरथ मिश्र, १६१
४. हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १३६

अन्य अविकारी शब्द

हिंदी में एकाध, प्रति, प्रत्येक, और हरेक जैसे कुछ शब्द ऐसे है जो एकवचन शब्दों के साथ ही जुड़ते है यथा एकाध बात, प्रतिरोम, 'प्रति व्यक्ति एक किलो खाड मिलेगी', '**प्रत्येक** पंसारी बेचता है,' '**हरेक** नागरिक को सूचित किया जाता है'[1]।

इसी प्रकार आधा, चौथाई, तिहाई आदि शब्द भी एकवचनों के साथ जुडते है कुछ अन्य स्थितियो में भी एकवचन चलते है— यथा 'निर्धन से निर्धन भी कुछ दान कर सकता है'। यहा 'निर्धनों' लिखना अशुद्ध होगा। इसी प्रकार वैयाकरणो ने 'सब' का बहुवचन 'सबों' या 'सभो' भी अशुद्ध बतलाया है।

पुवर्गीय संस्कृत तद्रूप शब्दों मे प्राय: परिवर्तन नही होता है --- विधाता,पिता, राजा[2] ऐसे ही शब्द है। किन्तु अनेक कवियो ने 'राजे' जैसे बहुवचन रूप भी लिखे है।

इसी प्रकार सम्बोधनो मे संज्ञा का बहुवचन बनाते समय 'ओ' विभक्ति लगती है, 'ओं' नही। किन्तु कवियो ने 'ओ बालकों' सरीखे प्रयोग भी किये है। प० वाजपेयी जी लिखते है-- 'बहनों' मे भी 'ओं' की अनुनासिकता गलत है। 'न्' तो अनुनासिक है ही। संभव है इसी ('न्') की आवाज को लोग 'ओं' की आवाज समझ कर उसे ('ओं' को) अनुनासिक कर देते हो''।[3]

इसी प्रकार संस्कृत के व्यजनात शब्दो के बहुवचन बनाते समय अन्त्य व्यजन 'ओं' में जा मिलता है[4]—

विद्वान् +ओं = विद्वानो

ठीक ऐसे ही बुद्धिमानो,विपदो,ससदो आदि बहु० रूप बनते है।

ऊपर हम ने वचनो के सम्बन्ध मे कई बाते कही है। व्यवहार-खड मे उन सब को ध्यान मे रख कर ही कवियों द्वारा प्रयुक्त वचनो का अध्ययन किया गया है।

संधि

हलन्त शब्द संस्कृत के व्यजनान्त शब्दो को हिंदी मे आजकल स्वरान्त कर लिया गया है यथा किंचित, विद्वान, श्रीमान,इत्यादि। हिंदी की प्रकृति को देखते हुए इन शब्द-रूपो को शुद्ध कहा जा सकता है। किन्तु संधि के प्रकरण मे 'हलन्त शब्दो मे हलन्त

१. (क) हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, ३५७

(ख) अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा, २५५

२. हिंदी भाषा और लिपि का ऐतिहासिक विकास,सत्यनारायण त्रिपाठी, ११६

३. हिंदी शब्दानुशासन, पं०किशोरीदास वाजपेयी,३७३

४. हिंदी शब्दानुशासन, प०किशोरीदास वाजपेयी,१९९

का प्रयोग न करने से कठिनाई उत्पन्न[1] होती है। यह एक समस्या है।

स्वर-संधियां इसी प्रकार आजकल हिंदी में संस्कृत तत्सम शब्दों के योग से ऐसे समास भी चल रहे है जिन में संस्कृत के संधि-नियमों से संधि हो जानी चाहिए, पर नही होती। कुछ उदाहरण देखें :---

धर्म-अधर्म, ध्वनि-अविकारी, प्रभु-आदेश, राम-आश्रम, सरस्वती-आश्रम, सरस्वती-उपासना और स्वास्थ्य-अधिकारी।

संस्कृत मे इन समासो के क्रमश: रूप होगे --धर्माधर्म, ध्वन्याविकारी, प्रभ्वादेश, रामाश्रम, सरस्वत्याश्रम सरस्वत्युपासना और स्वास्थ्याधिकारी।

संस्कृत के समासो में संधि होना आवश्यक है पर हिंदी मे ऐसा नही है।[2] संधियों के क्षेत्र मे यह दूसरी समस्या है।

वर्ण-वृद्धि हिंदी मे तीसरी समस्या या कठिनाई ऐसी संधियों या समासों को ले कर उत्पन्न होती है— **दीनानाथ, मूसलाधार, सत्यानाश**। 'सत्यानाश' को तो आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा 'सत्तानाश' शब्द का ही विकार मानते है। पं० किशोरीदास वाजपेयी लिखते है — 'संस्कृत मे जैसे 'विश्वामित्र' बन गया, उसी तरह हिंदी मे 'दीनानाथ' तथा 'मूसलाधार' बन गये। अपना अपना क्षेत्र है।'[3] ये वर्ण-वृद्धि[4] के उदाहरण है।

हिंदी की प्रकृति वाजपेयी जी चूंकि हिंदी की अपनी प्रकृति मे विश्वास रखते हैं इसीलिए 'अन्तारमण' और 'पुनारचना' की अपेक्षा हिंदी में अन्तर्रमण या अन्त: रमण और पुनर्रचना या पुन:रचना ही शुद्ध मानते है।[5] इसी तरह वे 'कांग्रेसाध्यक्ष' की बजाय 'कांग्रेस-अध्यक्ष', और 'समत्सदस्य', 'समच्चर्चा', 'ससद्धर्ष' के स्थान पर 'ससद्-सदस्य', 'संसद्-चर्चा', 'ससद्-हर्ष' लिखने के ही पक्षपाती है।[6]

दूसरी ओर, डॉ० 'सुमन' एक स्थल पर अन्तर्साक्ष्य और 'निरोगता' इन विसर्ग संधियों को अशुद्ध बतलाते है। उन्होने संस्कृत के संधि-नियमो के अनुसार

---

१. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याए और समाधान, श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा, १०५
२. हिंदी समास-रचना का अध्ययन, डॉ० रमेशचन्द्र जैन, ३४, १५६
३. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ५८
४. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, १०७
५. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ५८
६. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३१०-३११

'अन्तःसाक्ष्य' और 'नीरोगता' को ही हिंदी मे शुद्ध रूप स्वीकार किया है[1] ।

वस्तुतः संधि के प्रकरण मे अन्त्य व्यंजनो, सधिज समासो और वर्ण-वृद्धियो के कारण अनेक कठिनाइया उत्पन्न हुई है। अत्याधुनिक हिंदी कवियों ने संधियो का प्रयोग करते समय यत्र तत्र निरकुशता का परिचय दिया है । इन्हे कवियो की अशुद्धिया या छपाई सबन्धी भूले नही कहना चाहिए। हमारे विचार मे ये नवीन शब्द-रूप हिंदी भाषा के विकास को सूचित करते है । गद्य की अपेक्षा पद्य मे नवीन सधिज शब्द कही अधिक सख्या मे है। इस दृष्टि से भी उनके अध्ययन की उपयोगिता है ।

समास

हिंदी मे समास-भेद स्वतन्त्र शब्दो के मेल से बना एक शब्द 'समास' की यह परिभाषा ही अधिक प्रचलित है। सधियो की भाति सस्कृत व्याकरण के नियमो को ही समासो के लिए भी उपयुक्त समझा जाता रहा है। इसीलिए हिंदी समासो को अव्ययी-भाव, द्वन्द्व, तत्पुरुष, बहुव्रीहि आदि प्राचीन भेदो मे ही रखा जाता है । वस्तुतः संस्कृत भाषा सयोगात्मक है जबकि हिंदी वियोगात्मक प्रकृति रखने वाली भाषा है। **अब संस्कृत समासों की अर्थ-प्रधान दृष्टि को छोड़ कर 'रूप' पर बल दिया जा रहा है।**

डॉ० रमेशचन्द्र जैन लिखते है - हिंदी समासो के इन भेद-उपभेदो की प्रतिष्ठापना मे मै ने संस्कृत व्याकरण से गृहीत हिंदी समासो के परम्परागत आदर्श को अपने सामने नही रखा '[2] आगे लिखते है- ' हिंदी के पद्य साहित्य से मै ने समास-सग्रह की चेष्टा नही की। गद्य-साहित्य से ही समास-सग्रह की प्रवृत्ति अधिक रही है। इसका कारण यही था कि पद्य मे भाषा का प्रकृत रूप उतना नही मिलता जितना गद्य की भाषा मे। पद्य की भाषा कलात्मक होती है । व्याकरण की मर्यादा उस मे उतनी नहीं रहती जितनी गद्य मे -- '।[3]

इसके विपरीत हम ने पद्य के क्षेत्र तक ही अपने को सीमित रखा है एक प्रकार से यह क्षेत्र आलोचको द्वारा उपेक्षित ही रहा है।

संधिज समास सधियो पर विचार करते समय हम ने कुछ सधिज शब्दो के समासो का उल्लेख किया था। उन के अतिरिक्त और शब्द भी है यथा 'कामेशाङ्क' और

---

१. हिंदी भाषा : अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बा प्रसाद 'सुमन', ५०

२. हिंदी समास-रचना का अध्ययन, डॉ० रमेशचन्द्र जैन, २४

३. हिंदी समास-रचना का अध्ययन, डॉ० रमेशचन्द्र जैन, २६

'झण्डाभिवादन'। इन में 'अंक' और 'अभिवादन' संस्कृत तत्सम शब्द हैं जो क्रमशः 'कांग्रेस' (अंगरेजी) और झंडा (उर्दू) शब्दों में जुड़ गए हैं। वर्म्मा जी ने इन्हें 'संकर समास' होने के कारण अशुद्ध बतलाया है। पं० किशोरीदास वाजपेयी भी इन्हें अशुद्ध ही मानते हैं और कारण बताते हैं — 'हम लोग तो ऐसे स्थलों में खटक इसलिए अनुभव करते थे कि संधि हो गयी।......यदि समास कर दिया जाए और संधि न की जाए तब खटक नहीं रहती—'कांग्रेस-अङ्क', और 'झण्डा-अभिवादन' [1]'।

हिंदी की प्रकृति ही ऐसी है कि उस में समास बहुत कम हैं उन में भी संस्कृत की 'घरांगन' जैसी संधियां प्रायः नहीं होती। वस्तुतः ऐसे समासों में पदों की विधेयता शक्ति लुप्त हो जाती है। 'समास में बंध कर विधेय पद जोर खो बैठते हैं'। [2] इसीलिए संस्कृत के सामासिक पदों में हिंदी भाषा संधि नहीं करती। यद्यपि बोलचाल में रामासरे और बेइमान जैसे प्रयोग ही चलते हैं तथापि लिखते समय 'राम-आसरे', 'बे-ईमान' जैसे शब्द-रूप ही अपनाने चाहिएं, ऐसा कुछ विद्वानों का मंतव्य है [3]।

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उच्चारण के अनुकूल वर्तनी (अक्षरी) सैद्धांतिक दृष्टि से तो ठीक है पर व्यावहारिक दृष्टि से अनुपयोगी ही है।

कर्मधारय समास डॉ० रमेशचन्द्र जैन निम्नलिखित समासों में 'रूपक अलंकार' की स्थिति मानते हैं —

आशा-दीप, आशा-लता, क्रोधाग्नि, जीवन-दीप, जीवन-संग्राम, भक्ति-सुधा, विजय-वैजयन्ती।

जैन जी का तर्क यह है — 'समास रूप में यहां दूसरा शब्द पहिले शब्द के जाति, स्वभाव और गुण का ही प्रतीक बन कर आया है। वह पृथक पद के ही गुण, स्वभाव को अधिक स्पष्टता के साथ हमारे सामने रखता है।' [4]

हम ने कवियों द्वारा प्रयुक्त ऐसे समासों को संस्कृत के 'कर्मधारय समासों' के ही अन्तर्गत रखा है। इन में भी प्रचुरता उपमानपूर्वपद और उपमानोत्तरपद भेदों वाले कर्मधारय समासों की है। विशेष्य-विशेषण भेद वाले कर्मधारय समास अगणित हैं इसीलिए हम ने उन का संग्रह नहीं किया है।

---

१. अच्छी हिंदी का नमूना, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ८९

२. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी ११०

३. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, ६३

४. हिंदी समास-रचना का अध्ययन, डॉ० रमेशचन्द्र जैन, १२३-१२४

द्वन्द्व समास द्वन्द्व समासों में पूर्वापर प्रयोग विशेष रूप से विवेचनीय है। इन के कुछ नियम ये हैं —

१. जो शब्द स्वर से आरंभ होते है वे पहिले आते है और व्यंजन से आरंभ होने वाले शब्द बाद में आते हैं। यथा —अगल-बगल, अड़ोस-पड़ोस, अमीर-गरीब, अमृत-गरल, आस-पास इत्यादि।

२. अकारादि क्रम से भी शब्द रखे जाते हैं यथा आम-इमली, इधर-उधर, जहां-तहां, जैसा तैसा, खट्टा-मिट्ठा, दाल-रोटी इत्यादि।

३. लघु-गुरु स्वरों (मात्राओं) के हिसाब से भी शब्दों को रखा जाता है — उदा० दाल-चावल, नर-नारी, पिक-काक, विष-अमृत, शिव-पार्वती, शुक-काग, स्त्री-पुरुष।[1]

यहां कम मात्राओं वाले शब्द पहले आए है।

४. प्राय: स्त्रीलिङ्ग शब्द पहले आते है और पुंलिङ्ग बाद मे— उदा० धरती-आकाश, नदी-तालाब, राधा-कृष्ण, सीता-राम इत्यादि।

५. श्रेष्ठ और आदरास्पद शब्द पहले आते है। यथा माता-पिता, युधिष्ठिर-अर्जुन, राम-लक्ष्मण, सोना-चांदी इत्यादि।

अव्ययीभाव समास संस्कृत के अव्ययीभाव समासों मे प्रथम पद कोई 'अव्यय' या 'उपसर्ग' होता है और समास हो जाने पर समस्त पद 'अव्यय' हो जाता है।

इन मे भी 'यौगपद्य' नामक भेद में समस्त पद में 'सह' का प्रयोग कर के फिर उसे 'स' कर दिया जाता है यथा 'सचक्रम्' (अर्थ — चक्र के साथ)।[2]

हिंदी मे इसी सहितार्थी अव्यय का उपसर्गवत् प्रयोग हुआ है। 'स' जोड कर संज्ञा से विशेषण बनाए जाते है यथा — सफल, सजीव, सरस, सनाथ। विशेषण से विशेषण यथा — सजातीय, तथा संज्ञा से क्रियाविशेषण यथा —सकुशल, सानन्द, सस्नेह, सप्रेम [3] भी बनते हैं।

हम डॉ० भोलानाथ तिवारी के इस विचार से सहमत नही है कि 'स' को एक उपसर्ग माना जाए। हम ने 'स' को अव्ययीभाव समासों में स्थान दिया है।

---

१. (क) हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३३४, ३३५, ३३६
(ख) हिंदी समास-रचना का अध्ययन, ९०

२. संस्कृत व्याकरण प्रबोध, डॉ० संसारचन्द्र एवं प्रो० विजयचन्द्र शास्त्री, १७७

३. हिंदी भाषा, डॉ० भोलानाथ तिवारी, (खण्ड दो), १२३

समासों में हिंदी की प्रकृति हिंदी में ऐसे समास भी हैं जिन में संस्कृत के ही शब्द और संस्कृत की ही संधि अपना कर भी हिंदी की प्रकृति रखी जाती है। नेता-गण, पिता-वचन, मातेश्वरी जैसे समास ही यहां चलते है। नेतृ-गण और पितृ-वचन[1] जैसे शब्द न तो साधारण लोग बोल सकते हैं और न ही उन्हे ठीक ठीक लिख सकने है। इसीलिए हिंदी ने संस्कृत के तत्सम शब्दों को यथासभव तद्भव रूपो मे बदल लिया है। संस्कृत के तद्रूप समास हिंदी मे बहुत कम हैं। यह हिंदी की अपनी पद्धति है जो लोक-प्रवाह में पनपी और आगे बढ़ी है। इसे छोड़ा नही जा सकता।

समास में शब्दों के अर्थ-परिवर्तन 'पनघट', 'पनवाड़ी' और 'पनसेरी' में 'पन' के क्रमशः अर्थ है — 'पानी', 'पान' और 'पाच'। ठीक इसी प्रकार 'सूरजमुखी' और 'चन्द्रमुखी' शब्दो के अर्थों मे अन्तर है। 'सूरजमुखी' उस फूल का नाम है जिस का मुख सदा सूर्य की ओर ही रहता है। पर किसी स्त्री को 'चन्द्रमुखी' उस की सुन्दरता का बखान करने के लिए कहा जाता है। चन्द्रके समान मुख वाली स्त्री — चन्द्रमुखी।

'मच्छरदानी' मसहरी को कहते है और 'सुरमेदानी' सुरमा रखने के पात्र या वस्तु को। 'मच्छरदानी मच्छर रखने के काम नही आती।'[2] यहां 'दानी' का अर्थ-भेद स्पष्ट है। अतः समासो में शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, ऐसा कहा जा सकता है।

उल्टे समास फ़ारसी के समासो मे शब्दों का क्रम-विपर्यय मिलता है। **शाहे-आलम, शाह-जहां, रुस्तमेहिंद, निज़ामे हैदराबाद** आदि ऐसे ही उल्टे समास है। यहा आलम का शाह जैसे समास न होगे। अवधी भाषा में भी जायसी ने 'पखान-लीक' की अपेक्षा '**लीक-पखान**' (पंक्ति : 'लीक-पखान पुरुष कर बोला') और 'रवि-किरण' की बजाय '**किरन-रवि**' (पंक्ति : भा भिनसार किरन-रवि फूटी) जैसे समास लिखे है। प्रायः सम्बन्ध तत्पुरुष समासो में ही विपरीत क्रम देखा जाता है। 'मुकतागज' भी 'गजमुक्ता' के स्थान पर चलता है —

उदा० स्यारथरी मे खुरी पुंछ कंथरे
सिहथरी **मुकता गज** पावे[3] (कवि गग)

शाहेवक्त, शेरे कश्मीर, सदरे रियासत, सितारे हिंद आदि अनेक फारसी समास भी उल्टे समास ही है। कवि 'हरिऔध' (अर्थ : अयोध्या का सिंह) यह नाम भी ऐसा ही समास है।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३१०
२. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, परि० सामासिक शब्द, ६३
३. हिंदी भाषा, डॉ० भोलानाथ तिवारी, (खण्ड दो), २९४-२९५

यद्यपि हिंदी मे ऐसी प्रवृत्ति बहुत कम है तथापि कुछ कवियो ने उल्टे समास भी लिखे हैं । हम ने समासो का विवेचन करते हुए जहा-तहा उनके उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। अंग्रेजी में इन समासो को Inverted compounds कहते है ।

शब्द-लोप

गद्य मे कई बार विभक्तियों का लोप देखने मे आता है । सज्ञाए, विशेषण और क्रियाए भी लुप्त हो जाती है परन्तु उन की सख्या बहुत कम होती है । प्राय: विभक्तिया ही वाक्यो में कही कही अनुपस्थित सी जान पडती है । पद्य में तो तुक,लय,गति,मात्रा-पूर्ति आदि के अनुसार कभी कभी शब्द-लोपी वाक्यो का विन्यास आवश्यक भी हो जाया करता है ।

कवियो ने प्राय: कर्त्ता,कर्म,करण,सम्प्रदान,अपादान और अधिकरण कारको की विभक्तियों के लोप वाले वाक्य बनाए है । गद्य मे भी यह शब्द-लोप देखा जा सकता है ।

' माता पुत्री को चावल खिला रही है ' वाक्य में करण 'हाथ' स्वत: बुद्धिगम्य है अत: 'हाथो से' कहना व्यर्थ है ।

किन्तु 'मोहन अपने शिशु को **अपने हाथो** नहलाता-धुलाता है' - इस वाक्य में 'अपने हाथों' करण कारक का प्रयोग ठीक है । यहा भी 'मे' विभक्ति लुप्त है । उस के अतिरिक्त कोई और विभक्ति लग ही नही सकती अत: पाठक या श्रोता स्वयमेव उस को कल्पना द्वारा समझ लेगे । यहा 'अपने हाथो' इन दोनों शब्दों का प्रयोग किए बिना काम नहीं चल सकता ।

इसी प्रकार 'मेघ बरस रहे हैं' वाक्य मे 'जल' (कर्म) शब्द लुप्त होने पर भी अनुमानगम्य है । यह सज्ञा-लोप का उदाहरण है । मेघ जल ही बरसाता है, कुछ और नही । अत: यहा 'जल' लिखना भी व्यर्थ ही है ।

'मेघ बरसता है तो हरियाली ही हरियाली चारो ओर दिखाई देती हैं' । यहा अधिकरण 'पृथ्वी' आदि शब्दो की जरूरत नही, क्योकि पृथ्वी पर ही मेघ बरसता है । 'जब मेघ पृथ्वी पर बरसता है' ठीक न रहेगा । [१]

इसी तरह ' माली जल से पौधो को सीचता है' इस वाक्य मे 'जल से' कहना आवश्यक नहीं है । हा, यदि किसी विशेष स्थान का निर्देश करना हो तो बात दूसरी है यथा— ' माली पुराने कूए के जल से पौधों को सीचता है ' यहा 'जल से' लिखना ठीक है ।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३३८-३३९

आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा भी स्वीकार करते हैं कि— "कुछ अवस्थाएं ऐसी होती है जिनमे कुछ विभक्तियों का प्रयोग न करना ही अच्छा माना जाता है। हम कहते है— नौकर के हाथ पुस्तक भेज दो' और 'इतना परिश्रम करने पर भी हमारे हाथ कुछ न आया"[१]........"हम ऐसे अवसरो पर **'से'**, **'को'** और **'में'** का प्रयोग नही करते। कारण यही है कि व्यवहार मे आते आते ऐसे अवसरों की विभक्तियों का लोप हो गया है"।[२]

चूंकि हम ने विभक्तियो के अतिरिक्त संज्ञा, विशेषण, क्रिया आदि के लोप सम्बधी उदाहरण भी एकत्र किए है इसलिए 'शब्द-लोप' ही शीर्षक रखा है, 'विभक्ति-लोप' नही।

शब्दों का बहिष्कार

ज्यो ज्यो सभ्यता और सस्कृति विकसित होती जाती है त्यों त्यो भाषा से कुछ शब्द बहिष्कृत होते चले जाते है। उनके अप्रयोग का मुख्य कारण उनकी अनुपयोगिता ही होती है। यह और बात है कि कुछ समय बीत जाने पर हम यह न बता सकें कि क्यों कोई शब्द बहिष्कृत हो गया।

आचार्य पतञ्जलि ने शब्दो के अप्रयोग के दो कारण बताए है—

१. शब्द का जो अर्थ है यदि वह 'अर्थ' (पदार्थ) ही समाज से बहिष्कृत हो जाता है तो उस का बोधक शब्द भी लुप्त हो जाता है। उदाहरणत: प्राचीन यज्ञों के न होने से आजकल अग्निष्टोम, अश्वमेध, गोमेध, ज्योतिष्टोम, राजसूय, राष्ट्रभृत्, विश्वभृत्, सौत्रामणी आदि शब्द भाषा से लुप्त हो गए है।[3] कही कही साहित्य और व्याकरण के ग्रथो में अवश्य उन का उल्लेख मिलता है परन्तु बोलचाल में उनका प्रयोग नही होता।

२. 'अर्थ' (वस्तु) विद्यमान रहने पर भी नये शब्दों के प्रचलन में आ जाने के कारण प्राचीन शब्द लुप्त हो जाते हैं। वैदिक साहित्य के अधिकतर शब्द ऐसे ही अप्रचलित हो गए है। 'निघण्टु' मे अन्तरिक्ष, जल, नदी, मेघ, युद्ध, रात्रि, वाणी आदि शब्दो के अनेक पर्यायवाची शब्द ऐसे है जो सस्कृत भाषा मे उपेक्षित हो गए और प्रचलित न हो पाए। उदाहरणतया **'जल'** के लिए कबन्ध, कश, पिप्पल, पुरीष, बुस, विष ; **'नदी'** के अर्थ मे अवनि, उर्वी, एनि, रवा, धुनि, वधू ; **'पृथ्वी'** के लिए

१. हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १६०
२. हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १६१
३. महा० आ० १

क्षा, ग्मा, गातु:, ज्मा, रिप: ; **'मेघ'** के अर्थ में अद्रि, असुर, अहि, गोत्र, चरु, व्रज, वराह आदि पर्यायवाची शब्द संस्कृत मे उपलब्ध नही है[१] ।

इन के अतिरिक्त बहुत से शब्द केवल बोलचाल की भाषा मे ही वर्तमान रहे । समसामयिक साहित्य में बहुत कम शब्द प्रवेश पा सके । आजकल कोशो मे वे खोजने पर भी नहीं मिलेंगे। केवल वही शब्द सुरक्षित रह सके हैं जो साहित्य में बध कर रह गये है । श्री माईदयाल जैन शब्दो के सग्रह की उपयोगिता सिद्ध करते हुए लिखते है — 'कोशों में शब्दों का सग्रह होने के अतिरिक्त इन को सुरक्षित रखने का एक ढंग यह है कि लोक गीत, लोक कथाए, लोकोक्तिया, मुहावरे आदि सग्रह किए जाए । इस के अतिरिक्त हमारे लेखको को जन-जीवन सबधी साहित्य मे ग्रामीण तथा लोक-प्रचलित शब्दो को समझकर स्थान देना चाहिए । ये शब्द बड़े अर्थवान्, जॅचे-तुले और प्राणवान् होते है । इन से भाषा मे जान आयेगी'[२] ।

उदाहरणत: आधुनिक हिंदी काव्य मे 'आकाश' के लिए **'विष्णुपद'** सरीखा पर्याय प्रयुक्त हुआ अवश्य है[३] परन्तु फिर भी वह प्रसिद्ध नही है । काव्य मे ऐसे अप्रसिद्धार्थ शब्दो का प्रयोग होने से दुरूहता आ जाती है । 'आकाश को छूते है जहा ताड के पेड़' वाक्य मे 'आकाश' का पर्याय 'विष्णुपद' रखने से कवि का अभिप्रेत समझने में कठिनाई हो जाएगी ।

अनुपयोगी शब्दों के बहिष्कार की दृष्टि से भी आधुनिक हिंदी काव्य का अध्ययन किया जा सकता है ।

अन्य शब्द-विकार

'शब्द' अपने विकृत रूपो मे भी अर्थ-बोध कराने मे सक्षम होते है इसीलिए 'शब्द-विकारो' का भी महत्त्व है । आचार्य शबर स्वामी ने स्पष्ट रूप से घोषणा की है कि 'शब्द' का प्रयोग करते हुए 'धर्म' की चिंता नही की जाती ।[४]

जब शब्द विकृत रूपो में ही प्रचलित हो जाते है तब भाषा का अग मान कर उन्हें कोशो मे भी स्थान दे दिया जाता है । भाषा व्याकरण के पीछे नहीं चलती, व्याकरण भाषा के पीछे चलता है । फिर भी जहा तक सभव होता है 'व्याकरण'

१. अर्थविज्ञान और व्याकरण दर्शन, कपिलदेव द्विवेदी, १५१
२. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १७९
३. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, ३४८
४. मजूषा०, ८३

लौकिक प्रयोगो में धर्म और अधर्म की व्यवस्था करता है।[1] वह बताता है कि भाषा में साधु और शिष्टसम्मत शब्दों के प्रयोग से 'धर्म' और असाधु शब्दो के प्रयोग से 'अधर्म' समझा जाता है ।

शब्दो मे विकृति कई कारणो से आती है। कुछ कारण निम्नलिखित हैं—

१. रूपगत साम्य

शब्द-रूपो की समानता से भी कई बार कुछ विशेष शब्द गड्डमड्ड हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को अंगरेजी के Sand Blind विशेषण की सहायता से समझा जा सकता है आज इस शब्द के अर्थ है— धुंधली दृष्टि रखने वाला, लगभग अन्धा सा । मूलत: यह 'Sam-Blind' शब्द था जिस में 'सैम' शब्द 'सैमी' (Semi अर्थ — 'आधा') का ही पर्याय था। धीरे धीरे Sam और Sand इन दो शब्दों के मात्र रूपगत साम्य के कारण ही 'Sand Blind' यह नया शब्द-युग्म सामने आया। यहां तक कि डॉ० जॉनसन ने भी भ्रमवश इस की यह व्युत्पत्ति लिख दी — "एक नेत्रदोष जिस में नेत्रों के सामने रेत के कण उड़ते हुए दिखाई देते हैं"।

प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर ने भी उपर्युक्त अर्थ को ध्यान में रख कर 'मर्चेण्ट ऑफ वेनिस' नाटक में लिख दिया था Not sand-blind, high gravel-blind[2] अर्थात्...रेत के कण वाला नही, 'कंकड़ो-पत्थरों' वाला अन्धा ।

इस उदाहरण से शब्दों के रूपगत साम्य के कारण होने वाले विकारों का ज्ञान होता है ।

२. वर्ण-ध्वनिगत साम्य

वर्ण-ध्वनियो के कारण भी कुछ शब्दो की मिथ्या व्युत्पत्तियां बताई जाती हैं । डॉ० शिव नाथ ने इसके कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए है :—

(क) **रमाई कार्तिक** बंगाल के ग्रामीणो ने मूल अंग्रेज़ी शब्द Roman Catholic को ही 'रमाई कार्तिक' बना दिया है।

(ख) **लत्ताशाह** इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार की गई है —' पीर लतीफ़ शाह, उत्तर प्रदेश के मिर्ज़ापुर मे जिन की कब्र के आसपास पेड़ों में लत्ता बांध कर मन्नत मानी जाती है।

(ग) **हुक्कालेसर** इस की अशुद्ध व्युत्पत्ति यह है — ' ओंकारेश्वर महादेव, काशी में

१. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, कपिलदेव द्विवेदी, २१७
2. Words & Their Use, Stephen Ullmann, P. 74

जिन को हुक्का चढ़ाया जाता है[१]।

ऊपरलिखित उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'ध्वनि-साम्य' के भ्रम कुछ शब्दों की व्युत्पत्ति करते हुए व्यर्थ की खींचतान की गई है। कुछ अंगरेज समीक्ष ने शब्द 'कृष्ण' को अंगरेजी शब्द 'क्राइस्ट' (Christ) से ही व्युत्पन्न माना है जो नितान्त हास्यास्पद है। अतः 'ध्वनि-साम्य' के कारण भी शब्द विकृत हो जाते हैं।

३. शब्द-संक्षेप

मानव की सुख-सुख की सुविधा शब्दों के 'रूप-परिवर्तन' का सर्वप्रमुख का है। प्रत्येक व्यक्ति किसी शब्द का उच्चारण करते समय कम से कम कठिनाई का अनु करना चाहता है। इसी के परिणामस्वरूप इस्त्री, मास्साहब इत्यादि शब्दों और पी०, पी०एम० सरीखी उपाधियों तथा एफ०ए०,बी०ए०,एम०ए०,आदि डिग्रियों संक्षिप्त रूप सामने आते हैं जिन में 'शब्द-संक्षेप' की यही प्रवृत्ति विद्यमान है। गुप्तक के शिलालेखों में 'बहुलपक्ष दिवस' (अर्थ --कृष्णपक्ष का दिवस) और 'शुक्ल दिवस' इन शब्दों के प्रथमाक्षर ले कर 'बदि'-'सुदि' शब्द-संक्षेप (Abbreviation का निर्माण किया गया है[२]। भ्रम से लोग इन संक्षिप्त शब्द-विकारों को ही पूर्ण स्वतन्त्र शब्द मान लेते हैं। उदाहरणस्वरूप कबीर के जन्म के सम्बन्ध में प्रचलित पंक्ति में भी 'सुदि' शब्द को पृथक् शब्द समझ लिया जाता है --

'जेठ **सुदि** बरसाइत को पूरनमासी प्रगट भए'

४. शब्द-संयोग

हिंदी भाषा में सर्वनामों के साथ विभक्तियां और अव्यय जोड़ते समय भी शब्द में विकार आ जाता है। प्रायः विभक्तियों के 'ह्' का लोप देखने में आया है। यथा उ + ही = उसी, किस + ही = किसी। शब्दों का संयोग करने से पहले यहां सर्वनाम अन्त्य 'अ' (स् + अ) का लोप हो जाता है। इसी प्रकार 'तुम्हीं' सरीखे शब्द-संयोग है। यहां अन्त में अनुनासिकता आ गई है। 'तुम' सर्वनाम का अन्त्य 'अ' यहां भी लु है तुम + ही > तुम् + ही > तुम्हीं। यहां 'ह्' का लोप नहीं है। किन्तु हमीं सर्वनाम फिर उसी प्रक्रिया से बना है। इसे 'तुम्हीं' की भांति 'हम्हीं' रूप में नहीं लिख 'हम' में महाप्राण 'ह्' पहले ही विद्यमान है अतः दूसरा महाप्राण 'ह्' लुप्त हो जाता है इन शब्दों में जो अनुनासिकता आ गई है उस का कारण बहुत्व का बोध कराना ही है[३]

---

१. अर्थ-तत्त्व की भूमिका, डॉ०शिवनाथ, १६६-१६७

२. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, कपिलदेव द्विवेदी, १२७

३. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, २३,२४,२५

अत: सर्वनामों और विभक्तियों के संयोग से भी मूल शब्दों में विकार आ जाना स्वाभाविक है। हम ने ' अन्य शब्द-विकार ' शीर्षक के अंतर्गत सर्वनामों के इन परिवर्तित या विकृत शब्द-रूपों का भी उल्लेख किया है और कवियों की कविताओं से उदाहरण भी दिए हैं।

५. अज्ञान और भ्रम

ऋषि-महर्षि भी व्यावहारिक व्यवस्था मे वही त्रुटियां करते है जो बालक करते है[१]। प्राय: अज्ञान, अशुद्ध प्रयोग, अस्पष्ट श्रवण, आलस्य, दूषित स्मरण शक्ति, प्रमाद, मिथ्या प्रतीति आदि के कारण शब्दो के रूपों में विकार हो जाता है। इसी से शब्दो के क्षेत्र मे अर्थों के परिवर्तन और विकास देखने मे आते है। चूंकि शब्द ' प्रयत्नसाध्य ' होते है इसीलिए उनके प्रयोगो मे त्रुटियों का होना स्वाभाविक ही है[२]।

आजकल लोग **'वैमनस्यता'** और **'सारल्यता'** जैसे शब्द लिख जाते है जबकि एक भाववाचक प्रत्यय के बाद पुन: भाववाचक प्रत्यय नही जुड़ता[३]। इसी प्रकार महत्ता, सत्ता जैसे शब्द-रूप ही शुद्ध है और **महता, सता** निश्चित रूप से शब्द-विकार है। यहा तकार का द्वित्व किए बिना काम नही चल सकता[४]। काव्य मे भी जहा तक हो सके ठीक शब्द-रूप ही लिखने चाहिए। 'महत्त्व', 'सत्त्व' ही शुद्ध रूप है, 'महत्व', 'सत्व' नही।

संस्कृत मे 'परिवर्तन', 'परिवर्द्धन', 'वर्त्तमान', 'वर्द्धमान' शब्द-रूप व्याकरण-सम्मत है। हिंदी गद्य और पद्य मे सुविधा की दृष्टि से एक 'त' और एक 'ध' लिख कर भी काम चलाया जा सकता है, चलाया जा रहा है। वस्तुत: " एक 'त' या 'ध' का प्रयोग संस्कृत व्याकरण से भी शुद्ध है और हिंदी मे भी लाघव की दृष्टि से ऐसा किया जा सकता है "[५]।

इसी तरह अज्ञान से लोग 'अज्ञानी' के अर्थ मे 'अभिज्ञ' और 'शुश्रूषा' के अर्थ मे 'सुश्रूषा' भी लिखते चले जाते है। काव्य मे ऐसा लिखना क्षम्य हो जाता है विशेषकर जहा तुक, लय और मात्रा-पूर्ति की दृष्टि से ऐसा किया जाए।

शब्द-विकार के उपर्युक्त कारणो के अतिरिक्त अन्य कारण भी हो सकते है। हम ने सभी दृष्टियों से शब्दो के उन विकारो का अध्ययन ' अन्य शब्द-विकार ' शीर्षक के

---

१. वाक्य० २.४१ का० ३, १२४, पुण्यराज
२. मीमांसा० १, ३, २५
३. अच्छी हिंदी का नमूना, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ९५
४. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा, १०६
५. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, देवेन्द्रनाथ शर्मा १०६

अन्तर्गत किया है जोकि संज्ञा, विशेषण, और क्रिया का अध्ययन करते समय पीछे छूट गए थे यथा — सर्वनाम, अव्यय, विभक्ति, क्रियाविशेषण इत्यादि। हम 'अनुस्वार'(बिंदु) और 'अनुनासिक' (चन्द्रबिंदु) को पृथक् पृथक् ध्वनिग्राम (Phoneme) मानते हैं किन्तु काव्य में हम ने इन की भूलों को क्षम्य समझ कर छोड़ दिया है। इसी प्रकार शिरोरेखा का भी भाषा में अपना महत्त्व होता है और 'जलपान' तथा 'जल-पान'[1] मे भी कुछ विद्वान् शिरोरेखा की दृष्टि से अर्थ-भेद करते है। फिर भी हम पद्य मे इस बन्धन को स्वीकार नही करते। कविगण भी इसे अपनी निरकुशता मे बाधक समझते आए है।

नव शब्द

संस्कृति और सभ्यता के विकास मे जहां अनुपयोगी शब्दो का बहिष्कार होता है, वहा उपयोगी शब्दो का आविष्कार भी होता रहता है। अशोक के शिलालेखों में नये भावो का बोध कराने के लिए कुछ शब्द आए है जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं —

नगर व्यवहारक, परिषद्, भुक्ति, मंत्रिपरिषद्, महामात्र, युक्त, विषय इत्यादि। आधुनिक भाषाशास्त्रियो ने इन के ये आधुनिक समानार्थी शब्द प्रस्तुत किए है —

जिले का न्यायाधीश, वर्तमान धारासभा, प्रान्त, वर्तमान मत्रिमडल, उच्च राजकीय अधिकारी, जिले का सर्वोच्च अधिकारी, और जिला।

हो सकता है अशोक के काल मे उपर्युक्त अर्थों मे ये शब्द न चलते हो। इसी प्रकार गुप्तकाल के शिलालेखो में भी कुछ नवीन शब्द मिलते है। कुछ उदाहरण ये हैं—

अक्षपटलाधिकृत (रिकार्ड कीपर), आयुक्त (वर्तमान मजिस्ट्रेट), उपरिक (वर्तमान गवर्नर), गौल्मिक (जगल विभाग का अध्यक्ष), दिविर या लेखक (क्लर्क, लेखक), दीनार (सुवर्णमुद्रा), बलाधिकृत (सेनाध्यक्ष), भोगिक (अश्वशालाध्यक्ष), महानौ (समुद्री जहाज), महाप्रतीहार (द्वारपालों का मुखिया), महाबलाधिकृत (फील्ड मार्शल), विषयपति (वर्तमान जिलाधीश), शौल्किक (चूगी विभाग का अध्यक्ष), सान्धिविग्रहिक (सन्धि या विग्रह विभाग का मन्त्री), स्थपति सम्राट् (स्थपति विभाग का अध्यक्ष), हिरण्य सामुदायिक (राजकीय कोष-विभाग का अध्यक्ष)[2]

ऊपर कोष्ठकों में आधुनिक समानक हिंदी शब्द दिए गए हैं ये सब नये भावों को स्पष्ट करने के लिए घड़े गए नये शब्द हैं। कवि भाषा का निर्माता होता है। चूंकि वह काव्य मे नव शब्द-प्रयोगों का आश्रय ग्रहण करता है इसीलिए उसे 'भाषा का

---

१. हिंदी भाषा : अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', ५२,५३,५४

२. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, कपिलदेव द्विवेदी, १५०

प्रचारक '[1] भी कहा गया है।

शब्द-सामर्थ्य बढ़ाने की उपयोगिता

ज्यों ज्यों मानव का सांस्कृतिक विकास होता जाता है त्यों त्यों उसके व्यवहारोपयोगी शब्दों की संख्या भी बढती जाती है । इसीलिए कुछ विद्वान् 'शब्द' को भौतिक तत्व से सम्बद्ध मानते है [2] ।

सच तो यह है कि शब्द-शक्ति जितनी ही अधिक होगी, उतनी ही अधिक क्षमता विचारों के संप्रेषण मे भी आएगी। मिस्टर स्टीफ़ेसन स्मिथ रूपक बांधते हुए कहते है कि शब्द-सामर्थ्य बढाना भी एक खेल है जिस में शब्द ही ' काउँटर ' (मेजें— जिन पर सिक्के गिने जाते है) होते है। खिलाडी अपने कुल अको को बढ़ाने के लिए खेल जारी रखते है । यह खेल केवल यह दिखाने के लिए होता है कि हम ने कितनी बाज़ी जीत ली है और हमारी भावी सभावनाए क्या हैं ? मि० स्मिथ के मतानुसार इस खेल में ' सामग्री-परीक्षण '(Stock-taking) के लिए यह आवश्यक है कि हम 'गणनासूचक तख्ती (Score-board) पर नज़रे जमा कर नये शब्द एकत्र करने के साथ साथ पूर्व-सचित शब्द-सम्पत्ति की भी जाँच-पड़ताल करते रहें । [3]

इस प्रकार शब्दों का खेल भी बड़ी व्यवस्थापूर्वक खेला जा सकता है।

कवियों द्वारा प्रयुक्त नव शब्द

पहले भी बताया जा चुका है कि भाषा का इतिहास एक तार्किक की अपेक्षा एक कवि के दृष्टिबिंदु से लिखा जाता है। यह घोषणा पाश्चात्य विद्वान् ओवेन बारफ़ील्ड ने की है —

'A history of language written not from the logician's but from the poet's point of view.'[4]

प्राय: कवि शब्दो के पर्यायो की सहायता से नये नये शब्द निर्मित कर लेते है । इन्द्रधनुष, कामधेनु, धनुषयज्ञ, यदुराज, वाग्वीर, सुग्रीव, आदि के लिए क्रमश: शक्र-चाप

---

१. काव्य में अप्रस्तुत योजना, प० रामदहिन मिश्र, ४१

२. साहित्य की मान्यताएं, भगवतीचरण वर्मा, लेख'साहित्य मे शब्द का स्थान', १६

3. How to double your vocabulary,S. Stephenson Smith, Ch. 1.'Word Play', P.287

4. Poetic Diction: A Study In Meaning, Owen Barfield, -- Ch. 5, 'Language & Poetry', P. 93

मरगैया चाप-मख, जड़ैया, गिरा-भट, मुकण्ठ ¹ ऐसे ही नव शब्द हैं । आगे चल कर कोशो में इन सब को स्थान दिया ही जाए, यह आवश्यक नही है । कोशो में केवल वही शब्द आएंगे जो साहित्य, काव्य इत्यादि का अग बन चुके होगे ।

अनुपयोगी शब्दों का वहिष्कार

श्री माईदयाल जैन लिखते हैं — " नये नये आविष्कार, नयी नयी खोजे, नये नये फ़ैशन, तथा दूसरी नयी आवश्यकताए भाषा मे नये नये शब्दो को जन्म देती रहती हैं । ठीक ऐसे ही सामाजिक रहन सहन, धार्मिक विचार तथा क्रियाकाण्ड, राजनीतिक क्रातियां, पुराने आर्थिक ढाँचे तथा अर्थव्यवस्था, भोग-उपभोग के पुराने साधनो मे हेर-फेर होने से पुराने शब्द काम देने में अशक्त होने से अनुपयोगी हो कर चलन-बाहर या गैर-टकसाली हो गए है "²

अंगरेजी समीक्षक मेरियो पेई लिखते है — " तुम प्राचीन ध्वनियों, शब्दो और अर्थों के सम्बन्ध मे अपनी चयन-शक्ति का उपयोग कर सकते हो । इन मे से कितने ही शब्द भाषा से निकाल दिए जाते है जोकि पहले कभी प्रचलन मे रह चुके होते है । कारण यही है कि वक्ता उनका अधिक समय तक प्रयोग नही करना चाहते ।³ "

प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपीयर ने 'नीद' के लिए यह वाक्याश प्रयुक्त किया था -- 'Balm of hurt minds'— अर्थात् 'चोट खाए हुए दिलो का बाम' ।⁴

वस्तुत: यहां रूपक की सहायता से एक नये वाक्य का का निर्माण किया गया है । ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के सम्पादको ने शेक्सपीयर द्वारा प्रयुक्त ऐसे अनेक शब्द गिनाए है जिन का उस ने प्रचलन से भिन्न अर्थो मे प्रयोग किया था । कुछ उदाहरण देखे ——

Adore, create, function, inherit, magic,nerve, religion, voluntary etc. ⁵

अत: हम कह सकते है कि नये शब्दो के माध्यम से भी नये भावों का बोध कराया जाता है । इस अर्थ-निर्माण के मूल में 'रूपक अलंकार' ही वर्तमान रहता है । यह 'रूपक तत्व' ही है जो हमे 'अज्ञात अर्थों' को जानने में सहायता करता है । चित्रकारो

---

१. शब्द और अर्थ, रामचन्द्र वर्म्मा, २३
२. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १७८-१७९
3. All About Language, Mario Pei, P. 14
4, Poetic Diction : A Study In Meaning, Owen Barfield, P.113
5. Poetic Diction : A Study In Meaning, Owen Barfield, P.135

द्वारा पहले ' प्वाइंट ऑफ़ व्यू ' (दृष्टिविंदु) शब्द का प्रयोग किया जाता था। अंगरेज़ी कवि कॉलरिज ने ही कदाचित् सर्वप्रथम इस शब्द point of view को मनोवैज्ञानिक संदर्भों में प्रयुक्त किया था। आज यह शब्द सर्वमान्य हो चुका है किन्तु यह ' रूपक ' की प्रारम्भिक अवस्थाओं में से ही गुज़र कर आया है। कॉलरिज या किसी अन्य व्यक्ति ने कुछ इस प्रकार सोचा या कहा होगा :— " मन के लिए 'एक्स' ठीक वही है जोकि एक ग्राम्य प्राकृतिक दृश्य के दर्शक के लिए ' दृष्टि का लक्ष्य ' है "[1]।

यहां प्रयोक्ता ने प्रचलित शब्द में ही नये अर्थों का अन्तर्भाव कर दिया है।

नव शब्द-संग्रह के साधन

अंगरेज़ी समीक्षक स्टीफ़न उलमान लिखते हैं कि शब्द-संग्रह बढ़ाने के लिए वक्ता चार प्रकार की पद्धतियो का आश्रय ग्रहण करता है जो इस प्रकार हैं —

१. ध्वन्यनुकरण ! — अर्थात् किसी ध्वनि के अनुकरण पर नये शब्दों का निर्माण किया जा सकता है।

२. सामान्य प्रक्रिया द्वारा शब्द-रचना !

३. किसी दूसरी भाषा से शब्द-ग्रहण !

४. प्रचलित शब्दों में ही नये अर्थों का अन्तर्भाव !

१. ध्वन्यनुकरण

शब्द-रचना की इस पद्धति का हम ने आगे ' ध्वन्यात्मक शब्द ' शीर्षक के अन्तर्गत विस्तारपूर्वक विवेचन किया है। अत: इस सम्बन्ध में यहां कुछ कहना मात्र पुनरावृत्ति ही होगा।

२. सामान्य प्रक्रिया द्वारा शब्द-रचना

शब्द-रचना की दो शास्त्रीय पद्धतियां ये हैं —

(क) शब्द-संयोग (Composition)

(ख) उपसर्ग और प्रत्यय लगा कर शब्द-निर्माण करना (Derivation)

दूसरी दो कम शास्त्रीय पद्धतियां ये हैं :—

(ग) शब्द-संकरण (Blending)

1· Poetic Diction : A Study In Meaning, Owen Barfield, P.112—X is to the mind what 'point of view' is to an observer of Landscape.

(घ) व्युत्पत्ति (Etymology)

ये दोनों प्रणालियां अधिक प्रचलित और व्यवहारोपयोगी हैं।

अब हम शब्द-रचना के इन साधनो का बारी बारी से अध्ययन करेंगे —

(क) शब्द-संयोग (Composition)

यह नितान्त संभव है कि जो शब्द आज प्रचलित हो गए है वे ही आगे चल कर एक 'स्थिर' इकाई मान लिए जाएं। उदाहरणत: आज भी कुछ शब्द 'स्थिर इकाई' ही है। कौन जानता है कि अंगरेजी शब्द Lady का मूल ' Loaf-ward ' (अर्थ : रोटी रखने वाली) या 'Loaf-Dough' (Loaf-Kneader, आटा गूँधने वाली) शब्द-युग्म था।[1] शब्दो का यही मिश्रण 'शब्द-सयोग' (Compound) कहलाता है। भाषा के विकास में इन यौगिक शब्दो का अनुसंधान बडा उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

(ख) उपसर्ग-प्रत्यय आदि लगा कर शब्द-निर्माण करना (Derivation)

प्रत्येक भाषा मे उपसर्ग प्रत्यय, विभक्ति आदि को शब्दो या धातुओं में लगा कर नये शब्द बनाए जाते है। इस प्रकार सज्ञाओ और क्रियाओ से पुन: सज्ञाए और क्रियाए निर्मित की जाती है। बहुत से उपसर्ग और प्रत्यय तो पहले स्वतन्त्र शब्द ही थे। आज भी हिंदी में 'प्रति' सरीखे कुछ उपसर्गों का सज्ञा के रूप में प्रयोग होता है यथा— ' इस पुस्तक की २२०० प्रतिया छपवाई है '। यहा ' प्रतियां ' शब्द सज्ञा ' प्रति ' का ही बहुवचन है, उपसर्ग ' प्रति ' का नही। सख्यातीत शब्दो का अग होने के कारण अधिकतर उपसर्ग अपना स्वतन्त्र अर्थ खो बैठते है बाद मे उन्ही की सहायता से और नये शब्द बनाए जाते है।

(ग) शब्द-संकरण (Blending)

जब दो मिलते जुलते शब्द हमारी स्मृति मे गड्डमड्ड हो जाते है तो नये शब्दों का जन्म होता है। ऐसे शब्द-मिश्रण अगरेजी मे Portmanteau (मूल अर्थ : वस्त्र रखने का चमड़े का बैग) भी कहलाते हैं। कदाचित् इसलिए कि प्राय: दो शब्द इस प्रकार एक दूसरे में ठूँसे जाते है जैसे चमड़े के बैग मे कागज और कपड़े। कुछ अंगरेजी शब्दो का संकरण देखिये :—

Breakfast + Lunch = Brunch
Flash + Blush = Flush

1. Words & Their Use, Stephen Ullmann, P. 58

Motor + Hotel = Motel
Tea + Dinner = Tinner

अमेरिका और ऐसे ही कुछ उन्नत देशों में पिकनिक पर जाने वाले व्यक्तियों ने उन स्थानों की वृद्धि में सहायता की जहां मार्ग में अधिक चलने से बिगड़ी हुई मोटरों की मरम्मत की जाती थी और थके मांदे व्यक्तियों के भोजन आदि की भी व्यवस्था होती थी[१] आज अमेरिका मे मोटलों की सख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है : इसी प्रकार ' चाय और साँझ का भोजन' एक साथ किए जाने पर ' टिनर ' कहला सकता है [२] ।

पशुओं मे विभिन्न जातियों के संकरण से उत्पन्न पशुओं के नाम भी इसी प्रकार घड़े जा सकते हैं। कुछ उदाहरण देखे : —

Lion + Tiger = Liger
Tiger + Lion = Tion

नर शेर और मादा चीता — शेर + चीता = शीता
नर चीता और मादा शेरनी — चीता + शेर = चेर

आज वहुत कम लोग जानते हैं कि 'फुलेल' शब्द 'फूल' और 'तेल' के मिश्रण से बना है। बिहार में प्रचलित ' बिसनोटी ' (बढिया, चौडी, पतली तथा नमकीन पूरी) वस्तुत: बेसन और रोटी शब्दो के मिश्रण का परिणाम है। ' सिकंजबीन ' (या सिकंजी) नीबू के शर्बत को कहते है । ' सिरका + अंजबीन ' इस प्रकार इसकी व्युत्पत्ति सिद्ध की गई है। Electric Heater के लिए हिंदी में ' बिजलीठी ' शब्द (बिजली + अंगीठी) भी इसी प्रकार घडा गया है [३] । श्री माईदयाल जैन इन सब शब्दो को ' मिलवाँ या विमिश्र ' शब्द कहते है और चाहते है कि जहा तक संभव हो सके तद्भव शब्दों या लोक भाषा के शब्दों की सहायता से नये शब्द बनाए जाएं।

(घ) व्युत्पत्ति (Etymology)

संस्कृत में धातुओ से ही प्राय: शब्दो की व्युत्पत्ति सिद्ध की जाती है। कई बार अशुद्ध व्युत्पत्तिया भी प्रचलित हो जाती है। यद्यपि कालान्तर में उनका संशोधन भी कर दिया जाता है तथापि कुछ तो भाषा में वैसे ही चलती रहती हैं [४] । प्राय: धातुओं की

---

१. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन,, परि० 'मिलवां' या विमिश्र शब्द', १९०

२. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १८९

३. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १९१,१९२,१९३

4. Words & their Use, Stephen Ullmann, P. 60

सहायता से ही नये शब्दों का निर्माण किया जाता रहा है अतः व्युत्पत्ति का विशेष महत्त्व है।

शब्द-संक्षेप(Clipped Words)

शब्द-रचना की उपर्युक्त प्रमुख पद्धतियों के अतिरिक्त कुछ अन्य गौण पद्धतियां भी हैं। 'शब्द-संक्षेप' (या कटवाँ शब्द) ऐसी ही एक प्रणाली है।

मानव-जीवन की तीव्र गति तथा अभिव्यजना के घरेलू और देशज प्रकारों ने 'शब्द-संक्षेपों' में वृद्धि की है। व्यक्ति, स्थल, पदार्थ आदि के नामो को जिन संक्षिप्त रूपों में उच्चरित किया जाता है उन से शब्दों की 'सक्षेप-शैली' का पता चलता है। मोटरकार के लिए कार, रेलगाड़ी के लिए रेल आदि सक्षिप्त शब्द है। ऐसे शब्द बनाने के मूल में मानव के प्रयत्न-लाघव की प्रवृत्ति ही काम करती है। ऑटो यास्पर्सन लिखते हैं — "आधुनिक सभी भाषाओं का झुकाव छोटे से छोटे शब्दो की तरफ है।"[1]

आजकल ओमनीबस के लिए बस बाइस्कल के लिए बाईक, माइक्रोफ़ोन के लिए माइक सरीखे सक्षिप्त शब्द ग्रहण कर लिए गए है। अंग्रेजी मे North, East, West, South शब्दों के प्रथमाक्षर जोड कर (इन चारो दिशाओ में फैल जाने वाला : इस अर्थ में) News शब्द वना है। हिंदी में सुदि और बदि शब्द क्रमशः शुक्ल पक्ष दिवस और बहुलपक्ष दिवस शब्दो के प्रथमाक्षरों के जोड़ पर बने है, यह पहले बताया जा चुका है। अपने हस्ताक्षर भी लोग 'प्रथमाक्षरों' (Initials) के रूप में करते हैं। उपर्युक्त सभी शब्द नये शब्दो का निर्माण नही करते अपितु प्रचलित शब्दों के प्रतिरूपों में ही वृद्धि करते है।

३. किसी दूसरी भाषा से शब्द-ग्रहण (Borrowing)

अंग्रेजी मे इसे 'उधार लेना' कहा गया है। मिस्टर स्टीफ़न उलमान लिखते है "बड़े बड़े सग्रहालय हैं जिन से वक्ता शब्द उधार ले सकता है उदाहरणतया विदेशी भाषाएं, प्रादेशिक भाषाएं और व्यावसायिक या औद्योगिक पारिभाषिक शब्द।"[2]

भाषा के इस विनिमय में कभी कभी 'निर्यात शब्दों का पुनः आयात' (Re-importation of Exports) देखने में आता है। उदाहरणतः भारत से 'बुद्ध' शब्द का ईरान को निर्यात हुआ। वहां जा कर यह संस्कृत तत्सम शब्द 'बुत' बन गया

1. Language, Its Nature, Development & Origin, P. 328
2. Words & Their use, Stephen Ullmann P. 61

भारत ने पुनः जब 'बुत' शब्द का आयात किया तो 'मूर्ति' के ही अर्थ में इसे ग्रहण किया, गौतम बुद्ध के अर्थ में नहीं। 'हमारा अपना ही शब्द केवल बाहर की हवा लगने से उसके मूल देश में विदेशी बन गया'।[१]

इसी प्रकार फ्रांस से Desport और Etiquette शब्द जब इंग्लैंड गये तो Sport और Ticket बन कर लौटे। अर्थ भी बदल चुके थे।

इसी प्रकार जब कोई शब्द ज्ञान के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में चला जाता है तो भी उसके अर्थ बदल जाते है। चित्रकला का 'दृष्टिबिंदु' (Point Of View) शब्द मनोविज्ञान और साहित्य में जा कर 'विचार-पद्धति' अर्थ व्यक्त करने लगा।[2] इसी प्रकार दर्शन के क्षेत्र का 'अस्तित्ववाद' शब्द है। स्थापत्यकला और चित्रकला में इटली भाषा का 'मैनरिज्म' शब्द कहानियों में आ कर एक 'शिल्पगत रूढ़ि' बन गया है[3]। इसी तरह के सैकड़ो उदाहरण देखे जा सकते हैं।

४. प्रचलित शब्दों में ही नये अर्थों का अन्तर्भाव (Throwbacks)

श्री माईदयाल जैन ने ऐसे शब्दो को 'प्राचीनवर्ती शब्द' कहा है। उन्होंने लिखा है :— "इस में अत्यन्त पुराने शब्दों को नये अर्थों या भावों को व्यक्त करने के लिए काम मे लाया जाता है।[४]

इस सम्बन्ध में मनु ने लिखा है कि आरम्भ में वेदों से शब्द ग्रहण कर के उन्हें नये अर्थों में प्रयुक्त किया गया[५]। उदाहरणस्वरूप नये वाद्य-यन्त्रों के लिए पूर्व-प्रचलित तूर्य, परिवादक, पार्णविक, मार्दङ्गिक और वीणा जैसे शब्द अपना लिए गए। इसी प्रकार सेना के विभिन्न भागों के लिए अश्वारोही, पदाति, महारथी और रथिक — ये प्राचीन शब्द ग्रहण कर लिए गए।[६]

वस्तुतः प्राचीनवर्ती शब्दों का सम्बन्ध 'अर्थ-परिवर्तन' से और उस में भी विशेषतः 'अर्थ-विस्तार' से है। कुशल, गवेषणा, तेल, निपुण, प्रवीण और स्याही जैसे

---

१. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १४४

2. Poetic Diction : A Study In Meaning, Owen Barfield, P. 112

3. Encyclopaedia Britannica, Word 'Mannerism', P. 798

(ख) आज की हिंदी कहानी, प्रगति और प्रयोग, डॉ० इन्द्रनाथ मदान, हिंदी विभाग, पंजाब की वार्षिक लेखक गोष्ठी १९६१-१९६२ में पढ़ा गया निबन्ध, पृष्ठ ३८

४. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, परि० 'शब्द-रचना के विविध प्रकार', २००

५. मनु०, अ० १

६. काशिका, अष्टा० २, ४, २

कितने ही शब्द अब नये अर्थों को अपने में अन्तर्भूत कर चुके हैं।

अंगरेज़ी भाषा में Arrive का मूल अर्थ 'सागर-तट की बंदरगाह पर पहुंचना' था अब इस का सामान्य अर्थ 'पहुंचना' विकसित हो गया है।

लेटिन शब्द 'Stiletto' का मूल अर्थ था 'लिखने के लिए एक नुकीला उपकरण या साधन'। इसी से आगे चल कर अगरेज़ी का Style शब्द बना। यहा लिखने के एक साधन ने अपना नाम अपने द्वारा सम्पन्न होने वाली 'कार्य-विधि' को सौंप दिया है।[1]

चाभी कभी केवल ताले की ही समझी जाती थी। आज हम 'घडी को चाभी दे दो' भी कहते है। इसी प्रकार हम ग्रामोफोन के रेकार्ड के लिए प्राचीन शब्द 'तवा' का प्रयोग भी कर दिया करते हैं। आज 'पखे' मोरपखो, खजूर, ताड़ आदि के पत्तो और बाँसों से ही नही बनते। बिजली के पंखे भी चल पड़े है। कागज, कार्ड, लैटर, फ़ार्म, समाचारपत्र सभी को हम प्राचीन शब्द 'पत्र' द्वारा अभिहित करते है। अपने मूल 'पत्ता' अर्थ में भी 'पत्र' शब्द अलग से चल रहा है। इसके साथ ही इस शब्द में नये अर्थ भी समाविष्ट हो गए है।

ध्वन्यात्मक शब्द

जैमिनि तथा शबर स्वामी ने 'मीमांसा दर्शन' मे नामो के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किए है। उनके मतानुसार पदार्थों के नाम ध्वनियो के अनुकरण पर भी रखे जाते हैं यथा — 'बबरः प्रावाहाणिरकामयत'। बबर ध्वनि के कारण 'वायु' को 'बबर' कहा गया है[२]।

१७वी शताब्दी के डच भौतिकीशास्त्री वान हैल्मॉट (Van Helmont) ने अपनी डायरी में 'गैस' (Gas) शब्द की प्रेरणा अगरेज़ी शब्द Chaos (अर्थ: अराजकता, अव्यवस्था इत्यादि) से बताई है। जब उन्होंने 'गैस' शब्द का निर्माण किया था तब Chaos शब्द उनकी स्मृति मे उभरा था, यह उनकी स्वीकारोक्ति है। इसी प्रकार Kodak (कैमरे का एक प्रकार विशेष) शब्द की व्युत्पत्ति चाहे कुछ भी हो इसके प्रचार का मुख्य कारण दो 'k' ध्वनियों का मशीन के खटके (Click) को मूर्तिमन्त कर देना है।[३]

---

1. Words & their Use, Stephen Ullmann, P. 70, 71
२. मीमांसा दर्शन, पूर्वमीमांसा, १. १. ३० से ३१ तक
3. Words And Their Use, Stephen Ullmann, P. 57

श्री माईदयाल जैन ने पशु-पक्षियों की ध्वनियां प्रस्तुत की हैं। उदाहरण ये हैं :
१. उल्लू का हूकना २. ऊंट का का बगबगाना (मस्ती में), बलबलाना — (सामान्य रूप से) ३. कबूतर का गुटरगूं ४. कौवे की कायँ कायँ ५. कुत्ते का भौंकना ६. कोयल का कूकना ७. गधे का हेंचू-हेंचू करना या रींगना ८. गाय का राँभना ९. गिलहरी का चटचटाना १०. घोड़े का हिनहिनाना [1] इत्यादि

ध्वनिबोधक क्रियाएं

ध्वन्यात्मक शब्दों में ध्वनिबोधक क्रियाओं की ही प्रचुरता है। प्रायः ध्वनियां दो प्रकार की है :— १. श्राव्य ध्वनियां २. अश्राव्य ध्वनियां

अश्राव्य ध्वनिया केवल कुछ इन्द्रियों द्वारा ही ग्राह्य होती हैं। कर्णेन्द्रिय की इस में उपेक्षा ही रहती है। इन्हें '**मस्तिष्कीय कल्पित ध्वनियां**' भी कहा जाता है यथा पानी की 'झिलमिल झिलमिल'। इसे सुना नही जा सकता। यह केवल चाक्षुष अनुभूति का विषय है। इस प्रकार की ध्वनियो के तीन भेद किए गए हैं :—

१. वे क्रियाएं जिन में ध्वनियों को दोहराया जाए यथा कड़कड़ाना, खिलखिलाना, चहचहाना, टरटराना, टिमटिमाना, थरथराना, फड़फड़ाना इत्यादि।

२. वे क्रियाएं जिन में पहिली ध्वनि दूसरी ध्वनि से कुछ भिन्न हो। उदाहरण ये हैं कसमसाना, कुलबुलाना, खदबदाना, खलबलाना, चुलबुलाना, जगमगाना, झिलमिलाना, लड़खड़ाना, हड़बड़ाना।

३. वे क्रियाए जिन में ध्वनि बिल्कुल न दोहराई जाए यथा 'छीकना'। यहां किसी भी शब्द की आवृत्ति नही हुई है। ऐसी क्रियाओं में ना, आना, कना, सना, कारना आदि प्रत्यय लगते हैं। उदाहरण द्रष्टव्य है —

'ना' प्रत्यय कटना, कतरना, कुतरना, घिसना, चरना, पिसना, मथना।

'आना' प्रत्यय इस प्रत्यय के पूर्व प्रायः सयुक्त अक्षर आते हैं यथा — गुर्राना, चर्राना, चिल्लाना, झल्लाना, टर्राना, थर्राना, इत्यादि।

'कना प्रत्यय' प्रायः 'कना' यहां 'करना' का ही संक्षिप्त रूप होता है। कुछ उदाहरण ये है :— कसकना, कूकना, खिसकना, चटकना, चमकना, चिपकना, छौंकना, टपकना, बुरकना, मसकना, महकना, इत्यादि।

'सना प्रत्यय' खाँसना, खौंसना, चाँसना, ठूँसना [2]।

---

१. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १६९

२. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, २७३-२७५

' कारना प्रत्यय ' झटकारना, दुतकारना, धिक्कारना, पुचकारना, फटकारना ।

जैन जी ने उपर्युक्त सभी क्रियाओं को ध्वनिबोधक क्रियाओं के अन्तर्गत ग्रहण किया है । हमारे विचार में ऐसा करने से ' ध्वन्यात्मकता ' में अतिव्याप्ति का दोष आ जाएगा । इस शोध प्रबन्ध में कवियों द्वारा प्रयुक्त ध्वन्यात्मक शब्दों का अध्ययन करते समय हम ने मुख्यत: श्रोतव्य (Audible) ध्वनियो का ही संग्रह किया है । इनके अतिरिक्त चमचम, झिलमिल, थरथर, फनफन, लपलप, आदि ध्वनियां भी एकत्र की हैं जिन का सम्बन्ध कर्णेन्द्रिय के अतिरिक्त अन्य इन्द्रियो से है ।

चूंकि ध्वन्यात्मक शब्दों का भी व्याकरण में अध्ययन किया जाता है इसीलिए हम ने उन्हें अपने ग्रंथ में स्थान दिया है ।

इस परिच्छेद के साथ ' सिद्धांत-खण्ड ' समाप्त होता है । अब हम आधुनिक काल के बीस प्रमुख हिंदी कवियों के शब्द-प्रयोगो का क्रमश: ' व्यवहार-खण्ड ' में अध्ययन प्रस्तुत करेंगे । इन कवियों को जन्म-वर्ष के अनुसार स्थान दिया गया है । कुछेक अपवादों को छोड़ कर सन् १९६० तक प्रकाशित प्राय: सभी काव्य-संग्रहों के संदर्भ देने की चेष्टा की गई है । जो संग्रह अनुपलब्ध हैं या पूर्ववर्ती संग्रहो की विशेष कविताओं का संकलन मात्र हैं उन्हें प्राय: छोड़ दिया गया है इसी प्रकार जिस संग्रह में कोई भी शब्द संदर्भ में देने योग्य नहीं मिला है उस संग्रह का नाम भी नही दिया जा सका है ।

' व्यवहार-खण्ड ' का अनुशीलन करते समय ये सब बातें ध्यान में रखनी चाहिएं ।

व्यवहार खण्ड

मैथिलीशरण गुप्त

संज्ञा

गुप्त जी की कविताओं में उल्लेखनीय संज्ञाएं इस प्रकार हैं : —

अहोरा [1], आँस [2], आँसें [3], आरकाटी [4], ओसरे [5], कांडारी [6], गराज [7], गुनगाहक [8], घमछैया, [9], घूम [10], चढ़ौती [11], छीज [12], जगौनी [13], जुझौती [14],

---

१, विष्णुप्रिया, ८७ — ' लाते हैं जैसे **अहोरा** वैसा ही ले जाते है '

२. शक्ति, २५ — ' वैसे ही अमरो ने खींची भीतर उसकी **आँस** '

३. किसान, फिजी ४४ — ' बेट की **आँसें** '

४. (क) किसान, देशत्याग, ३७ — ' पर लगा पीछे मुझे उस **आरकाटी** का पता '

(ख) किसान, फिजी, ४१ — ' अधम **आरकाटी** कहता था '

५. वक-सहार, ३८ — ' उस ने लिये वहु **ओसरे** '

६. अजलि और अर्घ्य, ३८ — ' करोडो की नौका का एक कुशल **कांडारी** तू '

७. शक्ति, १४ — ' गह्वर गूंज **गराज** '

८. सिद्धराज. सर्ग ३, ५४ — ' जीत लिया उस **गुनगाहक** के मन को '

९. झकार, भूलभुलैया, १३९ — ' देख घनी **घमछैयां** '

१०. (क) साकेत, सर्ग १०, ३७३ — ' इस जी में बस एक **घूम** थी '

(ख) मानक हिंदी कोश दूसरा खण्ड, — ' न इस मोह की **घूम** से घिरो '

११. अजित, ८२ — ' बिना **चढ़ौती** लिये तीन दिन कथा सुनावे '

१२. हिंदू, युवको के प्रति, ८१ — ' बो दो बीज, कभी न होगी उसकी **छीज** '

१३. स्वदेश-सगीत, कविता शीर्षक, ' **जगौनी** ', ५२

१४. किसान, सर्ग १, ११ — ' उस विश्रुत **जुझौती** में '

ग्रीम [1], निचाट [2], पौर [3], बक्खल [4], बावनाताल [5], भरपाई [6], भार [7], भौर [8], मालिकी [9], मिसा [10], मेरापन [11], यौतुक [12], लाग [13], लागें [14], लूम [15], बनानी [16], बर्बरक [17], सवाई [18], सायतें [19], सुगसुग [20], और हिंदवाने [21]।

विवाह होने पर दुलहिन का पहली बार ससुराल जाना 'अहोरा' (गौना, पंजाबी भाषा में मुकलावा) और उसी समय मायके लौटना 'बहोरा' कहलाता है।

---

१. अजित १०३ — 'आती होगी ग्रीम'
२. विष्णुप्रिया, ९६ — 'पानी भी मिलेगा न निचाट में'
३. हिंदू, अछूतों का उद्धार, ११२ — 'भरते हैं निज प्रभु का पौर'
४. किसान, प्रार्थना, ९ — 'वही पुराना हल-बक्खल है'
५. (क) किसान, २७ — 'बावनाताल इसी मिस हर लेने को'
(ख) किसान, ५४ — 'मिला बावनाताल'
६. विष्णुप्रिया, १०९ — 'दुःख मूल्य की करती हूं भरपाई'
७. हिंदू, समन्वय १७९ — 'वारो उस पर भारों हेम'
८. (क) जयभारत, यदु और पुरु, २० — 'जान जो पाया नहीं अपने पिता की भौर'
(ख) जयभारत, अज्ञातवास, २३१ — 'तुम पर भी ऐसी भौर आज'
९. किसान, देशत्याग, ३६ — 'नौकरी पर मालिकी सी मैं दिलाऊंगा'
१०. अजित, १२ — 'रोटी जिसकी बनी अनोखा एक मिसा था'
११. किसान, सर्वस्वान्त, ३० — 'मेरापन आत्म-भाव खोने लगा'
१२. जयभारत, द्रोणाचार्य, ३९ — 'अब धरो कला कौशल का यौतुक'
१३. स्वदेश-संगीत, अनिश्चय, ५९ — 'दैव और कुछ लाग लगा दे'
१४. किसान, देशत्याग, ३९— पवन! तुम भी सिन्धु में लागें लगाना छोड़ दो'
१५. सिद्धराज, सर्ग ३, ६१ — 'आता लूम लेता हुआ पूर्ण घट नीचे से'
१६. जयभारत, योजनगंधा, २४ — 'बनानी विपणि समान'
१७. (क) सिद्धराज, सर्ग ३ ५५ — 'जीत कर बर्बरक जैसे वन्य योद्धा को'
(ख) सिद्धराज, सर्ग ५, १२३ — 'बर्बरक-जिष्णु विजयी हैं सज्जनों के भी'
१८. किसान, बाल्य और विवाह, १७ — 'लगा है झगड़ा सब के साथ सवाई का'
१९. राजा-प्रजा, खण्ड प्रजा, ३६ — 'सभी सायतें बनी है'
२०. राजा-प्रजा, खण्ड 'राजा', १२ — 'वह सूंघ पता पा जाय न जिस सुगसुग का'
२१. हिंदू, स्वाभिमान, ५६ — 'अरिकाल बने हिंदवाने की ढाल'

'अहोर-बहोरी '[1] का अर्थ 'बार-बार' या 'रह रह कर' है।

'आंस' सं० स्त्री० शब्द यहां 'गांस' (अर्थ : नुकीली वस्तु या उसका फल) अर्थ में है। 'आंसें' बहु० शब्द भी 'नोंकें' अर्थ में जान पड़ता है।

'आरकाटी' सं० पुं० शब्द नया है। इस में 'आर'[2] सं० पुं० शब्द उस पतली कील या चोभे का नाम है जो बैल के पैने (हांकने में काम आने वाली एक डण्डी) के सिरे के बीच में लगी रहती है। 'आरकाटी' के कई अर्थ हैं — चुभने वाला, कष्टदायी, गुप्त शत्रु।

'ओसरा' सं० पुं० शब्द सं० 'अवसर' का ही विकार है। यहां 'बारी' (Turn) अर्थ भी संभव हो सकता है।

लशकरी भाषा (हिन्दुस्तानी जहाज़ियो की बोली) में 'कडारी' सं० पुं० शब्द (सं० कर्णधारिन्) का अर्थ 'माँझी' है। यहां उसी का परिवर्तित शब्द-रूप है 'कांडारी'।

'गराज' सं० स्त्री० शब्द (सं० गर्जन) 'गरज' अर्थ में है।

'गुनगाहक' का अर्थ है — 'गुण को ग्रहण करने वाला, या उसकी पहचान करने वाला'। इस अर्थ में यह समास नया ही है।

'छमछैंयां' शब्द में 'घम' (सं० घर्म०, प्रा० घम्म) का अर्थ है 'धूप'। 'छैंयां' सं० स्त्री० शब्द 'छाँव' अर्थ रखता है। समग्रत: अर्थ हुआ — 'धूपछाँव' यह भी नव शब्द-प्रयोग ही है।

बंगला में 'घूम' स० स्त्री० शब्द निद्रा, नशा, मस्ती आदि अर्थ में है। पूरब

---

१. तुल० — 'शरद चंद महँ खँजन जोरी। फिरि फिरि लरहि अहोर-बहोरी' (जायसी)

२. तुल० — (*i*) सब तें पीछें बोल्या पैना। मैं हू कुनबा धर मे टैना।

जो बरधा देइ कंधा डारि। तौ कूवूं मैं आर ही आर

—'सब से बाद में पैना कहने लगा — 'मैं अपने परिवार में सब से छोटा हूं पर यदि बैल चलते चलते कंधे डाल दे तो मैं आरें ही आरें चुभा देता हूं (एक लोकोक्ति)

(*ii*) तुल० — 'सूर प्रभु यह जानि पदवी चलत बैलहिं आर' (सूर० ९/१९९)

(*iii*) तुल० — 'प्यारी मानो आरसी चुभी है चित्त आर सी' (सेनापति, क० र० २/२४)

में भी 'नींद' अर्थ में 'घूम' शब्द है। 'घूम-घुमारा'[१] का अर्थ होता है — मद भरा। यहां 'मस्ती' अर्थ लग सकता है।

चढ़ावा' अर्थ में '**चढ़ौती**' सं० स्त्री० शब्द भी नया ही है, जैसे काटना चुनना, और मानना सक० क्रियाओं से कटौती, चुनौती और मनौती भाववाचक संज्ञाएं[२] बनती हैं वैसे ही 'चढ़ाना' से 'चढ़ौती' है।

'**छीज**' स० स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है — हानि, घाटा। यह 'छीजना अ० क्रि०' (सं० क्षीण) से बना है।

'**जगौनी**' सं० स्त्री० शब्द के अर्थ है — जगाना, जागरण। 'जागना' सं० क्रि० से 'जगौनी' है, जैसे 'मीचना' स० क्रि० से 'मिचौनी' और 'चिढाना' स० क्रि० से 'चिढौनी' (छेड)। 'जगौनी' भी भाववाचक संज्ञा है।

'**जुझौती**' शब्द 'जूझना' अ० क्रि० से बना है। अर्थ जूझने का भाव क्रिया, युद्ध, सघर्ष। मिलाइये — पुरना अ० क्रि० से 'पुरौती,' चुकना अ० क्रि० से 'चुकौती'।

'झीमना'[३] अ० क्रि० 'ऊंघना' अर्थ मे है। यहां '**झीम**' से स्त्री० शब्द है। यह भी देशज शब्द है।

अवधी मे '**निचाट**' शब्द सुनसान, निर्जन आदि अर्थ रखता है। क्रि० वि० 'निचटें'[४] का अर्थ है — 'खुले मे' (छत के नीचे नही)

यहां '**पौर**' स० पु० शब्द (बुंदेलखडी) 'पहरेदार' अर्थ में है। हिंदी में पहराइल, पहरुआ, और पहरू देशज-शब्द-रूप भी इसी अर्थ मे चलते है।

'**बक्खल**'[५] सं० पु० शब्द भी देशज प्रयोग है। अर्थ — वह स्थान जहां पर गाय बैल बांधे जाते है।

'**बावना ताल**' सं० पु० शब्द भी बुंदेलखंडी का है। अर्थ — ५२ बीघे का खेत।

---

१. तुल० — 'कृष्ण रसामृत-पान अलस कछु **घूम-घुमारे**' (नंद दास)
२. हिंदी में प्रत्यय विचार, १४५
३. तुल० 'नवनील कुंज है **झीम** रहे, कुसुमों की कथा न बंद हुई' (प्रसाद)
४. अवधी कोष, 'समीर', १३८ दे० 'निचाट'
५. मानक हिंदी कोश, चौथा खंड, दे० 'बक्खर' शब्द

'भरपाई' सं० स्त्री० शब्द (हिं० भरना+पाना) का अर्थ है — 'प्राप्य धन की वसूली'।

'भार' सं० पुं० शब्द का संस्कृत में एक अर्थ है — 'बीस पसेरी (८००० तोले) का परिणाम या तौल'। यहा **'भारों'** बहु० रूप है। 'भारक'[१] सं० पु० शब्द भी इसी अर्थ मे है।

ब्रज भाषा में **'भीर'**[२] सं० स्त्री० शब्द संकट, विपत्ति' अर्थ में बहुत प्रचलित है। यहां यही अर्थ है।

'मालिकी' शब्द 'स्वामित्व' अर्थ में है। अरबी 'मालिक' में 'ई' प्रत्यय जुडा है।

'मिसा' या 'मिस्सा' पु० शब्द (हिं० अ० क्रि० मिसना या मीसना स० क्रि०, अर्थ — 'मलना') का अर्थ है — 'विभिन्न दालों को पीस कर बनाया हुआ आटा'। 'मिस्सा कुस्सा' पद का अर्थ है — मोटा अन्न।

'मेरापन' नई भाववाचक सज्ञा है। अर्थ — अहंत्व, अपने अस्तित्व का ज्ञान।

संस्कृत में **'यौतुक'**[३] नपुं० शब्द का अर्थ है — विवाहकाल का मिला हुआ धन, दहेज। यहा 'धन' अर्थ लगता है।

'लाग' स्त्री० शब्द यहां लगन, अनुराग, प्रेम आदि अर्थों मे है।

'लूम' सं० पु० शब्द यहां चक्कर, पूंछ की तरह हिलना-डुलना अर्थ में है। संस्कृत में 'लूम' नपु० का अर्थ दुम या पूंछ ही है।

'वनानी' (सं० अरण्यानि या अरण्यानी) सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है—बड़ा लम्बा चौड़ा वन।

सस्कृत में **'वर्वरक'** (नपुं) 'चन्दन विशेष' के अर्थ में है। किन्तु यहां 'वर्वरक' में 'क' स्वार्थिक है। अर्थ — 'वर्वर देश का निवासी, जगली, असभ्य'।

---

३. कोश वही, दे० 'भारक'

४. (*i*) तुल० 'जानि दीन पर भीर' (सूर — १ - ३३१)
(*ii*) तुल० 'जब जब भीर परी संतन को' (सूर — १ - १४)
(*iii*) तुल० 'जहां जहां भीर परै भक्तनि को' (सूर० १ - २४४)

३. सस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, दे० 'यौतुक'।

धनी कृषक क्वार-कातिक मास में निर्धन कृषकों को जौ-गेहूं बोने के लिए उधार देते हैं और बैसाख जेठ में सवा गुना ले लेते हैं। यह अनाज '**सवाई**' कहलाता है और यह क्रिया 'सवाई उठाना'। भोजपुरी बोली में इसी को 'बेंगे देना' भी कहते हैं। यहां 'सवाई' इसी अर्थ में है। अन्य अर्थ है — 'ऋण का वह प्रकार जिस में मूलधन का चतुर्थांश व्याज के रूप में देना पड़ता है।

हिंदी में '**सायत**' सं० स्त्री० शब्द (अर० 'साअत') का एक अर्थ है — 'फलित ज्योतिष के विचार से कोई शुभ काल, मुहूर्त्त'। यहां '**सायतें**' बहुवचन रूप है। 'साइत' अन्य शब्द-रूप है।

यहां '**सुगसुग**' स्त्री० शब्द 'कानाफूसी' अर्थ में है।

यहां '**हिंदवाना**' फ़ा० पुं० शब्द 'तरबूज' अर्थ मे है। 'हिंदवाने की ढाल' का अर्थ हैं, सीधी, सपाट, सरल।

संज्ञा-विकार

कुछ विकृत सज्ञा-रूप ये हैं —

अनहौनी [1] (अनहोनी), अन्तस [2] (स्), अन्देश [3] (अन्देशा), आपद [4] (द्), आरावली [5] (अरावली), इन्द्रजित [6] (त्), उछ्वास [7] (उच्छ्वास), उलू [8] (उल्लू), कश [9] (कस), कलेश [10] (क्लेश), किंकणी [11] (किंकिणी), केकइ [12] (कैकेयी),

१. अजित, २४ — 'हाय ऐसी **अनहौनी**'
२. जयभारत, स्वर्गारोहण, ४२६ — 'रख एक शांत रस **अन्तस** मे'
३. हिंदू, अपना उद्देश, २०५ — करो न कोई कुछ **अन्देश**'
४. प्रदक्षिणा, ४५ — 'आते **आपद** को, आशंका को'
५. पत्रावली, रूपवती का पत्र, ३७ — '**आरावली** का हिया'
६. प्रदक्षिणा, ५७ — '**इन्द्रजित**' बांध ले गया उन्हे'
७. जयभारत, केशों की कथा, ३०६ — 'यह आह, यह **उछ्वास**'
८. विष्णुप्रिया, ११५ — 'जी भर **उलू**-ध्वनि करूंगी मैं'
९. सिद्धराज, सर्ग ३, ७८ — '**कंश**-तुल्य जब हत्या की'
१०. हिन्दू, अपना उद्देश, २०६ — 'मचा विश्व में कलह-**कलेश**'
११. सिद्धराज, सर्ग १, ७ — 'हार, **किंकणी**'
१२. हिन्दू, मोह, १६० — कुमति **कैकइ** भी है त्याज्य'

कोइल[1] (कोयल), गुन[2] (गुण), ग्लानी[3] (नि), घाते[4] (घात), चक्रवर्त्ति[5] (र्ती), चारणा[6] (विचारणा), जंक[7] (जग), जगत[8] (त्), जं[9] (जय), ज्योती[10] (ति), झाडी[11] (झड़ी), झिर[12] (झर या झड़ी), झौंके[13] (झोंके), टेसन[14] (स्टेशन), तर्ष[15] (तरस), दाभ[16] (दाप), धौती[17] (धोती), नारि[18] (री), निर्बाह्[19] (निर्वाह), निवाह[20] (निर्वाह), निश्वास[21] (निःश्वास),

---

१. सिद्धराज, सर्ग ३, ६६ — 'काली कोइल भी'
२. जयभारत, सैरन्ध्री, २५० — 'भूल न जा कुछ गुन'
३. कुणाल-गीत, गीत ३३, ५४ — 'क्यों हुई न मुझ को ग्लानी'
४. अजित, ९ — 'घाते में था एक तीसरा चतरा चाकर'
५. जयभारत, राजसूय, १३० — 'चक्रवर्त्ति-पद-भार'
६. जयभारत, तीर्थ यात्रा, १५९ — 'चारणा है, धारणा है'
७. हिंदू, आक्रमण, ३४, ३५ — 'पडे हुए अस्त्रों की जंक......छूटी'
८. (क) अंजलि और अर्घ्य, ४० — 'अपने लिए जगत जीता है'

(ख) राजा-प्रजा, राजा, ६ — 'रीति जगत की जानी'

९. सिद्धराज, सर्ग ५,१२७ — 'जं जै कार करती थीं'
१०. कुणाल-गीत, गीत २३, ४१ — 'अयि जीवन की ज्योती'
११. वही, गीत ८१, ११६ — 'दूर कहीं निर्झर की झाड़ी'
१२. अजित, ३४ — 'न डूबा शब्द नेश वर्षा की झिर में'
१३. वैतालिक, ११ — 'झौंके आ आ कर किस के'
१४. अजित, ६५ — 'टेसन अब भी दूर'
१५. जयभारत, अनाहूत, २९३ — 'न तर्ष खाओ'
१६. हिन्दू, मुसलमानों के प्रति, २०० — 'मन से मिटे द्वेष का दाभ'
१७. अजित, ७२ — 'श्वेत, हिरौंजी धौती पहने'
१८. स्वदेश-संगीत, स्वर्ग-सहोदर, २० — 'फिरती पवन प्रिय नारि बनी'
१९. (क) हिन्दू, गांवों का सुधार, ८५ — 'कर के थोड़े में निर्बाह्'

(ख) पृष्ठ वही — 'खेती से सब का निर्बाह्'

२०. हिन्दू, मितव्यय, १५२ — 'है बस हरि के हाथ निवाह'
२१. वक-संहार, १८ — 'तू ले रही निश्वास है'

परिक्षित[1] (परीक्षित्), पीड़ियों[2] (पीढ़ियों), प्रतिकृती[3] (कृति), मुहँ[4] (मुँह), वक्षस्थल[5] (वक्षः स्थल), वन्हि[6] (वह्नि), वयस[7] (स्), विटपि[8] (पी), विपद[9] (द्), विभ्राट[10] (ट्), वृती[11] (व्र), वेर[12] (वेर), शताब्दि[13] (ब्दी), शाशन[14] (सन), शिल्पि[15] (ल्पी), शीस[16] (शीर्ष या शीश),

---

१. (क) जयभारत, अन्त, ४२३ — 'पौत्र परिक्षित के समान ही'

(ख) वही, वही, ४२१ — 'पर हुआ परिक्षित मृत-सा'

२. सिद्धराज, सर्ग २, ३० — 'सात पीड़ियों का पुण्य'

३. रंग में भंग, २० — 'उस दुर्ग की वह प्रतिकृती'

४. (क) जयभारत, वृहन्नला, २६९ — 'लुटेरे का मुहँ'

(ख) वही, मद्रराज, २९६ — 'फूटेगा उनके मुहँ पर फेन'

(ग) वही, कुंती और कर्ण, ३३२ — 'जो मुहँ ढक कर रोती हो'

५. पत्रावली, महारानी सीसोदनी का पत्र, २८ — 'विशाल वक्षस्थल'

६. पत्रावली, पृथ्वी राज का पत्र, ७ — 'क्या विद्युद्वन्हि'

७. अजलि और अर्घ्य, १९, — 'अल्प वयस में ही अम्बा को'

८. (क) जय भारत, अज्ञातवास, २६४ — 'विटपि-काड पर......लतिका'

(ख) प्रदक्षिणा, ६३ — 'बहते विटपि'

९. (i) वक-संहार, ३९ — 'विपद में तुम सदा'

(ii) पत्रावली, १३ — 'जिस विपद में'

१०. हिंदू, मुसलमानों के प्रति, १९०, — 'उचित न होगे वे विभ्राट'

११. किसान, प्रार्थना, ५ — 'सिद्ध न मुक्त ी, वृती न योगी'

१२. जयभारत, संरंध्री, २६४ — 'कुछ भी न वेर कर'

१३. सिद्धराज, सर्ग १, ७ — 'द्वादश शताब्दि की'

१४. पत्रावली, महाराणा प्रतापसिंह का पत्र, १२ — 'अटल है शाशन हरे'

१५. जयभारत, इन्द्रप्रस्थ, १२० — 'धाम रचा शिल्पि वर मय ने'

१६. वही, अज्ञातवास, २३० — 'छू कर कराग्र से नम्र शीस'

संपद[1] (द्), संपेलुए[2] (संपेले या संपोले), सन्यास[3] (सं), सम्राट[4] (ट्), सिरस्त्राण[5] (शि), स्वामि[6] (मी), हनूमान[7] (न्), हानी[8] (नि), हिमवान[9] (न्),

विशेषण

कुछ विशेषण द्रष्टव्य हैं :—

ऊलती[10] कनौखी[11] चतरा[12] चितचाही[13]

---

१. वक-सहार, ३९ — ' दृष्टांत हो संपद '

२. सिद्धराज, सर्ग ३, ७४ — ' साँप के संपेलुए भी छोड़े नहीं जाते हैं '

३. (क) हिंदू, मुक्ति, १३६ — ' ले लेते थे जो सन्यास' ' दे० पृ० १३७, १३८ '

(ख) वही, सतान-सघ, १४१ — ' हो आदर्श वही सन्यास '

४. जयभारत, वन-गमन, १४४ — ' देखो ये सम्राट '

५. सिद्धराज, सर्ग १, ७ — ' सिरस्त्राण बाधे '

६. जयभारत, युयुत्सु, ३३९ — ' वह स्वामि-सेविका मात्र सदा '

७. (*i*) वही, युद्ध, ३८४ — ' कर के स्मरण हनूमान सा '

(*ii*) प्रदक्षिणा, ५५ — ' हनूमान ने '

८. (क) राजा-प्रजा, खण्ड ' राजा ', ८ — ' हुई हानि ही हानी '

(ख) अजित, ७५ — ' इतनी हानी '

(ग) कुणाल-गीत, १६ — ' सह लूं यह थोडी-सी हानी '

९. हिन्दू, साधन, ४८ — ' चौथी ओर अटल हिमवान '

१०. जय भारत, नहुष, ७ — ' ऊलती तरंगों पर झूलती-सी निकली '

११. (i) वही, सैरन्ध्री, २४६ — ' कनौखी दृष्टि वह ' (ii) मानक हिंदी कोश, तुल० ' तनिक कनोखी अँखियों से '

१२. अजित, ९ — ' घाते में था एक तीसरा चतरा चाकर '

१३. काबा और कर्बला, ६६ — ' दो पुत्रों की प्राप्ति हुई जिसे चितचाही '

चितचीते[१], **त्रासी**[२], त्रिकूटिनी[३], देशल[४], नयनीत[५], निपूता[६], बड़का[७], भभरा[८], यादवी[९], वेशल[१०], और हिंदुआ[११]।

'**ऊलती**' वि० 'ऊलना' अ० क्रि० (अर्थ : 'उछलना, प्रसन्न होना') से बना है।

'**कनौखी**' वि० का अर्थ है — तिरछी, कनखी (कान + आँख — आँख की वह मुद्रा जब वह कान की ओर देखे)। 'कनखा' और कनौखा वि० पु० शब्द हैं। अवधी में 'कनखिआ' सं० पु० का अर्थ — 'आँख का कोना' है।

हिंदी में 'चतर' वि० 'चतुर' अर्थ मे है। '**चतरा**' वि० से भी यही अर्थ अभिप्रेत है।

'**चितचाही**' और '**चितचीते**' दोनो वि० शब्दो का अर्थ है — इच्छित, मनचाही, मनचाहे। ब्रजभाषा में 'चितचिता' और 'चितचेता' वि० शब्द-रूप भी इन्हीं अर्थों मे है।

'**त्रासी**' वि० (सं० त्रासिन्) का अर्थ है—त्रासक। किंतु यहां 'त्रस्त' अथवा 'त्रासित' वि० शब्दो के ही अर्थों में 'त्रासी' का नया प्रयोग किया गया है।

---

१. राजा-प्रजा, खण्ड 'राजा', ४२ — 'फिरे हमारे दिन **चितचीते**'
२. जयभारत, सैरंध्री, २५९ — 'मैं अनाथिनी सदृश यहा जाती हू **त्रासी**'
३. प्रदक्षिणा, ५३ — 'तन्त्रो की थी वह त्रिकूटिनी माया सी'
४. सिद्धराज, सर्ग ३, ७४ — '**देशल** था एक'.. बचाया देश एक ने...
५. साकेत, सर्ग ७, २१६ — 'ये प्रजाजन ही कहे **नयनीत**'
६. सिद्धराज, सर्ग १, १४ — 'यहा मैं क्या **निपूता** राजकर है'
७. अजित, १०८ — 'बेठ, बना फिरता है **बड़का**'
८. (i) जयभारत, दुर्योधन का दुःख, २०६ — **भभरा** कनिष्ठ'
(ii) जय भारत, युद्ध, ३९० — 'मुंह **भभरा** था'
९. अंजलि और अर्घ्य, १६ — '**यादवी** गति का ही यह'
१०. सिद्धराज, सर्ग ३, ७४ — 'और **वेशल** था दूसरा'... लजाया देश अन्य ने ....
११. हिन्दू, स्वाभिमान, ५६ — 'हुआ **हिन्दुआ** सूर्य न मन्द'

'**त्रिकूटिनी**' वि० शब्द 'त्रिकूट' सं० पुं० (अर्थ : 'हठयोग के अनुसार मस्तक में भौंहो के बीच एक चक्र') से बना है। यहाँ अर्थ है 'त्रिकूट-सम्बंधी या वैसी ही मिलती-जुलती (माया)।

'**देशल**' वि० पु० शब्द सर्वथा नवीन है। इस में 'अल' सम्बंधसूचक प्रत्यय जुड़ा है।

'**नयनीत**' वि० का अर्थ है — नीति-प्राप्त, नीतिनिपुण, नयनागर।

'**निपूता**' वि० (नि+पूत) का अर्थ है — 'नि:सतान। यहां गाली के रूप में प्रयुक्त है। यह विशेषण-विपर्यय का सुन्दर उदाहरण है।

पूरबी बोली में '**बड़का**' वि० (स्त्री० बड़की) का अर्थ है — जो सब से बड़ा हो — यथा बड़की दीदी, बड़के भैया। यहां भी यही अर्थ है।

'भभरा' वि० 'भभरना' अ० क्रि० से बना है। यहां अर्थ हैं — भयभीत, घबराया, कातिहीन।

'**यादवी**' में 'ई' प्रत्यय और **वेशल** में 'अल' प्रत्यय सम्बंधवाचक हैं।

'हिंदुआ' मे 'आ' प्रत्यय भी सम्बधसूचक ही माना जाएगा। अर्थ — 'हिंदुओं का'।

विशेषण विकार

कुछ उदाहरण ये है —

अवाक[1] (क्) . आरत[2] (आर्त्त) , उज्वल[3] (ज्ज) कीर्तिमान[4] (न्), छविमान[5] (न्)

---

१. सिद्धराज, सर्ग ३, ७२ — 'देखता **अवाक**'

२. अजित, ३८— 'पड़ी थी **आरत** माता'

३. (क) अजलि और अर्घ्य , ३४—'**उज्वल** गुण से'

(ख) हिन्दू , स्मृति , २६— 'पाया है **उज्वल** अमरत्व'

४. (क) जयभारत, वृहन्नला, २७३—'**कीर्तिमान** जन मरा हुआ भी'

(ख) पत्रावली, रूपवती का पत्र, ३७— 'मर्यादा निज **कीर्तिमान**'

५. स्वदेश-सगीत, स्वर्ग-सहोदर, १७ — '**छविमान** कही पर खेत हरे'

नरकी[१] (नारकी या नारकीय), नृशंश[२] (नृशंस), बलवान[३] (न्), भावि[४] (वी), मँहगा[५] (महँगा), मतिमान[६] (न्) महान[७] (न्), मुमूर्ष[८] (मुमूर्षु), मुस्तंडा[९] (मुसटंडा या मुस्टंडा), मूर्तिमान[१०] (न्), रिनी[११] (ऋणी), रूआंधा[१२] (रूआँसा), वरिष्ट[१३] (ष्ठ), विभ्राट[१४] (ट्), विराट[१५] (ट्)

---

१. हिन्दू, मृत्युञ्जय, १२८ — ' डरे मृत्यु से **नरकी** नीच '
२. सिद्धराज, सर्ग २, ७८ — ' तुम ने **नृशंश** कश-तुल्य '
३. (क) वक-सहार, ३८ — ' **बलवान** कम न हिडिम्ब था '
(ख) जय भारत , वन-वैभव, १९१ — ' हुआ सर निर्गत वह **बलवान** '
४. जय भारत, युद्ध, ३९१ — ' **भावि** योजना '
५. जयभारत, समर-सज्जा, ३४३ — ' मुझे **मँहगा** उसका भोग '
६. (क) वही, रण-निमंत्रण, २९० — ' मानते **मतिमान** है '
(ख) हिन्दू, सन्तान-वृद्धि, १४७ — ' तभी सुगति होगी **मतिमान** '
७. (क) सिद्धराज , सर्ग ४, ६४ — ' हम क्या **महान** '
(ख) अँजलि और अर्घ्य, १७ — ' तुले कहा यह त्याग **महान** '
८. प्रदक्षिणा, ५४ — ' रावण ने उन **मुमूर्ष** के निकट कहा '
९. किसान, बाल्य और विवाह, १५ — ' मै भी कुछ **मुस्तण्डा** था '
१०. (क) सिद्धराज , सर्ग २, ५२ — ' **मूर्तिमान** महालाभ '
(ख) सिद्धराज, सर्ग ५, १२६ — ' मानो **मूर्तिमान** '
११. अजित, ५८ — ' तुम हो किस के **रिनी** '
१२. जयभारत, दुर्योधन का दु.ख, २०४ — ' हुआ **रुआंधा** वह रुद्धकण्ठ '
१३. हिन्दू, अंगरेजो के प्रति, १८७ — ' ब्रिटिश-सिंह तुम रहो **वरिष्ट** '
१४. (i) अंजलि और अर्घ्य' २० — ' विहार **विभ्राट** '
(ii) जयभारत , एकलव्य, ४७ — ' दारुण **विभ्राट** '
१५. (i) राजा-प्रजा, राजा, ४६ — ' वह **विराट** हो गया राष्ट्र '
(ii) जयभारत, अर्जुन का मोह , — ३५८ रूप **विराट** '

शीलवान[1] (न्) , श्रीमान[2] (न्) , सामर्थ्यवान[3] (न् , वैसे समर्थ[4], शुद्ध है)

क्रिया

कवि गुप्त द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष क्रियाएं देखें —

अटता[5], अनुकूलो, अनुरागे, अनुरागो, अर्प, अवतरते, असीसा, असीसेंगे, आचरता, आचरती, उच्चारो, उजल[6], उजलती[7], उझल[8], उद्धारो, करिए, कीजियो[9], कीजे[10], कीजो, खन, खने, खनेगा, खे, गहता, गारें, गारो, गुड़े[11], गोड़ती, गोड़ने, गोडा, गोडे, गोडेगा, गोड़ो, घूट[12], घूंटूगा[13], चिहुँक, चीन्हो, छके, छजता, छीज, छुलाती, छेका, जकते, जनाता, जुगाता, जुझाती, झांको[14], झिला, झिलेगी, झीम, झुंके[15], ठठी[16],

---

१, स्वदेश - सगीत , ब्रह्मचर्य्याश्रम, ३१ — ' **शीलवान थे सच्चे** '
२. जयभारत , उद्योग , २७७ — ' **श्रीमान** ने सदय हो कर '
३. वही , वही २७८ , — ' **सामर्थ्यवान** फिर भी निरुपाय '
४. हिंदी शब्दानुशासन , पं० किशोरीदास वाजपेयी , २२१
५. वक-संहार, ३६ — ' उलटा प्रमाद **अटता** नही '
६. जयभारत, हिडिम्बा, ७४ — ' **उजल** उठूगी शुचिस्नेह के प्रताप से '
७. यशोधरा . ९८ — ' **उजलती** है जलती मुस्कान '
८. प्रदक्षिणा, ५० —' **उझल** दिया मानों झोके से '
९. जयभारत, वन-गमन , १४७ — ' न प्यार ही प्यार **कीजियो** '
१०. साकेत, सर्ग ३ , ७८ — ' कुछ संकोच **कीजे** '
११. हिन्दू, शक्ति- सचय, ६६ — ' **गुड़ें** अखाड़े दोनों काल '
१२. अजित, ५३ — ' मधु में माहुर **घूट** गये '
१३. अजित, १० — ' अपना यह अपमान गर्व से ही **घूटूंगा** '
१४. जय भारत, परीक्षा, ५४ — 'धनुष छोड़ कर कोरा **झांको** '
१५. वही , अर्जुन का मोह, ३४८ — ' सुभट समरानल हेतु, **झुंके** '
१६. वही, शांति-सदेश, ३२२ —'ठान जो **ठठी** सो **ठठी** '

, ठने, तारा, तिरक[१], थापी, दगता, दरक, दहे, दिपी, दिप, दीजो[२], दूखे, देखियो[३], धगड़े[४], धांधी[५], धुधा[६], नाथ, नाया, निर[७], निराते, परिहारो, पलवाते, पिर, पिरा, पूर, पूरे, प्रकटा, प्रकटी, प्रकटे, प्रमाणी, प्रमाने प्रेरा, बखाना, बखानें, बतिया, बतियाऊं, बा[८] बाया[९], बिलटती[१०], बिलमी, बिलोड़ेगे, बिसा[११], बिसाई[१२], भख, भखते, भहरा, भेटने, भेटा, भेटी, भेटो, भ्रमते, भ्रमेगा, मझाऊं[१३], मनचीतो[१४], मारे-धारे, मुकरू, मूपे, मेंट, मेटो, मेटनी. मेटा, मेटी मेटू, मेटें, मेटेगा, मेटेगी, राजे, रीत, रीतो, लचा, लचेगा, लजे, लसे, लीजियो[१५], लीजे[१६], लीजो, लुठता[१७],

---

१. सिद्धराज, सर्ग ५, १२० — 'तिरक गये थे कुछ बाल डाढी-मूछों के'

२. (क) किसान, बाल्य और विवाह, ४४ — 'जग मे जन्म न दीजो'

(ख) जयभारत, सैरंध्री, २५० — 'लाख गालिया दीजो मुझ को'

३. वही, विलाप, ४१३ — 'उन्हे देखियो'

४. अजित, ४८ — 'जो (झगडे) है हम को हिंस्र जतुओ सा धर धगड़े'

५. साकेत, सर्ग ९, २८९— 'ध: कर धरा धूप ने धांधी'

६. जयभारत, धूत, १३५ — 'धुंधा रहा था जो भीतर ही गीला-सा ईधन पा कर'

७. कुणाल-गीत, गीत १४, ३१ — 'कृषि-सी [illegible]मिर की निर गई'

८. झंकार, प्रस्थान, ३७— 'मुह बा बा कर अ ते है।'

९. (क) वही, अर्थ, १३ — 'वहुतेरा मुह बाया'

(ख) वही, ज्ञान और भक्ति, १४१ — 'वृक्षो ने मुह बाया'

१०. जयभारत, केशो की कथा, ३०१ — 'विधि ही बिलटती दीखती है'

११. अजित, ८ — 'बिसा लायेगे हम फिर मैया'

१२. अजित, ९ — 'मा तो नही परन्तु पिता ने वह बिसाई'

१३. अजित, ६१ — 'नदी भर अभी मझाऊं'

१४. साकेत, सर्ग ९, २८९ — 'जन को भी मनचीतो'

१५. जयभारत, वन-गमन, १४७ — 'बुला लीजियो वही उन्हे'

१६. वही, सैरंध्री, २४४ — 'लीजे मै ने लिख लिये।'

१७. वही, विदुर - वार्त्ता, २८४ — 'नहीं आखे तो भी युग पलक मै मूद लुठता'

लेख, लेखता, लेखते. लेखी, लेखू, लोभा, विकसो, विचरूं, विचारो, विलपते, बिलपना, विलोकू, व्यापती, व्यापे, सकड़े[1], समाचरे[2], सरे[3], सलटे[4], सहेजे, सार, सालता, साला, सालेगा, सालेगी, सुमिर, सूजी, से, स्वीकारती, स्वीकारू, स्वीकारे, हनते, हनूगा, हनें, हनो, हनोगे, हहरी, हिलोड़ेगे, हुलसे, हूजिए[5], हूजे[6], हूजो, हूदे[7] और हूल[8] ।

'अटता' (हिं० अँटना) का यहां अर्थ है — अन्दर आना, समाना ।

' उजल ' और ' उजलती ' क्रियाओं का सम्बंध ' उजलना ' अ० क्रि० से है जिसका अर्थ है —प्रकाशित होना , चमकना ।

' उझलना ' अ० क्रि० उंडेलना, आ गिरना या आ पड़ना आदि अर्थों में है ।

' कीजियो ' और ' कीजे ' ' करना ' स० क्रि० के बोलचाल के रूप हैं ।

' गुड़ें ' में ' गुड़ना ' अ० क्रि० है जिस को ' गोड़ना ' स० क्रि० का अकर्मक प्रयोग माना जा सकता है ।

' घूंट ' स० पुं० से ' घूंटना ' स० क्रि० बनी है अर्थ ' गट गट ' करके पीना । ' घूटूगा का लक्षणा द्वारा अर्थ हुआ — ' मन ही मन मे सहन करूंगा ' ।

' झांकना '[9] अ० क्रि० का एक अर्थ है — ' कोई काम करने के लिए उसकी

---

१. स्वदेश-संगीत, बैठे हैं, ४८ — ' निरुद्यम, चौड़े में सकड़े बैठे हैं '

२. जयभारत, याज्ञसेनी, ५८ — ' समचारे उसको मेरा ही सोदर '

३. (क) वक सहार, १३ — ' कुछ काम सकट में सरे '
   (ख) राजा-प्रजा, राजा, ११ — ' जैसे हो इनका काज सरे '

४. राजा-प्रजा, राजा, १८ — , पहले के ही अभियोग नहीं सलटे हैं '

५. सिद्धराज, सर्ग २ , ३१ — ' विनीत हूजिए '

६. पत्रावली, महारानी अहल्याबाई का पत्र , ३२ — ' हूजे न रुष्ट कुछ '

७. जयभारत, वन-मृगी, २१२ — ' उठते सीगों से घने घनों को हूदें '

८. सिद्धराज, सर्ग २, ४३ — ' हूल दिया हाथी ललकार कर वीर ने '

९. मानव हिंदी कोश, दूसरा खण्ड

और प्रवृत्त होना।' धनुष उठाते समय और घोडे पर कोड़ा चलाते समय झुकने या झाँकने की क्रिया एक साथ देखी जा सकती है इसी से 'झांकना' क्रि० में नये अर्थ का आरोप किया गया है। प्रयोग भी सकर्मक है।

'**झुके**' मे 'झुंकना' अ० क्रि० है जो कि 'झोकना' स० क्रि० का ही अकर्मक रूप है। यहां अर्थ है — 'झोके गये'।

'**ठठना**' स० क्रि० का एक अर्थ 'निश्चिय करना' भी है। '**ठठी**' का यहाँ अर्थ हुआ — ठानी, निश्चित की।

यहां '**तिरकना**' अ० क्रि० ध्वन्यात्मक है जिसका अर्थ है 'टूटना'।

'**दीजो और देखियो**' क्रमश: 'देना' और 'देखना' स० क्रि० के बोलचाल के रूप हैं।

'**धगड़ना**' स० क्रि० नवीन है — अर्थ : नोचना, खाना, घसीटना।

'**धांधना**'[1] स० क्रि० का भी यहां नया अर्थ है — 'त्रस्त या परेशान करना'।

'**धुँधाना**' अ० क्रि० यहां 'धुधुआना' अर्थ मे है। हिंदी मे 'धुंधुआना' अ० क्रि० (स० धूम्र, हि० धुआ) 'धुआ देते हुए जलना' अर्थ में है।

'**निरना**' यहा 'निराना' स० क्रि० (सं० निराकरण) का ही अकर्मक रूप है : अर्थ—हटना, छँटना।

'**बाना**' स० क्रि० (स० व्यापन) का यहां अर्थ है — खोलना, फैलाना। 'बाया' का अर्थ हुआ — खोला।

हिंदी मे '**बिलटना**' अ० क्रि० और अवधी मे 'बिलटव' अ० क्रि० (सं० विलुठन) 'विपरीत होने' या 'नष्ट होने' अर्थों में हैं।

'**बिसा**' और '**बिसाई**' क्रियाओं का सम्बंध 'बिसाना' या 'बिसाहना' (सं० व्यवसाय) स० क्रि० से है। अर्थ — मोल लेना। यहां 'ब्याह कर ले आना' अर्थ है।

'**मझाऊं**' मे 'मझाना' अ० क्रि० (स० मध्य) है। यहां अर्थ है — बीच में प्रविष्ट होऊं' 'डुबकियाँ लगाऊं'।

---

१. कोश वही, तीसरा खण्ड

'**मनचीतो**' क्रि० का अर्थ है — मन में चाहो, प्यार करो। वस्तुतः 'मनचीता' वि० (अर्थ 'मन में चाहा हुआ') से ही यहां 'मनचीतना' स० क्रि० बनी है। ब्रजभाषा में इसी अर्थ में 'मनचीतनो[1]' दूसरा क्रिया-रूप भी है।

'**लीजियो**' और '**लीजे**' क्रि० 'लेना' क्रि० के ही लोक-प्रचलित रूप हैं।

'**लुठता**' अ० क्रि० (स० लुठन) का यहां अर्थ है — लुढ़कता, लोटता। 'लुठना' अ० क्रि० हिंदी की है।

'**सकड़े**' नवीन क्रिया-प्रयोग है। पसरे हिचकते, हुए आदि अर्थ संभव है। अवधी में 'सकड़ब'[2] अ० क्रि० हिचकना, डरना आदि अर्थों में है।

यहां '**समाचरे**' क्रि० का अर्थ है — व्यवहार करे। 'समाचरना' स० क्रि० (स० समाचरण) से इस का सबध है।

हिंदी मे '**सरना**' अ० क्रि० का अर्थ 'कार्य आदि का निर्वाह होना, पूरा होना भी है।

हूजिए और हूजे क्रिया-रूप 'होना' अ० क्रि० के बोलचाल के रूप हैं। दोनों का यहा अर्थ है — होइये।

'**हूदना**' स० क्रि० यहा तोड़ना-फोड़ना, छितराना आदि अर्थों में है।

'**हूलना**' स० क्रि० यहां 'आक्रमण कर के मारने' के अर्थ मे है। हिंदी मे इस क्रिया का अर्थ है, — 'लाठी, भाले, तलवार आदि का सिरा किसी चीज़ में धँसाना'।

क्रिया-विकार

क्रियाओ के कुछ विकृत रूप ये है —

---

१. ब्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड

२. अवधी कोश, रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', दे० 'सकड़ब'

आयगा[१], आयगी[२], आव[३] (आओ) . उठायगा[४], कल्पायगी[५], खायँ[६], खायँगी[७], खोर[८] (खोल), घहरें[९] (रे), चक्खी[१०] (चखी), चक्खें[११], चक्खे[१२], चढ़ाव[१३] (चढ़ाओ), चीड़[१४] (चीर), चुकायेंगे[१५] छहरे[१६] (रे), जानो[१७] (नो), जायँ[१८], जायगे[१९], जाय[२०]

---

१. वक-संहार, ३९ — 'मुझे ही आयगा'

२. (क) वही, ११ — 'अब काम यह भी आयगी'

(ख) विष्णुप्रिया, ५३ — 'आयगी वह सधि क्यो'

३ जय भारत, योजनगंधा, २५ — तुम मेरे आव'

४. वही , वही, ११ — 'कष्ट क्यो उठायगा ?'

५. वही , केशों की कथा, ३०८ — 'तुझ कलपायगी'

६. (क) राजा- प्रजा, राजा १३ — 'खायँ वे खाजा'

(ख) विष्णुप्रिया, ११ — 'उसी को हम खायँ क्या ।

७. वही, ६५ — 'कैसे हम खायँगी'

८. कुणाल-गीत, गीत ८८, १२७ — 'आगे खुली खड़ी जो यह खोर खीचती है'

९. स्वदेश-सगीत, भारत का झण्डा, १३४— 'छाया कर के घहरें'

१०. प्रदक्षिणा, ७६ — 'कटुता आप यहा चक्खी'

११. राजा-प्रजा, राजा, ११ — 'रग-रस चक्खे'

१२. वक-सहार, ५ — 'चक्खे हुये'

१३. हिन्दू, भीतर, १५३ — 'भेट चढ़ाव'

१४. शक्ति, १३ — 'नखो से उसको देता चिढ कर चीड़'

१५. जयभारत , शाति-सदेश, ३१४ — कितना मूल्य चुकायँगे'

१६. स्वदेश-सगीत, भारत का झण्डा, १३५ — 'विजय-दुन्दुभी घहरें'

१७. हिंदू, शास्त्र, १६८ — 'तो तुम जानों उन्हे अलीक'

१८. वही, जन्माष्टमी, ७३ — 'पापो के प्रहरी मो जायँ'

१९. विष्णुप्रिया, ४९ — 'जायँगे जहा भी'

२०. (क) अजलि और अर्घ्य, ९ — दिया जाय दैत्यों को भी जल'

(ख) राजा - प्रजा, राजा, १२ 'पता पा जाय न'

जायगा[१], जायगी[२], जाव[३], ठहरें[४] (रे), दिखलायगा[५], नचे[६], नहाव[७] नहाओ), पछतायँगे[८] पायँगे[९] पायगा[१०] पाव[११] (पाओ), फहरें[१२] (रे), बनें[१३] बने) बनेगा[१४] (बनेगा) बनो[१५] (बनो) बसाय[१६] (ये) बहाव[१७] (बहाओ) लबा[१७] (बुलवाओ), रक्खा[१९] (रखा), रक्खी[२०]

. सिद्धराज, सर्ग २, ४९ — ' माना नहीं जायगा '
. वक-संहार, ११ — ' निज को सफल कर जायगी '
. जय भारत, योजनगंधा, २५ — ' आज गुरुजन बन जाव '
. स्वदेश-संगीत, भारत का झण्डा, १३४ — ' विजय-वीरता ठहरें '
. सिद्धराज, सर्ग ५, १३५ — ' हमें नीचा दिखलायगा '
. साकेत, सर्ग ९, २९४ — ' वह शिखा मुखी हो नचे '
. हिन्दू, साधु-सुधार, १३६ — ' दया-वीचियों के बीच नहाव '
. जयभारत, शांति-सदेश, ३१२ — ' तो पीछे पछतायँगे '
. जयभारत, उद्योग, २७९ — ' हम पायँगे क्या......'
. वही, १० — ' व्यर्थ होने नहीं पायगा '
. हिन्दू, आत्म-गौरव, १७४ — ' सर्वाश्रय पाव '
. स्वदेश-संगीत भारत का झण्डा, १३४ — ' भारत का झण्डा फहरें '
. अजित, ४४ — ' दृक्काले बनें है ..... लाल बनें हैं '
. वही, ८ — ' स्वर्ग बनेगा '
. (क) हिन्दू, सन्तान-वृद्धि, १४७ — ' बनों संयमी . बनों समर्थ '
(ख) हिन्दू, युग का रोना, १६१ — ' बनों विवेकी '
. हिन्दू, मायावाद, १४४ — ' कम्बल छोड़ नब न बसाय '
. हिन्दू, साधु-सुधार, १३६ — ' मन का भी तो मैल बहाव '
. हिन्दू, भीतर, १५३ — ' साईं साहब को बुलवाव '
. (i) अंजलि और अर्घ्य, ८ — ' प्रकट रूप रक्खा '
(ii) वही, १८ — ' रक्खा है '
. (i) वही, २२ — ' रक्खी तू ने '
(ii) पत्रावली, पृथ्वीराज का पत्र, ८ — ' लाज रक्खी '

रक्खूं[1], रक्खें[2], रक्खेंगे[3], रक्खे[4], रक्खो[5], रौंध[6] (द) लहरैं[7] (रे) लाव[8] (लाओ) सनेगा[9] (ने), समायगा[10], सुनो[11] (नो), सुलवाव[12] (वाओ), और हहरैं[13] (रे)

उर्दू क्रियाएं

गुप्त जी ने उर्दू शैली की भी कुछ क्रियाएं प्रयुक्त की हैं यथा: किया किये[14], छपा किए[15],

---

१. (i) वक संहार, १९ — 'कैसे न रक्खू'

(ii) राजा-प्रजा, राजा, १२ — 'क्यों रक्खू'

२. राजा-प्रजा, राजा, ११ — 'आप तक रक्खें'

३. पत्रावली, पृथ्वीराज का पत्र, ९ — 'रक्खेंगे आप में वे सतत'

४. वक-संहार, ५ — 'रक्खे हुये'

५. (क) पत्रावली, पृथ्वीराज का पत्र, ८ — 'रक्खो चाहे न रक्खो'

(ख) हिंदू, सम्बल, १७३ — 'रक्खो भुजबल'

६. अजित, ९० — 'रौंध सके अब और न'

७. स्वदेश-संगीत, भारत का झण्डा, १३४ — 'लहर लहर कर लहरैं'

८. हिंदू, मत-स्वातंत्र्य, ९४ — 'कभी न अपने पन मे लाव'

९. अजित, ८ — 'नरक सनेंगा'

१०. कुणाल - गीत, १९ — 'किस में आज समायगा'

११. हिन्दू, शास्त्र, १६५ — 'सुनों प्रमाण शांति के साथ'

१२. हिन्दू , भीतर, १५३ — 'कुछ दिन उन्हे यही सुलवाव

१३. स्वदेश-संगीत, भारत का झण्डा, १३५ — 'हृदय हार कर हहरैं'

१४. (क) हिन्दू, बाहर १५६ — 'किया किये तुम पारा बिद्ध'

(ख) स्वदेश-संगीत, प्राचीन भारत, ३६ — 'स्वजन के सम काम किया किये'

१५. अजित , ४६ — 'छपा किए नित नये नये प्रतिबंध गजट में'

टाला किये[1], दिया किये[2], देखा की[3], पीटा किये[4] और सड़ा किए[5]।

उपसर्ग

कवि ने अ, अन् (हिं० अन), कु, दुर्, निर्, प्र, सम् और 'सु' उपसर्गों के प्रति अपनी रुचि विशेष का परिचय दिया है। क्रमशः उदाहरण ये हैं —

अकथ, अकत्थ (कथा-रहित), अकीर्ति, अचीती, अडोल, अतोल, अनाथा, अप्राप्त, अभोजन, अमानिनी, अविचित्र, असती और असदाचारी।

अनखिले, अनचीता, अनडिग, अनदेखे, अनबोये, अनमोली, अनरीति, अनलस, अनम्रय, अनुष्ण।

कुकर्म, कुकीर्ति, कुग्रह, कुतर्कियों, कुपथ्य, कुफल और कुमन्त्रणा।

दुरन्त, दुराचारी, दुर्दान्त, दुर्दृश्य, दुर्नीति, दुर्व्यसन, दुर्विध इत्यादि।

निरपराधों, निरुपाय, निर्जन, निर्जल, निर्वैर इत्यादि।

प्रकोप, प्रबुद्ध, प्रमाद, प्रमुदित, प्रमोद, प्रस्थित, प्रस्फुट और प्रहस्त।

समधिक, समादर, समाराधक, समाश्वस्त, समुत्सुक, समुपस्थित, सम्मुख।

सुकाल, सुकृति, सुगीत, सुघोषित, सुताप, सुनवीन सुनाद, सुपास, सुभव्य, सुमंजु, सुमहत्ता, सुमायामय, सुमार्मिक, सु-वर, सुमह्य, सुसाथी। फा० 'बे' उपसर्ग भी है — बेजोड़, बेतुकी, बेरोक आदि में फ़ारसी का 'बे' उपसर्ग है।

---

१. स्वदेश-संगीत, विचित्र संग्राम, १२९ — 'टाला किये बराबर ही वे'

२. वही, प्राचीन भारत, ३६ — 'समय पै घन नीर दिया किये'

३. (क) विष्णुप्रिया, ४० — 'उन्हीं की ओर कुछ क्षण देखा की'

(ख) जयभारत, सैरंध्री, २४१ — 'देखा की डगमग चाल वह उस की'

४. अंजलि और अर्घ्य, ३४— 'पत्ते पीटा किये हम खेल के'

५. किसान, देश-त्याग, ४० — 'हम तीन मास सड़ा किए'

लिंग

लिंगों के क्षेत्र में कवि ने निरंकुशता का परिचय दिया है। उदाहरणतः जो शब्द हिंदी में प्रायः पुल्लिंग हैं कवि ने उन्हें स्त्री० माना है। यथा कीच[1] खौर[2], जंक[3], ठौर[4], तारा[5] दम[6] देवता[7], पवन[8] फाग[9], बरसें[10], माप[11], रसायन[12], व्यष्टि[13] और साख[14]।

---

१. (क) जयभारत, समर-सज्जा, ३४६ — 'कलि-कल्मष की **कीच**'

(ख) शक्ति, १६ — '**वह कल्मष की कीच**'

२. शक्ति, १० — 'खींची वनदेवी ने उन पर हरिचंदन की **खौर**'

३. हिन्दू, आक्रमण, ३४ — 'पड़े हुये अस्त्रों की **जंक** ...... छूटी'

४. सिद्धराज, सर्ग ३, ६८ — '**ठौर** कहां होगी उसे'

५. (क) गुरुकुल, २०८ — 'झाक रही थी **तारा** एक'

(ख) अजित, ६० — 'नभ में निश्चल किंतु चपल थी जल में **तारा**'

६. स्वदेश-संगीत, वृद्ध-विवाह ४९ — 'यारो की **दम** घुटती है'

७. (क) नहुष, ६६ — 'मेरी **देवता** भी और ऊंची उठे'

(ख) शक्ति, ११ — 'सब देवो की एक **देवता** हुई अहा! अव र्तीर्ण'

८. किसान, बाल्य और विवाह, ११ — '**पवन** ...... स्वेद सुखाती थी'

९. किसान, गार्हस्थ्य, २३ — 'खेल रही थी हवा धूल की **फाग**'

१०. साकेत, सर्ग ९, ३८८ — '**बरसें** बीत गईं,

११. हिंदू, स्वाभिमान, ५८ — 'आर्य जाति-जीवन की **माप**'

१२. किसान, प्रार्थना, ९ — '**रसायन** भी सोती है'

१३. हिंदू, जाति-बहिष्कार, १०२ — 'बिना समष्टि रही न रह सकती है **व्यष्टि**'

१४. (क) सिद्धराज, सर्ग ३, ८१ — '**साख** के बिना ही किसी और की'

(ख) हिंदू, होली, ६८ — 'फले सत्याग्रह की **साख**'

(ग) हिंदू, स्वाभिमान, ५५ — 'रही पद्मिनी रूपी **साख**,

इन में **[illegible]** , **ठौर** , **बरस** और **साख** हिंदी और व्रज दोनों भाषाओं में प्राय: संज्ञा पुं० शब्द हैं। **खौर** और **फाग** हिंदी में पुं० हैं। **तारा** , **देवता** और **व्यष्टि** संस्कृत में स्त्री० , किंतु हिंदी में पु० ही है। कवि ने इन शब्दों को संस्कृत की लिंग परम्परानुसार रखा है। ' जंग ' (यहां ' जंक ') और ' **दम** ' फा० पुं० शब्द हिंदी में भी पुं० ही में चलते है ' **पवन** ' संस्कृत और हिंदी मे पुं० ही है। ' **रसायन** ' शब्द संस्कृत में नपुं०, किन्तु हिंदी में पुं० ही चलता है।

इसके विपरीत हिंदी में प्राय: स्त्री रहने वाले शब्दों को कवि ने पुं० में भी लिखा है यथा।

अग्नि[१], आत्मा[२], आय[३], गन्ध[४], चकचौंधे[५], जय[६], झंकार[७], **ढाल**[८], तरंग[९], देह[१०],

---

१. हिन्दू, रामकृष्ण की जय, २१२ — ' **अग्नि** आप कर चुका परीक्षा '

२. (क) वक-संहार, २४ — ' **आत्मा** परन्तु कभी कहीं मरता नहीं '

(ख) जयभारत, एकलव्य, ४८ — ' है **आत्मा** सभी समान '

(ग) वही, अन्त, ४२२ — ' अपना ही **आत्मा** था यह तो '

३. हिन्दू, साधु-सुधार, १३५ — ' और दान-भिक्षा का **आय** '

४. (क) सिद्धराज, सर्ग ५, ११८ — ' **गन्ध** छा गया था '

(ख) जयभारत, कुन्ती और कर्ण, ३३३ — ' इस में उस का **गंध** कहीं '

(ग) हिन्दू, श्रावणी, ७२ — ' फैले नव गौरव का **गंध** '

५. जयभारत द्रौपदी और सत्यभामा, १७५ — ' पल भर हो कर **चकचौंधे** से '

६. (क) वक-संहार, ३८ — ' निज भीम का **जय जय** करो '

(ख) जयभारत, तीर्थ-यात्रा, १६९ — ' **जय** ही **जय** उन्हें था '

७. वैतालिक, ११ — ' क्या ही कल **झंकार** हुआ '

८. अजित, ६६ — ' आगे ही था **ढाल** '

९. (क) हिन्दू दौर्बल्य, ६० — ' एक सिंधु के कोटि **तरंग** '

(ख) हिन्दू, प्रगति, १७३ — ' देखो जल के सकल **तरंग** '

१०. (क) यशोधरा, ४१ — ' सब सहने को **देह** बना '

(ख) जयभारत, अस्त्र-लाभ, १५३ — ' ठण्डा यह **देह** '

निधि[1], **पलक**[2], वायु[3], विनय[4], शरण[5], सुरंग[6]।

इन में जो शब्द संस्कृत में पु०, हिन्दी और व्रजभाषा में स्त्री० हैं वे ये हैं — **अग्नि, आत्मा, आय, क्रोड़, गंध, जय, झंकार, तरंग,** देह, निधि, **वायु** और **विनय**। '**देह**' तो संस्कृत में नपुं० भी है। **चक्रवीर** बूंद और **सुरंग** हिंदी में स्त्री० ही हैं। **बिंदु अवश्य संस्कृत में** पुं० है। कवि पंत ने 'बूंद' को उभय लिंगों में प्रयुक्त किया है। '**पलक**' शब्द फारसी से हिंदी में आया है और स्त्री० ही है। '**ढाल**' और '**शरण**' **संस्कृत में नपुं०** तथा हिंदी में **स्त्री०** ही चलते है।

ऊपर शब्द का वाक्यो में जिन अर्थो मे प्रयोग हुआ है उन के अनुसार ही संस्कृत के लिंगों का निर्देश किया गया हैं।

कुछ नये स्त्री० शब्द ध्यान देने योग्य है। हिंदी में इनका अधिक प्रचलन नहीं है यथा करौंदी[7], डाइनी[8], फेना[9], बुध[10], रणना[11] और शोषणा[12]।

---

१. अंजलि और अर्घ्य, १६ — 'लुटा जा रहा तेरे अर्जन का **निधि**'
२. जयभारत, तीर्थ-यात्रा, १६९ — 'यह सुन अलग-से **पलक** खोले'
३. वही, स्वर्गारोहण, ४४० — 'जो लगा तुम्हारा **वायु** हमें'
४. अंजलि और अर्घ्य, २८ — '**विनय** न छोडा'
५. (क) विष्णुप्रिया, ६९ — 'प्रण-धन का **शरण**'
   (ख) वही, ६८ — 'प्रभु के **शरण** आया'
   (ग) जयभारत, कौरव-पाण्डव, २८ — 'परशुराम के **शरण** गई'
   (घ) वही, द्यूत १३८ — 'नारायण का **शरण** लिया'
६. वही, लाक्षागृह, ६२ — 'उसमे एक अलक्ष्य **सुरंग** रचा'
७. किसान, बाल्य और विवाह, १३ — 'सघन **करौंदी** का निकुंज था'
८. साकेत, सर्ग १०, ३६२ — 'हत होती फिर क्यो न **डाइनी**'
९. प्रदक्षिणा, ५८ — 'सलिल राशियां उमडी फैला कर **फेना**'
१०. कुणाल-गीत, गीत १५, ३३ — 'सुध आती है **बुध** जाती है'
११. अजित, ८० — 'शून्य के लिए शेष रहती है **रणना**'
१२. भारत-भारती, ८४ — 'धर्म्म-धन की **शोषणा**'

हिंदी में 'डाइन' स्त्री० (सं० डाकिनी) पहले ही विद्यमान है अतः 'डाइनी' नव स्त्री० शब्द-रूप ही माना जाएगा। इसी प्रकार संस्कृत का फेन पुं० शब्द यहां स्त्री० में 'फेना' लिखा गया है 'सुध-बुध' द्वन्द्व समास स्त्री० है। 'बुध' का अलग प्रयोग नही होता। यहां 'बुध' स्त्री का कवि ने नव प्रयोग किया है। संस्कृत के 'रणन' पु० और 'शोषण' नपु० से 'रणना', 'शोषणा' स्त्री० शब्द बनाए गए हैं।

वचन

कवि ने बहुवचन शब्दो का प्रयोग करते समय विशेष रुचि-स्वातंत्र्य का परिचय दिया है कुछ उल्लेखनीय शब्द ये हैं —

अधनो[1] ('अधन' से, अर्थ-निर्धनो), अनेको[2], औषधे[3], घूँसे[4] छलों-छन्दों[5], तडिताए[6], तरलाए[7], ताराएं[8], पूनें[9], बाले[10], योधों[11], राजे[12],

---

१. अजित, ७९ — 'धनियों का धन लूट भले अधनों पर वारूं'
२. (क) स्वदेश-संगीत, विचित्र संग्राम, १२९ — 'हमें अनेकों सालों ने'
   (ख) किसान, प्रत्यावर्त्तन, ४८ — 'अन्यान्य अनेकों मनुज'
३. स्वदेश-संगीत, ब्रह्मचर्य का अभाव, ४२ — 'रोक सकती औषधें क्या यह अपार अनर्थ'
४. अंजलि और अर्घ्य, १५ — 'घात रही कितने घर घूसें'
५. राजा-प्रजा, राजा, १० — 'सूक्ष्म छलों-छंदों के'
६. शक्ति, ८ — 'जब हों शाश्वत तड़िताएं एकत्र'
७. वैतालिक, १४ — 'यद्यपि कुछ तरलाएं है'
८. जय भारत, विलाप, ४१२ — 'प्रलयाधकार की-सी ताराएं'
९. साकेत, सर्ग ४, १७२ — 'हो गई-अमावास-सी पूनें'
१०. वैतालिक, १५ — 'बाले नभ : क्षेत्र कृषि की'
११. (क) जय भारत, रण-निमंत्रण, २८९ — 'उन युग्म योधों के सहित'
   (ख) जयभारत, समर-सज्जा, ३४२ — 'यात्री योधों के हुए'
१२. अंजलि और अर्घ्य, ३२ — 'जिसकी राज-सभा में राजे'

राजों[1], व्यक्तियां[2], और स्थलियां[3]।

हिंदी में इन मे से अधिकांश नये ही है। उदाहरणत: '**अनेकों**' बहुवचन सर्वनाम के रूप में तो चलता है किंतु विशेषण के रूप मे इसका प्रयोग व्याकरण सम्मत नहीं है। '**औषध**' संस्कृत मे नपुं० और हिंदी मे पु० ही है। अत: यहा '**औषधें**' स्त्री० बहु० नया ही माना जाएगा। **घूसें** स्त्री० बहु० है। 'छल-छन्द' पु० द्वन्द्व समास का बहुवचन 'छल-छन्दों' चाहिए था। '**छलों-छन्दों**' भी नया ही है। **तड़िताएं, तरलाएं** और **ताराएं** क्रमश: 'तड़िता' (हि०), 'तरला' (स०, हि०), और 'तारा' (स० स्त्री०) के बहुवचन रूप है। '**पूनें**' बहुवचन देशज प्रयोग है। 'बाल' से '**बालें**' बहुवचन बना है। योधा और राजा के बहुवचन योधाओं और राजाओं शुद्ध है, **योधों** और **राजों** नये बहु० रूप ही है। संस्कृत मे 'व्यक्ति' (और 'व्यष्टि') संज्ञा स्त्री० शब्द ही है। हिंदी मे ये पुं० हैं। अत: 'व्यक्तियां' स्त्री० बहु० भी नया प्रयोग ही है। संस्कृत में 'स्थली' स्त्री० शब्द एकवचन में है उसी से बहुवचन बना '**स्थलियां**'।

कुछ अन्य बहुवचन-रूप भी द्रष्टव्य हैं। इन में शब्द एकवचन-रूप में ही हैं यथा **चीत्कार**[4] (यहां पुं० है) **धेनु**[5] **भारत**[6], **यह**[7] (सर्वनाम) और **वायु**[8]।

'**प्राण**[9]' शब्द एकवचन में भी लिखा गया है, जबकि यह सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होता है।

---

१. जयभारत, योजनगंधा, २१ -- 'सब राजो ने मिल'

२. अजित, ९८ — 'करे व्यक्तिया क्यो न साधनाएं कैसी ही'

३. वैतालिक, १५ — 'मारुत मण्डल की **स्थलियां**'

४. जयभारत, स्वर्गारोहण, ४३९ —'सुन पडे करुण **चीत्कार** तभी'

५. स्वदेश-संगीत, वैदिक विनय, १३६ — '**धेनु** प्यारी हों'

६. जयभारत, स्वर्गारोहण. ४३७ — '**भारत** अब **भारत** मात्र न थे'

७. किसान, प्रत्यावर्तन, ५० — 'जब तक **यह** मेरे प्राण रहेंगे तन में'

८. जयभारत, युद्ध ३८३ — '**वायु** भी शिथिल पड़ जाते हैं'

९. अंजलि और अर्घ्य, ९ — 'यहा उसका वह **प्राण**'

संधि

कुछ **दीर्घ स्वर संधियां** ये हे —

आश्रयार्थ, उत्तरार्थ, कल्याणार्थ, कृतार्थ, चिन्ताकुल, तरणार्थ दर्शनार्थ, धनार्थ, निवेदनार्थ, न्यायार्थ, परमार्थ, परार्थ, पुरुषार्थ, प्रेमाश्रुओं, मंगलार्थ, मंत्रणार्थ, मरणार्थ, मृगयार्थ, यतीद्र, योगीन्द्र, रक्षार्थ, विजयार्थ, समर्थनार्थ साधनार्थ, सुधार्थ, स्वागतार्थ, स्वार्थ, हननार्थ, हितार्थ।

इन में 'अर्थ' शब्द के प्रति कवि का विशेष मोह सिद्ध होता है।

कुछ **गुण स्वर संधियां** ये है— अन्नोत्पन्न, कमलेश, आर्योचित, कुलोद्भव, जनोत्कर्ष, दग्धोदर, नामोच्चार, पानेच्छुक, मंत्रोच्चार, मगधेश, यथेच्छ, लंकेश, वृकोदर, वृन्दावनोद्धार, शाखोच्चार, हननोद्योग।

कुछ **व्यजंन संधियां** ये है — जगज्जननी, जगद्देव, जीवन्मुक्त, तड़िच्छटा, तिर्यग्गति, भविष्यच्चिन्ता, महज्जन, विद्युच्छटा, विद्युज्ज्वाला, विद्युद्वाष्प, शरच्चन्द्र, शरन्निशा।

महैश्वर्य और शुद्धौषधिया जैसी **वृद्धि संधियां** बहुत कम है।

कुछ **विसर्ग संधियां** देखे — आशीर्वाणी, छन्दोरचनाएं, ज्योतिर्युग, तपस्त्याग, तेजोनिधान तेजोमय, तेजोराशि, धनुर्वाण, निश्चल, निश्छद्म, निश्शंक, निष्फल, निस्संकोच, निस्सग, निस्सदेह, मनस्काम, मनस्तुष्टि, मनस्तोष, मनोग्लानि, मनोदमन, मनोदुर्बलता, मनोद्गार, मनोबाधा, मनोभवन, मनोमधुप, मनोमुखी, मनोमोद, मनोमृग, मनोव्यथा, यशस्तोम, यशोलिप्सा यशोवितान, और शिरोधार्य।

'मनः' शब्द जोड़ कर विसर्ग संधिया बनाना कवि को प्रिय जान पड़ता है।

समास

कुछ **सम्बंध तत्पुरुष समास** ये हैं।

अनिल-निकट, खाद्य-वृद्धि, गीता-पाठ, गृह-त्याग, दृष्टि-कष्ट, धन-रक्षा, नरक-पीड़ा, नाम-मुद्रिका, प्रसव-कष्ट, रथ-शब्द, राम-समीप, वक-निकट, और

सिंधु-ओर ।

कतिपय **करण तत्पुरुष समास** देखें — अनुराग-भरी, उमँग-भरा, ओस-भरे, **कंटक-विद्ध,** कोष-भरा, खेद-खिन्न, गंध-लिप्त, गौरव-भरा, घोष-भरा, चौंध-भरी त्याग-भरी, प्रेम-भरे, रग-भरा, रग-भरी, रस-पुष्ट, रुधिर-भरे, सुहाग-भरी, शर-विद्ध और शल्य-विद्ध ।

इन में भरा, भरी और विद्ध शब्दों के प्रति कवि का विशेष मोह जान पड़ता है ।

कुछ **अपादान तत्पुरुष समास** ये है — कर्तव्य-विमुख, जन-शून्य, पाप-मुक्त, भस्म-विमुक्त, मर्यादा-रहित, रत्न-शून्य, विषय-विमुख, रिपु-रहित **सिर-रहित और** स्वर्ग-च्युत ।

बहुव्रीहि समास ये है — झष-केतु, दैत्य-काय, राती रात और सिद्ध-शास्त्र ।

कुछ **द्वन्द्व समास** देखिये — अन्न-वस्त्र, गगा-यमुना, ज्ञान-ध्यान, नियम-संयम, रवि-सोम, ललित-गभीर, श्रद्धा-बुद्धि, और हानि-लाभ ।

कर्मधारय समास ये है — अश्रु-सिधु, कनक-कर, काल-पशु, गगन-शिला, जीवन-तरी, तरङ्ग-कर, देह-रथ, नर-पशु, प्राण-रत्न, **ब्रिटिश-सिंह**, **भुज-उपधान**, मन-मयूर, मानस-हस, रवि-चक्र, विघ्न-मक्षिका, विपद-नद, विश्वास-केतु, सत्य-सिधु, समय-सागर और हृदय-हंस । इनमे अधिकतर उपमानोत्तरपद समास है ।

कुछ **विविध समास** ये है — अचर-धन, अग्नि-परीक्षा, क्रीड़ा-तरी, गुण-गीता, **घर-प्रेरी, चित-चोते,** त्राण-कवच, पाप-क्षमा, **रंग-विहंगों**, राम-रस, और **हित-चेता** ।

'स' जोड़ कर बनने वाले **अव्ययीभाव समास** भी है यथा सक्रोध, सच्छिद्रा, सपुच्छ, सलज्ज, सव्याज, ससकोच, सशपाप, सहृदय, और सोत्साह ।

शब्द-लोप

गुप्त जी ने शब्द-लोपी वाक्यों का भी विन्यास किया है । अनेक स्थलों पर **का, की, ने, में और से** शब्द लुप्त से जान पडते है । उदाहरण ये है —

१. उसकी प्रभा (का) प्रकाश करो।[1]

२. (क) विदुर (की) कृपा से कर छद्म धर[2]

(ख) भीष्म (की) ओर देख[3]

(ग) प्रभु की नाम (की) मुद्रिका दे कर[4]

(घ) बुद्धि (की) शरण लो[5]

३. दुग्ध-धरा पर रुधिर-धार (ने) ही बहना है क्या ?[6]

४. (क) सम्मुख सुधा ही दृष्टि (में) आती है[7]

(ख) कौरव-पांडवों के साम्राज्य (में) भी तो यह देखना है[8]

(ग) रहें राम वन (में) चौदह वर्ष[9]

५. (क) तटस्थ हो कौतुक दूर (से) देखू[10]

(ख) तदपि राम के क्रम (से) लक्ष्मण थे
और भरत के क्रम (से) शत्रुघ्न[11]

कही दो कारक शब्द भी लुप्त हैं यथा ' में से '।

तुम (में से) अधिकांश यहा की सृष्टि[12]

---

१. वैतालिक, ८
२. जयभारत, हिडिम्बा, ६३
३. वही , इन्द्रप्रस्थ , ११९
४. प्रदक्षिणा , ५५
५. हिंदू , शास्त्र , १६८
६. जयभारत , शांति - सदेश , ३१९
७. सिद्धराज , सर्ग ३ , ६९
८. जयभारत , अनाहूत , २९५
९. प्रदक्षिणा , २९
१०. जयभारत , अनाहूत , २९५
११. प्रदक्षिणा , १०
१२. हिंदू , मुसलमानो के प्रति , १८९

अन्य शब्द विकार

कुछ विशेष शब्द - विकार ये हैं —

अकस्मात [1] (त्), अचुल [2] (असुर — शिशु भाषा), इन्ही [3] (इन ही), कदाचित [4] (त्), चतुर्दिक [5] (क्), तुम्ही [6] (तुम ही), धिक [7] (क्), प्रती [8] (प्रति), मालू [9] (मारूं — शिशु - भाषा), मुझी [10] (मुझ ही), राजन [11] (न्), हठात [12] (त्),

---

१. (क) राजा - प्रजा , प्रजा , ४४ — ' **अकस्मात** उठ कर उभरेंगी '

(ख) सिद्धराज , सर्ग ४ , १०२ — ' बोध **अकस्मात** ही '

(ग) विष्णुप्रिया , २६ — ' **अकस्मात** भावावेश से '

(घ) वही , ३२ — ' फिर वह **अकस्मात** '

२. वक - संहार , २० — ' मालू **अचुल** को मै अभी '

३. अजित , ४३ — 'दिया मत - स्वातन्त्र्य **इन्हीं** ने '

४. अजित , १०० — ' नही **कदाचित** कर सकती है '

५. (क) राजा - प्रजा , राजा , १३ — ' रोर **चतुर्दिक** फैला '

(ख) विष्णुप्रिया , ८७ — ' होता है हर्षोल्लास **चतुर्दिक** '

६. (क) किसान , प्रार्थना , ६ — ' **तुम्हीं** ने कृषक - वश मे '

(ख) किसान , फिजी , ४४ — ' **तुम्हीं** सुध लीजो '

७. (क) किसान , फिजी , ४३ — ' **धिक** है उसको '

(ख) जयभारत , योजनगधा , २४ — ' **धिक** है मुझे '

८. साकेत , सर्ग ५ , १३१ — ' जैसा है विश्वास मुझे उनके **प्रती** '

९. वक - सहार , २० — ' **मालू** अचुल को मै अभी '

१०. किसान , सर्वस्वात , ३० — ' **मुझी** से काम था '

११. पत्रावली , पृथ्वीराज का पत्र, ९ — ' हे **राजन** ! '

१२. विष्णुप्रिया , ११० — ' आ गई **हठात** हंसी '

हमीं[1] (हम ही)

नव शब्द

कुछ शब्द-प्रयोग विशेष रूप से विवेचनीय है : —

अक-बक[2] , अनुग्लानि[3] , आलोक - चित्र-पट[4] , कृषिकर[5] , गान-धनी[6], जंट-लंठ[7] , दूरक[8] , निबुक[9] , निहुरे[10], बन्दर-बाँट[11], बोदर[12], लंकासुर[13] वृक्षाली[14] , सिरोही[15] ,

---

१. (क) राजा - प्रजा , राजा , ३० — ' **हमीं** जब कर्त्ता धर्त्ता '

(ख) वही प्रजा , ३८ — प्रकट **हमीं** से हुई '

(ग) किसान, प्रार्थना , ७ — ' **हमीं** है भूखों मरते '

(घ) अजलि और अर्घ्य, १० — ' बुझा कर आप **हमीं** ने '

२. सिद्धराज , सर्ग २, ४४ — ' **अक-बक** भूल , हुई हार इसी वीच में '

३. प्रदक्षिणा , २७ — ' प्रकट प्रथम उन्ही मे **अनुग्लानि** ककेयी में '

४. हिन्दू, सतान-वृद्धि , १४८ — ' है आलो**क-चित्र-पट** डिम्ब '

५. किसान , प्रार्थना , ८ — ' **कृषिकर** हो कर हम '

६. सिद्धराज , सर्ग ३ , ५५ — ' **गानधनी** सोरठ का , मानधनी राना था '

७. अजित , १० — '**जंट-लंठ** , डी० एम० डंम है मेरे लेखे '

८. जयभारत , स्वर्गारोहण , ४३८ — ' ये उभय परस्पर पूरक है अथवा **दूरक** '

९. कुणाल-गीत , गीत ३१ , ५२ — ' निकले क्या नूपुर **निबुक** आ। '

१०. अजित , ७६ — ' **निहुरे निहुरे** नही , ऊंट पर चढ़ कर धाया '

११. अजित , ३७ — ' पर यह **बंदर-बाँट** इन्ही के लिए बचा था '

१२. शक्ति , २१ — ' बच्चो पर ही चल सकती है **बोदर** की वह मार '

१३. हिन्दू , स्वावलंब , १२३ — 'कल जावे घर मे ही सूत , लगे न **लंकासुर** की छूत '

१४. वैतालिक , ११ — हरी-भरी वर **वृक्षाली** '

१५. सिद्धराज , सर्ग १ , २३ — ' सुन्दर **सिरोही** शस्त्र-वस्त्र मेरी ओर से '

सुधहारी [1], हम्बा [2] और हला [3]।

हिंदी में '**अक बक**' [4] [हि० अक+वक ('बकना')] का अर्थ है — 'इधर-उधर की निरर्थक बात करना'।

'**अनुग्लानि**' सं० स्त्री० में 'अनु' उपसर्ग का अर्थ है—पीछे (होने वाली) यथा अनुगमन, अनुगायन आदि मे है।

'**अलोक-चित्र-पट**' का कवि ने स्वयं ही अर्थ दिया है — फोटो खीचने के प्लेट। हिंदी में 'आलोक-चित्रण' [5] पुं० (स० त०) का अर्थ है — 'एक वैज्ञानिक प्रक्रिया जिसमें प्रकाश मे रखी हुई वस्तु की छाया या प्रतिबिम्ब इस प्रकार ग्रहण किया जाता है कि उस पर से उसका चित्र छप जाता है (फोटोग्राफ़ी)

'**कृषिकर**' पु० मे 'कर' प्रत्यय का अर्थ 'करने वाला' है यथा दिनकर, भयकर और सुखकर में है। यहा अर्थ हुआ — 'कृषि करने वाला, कृषक'।

'**गान - धनी**' पुं० बहुव्रीहि समास है। अर्थ — 'वह जो गान-विद्या में कुशल हो'।

'**जंट** - लंठ' पु० शब्द 'गवार - मूर्ख' अर्थ में है। देशज शब्द 'लंठ' मूर्ख अर्थ में पहले ही विद्यमान है। 'जंट' भी उसी के अनुकरण पर घड़ा गया है।

'**दूरक**' वि० यहां 'दूर करने वाला', विरोधी' आदि अर्थ रखता है। यह भी नया शब्द है।

व्रजभाषा में '**निबुकना**' अ० क्रि० (सं० निर्मुक्त, प्रा० निम्मुत्त) का अर्थ है — 'बधन का ढीला हो कर खिसकना'। यहा '**निबुक**' का अर्थ है ढीले (वि०), या ढीले हो कर, खिसक कर।

---

१. अजित, ६९ — 'लूट रहे है हम सुहाग किस **सुधहारी** का'

२. विष्णुप्रिया, ३७ — "... '**हम्बा**' कर सन्न हुई अम्बा"

३. विष्णुप्रिया, १७ — 'तो आ **हला**! ...'

४. तुल० '**अकबक** बोलत बैन कह्यौ हम तुम्हैं बिकैहैं' (रत्नाकर)

५. मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड — दे० शब्द 'आलोक-चित्रण'

व्रजभाषा में ही ' निहुरना ' (या निहुड़ना) अ० क्रि० ' झुकना ' या ' नीचे होना ' अर्थ में है । यहां ' **निहुरे निहुरे** ' (अव्यय) का अर्थ है - झुके झुके , नीचे हो कर (पैदल)

' **बंदर - बाँट** ' स्त्री० नवीन सामासिक शब्द है । यह उस शिशु - कथा पर आधारित है जिस में एक बंदर दो बिल्लियों को न्याय का आश्वासन दे कर उनकी रोटी स्वयं हड़प जाता है अतः ' बंदर - बाँट ' का अर्थ हुआ ' ऐसा स्वार्थपूर्ण बँटवारा जिस में न्याय के नाम पर अन्याय किया जाए और उभय पक्षों को उनके भाग से वंचित कर दिया जाए । ' यहां पु० रूप में प्रयोग है ।

' **बोदर** ' सं० स्त्री शब्द का स्वयं कवि ने ' पतली छड़ी ' अर्थ लिखा है । ' बोदा ' वि० (कमज़ोर, पतला, खोखला) से इसका सम्बंध हो सकता है ।

' **लंकासुर** ' स० पु० शब्द ' लंकाशायर ' का हिन्दी संस्करण है ।

' **वृक्षाली** ' स्त्री० (स० वृक्ष+आली) शब्द ' द्रुमाली ' का पर्याय है । अर्थ — ' वृक्षों की पंक्ति ' ।

' **सिरोही** ' स्त्री० शब्द का अर्थ है — राजपूताने के सिरोही रियासत[1] के एक नगर की बनी हुई लचीली और बढ़िया तलवार ।

' **सुधहारी** ' स्त्री० शब्द नवीन समास है । अर्थ-जो अपनी सुध-बुध हार बैठी है ।

' **हम्बा** ' (अव्यय) शब्द सहमति या स्वीकृति का सूचक है (हां) । प्रायः राजस्थानी भाषा में ही इस का प्रयोग अधिक होता है ।

' **हला** '[2] (अव्यय) शब्द ' सखी ' के लिए स्त्री-जाति का प्रसिद्ध सम्बोधन है । संस्कृत में ' **हला** ' स्त्री० शब्द सखी ' अर्थ मे भी है । उदा० ' **हला** शकुन्तले अत्रैव तावन्मुहूर्त्तं तिष्ठ ' ।

---

१. कृषक जीवन सम्बधी व्रजभाषा शब्दावली , सुमन , द्वितीय खण्ड , २६५

२. संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ , तुल० ' **हला** शकुन्तले अत्रैव तावन्मुहूर्त्त तिष्ठ '

प्रिय शब्द

कवि गुप्त की प्रिय शब्दावली इस प्रकार है —

अकस्मात् , अखती , अगति , अजातरिपु , अडोल , अनरीति , अनुग , अनुचरी , असमय , असीस , आँवरे , आस्फानल , आहव , उजियारी , उद्देश , कुफल कृती , चतुर्दिक् , चरित , जगत् , जिष्णु , जीवन्मुक्त , टुक , टेक , तदपि , तनु , तुम्हीं , दर्शनार्थ , दुर्गति , दुर्लभ , दैवात्, धिक् , निदेश , निरापद , पण , पुनर्नवता , प्रकटित , प्रतिभात , फिजी , बाया , बेर , बेरोक , भगवान् , भरपाई , भागी , भान , भावुक , भेट , भेटने , मख , मानी , मित्रचक्षु , मिष , मुझी , मुहँ , यथेष्ट , यदपि , याग , रक्ताक्त , रणछोड़ , लक्ष , लेखता , वर्वर , विश्रुत , विश्वात्मा , शरण , सतत , सदय , सनाथ , समुचित , सलौनी , सवेग , ससंभ्रम , सहर्ष , सहृदय , साका , सुकर्म , सुकृत , सुकृति , सुफल , सुयोग्य , स्वत्व , हमी और हली ।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि गुप्त ने अपनी रचनाओ में प्रचुर मात्रा मे ध्वन्यात्मक शब्द - सम्पत्ति समेटी है । कुछ उदाहरण पर्याप्त होगे :—

अश्रु , निर्झर और सुरसरित ' **झरझर** ' [१] करते हुए झरते है और तारे , फूल और सलिल ' **झिलमिल** ' [२] करते हुये झिलमिलाते है । नदी की धारा ' **झलमल**

---

१. (क) (i) अजित , ४० — ' अश्रु बन बरसे **झरझर** '

(ii) विष्णुप्रिया , ३५ — ' **झर - झर** आसू '

(ख) हिंदू , हर हर महादेव , २१४ — ' बहे शान्त - निर्झर **झर - झर** '

(ग) कुणाल - गीत , गीत ५२ , ७७ — ' क्या सुरसरित **झर झर** नदी है ? '

२. (क) वही , गीत १३ , ३० — ' करे तिमिर में तारे **झिलमिल** '

(ख) जयभारत , अस्त्र - लाभ , १५१ — ' **झिलमिल**-माला के फूल '

(ग) विष्णुप्रिया , ६९ — ' धवल **झिलमिल** सलिल '

झलमल ढलमल ढलमल '[1] के द्वारा अपनी लहरों के उत्थान - पतन को शब्द - बद्ध करती है। आग और हिया दोनों '**धकधक**'[2] जलते है।

पवन के चलने का शब्द है '**घन - घन , झन - झन , सन - सन**'।[3] '**सन - सन**'[4] तो वन और श्वसन की भी ध्वनि है। यहा शून्य '**सां सां**'[5] और सन्नाटा '**सायँ सायँ**', '**भायँ भायँ**'[6] करता है। वर्षा '**रिमझिम रिमझिम**'[7] करती बरसती है।

पशु - पक्षियों में कौए '**कांव कांव**',[8] मधुप **गुन - गुन**,[9] दादुर '**टर - टर**[10]', गाये **बाँ - आँ**, और **बां - बां**[11],

---

१. साकेत, सर्ग ९, ३०२ — 'नदी की धारा **ढलमल ढलमल......झलमल झलमल**'

२. (क) पत्रावली, औरंगजेब का पत्र, २१ — '**धक-धक** जलती है'

(ख) किसान, बाल्य और विवाह, १६ — '**धक-धक** करता रहा हिया'

३. साकेत, सर्ग ११, ४४० — '**घन-घन झन-झन सन-सन** निस्वन'

४. (क) कुणाल - गीत, गीत १९, ३३ — 'रही एक **सन-सन** इस वन में'

(ख) वही, गीत ८३, ११९ — 'रहा श्वसन ही करता **सन - सन**'

५. सिद्धराज, सर्ग २, ४० — '**साँ - साँ** कर शून्य भी'

६. (क) जयभारत, स्वर्गारोहण, ४३९ — 'रह **सायँ सायँ**...इस **भायँ भायँ**'

(ख) प्रदक्षिणा ४४ — '**भायँ भायँ** कर उठा किंतु वन'

७. जयभारत, द्रौपदी और सत्यभामा, '**रिमझिम रिमझिम** रस की बूंदें'

८. राजा - प्रजा, राजा, १६ — 'इस **कांव - कांव** मे पिक - विकास **क्या** होगा'।

९. वैतालिक, १२ — '**गुन - गुन** सगुण गान कर के'

१०. राजा - प्रजा, राजा, २३ — '**टर - टर** कर दादुर'

११. (क) अजित, ८६ — 'गाय - सी वनस्थली की व्याकुल **बाँ - आँ**'

(ख) गुरुकुल, २१८ — 'गायों का मरना **बां - बां** करना'

व्यालाभनभन [१], शूकर '**घुर घुर** [२]', चातकियां '**पी - पी** [३]' और मच्छर '**भिन भिन घिन घिन** [४] करते हैं।

अस्त्र-शस्त्रों और वाद्य-यत्रों की ध्वनियां भी दर्शनीय हैं। खड्ग **खन - खन** [५], शूल '**चम चम**' [६], डमरू **डम - डम** [७], तोपें **धां - धां** [८], दुनाली गायें **धायें** [९], रण - भेरी **घनन - घनन** [१०], गोली **ठायें ठायें**, **धां - आं**, धायं और सन - **सन** [११] करती है। **झन - झन**, **घन - घन** [१२] समर - वाद्यों की सामान्य ध्वनि है। रथ '**झनन झनन**' [१३] करते दौडते हैं और युद्ध होता है **घन - घन, झन - झन, सन - सन**। [१४]

---

१. यशोधरा, २२ — '**भन - भन** करता यह काल - व्याल'

२. जयभारत, अस्त्र - लाभ, १४९ — 'सुन घुर - घुर घोर'

३. वही, द्रौपदी और सत्यभामा, १७४ — '**पी - पी** कर चहकी चातकियां'

४. हिंदू, भीतर, १५४, 'मच्छरों का उत्पात दिन में **भिन-भिन**, **घिन-घिन**'

५. सिद्धराज, सर्ग २, ४५ — 'खड्ग द्वय **खन - खन** कर के'

६. वही, सर्ग १, २४ — 'शूल **चमचम** होते थे'

७. हिंदू, हर हर महादेव, २१४ — '**डम - डम - डम** डमरू का स्वर'

८. गुरुकुल, २३३ — '**धां-धां** कर उसकी तोपो ने'

९. अजित, २० — 'हुई **धायें** कर'

१०. साकेत, सर्ग १२, ४६३ — '**घनन घनन** बज उठी ... रण - भेरी,

११. (क) अजित, ८८ — 'कर के यों ही **ठांय ठांय**'

(ख) अजित, ८६ — 'सुनी अचानक मै ने **धाँ - आँ**'

(ग) अजित, ९७ — '**धायें धायें** रह गई'

(घ) अजित, ८३ -- '**सन - सन** कर के निकल गई गोली'

१२. साकेत, सर्ग १२, ४६५ — '**झन-झन घन-घन** समर-वाद्य'

१३. सिद्धराज, सर्ग १, २५ — '**झनन झनन** नाद हो रहा था **रथ** का'

१४. प्रदक्षिणा, ६४ — '**घन-घन, झन-झन, सन-सन ... हन-हन**'

ओस - कण , इन्दु , जल और निष्क सिवके सब ' झलमल ' [1] करते हुये झलमलाते हैं। रक्तस्रोत ' भल भल ' [2] करते उमड़ते हैं। ' खल भल ' [3] उबलने की ध्वनि है। ' भक ' [4] से ज्वाल जलती है और झक झक [5] करके फुलझड़ियां।

आंसू झर - झर और टप - टप [6] टपकते है। घट भरते है। भर - भर [7] और पिचकारियां चलती है — अररर - सररर। [8]

ताण्डव नृत्य होता है तर - तर [9]। ' रुनझुन ' [10] नूपुरों की और छमाछम नृत्य की ध्वनियां हैं।

' दम - दम [11] भी एक विशेष ध्वनि है और धमाक - धमाधम [12] भी।

---

१. (क) कुणाल - गीत , गीत ११ , २६ — ' झलकेंगे तुझ पर झलमल '

(ख) वही , गीत ३८ , ६० — ' नील गगन मे झलमल करता '

(ग) वही , गीत ८२ , ११८ — जना रहा है तू सब झलमल '

(घ) जयभारत , स्वर्गारोहण , ४४२. ' झल - मल कर निष्क निकल आया '

२. साकेत , सर्ग ११, ४४३ — ' भलभल कर रक्तस्रोत उमड़ते थे '

३. कुणाल - गीत , गीत २९ , ४९ — खलभल उबल रहा है मानस '

४. जयभारत , अर्जुन का मोह , ३५६ — ' उठे भक से जल जैसे ज्वाल '

५. वही , द्रौपदी और सत्यभामा , १७४ — ' झक झक कर फुलझड़िया '

६. (क) विष्णुप्रिया , ३५ — ' झर - झर आँसू बह उठे '

(ख) जयभारत , कुंती और कर्ण . ३३१ — ' वह टप - टप आँसू टपकाती '

७. कुणाल - गीत , गीत ५२ , ७७ — ' क्या अमृत-घट भर-भर नही है '

८. सिद्धराज , सर्ग ५ , १२८ — ' सररर धार छोडी , अररर कर के '

९. हिंदू , हर हर महादेव , २१४ — ' हो तेरा ताण्डव तर-तर '

१०. जयभारत , हिडिम्बा , ६५ — ' नूपरों की रुनझुन '

११. अजित , २४ — ' हुई ध्वनि दमदम करती '

१२. राजा - प्रजा , राजा , ८ — ' अहंकार है और धमाक - धमाधम '

थप्पड़ '**तड़ - तड़**' [१] करते हुए लगते हैं। '**तड़ाक**' [२] शब्दों की ध्वनि है। पग '**डगमग**' [३] चलते हैं। **थर - थर**, **हहर - थहर** [४] 'कम्पन' को मूर्त करते हैं। मद्य - मांस '**मह - मह**' [५] महकते हैं। दाँत बजते है '**घन - घन**' [६]।

चक्की '**चरमर**' [७] और रहँट **घरर - घर्घर** और **चरर - चर्मर** [८] करते चलते हैं।

---

१. शक्ति, १४ — 'थप्पड़ मार फिर **तड़ - तड़**'

२. जयभारत, हिडिम्बा, ७० — 'हुआ **तड़ाक** शब्द घोर'

३. जयभारत, युद्ध, ३९० — 'पग **डगमग** थे'

४. (क) विष्णुप्रिया, ३५ — '**थर - थर** काँपी देह'

(ख) जयभारत, लक्ष्य - वेध, ९९ — 'रुक गया वहीं वह **हहर - थहर**'

५. अजित, ४९ — '**मह - मह** करते मद्य - मांस'

६. जयभारत, सैरन्ध्री, २६६ — 'दाँत पीस कर लगे दबाने वे **घन - घन** से'

७. अजित, १३ — 'पिसा चक्की में **चर - मर**'

८. कुणाल - गीत, गीत ५२, ७७ — 'घरर - घर्घर नहीं है ... **चरर चर्मर** नहीं है'

श्री माखनलाल चतुर्वेदी

संज्ञा

चतुर्वेदी जी की काव्य-भाषा का अध्ययन करते समय जो संज्ञाएं विशेष रूप से हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं वे इस प्रकार हैं —

अकुलातो [1], अपनपा [2], उडेल [3], उजड़तों [4], उठनों [5], ऊंचों [6], ऊगन [7], कहन [8], किरनीलेपन [9], खिलन [10], ख्याली [11], चटखन [12],

---

१. हिमतरंगिनी, ५१ — 'अकुलातों का गिरिधर है'
२ हिमकिरीटिनी, हिमकिरीटिनी, १५१ — 'पत्ते अपनपा भूल'
३. हिमतरंगिनी, ८५ — 'आंखों की उंडेल के साथी'
४. समर्पण, एक तुम हो, ५६ — 'आ कर उजड़तों को बचा'
५. माता, नव भारत, ५१ — 'जय, उठतों के आवेश'
६. माता उच्चत्व से पतन स्वीकार था, १०४ — 'तुम विमल ऊंचों की कथा'
७. वेणु लो गूंजे धरा, कविता २, २ — 'जग की ऊगन को पहिचाने'
८. वही, कविता ६१, ८१ — 'अपनी कहन कह कर दिखाओ'
९. हिमकिरीटिनी, अंधकार, १३२ — 'किरनीलेपन की अगवानी संभव है'
१०. वेणु लो..., कविता १०, १४ — 'यह ऊगन, यह खिलन धन्य है'
११. हिमकिरीटिनी, छिपू ? किस में ? ३१ — 'उस काले काले से ख्याली में'
१२. वेणु लो..., कविता ३०, ३९ — 'चटखन पर बन मुसक चढ़ो'

झूलनियां [१], डूबतों [२], तरलाई [३], तिलकत्व [४], दरदी [५], दुहराहट [६], दूखों [७], पिछड़न [८], पिसतो [९], बरस [१०], बरसन [११], भरपाई [१२], भूलनियां [१३], मनचाही [१४], लहरी [१५], श्रेष्ठतमता [१६], सफ़दी [१७] हरियाला [१८], हिलोरबाजियां [१९], हीतल [२०]।

इन में अकुलातों, उजड़तों, उठतों, डूबतों, पिसतों — अकर्मक क्रियाओं

---

१. आधुनिक कवि, तोतली बोली, १५४ — 'यह गोदी का रूप बन गई झूले की झूलनियां'
२. युग-चरण, जय तुम्हारी जय, ८ — 'डूबतों के पुण्य ओ अक्षय'
३. हिमकिरीटिनी, वेदना-गीत से, १०३ — 'वायु विनिन्दित तरलाई'
४. हिमकिरीटिनी, तिलक, ८३ — 'अपना तिलकत्व दिखावेंगे'
५. हिमतरंगिनी, ७६ — 'दरदी को दरदी पहचाने'
६. हिमकिरीटिनी, गान, १३९ — 'दुहराहटों के दाग'
७. वेणु लो ..., कविता ६२, ८३ — 'दुखियो की दूखों पर ..'
८. हिमकिरीटिनी, बिदा, ३४ — 'पिछड़न प्यारी'
९ माता, रामनवमी, २६ — 'आ पिसतों के हृदय'
१०. आधुनिक कवि, नयन की बरस ४७
११. वेणु लो ..., कविता २२, २८ — 'पिछले दरवाजे यह बरसन'
१२. मरण-ज्वार, चलो सजाओ मैं य, ५१ — 'समय की भरपाई के दिन आये हैं'
१३. आधुनिक कवि, तोतली बोली, १५४ — 'भूल भूल भूलनियां'
१४. हिमकिरीटिनी, सिपाही, ५० — 'मुट्ठी में मनचाही'
१५. आधुनिक कवि, प्रहर प्रहर के प्रहरी, ७९ — 'ओ तुम लहर लहर के लहरी'
१६. माता, देश में ऐसे बालक हो, ४० — 'श्रेष्ठतमता का होवे नाश'
१७. हिमकिरीटिनी, मरण-त्यौहार, २९ — 'सहसा सफ़दी बह उठी'
१८. आधुनिक कवि, मन्द चलो, ६२ — 'सारा हरियाला दूवो का'
१९. समर्पण, तन की मरोर, १९ — 'हिलोर की हिलोरबाजियां न खोज'
२०. हिमकिरीटिनी, झरना, ८ — अवनी-तल क्या हीतल में'

से बनाई गई नयी संज्ञाएं हैं। 'ऊंचा' विशेषण से बनी 'ऊंचों' संज्ञा भी नया प्रयोग है। ये सभी संज्ञाएं बहुवचन मे हैं।

व्रजभाषा मे 'अपनपा' स० पुं० शब्द (हिं० अपन + पा [प्रत्यय]) के अर्थ हैं — 'आत्मभाव, सज्ञा, सुध, आत्म-गौरव'।

हिंदी में 'उँड़ेलना' या 'उड़ेलना' स० क्रि० (सं० उद्धारण=निकालना अथवा उदीरण=फेकना) है। यहा 'उंडेल' उसी का संज्ञा-रूप है। यह नया शब्द-प्रयोग है।

इसी प्रकार अ० क्रि० 'ऊगना' व्रजभाषा में है। उसी से 'ऊगन' यह नव संज्ञा बनी है। अर्थ — 'उदय होने का भाव या क्रिया'।

व्रजभाषा मे भी 'कहनि [1]' स० स्त्री० शब्द (सं० कथन, प्रा० कहन) है। यहा 'कहन' का अर्थ 'वचन', 'उक्ति' भी हो सकता है।

हिंदी मे 'किरनारा [2]' वि० (हि० किरन+आरा) शब्द 'किरणों वाला' अर्थ में है। 'किरनीले' वि० (हि० किरन+ईले प्रत्यय) भी उसी अर्थ में है। 'पन' परप्रत्यय जोड़ कर भाववाचक सज्ञा बनी — 'किरनीलेपन'। 'परप्रत्यय' पदो के पश्चात् लगा करते है। [3]

'खिलना' अ० क्रि० मे ही 'खिलन' [4] स० स्त्री० शब्द बना है। अर्थ 'प्रसन्न होना, खिलना'।

हिंदी में 'ख्याली' [5] वि० के अर्थ हैं — कल्पित, सनकी, वहमी, खिलाड़ी, कौतुकी। वस्तुत: 'ख्याली' अरबी वि० शब्द है जिसका प्रमुख अर्थ 'काल्पनिक' ही है।

'चटखना' अ० क्रि० से 'चटखन' संज्ञा स्त्री० शब्द बना है।

---

१. तुल० — वह करनि, कहनि यह — (सूर० ५९८)
२. उदा० — कनिकार कल कुसुम कांति कोमल किरनारे (रत्ना०)
३. हिंदी में प्रत्यय विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रेति:, ७२ - ७३।
४. तुल० — वह हिलनि मिलनि खिलन — (सूर० २१०७)
५. तुल० 'अनत बिरमि कतहूं रहे बहु नायक ख्याली'

व्रजभाषा में 'झूलना' अ० क्रि० (सं० दोलन) से 'झूलनि'[1] सं० स्त्री० शब्द भी है। उसी का यहा बहुवचन है 'झूलनियां'। यह शब्द-रूप हिंदी की प्रकृति के अनुसार बनाया गया है।

'तरलाई' (सं० तरल + आई प्रत्यय) का यहा अर्थ है 'चचलता या बहने का भाव'।

'तिलकत्व' का अर्थ है 'तिलक नाम का गौरव, सार्थकता।'

फ़ारसी में 'दरदी' स० स्त्री० शब्द का अर्थ है 'दर्द का भाव'। वहां 'बेदर्दी'[2] शब्द का अर्थ है दर्द का अभाव, निर्दयता। कवि ने यहा 'दरदी' सं० पु० शब्द का अर्थ लिया है- 'जिसमें दर्द हो'। यह शब्द फ़ारसी के 'बेदर्द' विशेषण का ठीक विलोम या विपरीतार्थक है।

'दुहरा' वि० मे 'आवट' पर-प्रत्यय जोड़ा जाता है 'आहट' नहीं।[3] अतः 'दुहराहट' भाववाचक सज्ञा के रूप में नवीन प्रयोग ही है।

व्रजभाषा में 'दूख' (हि० दुख) स० पु० शब्द 'कष्ट, पीड़ा,' आदि अर्थों में है। यहां 'दूखों' उसी का बहुवचन है। दक्खनी हिंदी मे 'दुःख' से 'दूक'[4] हो जाता है। विसर्ग लोप से ही 'दुःख' के पूर्व स्वर का यहां दीर्घीकरण हो गया है।[5]

'पिछड़ना' अ० क्रि० से ही 'पिछड़न' भा० सज्ञा बनी है। इसी प्रकार 'बरस' और 'बरसन' सज्ञाओं के मूल में 'बरसना' अ० क्रि० ही है।

'भरपाई' सं० स्त्री० शब्द (हि० भरना+पाना) का अर्थ है—'शेष (धन आदि) पा जाने का भाव'।

'झूलनियां' सज्ञा की भांति 'भूलनियां' भी नया शब्द-प्रयोग है। व्रजभाषा में 'झूलनि' संज्ञा तो है 'भूलनि' नही। यहां 'भूलनियां' बहु० सज्ञा 'भूलों' से मिलते-जुलते अर्थ मे है।

---

१. तुल० 'कहीं लता तरु तरु प्रति प्रति झूलनि' (सूर० ३०११)
२. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, मद्दाह, दे० बेदर्द, बेदर्दी
३. हिंदी में प्रत्यय विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति: , १२९
४. (i) तुल० ये दूक उसकूं (शाह बुरहानुद्दीन जानम का 'इर्शाद नामा')
(ii) तुल०—यू दूक घनेरा घेर्या अब—(अली आदिल शाह)
५. दक्खिनी हिंदी का उद्भव और विकास, डॉ० श्रीराम शर्मा, १०१, १२०

'**मनचाही**' सं० स्त्री० शब्द के मूल में 'मनचाहा' पुं० वि० ही है। यहां 'मनचाही' स्त्री० वि० नही है।

संस्कृत में 'लहर' अर्थ में 'लहरि' या 'लहरी' सं० स्त्री० शब्द० भी हैं। विशेषण रूप में इसका एक अर्थ 'आनन्दी या मनमौजी' है। यहां दूसरा अर्थ ही ठीक जान पडता है।

'**तम**' एक प्रत्यय है जो संस्कृत विशेषणों के अंत में लगकर 'सब से बढ़कर' अर्थ देता है। किन्तु 'श्रेष्ठ' वि० शब्द का अर्थ ही है —सब से अधिक सुन्दर, या अच्छा। प्रथम अर्थ तो ऋग्वेद में भी मिलता है।[1] इस वेद में ही 'श्रेष्ठ' का 'अच्छा' यह सामान्य अर्थ भी विकसित हो जाता है। महाभारत आदि ग्रंथों में 'तर' (तरप्) और तम (तमप्) प्रत्यय लगा कर 'श्रेष्ठतर' और 'श्रेष्ठतम' शब्द प्रयुक्त हुए है। "आजकल हिंदी में 'श्रेष्ठ' शब्द में सर्वाधिकता के भाव को न समझे जाने के कारण, सबसे अच्छा 'सर्वोत्कृष्ट' के लिए पुन: सर्वाधिकतासूचक 'तम' प्रत्यय लगा कर 'श्रेष्ठतम' शब्द का प्रयोग किया जाता है।"[2] यहां 'ता' जोड़कर '**श्रेष्ठतमता**' भा० संज्ञा बनाई गई है।

फारसी में 'सपेदी' और 'सफेदी' दोनो भाववाचक संज्ञाएं हैं। '**सफ़दी**' श्वेतता; शुभ्रता के अर्थ मे कवि की निजी निर्मिति है।

यहा 'हरियाली' संज्ञा से ही '**हरियाला**' पु० शब्द बना है। आग़ा हश्र काश्मीरी के 'मिलवर काग' नाटक मे भी पात्र गाते है — 'कैसा छाया है हरियाला'[3]

हिंदी मे 'हिलोर' सं० स्त्री० शब्द (सं० हिल्लोल) 'लहर' अर्थ में है। 'बाज़ी' फ़ारसी का एक प्रत्यय है जो 'शौक, व्यसन' के अर्थ मे शब्दों के अन्त मे लगा करता है यथा कबूतरबाज़ी, जल्दबाज़ी, दग़ाबाज़ी, धोखेबाज़ी, नखरेबाज़ी, पतंगबाज़ी, बमबाज़ी, बहानेबाज़ी। इन शब्दो के साम्य पर ही '**हिलोर-बाज़ियां**' शब्द गढ़ा गया जान पडता है। यहां 'चचलताएं' अर्थ संभव है।

व्रजभाषा 'में हृदय' अर्थ मे हीअ, हीअरा, हीआ आदि शब्द है। यहां 'ही'

---

१. श्रेष्ठो जातस्य रुद्र श्रियासि (२.३३.३), दश शता सह तस्थुस्तदेक देवानां श्रेष्ठं वपुषामपश्यम् (५.६२१)

२. हिंदी मे प्रयुक्त संस्कृत शब्दो के अर्थ-परिवर्तन, डॉ० केशवराम पाल, ३४९

३. हिंदी नाटक : साहित्य का इतिहास, रगमच और रगमचीय नाटक, १४९

(हृदय) में ही 'तल' शब्द जोड़ कर 'हौतल' सं० पु० शब्द बना है। इसका प्रयोग पद्य-सीमित ही है।

संज्ञा-विकार

कवि ने विकृत संज्ञा-रूपो को भी ग्रहण किया है कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं — अभिषाप (शाप) [1]आगी [2] (आग), उकस [3] (उकसन), उलास [4] (ल्ल), काराग्रह [5] (गृह), कालिंदिनी [6] (कालिन्दी), केकयी [7] (कैकेयी), खितिहर [8] (खेतिहर), चुड़ियां [9] (चू), डालि [10] (ली), तवाही [11] (ब), दशा [12] (दि), दुकूलै [13] (ल), दुर्भाग [14] (ग्य), धुर [15] (ध्रुव), नागन [16] (गि या गिनी) निर्झरनी [17]

---

१. माता, तुम्हारा स्मरण, ११५ 'श्रद्धा बन बैठी अभिषाप'
२. हिमकिरीटिनी, जवानी, ११८ -- 'आगी लगा भभूत रमाई'
३. माता, युग-तरुण से, ३६ — 'मिलन कैसा जहां फीकी उकस हो'
४. समर्पण, दूर या पास, ८३ — 'पागल उलास की तरह पास'
५. माता, कोमलतर बंदीखाना, ७५ — 'अब काराग्रह है'
६. समर्पण, लाल टीका, ६ — 'कृष्ण की कालिंदिनी बोली'
७. माता, रामनवमी, २३ — 'केकयी - कलह मचा है'
८. समर्पण, गीत, ७२ — 'नीद खितिहर ने साथ साथ ही त्यागी'
९. वेणु लो ..., कविता ३७, ५० — 'चुड़ियां खनकी वसुधा की'
१०. समर्पण, यह बारीक ख्याली देखी. ४ — 'पत्ते दिए, डालि दी'
११. माता, मुझ को कहते है, ९२ — 'खडी हो वाही या कि तवाही'
१२. माता, स्व० सप्रे जी की महायात्रा पर, १३०, 'इस दशा भूल मत जावे तू'
१३. समर्पण, झूला झूलै री, ७५ — 'सभालो जरा दुकूलै री'
१४. माता, मेरी रसवती, ८८ — 'दुलारो न दुर्भाग को'
१५. (क) हिमतरंगिनी, ८९, — 'भूले भटकों का है धुर का तारा'
(ख) माता, गरबीली हृदय बदी से, १५ — 'गगन के धुर तारे'
१६. युग-चरण, विजय की स्मरण-बेला, ३ — 'गले में दारिद्र्य नागन'
१७. समर्पण, झरना, २७ — 'निर्झरनी की गोदी के श्रृंगार'

(रिणी), नीलगिरी [1] (रि), पुहप [2] (पुहुप), प्राकृति [3] (प्रकृति), ब्रह्मपुत्रा [4] (पुत्र या पुत्री) भुजडंड [5] (दण्ड), महरानी [6] (महा), मानसरोवर [7] (मानस सरोवर), मुनैया [8] (मुनियाँ), रेखियां [9] (रेखाएं), विकलाई [10] (विकलता), विरहणी [11] (हि), वृण [12] (व्र), वैषाख [13] (शा), शीष [14] (शीर्ष या शीश), श्रंगार [15] (शृं), सप्न [16] (स्वप्न), सान्त्री [17] (सन्तरी), सिरहन [18] (सिहरन), सिसकें [19] (कियां), सिसकों [20] (कियों),

---

१. मरण ज्वार , आज़ादी पर , ३९ — ' नीलगिरी की शिखरियां '
२. वेणु लो ... , कविता १२ , १७ — ' डालियां , पत्ते , पुहप '
३. मरण-ज्वार , मेरा है हिमशैल , ५६ — ' प्राकृति कृति का रूप ले रही '
४. समर्पण , चले समर्पण आगे आगे , ७३ — ' ब्रह्मपुत्रा का वैभव '
५. हिमकिरीटिनी , सिपाहिनी , १४० — ' भुज-डंड सजा दो '
६. आधुनिक कवि , गंगा की विदा , ११९ — ' खेतिहर की महरानी '
७. मरण-ज्वार , मेरा है हिमशैल , ५९ — ' इसका मानसरोवर मेरा '
८. हिमकिरीटिनी , हिमकिरीटिनी , १५१ — ' डालि पर तेरी रही निर्दय मुनैया झूल '
९. मरण-ज्वार, जवानी, २० — ' तव चरण की रेखियां हैं '
१०. आधुनिक कवि, मन्द चलो, ६१ — ' विकलाई का कल ज़ेवर-सा '
११. वेणु लो ... , कविता २९, ३७ — ' वृन्दा-विपिन की बिरहणी '
१२. हिमकिरीटिनी, खोज, ७५ — ' सैनिक की कराह के वृण मे '
१३. माता, स्व० सप्रे जी की महा यात्रा पर, १३२ — ' अब वे वैषाख हुईं '
१४. युग-चरण, प्राण का शृंगार, ३५ — ' शीष पर भगवान् ठहरा '
१५. माता, उच्चत्व से पतन स्वीकार था, १०३ — ' मुझ को पंक-पथ श्रंगार था '
१६. आधुनिक कवि, अमृत अब ऊगा, १०८ — ' सप्न लोक से उतर पड़ी '
१७. हिमकिरीटिनी, कैदी और कोकिला, १५ — ' सान्त्री की आवाजों का '
१८. युग-चरण, मूर्छित सौरभ, ५७ — ' चली कपकपी सी-सी सिरहन '
१९. हिमतरंगिनी, २७ — ' मेरी यह सिसकें दीवानी '
२०. युग-चरण, मूर्छित सौरभ, ५८ — ' कसकों की, सिसकों की '

सिहर [1] (ग्न), सैनानी [2] (से)

संस्कृत में ' **अभिशाप** ' स० पु० शब्द ही है , अभिषाप ' नहीं ।

ब्रजभाषा में ' आगि ' [3] स० स्त्री० शब्द (सं० अग्नि , हि० आग) है । वहां ' **आगी** ' [4] अव्यय शब्द (सं० अग्र , प्रा० अग्ग . हि० आगे) भिन्न अर्थ मे है । कवि ने ' आग ' अर्थ में ' **आगी** ' स० स्त्री० शब्द का नया प्रयोग किया है । अवधी में अवश्य इसी अर्थ में ' आगि ' और ' आगी ' दोनों शब्द-रूप हैं ।

ब्रजभाषा में ' उकसन ' और ' उकसनि ' स० स्त्री० शब्द हैं । ' उकसना ' अ० क्रि० (सं० उत्कर्षण या उत्मुक) भी है । ' **उकस** ' सज्ञा रूप में यहां नवीन प्रयोग है । डॉ० मुरारी लाल उप्रैति: के मतानुसार ' कस ' क्रिया में ' उ ' पूर्व प्रत्यय जोड़ कर ' उकस ' क्रिया बनाई जाती है । ' उ ' पूर्व प्रत्यय ' ऊपर ' के अर्थ में है । इस प्रत्यय के योग से प्राय: ' ऊपरवाची क्रियाए ' [5] व्युत्पन्न होती है । उतर, उपट, उभर शब्दों मे भी यही प्रत्यय लगा है ।

ब्रजभाषा मे ' उ ।सना ' अ० क्रि० (स० उल्लसन) ' प्रसन्न होने ' के अर्थ में है । वहां ' हुलास ' स० पु० शब्द (सं० उल्लास) भी है । यहा ' ह् ' लोप से ' **उलास** ' ले लिया गया है । हिंदी में यह नयी सज्ञा है ।

सस्कृत और हिन्दी मे ' कालिन्दी ' (कलिन्द+अण् —ङीप्) शब्द ही अधिक प्रचलित है, ' **कालिंदिनी** ' नही । ' कालिन्दी ' शब्द का अर्थ ' यमुना ' तो है ही, साथ ही यह श्री कृष्ण की एक स्त्री का भी नाम है ।

सस्कृत में ' केकय ' (पु०) एक प्राचीन जनपद का नाम है । यह स्थान आज भी काश्मीर मे ' कक्का ' नाम से है । इसके निवासी भी ' केकय ' कहलाते हैं । केकय-नरेश की पुत्री—' कैकेयी ' । या ' कैकय ' गोत्र मे उत्पन्न होने से उस का यह नाम पडा । हिंदी मे ' **कैकयी** ' रूप भी प्रचलित है ।

---

१. वेणु लो ..., कविता २९, ३७ — ' सिहर को कैसे भुला दूं '
२. मरण-ज्वार, सिप हिनी, ७१ — ' कैसे सैनानी हो ? '
३. उदा० ' इहि उर आनि रूप देखे की आगि उठै अगि आई ' (सूर० ३३४३)
४. उदा० मिली आइ सबहिनि तैं आगी ' — ८००
५. हिंदी मे प्रत्यय विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति: , ५९, ६०

'**खितिहर**' सं० पुं० शब्द विशेष रूप से विचारणीय है। व्रजभाषा में 'खेतिहर'[1] स० पुं० शब्द (स० क्षेत्रधर) 'कृषक' (खेती करने वाले) अर्थ में है। उसी का रूप विकृत करके 'खितिहर' बना लिया गया है। व्रजभाषा में 'खित सं० स्त्री० (अर० खित्त: सं० क्षिति) 'पृथ्वी' अर्थ में है। अत: यह भ्रम हो सकता है कि यहां 'खितिहर' शब्द सस्कृत के 'क्षितिधर' का विकार है। किन्तु संस्कृत में 'क्षितिधर' सं० पुं० शब्द का अर्थ 'पर्वत' है, 'कृषक' नहीं। अत: 'खितिहर' को 'क्षेत्रधर' (अर्थ 'कृषक) का ही विकार समझना चाहिए, 'क्षिति- धर' का नहीं।

व्रजभाषा में 'चूड़ी' अर्थ मे 'चुडिया' शब्द-रूप (सं० स्त्री० शब्द) भी है। यहां उसी का बहुवचन है।

फ़ारसी मे 'तबाही' सं० स्त्री० शब्द बरबादी, विनाश आदि अर्थों में है। '**तवाही**' विकृत सज्ञा-रूप है।

लोक भाषा मे 'दुरभाग' या '**दुर्भाग**' रूप (स० दुर्भाग्य) भी चलते है।

'ध्रुव' (तारा) अर्थ मे 'धुर' एक नया पर्यायवाची शब्द है। हिंदी में इस अर्थ मे 'धुर' का अधिक प्रचलन नही है।

'**नागन**' स्त्री० रूप उर्दू से प्रभावित जान पड़ता है।

कविता मे **निर्झरनी, गिरी, पुहप, महरानी, विरहणी, सप्न** आदि शब्द-रूप शुद्ध ही समझे जाते हैं। लोक भाषा मे ब्रह्मपुत्रा, मानसरोवर जैसे शब्द तो अच्छी तरह प्रचलित हो गये है।

लाल नामक पक्षी की मादा 'मुनियाँ' (देशज शब्द) कहलाती है। '**मुनैया**' सं० स्त्री० नया प्रयोग ही है। व्रज० मे 'मुनियाँ' का बहुवचन 'मुनैयनि'[3] है।

---

१. व्रजभाषा सूर-कोश, प्रथम खण्ड, दे० खित, खेतिहर

२. तुल० 'तौंअर राऊ पहारि, **खित्त** अनभंग मोट मन' (चन्दवरदाई)

३. उदा० 'मनु लाल **मुनैयनि** पाँति पिजरा तोरि चली' [सूर० १० - २४]

ब्रजभाषा में ' रेखें ' [1] बहु० (सं० रेखा) है, ' रेखियां ' नहीं। वहां ' रेखी ' [2] स० स्त्री० शब्द भी ' रेखा ' अर्थ में है। अतः 'रेखी ' से ही ' रेखियां ' यह बहुवचन हिंदी की प्रकृति के अनुसार बन या गया जान पड़ता है।

चतुराई, निठुराई और सचाई जैसे शब्दों के तौल पर ' विकल ' विशेषण से ' आई ' परप्रत्यय जोड़ कर ' विकलाई ' भाववाचक संज्ञा गढ़ी गई है। हिंदी में ' विकलता ' शब्द-रूप ही अधिक प्रचलित है।

' वैशाख ' शब्द-रूप अधिक प्रचलित है, वैषाख कम। इसी प्रकार हिंदी में ' शीष ' की अपेक्षा ' शीश ' ही अधिक चलता है। श्रंगार, सप्न, सिरहन और सैनानी तो स्पष्टतया शब्द-विकार हैं। कविता में ' सपन ' तो चलता है, सप्न नहीं। संस्कृत ' सेनानी ' (अर्थ सेनापति) से प्रभावित हो कर ' सैनानी ' शब्द-रूप लिखा गया है।

अंग्रेजी sentry ' संटरी ' (अर्थ : पहरेदार, द्वारपाल) शब्द का ही ' संत्री ' हिंदी समानक शब्द है। ' सान्त्री ' शब्द-रूप बहुत कम देखने में आता है।

हिंदी में ' सिसक ' स० स्त्री० शब्द का अर्थ है —सिसकने की क्रिया या भाव। सिसकें और सिसकों बहुवचन शब्द हैं।

इसी प्रकार ' सिहर ' शब्द भी कविता में ' सिहरन ' अर्थ में लिखा जा सकता है।

विशेषण

कुछ उल्लेखनीय विशेषण इस प्रकार हैं—

---

१. [क] अब क्यों मेटत हाथ की रेखें [सूर० ३१४८]

[ख) गनतहिं गनत गई मुनि सजनी कर अगुरिन की रेखें [सूर० ३१९०]

२. उदा० — ' कुटिल अलकावलि रेखी राजति भाल ' [सूर० ३३३३]

अटूटे [1], अधबने, [2] अधेली [3], किरनीली [4], किरनीले [5], जूनी [6], घूमरिया [7], बेबसवती [8], भांवरिया [9], मधुरिम [10] मधुरीली [11], रणराते [12], ललचीली [13] और स्नेहिल। [14]

हिंदी और अवधी में 'अधेली' सं० स्त्री० शब्द 'अठन्नी' (आधा रुपया) अर्थ में ही है। अधेला सं० पुं० शब्द (सं० अर्ध) का अर्थ आधा पैसा है। यहां '**अधेली**' का अर्थ सस्ती, कम मूल्य की, आदि लग सकता है। 'आधी' अर्थ भी सभव है।

सज्ञा 'किरन' में ईली और ईले प्रत्यय जोड़ कर नये विशेषण बनाए गए हैं — **किरनीली, किरनीले**।

हिंदी में 'जूना' वि० शब्द (स० जीर्ण) का अर्थ 'पुराना' या घिसा-घिसाया है। '**जूनी**' स्त्री० वि० शब्द है। दक्खिनी हिंदी में भी इसी अर्थ में 'जूना' शब्द चलता है। [15]

---

१. हिमतरंगिनी, २८ — 'बोल राजा स्वर **अटूटे**'
२. वेणु लो..., गीत ५४, ७१ — 'झिल्ली के **अधबने** गान हैं'
३. आधुनिक कवि, गीत, ९२ 'उस मुस्कान **अधेली** पर'
४. माता, अमरते कहां से?, ११२ — '**किरनीली** ज्योति जगा दे'
५. आज के लोकप्रिय कवि,... छिया छी, ५१ —'**किरनीले** शस्त्रो काट रहे'
६. वेणु लो..., गीत ७२, १०४ — '**जूनी** तलवारों की याद भुला डाली'
७. मरण-ज्वार, २६ जनवरी, ३३ — '**घूमरिया** योगिनिया गायें'
८. हिमकिरीटिनी, स्मृति, ६९ — 'अश्रु में कि **बेबसवती** बनी'
९. हिमतरगिनी, ३६ — 'मै **भांवरिया** खेल न जानी'
१०. आधुनिक कवि, गोदी के ग्राम, १४७ — 'बना नजरों की **मधुरिम** तूली'
११. समर्पण, बेटी की विदा, २— 'बचपन की **मधुरीली** कूकों'
१२. युग-चरण, मुक्त गगन है..., ४७ —' उठ **रणराते**! ओ बलखाते'
१३. माता, उलझन, १४ —' तज **ललचीली** बाईं बाजू'
१४. आधुनिक कवि, गंगा की विदा, १२१ — 'सुनो प्राण-**स्नेहिल** वाणी'
१५. तुल० गूदड़े **जूने**-नवे थिगले लगे — (वजदी का 'पंछीनामा')

हिंदी और ब्रजभाषा में ' धूमरि [1] ' या धूमरी वि० स्त्री० शब्द (सं० धूमल) का अर्थ है ' लालिमा-युक्त काले रंग की '। यहां ' धूमरी ' से ही **धूमंरिया** वि० शब्द गढ़ लिया गया है।

' बेबसवती ' वि० में ' बस ' फारसी का अव्यय नहीं है अपितु संस्कृत ' वश ' स० पु० शब्द का ही तद्भव रूप है। इस प्रकार ' बेवसवती ' तत्सम और तद्भव शब्दों का मिश्रण है।

हिंदी में ' भाँवर ' और ब्रजभाषा में इसी से सम्बन्धित ' भाँवरि ' [2] और ' भाँवरी ' सं० स्त्री० शब्द (स० भ्रमण) है जिन का अर्थ है — ' चारों ओर घूमना, चक्कर काटना '। विवाह के समय वर-वधु की अग्नि-परिक्रमा ही ' भाँवर ' कहलाती है। कवि ने ' धूमरी ' की भांति भाँवरी से ' **भावरिया** ' वि० बना लिया है। अन्तर केवल इतना है कि ' धूमरी ' पहले ही वि० स्त्री शब्द था और ' भाँवरी ' स० स्त्री० शब्द है।

सस्कृत में ' मधुर ' शब्द विशेषण के अतिरिक्त पु० नपु० संज्ञा रूप में भी है। जिस प्रकार सज्ञा ' अतर ' शब्द मे ' इम ' परप्रत्यय जोड कर ' अतरिम ' [3] वि० शब्द बनता है वैसे ही यहा ' **मधुरिम** ' गढा जा सकता है। सस्कृत मे ' मधुरिमा ' सं० स्त्री० शब्द (स० मधुर + इमनिच्) भी ' मधुरता ' अर्थ में है। उस से भी ' मधुरिम ' विशेषण (' मधुर ' अर्थ मे) का सम्बन्ध माना जा सकता है।

इसी प्रकार ' मधुर ' सज्ञा (पुं० नपु०) शब्द मे ' ईली ' परप्रत्यय जोड़ कर ' मधुरीली ' यह नया विशेषण बनाया गया है। ' लालच ' से ' **ललचीली** ' भी उसी तरह बना है। ' ईली ' प्रत्यय जोड़ते समय काँट, गाँठ, पान और लाज ये आकारादि शब्द अकारादि कंटीली, गंठीली, पनीली और लजीली शब्द-रूपों मे ढल जाते है।

---

१. (क) उदा० धौरी, धूमरि, राती, रौछी बोल बुलाई (सूर० ४४७)

(ख) उदा० धौरी धूमरि धेनु बुलाए (सूर० ४४७)

२. उदा० **भाँवरि** सी पारि फिरै नारि ज्यो पराई (सूर० पृ० ३२८, ७०)

३. हिंदी में प्रत्यय विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रेति:, १२७

'**रणराते**' वि० पु० शब्द 'रणधीर और रणमत्त (सप्तमी तत्पुरुष समास) संज्ञाओं के साम्य पर बना है। रणबाँकुरे की भांति 'रणराते' भी एक सुन्दर विशेषण है। नया तो है ही।

प्रेमिल और 'स्वप्निल' शब्दों की भांति '**स्नेहिल**' वि० भी नवीन ही है।

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण देखने योग्य हैं—

अधीरज [1] (अधीर), अनमोली [2] (ल), अनमोले [3] (ल) उज्वल [4] (ज्ज), क्रुधित [5] (क्रुद्ध), चुप्प [6] (चुप), चौगन [7] (गुनी), त्याज [8] (ज्य), दैवीय [9] (वी), प्रलयी [10] (प्रलयकर), बिचारा [11] (बे), बिचारी [12] (बे), मृदंगिनि [13] (नी), विव्हल [14] (ह्व), सातरंगी [15] (सत),

---

१. वेणु लो..., कविता ४८, ६५ — '**अधीरज** दौड कर गलफाँस लाया'
२. समर्पण, झूला झूले री, ७५ — '**अनमोली** साधों में मुरली'
३. समर्पण, क्या सावन क्या फागन, ४४ — 'मांगूं मैं कोयल के पर **अनमोले**'
४. माता, आदेश ३७ — '**उज्वल** कृति'
५. वेणु लो ..., कविता १४, १९ — 'अनुभूतियां **क्रुधित** हैं'।
६. आधुनिक कवि, तोतली बोली, १५४ — 'रोना, **चुप्प** न होना'
७. युग-चरण, नजर, ३७ — 'चाह **चौगन**, आह तीक्ष्ण'
८. वेणु, कविता ६४, ८७ — 'सब अब **त्याज** हो गए'
९. माता, हे भाई, ६० — 'कर **दैवीय** सरलता का वध'
१०. माता, विदा, ६ — 'ओ पूरब के **प्रलयी** पथी'
११. युग-चरण, आज झोंपड़ियां..., ४१ — 'आकाश का सम्बल **बिचारा**'
१२. वेणु लो..., कविता ३५, ४७— 'बनी कटक **बिचारी**'
१३. समर्पण, दूध की बूंदों का अवतरण, २३ — 'दूध की धारा **मृदंगिनि**'
१४ माता, अमरते कहां से १११ ?, — 'पलकें **विव्हल**'
१५. युग-चरण, हरे प्याले, हरी थाली, ५३ — '**सातरंगी** इन्द्रधनु से'

हिंदी में ' अधीर ' वि० शब्द है, अधीरज नहीं । अवधी में अवश्य ' अधिरजी '[1] वि० शब्द ' खाने-पीने में उतावला ' अर्थ में है । उसी का यहां प्रभाव हो सकता है ।

कविता में भी अनमोली और अनमोले विशेषणों का अधिक प्रचलन नहीं है । हां, ' उज्वल ' अवश्य चल निकला है ।

विशेषण के रूप मे क्रुधित और क्रोधित[2] दोनो शब्द-रूप अशुद्ध हैं । ' क्रुद्ध ' शुद्ध है ।

' चुप ' वि० पजाबी भाषा मे ' चुप्प '[3] ही है । अत: ' चुप्प ' वि० पर पजाबी प्रभाव माना जा सकता है । हिंदी मे ' चुप्पा ' (वि०) और ' चुप्पी ' (सं० स्त्री०, वि० शब्द) की प्रेरणा से ' चुप्प ' हो जाना सभव है ।

चौगुन या चौगुन वि० पुं० शब्द[4] (सं० चतुर्गुण, प्रा० चउगुण) ' चार गुना ' अर्थ मे है । ' चौगुनी ' स्त्री० बनना चाहिए । ' द्विगुण ' सस्कृत पद के ' गुण ' से हिंदी में ' गुन ' प्रत्यय बनता है । ' दुगना ' अपवाद छोड कर अन्यत्र तिगना, चौगना लिखना अशुद्ध है — तिगुना या चौगुना होना चाहिये । ' चौगुना ' तद्धितान्त हिन्दी पद है ।[5] इस दृष्टि से ' चौगन ' भी अशुद्ध-शब्द-रूप है । किन्तु कविता में यह रूप भी क्षम्य है ।

संस्कृत में ' दैव ' वि० पुं० है, ' दैवी ' वि० स्त्री० है । हिंदी मे ' दैवी ' पुं० रूप में ही चलता है । हिंदी की प्रकृति के अनुसार स्त्री० विशेष्य के साथ भी ' दैवी ' ही जुड़ेगा पुनः इसका स्त्री० रूप न गढ़ा जाएगा । ' दैवीय ' इसलिए नया विशेषण रूप है ।

---

१. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी ' समीर ', दे० ' अधिरजी '

२. अच्छी हिंदी, छठा संस्क०, बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, १४३

३. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० ' चुप '

४. मानक हिंदी कोश, खण्ड वही, दे० ' चौगुन '

५. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, २९८ — ' तद्धित प्रकरण '

संस्कृत में ' प्रलयंकर '[1] वि० पुं० शब्द (स्त्री० प्रलयकरी) ही शुद्ध है। ' **प्रलयी** ' नया विशेषण शब्द गढ़ा गया है।

' बेचारा ' फ़ारसी का विशेषण है। हिंदी में उसी का रूप विकृत करके **बिचारा, बिचारी**,[2] **बिचारे**,[3] आदि प्रयोग किए जाते हैं। अब यह हिंदी में पूरी तरह खप कर यहा का अपना विशेषण ही जान पडता है।

' **सातरंगी** ' की अपेक्षा ' सतरंगी ' वि० स्त्री० अधिक प्रचलित है।

विशेषण विपर्यय

कुछ उदाहरण ये हैं—

कुआँरी[4] (क्षुद्रता), कुबड़े[5] (पुल), घमासान[6] (काम), तरल[7] (मेहरबानी,) बूढ़ी[8] (दुनिया), बौने[9] (हाथो)।

क्रिया

चतुर्वेदी जी के काव्य मे जो क्रियाए विशेष रूप से विवेचनीय हैं वे इस प्रकार हैं —

अनुमान[10], अनुरागे[11],

---

१. अच्छी हिंदी छठा संस्करण, रामचंद्र वर्म्मा, १४४
२. उदा० भागि दुरी सु **बिचारी** — (सूर० १-१७३)
३. उदा० ये को आहिं **बिचारे** — (सूर० १—१७९)
४. वेणु लो..., गीत १. १ — ' चाहों में क्षुद्रता **कुआंरी** है '
५. आधुनिक कवि, आखे आज निहाल हो गईं. ५६— ' **कुबडे** पुल पर '
६. युग-चरण, सीमाओ के अक्षर, २८ — ' पडा **घमासान** काम है '
७. आधुनिक कवि, गंगा की विदा, ११९ — ' तेरी **तरल** मेहरबानी है '
८. वेणु लो..., कविता ३०, ३८ — ' कितनी **बूढ़ी** है यह दुनिया '
९. वेणु लो..., कविता २८, ३६ — ' मैं **बौने** हाथों का उठाव '
१०. माता, राष्ट्रीय वीणा, ४७ — ' यही बात **अनुमान** गया '
११. माता, स्व० सप्रे जी महायात्रा पर, १३१ — ' पथ में क्योंकर **अनुरागे** ? '

अनुहार [1], आमंत्री [2], आराधे [3], आरोगे [4], आरोपो [5], कूती [6], गहरा [7], घुमक [8], चीत्कारी [9] चूर [10], चूरे [11], ढोल [12], ढोलती [13], ढोलें [14], ढोले [15], तंगवाते [16], तलाश [17], थहरे [18], द्रवते [19], पूरो [20], प्रकटओगे [21], प्रकटना [22],

---

१. वेणु लो ..., गीत १, १ — 'किस को **अनुहार** रही चुप साधे'
२. हिमकिरीटिनी, खोज, ७३ — 'मैं ने तुझ को **आमंत्री**'
३. हिमकिरीटिनी, वीर पूजा, ९२ — 'विजय-ध्वनि **आराधे** खड़ी'
४. वेणु लो ..., गीत ३०, ३९ — 'दो आंखे कितना **आरोगे** ?'
५. आधुनिक कवि, मील का पत्थर, ३९ — 'मत **आरोपो** अपनेपन को'
६, हिमकिरीटिनी, कैदी और कोकिला, १९ — 'बलि की गति **कूती**'
७. मरण-ज्वार, सिपाहिनी, ७२ — 'स्वर **गहरा** लो'
८. हिमकिरीटिनी, नाश का त्यौहार, ३४ — 'फिर स्वरों पर **घुमक** जाना'
९. माता, स्व० सप्रे जी की ..., १३८ — 'दीन राष्ट्र-भाषा **चीत्कारी**'
१०. आधुनिक कवि, धूम्र-वलय, ४९ — 'सकट-दल **चूर** चले'
११. युग-चरण, सेनानी से, १२ — हिम की चट्टाने **चूरे**'
१२. मरण-ज्वार, आज़ादी पर, ४० — बलिपथो मे रस गीत **ढोल** रही है'
१३. युग-चरण, नज़र, ३९ — 'भागीरथी है एक धारा **ढोलती** है'
१४. मरण-ज्वार, सूर्य की पुकार, ४१ — 'रसा के शिखर से जल-धार **ढोलें**'
१५. हिमतरंगिनी, २६ — 'मैं ने वे घट तेरे ही चरणों पर **ढोले**'
१६. माता, मुझ को कहते है माता, ९० — 'प्रश्नो से गुरु को **तंगवाते** देखा'
१७. हिमकिरीटिनी, सौदा, २६ — 'हू उन्मत्त, **तलाश** रहा हूं'
१८. समर्पण, तरुणाई का ज्वार, १०९ — 'स्वर तेरे युग गर्वित **थहरे**'
१९. समर्पण, हृदय, ५१ — 'पूजते हैं, देवता **द्रवते** नहीं'
२०. समर्पण, उधार के सपने, ६१ — 'तो उसमें स्नेह-भावना **पूरो**'
२१. वेणु लो..., कविता ६४, ८६ — 'क्या कर्मवीर **प्रकटाओगे** ?'
२२. समर्पण, पर्वत की अभिलाषा, ३८ — 'मणि-माणिक **प्रकटाना** मत'

इन क्रियाओं में से अधिकांश व्रजभाषा की क्रियाएं हैं। शेष क्रियाओं का विवेचन इस तरह है।

हिंदी और व्रजभाषा में 'अनुहारना' स० क्रि० (सं० अनुहारण) प्राय: 'समान करना' या 'अनुकरण करना' अर्थ में है। यहां किसी वस्तु की प्रतिकृति (नकल) बनाना या तुलना करना अर्थ संभव है। 'अनुहरना' [1] तुलसी की भी प्रिय क्रिया है।

हिंदी में 'आमंत्रित' भू० कृ० (सं० आमंत्+क्त) शब्द है। 'आमंत्रणा' स० क्रि० (स० आमंत्रण) का अधिक प्रचलन नहीं है। अत: 'आमंत्री' नव क्रिया-प्रयोग है।

यहां 'आरोगे' स० क्रि० 'खाना' या 'भोजन करना' अर्थ वाली 'आरोगना' स० क्रि० से सम्बंधित नहीं है। 'आरोगना' क्रिया का भूतकालिक रूप भी 'आरोगे' बनता है—उदा०

सूरदास— सबरी परम भक्त रघुबर की बहुत दिनन की दासी
ताके फल आरोगे रघुपति पूरन भक्ति प्रकासी। [2]

किंतु यहां 'आरा' सं० पुं० शब्द (अर्थ — 'लोहे का वह औज़ार जिस से लकड़ी आदि फाड़ते हैं') से 'आरना' स० क्रि० बनाई गई है — अर्थ: 'फाड़ना, अधिक फैलाना'। कवि बिहारी की भी पंक्ति है — तुल०

'नेकु बड़े न होइ सकै फारै निहारे नैन'

'घुमकना' स० क्रि० भी नवीन ही है। 'घुमक' सं० स्त्री० शब्द स्थानिक प्रयोग है — अर्थ 'घुमड़' [3]।

हिंदी में 'चीत्कारना' अ० क्रि० 'चिल्लाना' अर्थ में है।

'ढोलना' स० क्रि० (सं० दोलन या हिं० ढोल से) 'ढरकाना या ढालना'

---

१. (क) स्वारथ सहित सनेह सब, रुचि अनुहरत विचार (तुलसी)

(ख) तन अनुहरत सुचंदन खोरी (तुलसी)

२. व्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड, दे० 'आरोगे'

३. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० 'घुमक'

अर्थ में है। कवि की यह सर्वाधिक प्रिय क्रिया है।

'**तंगवाना**' स० क्रि० (फ़ा० 'तंग' वि० से) भी नयी ही है। इसी प्रकार हिंदी और व्रजभाषा में 'मानना' अ० क्रि० पहले ही विद्यमान है। अत: '**मनना**' अ० क्रि० नव प्रयोग ही माना जाएगा। '**स्वीकारना**' स० क्रि० का भी अब प्रयोग बढ़ रहा है।

व्रजभाषा में 'हिंडोलना' या 'हिंडोरना' सं० पुं० शब्द ही हैं। क्रिया-रूप में 'हिंडोलना' का अधिक प्रचलन नहीं है। यहां अर्थ है — हिलाना-डुलाना। हिंडोलती है-' हिलाती-डुलाती है।

क्रिया-विकार

अजमाते [1] अजमाने [2] (आ) आयगी [3] (ए या आ) उट्ठा [4] (उठा) उट्ठे [5] (उठे)उभर [6] (भा) चक्खो [7] (चखो) पिन्हाता [8] (पहनाता) बोय [9] (ए या ये)

'आज़माना' उर्दू की सकर्मक क्रिया है। व्रजभाषा मे '**अज़माना**' रूप हो जाता है। **उट्ठा, उट्ठे, चक्खो, रक्खा, रक्खे** क्रिया-रूप बोलचाल की दृष्टि से शुद्ध हैं किन्तु मानक हिंदी (विशेषत: गद्य) मे उनका चलन नहीं है। प्रसिद्ध कोशकार रामचन्द्र वर्म्मा लिखते हैं — "हम 'रखना' तो बोलते है पर 'रखा गया' या 'रखे

---

१. आधुनिक कवि, विद्रोही, १६ — 'हम **अज़माते** उस भू पर अपना ज़ोर'

२ आज के लोकप्रिय हिंदी कवि..., कैदी और कोकिला, ६८ — 'अपना स्वर **अज़माने**'

३. माता, मेरी रसवंती, ८४—'चरण धर चली **आयगी**'

४. माता, युग-तरुण से ३६ — 'जो ओठो फड़क **उट्ठा**'

५. माता, युग-तरुण से, ३६ — 'पिस **उट्ठे दांत**'

६. माता, विदा, ६ — 'जन-जन अमर **उभर** दे'

७. युग-चरण, जय तुम्हारी जय, ७ — 'विज्ञान के वरदान **चक्खो** जी'

८. आधुनिक कवि, घर मेरा है ?, २० — 'सूरज रोशनी **पिन्हाता है**'

९. माता, देश में ऐसे बालक हों, ३९ — 'साधना सेवा जग में **बोयं**'

रक्खा [1] (रखा), रक्खे [2] (रखे), लिक्खी [3] (लिखी), लिक्खूं [4] (लिखूं) होयं [5] (होयें)

रहो ' नहीं बोलते, बल्कि ' रक्खा गया, ' और ' रक्खे रहो ' बोलते हैं । विशेषत: कविताओं आदि में तो कुछ अवस्थाओं में मात्रा-पूर्ति के विचार से रक्खे, रक्खो आदि रूप रखना आवश्यक हो जाता है ... इसलिए ऐसे शब्द लिखे भी इन्हीं रूपों में जाने चाहिएं । ' [6]

यद्यपि ' लिखना ' क्रिया-रूप ही अधिक चलता है तथापि बोलचाल में आदेश-अर्थ में हम ' लिक्खो ' ही कहते हैं, ' लिखो ' में उतना वज़न नहीं रहता । यही बात ' चक्खना ' क्रिया के सम्बध मे भी सत्य हैं ।

आयगी, उभर, बोयं, होयं — तो स्पष्ट रूप से क्रिया-विकार ही है ।

दक्खिनी हिंदी में ' पिन्हाना ' [7] स० क्रि० ' पहनाना ' अर्थ मे है । डॉ० धीरेंद्र वर्मा और डॉ० कादरी जैसे विद्वान् ' न् ' तथा ' म् ' के महाप्राण रूप का भी उल्लेख करते हैं । कादरी जी तो ' न्ह ' को स्वतन्त्र व्यंजन ही स्वीकार करते हैं । वर्मा जी महाप्राण ' न् ' के तीन उदाहरण देते हैं — उन्होंने, कन्हैया, जिन्होने । [8] उन के मतानुसार यह ' न्ह ' महाप्राण, सघोष, वर्त्स्य, अनुनासिक व्यंजन है । किन्तु डॉ० अशोक रा० केलकर के अनुसार ये व्यंजन अन्य महाप्राण अक्षरों जैसे नही है ।

चतुर्वेदी जी ने ' झगना ' अ० क्रि० का भी अनेक स्थलों पर प्रयोग किया है । यह क्रि० व्रजभाषा में विद्यमान है ।

---

१. आधुनिक कवि, गीत, ९२, ' हाथो पर लिख रक्खा है '
२. वेणु लो..., ७०, १०० — ' उठा रक्खे अधर पर गान '
३. युग-चरण, सीमाओं के अक्षर, २८ — ' सांस सांस पर लिक्खी है प्रभुता '
४. हिमतरंगिणी, २७ — ' किस के लिये मैं गीत लिक्खूं ?
५. माता, देश में ऐसे बालक हों, ३९ — ' क्रूरतर होना हो तो होयं '
६. अच्छी हिंदी, छठा संस्क०, रामचन्द्र वर्मा, ३१४ ' फुटकर बातें '
७. दक्खिनी हिंदी का उद्भव और विकास, डॉ० श्रीराम शर्मा, ४४
८. हिंदी भाषा का इतिहास, डॉ० धीरेंद्र वर्मा, १२१, १२०

अन्य क्रिया-प्रयोग

कुछ अन्य प्रकार के उदाहरण भी हैं —

यथा जगावे है, पुकारे है, वारे है —

हरी दुनिया उठी पानी चढ़ा ऊपर पुकारे है
हरी दुनिया जगावे है वही जो प्राण वारे है।[१]

'हो' शब्द जोड़ कर ढूंढो हो[२] जैसी क्रियाएं भी प्रयुक्त की गई हैं।

उर्दू भाषा-शैली की तर्ज पर 'किए' जोड़ कर भी कुछ क्रियाएं लिखी गई हैं—

१. मैं नहीं बोली कि वे बोला किए ..
२. दो हृदय ले तौल पर तौला किए...
३. जी का जहर घोला किए।[३]

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति चतुर्वेदी जी ने भी हिंदी के अ, अन (सं० अन्), और उर्दू के 'बे' उपसर्ग का अधिक प्रयोग किया है।

'अ' निषेध-सूचक उपसर्ग वाले शब्द ये हैं—अकथ, अचाह, अजाने, अडोल। हिंदी 'अन' उपसर्ग इन शब्दों में लगा है — अनकथ, अनकहे, अनगाये, अनगिन, अनगिनती, अनगिनी, अनचाही, अनचाहे, अनजानी, अनजाने, अनदीखे, अनदेखा, अनबना, अनबोली, अनबोले, अनमोली, अनमोले, अनहोना, अनहोनी, अनहोने।

उर्दू के 'बे' उपसर्ग वाले शब्द देखे — बे अनुपात बेकलेजे, बेकाबू, बेकाम, बेगढ़ा, बेगर्जी, बेगुनाह, बेचाह, बेजाना, बेजाने, बेदाग, बेदेखा, बेनाम, बेपरवाह, बेपहिचान, बेबंधी, बेबंधे, बेमनुहारी, बेमूछों, बेमोल, बेराग, बेलाख, बेशुमार, बेसहारा,

---

१. युग-चरण, सौ टूक कर डाला, ५१

२. समर्पण, दृग-जल-यमुना, ४० — 'क्यों ढूंढो हो लाल पुतलियों पर'

३. आधुनिक कवि, समय सूली-सा टंगा था, ७६

बेसुधी, बेस्वाद और बेहाल।

लिंग

कवि ने लिंगों के क्षेत्र में भी रुचि-स्वातंत्र्य का परिचय दिया है। उसने पुं० हिंदी शब्दों को स्त्री० में लिखा है यथा — कुजें [1], केशर [2], जाल [3], तौक [4], दीप [5], देवता, [6], नवनीत [7], नाद [8], बनवास [9], बाजुओं [10], बाजू [11], मौसम [12], यौवन [13], रागें [14], रागो [15], और हठ [16]।

'कुञ्ज' और 'केशर' शब्द संस्कृत में सं० पुं० और नपुं० हैं, हिंदी और व्रजभाषा में सं० पुं० शब्द हैं।

'जाल', 'नवनीत' और 'यौवन' संस्कृत में नपुं०, हिंदी और व्रजभाषा

---

१. वेणु लो..., कविता ६४, ८५ — 'उजड गईं ये कुंजें'
२. माता, यदि, १२ — 'केशर स्नेह की बन भरती'
३. आधुनिक कवि, तू रंगीन गढ़े जा सांसें, १२६ — 'फेक तू जाल श्वास की'
४. माता, मुक्ति, ८० — 'तौक पड़ी थी वही कंठ'
५. वेणु लो..., कविता ३४, ४६ — 'सुधियों की चिरंतन दीप'
६. आधुनिक कवि, आसू, ८६ — 'आती है स्वातंत्र्य देवता'
७. कविता वही, ८८ — 'दूषित लख नवनीत हृदय की'
८. आधुनिक कवि, वही, ८६ — 'स्नेह-सिंधु की नादों को सुन'
९. समर्पण, टूटती जंजीर, ८२ — 'एक ने निर्माण को बनवास दी'
१०. आधुनिक कवि, आंसुओं में, ७८ — 'जुड़ी बाजुओं मे'
११. समर्पण, दाईं बाजू, ३४ —'मैली दाईं बाजू'
१२. आधुनिक कवि, गंगा की विदा, १२३ — 'मौसम चली, बहार चले'
१३. मरण-ज्वार, सिपाहिनी, ७२ — 'यौवन अपनी पर आने दो'
१४. आधुनिक कवि, गा दो मालिक, ७३ — 'रागें है लाचारी मेरी'
१५. युग-चरण, भारती, ६१ — 'क्यो तेरी रागों में'
१६. आधुनिक कवि, कागज़ की पतवार, १४५ — 'मेरी हठ सौ बार दुलारें'

में सं० पुं० शब्द ही हैं।

दीप, नाद, राग और **हठ** — सस्कृत, हिंदी और व्रजभाषा में सं० पुं० शब्द ही हैं। '**बनवास**' हिंदी और व्रजभाषा में सं० पुं० शब्द है।

इसी प्रकार फ़ारसी पु० शब्द '**बाज़ू**' हिंदी और व्रज० मे भी पुं० शब्द ही है। ठीक यही स्थिति '**तौक**' और '**मौसम**' (शुद्ध उच्चारण मौसिम) अरबी[1] पु० शब्दों की भी है।

एक '**देवता**' शब्द ही अपवाद के रूप मे सस्कृत मे स० स्त्री० शब्द है किंतु हिंदी में यह भी पुलिंग ही माना जाता है।

इन के अतिरिक्त जो स्त्री० शब्द विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है वे इस प्रकार हैं —

अगवानिन[2], अनाथन[3], उजाड़िया[4], घेरी[5], चित्रकारिन[6], दिवगिनी[7], पंखिनियां[8], पंथिनी[9], बटमारन[10], बिंदुए[11], बीजा[12], व्यालिनिया[13],

---

१. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, मद्दाह, दे० मौसम, मौसिम
२. समर्पण, गोधूली है, ३९ — ' अधकार की **अगवानिन** '
३. मरण-ज्वार, हाजिर प्राण हमारा, ८० — ' हुई **अनाथन** गगा '
४. वेणु लो ......, कविता १८, २४ — ' छोड दो पहाड़िया **उजाड़ियां** '
५. आधुनिक कवि, जो न बन पाई ......, ६३ — ' यादों ने सजग **घेरी** लगाई '
६. युग-चरण, नज़र, ३७ — ' **चित्रकारिन** हैं, कि इसके चित्र बनते है '
७. मरण-ज्वार, गाधी-विनोबा, ७५ — ' **दिवंगिनि** बोलती नव बोल '
८. वेणु लो ......, कविता १, १ — ' बागों में **पंखिनियां** झूल रही '
९. आधुनिक कवि, गगा की विदा, ११९ — ' मै **पंथिनी** अपने घर होती '
१०. आधुनिक कवि, रात फैल गई, ५५ — ' लज्जा **बटमारन** किस गैल गई '
११. आधुनिक कवि, आसू, ८८ — ' जीवन-घट की युगल **बिंदुएं** '
१२. हिमतरंगिनी, ६८ — ' थी काली ही तो **बीजा** '
१३. आधुनिक कवि, गगा की विदा, १२४ — ' **व्यालिनियां** ले व्याल चलीं '

शिखरणियां [1], शिखरियां [2], शिखरियों [3], सागरी [4] और सिपाहिनी [5]।

कुछ पु० शब्द भी विवादास्पद हैं यथा कालिख [6], गंध [7], पराजय [8], ुहार [9], साँस [10] और सिसकन [11]।

हिंदी और व्रजभाषा में कालिख (स० कालिका, स्त्री०), गंध पराजय और ुहार प्राय: स्त्रीलिंग में ही देखे जाते हैं। गन्ध और पराजय संस्कृत में अवश्य पुं० ब्द हैं। 'साँस' शब्द हिंदी और व्रजभाषा में पु०, स्त्री० उभय रूपों में है। पर उर्दू कुछ कवियो ने भूल से इसका प्रयोग स्त्री० मे किया है जबकि यह पु० (सं० श्वास) है [12]। ्रजभाषा में तो 'साँसा' सं० पुं० शब्द भी है। 'सिसकन' शब्द भी पुलिंग ा में नया प्रयोग ही है। 'हरियाला [13]' भी नयी पु० संज्ञा है।

चन

लिंगों का अध्ययन करते समय हम उजाड़ियां, पांखिनियां, बिंदुएं, ग्वालिनियां, खरणिया, शिखरियां, शिखरियों जैसे बहुवचन देख चुके हैं।

अन्य उल्लेखनीय बहुवचन शब्द ये है —

. मरण-ज्वार, आजादी पर, ३९ — 'नीलगिरी की शिखरणियां'
. आधुनिक कवि, गीत ९ — 'शैल-शिखरियां उन को'
. आधुनिक कवि, गंगा की विदा, ११६ — 'शिखर-शिखरियों में मत रोको'
. कविता वही, ११६ — 'प्रिय सागरी लहरीली है'
. मरण-ज्वार, ७१, कविता शीर्षक 'सिपाहिनी'
. वेणु लो ..., कविता ५१, ६८ — 'चुके थे रग बस कालिख रहा था'
. वही, कविता ९, १३ — 'गंध बह उठा चोरी चोरी'
. आधुनिक कवि, प्रहर प्रहर के प्रहरी, ८१ — 'स्मृति के जादू भरे पराजय'
. समर्पण, उल्लास का क्षण, १० — 'तब चमका कर पथ के फुहार'
. युग-चरण, बीन और संगीन, २६ — 'सांस क्यो ब्याल सा जग रहा है ?
. आधुनिक कवि, मन्द चलो, ६२ — 'अपने सिसकन'
. मानक हिंदी कोश, पाँचवां खण्ड, दे० साँस
आधुनिक कवि, मंद चलो, ६२ — 'सारा हरियाला दूबो का'

अभिलाषों [१], चकचौंधों [२], देवतों [३], पुरुषाओं [४], मालनियां [५], रागें [६], सिसकों [७], और हिलकोरियां [८]।

इन में '**अभिलाषों**' बहु० तो संस्कृत के 'अभिलाष' (पुं०) शब्द से है, हिंदी के 'अभिलाषा' शब्द से नहीं। ठीक इसी प्रकार ब्रजभाषा में 'मालन' स० स्त्री० शब्द (सं० मालिनी) है ही, उसी से '**मालनियां**' बहु० बनाया गया है। हिंदी में 'हिलकोर' या 'हिलकोरा' सं० पुं० शब्द ही है। कवि ने पहले 'हिलकोरी' स्त्री० एकवचन बना कर फिर उसका बहुवचन गढ़ लिया है '**हिलकोरियां**'।

जिन शब्दों को बहुवचन की बजाय एकवचन में ही लिखा गया है वे ये हैं —

आंख [९], गाली [१०], गोपवाला [११], बात [१२], भुजा [१३], मुट्ठी [१४], वेणी [१५], सौगात [१६] और हाथी [१७]।

---

१. माता, निराला, १२० — '**अभिलाषों** की रस-लहरी में'
२. समर्पण, गोधूली है, ३९ — '**चकचौंधों** से घबड़ाती'
३. माता, उच्चत्व से पतन ..., १०३ — 'तुम **देवतों** के लोक हो'
४. माता, रामनवमी, २३ — 'लुटेरो में है **पुरुषाओं** की गिनती'
५. मरण-ज्वार, आज़ादी पर, ३९ — 'माला गूथ रहीं **मालनियां**'
६. माता, कल्याणी ११६ — '**रागें** बैरागिनिया होती'
७. माता, निराला, १२३ — '**सिसकों** को सराहते थे वे'
८. मरण-ज्वार, सूर्य की पुकार, ४१ — '**हिलकोरियां** ले गीत गा कर'
९. माता, जीवित जोश, ६५ — 'हिंद माता की दोनो **आंख**'
१०. समर्पण, न्याय तुम्हारा कैसा ?, ९७ — 'कितनी **गाली** बरसेगी'
११. वेणु लो गूंजे धरा, ७०, १०१ — '**गोपबाला** उठे वेणी खोल'
१२. वही, कविता १५, २० — 'सौ सौ **बात** नहीं भाती मुझ को'
१३. आधुनिक कवि, थम थम कर, ५४ — 'दो **भुजा** उठे'
१४. माता, मुझ को कहते हैं माता, ८९ — 'दोनो **मुट्ठी** मे वैभव'
१५. वेणु लो ..., कविता ७०, १०१ — 'गोपबाला उठे **वेणी** खोल'
१६. वही, कविता १५, २१ — 'सौ **सौगात** नही भाती मुझ को'
१७. माता, वह संकट पर झूल रहा है, ३२ — 'सौ सौ **हाथी** का बल है'

'**प्राण**'[1] शब्द 'दर्शन' और 'हस्ताक्षर' शब्दों की भांति सदा बहुवचन में ही लिखा जाता है किंतु कवि ने इसे एकवचन में भी प्रयुक्त किया है।

कहीं कहीं एकवचन में 'यह' की बजाय '**ये**'[2] भी लिखा गया है। इसके विपरीत बहुवचन मे 'ये' के स्थान पर '**यह**'[3] भी प्रयुक्त हुआ है।

संधि

कवि ने संधि के नियमों का पूर्णरूपेण पालन किया है कही कहीं तमोपत्र[4] और जगड्व्याल[5] जैसी संदिग्ध संधियां भी हैं।

मानक हिंदी कोश में 'जगड्वाल'[6] (पु) रूप दिया गया है। अर्थ— 'व्यर्थ का आडम्बर या बखेड़ा'।

समास

सम्बंध तत्पुरुष समास ये हैं — खग-जोड़े, पद-आहट, बलि-पथी, मोम-दीप, विद्रोह-बीज, **विश्व-ईमान**, शारद-छौनी।

कर्मधारय समासों के कुछ नमूने देखें — जीवन-फूल, तम-रथ, दंभ-दानव,

---

१. (क) मरण-ज्वार, सूर्य की पुकार, ४२ — 'तभी दाने उठेंगे **प्राण** होगा'

(ख) मरण-ज्वार, हाज़िर **प्राण** हमारा, ७८

२. (क) माता, मानव, १४१ — 'तना-सा आसमान **ये**'

(ख) माता, मानव, १४३ — 'क्या रुकेगी **ये** हरीतिमा की वाहिनी'

(ग) युग-चरण, हरे प्याले हरी थाली, ५३ — 'नीला **ये** दामन घन मे छाया है'

(घ) कविता वही, ९३ — '**ये** सावन बन के आया है'

३. हिमतरंगिनी, २७ — 'मेरी **यह** सिसके दीवानी'

४. हिमकिरीटिनी, कैदी और कोकिला, १७ — 'क्यो **तमोपत्र** पर विवश हुई'

५. वेणु लो ..., कविता ३८, ५१ — 'पूजा कि प्राप्ति का **जगड्व्याल**'

६. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड दे० 'जगड्वाल'

देश-प्रभु, नभ-सिंधु, नाश-नरेश, प्रकाश- कविता, प्रकाश-पथिक, यौवन-फूल, रजत-क्षण, वासना-विहँग, और व्यक्ति-वामन।

अन्य विविध समास ये हैं — चाह-क्रीत, प्रलय-दीप, प्रहार-माला, विपद-विहँग, और विभव-सभव।

अन्य शब्द-विकार

कुछ विशिष्ट शब्द ये हैं —

कृष[1] (कृश), क्यूं[2] (क्यो) चहे (चाहे) तुही (तूही)। मुझी[3] और हमीं[4] शब्द तो 'ह' लोप से बने है — मुझ + ही = मुझी। हम + ही = हमी — यहां अनुस्वार का आगम हो जाता है। बहुत्व के गौरव में मधुरता चाहिए।[5] दोनो में प्रथम शब्द के अंत्य 'अ' का लोप हो कर 'झ्, म्' रह जाते हैं।

दक्खिनी हिंदी मे क्यूं[6] और क्यूंकर शब्द-रूप ही चलते हैं। 'चहे' स० क्रिया व्रजभाषा मे भी है किंतु उसका अर्थ है — चाहता है। 'चाहे' के अर्थ मे 'चहे' लिखना नया ही है।

सर्वनाम

सर्वनामो के प्रयोग में भी कवि ने उच्छृंखल शब्द-रुचियों का परिचय दिया

---

१. समर्पण, मुक्ति का द्वार, ७३ — 'कृषप्राय कृषको के'

२. समर्पण, मन की साख, ५८ — 'क्यूं शिकायत है ?'

३. वेणु लो ..., कविता ४८, ६५ — 'मुझी से बह चले मेहमान मेरे'

४. (क) माता, विदा ३ — 'बजाते हमीं नगाड़े'

(ख) आधुनिक कवि, विद्रोही, १३ — 'विद्रोही है हमीं'

(ग) वेणु लो ..., कविता ५५, ७३ — 'हमीं ने जब उलीचे अश्रु'

५. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, २५

६. तुल० 'भून्या बीज क्यूं कर उगवे' (शाह बुरहानुद्दीन जानम का 'सुख सुहेला')

है। उसने 'जिन का' के स्थान पर 'जिन को'[1] और 'जिन्होंने' के स्थान पर 'जिन ने'[2] का प्रयोग किया है। 'अपनी' अर्थ में 'तेरी'[3] शब्द भी व्याकरण-सम्मत नहीं है।

अन्य नव शब्द

अन्य कुछ विशेष प्रयोग ये हैं—

खूनाखून[4], चगन[5], छिया-छी[6], दीख[7], नवधांगण[8], पुस्तक-कीट[9], रुमझुम[10], हरीतिमा[11] और हेमांचल[12]।

---

१. आधुनिक कवि, वे तुम्हारे बोल, ७१ — 'जिनको वध किया था'
२. वही, कागज की पतवार, १४६ — 'जिन ने देश जगाया'
३. वही, वही, १४५ — 'तेरी तनख्वाहों पर जग को यों न निछावर कर ओ भैरव !'
४. आधुनिक कवि, समय के अगूर, ४५ — प्यार का ईमान खूनाखून है'
५. मरण-ज्वार, उठो शीश हथेली पर लो, २६ — 'जगें पीढ़िया चगन मगन में'
६. आज के लोकप्रिय हिंदी कवि..., छिया-छी, ५० 'छिया-छी हो अंतर में'
७. मरण-ज्वार, मेरा है हिमशैल, ५५ — 'इसीलिए विधना ने दी है दीख'
८. माता, राम नवमी, १० — 'नृत्य का नवधांगण में...'
९. समर्पण, हृदय, ५१ — 'पुस्तक-कीट भी थोड़े नहीं'
१०. (क) माता, मुझ को कहते है माता, ८६ — 'रुमझुम करते दोनो आये'
(ख) कविता वही, ८६ — 'रुमझुम है मेरा पानी'
(ग) कविता वही, ८८ — 'इसकी रुमझुम, इसकी हलचल'
११. (क) माता, मानव, १४३ — 'उगती हरीतिमा ही मे ...'
(ख) समर्पण, तुम भी देते हो तोल तोल, १ — 'भू पर हरीतिमा का उभार'
(ग) आधुनिक कवि, और बादल..., १०३ — 'ऊग उठी हरीतिमा'
१२. (क) समर्पण, उधार के सपने, ६० — 'हो तेरा ललाट हेमांचल'
(ख) माता, विदा, ३ — 'मां की बेबसियों को घूर रहा हेमांचल प्रहरी'

'**सून**' फ़ारसी का सं० पुं० शब्द है। उसी से हिंदी की पद्धति पर '**सूनासून**' अव्ययीभाव समास बनाया गया है।

'**बगन-मगन**' देशज प्रयोग है।

हिंदी में 'छिया' सं० स्त्री० शब्द (स० स्त्री क्षिम, प्रा०, छिव०, हिं० छि:) का अर्थ 'घृणित वस्तु' (यथा मल, गुह) है। ब्रजभाषा में "**छिया छरद** करना"[1] मुहावरे का अर्थ — गुह और वमन के समान घृणित समझ कर दूर हटाना। यहां '**छिया छी**' उसी का विकृत रूप जान पड़ता है।

ब्रजभाषा मे 'दृष्टि' अर्थ में 'दीठ' सं० स्त्री शब्द है, '**दीख**' नहीं। अवधी में भी 'दीठि' ही है। अत: '**दीख**' यहां नव शब्द ही है।

सस्कृत में 'नवधा-अंग'[2] पु० शब्द का अर्थ है — शरीर के नौ अंग — 'दो आखें, दो कान, दो हाथ, दो पैर, और एक नाक।' 'नवधा' अव्यय शब्द का अर्थ है —नौ प्रकार से, नौ भागों में। संस्कृत मे 'नवधा-भक्ति' की भांति '**नवधा-अंग**' में भी सहसुपा समास है।

'**पुस्तककीट**' अंग्रेज़ी के Book-worm का हिंदी समानक शब्द है।

हिंदी में नूपुरो की झंकार का अनुकरणवाचक शब्द 'रुनझुन' है। उसी के साम्य पर '**रुमझुम**' भी चलता है (हिं० रुमना + झूमना)

'**हरीतिमा**' तो पंत, निराला आदि छायावादी कवियों का प्रिय शब्द रहा है — अर्थ है 'हरियाली'।

सुमेरु पर्वत का एक पर्यायवाची 'हेमाचल' (पु० — स० मध्य० समास) भी है। कवि ने यहा 'हिमालय' अर्थ मे 'हेमाचल' लिखा है। हिमालय का एक पर्यायवाची 'हिमाचल'[3] भी है उसी के भ्रम से या अनुकरण पर यहां 'हेमांचल' लिखा गया है।

---

१. तुल० जो **छिया-छरद** कारि सकल सतन तजि, तासू तै मूढ़मति प्रीति ठानी'
(सूर० १-११०)

२. मानक हिंदी कोश, तीसरा खण्ड

३. वृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी, १६५, दे० हिमालय, सुमेरु पर्वत

शब्द-लोप

का[1] की[2] पर[3] में[4] और से[5] शब्दों का लोप चतुर्वेदी जी की कविताओं में भी देखा जा सकता है। कहीं तो यह कविता की लय और छन्द के अनुकूल है, कहीं प्रतिकूल।

---

१. (क) माता, देश में ऐसे बालक हों, ४० — ' दमकता हो समानता (का) तत्त्व '

(ख) माता, अदालत मे सत्याग्रही......, ७१ — ' असहयोग (का) मतवाला हूं '

२. माता, युग-तरुण से, ३६ — ' प्रणय (की) पहचान मेरे '

३. (क) हिमकिरीटिनी, गीत, २ — ' मैं उन आंखों (पर) तरती हूं सखी '

(ख) माता, मुझ को कहते हैं माता, ९१ ' मातृभूमि के चरणों (पर) यह '

(ग) माता, मेरी रसवंती, ८४ — ' लाख लाशों (पर) चरण धर चली आएगी '

(घ) माता, युग-तरुण से, ३५ — ' चढ़ेगी मुरली अधरों (पर) '

४. (क) माता, मेरी रसवती, ८३ — ' आसुओं (मे) डूबना नित्य भाता रहे '

(ख) माता, मुझ को कहते हैं माता, ९१ ' मेरी गोद (मे) खेलने आया '

(ग) हिमकिरीटिनी, गीत, २ — ' लोग कहे उन आखों (मे) डूबी '

५. (क) युग-चरण, गीत, १४ — ' इन खिलवाड़ो (से) खेल रहे वे '

(ख) बेणु लो......, कविता ६, ७ — ' नयी बूंदों (से) सींच कर '

(ग) हिमकिरीटिनी, गीत, ९ — ' बूंदों (से) मेरे हैं तट हरियाले होते '

(घ) हिमकिरीटिनी, पूजा, १२४ ' सजल प्राणों (से) अर्चा कैसे होगी? '

प्रिय शब्द

कवि के प्रिय शब्द इस प्रकार हैं —

अजमाने, अनगिन, अनचाही, अनबोली, अनबोले, अनमोली, अनहोनी, आगी, उट्ठा, ऊग, ऊगना, ऊगा, किरन, किरनें, कृष्णार्पण, गीर्वाणी, जोती, टुक, टेकड़ियां, दुख, दूखे, देवता, पंखिनियां, बलिपथ, बलिपथी, बहिना, बेकाबु, बेदाग,बेहाल, मरण, महरानी, रस्ता, रुमझुम, वृत, हरीतिमा, और हेमांचल।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि की कविताओं मे शब्द-चित्रों का भी अभाव नहीं है। यदि यहां नदियां '**कल कल**'[१] और धाराएं '**छलछल**'[२] करती हुई प्रवहमान हैं तो झरने और बादल भी '**झरझर**'[३] करते हुए झरते हैं। वर्षा '**रिमझिम**'[४] करती बरसती है। पानी और पंख '**सरसर**'[५] की सरसराहट से हमारा मन मोह लेते हैं। आम्र-वन '**मर मर**'[६] करते हुए चरमराते है और पत्ते '**खड़खड़**'[७] करते हुए खड़खड़ाते हैं। इसी प्रकार

---

१. माता, कल्याणी, ११७ — 'धारा रानी ओढ सुवी **कलकलमय** थी'

२. मरण ज्वार, गांधी : विनोबा, ७३ — 'महानदी लहरायेगी **छलछल** होगा'

३. (क) मरण-ज्वार, मेरा है हिमशैल, ५८ — 'झरने खोल रहे हैं **झरझर**'

(ख) समर्पण, अमर अमर, ३५ — '**झर-झर** झरते बादल'

४. समर्पण, झूला झूले री, ७५ — '**रिमझिम रिमझिम** बरसन'

५. (क) आधुनिक कवि, बादल आज उदार ...., १०६ — '**सर-सर-सर** पानी की मारें'

(ख) वेणु लो ......, कविता १५, २० — 'पंखों की **सर-सर**'

६. समर्पण, चले समर्पण आगे आगे, ७३ — 'यों **मर-मर** मत करो आम्रवन'

७. समर्पण, अंधड़ और मानव, ७४ — 'पत्तों की **खड़खड़** से'

बिजली **चमचम** [1] करती हुई चमचमाती है और तारे '**टिमटिम**' [2] करते हुए टिम-टिमाते हैं। वर्षा की बूंदें **रुनझुन** [3] और घंटियां '**टुनटुन**' [4] का संगीत सुनाती हैं। **ताना-ना-ना** [5] वीणा की स्वर-लहरी है। '**सनन सनन**' [6] और सन-सन समीर की सनसनाहट है।

इसके अतिरिक्त यहां कोल्हू '**चरंक चूं**' [7] करते हुए चलते हैं। बकरियां '**मैं मैं**' [8] करती हुई मिमियाती हैं।

अत: इन कर्णमधुर शब्दों से यह प्रमाणित हो जाता है कि कवि ने ध्वन्यात्मक व्यंजना के निकष पर भी उन्हें कस कर निखारा और सँवारा है।

---

१. आधुनिक कवि, घर मेरा है, २० — 'बिजली की **चमचम** पर चढ़ कर'
२. वही, तुम्हारा चित्र, ५० — 'ये **टिमटिम** पंथी, ये तारे'
३. वेणु लो ..., कविता २२, २८ — 'उतर उट्ठी बूँदो मीठी **रुनझुन**'
४. समर्पण, गोधूली है, ३९ — '**टुन-टुन** क्वणित कदम्ब लोक से ले गायें'
५. माता, मुझ को कहते हैं माता, ९० — 'वीणा ले कर करना **ताना-ना-ना**'
६. मरण-ज्वार, हाजिर प्राण हमारा, ७८ — '**सनन सनन** बह रही हवा'
७. हिमकिरीटिनी, कैदी और कोकिला, १७ — 'कोल्हू का **चरंक चूं**'
८. मरण-ज्वार, हाजिर प्राण हमारा, ७९ — 'तू न बकरियों-सा **मैं मैं** कर'

श्री जयशंकर प्रसाद

प्रसाद जी छायावादी काव्य धारा के प्रवर्त्तक माने जाते हैं। आगे चल क काव्य-भाषा का जो रूप पंत, निराला और महादेवी वर्मा के काव्य में पल्लवित हुअ उस के अँकुर प्रसाद जी की कविताओं में पहले से विद्यमान थे।

संज्ञा

कवि प्रसाद द्वारा प्रयुक्त कुछ विशिष्ट संज्ञा प्रयोग देखे —

छलघात [1], डुब्बी [2], निराले [3], पगोडा [4], पछेड़ा [5], पहल [6], पाली [7] फलभरता [8], बहिया [9], बुल्ले [10], रटना

---

१. कानन-कुसुम, याचना, ६९ — 'स्वार्थी दुःख दे रहे अपने मलिन छलछात से

२. झरना, पाई बाग, ४९ — 'व्यर्थ लगाने को डुब्बी'

३. कानन-कुसुम, तुम्हारा स्मरण, ६६ — 'रहे निराले में जाकर'

४. कानन-कुसुम, मंदिर, १२ — 'मस्जिद, पगोडा, गिरजा ...'

५. प्रसाद-संगीत, गीम, १३ — 'पवन प्रलय का कैसा किये पछेड़ा है'

३. झरपा, रत्न, ७१ — 'पहल न उसमे था बना'

७. आंसू, २२ — 'कोमल कपोल पाली में सीधी सादी स्मित रेखा'

८. कामायनी, लज्जा सर्ग, ९८ — 'झुक जाती है मन की डाली अपनी फल भरता के डर से'

९. प्रसाद-संगीत, गीत, ८१ — 'आंधी की बहिया बह जाती'

१०. कामायनी, लज्जा सर्ग, ९७ 'लहरों की छाया में बुल्ले का विभव बिखरता'

रटना [1], विवादी [2], सिताबी [3]।

' **छलछात** ' [4] या ' छलछाया ' संज्ञा शब्द ब्रज० में ' छलकपट ' या ' माया, अर्थ में है। हिंदी में ' छलछंद ' संज्ञा पुं० शब्द ही अधिक प्रचलित है।

' **डुब्बी** ' सं० स्त्री० शब्द ' डुबकी अर्थ में है।

' **निराले** ' यहां वि० न हो कर संज्ञा रूप में प्रयुक्त है। अर्थ — एकांत और निर्जन स्थान।

' **पगोडा** ' सं० पुं० शब्द बर्मी भाषा का है। अर्थ—बुद्ध भगवान् का मंदिर। नयी कविता में इसका प्रयोग बढ़ रहा है।

' **पछेड़ा** ' सं० पुं० का अर्थ है — किसी को तंग करने के लिए उसके पीछे पड़ने की क्रिया। यह नयी संज्ञा है।

' **पहल** ' सं० पुं० शब्द है। फा० मे ' पहलू ' शब्द और संस्कृत में ' पटल ' शब्द लगभग समानार्थी ही हैं। एक अर्थ — ' बीच का तल, पार्श्व भी है। यथा: ' पासे मे छह पहल होते है ' और ... ' इस नगीने मे बारह पहल कटे हैं। यहां यही अर्थ है।

' **पाली** ' स्त्री० शब्द का एक अर्थ ' ऊपरी तल या पार्श्व ' भी है। यह नव प्रयोग है। ' कपोल-पाली ' [5] पद भी चलता है।

' **फलभरता** ' स्त्री० का यहा अर्थ है —' फलों से लदे होने की अवस्था, भाव या परिपक्वता, परिपूर्णता ' । यह भी नयी संज्ञा है।

' **बहिया** ' स्त्री० शब्द ' बाढ़ ' अर्थ में संभव हो सकता है। कदाचित् ' बहना ' क्रिया से ही यह शब्द बना है।

' **बुल्ला** ' या ' बुल्लन ' देशज शब्द है। अर्थ — ' बुलबुला ' । वैसे ' बुलबुला ' का ही विकृत रूप है ' बुल्ला ' ।

---

१. झरना, झरना, १५ — ' हृदय को लगी अचानक **रटना** '

२. कामायनी, संघर्ष, १९३ — ' **तुम न विवादी** स्वर छेड़ो '

३. झरना, होली की रात, ६८ — ' **सिताबी** छिड़क रहा विधुकांत'

४. ब्रज० सूर कोश प्रथम खण्ड

५. मानक हिंदी कोश, तीसरा खण्ड, दे० ' पाली '

'**रटना**' सं० स्त्री० शब्द यहां क्रिया नहीं, संज्ञा है। अर्थ — रटने की क्रिया।

'**विवादी**' सं० पुं० शब्द का एक अर्थ है — 'संगीत में वह स्वर जो केवल कोमलता या सुदरता लाने के लिए कभी-कभार प्रयुक्त कर लिया जाए यथा भैरवी में तीव्र ऋषभ या तीव्र निषाद का स्वर। वैसे ये स्वर नियमित रूप से नहीं आते।

'**सिताबी**'[1] सं० स्त्री० शब्द यहां 'महताबी नाम की आतिशबाजी अर्थ में है जिस के छोड़ने पर चांदनी सी छिटक जाती है।[2] महताबी फ़ारसी का शब्द है।

संज्ञा-विकार

संज्ञाओं के कुछ विकृत रूप भी प्रसाद जी ने प्रस्तुत किए हैं। कुछ उदाहरण ये हैं —

अधार[3] (आ), अली[4] (लि), अलोक[5] (आ), अहिमिति[6] (अहम्-मति), आश[7] (शा), कन[8] (ण), करुना[9] (णा), कलोल[10] (कल्लोल),

१. मानक हिंदी कोश, पांचवां खण्ड दे० 'सिताबी'
२. उर्दू हिंदी शब्द-कोश, मद्दाह, दे० 'महताबी'।
३. कानन-कुसुम, मर्म-कथा, २६ — 'प्राण-अधार शत्रु कैसे'
४. कानन-कुसुम, करुणा-कुंज, १९ — 'अलीगण घूमते'
५. कामायनी, स्वप्न सर्ग, १८२ — 'अलोक-शिखा जलती'
६. (क) झरना, आदेश, ७५ — 'अहिमिति का यह स्वार्थ'

(ख) प्रसाद-संगीत, गीत, ७३ — 'अहिमिति से निज'
७. कानन-कुसुम, सौंदर्य, ५६ — 'खड़ा चातक रहा किस आश में'
८. (क) कामायनी, दर्शन, २३१ — 'स्वाती कन से'

(ख) कामायनी, आनन्द, २७८ — 'जिसके दल से हिमकन'
९. प्रसाद-संगीत, गीत, ७४ — 'भरी करुना जल'
१०. कामायनी, दर्शन, २५२ — 'केवल प्रकाश का था कलोल'

कादम्बिनि [1] (नी), किरन [2] (ण), खुट्टी [3] (कु), गन [4] (ण), जगत [5] (त्), झिटका [6] (झ), झिटके [7] (झ), झोरी [8] (ली), तड़ित [9] (तड़ित्), तपस [10] (स्), तरगिनि [11] (नी), तिमिंगलों [12] (गि), तेजस [13] (स्), तोरन [14] (ण) द्वन्दो [15] (द्वों), नारि [16] (री), निरोगता [17] (नी),

---

१. (क) आंसू, ५९ — ' **कादम्बिनि** की कारा में '

(ख) प्रेम पथिक, ७ — ' करुणा-**कादंबिनि** बरसे '

२. कामायनी, वासना, ८७ — ' कामना की **किरन** का '

३. कामायनी, संघर्ष, १९६ — ' लडके जैसे खेलो मे कर लेते **खुट्टी** '

४. कामायनी, स्वप्न, १७८ — ' इधर उधर **उडुगन** बिखरे '

५. (क) कामायनी, आशा, ३४ — ' विजन **जगत** की '

(ख) कामायनी, निर्वेद, २०६ — ' दृश्य **जगत** से '

६. कामायनी, श्रद्धा, ४५ — ' एक **झिटका**-सा लगा महर्ष '

७. लहर, प्रलय की छाया, ६५ — ' एक **झिटके** मे आज '

८. झरना, स्वप्नलोक, ५२ — ' **झोरी** फेकी सुमन की '

९. (क) लहर, ३२ — ' **तड़ित** स्वर्णिम किरण '

(ख) लहर, पेशोला की प्रतिध्वनि, ६३ — ' **तड़ित** विलास सी '

१०. कामायनी, रहस्य, २७० — ' न्याय, **तपस**, ...'

११. (क) आंसू, ८ — ' चेतना-**तरंगिनि** मेरी '

(ख) आसू, ३९ — ' विरह **तरंगिनि** तीरे '

१२. कामायनी, चिता, १२ — ' **तिमिंगलों** की भीड़ अधीर '

१३. प्रसाद-सगीत, गीत, ४० — ' **तेजस** खोने मे '

१४. महाराणा का महत्त्व, १९ — ' **तोरन** बन्दनवार हरे '

१५. प्रसाद-संगीत, गीत, ८२ — ' इन **द्वन्दों** का मिटे तमाशा '

१६. महाराणा का महत्त्व, २९ — ' यह सुव्रता हमारी **नारि** है '

१७. प्रेम पथिक, ७ — ' **निरोगता** को — '

निश्वास [१] (निः), पूरनिमा [२] (पूर्णिमा), पौन [३] (पवन), प्रन [४] (ण), प्रहलाद [५] (प्रह्लाद), प्रान [६] (ण), बलवान [७] (न्), बलिका [८] (बा), बुदबुद [९], बुद्बुद् [१०] (बुद्बुद), ब्राण [११] (व्रण), भगवान [१२] (न्), मजूरों [१३] (मजदूरों), मरोर [१४] (मरोड़), मलीनता [१५] (लि), माल [१६] (ला), मुसक्यान [१७] (मुस्कान रंग [१८] (क)

---

१. (क) कामायनी, काम, ६४ — ' ले कर निश्वास निराशा की '

(ख) कामायनी, चिंता, ८ — ' जीवन के मधुमय निश्वास '

२. आंसू, ३३ — ' छवि पूरनिमा थी छाई '

३. कानन-कुसुम, महाक्रीड़ा, १६ — ' बन के दक्षिण पौन '

४. कामायनी, दर्शन, २४३ — ' पर छुटे न प्रन '

५. कानन-कुसुम, मकरन्द-विन्दु, १०० — ' बंधा हुआ प्रहलाद सदृश '

६. (क) कामायनी, वासना, ९४ — ' विकल हों प्रान '

(ख) कामायनी, ईर्ष्या, १४५ — ' मधुर प्रान '

७. प्रसाद-संगीत, गीत, ३३ — ' निर्बल या बलवान '

८. कामायनी, स्वप्न, १७५ — ' विहग-बलिका सी किरनें '

९. कामायनी, निर्वेद, २२ — ' बुदबुद की माया नचती '

१०. कामायनी, आनंद, २८८ — ' बुद्बुद्-सा रूप बनाये '

११. झरना, आशालता, ५७ — ' पाये ब्राण '

१२. प्रसाद-संगीत, गीत, ३३ — ' न उसे भगवान '

१३. प्रसाद-संगीत, गान, १३७ — ' मजूरों का कल हो '

१४. (क) कामायनी, लज्जा, १०३ — ' मन की मरोर '

(ख) कामायनी, ईर्ष्या, १४१ — ' चंचल मरोर '

१५. महाराणा का महत्त्व, ८ — ' है छुटी मलीनता '

१६. कामायनी, वासना, ९३ — ' रचती तमिस्रा माल '

१७. (क) कामायनी, श्रद्धा, ४७ — ' मुख पर वह मुसक्यान '

(ख) कामायनी, वासना, ८७ — ' सुधामय मुसक्यान '

१८. कामायनी, दर्शन, २४९ — ' दे कर कुछ कोई नहीं रंग '

रतनाकर [1] (त्न), राशी [2] (शि), वाणि [3] (णी), वक्षस्थल [4] (वक्ष:), विद्युत [5] (त्), विद्वान [6] (न्), विपद [7] (द्), शकुनी [8] (नि), समीरन (ण)[9] सम्राट[10] (ट्), सरवर [11] (सरो), सीम [12] (मा), सुखमा [13] (सुष), सुरभी [14] (भि), सुरसरी [15] (रि), हेराफेर [16] (हेराफेर या हेराफेरी),

विशेषण

कवि द्वारा प्रयुक्त कतिपय कुछ विशेषण-प्रयोग द्रष्टव्य हैं —

---

१. आसू, ३३ — ' रतनाकर बनी चमकती '

२. कानन-कुसुम, गान, ९७ — ' देश बना सुख-राशी हो '

३. (क) कामायनी, दर्शन, २३३ — ' सरिता वक्षस्थल '
(ख) झरना, दीप, ३३ — ' जला करेगा वक्षस्थल '

४. कानन-कुसुम, कोकिल, ५४ — ' वाणि वीणा-अनुकारी '

५. (क) कामायनी लज्जा, १०० — ' विद्युत की प्राणमयी धारा '
(ख) कामायनी, कर्म, १२५ — ' विद्युत थे बिखराते '

६. झरना, आदेश, ७५ — ' बनते है विद्वान '

७. (क) कामायना, स्वप्न, १८१ — ' विपद-नदी में '
(ख) आसू, ५५ — ' चिंता छुट जाय विपद की '

८. कानन-कुसुम, कुरुक्षेत्र, ११९ — ' दिया था साथ शकुनी-हाथ ने '

९. कानन-कुसुम, सरोज, ४३ — ' तुम्हें हिलावे भी जो समीरन '

१०. महाराणा का महत्व, १७ — ' उस सम्राट का '

११. प्रेम पथिक, २ — ' दूर हट रहा सरवर शीतल '

१२. कानन-कुसुम, गंगा सागर, ८१ — ' न घटते-बड़ते निज सीम से '

१३. झरना, असतोष, ४० — ' नवल सुखमा का '

१४. कानन-कुसुम, एकात में, ५८ — ' गज, अश्व, सुरभी दे रही उपहार '

१५. (क) झरना, चिह्न, ३२ — ' शांति सुरसुरी की '
(ख) झरना, देवबाला, ७७ — ' सुरसरी की यह विमल धारा है '

१६. प्रसाद-संगीत, १४ (बिशाख, प्रथम अंक, द्वितीय दृश्य) — ' चतुर सिया ने किया करेंगे इस में हेराफेर '

नर्ममय [1], मधुमुख [2], लुटरी [3] लेलिहान [4]।

'**नर्ममय**' का यहां अर्थ है — मनोरंजनपूर्ण। संस्कृत में 'नर्मन्' नपुं० शब्द क्रीड़ा, हंसी मज़ाक, मनोरंजन अर्थों में है।

'**मधुमुख**' वि० का अर्थ है — मधुर भाषी, जिसकी वाणी मधु-समान मीठी हो। यह नया वि० प्रयोग है।

'**लुटरी**' [5] वि० स्त्री० (पुं० लुटरा) का यहां अर्थ है घुंघराली। यह भी नया विशेषण शब्द है।

'**लेलिहान**' वि० का अर्थ है — चाटने वाली। अन्य अर्थ 'ललचायी हुई' भी होता है। यह तत्सम वि० शब्द है।

विशेषण-विकार

कुछ विशेषण विकृत रूपों मे भी हैं यथा —

अधमारी [6] (मरी), असख [7] (ख्य), असत [8] (त्), कांतिमान [9] (न्), कुहकिनि [10] (नी),

---

१. कामायनी, वासना, ९४ — 'पा कर पुरुष का **नर्ममय** उपचार'

२. कानन-कुसुम, नहीं डरते, ९० — '**मधुमुख** थे मुझ को अब तक मिले कई'

३. कामायनी, स्वप्न, १७९ — '**लुटरी** खुली अलक'

४. प्रसाद-संगीत, गीत, ८५ — '**लेलिहान** जिह्वा का'

५. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० 'लुटरी' शब्द

६. प्रसाद-सगीत, गीत, १ — 'हू मै **अधमारी**' ('राज्यश्री' नाटक, १८)

७. झरना, होली की रात, ६७ — 'मधुर उठती है तान **असंख**'

८. कामायनी, दर्शन, २५१ — 'वह शून्य **असत** या अधकार'

९. कामायनी, ईर्ष्या, १५१ — 'आवरण डाल दे **कांतिमान**'

१०. आंसू, ३३ — 'सन्ध्या **कुहकिनि** अचल मे'

छविमान [1] (न्) ज्योतिमान [2] (न्), ज्योतिर्मान [3] (न्), द्युतिमान [4] (न्) निधरक [5] (धड़क), निबल [6] (बे), पूरन [7] (पूर्ण), भाग्यवान [8] (न्) मलीन [9] (लि), महान [10] (न्), मूर्तिमान [11] (न्), विराट [12] (ट्), विलासिनि [13] (नी), श्रीमान [14] (न्), संगिनि [15] (नी), सुखदाई [16] (दायी)

---

१. (क) कामायनी, आशा , २७ — ' जागरण सी **छविमान** '

(ख) कामायनी, वासना, ८३ — ' तुम में छिपा **छविमान** '

२. कामायनी, इड़ा, १६३ — ' शांत प्रभा से **ज्योतिमान** '

३. कामायनी, आशा, २६ — ' अंतरिक्ष मे **ज्योतिर्मान** '

४. कामायनी, श्रद्धा, ५४ — ' सुखमणि-गण **द्युतिमान** '

५. लहर, ४२ — ' **निधरक** तू ने ठुकराया '

६. कामायनी, आशा, २५ — ' फिर भी कितने **निबल** रहे '

७. कानन-कुसुम, जल-विहारिणी, ४८ — ' आलोक-**पूरन** गात '

८. कामायनी, रहस्य, २६८ — ' **भाग्यवान** बन क्षणिक भोग के '

९. (क) झरना, चिह्न, ३१ — ' मुह खोले **मलीन** अवकाश '

(ख) आंसू, ४० — ' तम के **मलीन** अचल में '

१०. (क) झरना, आदेश, ७५ — ' आदेश **महान** '

(ख) कामायनी, श्रद्धा ५१ — ' संदेश **महान** '

११. (क) लहर, प्रलय की छाया, ७६ — ' **मूर्तिमान** प्रतिशोध '

(ख) कामायनी, इड़ा, १५९ — ' तू **मूर्तिमान** हो छिप जाता '

१२. (क) कामायनी, ' कर्म, १२६ — ' आज **विराट** बना था '

(ख) कामायनी, आनंद, २८३ — ' सामने **विराट** धवल नग '

१३. कामायनी, कर्म १३० — ' हृदय की तृप्ति **विलासिनि** '

१४. कानन-कुसुम, चित्रकूट, १०२ — ' **श्रीमान** भोगते सुख '

१५. आंसू, ७५ — ' मेरी चिर जीवन-**संगिनि** '

१६. कानन-कुसुम, रजनी-गंधा, ४० — ' हुआ प्रकटित **सुखदाई** '

विशेषण-विपर्यय

इसके उदाहरण भी मिल जाते हैं यथा —

काली [१] (जंजीरो), बरसाती [२] (आंखो), मूछित [३] (तानें)

क्रिया

कुछ क्रिया-प्रयोग विशेष रूप से उल्लेखनीय है—

अनखा [४], उतरा [५], कुलाँच [६], खिझला [७], गुँजारो [८], चाख [९], झीम [१०], दीजे [११], बरसती [१२], मुसक्या [१३], मुसक्याता [१४],

---

१. आंसू, २१ — ' बांधा था विधु को किसने इन **काली** जजीरो मे '
२. प्रसाद-सगीत, गीत, १०९ — ' **बरसाती** आंखो के बादल '
३. कामायनी, चिंता, १० — ' मौन हुई हैं **मूच्छित** ताने '
४. झरना, आशालता, ५७ — ' कहा **अनखा** कर उसने खूब '
५. प्रसाद-सँगीत, गीत, ३५ — ' नाव **उतरा** चली लगते हलके डांड '
६. कामायनी, इड़ा, १५८ — ' असफलता अधिक **कुलाँच** रही '
७ कानन-कुसुम, नव वसन, २४ — ' कुसम कलियो को कभी **खिझला** दिया '
८. आंसू, ६५ — ' मधुपों से मधु **गुंजारो** '
९. प्रसाद-सगीत, गीत, ८० — ' भर नैन सुधा छवि **चाख** गई '
१०. कामायनी, काम, ६५ ' नव नील कुंज है **झीम** रहे, कुसुमो की कथा न बद हुई '
११. कानन-कुसुम, मन्दिर, १२ — ' जैसा कि उसको **दीजे** '
१२. (क) कामायनी, आशा, २३ — उषा सुनहले तीर **बरसती** '

(ख) प्रसार-सगीत, गीत, ५२ — ' प्रकृति **बरसती** फूल '
१३. कामायनी, आनन्द, २८७ — ' मनु ने कुछ कुछ **मुसक्या** कर '
१४. कामायनी, कर्म, १२८ — ' **मुसक्याता** रहता है '

मुसक्याये [1], लीजे [2], लेखते [3], लेखें [4], बिचलेगा [5], वितरे [6], वितरो [7], विवाहा [8], सिधारी [9], और हूजिये [10]।

'**अनखाना**' स० क्रि० (अनखाना अ० क्रि०) है। यहां इसी का अकर्मक क्रिया के रूप मे प्रयोग हुआ है। अर्थ— 'रुष्ट या अप्रसन्न होना'

'**उतराना**' [11] अ० क्रि० (सं० उत्तरण) का अर्थ है — 'पानी में पड़ी हुई चीज का उसके ऊपर तैरना'। यहा मात्र 'तैरना' अर्थ ही अभिप्रेत है।

'**कुलांचना**' अ० क्रि० (तु० कुलाच, हिं० कुलाँच) छलाँग लगाना या चौकड़ी भरना अर्थ में है।

'**खिझलाना**' स० क्रि० है। हिंदी मे 'खिजलाना' क्रि० अकर्मक और सकर्मक दोनो रूपो में चलती है। 'ज' वर्ण का 'झ' मे परिवर्तन नया है। अर्थ — 'खीजने में प्रवृत्त करना'।

'**गुंजारना**' अ० क्रि० 'भौरो का गुजार करना' अर्थ मे है।

'**चाखना**' स० क्रि० वस्तुत: 'चखना का ही पद्य-सीमित शब्द-प्रयोग है।

'**झींमना**' अ० क्रि० यहा 'ऊंघना' अर्थ मे है। मानक हिदो कोश में 'झूमना' अर्थ दे कर यही वाक्य उद्धृत किया गया है जोकि अशुद्ध है। [12] यह ध्वन्यात्मक क्रिया है।

---

१. कामायनी, आनन्द, २८१ — 'सूखे तरु कुछ **मुसक्याये**'
२. कानन-कुसुम, मन्दिर, १२ — 'उस को तो देख **लीजे**'
३. कानन-कुसुम, बाल-क्रीड़ा, ५२ — 'तुम्हे हैं एक **लेखते**'
४. कामायनी, सघर्ष, २०० — 'आज साहसिक का पौरुष निज तन पर **लेखें**'
५. लहर, ५७ — कौन **बिचलेगा** नही?'
६. कामायनी, दर्शन, २४४ — 'आकर्षण घन-सा **वितरे** जल'
७. कामायनी, ईर्ष्या, १५३ — 'बन सजल जलद **वितरो** न बिन्दु'
८. कानन-कुसुम, कुरुक्षेत्र, ११८ — 'सुभद्रा को **विवाहा** पार्थ से'
९. कानन-कुसुम, चित्रकूट, १०६ — 'पर्णकुटी को अपने **सिधारी** जानकी'
१०. करुणालय, दृश्य १, ११ — 'शांत **हूजिये**'
११. मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड, दे० उतराना
१२. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० 'झींमना'

'**बीजे**', **मुसक्या**, **लीजे** और **हूजिये** क्रि० शब्द तो भारत के कुछ विशेष प्रांतों में बोलचाल के अभिन्न अंग बन गये हैं।

'**बरसती**' क्रि० प्राय: अकर्मक ही चलती है। यहां इस का सकर्मक रूप में नया प्रयोग है।

'**लेखते**' यहा 'समझना' अर्थ वाली 'लेखना' स० क्रि० से सम्बद्ध है।

'**लेखें**' का यहां अर्थ है — चिह्न बनाये, लिखे। 'लेखना' का एक अर्थ यह भी है।

'**बिचलना**' अ० क्रि० (स० विचरन) का अर्थ है — अपने स्थान से हटना।

'**वितरना**' स० क्रि० (स० वितरण) बाटना अर्थ मे है।

'**बिवाहना**' स० क्रि० 'ब्याहना' अर्थ मे कविताओ मे मिल जाती है। वैसे गद्य में इस का अधिक प्रयोग नही होता।

'**सिधारना**' अ० क्रि० का प्राचीन अर्थ 'स्वर्गवास होना' ही था। अब कहीं भी 'गमन या प्रस्थान करने के' भी इस का प्रयोग चल पडा है।

क्रिया विकार

भारत के विभिन्न प्रदेशों मे एक ही क्रिया के अनेक रूप पचलित हैं। प्रसाद जी ने जो क्रिया-रूप प्रयुक्त किए है उन्हे अशुद्ध न मानते हुये भी हम नीचे कोष्ठको मे अधिकांशत: प्रचलित रूप ही दे रहे है —

आय [1] (ये या ए), उगिलता [2], उगिलते [3] (ग), उतरायँ [4], (यें), खायगी [5],

---

१. झरना, बिन्दु, ८९ — 'अनायास ही **आय**'

२. कानन-कुसुम, ग्रीष्म का मध्याह्न, ३१ — 'अगणित जीव **उगिलता** है'

३. कानन-कुसुम, ग्रीष्म का मध्याह्न, ३० — 'ज्वाला-ताप **उगिलते** है'

४. कामायनी, श्रद्धा, ५९ — 'द्वीप, कच्छप डूबे-**उतरायें**'

५. कानन-कुसुम, भरत, ११२ — 'मार **खायगी**'

चली [1] (चले), चहता [2] (चा), चहो [3] (चा), छाय [4] (ये या ए) छिलने [5] (छी), जायँ [6] (यें या एं), जायँगी [7], जायँगे [8], जाय [9] जायगा [10], जायगी [11], जाव [12] (जाओ), दिखलाते [13], दिखाते [14], (दिखते), पावै [15], (वे) पिन्हा [16] (पहना), फरक (फड़क) [17], बिछाय [18],

---

१. महाराणा का महत्त्व, ४ — ' घाटी तक बस चली चलो '
२. महाराणा का महत्त्व, २१ — ' अच्छा होना हूं मैं चहता '
३. कानन-कुसुम, कुरुक्षेत्र, १२२ — ' अयश क्यों दौड़ कर लेना चहो '
४. कामायनी, इड़ा, १७१ — ' लोक मे रहे छाय '
५. स्कन्दगुप्त, ११वां संस्क०, २३ — ' लगे मेरी नख छाती छिलने '
६. कामायनी, इड़ा, १६४ — ' दिन पतझड़ से सूखे जायँ बीत '
७. झरना, स्वप्नलोक, ५२ — ये खिल जायँगी '
८. झरना, प्रत्याशा, ५० — ' स्वयं हट जायँगे '
९. (क) कामायनी, ईर्ष्या, १४५ — ' सब कुछ ही जाय भूल '
(ख) कामायनी, ईर्ष्या, १४६ — ' चल जाय तुम्हारा कहीं अस्त्र '
१०. कानन-कुसुम, सौंदर्य, ५७ ' चित्र वह बन जायगा ' ' तब प्रकट हो जायगा '
११. कानन-कुसुम, श्रीकृष्ण जयन्ती, १३० — ' ज्योति प्रकट हो जायगी '
१२. (क) झरना, सुधासिंचन, ५९ — ' रुक जाव यहीं '
(ख) झरना, धूल का खेल, ८७ — खेल की नाव, जहा ले जाव '
(ग) कानन-कुसुम, करुण-क्रंदन, १४ — सारथी बन जाव '
१३. कानन-कुसुम, चित्रकूट, १०७ ' है जानकी भी पास, पर लक्ष्मण न दिखलाते वहां '
१४. कानन-कुसुम, करुणा-कुज, १९ — ' तुम्हें सुघर ये दृश्य दिखाते हैं नहीं '
१५. करुणालय, ३१ — ' कौन पावै पार '
१६. कानन-कुसुम, ठहरो, ५१ — ' उसे पिन्हा सकते नहीं '
१७. कामायनी, इड़ा, १६९ — ' पतले पुट फरक रहे '
१८. प्रसाद-सँगीत, गीत, ६२ — ' न सेज उजला बिछाय कोई '

रक्खा [1] (रखा), रक्खे [2], रक्खो [3], लगाय [4], सज्ज [5] (सज), समाय [6] (ये या ए), सुखला [7] (सुखा)

इन में ' छिलना ' क्रि० अकर्मक के स्थान पर सकर्मक के रूप में प्रयुक्त की गई है। ' दिखलाना ' और ' दिखाना ' क्रियाएं वस्तुत: ' देखना ' स० क्रि० का प्रेरणार्थक रूप होती हैं परन्तु पश्चिम की कुछ बोलियों मे ये क्रियाएं ' दिखना ' अ० क्रि० की भांति चलती हैं। ' सुखलाना ' स० क्रि० भी ' सुखाना ' अर्थ में पश्चिमी बोली का नमूना है।

आय, खाय, जाय, समाय आदि क्रियाएं ' ये ' से लिखी जाएं या ' ए ' से इस विषय में हिंदी के भाषाशास्त्री अभी एकमत नही हो सके हैं। फिर भी ' आवे ' और ' आए ' ये दोनों रूप ही अधिकांशत: गृहीत हैं, ' आय ' नहीं।

' रक्खना ' क्रि० बोलचाल के अधिक निकट है परन्तु पं० किशोरीदास बाजपेयी जैसे विद्वान् शिष्ट और मानक हिंदी में ' रखना ' लिखने के ही पक्षपाती हैं। बोलचाल में तो ' रोट्टी ' और ' धोत्ती ' रूप भी चलते हैं परन्तु साहित्यिक हिंदी में वे रूप ग्रहण नहीं किये जाते। [8]

उपसर्ग

प्रसाद जी की कविताओं में अ, अन (सं० अन्) अनु, दुर, निर्, प्र, प्रति, सम् और सु उपसर्गों का प्रयोग देखा जा सकता है।

---

१. (क) कामायनी, दर्शन, २३७ — ' तुम ने रक्खा जीवन '

(ख) कामायनी, आनंद, २८४ — ' रक्खा हीरे का पानी '

२. कामायनी, स्वप्न, १८३ — ' एक ओर रक्खे हैं '

३. कानन-कुसुम, प्रियतम, ८३ — ' रक्खो जब तक आंखो में '

४. प्रसाद-सँगीत, गीत, ६२ — ' विटप कँटीले लगाय '

५. महाराणा का महत्त्व, २० — ' सज्ज सभागृह में सब '

६. प्रसाद-सँगीत, गीत, ६२ — ' न बात मन में समाय कोई '

७. झरना, पाईं बाग, ५१ — ' गिरा दिए वृक्षों ने सारे पत्ते अपने सुखला कर '

८. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास बाजपेयी, ६३

कुछ उदाहरण क्रमश: इस प्रकार हैं —

अकथ, अकपट, अकूल, अछूत, अपदार्थ, अबंध, अभंग, अमंद, अबला, अविचार, अशेष, अभ्रांत आदि।

अनगढ़े, अनजान, अनबन, अनमनी, अनमिल, अनमेल, अनवस्था, अनहित, अनायास, अनार्यों, अनिच्छित, अनुपम, अनुपस्थिति।

अनुदिन, अनुनय, अनुरक्त, अनुलेप, अनुलेपन।

दुरन्त, दुर्गम, दुर्जन, दुर्जेय, दुर्दम्य, दुर्भर, दुर्भाव, दुर्मद, दुर्लक्ष्मी, दुर्ललित, दुर्व्यवहार।

निरीहता, निर्बीज, निर्वात, निरवधि, निर्बाधित।

प्रज्वलित, प्रपूरित, प्रलम्ब, प्रवासी, प्रवीर, प्रहसित।

प्रतिवर्त्तन, प्रतिशोध, प्रतिहिंसा।

समागम, समादर, समुचित, समुज्ज्वला, समुदय, समुदित इत्यादि।

सुतीर्थ, सुदिन, सुनाम, सुनाव, सुवाडवाग्नि, सुढ़ौल, सुसंवाद, सुहास इत्यादि।

फ़ारसी का 'बे' उपसर्ग भी उन्हें प्रिय है। कुछ शब्द देखें —

बेकल, बेकाम, बेगार, बेगुन, बेजोड़, बेपरवाह, बेपीर, बेबसी, बेमन, बेमेल, बेरोक, बेसुध, बेसुरा।

लिंग

प्रसाद जी ने अपनी कविताओं में कई स्थलों पर परम्परागत लिंग-निर्धारण के विरोध में पुं० और स्त्री० रूप अपनाये हैं। उदाहरणत: जो शब्द प्राय: हिंदी में पुं० माने जाते हैं कवि ने उन्हें स्त्री० में लिखा है। कुछ उदाहरण यथेष्ट होंगे —

अंधेर [1], ज्वालामुखिया [2],

---

१. कामायनी, आशा, ६९ 'मच जावेगी फिर अंधेर'

२. कामायनी, श्रद्धा, ५८ — 'और ज्वालामुखियां हों चूर्ण'

झुरमुट [१], तारा [२], दाह [३], प्राचीर [४], बीज [५], बोल [६], लालच [७], बात [८], हरमें [९], हुंकार [१०]।

इन में ज्वालामुखी, दाह, बात और हुंकार सं०, हिं० और व्रज० में प्राय: पुल्लिंग शब्द ही हैं। हिं० और व्रज० में अंधेरे, झुरमुट, बोल और लालच भी पुं० शब्द हैं। 'प्राचीर' और 'बीज' सं० में नपुं० हैं परन्तु हिं० और व्रज० में पुं० चलते हैं। 'तारा' शब्द अवश्य सं० में स्त्री० है पर हिं० में पुं० चलता है। अर० में 'हरम' पुं० (सं० हर्म्य नपुं०) है और हिं० में भी पुं० ही रहता है किंतु कवि ने अन्य शब्दों की भांति इसे भी स्त्री० लिखा है।

इस के विपरीत जो शब्द हिं० में प्राय: स्त्री० समझे जाते हैं कवि ने उन्हें पुं० रूप में प्रयुक्त किया है — यथा

अग्नि [११], अलक [१२]

---

१. (क) लहर, २९ — 'लतिकाओं की झुरमुट छा जाने दो'

(ख) प्रसाद-संगीत, गीत, १२२ — 'कुंजों की झुरमुट में'

२. (क) कामायनी, ईर्ष्या, १४७ — 'काली आंखों की तारा में'

(ख) झरना, देवबाला, ७७ — 'स्नेह नभ की यह नवल तारा है'

३. कामायनी, दर्शन, २४२ —'जलती छाती की दाह रही'

४. कामायनी, निर्वेद, २१७ — 'पवन की प्राचीर में रुक'

५. महाराणा का महत्त्व, २४ — 'सुयश-लता की बीज उर्वर भूमि में'

६. कानन-कुसुम, ठहरो, ५१ — 'कर्कश स्वर की बोल कान में न सुहाती है'

७. प्रसाद-संगीत, हमारा हृदय, १२८ — 'तुम्हारी लालच बढ रही'

८. कामायनी, निर्वेद, २१६ — 'मैं मलय की बात रे मन'

९. लहर, प्रलय की छाया, ७७ — 'हरमें सुलतान की देखती सशंक'

१०. (क) कामायनी, रहस्य, २६७ — 'विजयों की हुंकार सुनाती'

(ख) महाराणा का महत्त्व, ५ — 'केसरियों की हुंकार से'

११. कामायनी, आशा, ३१ — 'पहला संचित अग्नि जल रहा'

१२. प्रसाद-संगीत, गीत, २२ — 'भोले मुख पर वे खुले अलक'

करतूत[1], खील[2], ज्वार[3], तरंग[4], तारका[5], दाख[6], पतवार[7], फिटकार[8], फुहार[9], बलाका[10], बालू[11], बूंद[12], मीनार[13], सजधज[14], और सेज[15]।

इन में **खील**, **तारका** और **बलाका** शब्द सं०, हिं०, और व्रज० में स्त्री० ही हैं। इसी प्रकार **करतूत**, **ज्वार**, **दाख** (स० द्राक्षा स्त्री०), **पतवार** (स० पत्रबाल या पत्रवाल पु०), **फिटकार**, **फुहार**, **बालू** (स० बालुका स्त्री०), **बूंद** (स० बिन्दु पुं०), **सजधज**, और **सेज** (सं० शय्या स्त्री०) भी हिं० और व्रज० में प्राय: स्त्री० ही चलते हैं। 'बालू' पुं० मे भी है। अभीष्ट अर्थों में **अग्नि**, **अलक** और **तरंग** स० में पु० शब्द है। किंतु हिं० और व्रज० में प्राय स्त्री० रूप मे ही प्रयुक्त होते है।

---

१. कानन-कुसुम, चित्रकूट, १०५ — 'कहना है **करतूत** भरत भूमिपति का'

२. कामायनी, वासना, ९१ — 'जिस पर बिखरता प्रचुर मंगल **खील**'

३. कामायनी, कर्म, १२५ — 'जीवन का ज्यो **ज्वार** उठ रहा'

४. (क) प्रेमपथिक, २१ — 'हां, तटिनी का **तरंग** भी है'

(ख) प्रेमपथिक, २४ — 'तुमुल **तरंग** गरजते-फिरते'

५. झरना, झील में, ७० — '**तारका** तरल झलकते थे'

६. महाराणा का महत्त्व, १३ — 'देखा गाधार का सुन्दर **दाख**'

७. कामायनी, श्रद्धा, ५७ — 'सजल संस्मृति का यह **पतवार**'

८. कानन-कुसुम, भाव-सागर, ८६ — 'कुछ **फिटकार** ही मिलता नहीं हृदय को'

९. प्रसाद-सगीत, गीत, १०७ — 'पड़ रहे पावन प्रेम-**फुहार**'

१०. कानन-कुसुम, कुरुक्षेत्र, १२० — 'उड़ रहे जैसे **बलाका**'

११. कानन-कुसुम, निशीथ-नदी, ६३ — '**बालू** भी इस स्नेहपूर्ण जल के प्रभाव से उर्वर है हो रहे'

१२. (क) कानन-कुसुम, मर्म-कथा, २७ — '**बूंद** रस के झरे'

(ख) प्रेमपथिक, २२ — 'मोती-सी आकेसू **बूंद**'

१३. महाराणा का महत्त्व, १९ — 'शाही महलों के ऊंचे **मीनार** से'

१४. प्रेमपथिक, ४ — 'अनोखे **सजधज** का'

१५. प्रसाद-सगीत, गीत, ६२ — 'न **सेज** उजला बिछाय कोई'

उर्दू में मीनार अवश्य पु० शब्द है पर हिं० और व्रज० में स्त्री० ही चलता है। कवि ने इसे भी अन्य शब्दों की तरह पुं० रूप में ही लिखा है।

अतः इन शब्दो से कवि के लिंग-स्वातंत्र्य का ही परिचय मिलता है।

वचन

लिंगो की भांति वचनो में भी कवि ने रुचि-स्वातंत्र्य को प्रकाशित किया है। उदाहरणत: '**प्राण**' शब्द सदा बहुवचन मे प्रयुक्त होता आया है कवि ने इसे एकवचन[1] मे भी लिखा है। इसी प्रकार '**ये**'[2] बहु० सर्वनाम को भी एकवचन में प्रयुक्त किया है।

'**अनेकों**'[3] बहुवचन शब्द सर्वनाम के रूप में प्रयुक्त हो सकता है, विशेषण के रूप में नही। कवि ने इसे भी वि० के रूप मे लिखा है। इसी प्रकार '**गूंजें**'[4] स्त्री० बहु० का भी अधिक प्रचलन नही है।

हिंदी मे 'प्रति' या हर-एक शब्द पहले जोड़ कर संज्ञाओ के बहुवचन नहीं बनाए जाते किंतु कवि ने बनाए हैं यथा **प्रतिद्वारों**[5], **प्रतिपत्तों**[6], और **हर-एक पत्थरों**[7]।

---

१. (क) झरना, वेदने, ठहरो!, ८६ — '**प्राण** है केवल मेरा अस्त्र'

(ख) कामायनी, कर्म, १३६ — 'शीतल **प्राण** धधक उठता है'

(ग) प्रसाद-संगीत, गीत, ३२ — '**प्राण** मिला'

२. (क) कानन-कुसुम, प्रभो!, ७ — '**ये** देखना हो तो देखे सागर'

(क) कानन-कुसुम, मंदिर, ११ — 'फिर क्यों **ये** हठ है प्यारे'

३. कानन-कुसुम, करुण क्रंदन, १४ — 'झंझट **अनेकों** प्रबल'

४. कामायनी, लज्जा, ९९ — 'कलरव परिहास भरी **गूंजें**'

५. प्रेमपथिक, १३ — 'तोरण बंदनवार सजाये जाते थे **प्रतिद्वारों** मे'

६. प्रेम पथिक, २२ —'**प्रतिपत्तों** से बूंदें हिम की'

७. कानन-कुसुम, मन्दिर, १२ — 'हर-एक **पत्थरों** में वह मूर्ति'

कई बार एकवचन शब्दों को ही कवि बहुवचन के रूप में प्रयुक्त कर देता है। गाय [1] डाल [2] तान [3] और तारा [4] एक० संज्ञा शब्द ऐसे ही हैं। यह [5] और वह [6] सर्वनाम एकवचन हैं और कवि ने इन्हें बहुवचन में लिखा है।

अत: इन उदाहरणो से कवि के वचन-स्वातन्त्र्य का ज्ञान होता है।

सन्धि

प्रसाद जी द्वारा प्रयुक्त कुछ संधियां द्रष्टव्य हैं।

कतिपय दीर्घ स्वर-संधियां देखें — अतींद्रिय, अरुणाचल, चक्राकार, दिनांत, मेघाडम्बर, रक्तारुण, हताश इत्यादि।

कुछ गुण-संधियां ये हैं — अरुणोदय, उपलोपम, कर्मोन्नति, कुसुमोत्सव, कुसुमोद्‌गम, नीलोज्ज्वल, परमोज्ज्वल, प्रलयोल्का, मदोद्धत, यथेप्सित, रक्तोन्माद, श्यामलोज्ज्वल।

व्यंजन संधियां भी हैं यथा दिग्दाहों, प्रतिच्छवि और मच्चरित्र।

विसर्ग संधियां भी बहुत है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं — अंतर्दाह अंतर्निहित, अतस्तल, तपोवन, निश्चित, निश्छल, निश्शेष, निष्फल, निरतंद्र निस्तरंग, निस्तेज, निस्संग, निस्सबल, निस्सहाय, पयोधर, पयोनिधि, मनस्ताप, मनोबल, मनोभाव, मनोमय, मनोवेग, मनोवेदना, मनोहर।

इन उदाहरणो से कवि की संधि संबंधी प्रवृत्तियों का परिचय मिलता है। किन किन शब्दों में कवि को संधि करना प्रिय है इसका भी पता चलता है।

---

१. करुणालय, दृश्य, ३, १८ — 'सौ दूगा मैं गाय तुम्हें'

२. कानन-कुसुम, नव वसंत, २४ — 'कली दो डाल को ही मिला दिया'

३. झरना, होली की रात, ६७ — 'मधुर उठती हैं तान असंख'

४. (क) करुणालय, दृश्य ५, २५ — 'रजनी में तारा प्रकाश देते नहीं'

(ख) प्रसाद-संगीत, गीत, १०९ — 'ऊंघते रहते जब जग कर रजनी भर तारा'

५. प्रेम-पथिक, १७ — 'यह संज्ञाएं उड़ जाती हैं'

६. प्रेम-पथिक, १८ — 'यों ही वह विचरण करते'

' मनः ' की विसर्ग संधि उन्हें विशेषतः रुचिकर लगती है ।

समास

संधियों की भांति कवि द्वारा प्रयुक्त समासों में भी विविधता मिलती है ।

कुछ **संबंध तत्पुरुष समास** ये है — अग्नि-शिखा, अश्रु-जल, अमृत-धाम, आलोक-रश्मि, गुफा-द्वार, तन-रक्षा, देव-सृष्टि, धूम-गंध, पथ-पीड़ा, भेद-बुद्धि, मर्म-बेदना, रस-बूंद, वन-पथ, वृक्ष-पांत, शक्ति-चिह्न, शैल-श्रृंग, सुख-संचार, सुख-सीमा स्मित-रेखा, हिंसा-मुख ।

कुछ **करण तत्पुरुष समासों** के नमूने देखें —

आतंक-त्रस्त, आतप-भीत, आनंद-विभोर, कर्णधार-रक्षित, करुणा-प्लावित, गर्व-स्फीत, चाव-भरी, चिंता-कातर, तारक-खचित, नवगीत-रचित, पुण्य-प्राप्य, प्रलय-भीत, प्रेम-विभोर, मणि-रचित, राग-रक्त, वज्र-खचित, वासना-भरी, वेग-भरी, व्यथा-भरी, और सुधा-भरी ।

इन को देखने से सूचित होता है कि खचित, भरी, भीत, रचित और विभोर आदि शब्दों को दूसरे पद के रूप में रखना कवि को विशेष रूप से रुचिकर है ।

कुछ **अपादान तत्पुरुष समासों** के नमूने ये है —

आवरण-मुक्त, केंद्र-च्युत, द्विधा-रहित, बंधन-मुक्त, बंधन-विहीन, श्रद्धा-विहीन, संदेश-विहीन इत्यादि ।

कर्मधारय तत्पुरुष समासों में उपमान पूर्वपद और उपमानोत्तर पद कर्मधारय समासों की अधिकता है । कुछ उदाहरण देखें —

अभिलाषा-शलभ, आकांक्षा-जलनिधि, ईर्षा-पवन, कर-कमल, काल-जलधि, काल-धीवर, किरन-उंगलियों, गर्व-रथ, जीवन-घाटियों, जीवन-धनु, जीवन-नद, जीवन-सर, तर्क-जाल, तृष्णा-ज्वाला, धूम-कुण्डल, नभ-सागर, नियति-नटी, प्रेम-नाव, मन-मधुकर, मन-मयूर, मानस-शतदल, मृग-मन, वासना-सरिता, सुख-नीड़ों, स्मृति-सौरभ, हृदय-गगन ।

आरंभ में सहित अर्थ में ' स ' (सं० सह) जोड़ कर बनने वाले **अव्ययी**

भाव समास भी हैं यथा सकरुण, सक्रोध, सखेद, सचराचर, सचेतनता, सजल, सजीव सतेज, सनाथ, सप्रीत, सलील, सविशेष, सव्रीड़, सस्मित, साधिकार सानंद, सानुराग, साभिमान इत्यादि ।

संस्कृत में इन्हें यौगपद्य अव्ययीभाव समास कहते है क्योंकि इस मे 'युगपद्' (साथ) अर्थ को प्रकट करने के लिए समस्त पद मे 'सह' का प्रयोग करके उसे 'स' कर दिया जाता है।[1]

द्वन्द्व समास भी कम नही हैं यथा अनुराग-विराग, जड़-चेतनता, जरा-मरण, दुःख-सुख, देह-गेह, बल-वैभव, मां-बेटे, योग-क्षेम, रवि-शशि, राग-विराग, विज्ञान-ज्ञान, सुख-दुःख।

कुछ **विविध समास** इस प्रकार हैं --

अधिकार-क्षुब्ध, आलोक-अधीर, कपट-कहानी, कमल-कानन, क्रीडा-नौकाएं, छिन्न-पत्र, दृष्टि-पथ, प्रलय-जलधि, मणि-दीपों, मधु-मिश्रित, मरंद-उत्सव, मरण-पर्व, रथ-नाभि, शयन-कक्ष, श्रम-स्वेद, मधु-पत्र, मुग्ध-स्वप्नो, स्मृति-पथ, स्वप्न-पथ, हीरक-गिरि।

इन मे से कुछ समास तो एकदम नये है और संस्कृत-समासों की किसी भी कोटि मे नही आते।

अन्य शब्द-विकार

संज्ञा, विशेषण और क्रिया का अध्ययन करते समय कुछ शब्द-विकार प्रस्तुत किये गये थे। अब क्रिया-विशेषण, अव्यय, सर्वनाम तथा कुछ अन्य शब्दो के विकृत रूप दिये जा रहे है —

अराधना[2], (आ), उजाला[3] (ले), चतुर्दिक[4] (क्), जिन ने[5] (जिन्होने)

---

१. संस्कृत व्याकरण प्रबोध, डॉ० संसार चन्द्र एवं प्रो० विजय चन्द्र शास्त्री, १७७

२. कामायनी, संघर्ष, १९३ — 'यही सुख की अराधना'

३. कामायनी, चिंता, १९ — 'क्षण भर रहा उजाला मे'

४. कामायनी, रहस्य, २५७ — 'पथ थक कर है लीन चतुर्दिक'

५. कामायनी, कर्म, १११ — 'जिन ने कष्ट अनेक सहे थे'

तनक [1] (तनिक), तुम्हीं [2] (तुम ही) दिया [3] (दी), नहिं [4] (नहीं), ना [5] (न), मुझी [6] (मुझ ही), यदपि [7] (यद्यपि), विधिवत [8] (त्) विवस [9] (श) वो [10] (वह), साक्षात [11] (त्) हमीं [12] (हम ही), और हि [13] (ही) ।

इन में 'अ' राखना तो अंगरेजी शब्द-संक्षेप शैली का अंधानुकरण है । तुम्हीं (तुम + ही), मुझी (मुझ + ही), और हमीं (हम + ही) शब्द-संयोग के श्रेष्ठ उदाहरण हैं ।

---

१. कानन-कुसुम, नही डरते, ९० — 'तनक न जाओ'
२. (क) झरना, तुम, ६२ — 'तुम्हीं छले गये'
(ख) प्रसाद-संगीत, गीत, २३ — 'हृदय अपना तुम्हीं को दे दिया है'
३. कानन- कुसुम, महाक्रीड़ा, १७ — 'कुंकुम-अरुण की दे दिया बिंदी खरी'
४. (क) कानन-कुसुम, मन्दिर, १२ — 'उसमें नहिं भेद मानते हो'
(ख) कानन-कुसुम, करुण-क्रन्दन, १४ — 'सूझता नहिं छोर है'
(ग) कानन-कुसुम, मलिना, ४६ — 'नहिं वेग सहित'
५. कामायनी, निर्वेद, २२९ — 'ना, यह विकट पहेली है'
६. प्रसाद-संगीत, गीत, ८१ — 'मेरा मकरन्द मुझी मे रहता लीन'
७. कामायनी, कर्म, १२५ — 'जागृत था सौंदर्य यदपि'
८. कामायनी, आनन्द, २७८ —'उनको विधिवत समझाती'
९. कानन-कुसुम, चित्रकूट, १०५ — 'विवस आपस मे कभी... .....'
१०. (क) कानन-कुसुम, प्रभो, ८ — 'वो देख सकता है चन्द्रिका को'
(ख) कानन-कुसुम, सरोज, ४२ — 'गले उन्ही के वो मिल रहा है'
११. लहर, प्रलय की छाया, ६९ — 'आज साक्षात होगा कितने महीनो पर'
१२. (क) कामायनी, आनन्द, २८७ — 'हम केवल एक हमीं हैं'
(ख) कानन-कुसुम, भक्ति-योग, ३८ — 'वह हमीं, हम वह हुये'
(ग) प्रसाद-संगीत, गीत, ३४ — 'क्यों रहें चिंतित हमीं'
१३. कानन-कुसुम, नव वसंत, २४ — 'डाल को हि मिला दिया'

संस्कृत में ' नहि ' [1] अव्य० (द्र० स०) शब्द ' नहीं ' अर्थ में है। यहां ' नहि ' पर उसी का प्रभाव जान पड़ता है।

' वो ' उर्दू भाषा का सर्वनाम है।

शब्द-लोप

काव्य में शब्द-लोपी वाक्यों का विन्यास हुआ ही करता है कहीं पर तो शब्द-लोप अनिवार्य ही हो जाते हैं। कवि प्रसाद की कविताओं में प्राय: कर [2], की [3], के [4], और में [5] शब्दों का लोप वाक्यों में देखा गया है।

नव शब्द

कुछ विशेष नव शब्द-प्रयोग द्रष्टव्य हैं —

गीत-भार [6], पन्था [7]

---

१. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, दे० ' नहि '

२. प्रसाद सँगीत, गीत, १० — ' और कहीं चल (कर) रहते '

३. (क) कामायनी, श्रद्धा, ५१ — ' दृष्टि जब जाती हिमगिरि (की) ओर '

(ख) कामायनी, संघर्ष, १९७ — ' इड़ा ने द्वार (की) ओर निज पैर बढ़ाया '

(ग) आंसू, १० — ' प्रतिभा (की) डाली भर लाता '

४. (क) आंसू, ३६ — ' कोमल उपधान (के) सहारे '

(ख) कामायनी, श्रद्धा, ५३ — ' दुख की पिछली रजनी (के) बीच '

(ग) कामायनी, श्रद्धा, ४८ — ' नभ धरणी (के) बीच बना जीवन '

(घ) कामायनी, श्रद्धा, ४६ — ' नील परिधान (के) बीच सुकुमार '

५. लहर, ६३ — ' गूँज उठी भारत के कोने कोने (में) जिस दिन '

६. लहर, प्रलय की छाया, ७१ — ' मरना ही भारत की नारियों का एक गीत-भार है '

७. लहर, ११ — ' स्मृति पाथेय बनी है थके पथिक की पन्था की '

मलयज [1]।

प्रथम शब्द ' **गीत भार** ' का अर्थ है गीत का पहला चरण, टेक, आस्थायी। परन्तु यहां ' प्रतिज्ञा ' अर्थ में है।

' **टेक** ' शब्द की व्याख्या करते हुये पं० रामचन्द्र वर्म्मा लिखते हैं —' इस के अनेक अर्थों में दो अर्थ बहुत प्रसिद्ध है — यथा (क) दृढ़तापूर्वक की हुई ऐसी **प्रतिज्ञा** जिस से मनुष्य कभी विचलित न हो (ख) गीत का पहला चरण जो हर चरण के बाद दोहराया जाता है और जिसे संगीत के पारिभाषिक क्षेत्र में ' **आस्थायी** ' (स्थायी) कहते हैं। इस अर्थ मे इसका एक पुराना पर्याय **गीत-भार** भी है। ' [2]

किन्तु प्रसाद जी ने उपर्युक्त प्रथम अर्थ (' प्रतिज्ञा ') में ही ' गीत-भार ' का प्रयोग कर दिया है।

श्री सुधाकर पाण्डेय ने ' गीत-भार ' का अशुद्ध अर्थ लिखा है जो इस प्रकार है — ' वह गीत या गाथा जो उतारा या अपने से अलग किया जा सके, वह परम्परा जो छोड़ी न जा सके '। [3]

' **पन्था** ' पु० शब्द यहा ' पन्थ ' अर्थ में ही है। हिंदी में ' पंथान ' [4] भी इसी अर्थ मे चलता है। सस्कृत में ' पन्थाः ' शब्द ' पथिन् ' (मार्ग) का प्रथमा विभक्ति एकवचन है। उसी के प्रभाव से यहां ' पन्था ' लिखा गया है।

' **मलयज** ' पुं० शब्द सस्कृत मे चन्दन वृक्ष, राहु ग्रह इन दो अर्थों मे है। प्रसाद जी ने ' मलयानिल ' अर्थ में इस शब्द का नया प्रयोग किया है। कुछ अन्य

---

१. (क) झरना, वसन्त, २५ — ' **मलयज** मथर गति आता है '

(ख) झरना, मिलन, ५४ — ' चन्द्रिका **मलयज**-पवन ... '

(ग) झरना, हृदय का सौंदर्य, ६४ — ' कूल पर **मलयज** का हो वास '

(घ) कानन- कुसुम, करुणा-कुज, १९ ' **मलयज** मारुत प्रेम भरा छविवन्त है '

(ङ) कानन-कुसुम, नव वसन्त, २५ — ' श्वास **मलयज** पवन-सा '

२. शब्द और अर्थ, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, २६

३. प्रसाद काव्य-कोश सुधाकर पाण्डेय, ९२

४. मानक हिंदी कोश, तीसरा खण्ड

कवियों ने भी भूल से 'मलय-समीर' के अर्थ में यही शब्द लिखा है।

प्रिय शब्द

प्रत्येक कवि को कुछ शब्द विशेष रूप से रुचिकर लगते हैं। प्रसाद जी के कतिपय प्रिय शब्द ये हैं— अन्तर्दाह, अरुणोदय, कुहक, कुहर, जगत, ज्योतिर्मयी, तमस, तारका, तारा, दिगन्त, दूरागत, निरुपाय, निर्निमेष, निर्विकार, निश्वास, निस्तब्ध, निस्वन, निस्संबल. पवमान, प्रत्यावर्तन, भुज-मूल, मधुकरी, मधुरिमा, मधुव्रत, मनोभाव, मरन्द, मलयानिल, मुसक्यान, मूर्च्छना, ललाम, सजीव, सभीत, समिद्ध, सानंद, स्वर्गंगा, हुताश, हरित और हीरक।

ध्वन्यात्मक शब्द

शब्द-चित्रो की योजना छायावादी काव्य में प्रचुर मात्रा में हुई है। ध्वनि का अनुकरण ही इसका आधार होता है। कवि प्रसाद ने भी विभिन्न ध्वनिबोधक शब्दो के प्रति अपनी रुचि प्रदर्शित की है। उदाहरणतया यहां 'कलकल'[1] झरना, लहर, निर्झरिणी और शिशुओं का स्वर है। आंखें, आंसू, और श्रमकण सभी 'छलछल'[2] छलकते हैं। तारक-गण 'झलमल'[3] करते हैं। इन्द्रचाप, किरनें, तारक, मलय

---

१. (क) कामायनी, काम, ६३ — 'झरनो के कोमल कल-कल में'

(ख) आंसू, ८ — 'कल कल ध्वनि से है कहतीं'

(ग) प्रेम-पथिक, २४ — 'कलकल निर्झरिणी'

(घ) कामायनी, आनद, २७८ — 'शिशु गाण का था मृदु कलकल'

२. (क) लहर, २० — 'है पोछ रहा आंखें छलछल'

(ख) लहर, ४८ — 'आसू कन-कन ले छल-छल'

(ग) प्रसाद-सगीत, गीत, १०० — 'छलछल थे संध्या के श्रमकण'

३. कामायनी, दर्शन, २३४ — 'झलमल सुन्दर तारक-दल'

और लता कुंज सभी '**झिलमिल**'[१] करते हैं। निर्झर '**झिरझिर**'[२] झरते हैं। कंपन के लिए **डगमग**[३] और **थरथर**[४] दो शब्द हैं। कली **चटचटा**[५] उठती है और किसलय **खड़खड़**[६] तथा **मर्मर**[७] स्वर करते हैं। जल की **छपछप**[८] और जलद की **रिमझिम**[९] भी यहां है। साँसों की **सनसन**[१०] और आभूषणों की **झनझन**[११] विशेष रूप से द्रष्टव्य है। जीभ की **लपलप**[१२] और खग-कुल की **कुलकुल**[१३] भी मिल जाएगी। पपीहा '**पी-पी**'[१४]

---

१. (क) कामायनी, ईर्ष्या, १३९ — 'वह इन्द्रचाप-सी **झिलमिल**'

(ख) कामायनी, निर्वेद, २२९ — 'किरन-सी **झिलमिल**'

(ग) कामायनी, लज्जा, १०४ — 'तारक द्युति-सी **झिलमिल**'

(घ) कामायनी, काम, ६७ — 'है स्पर्श मलय के **झिलमिल**-सा'

(ङ) कामायनी, काम, ७८ — 'उस लता-कुंज की **झिलमिल** से'

२. आंसू, १८ — 'निर्झर-सा **झिर झिर** करता'

३. कामायनी, संघर्ष, १९५ — 'फिर **डगमग** हो नाव'

४. कामायनी, दर्शन, २४६ — '**थरथर** कँप रहती दीप्ति तरल'

५. झरना, प्यास, ४६ — 'उठी **चटचटा** उसकी कली'

६. (क) महाराणा का महत्त्व, १ — 'सूखे पत्तों के ही **खड़खड़** से'

(ख) कानन-कुसुम, ग्रीष्म का मध्याह्न, ३१ — 'अपने **खड़खड़** शब्दों को भी'

७. कामायनी, लज्जा, १०२ — 'कोमल किसलय **मर्मर रव** से'

८. कामायनी, दर्शन, २४६ — '**छप छप** का होता शब्द विरल'

९. कामायनी, निर्वेद, २२५ — 'और जलद वह **रिमझिम** बरसा'

१०. कामायनी, दर्शन, २४७ — 'यह क्या तम में करता **सन-सन**'

११. महाराणा का महत्त्व, १३ — 'आभूषण भी **झनझन** कर बस रह गये'

१२. लहर, शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण, ५१ — '**लपलप** करती थी जीभ'

१३. लहर, १९ — 'खग-कुल **कुल-कुल** सा बोल रहा'

१४. प्रसाद-संगीत, गीत, १०७ — 'पपीहा का **पी** सुनता कभी'

करता है या फिर 'पी ! कहां '[1] पुकारता है। जुगनूं 'जगमग '[2] करते हैं।

समग्रत: ये ध्वनियां कवि के संगीत-बोध का ही परिचय देती हैं। इन में झलमल, थरथर आदि ध्वनियां तो श्रवणों की अपेक्षा नेत्रों का ही विषय हैं अत: मात्र मस्तिष्कीय अनुभूति की वस्तु हैं।

---

१. झरना, पी ! कहां, ४७ — 'पी ! कहां ?'

२. कामायनी, चिंता, १७ — 'जगमग ज्योतिरिंगणों से जगते'

सियारामशरण गुप्त

संज्ञा

गुप्त जी द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष संज्ञाए इस प्रकार हैं—

आँस [1], ओली [2], कचुल्ले [3], कोपना [4], खनक [5], खोबे [6], चकफेरे [7], चलाचल [8], चुपकाना [9], चुपकी [10], धुनी [11], निछक्का [12], पूगीफल [13]

---

१. दूर्वादल, वृद्ध, ८६ — 'लगी पर तुम्हें न हिय की **आँस**'

२. दैनिकी, जागरण-प्रसंग, १३ —'रख दे उस निशि की **ओली** में दीपक'

३. नकुल, २३ — 'कलित **कचुल्ले** लगा दिए हों विजनवती ने'

४. पाथेय, दुर्वार, २१ —'भर-भर कर हुँकार **कोपना** झञ्झा उड़ा रही है धूल'

५. दैनिकी, खनक, ३६ — 'हे **खनक**, किये जा कूप-खनन'

६. (क) मृण्मयी, छल, ६४—'नीर वह बूंद बूंद **खोबे** भर ऊपर उछालता'

(ख) मृण्मयी, भोला, १३० — '**खोबे** भर पैसे मिलें'

७. मृण्मयी, नाम की प्यास, ५८ — 'सीस-सा पटक उठ घूम **चकफेरे** मे'

८. बापू, ३७ — 'साग्रह प्रवेश की **चलाचल** है'

९. नकुल, ३९ — 'आ कर **रोदन** दिया, नही **चुपकाना** माना'

१०. नकुल, ७४ — 'तुम्हारी **चुपकी** ऐसी'

११. बापू, ३३ — 'तुम हे उदार **धुनी**'

१२. नकुल, ४८ — 'एक कुज में देख **निछक्का**'

१३. नोआखली मे, ३२ — '**पूगीफल** के पेड़ो की'

भरपूरों[1], मथनिका[2], लिखन[3], सकोरे[4], सीध[5], सीरे[6], सेंटों[7] इत्यादि।

'**आंस**' स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है— 'हलकी पीड़ा, वेदना, कसक'। यह शब्द 'गाँस' (अर्थ : हथियारों का नुकीला फल) के अनुकरण पर घड़ा गया है। काँटे या सुई का घाव के अन्दर रड़कने वाला टुकड़ा या नोंक भी 'गाँस' कहलाती है। फ़ारसी में इसी अर्थ में 'ख़लिश' स्त्री० शब्द है।

'**ओली**' देशज शब्द यहा 'गोदी' या 'झोली' अर्थ में है।

'**कचुल्ला**' पुं० शब्द यहां 'कटोरा' अर्थ मे है। व्रज भाषा में 'कचुल्लेदार'[8] शब्द का अर्थ 'प्यालेदार' है। अवधी भाषा में भी स्त्रियों द्वारा 'कटोरा' अर्थ में 'कचोरा'[9] शब्द बोला जाता है।

'**कोपना**' अ० क्रि० ही यहां सज्ञा के रूप में प्रयुक्त है जिसका अर्थ होता है 'क्रोध करना', 'कुपित होना'।

'**खनक**' संस्कृत तत्सम पु० शब्द है जिसका यहा अर्थ है—'खोदने वाला'।

'**खोबा**' देशज शब्द का अर्थ होता है — 'गच या पलस्तर पीटने की थापी'। किन्तु यह अर्थ यहां ठीक नही बैठता। 'खोभार' पु० शब्द 'कूड़े करकट

---

१. जयहिन्द, १० — 'उन में पराक्रम हैं उन **भरपूरों** के'

२. नकुल, ९ — 'डाल पर अरणि **मथनिका**'

३. (क) बापू, ४६ — 'पत्र एक लघु-सी **लिखन** में'
   (ख) नोआखली में, १३ — '**लिखन** मे रहे विभेद कुछ'
   (ग) दैनिकी, आज का पन्ना, १८ —'किस सुन्दर का नया **लिखन** है लिखना'

४. आर्द्रा, खादी की चादर, ११८ — 'तीन आने में भरूं **सकोरे** दो ऐसे'

५. आर्द्रा, खादी की चादर, ११८ — '**सीध** बांध वह पहुँची गगा के तट पर'

६. मृण्मयी, ग्वालिने, ७१ — 'प्यासी-सी उस **सीरे** में भी'

७. दैनिकी, खनक, ३७ — 'जल की **सेंटों** के भी फुहार'

८. कृषक जीवन संबंधी व्रजभाषा शब्दावली, डॉ० 'सुमन', द्वितीय खण्ड, २३०

९. अवधी-कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', दे० 'कचोरा'

का गड्ढा ' अर्थ में है। यहां ' खोवा ' इसी ' खोभार ' का विकृत रूप जान पड़ता है।[1]

' **चकफेरा** ' पुं० शब्द (स्त्री० चकफेरी) ' किसी वस्तु के चारों ओर घूमने की क्रिया ' को कहते हैं। ' चकफेरा ' पु० रूप का बहुत कम प्रयोग देखा जाता है।

' **चलाचल** ' स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है ' तैयारी '। अन्य शब्द-रूप है ' चलाचली '। इस का एक विशेष अर्थ है — एक के बाद दूसरे का भी जाना।

' **चुपकाना** ' स० क्रि० (अर्थ : चुप कराना) का ही यहां संज्ञा रूप में प्रयोग है। अर्थ — ' मौन रहना, चुप्पी '।

' **चुपकी** ' स्त्री० शब्द भी उपर्युक्त अर्थ में है।

' **धुनी** ' पुं० शब्द है। अर्थ — ' धुन या लगन वाला व्यक्ति '।

' **निछक्का** ' पुं० शब्द यहां ' निर्जन या एकांत स्थान ' अर्थ में है। अवधी में इसी का समानक शब्द ' निचाट ' है जिसका यही अर्थ है।

' **पूंगीफल** ' पुं० शब्द (सं० ' पूगफल ' नपुं०) है। यहां यह शब्द ' सुपाड़ी ' अर्थ में है।

' **भरपूरों** ' बहु० शब्द ' भरपूर ' वि० से बना लिया गया है। अन्य कवियों ने भी उठतों, ऊंचों, मदमातों आदि संज्ञा-रूपों का इसी प्रकार निर्माण किया है।

' **मथनिका** ' स्त्री० शब्द यहां ' मथनी ' या ' मथानी ' अर्थ में है।

' **लिखन** ' स्त्री० शब्द यहां ' लिखावट ' और ' भाग्य-लेख ' अर्थों में है।

' **सकोरा** ' पु० शब्द का अर्थ है — ' मिट्टी का पात्र '। वस्तुतः यह ' कसोरा ' पु० शब्द का ही वर्ण-विपर्यय है। अर्थ दोनों शब्दों का एक ही है।

' **सीध** ' स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है — ' ठीक सामने की स्थिति, विस्तार '।

' **सीरा** ' सं० स्त्री० शब्द है। व्रज भाषा में पानी की भांति पतली दुधलपसी ' सीरा '[2] कहलाती है। गेहूं का आटा भून कर और उस में गुड़ तथा पानी डाल कर खदका लेते हैं। उसे ' लपसी ' (सं० लप्सिका) कहते हैं। यदि दूध भी डाल दिया जाए तो उसे ' दुधलपसी ' कहते हैं। यही ' सीरा ' है।

---

१. मानक हिन्दी कोश, दूसरा खण्ड, दे० खोबा, खोभार

२. कृषक जीवन सम्बन्धी व्रजभाषा शब्दावली, डॉ० सुमन, प्रथम खण्ड, २६७

'सेंट'[1] स्त्री० शब्द लोक भाषा में 'दूध की धार' के अर्थ में भी है। यहां 'धार' सामान्य अर्थ ही है।

संज्ञा-विकार

कुछ संज्ञाओं को कवि ने विकृत रूपों में भी अपनाया है। उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

अन्तस[2] (स्), अलोक[3]) (आ), अह्लाद[4] (आ), आल्हाद[5] (आह्लाद), कारबार[6] (कारोबार), किरन[7] (ण), चरन[8] (ण), जगत[9] (त्),

---

१. मानक हिंदी कोश, पांचवां खण्ड, दे० सेट

२. (क) अनाथ, ८ — 'अन्तस में दासता की ग्लानि'

(ख) जयहिन्द, १० — 'न हो अन्तस में जिस के'

३. मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, २६ — 'अलोकमय अनुपम रूप'

४. मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, २८ — 'जो अपूर्व अह्लाद हृदय में'

५. (क) विषाद, ७ — 'इसका आल्हाद...'

(ख) विषाद, मौनालाप, ३० — 'उसी भांति साल्हाद'

(ग) पाथेय, प्रणाम (१), २ — 'उसका आल्हाद-विषाद'

६. (क) दूर्वादल, वृद्ध, ७८ — 'खेल ही तुम्हारा कारबार था'

(ख) आर्द्रा, खादी की चादर, ११२ — 'कारबार चल रहे सभी'

७. दैनिकी, मधुर-कर्कश, ६९ — 'पहली किरन मनोरम'

८. मृण्मयी, भोला, १३९ — 'उस मैया के चरन में'

९. (क) दैनिकी, नर किंवा पशु, ५९ —'जगत ने दिये'

(ख) मृण्मयी, भोला, १३८ —'जय हो जगत में'

जैजैकार[१] (जयजयकार), तडित[२] (तडिन्), तपस्वि[३] (स्वी), दवानल[४] (दावानल), द्वारे[५] (द्वार) , नाज[६] (अनाज), परिषद[७] (द्), पाथर[८] (पत्थर), पूरनमासी[९] (पूर्ण), बरसा[१०] (वर्षा), भगवन[११], भगवान[१२] (न्), भोंरो[१३] (भौ), मनि[१४] (णि), मुहँ[१५] (मुँ), वक्षस्थल[१६] (वक्षःस्थल)

---

१. बापू. १४ — ' गूज उठा **जैजैकार** '

२. नकुल, १० -- ' तत्काल **तडित** ज्यों ... '

३. मृण्मयी. मजुघोष. ४५ — ' माधक **तपस्वि** जन '

४. बपू, ५८ — ' दारुण **दवानल** था '

५. (क) दैनिकी. रूद्ध कक्ष. ८ —' आ पहुची है आज के **द्वारे** '

(ख) अनाथ. ४ — ' जाय आज वह किम के **द्वारे** ? '

६. आर्द्रा, अब न करूंगी तेमा, १२५ — ' नही था मेरे घर मे **नाज** '

७. मृण्मयी. अमृत. ८० -- ' कर **परिषद** को शान '

८ दैनिकी, लोहा, २९ — ' कहा मिले वह **पाथर** '

९. दैनिकी. आवाहन, २२ - - ' वह **पूरनमासी** '

१०. दैनिकी, दुर्लभ. १२ — ' इम कालानल की **बरसा** से '

११. अनाथ, ७ --- ' हा **भगवन** '

१२. (क) अनाथ, ७ - - ' क्यो यो ही **भगवान** '

(ख) अनाथ, ८ — ' दो हमं को **भगवान** '

१३. मृण्मयी, ग्वालिने, ७१ — ' फूलों पर **भोंरों** का गुजन '

१४. नकुल, ६९ — ' भीष्म पितामह की **मनि** उतरी '

१५. (क) दूर्वादिल, वृद्ध, ८० — ' **मुहँ** मोड़ कर ...'

(ख) पाथेय, नव जीवन, ५८ — ' मेरे **मुहँ** से फूट पड़ी '

(ग) पाथेय, मार्ग-बन्धु, ६९ — ' **मुहँ** छिपा स्वयं ही '

१६. (क) पाथेय, यथास्थान, १२ — ' शिखरो के **वक्षस्थल** पर '

(ख) आर्द्रा, हूक, ७ — ' दग्ध इन **वक्षस्थलों** में '

वातूल [1] (तु), वानी [2] (णी), विद्युत [3] (त्), शीटी [4] (सी), शुभाशीष [5] (शिष् या शिस्), शुभाषा [6] (शा), सम्पद [7] (द्), सम्राट [8] (ट्), सरित [9] (त्) सुहृद [10] (द्), स्नेहाशीष [11] (शिष् या शिस्), स्रोतस्वनी [12] (स्वि), स्वीकीयता [13] (स्वकीयता)

विशेषण

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेषण द्रष्टव्य है — उथलित [14], ऊली [15],

---

१. पाथेय, दुर्वार, २२ — ' हुआ मृदुल मारुत **वातूल** '

२. नकुल, ६२ — ' सुनी उन्होंने उग्र की **वानी** '

३. (क) विषाद, किरण, १२ — ' **विद्युत** प्रवाहमयी...'

(ख) दूर्वादल, वर्ष-प्रयाण, ८५ — ' **विद्युत** के मग '

(ग) बापू , ७१ — ' **विद्युत** की '

४. आर्द्रा, डाकू, २६ — 'बजा कर **शीटी** एक विशेष '

५. पाथेय, उत्सुक, ७ — ' **सुभाशीष** से घिर कर ..'

६. विषाद, पलायित, ४१ — **शुभाषा** के कानन से '

७. (क) नकुल, ७२ — ' चारु गुण-**सम्पद** '

(ख) नकुल, ९८ —' अतुलनीय हो गुण-**सम्पद** हों '

८. (क) मौर्य्य-विजय, सर्ग २,१५ — ' हो गये मौर्य्य **सम्राट** '

(ख) मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, २३ — ' ग्रीक **सम्राट** की '

९. (क) पाथेय, विदा के समय, १३० — ' हूं मैं **सरित**-प्रवाह '

(ख) दैनिकी, मेरा घठ, ४९ — ' स्रोत **सरित** के '

१०. आर्द्रा, अब न करूंगी ऐसा, १२२ — ' एक **सुहृद** मेरे '

११. मृण्मयी, नाम की प्यास. ५१ — ' **स्नेहाशीष** देते हुये '

१२. दूर्वादल, पथ, ६४ — ' **सोतस्वनी** आ के पैर धोती '

१३. नोआखली में, ३८ — ' जाग उठी गहरी **स्वीकीयता** '

१४. विषाद, घनाल्हाद, ४० — ' कर **उथलित** प्रचुर प्रमोदपान '

१५. नकुल, ४९ — ' सुन कर वे प्रिय वचन हुई वह **ऊली ऊली** '

पुलके [१], प्रेरी [२], बेड़ी [३] और मुखचूमी [४]।

'**उथलित**' नया विशेषण है। हिन्दी में 'उथलना' अ० क्रि० है। अर्थ — 'अपने स्थान से हटना, डावाँडोल होना'। इसी से यह वि० बना है।

'**ऊली**' वि० भी 'ऊलना' अ० क्रि० से बना है जिसका अर्थ है — प्रसन्न या उल्लसित होना।

'**पुलके**' वि० पु० शब्द है। अर्थ — 'पुलकित'। 'पुलकी' स्त्री० (सं० पुलकिन्) रूप है।

'**प्रेरी**' वि० का अर्थ है — प्रेरित। हिन्दी में प्रेरना' स० क्रि० है।

'**बेड़ी**' वि० एक देशज प्रयोग है। हिं० बेड़ा या 'बेंड़ा' आड़ा, तिरछा, कठिन' आदि अर्थों में है। 'बेंड़ी' स्त्री० रूप है।

'**मुखचूमी**' नया सामासिक वि० है।

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

आगामि [५] (मी), आरत [६] (आर्त्त), उज्वल [७] (ज्ज), कीर्तिमान [८] (न्),

---

१. नकुल, १०५ — 'हर्ष से झुके नेत्र थे पुलके पुलके'

२. जयहिंद, १६ — 'उल्लसित प्रेम प्रेरी'

३. मृण्मयी, भोला, १३७ — 'बात बड़ी बेंड़ी है'

४. नकुल, ३६ — 'दूर गगन में उषा अरुण से मुखचूमी थी'

५. विषाद, चित्रांकिता, १४ — 'मेरे आगामि अश्रुजल से'

६. मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, ३० — 'हो कर आरत से'

७. (क) अनाथ, ५ — 'उज्वल विजय-दीप्ति माथो में'

(ख) जयहिंद, ७ — 'उज्वल अभय में'

(ग) विषाद, किरण, ११ — 'उज्वल प्रभामयी'

८. बापू, ६० — 'वह कालजयी कीर्तिमान'

गतिवान [1] (मान्), गुणवान [2] (न्), छविमान [3] (न्), प्लावत [4] (वि) मलीन [5] (लि) महान [6] (न्), मानषी [7] (सी), बिराट [8] (ट्), शास्वत [9] (श्वत), श्रीमान [10] (न्), संग्रहीत [11] (गृ), सुखदाई [12] (दायी), सुखदायनि [13] (यिनी)

विशेषण-विपर्यय

इसके उदाहरण गिने-चुने है यथा टटका [14] (घाव), प्रसन्न [15] (पूर्णिमा)

---

१. मृण्मयी, अमृत, ८८ — ' तड़ित्तेज **गतिवान** '

२. मृण्मयी , नाम की प्याम, ५७ — ' हां, रूप-**गुणवान** वह '

३. दूर्वादिल, वर्ष, प्रमाण, ८४ — ' जब आये तुम **छविमान** '

४. दूर्वादिल, बाढ़, ७३ — ' **प्लावत** प्रवाह भर आंख में '

५. (क) आर्द्रा, अग्नि-परीक्षा, ६६ — ' सध्या का **मलीन** वेष '

(ख) आर्द्रा, चोर, ७४ — ' धुवे की राशि ही **मलीन** '

(ग) मृण्मयी, आत्मोत्सर्ग, ६५ — ' मन हुए **मलीन** '

६. (क) जयहिंद १३ — ' तुझ पर दाय है महा **महान** '

(ख) विषाद, ५ — ' भारती का मन्दिर **सुमहान** '

७. विषाद, मौनालाप, ३० — ' हृदयगुहा में कहीं **मानषी** चोर '

८. (क) विषाद, एक चमक, १७ — ' क्या विश्व **विराट** '

(ख)दूर्वादल, समीर के प्रति, ८५ — ' इस **विराट** भव-बीच '

९. बापू , ६६ — ' **शास्वत** गिरा ने '

१०. (क) दूर्वादिल, कोजागर पूर्णिमा, ५२ — ' होता है **श्रीमान** '

(ख) अनाथ, ३२ — ' बैठे वहीं **श्रीमान** '

११. दूर्वादिल, कोजागर पूर्णिमा, ५१ — ' **संग्रहीत** यह हुआ कहां से ?'

१२. मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, २३ — ' देश नहीं किसको **सुखदाई** '

१३. मौर्य्य-विजय, सर्ग १, ८ — ' दे कर सुगंध **सुखदायनि** '

१४. नोआखली में, १७ — ' घाव हुआ फिर से **टटका** '

१५. पाथेय, आदान-प्रदान, २६ — ' पाता है **प्रसन्न पूर्णिमा** यहो '

क्रिया

कुछ विशिष्ट क्रिया-प्रयोग ये हैं —

अरा [१], उजलते [२], उजाल [३], उजाली [४], उमगी [५], कीजे [६], गुंगा [७], गुंगाती [८], चकचौक [९], झिमिट [१०], ढूंक [११], दीजे [१२], प्रेरा [१३], बिचल [१४], बिरचे [१५], बिलट [१६], बिलपा [१७], बिलाते [१८], मोंगा [१९], रिलती [२०], रुप [२१],

---

१. मृण्मयी, नाम की प्यास, ५७ — ' सब ने स्वपात्र निज कूप में **अरा** दिये '

२. जयहिंद, १० — ' ज्वलन्त दीपक **उजलते** '

३. पाथेय, समाधान, ८१ — ' हृदय का प्रोज्वल ओज **उजाल** '

४. दूर्वादल, कब, ६१ — ' दीपावलि किस लिए **उजाली** '

५. दूर्वादल, ५ — ' तुम्हारी ओर **उमंगी** '

६. आत्मोत्सर्ग, २६ — ' किसी तरह **कीजे** उद्धार '

७. नोआखली में, ४५ — ' **गुंगा** रहे घूरे के भीतर '

८. नोआखली में, २८ — ' दर्शित थी मुमाष्ट **गुंगाती** हुई '

९. नकुल, १० — ' उछल पडा **चकचौंक** '

१०. मृण्मयी, छल, ६७ — ' एक संग **झिमिट** गई हैं ये भयंकर प्रहरियां '

११. नकुल, ९३ — ' नभ से **ढूंक** रहे है अगणित तारक '

१२. मृण्मयी, मजुघोष, ३२ — ' आज्ञा मुझे **दीजे** आप '

१३. पाथेय, जाग्रत, २८ — ' यह मै दुर्विधि का **प्रेरा** '

१४. दैनिकी, स्थानच्युत, ६३ — ' क्रंदन **बिवल बिचल** कर '

१५. नकुल, ६४ — ' विधि ने **बिरचे** नही सिह '

१६. नकुल, ८८ — ' **बिलट** रहे थे जहा स्वर्ण-हय-गज '

१७. दैनिकी, नर किंवा पशु, ५८ — ' रोया नही, नहीं यह **बिलपा** '

१८. दूर्वादल, पथ, ६३ — ' गलियों में **बिलाते** हो '

१९. दैनिकी, सजग द्वन्द्व, ४७ — ' माता वहां **मोंगा** रही रो पडे शिशु को '

२०. मृण्मयी, छल, ६२ — ' (तरंगे)... आती हैं **रिलती** हुई तट पर '

२१. दैनिकी, परिवर्तित, १० — ' कील रूप में **रुप** के '

हँसती [1], हिरा [2], हिला [3], हूजे [4], हूला [5]।

'**अराना**' स० क्रि० 'अड़ाना' अर्थ में है।

'**उजलना**' अ० क्रि० 'प्रकाशित' होना अर्थ रखती है।

'**उजाल**' और '**उजाली**' का संबध 'उजालना' स० क्रि० से है जिसका अर्थ है 'दीप्त या प्रज्वलित करना'।

'**उमंगी**' भू० क्रि० 'उमंगना' से बनी है।

'**कीजे**' क्रि० 'कीजिये' अर्थ मे चलती है।

'**गुगा**' और '**गुगाती**' अ० क्रि० का सबध 'गुगुआना' अ० क्रि० से है जिसका अर्थ है धुधुआना — 'अच्छी तरह न जलना और धुआँ देना'।

'**चकचौंक**' अ० क्रि० 'अचानक चौंकना' अर्थ मे नयी है।

'**झिमिटना**' [6] अ० क्रि० 'एकत्र होना' अर्थ मे है।

ढूकना और 'ढुकना' अ० क्रियाएं प्राय: 'छिपना, छिप कर प्रवेश करना' अर्थों मे ही है। यहा 'झाँकना' अर्थ ठीक जान पड़ता है।

'**दीजे**' क्रि० 'दीजिये' अर्थ मे है।

'**प्रेरा**' भू० क्रि० का 'प्रेरना' स० क्रि० से सम्बन्ध है।

'**बिचल**' क्रि० का संबध 'विचलना' अ० क्रि० (सं० विचलन) से है जिसका अर्थ है — 'इधर-उधर हटना'। 'रह रह कर शब्द, करना' अर्थ ही यहां संभव है।

---

१. विषाद चित्रांकिता, १५ — 'हँसती है मुझे'

२. (क) मृण्मयी, भोला, १३४ — 'मैं तो हिरा जाऊ यहां'

(ख) नकुल, ६१ — 'पगडंडी भी हिरा गई है'

३. (क) पाथेय, परदेशी, ३० — 'बालक- सा झट से हिला लिया तू ने'

(ख) पाथेय, मार्ग-बंधु, ६६ — 'चिर परिचित की भांति हिला'

४. मृण्मयी मंजूघोष, ४० — 'मेरे लिए चिंतित न हूजे'

५. पाथेय, बोध, ३५ — 'दौड़ पड़ा हूला-फूला'

६. तुल० मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, — 'झिमिट जाते हैं जहां जो लोग'
(मैथिलीशरण गुप्त)

'**बिरचना**' स० क्रि० (सं० विरचन) 'बनाना' अर्थ में है।

'**बिलटना**' अ० क्रि० हिंदी में, और 'बिलटब' क्रि० अवधी में 'नष्ट होना' अर्थ में है।

'**बिलपा**' भू० क्रि० 'विलाप किया' अर्थ में है।

'**बिलाना**' अ० क्रि० (स० विलयन) नष्ट होना, विलीन होना, छिपना आदि अर्थ में है।

'**मोंगाना**' स० क्रि० बोलचाल की है। यहां 'बहलाना, या रोते हुये को चुप कराना' अर्थ सम्भव है।

'**रिलना**' अ० क्रि० 'प्रवेश करना, तेजी से घुसना' अर्थों में है।

'**रुपना**' क्रिया 'रोपना' स० क्रि० (स० रोपण) का अकर्मक रूप है।

'**हँसना**' [1] स० क्रि० 'किसी का उपहास करना' अर्थ में भी है।

'**हिराना**' अ० क्रि० और 'हेराना' [2] अ० क्रि० (स० हरण) 'खो जाना या गुम हो जाना' अर्थ में है। 'सुध बुध भूलना' [3] अर्थ भी है।

'**हिलाना**' स० क्रि० का अर्थ है — 'बच्चे को प्यार करके परचा या हिलगा लेना'।

'**हिलना**' अ० क्रि० है। अर्थ — 'परचना, हिलगना'।

'**हूजे**' क्रि० का अर्थ है — होइये। कीजे, दीजे की भांति यह भी बोलचाल की क्रिया है।

'**हूलना**' अ० क्रि० 'प्रसन्न होना' अर्थ में भी है। हूल-फूल [4] पद प्रसन्नता अर्थ मे है। 'हूल' [5] स्त्री० शब्द 'हर्ष या आनन्द की ध्वनि अर्थ' में भी है।

---

१. तुल० मानक हिंदी कोश, पांचवां खण्ड, — '**हँसा** गया मै, हँसने गया था' (मैथिलीशरण गुप्त)

२. तुल० (i) 'नयनन नींद **हेरानी**' — (युगलप्रिया) (ii) ऊधो का सब ज्ञान **हेरायो** — (सूरदास)

३. तुल० नित नई नई रुचि बन हेरत **हेराइ** री — (केशवदास)

४. मानक हिन्दी कोश, पांचवां खण्ड, दे० हूल-फूल।

५. व्रजभाषा सूर कोश, द्वितीय खण्ड, दे० हूल।

क्रिया-विकार

अन्य कवियों की भांति गुप्त जी ने भी कुछ क्रियाओं के विकृत रूप लिखे हैं यथा — आयँ [1], आयँ गे [2], आयगा [3], आयगी [4], करै [5], करौगे [6], चीड़ [7] (चीर) जायँ [8], जायँगी [9], जायँगे [10], जाय [11], जायगा [12], जायगी [13], देखौगे [14], पढ़ौगे [15], पायँ [16], पायँगी [17], पायँगे [18], पायगा [19], पायगी [20], भरौगे [21], मरौ [22],

---

१. मृण्मयी, मंजुघोष, ३५ —' एक साथ बाहर निकल **आयं** '
२. आर्द्रा, प्रयाणोन्मुखी, १३ — ' आज स्वामी **आयँगे** '
३. दूर्वादल, मूर्ति, ४८ — ' **कब आयगा** '
४. दूर्वादल, मृत्यु-भय, १६ — ' क्या नींद अच्छी **आयगी** '
५. आर्द्रा, नृशंस, ३३ —' भलाई भी **करै** कभी '
६. आर्द्रा, वन्दी, १३२ — ' चदन से चर्चित **करौगे** तुम '
७. आत्मोत्सर्ग, २५ — ' लोगो का दल **चीड़** '
८. आर्द्रा, प्रयाणोन्मुखी, १२ — ' सभी जल **जायँ** '
९. आर्द्रा, नृशस, ३१ — ' पहले ही मर **जायँगी** '
१०. मृण्मयी, पुनरपि, ११२ — ' जान **जायँगे** '
११. पाथेय, ११ — ' गिर **जाय** पोटली '
१२. दूर्वादल, मूर्ति, ४८ — ' यह **जायगा** '
१३. दूर्वादल, मृत्यु-भय, १६ — ' यह रात यों ही **जायगी** '
१४. आर्द्रा, वन्दी, १३१ — ' जब तुम **देखौगे** '
१५. आर्द्रा, वन्दी, १३१ — ' ठिठक **पढ़ौगे** तुम घूम कर '
१६. आर्द्रा, प्रयाणोन्मुखी, १२ — ' न चुभने **पायँ** '
१७. आर्द्रा, नृशंस, ३१ — ' देखने न **पायँगी** '
१८. दूर्वादल, मृत्यु-भय, १६ — ' क्या शांति झँप कर **पायँगे** ? '
१९. विषाद, किरण, ११ — ' **पायगा** अनन्त धन '
२०. पाथेय, शांति-लक्ष्मी, ७९ — ' रोक उसको न **पायगी** '
२१. आर्द्रा, वन्दी, १३२ — ' नवजीवन **भरौगे** तुम '
२२. आर्द्रा, नृशंस, ३३ — ' जो तुम **मरौ** क्यों आप '

रक्खा[१], **रक्खी**[२], **रक्खेंगे**[३], **रक्खे**[४], **रक्खो**[५], **रहोगे**[६], **लायगा**[७], **लाव**[८] (लाओ) और सतायगी[९]। इन में 'आय' जैसी क्रियाएं 'ये' या 'ए' से होनी चाहिएं थीं।

उपसर्ग

जो उपसर्ग कवि को विशेष रूप से प्रिय हैं वे ये है — **अ, अन** (**सं० अन्**), **दुर्, नि, निर्, प्र, सम्, सु**। फ़ारसी का '**बे**' उपसर्ग भी कई शब्दों में जुडा है। इन सब के उदाहरण इस प्रकार है—

अगंभीर, अजान, अदोष, अभागी, अभाग्य, अव्यर्थ।

अनचीता, अनबुझी, अनर्जन, अनहित, अनाद्यन्त, अनाभूषिता, अनास्वादित।

दुरन्त, दुर्दृश्य, दुर्मद, दुर्मुख, दुर्विधि, दुर्विलघ्य, दुर्वृत्ति।

निकाम, निदारुण, निलज्जता।

निरभ्राकाश, निरवच्छिन्न, निरवधि, निरवलम्ब, निर्ज्वलन, निर्दलनी, निर्द्वन्द्व, निर्मलिनता, निर्विकृति, निर्विशक।

प्रकर्ष, प्रतीर, प्रधावित, प्रपीडित, प्रभारत, प्रवर, प्रसह्य, प्रस्थित, प्रहरण।

समाकर्षक, समाश्वसित, समुत्तारण, समुद्दीपित, समुद्वेलित, समुन्नत।

सुअचल, सुअवसर, सुजीवन, सुदुस्तर, सुधार्मिकता, सुपास, सु-मन, सुमहान्, सुविमान, सुसमर्थ।

---

१. विषाद, वही तिथि, २८ — '**रक्खा** हो जिस जगह'
२. आर्द्रा, हूक, ५० — 'दाब सी **रक्खी** रमा की बात'
३. नोआखली मे, एक हमारा देश, ५१ — '**रक्खेंगे** ऊंचे उठ'
४. दूर्वादल, कब, ६१ — 'चुन **रक्खे** प्रसून अचल भर'
५. पाथेय, विदा के समय, १३१ — 'बाध **रक्खो** मत मुझ को'
६. आर्द्रा, वन्दी, १४० — 'सोचते **रहोगे** और कब तक?'
७. पाथेय, बीच मे, ४४ — 'नित नया प्रकाश **लायगा**'
८. आर्द्रा, अब न करूंगी ऐसा, १२४ — 'पकड तो उसको **लाव**'
९. मृण्मयी, मंजुघोष, २९ — 'शाति ही **सतायगी**'

बेकार, बेखबर, बेचारी, बेजाने, बेडौल, बेढब, बेबाक, बेरोक, बेसुध, बेहया, बेहाल इत्यादि।

लिंग

अन्य कवियो की भांति गुप्त जी ने भी लिंग-निर्धारण के विषय में रुचि-स्वातन्त्र्य का परिचय दिया है। उदाहरण-स्वरूप जो शब्द प्राय: हिन्दी में स्त्री० रूप में ही चलते हैं कवि ने उन्हें पुं० रूप में लिखा है यथा अलक [1], तरग [2], देह [3], फुंकारों [4], बिसात [5], बूद [6], भोर [7], माप [8], वायु [9], और सुगंध [10]।

इन में **अलक**, **तरंग**, **देह** और **सुगध** शब्द सस्कृत में अवश्य पुं० रूप में ही चलते है। **फुंकार** (सं० फूत्कार पुं०), **बूद** (सं० विंदु पुं०) और **माप** (सं० मापन नपुं०) शब्द हिंदी मे प्राय: स्त्री० ही हैं। अरबी शब्द '**बिसात**' भी स्त्री० ही है। हिंदी में भी स्त्री० ही रहता है। **भोर** (सं० विभावरी स्त्री०) और **वायु** (सं० पुं०) शब्द हिंदी मे उभय लिगों मे भी देखे जाते हैं।

इसके विपरीत जो शब्द हिदी में पु० है उन्हे कवि ने स्त्री० के रूप मे प्रयुक्त

---

१. आर्द्रा, डाक्टर, ८३ — '**अलक** ही दिये दिखाई'

२. बापू, ४० — 'दु:ख के **तरग** हैं उमडते'

३. नकुल, ४७ — 'कापा उसका **देह**'

४. आर्द्रा, दुर्लभ, १२ — 'वैर-व्याल के **फुंकारों** में'

५. मृण्मयी, भोला, १३१ — 'भूल कर अपना **बिसात**'

६. दूर्वादल, ८७ — 'हमारे नेत्रो के दो **बूद**'

७. पाथेय, चोर, ५१ — 'कर लू मैं निज निशि का **भोर**'

८. दूर्वादल, वर्ष-प्रमाण, ८३ — 'ओ विराट के **माप**'

९. विषाद, स्मृति, २१ — 'धूल उड़ाता हुआ **वायु** है'

१०. (क) मृण्मयी, अमृत, ९१ — 'पी कर तेरा अलक-**सुगंध**'

(ख) जयहिंद, ९ — 'बल का **सुगध** दूर तक फैला'

किया है यथा अनल [१], कीच [२], जय [३], तोल [४], पवन [५], फाग [६], बरसें [७], वेणु [८] और साख [९]।

इन में **अनल**, **पवन** और **वेणु** शब्द संस्कृत और हिंदी में पुं० ही हैं। 'वेणुका' स्त्री० के प्रभाव से 'वेणु' को भी स्त्री० मे समझ लिया जाता है। इसी प्रकार **कीच**, **फाग** और **बरस** शब्द हिंदी और व्रज० में प्राय: पुं० ही है।

जय और **तोल** संस्कृत में पु० और हिंदी में प्राय: स्त्री० ही रहते हैं। 'तोल' तो सस्कृत में नपुं० भी है। किन्तु कवि ने इन दोनो शब्दो को स्त्री० में ही लिखा है।

वचन

वचनों के क्षेत्र में भी कवि ने कहीं कही नियम-भग किए है। उदाहरणत: '**प्राण**' [१०] शब्द सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होता है पर कवि ने इसे एकवचन में भी प्रयुक्त किया है।

---

१. (क) पाथेय, तिमिरालोक, ९० — 'किस छिपी **अनल** में जल कर'

(ख) मृणमयी, पुनरपि. ११७ — '**अनल** ... क्षार कर गई है तनु सारा'

२. आत्मोत्सर्ग, ५१ — 'मचा दी कितनी शोणित-**कीच**'

३. (क) मौर्य्य-विजय, ९ — 'है **जय** पाई'

(ख) जयहिंद, १४ — 'भारत की **जय** से'

(ग) पाथेय, मार्ग-बघु, ६९ — 'आज जीवन की **जय** से'

४. पाथेय, रत्न की आभा, ४५ — 'पत्थरो में है यहां तुम्हारी **तोल**'

५. मौर्य्य-विजय, ८ — '**पवन** है सब का श्रम हर रही'

६. बापू, ७७ — 'खेल रही मृत्यु की दुरन्त **फाग**'

७. नकुल, २३ — 'बिताईं तुम ने **बरसें**'

८. नकुल, १०२ — 'फूंकते **वेणु** अधर की ...'

९. पाथेय, आह्वान, १०१ — 'मेरी कटुता की है **साख**'

१०. नोआखली में, १९ — 'सत्तर बरसों का **प्राण** हर लिया गया '**यहां**'

अनेकों [1], **उजाड़ों** [2], **भरपूरों** [3] **और राजों** [4] (राजाओं) नये बहुवचन कहलायेंगे।

कही कहीं बहुवचन में भी एकवचन लिख कर ही काम चला लिया गया है यथा 'मांएं' के स्थान पर 'मां' [5] शब्द का प्रयोग देखा जा सकता है।

सन्धि

गुप्त जी की कविताओं में सधियों के भी अनेक प्रकार मिल जाते हैं। उदाहरणत: **दीर्घ स्वर सधियों** के कुछ नमूने प्रस्तुत हैं —

चिंताकुल, जठरानल, नीचाधम, लक्षाधिक, विरामागार सतोषार्थ, हृदयाकाश।

कतिपय **गुण स्वर सधियां** द्रष्टव्य है — अधमेंधन, गात्रोत्थान, तिमिरोपल, धूम्रोद्गार, पीतोज्ज्वल, प्रमोदोन्माद, प्रवेशोत्सव, प्रेमोत्सुक फेनोच्छ्वास, मरणेच्छा, मरणोद्दीप्त, महोल्लासी, मृदुलोज्ज्वल, विरतोद्योग, शांतोज्वलता, शुभेच्छा, स्निग्धोज्वल, हर्षोत्सव, हर्षोन्मत्त।

इन में उज्ज्वल, उत्सव शब्दों से संधियां करने की विशेष रुचि प्रकट है।

व्यंजन संधियां भी कम नही है यथा जगदाधार, जीवन्मुक्त, जीवन्मृत, महज्जन, विद्युदग्नि, विद्युद्दीपो, विपज्जाल, सुहृज्जन, स्वर्णच्छवि, हृद्धाम।

कुछ **विसर्ग संधियां** निम्नलिखित है —

---

१. (क) मृण्मयी, लाभालाभ, ५ — '**अनेकों** बरसों का वह काज'

(ख) मृण्मयी, नाम की प्यास, ५२ — 'श्रमिक **अनेकों** वहां'

(ग) मौर्य्य-विजय, सर्ग २, २१ — '**अनेकों** अश्वारोही'

(घ) मौर्य्य-विजय, सर्ग ३, २४ — 'आज **अनेकों** नारियां'

२. दूर्वादिल, वृद्ध, ८० — 'यत्र-तत्र कितने **उजाड़ों** के'

३. जयहिंद, १० — 'उन में पराक्रम है उन **भरपूरों** के'

४. जयहिंद, ११ — 'सभी **राजों** अधिराजों की'

५. आर्द्रा, वन्दी, १४१ — 'कैसे मैं रुलाऊं अब और बहुतेरी मां?'

अन्तर्ज्योति, अन्तर्वाणी, ज्योतिर्मय, तपश्चर्या, तपस्काम, तपोनिरत, तमोमय, तेजोधारी, दुष्कृति, दुस्साध्य, **धनुर्बाण**, नभोमंडल, निष्पाप, निस्सार, **मनोधन, मनोभावना,** रजोविहीन, **वयोज्येष्ठ** ।

'**मनोकाम**'[1] जैसी हिंदी की अपनी संधियां भी मिल जाती है। इसी प्रकार 'मनोकामना' शब्द भी हिन्दी मे रच-पच गया है। अधिकाशत: कवि ने संधि-नियमों का पालन ही किया है।

समास

कवि ने प्राय: सभी प्रकार के समास अपनाये हैं।

संबंध तत्पुरुष समासों के निदर्शन इस प्रकार है — **अरण्य-बीच, खेद-भार, घर-बीच**, छाया-समान, **झरोखे-बीच**, पथ-भ्रांति, पुलक-प्राप्ति, भव-बीच, **भ्रमण**-वाछा, **रण-बीच**, वन-पशुओ, संध्या-समय, समीर-संचार, सर्प-चाल।

द्वितीय पद 'बीच' रखना कवि को विशेष रुचिकर जान पड़ता है।

करण तत्पुरुष समास देखे — कोलाहल-क्षुब्ध. खेद-खिन्न, ताप-तप्त, दाह-दग्ध, **नीर-भरे**, नीलम-निमित, भय-जर्जर, मत्र-मोहित, रत्न-खचित, **राहु-ग्रस्त**, वाष्प-रुद्ध , विजय-विमडित, विरह-विधुर, श्री-सपन्न, स्वेद-सिक्त।

अपादान तत्पुरुष समास भी है यथा अवलम्बन-हीन, इन्धन-रहित, उपहार-विहीन, कर्तव्य-भ्रष्ट, **घर-बिछुड़े**, चिन्ता-रहित, प्रहार-छिन्न, मेघ-मुक्त।

द्वन्द्व समास देखिये — उदधि-आकाश, खदक-खाई, गगा-यमुना, पथ-कूल, वैर-विरोध, हर्ष-व्यथा।

कुछ **बहुव्रीहि समास** ये है — उत्तुंगकाय, कान्तमुख, खिन्न-वदन, छिन्नपद, छिन्न-वसन, छिन्नवास, प्रसन्नमन, भग्नध्यान, शुष्कमुख, समुज्ज्वलकाय, हतप्रभ।

कर्मधारय समासों में उपमान-पूर्वपद और उपमानोत्तरपद उभय प्रकार के समास मिल जाएगे। कुछ उदाहरण ये है — करुणा-निर्झर, करुण-मेघ, काल-वधिक, गौरव-गिरि, घन-जटा, जीवन-रण, तरग-रथो, दया-दीप, नीलम-निर्मल, प्रकाश-निर्झर,

---

१. दूर्वादल, पथ, ६४ — 'रहता अधूरा है **मनोकाम**'

प्रेम-बांसुरी, फेन-बंधन, मरण-समुद्र, मुक्ति-बीज, विश्व-सरोवर, शब्द-सुमनों, शांति-सुगंधि, सत्य-तीर्थ, सत्य-सूर्य, सन्देह-तिमिर, **समय-सखा**, सौंदर्य-सुरभि, **स्वर-सुमनों**, हृदय-गुहा, हृदय-सुमन, हृदय-हाटक।

'स' (स० सह) जोड़ कर बनने वाले **अव्ययीभाव समास** भी हैं यथा स-उमंग, सदय, सभक्ति, समोद, सविकार, सहठ, साङ्ग, सोल्लास इत्यादि।

अन्य **विविध समासों** मे उल्लेखनीय उदाहरण इस प्रकार हैं — अग्नि-परीक्षा, अमृत-तीर्थ, आग-लगे, कलंक-कथा, गुण-गेह, छाया-चित्र, धर्म-धीर, प्रकाश-गिरा, प्रकाश-चक्र, प्रतीक्षा-स्तब्ध, **मुख-चूमी**, रण-शूर, शस्त्र-शूर, सुख-चित्र, **सुख-सेज**, सुधा-सने।

अन्य शब्द-विकार

अन्य कवियो की भांति गुप्त जी ने भी कतिपय शब्दो के विकृत रूप लिखे हैं यथा अकस्मात[1] (त्), अवाक[2] (क्), अहर्निशि[3] (अहर्निश), चतुर्दिक[4] (क्), तौ[5]

---

१. (क) दूर्वादल, भेंट, ७ — '**अकस्मात** जिस दिन पावेगा'

(ख) पाथेय, अनुकूल, ६४ — '**अकस्मात** तम की छाती पर'

(ग) पाथेय, मार्ग-बंधु ६६ — '**अकस्मात** तू मुझे मिला'

२. (क) पाथेय, दोनो ओर, ४९ — 'क्षण भर तो वह रहा **अवाक**'

(ख) आर्द्रा, प्रयाणोन्मुखी, ११ — 'हो कर **अवाक**'

३. नकुल, ९७ — 'होगा जो विषदाह **अहर्निशि** उन्हे हृदय में'

४. (क) दैनिकी, शृंखलित, ६४ — 'घनीभूत है आज **चतुर्दिक**'

(ख) मृण्मयी, लाभालाभ, १८ — '**चतुर्दिक** नीरवता थी'

५. (क) आर्द्रा, अग्नि-परीक्षा, ६४ — '**तौ** भी उन्हे फिर फिर खींच'

(ख) आर्द्रा, नृशंस, ३७ — '**तौ** भी तुझे खाट पर'

(ग) आर्द्रा, अग्नि-परीक्षा, ६८ — '**तौ** भी नही राम ने'

(तो), **बारों** [१] (बारहों), **मुझी** [२] (मुझ ही), **यदपि** [३] (यद्यपि), **हमीं** [४] (हम ही), **हौ** [५] (हो)

इन में **मुझी** और **हमीं** तो ' ह् ' लोप और शब्द-सयोग के उदाहरण हैं।

शब्द-लोप

प्राय: कवि ने शब्द-लोपी वाक्य नही बनाये हैं। फिर भी अपवाद रूप में दृष्टि शब्द के बाद ' **में** ' [१] की कमी कहीं कहीं खटकती है। इसी प्रकार ' **ओर** ' शब्द से पूर्व ' **की** ' [२] भी कहीं कहीं लुप्त सा जान पड़ता है।

---

१. पाथेय, तिमिर-पर्व, ६० — ' देखी अपनी पुण्य-पूर्णिमा **बारों** मास '

२. मृण्मयी, पुनरपि, १०७ — ' **मुझी** को हो बहकाते '

३. (क) आर्द्रा, खादी की चादर, १०९ — ' **यदपि** प्रहार न था '
   (ख) अनाथ, ३ — ' **यदपि** मन में यह डर है '

४. (क) नकुल, ३९ — ' पा न सकेंगे **हमीं** '
   (ख) अनाथ, २१ — ' **हमीं** पर रोष '

५. (क) आर्द्रा, खादी की चादर, ९९ — ' **हौ** तुम सुनने को तैयार '
   (ख) आर्द्रा, खादी की चादर, १०५ — ' तुम **हौ** यथार्थ ही पत्थर के ? '

६. (क) मौर्य्य-विजय, ११ — ' तेरा सा सौंदर्य सृष्टि मे दृष्टि (**में**) न आता '
   (ख) दूर्वादल, बाढ, ७४ ' दीनो का समूह यह हाय ! दृष्टि (**में**) आता है '

७. (क) मृण्मयी, लाभालाभ, १३ — ' गये वे नहीं नये गृह (**की**) ओर '
   (ख) मृण्मयी, नाम की प्यास, ५७ — ' घाट (**की**) ओर आगे बढ़ा '
   (ग) नकुल, ९२ — ' दौड़ पड़े जल (**की**) ओर '

नव शब्द

कुछ अन्य विशेष रूप से उल्लेखनीय शब्द ये हैं — झुकमुके [1], दुपद [2], न-कुछ [3], पन्था [4], वनानी [5], सहयात्री [6]।

इन में ' झुकमुके ' पु० शब्द ' झुटपुटे ' अर्थ मे है। ' झुकमुख ' [7] पु० शब्द का ही यह विकृत रूप है।

' दुपद ' पुं० (सं० द्विपद) शब्द भी ' चौपद ' जैसे शब्दो के अनुकरण पर घड़ा गया है।

' न-कुछ ' नया शब्द-प्रयोग है। यह अगरेजी के ' Nothing ' संज्ञा शब्द का हिन्दी समानक है।

' पन्था ' पुं० शब्द यहां ' पन्थ ' अर्थ में है। सस्कृत मे ' पथिन् ' (अर्थ ' मार्ग ') का प्रथमा विभक्ति एकवचन मे ' पन्थाः ' रूप होता है। विसर्ग-रहित शब्द-रूप ही यहां ले लिया गया जान पडता है।

' वनानी ' स्त्री० शब्द का अर्थ है — ' बडा लम्बा चौडा वन '। संस्कृत में

---

१. नकुल, ३६ -- ' विजन-वीथि मे वायु झुकमुके मे झूमी थी '

२. दैनिकी, विस्मरण, १५ — ' चौपद से क्यों दुपद बनाया जाता '

३. (क) मृण्मयी, ग्वालिने, ७३ — ' स्मिति-निधि अहा न-कुछ मे पा ली '

(ख) पाथेय, क्षणिक, ३८ — ' न-कुछ सीप मे स्वाति-बिंदु की यह मुक्ता '

(ग) नकुल, ४१ — ' यह तेरा लघु गात न-कुछ-सा '

४. नकुल, १०२ — ' अन्य पन्था निष्फल है '

५. (क) नकुल, ११ — ' किस रहस्य की किये वनानी है रखवाली '

(ख) नकुल, ५६ — ' खिलते कितने यहां वनानी मे '

६. जयहिंद, १२ — ' सहयात्र है नवीनी जययात्रा ... '

७. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० झुकमुख।

इसी अर्थ में 'अरण्यानि' और 'अरण्यानी'[१] उभय शब्द-रूप चलते है। यहां 'वनानी' उन्हीं का नया हिन्दी समानक समझना चाहिये।

'**सहयात्री**' पु० शब्द भी नया प्रयोग है। यह उर्दू के 'हमसफर' का ही अर्थ देता है। फारसी और अरबी में 'हमसफ़र' वि० है।

प्रिय शब्द

प्रत्येक कवि के कुछ विशेष प्रिय शब्द हुआ करते हैं। गुप्त जी को ये शब्द बहुत रुचिकर लगते हैं — अकस्मात (त्), अभाग्य, अहरह, आल्हाद (ह्ल), उज्वल (ज्ज), कुछेक, जठरानल, तड़त्तेज, तनु, तौ, दुरन्त, दुस्सह, नाकी, निक्वण, निदेश, निमेष, निरुपाय, निर्ज्वलन, निस्सहाय, निहाल, नेंक, पै, प्रमोद, प्रमाद, प्रस्थित, प्रान्तर (र्), बेगार, भगवान, (न्), महान्, मुहँ (मुँह), विराट (ट्), विषाद, समुज्वल (ज्ज), महठ, सुप्रभात, हमी, हौ (हो)।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि की ध्वन्यात्मक शब्द-सपत्ति विपुल मात्रा मे है। कूजन, जल, झरना, धारा, बातो और सरिता सब के लिए '**कलकल**'[२] शब्द है। वायु के लिए **सनसन**[३]

१. सस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, दे० अरण्यानि

२. (क) आर्द्रा, वचित्र, ९२ — '**कलकल**-कूजन सुनाते थे'

(ख) नकुल, ४२ — 'तेरे **कलकल** गीत'

(ग) विषाद, घनाल्हाद, ४० — 'करता है **कलकल**-कलित गान'

(घ) आर्द्रा, चोर, ७४ — '**कलकल** नृत्य कर ... **धारा**'

(ङ) आर्द्रा, नृशंस, ३४ — 'सखियों के कांत **कलकल** में'

(च) विषाद, स्मृति, २१ — 'किसी तटिनी का **कलकल**'

३. (क) पाथेय, यथास्थान, १२ — 'यह वायु हाफ़ कर **सन-सन** कर'

(ख) अनाथ, १७ — '**सनसन** करके उत्तप्त वायु'

और **सरसर** [1] शब्द हैं। तारे **जगमग** [2], **झकमक झकमक** [3] और **टिमटिम** [4] करते है। सरिता, सागर और प्राण **छल-छल** [5] करते हैं। उर्मियों की **छपछप** [6] और जलधारा की '**छर-छर**' [7] यहां भी है।

'**झलमल**' [8] तो कदाचित् कवि की सर्वाधिक प्रिय ध्वनि है। उनकी कविताओं मे यह चित्र, जलधार, नेत्र, बूंदों, मणि-रत्नों, रजत, वस्त्राभूषणों और वारि-बिंदुओ की ध्वनि है।

'**झिलमिल**' [9] ध्वनि तारकों की है। आंसू और झरने **झरझर** [10] और

---

१. बापू, १२ — 'वायु वही **सर-सर**'
२. आर्द्रा, एक फूल की चाह, ४७ — '**जगमग** जगते तारों से'
३. नकुल, ३७ — '**झकमक झकमक** झलक रहा है'
४. नोआखली में, ३५ — '**टिमटिम** लगा तारकों का मेला'
५. (क) मृण्मयी, पुनरपि, १०५ — '**छलछल** सांध्य स्वर्ण में ... सरिता'
(ख) मृण्मयी, छल, ६९ — 'सागर मे **छलछल**'
(ग) दैनिकी, आवाहन, २२ — 'तृण तृण मे प्राण उठे **छलछल**'
६. मृण्मयी, छल, ६२ — 'ऊर्मियां ये **छपछप** कर के'
७. दैनिकी, उन्मुख, ६६ — 'ये जल धाराए **छरछर**'
८. (क) नकुल, २८ — 'चित्र थे **झलमल झलमल**'
(ख) आर्द्रा, डाकू २२-२३ — 'लोचन-जल-धर हुई **झलमल**'
(ग) नकुल, ९० — '**झलमल** झांक रहे हो नेत्र'
(घ) दैनिकी, अंजलि-दान, २० — 'बूंदों की **झलमल** मुक्ता-माला'
(ङ) पाथेय, अंजलि-दान, १२९ — '**झलमल हैं** इस मे मणि-रत्नालंकार'
(च) दैनिकी, लोहा, २९ — '**झलमल** था रम्य रजत'
(छ) पाथेय, दयनीय, १२४ — '**झलमल झलमल** वस्त्राभूषण'
(ज) आर्द्रा, वंचित, ९३ — 'वारि-बिंदु **झलमल**'
९. विषाद, स्मृति, २२ — 'तारकाओं का **झिलमिल झिलमिल** हास'
१०. (क) पाथेय, विदा, ८ — '**झर-झर** नेत्र-नीर यह'
(ख) आर्द्रा, एक फूल की चाह, २३ — 'झर-झर वहां एक **झरना**'

टपटप [१] करते बहते हैं। आंसुओं की ध्वनि **झलझल** [२] भी है। दोपहरी, प्रभंजन और रात की ध्वनि है **साँ-साँ** [३]।

वृष्टि होती है **घनघन** [४] और कंपन होती है **थर-थर** [५]। पत्ते, माधवी और मारुत '**मर्मर**' [६] करते हैं। पत्तों की अन्य ध्वनि '**खड़ खड़**' [७] भी है। दिन महकता है '**महमह**' [८] और गान होता है **गुन-गुन** [९]। बैलगाड़ी चलती है '**चरमर**' [१०] और चक्र, ट्रेन तथा रथ चलते हैं '**घर्घर**' [११]।

छुरी की **चमचम** [१२] और कुदाली की '**झनन झन**' [१३] देखने योग्य है।

---

१. आर्द्रा, हूक, ५ — 'अश्रु-से **टप-टप** गिराते थे'

२. मृण्मयी, पुनरपि, ११४ — 'पल भर **झल-झल**'

३. (क) आर्द्रा, नृशंस, ३४ — 'दोपहरी **साँ-साँ** जब होती थी'

(ख) आर्द्रा, अब न करूंगी ऐसा, १२३ — '**साँ-साँ** करता आता'

(ग) आर्द्रा, बंदी, १३९ — '**साँ-साँ** रात होती थी'

४. बापू १२ — वृष्टि **घन-घन** घहरी'

५. दैनिकी, उन्मुख, ६६ — 'पुलक-भार से **थर-थर**'

६. (क) मृण्मयी, पुनरपि, १०९ — 'पत्तो का **मर-मर**'

(ख) पाथेय, अविराम, १९ — 'मधुर माधवी **मर-मर** मे'

(ग) पाथेय, मार्ग-बधु, ६६ — 'गान गा उठा **मर्मर** स्वर मे'

७. नकुल, १२ — 'झरे पत्तों का **खड़-खड़**'

८. दैनिकी, स्मृति, ३९ — 'मेरा दिन **मह-मह** हो उठता'

९. पाथेय, दोनो ओर, ४७ — '**गुन-गुन** चान कुछ गाता हुआ'

१०. पाथेय, शांति-लक्ष्मी, ७७ — 'बोल उठा मूक मान **चर-मर**'

११. (क) दैनिकी, दो पैसे, ९ — '**घर्घर** कर के घूम उठे है सौ सौ चक्र'

(ख) दैनिकी, सजग द्वन्द्व, ४८ — 'ट्रेन **घर्घर** घोर कर'

(ग) पाथेय, नवजीवन, ५७ — 'नद के रथ का रव **घर्घर** स्वर से'

१२. मृण्मयी, पुनरपि, ११५ — 'छुरी कनक की **चमचम** चमकी'

१३. दैनिकी, खनक, ३६ — 'यह नई कुदाली **झनन झनन**'

पशु-पक्षियों में विहगों की सामान्य ध्वनि है **चीं चीं**[1]। कपोतों के पंख '**फड़फड़**'[2] करते हैं। गायें '**बां बां**'[3] रंभाती हैं।

इन के अतिरिक्त आहुति '**भक**'[4] से गिर पड़ती है और आग लपलपाती है **धायँ धायँ**[5], **भायँ भायँ**[6]।

पग और तरी **डगमग**[7] डगमगाते हैं। '**तरतर**[8]' ध्वनि शोक, प्रज्वलन क्रिया और मानस के संबंध में है। '**हड़बड़**'[9] ध्वनि जीवन की क्रियाशीलता और गति को चक्षु-मूर्त्त करती है। घड़ी की '**टिकटिक**'[10] और कपाटों की **खट**[11], **खटाक**[12] ध्वनियां यहां भी हैं।

---

१. दैनिकी, सजग द्वन्द्व, ४८ — 'विहग ... कर उठा **चीं-चीं**'

२. (क) नकुल, १२ — 'कपोतों का दल **फड़फड़**'

(ख) आर्द्रा, डाकू, १९ — 'उड़े पक्षी **फड़फड़** कर पक्ष'

३. दैनिकी, नर किंवा पशु, ५९ — '**बां-बां** करते सुन कर'

४ आत्मोत्सर्ग, ३५ — '**भक** से आहुति पड़ी शिखा में'

५. बापू, ६९ — 'धाम वह **धायँ धायँ**'

६. बापू, ६९ — 'धूप का गंगाटा भरे **भायँ भायँ**'

७. (क) नकुल, ५५ — '**डगमग** पग'

(ख) दैनिकी, स्थानच्युत, ६३ — '**डगमग** क्षुद्र तरी'

८. (क) आर्द्रा, खादी की चादर, ११० — 'करने लगा शोक **तर-तर** ही'

(ख) आर्द्रा, वदी, १४२ — 'प्रज्वलित हो के दीप्त **तरतर**'

(ग) नकुल, ३० — '**तर-तर** ... मानस'

९. दैनिकी, यन्त्रपुरी, २४ — '**हड़बड़ हड़बड़** दिन और रात'

१०. दैनिकी, सजग द्वन्द्व, ४७ — 'कर रही **टिक-टिक** घड़ी'

११. मृण्मयी, पुनरपि, ११८ — 'खोल किवाड़े दोनों **खट** से'

१२. आर्द्रा, अब न करूंगी ऐसा, १२३ — 'किवाड़ों को **खटाक** से खोल'

गिरने की ध्वनि **धड़ाम** [१] और **धम** [२] हैं। बहस '**किचकिच**' [३] हुए की जाती है। हँसी और खेल की ध्वनि है **खिलखिल** [४]। जीभ '**लपल** लपलपाती है। भैरव-रव और सरिता के शब्द हैं — **हर-हर** [५]। नदी भी '**हहर** कर बहती चलती है।

अत: ध्वन्यात्मक शब्द-योजना की दृष्टि से भी कवि को विशेष जागरूक माना जा सकता है।

---

१. आर्द्रा, खादी की चादर, १०९ — 'गिरी **धड़ाम** भूमि पर'

२. पाथेय, आकांक्षा, ८७ — 'गिर पड़ा **धम** से भू पर'

३. आर्द्रा, नृशंस, २९ — '**किच-किच** बंद करो'

४. (क) मृण्मयी, सम्मिलित, ७४ — 'भेट रहे हैं एक दूसरे को **खिलखिल**'

(ख) मृण्मयी, छल, ६५ — '**खिलखिल** खेलती'

५. (क) दूर्वादल, वीणा, ५८ — 'जीभें कर **लपलप**'

(ख) आत्मोत्सर्ग, २९ — '**लपलप** करने लगी ... जिह्वाएँ'

६. (क) पाथेय, नव जीवन, ५८ — 'भैरव-रव में **हर-हर-हर** मैं ने गया'

(ख) आर्द्रा, वंचित, ९० — '**हर-हर** नादिनी'

७. मृण्मयी पुनरपि, १०२ — 'स्रोतस्विनी जा रही थी **हहर**। कर'

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

संज्ञा

महाकवि निराला संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उनकी कविताओं में संस्कृत के तत्पम शब्दों की बहुलता है। उन के द्वारा प्रयुक्त कुछ संज्ञाएं विचारणीय हैं —

एरी [1], कर्ष-मर्ष [2], गिठुरे [3], चंगे [4], झटिका [5], नसी [6], नृग [7], नेतो [8], नैष्पथ्य [9], पिसना [10], प्रभापूर्य [11], बनोबास [12], विनिर्जन [13], शोणिमा [14] और

१. परिमल, ७५ — 'बालाए डाले एरी'
२. अनामिका, १४ — 'यौवन दुर्धर्ष कर्ष-मर्ष से लड़ा'
३. अपरा, देवी सरस्वती, १५९ — 'रहे घरों मे जैसे हो बागों में गिठुरे'
४. नये पत्ते, देवी सरस्वती, ६४ — 'चले लोग, मन चढ़ती चंगें'
५. परिमल, रास्ते के फूल से, १५५ —'झटिका के झोके से तरु था झुका'
६. बेला, गीत १४, २२ — 'बह चला सलिल, खुल चली नसी'
७. आराधना, गीत ९०, ९० — 'चितवन मृग की है, निर्निमेष नृग की है'
८. नये पत्ते, देवी सरस्वती, ६१ — 'जल पर हरे रेत जैसे ज्वारी नेतों मे'
९. बेला, गीत १४, २२ — 'नैष्पथ्य गया, पल्लव-वसन आया'
१०. कुकुरमुत्ता, रानी और कानी, ३४ — 'पिसना भी पीसती'
११. तुलसीदास १ — 'भारत के नभ का प्रभापूर्य'
१२. अपरा, देवी सरस्वती, १५८ — 'राम के बनोबास के'
१३. अनामिका, १८६ — 'धरा को विनिर्जन जान'
१४. अपरा, छत्रपति शिवाजी का पत्र, ७७ — 'कीर्ति शोणिमा में यह कालिमा'

समी [१]।

अब हम बारी बारी से सभी शब्दों पर विचार करेगे।

'एरी' शब्द यहा सम्बोधन मे नही है। अवधी मे 'ऐरन' स० पु० शब्द है यह कानो मे पहनने का एक आभूषण है। अगरेज़ी में इसी को Ear-ring कहते हैं कदाचित् 'एरी' यहा 'ऐरन' का ही विकार है।

'**कर्ष-मर्ष**' में कर्ष स० पु० 'खिचाव' के अर्थ मे है। 'मर्ष' सं० पु० शांति, धैर्य, सहनशीलता, आदि अर्थ रखता है। 'कर्ष' से कवि का आशय 'क्रोध' भी हो सकता है।

व्रजभाषा मे '**चग चढ़ना**' मुहावरा 'उमड़ना' या 'उमग बढ़ना' अर्थ मे है। [२]

यहा '**झटिका**' [३] स० स्त्री० शब्द 'तेज हवा' अर्थ मे है।

हल की कुसी या फार की नोक ही 'नसी' कहलाती है। 'हल' को 'नसी' कह दिया जाता है। खेत मे अकुरारोपण के पश्चात् हल की जो पूजा होती उस को 'नसी-पूजा' भी कहा जाता है। [४]

वैवस्वत मनु के पुत्र महाराज नृग [५] को एक ब्राह्मण के शाप मे गिरगिट (Lizard) हो जाना पडा था। गाय-हरण के पाप का फल उन्हें एक सहस्र वर्ष कूएं में पड़े पडे भोगना पड़ा [६]। यहा कवि ने 'गिरगिट' नये अर्थ मे ही '**नृग**' शब्द का प्रयोग किया है।

'नेत' (स० पुं०) 'मथानी की रस्सी' [७] को कहते है। यहा '**नेत**' 'नेत' (स० नेत्र) शब्द का ही बहुवचन जान पडता है।

---

१. बेला, गीत २८, ३६ — 'नये विचारो के ससार मे आया है **समी**'
२. व्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड, दे० शब्द 'चंग'
३. मानक हिंदी कोश, द्वितीय खण्ड
४. मानक हिंदी कोश, खण्ड ३।
५. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ — दे० नृग'
६. व्रजभाषा सूर कोश, द्वितीय खण्ड — दे० 'नृग'
७. (i) उद० 'को उठि प्रात होत लै माखन को कर **नेत** गहै' (सूर० २७१
(ii) उद० **नेति** करि अचल को सिंधु नायौ (सूर०—८—७)

'निष्पत्र' (वि० अर्थ 'पत्रहीन') शब्द से भाववाचक संज्ञा 'नैष्पत्र्य' बन सकती है। यहा कवि ने 'पतझर' के अर्थ में इस संज्ञा का नवीन अर्थों मे प्रयोग किया है।

व्रजभाषा मे चिक रगने के लिए पिसे हुए रग को 'पिसन' (स० पेषण) कहते है।[1] इसी प्रकार जो अनाज पिसने के योग्य बना लिया जाता है उसे 'पीसना'[2] कहते है। यहा दूसरा अर्थ ही सटीक बैठता है। पिसा हुआ आटा 'पिसान' या चून (स० चूर्ण) भी कहाता है। वस्तुत: कवि ने इस अर्थ में ही '**पिसना**' लिखा है।

'सूर्य' के अर्थ में '**प्रभापूर्य**' एक नवीन सामासिक शब्द है।

'**बनोबास**' समास लोक-भाषा में प्रचलित है।

'**विनिर्जन**' शब्द का अर्थ यहां 'पूर्ण रूप से निर्जन' है। 'वि' संस्कृत का उपसर्ग यहा 'आधिक्य' अर्थ मे लगा है।

संस्कृत मे 'शोणिमन्' पु० शब्द (शोण+इमनिच्) 'लालिमा' अर्थ में है। वही हिंदी में '**शोणिमा**' बन गया है।

संस्कृत मे 'समीकार' (सं० पु०) शब्द का अर्थ है — छोटी-बडी या ऊंची नीची वस्तुओं को बराबर करने वाला[3]। संस्कृत मे ही एक अन्य विशेषण 'समीय' 'सम' या 'तुल्य' अर्थ मे है। अरबी मे 'समी' विशेषण शब्द भी इसी अर्थ मे प्रयुक्त होता है[4]। अरबी में ही 'समीअ' का अर्थ सुनने वाला और ईश्वर भी है। यहा '**समी**' शब्द समीकार या तुल्य अर्थ मे जान पडता है।

संज्ञा-विकार

अलोक[5] (आ), आश[6] (शा), गुंज[7] (गुंजन), **चकचौंधी**[8]

---

१. कृषक जीवन सम्बधी ब्रजभाषा शब्दावली, द्वि० खण्ड, डॉ० अम्बाप्रसाद सुमन, १५२

२. ,, ,, ,, प्रथम खण्ड २०१ — दे० शब्द 'पीसना'

३ नालन्दा विशाल शब्द सागर, दे० समीकार, समीय

४. उर्दू हिंदी शब्दकोश, स० मुहम्मद मुस्तफा खॉ मद्दाह, दे० 'समी', समीअ

५ अपरा, वन-बेला, ५६ — 'कर रही विविध **अलोक**-सृष्टि'

६ परिमल, शेफालिका, १९६ — 'वक्ष पर स्मरण-**आश** आकाश है'

७ अपरा, उक्ति, १९० — 'बन्द हुआ **गुंज**'

८ परिमल, जागो ८७ — 'चमक चौंक कर **चकचौंधी** मे सब को'

(**चकाचौंध**), तामीली [१] (ल), धुंधी [२] (धुध), नाओं [३] (वों) फलातू [४], (**अफलातूं**) बारहमासी [५] (सा), भगों [६] (भंगियों), मान सरोवर [७] (मानस सरोवर), विस्व [८] (विश्व), सरिगम [९] (सरगम), सुबातास [१०] (सुबतास), सुरित [११] (त्), सुषम [१२] (मा)

'**अलोक**' देशज शब्द-विकार है। यहां सस्कृत का नञ् बहुव्रीहि समास नहीं है।

सस्कृत मे 'आशा' अर्थ में '**आश**' का प्रयोग नही होता। हिंदी में भी 'आशा' या 'आस' ही अधिक प्रचलित है। कविता मे यह प्रयोग क्षम्य है।

संस्कृत में 'गुजन' (नपु) शब्द-रूप है। हिन्दी मे '**गुंज**' उसी का तद्भव रूप है किन्तु यह शब्द म० स्त्री० ही है। कवि ने पु० रूप में नव प्रयोग किया है।

व्रजभाषा मे भी '**चकचौधी**' [१३] अ० क्रि० ही है, सज्ञा नही। यहां सज्ञा है।

---

१. नये पत्ते, झीगुर डट कर बोला, ५७ — 'पुलिस के हुक्म की **तामीली** की'

२. नये पत्ते, छलांग मारता चला गया, ८६ — '**धंधी** छा जाता है'

३. आराधना, गीत ८८, ८८ — '**नाओं** से जैसे स्रोत भवर को तर'

४. कुकुरमुत्ता, खजोहरा, ४१ — '**फलातू**-सा दूसरा सुनता बात'

५. नये पत्ते, देवी सरस्वती, ६२ — 'गाती **बारहमासी**, सावन, और कजलियां'

६. अनामिका, रेखा, ७१ — 'बहु भाव-**भंगों** की यौवन तरगो मे'

७. नये पत्ते, कैलाश मे शरत् ९३ — 'आगे **मानसरोवर**'

८. गीतिका, गीत ९, ११ — '**विस्व**-छवि मे उतर'

९. (क) कुकुरमुत्ता, कुकुरमुत्ता (२) १६ — 'सुन आलाप **सरिगम** तान'
(ख) आराधना, गीत ९९ — '**सरिगम** तोडे दुर्दम चहार'

१०. अपरा, वन-बेला, ६४ — 'बह चली सांध्य-बेला की **सुबातास**'

११. आराधना, गीत ३४, ३४ — 'सुख-**सुरित** फूटे बहे'

१२. अपरा, वन-बेला, ६४ — '**सुषम** आई ऊपर'

१३. तुल० 'कोउ चक्रित भई दसन चमक पर **चकचौंधी** अकुलानी' (सूर० ६४४)

अरबी मे '**तामील**'[1] शब्द (स्त्री०) है, तामीली नही । अर्थ — आज्ञा-पालन ।

व्रज० में 'धुंधि'[2] (हि० धुध) स० स्त्री० शब्द है — अर्थ धुधलापन, हल्का अधकार । कवि ने यहां '**धुंधी**' का पु० रूप में नया प्रयोग किया है ।

व्रजभाषा में 'नाउ' शब्द (पुं०) 'नाम' और 'नौका' अर्थ में है । कवि ने 'नाउ' से ही 'नाओं' बहुवचन शब्द बनाया है । यहां दूसरा अर्थ है । प्रसिद्ध पश्चिमी दार्शनिक 'प्लेटो' के लिए हिंदी-उर्दू में 'अफ़लातून' ही चलता है । "फलातू" विकृत शब्द-रूप है ।

हिंदी में 'बारहमासा' (सं० पुं०) शब्द एक गीत का नाम है । '**बारहमासी**'[3] तो विशेषण है जिसका अर्थ 'सब ऋतुओ मे फलने-फूलने वाला' या 'बारहमासो में होने वाला' है । कवि ने सज्ञा स्त्री० रूप में देशज प्रयोग ग्रहण किया है ।

हाव-भाव अर्थ में सस्कृत में 'भगि' या 'भंगी' शब्द (स० स्त्री०) ही है । कवि ने उसी अर्थ में 'भग' (पुं०) से '**भंगों**' बहुवचन बना लिया है ।

सस्कृत मे मानससर या मानससरोवर शब्द ही है । रामायण मे इस के सम्बंध में लिखा है —

'कैलासशिखरे राम मनसा निर्मित सर: । ब्रह्मणा प्रागिद यस्मात्तदभून्मानसं सर: ।'[4]

किंतु हिंदी में '**मान सरोवर**' और मानसर शब्द-रूप प्रचलन में आ गए है ।

'**विस्व**' लोक भाषा की देन है ।

मानक हिंदी कोश मे 'सरगम' रूप ही शुद्ध माना गया है और '**सरिगम**' को स्थानीय प्रयोग लिखा गया है ।[5]

सस्कृत मे '**सुषम**' वि० (पचमी तत्पुरुष समास) ही है, सज्ञा पुं० नही । कवि ने पत जी की भाति यह नव प्रयोग किया है ।

---

१. उर्दू हिंदी शब्दकोश, मु० मु० खॉ मद्दाह, दे० '**तामील**' शब्द
२. तुल० धुरवा **धुंधि** बढ़ा दमहू दिसि — (सूर० २८१९)
३. तुल० खेलत **बारहमासी** फाग (सूर० ३०९५)
४. Sanskrit English Dictionary, V S. Apte, दे० 'मानस'
५. मानक हिंदी कोश, पाचवा खण्ड, दे० सरगम, सरिगम

विशेषण

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये हैं — अरोक [१], कलजुगी [२], छीट [३], निझरी [४], पश्चिमीय [५], बलतोड़ [६], और सशक्तिक [७]।

इन में ' **छीट** ' वि० ' छीटना ' स० क्रि० (अर्थ ' छितराना ') से बनाया गया जान पड़ता है। ' निर्झर ' संज्ञा से ' **निझरी** ' बनाया गया है।

ठीक इसी प्रकार के ' **गोंठिल** ' [८] और ' **पानीदार** ' [९] विशेषण हैं। इन में ' गोंठिल ' व्रजभाषा की ' गोंठना ' स० क्रि० (सं० गोष्ठ, प्रा० गोट्ठ+ना [प्रत्यय]) से बना है जिसका एक अर्थ है — ' चारो ओर लकीर से घेरना '। ' पानीदार ' शब्द ' पानी ' संज्ञा मे फ़ारसी का ' दार ' प्रत्यय जोड़ कर गढ़ा गया है — अर्थ है ' आत्माभिमान या प्रतिष्ठा वाला ' (व्यक्ति)।

विशेषण-विकार

अम्रीयमाण [१०] *(म्रि), निजि* [११] *(निजी), पड़े* [१२] *(पढे)*

---

१. गीतिका, गीत ८०, ८५ — ' देखता मैं **अरोक** मन रोक '
२. कुकुरमुत्ता, ६ — ' **कलजुगी** मै ढाल '
३. परिमल, गीत, २०५ — ' कीट काट करता छिद्रों को **छीट** '
४. अनामिका, वसंत की परी के प्रति, १४४ — ' **निझरी** छवि-विभावरी '
५. अणिमा, स्वामी प्रेमानन्द ... , ७९ — ' वह **पश्चिमीय** भी बैठा था '
६. नये पत्ते, तारे गिनते रहे, ३८ — ' जनता **बलतोड़** हुई '
७. अनामिका, गाता हूं गीत ... , ९५ — ' **सशक्तिक** चरणों में प्रणाम हैं '
८. बेला, गीत ९३, १०१ — ' मौत की **गोंठिल** घात गई अब '
९. बेला, गीत १९, २७ — ' जवानी का **पानीदार** देखता चला गया '
१०. अनामिका, सन्तप्त , ४५ — ' मै गाता था गाने भूले **अम्रीयमाण** '
११. अनामिका, यहीं, ३८ — ' स्नेह की बातें रक्खें **निजि** हृदय मे '
१२. बेला, गीत ९, १७ — ' अनपढ़-**पड़े** पाठ पढ़ने की '

विशेषण-विपर्यय

झंकारी[1] (अंतस्तल), निर्झरी[2] (भूमि), फेनिल[3] (शय्या), बधिर[4] (विश्व), बोना[5] (सुख), रेशमी[6] (रंग) और स्वप्निल[7] (पर) ।

क्रिया

कवि निराला ने भी अन्य छायावादी कवियों की भांति व्रजभाषा की क्रियाओं का अत्यधिक प्रयोग किया है । उन की सपूर्ण कविताओं में जो क्रियाएं विशेष रूप से विवेचनीय हैं वे इस प्रकार हैं — '

अंगोछे[8], अनुकूले[9], आंचे[10], आंचो[11], आराधो[12], उलसो[13],

---

१ नये पत्ते देवी सरस्वती, ७१ — ' पर ग झंकारी अंतस्तल से '

२. अपरा, प्रेयसी, १२७ — ' उतर कर पर्वत से निर्झरी भूमि पर '

३. अपरा, यमुना के प्रति, ९४ — ' ज्योत्स्ना-सुहाग की फेनिल शय्या पर '

४. अपरा, बादल (२), ४० — ' बधिर विश्व के कानों में '

५. आराधना, गीत ८०, ८० — झरता था सर पर सुख बोना '

६. नये पत्ते, कैलाश मे शरत् ९३ — ' रेशमी रग बदलता हुआ '

७. अपरा, यमुना के प्रति, ९४ — ' गयी कौन स्वप्निल पर मार '

८. आराधना गीत १, १ — ' श्रम शरीर का पलक अंगोछे '

९. परिमल, वासती, ७७ — ' अनुकूले, अलि अनुकूले '

१०. अपरा, देवी सरस्वती, १२७ — ' अलि-कलि-गंध छोर अवनी के आंचे '

११. आराधना, गीत ५५, ५५ — ' आंचो जग ऋजु-अराल '

१२. आराधना, गीत ३९, ३९ — ' ऐसे तन आराधो '

१३. आराधना, गीत २६, २६ — ' बोए बीज सींच कर उलसो '

कलियाई [१], कसकी [२], कुंचे [३], गसे [४], गहा [५], गहाते [६], गही [७], छकते [८], झड़[९] झिल [१०], झिला [११], डुलें [१२], तकी [१३], तागी [१४], तूले [१५], दरसो [१६], दलमलो [१७] दह [१८], दहले [१९], दिपा [२०], धंधा [२१], नाधो [२२], पुरें [२३], बन्दू [२४],

---

१. आराधना, गीत ४०, ४० — 'पलक पलास डाल **कलियाई**'

२. आराधना, गीत २५, २५ — 'सौरभ सौरभ धरती **कसकी**'

३. तुलसीदास, पद ४४, ३३ — 'नग्न पद चले कटक उपाधि भी न **कुंचे**'

४. अणिमा, स्नेह-मन तुम्हारे नयन बसे, ६१ — 'जीवन-सकाल से सकल **गसे**'

५. बेला, गीत ७, १५ — 'नाथ तुम ने **गहा** हाथ'

६. बेला, गीत ५, १३ — 'बार बार उन्हें **गहाते** हो'

७. अणिमा, मैं बैठा था पथ पर, १९ — 'उतरे, बढ **गही** बाह'

८. कुकुरमुत्ता, स्फटिक शिला, ४९ — 'तन्दुरुस्त **छकते** हैं'

९ परिमल, बदला, ७३ — 'नींद सदा की **झड़** कर सोया'

१०. परिमल, नमन, ७९ — 'दुख उन अनुरागियों के **झिल** चुके'

११. बेला, गीत ३३, ४१ — 'निस्तरंग एक रूपरंग से **झिला**'

१२. अपरा, आवेदन, ७० — 'मीड़ भ्रमरावली **डुलें**'

१३ परिमल, दोष, ४० — 'विवश नयनोन्मादवश हँस कर **तकी**'

१४. गीतिका, गीत २, ४ — 'वासना की मुक्ति मुक्ता-त्याग में **तागी**'

१५. आराधना, गीत ४०, ४० — 'मानव के मन जीवन **तूले**'

१६. अपरा, अर्चना, १८४ — 'तिमिरदारण मिहिर **दरसो**'

१७. गीतिका, गीत ६२, ६७ — 'दु:ख दे मत **दलमलो**'

१८. अपरा, स्नेह निर्झर बह गया है, १३५ — 'जीवन **दह** गया है'

१९. अणिमा, श्रद्धांजलि, २९ — 'किंतु निशाचर सन्ध्या के अंतर में **दहले**'

२०. अपरा, जलाशय के किनारे कुहरी थी, १५४ — 'तारा **दिपा**'

२१. आराधना, गीत ४०, ४० — 'सुषमा में सुख-रूप **धंधा** है'

२२. आराधना, गीत ३९, ३९ — 'ऐंठ जूए न **नाधो**'

२३. आराधना, गीत ३८, ३८ — '**पुरें** शिव के सबल'

२४. अपरा, गीत, २५ — '**बन्दू** पद सुन्दर तव'

बमकना [1], बरा [2], भगी [3], लख [4], लजी [5], लहरे [6], लहें [7], लाजे [8], साधो [9], सिधारता [10], सुलसो [11], सूले [12], सृजती [13], हरसो [14], हूलें [15]।

इन में **आंचे** [16] और **आंचो** क्रियाए 'तपाने' अर्थ मे हैं। '**उलसना**' क्रिया 'हुलसना' (हर्षित होना) अर्थ में ही है। 'कुचे' अ० क्रि० प्रयोग है। मूल क्रिया 'कूचना' सकर्मक है जिसका अर्थ लज्जित करना या कुचलना है। यहां 'कुचे' का अर्थ है चुभे, खले। '**छकते**' क्रि० मूल 'छकना' अ० क्रि० (अर्थ: तृप्त होना) है। '**झिल**' और '**झिला**' भी कर्मवाच्य प्रयोग है। '**तागी**' (स० क्रि० तागना, अर्थ—पिरोना) क्रिया भी नवीन ही है। इसी प्रकार 'धंधना' अ० क्रि० मे कवि ने 'फसना' अर्थ मे '**धंधा**' रूप बनाया है। '**बमकना**' क्रिया 'उछलना' अर्थ वाली है। व्रजभाषा में 'चिल्लाना' अर्थ मे 'बबकना' अनुकरणात्मक अ० क्रि० है। उसी से कवि प्रभावित हुआ है। '**साधो**' स० क्रि० के मूल मे 'साधना' क्रिया 'सतुलन बनाए रखना' अर्थ में है। '**सुलसना**' अ० क्रिया

---

१. कुकुरमुत्ता, कुकुरमुत्ता, ७ — 'गोला मेरा ही **बमकता**'
२. अणिमा मरण को जिसने **बरा** है, ५८
३. आराधना, गीत ७०, ७० — 'दशा दुख की **भगी**'
४. परिमल, वासंती, ७६ — 'किरणों में **लख** लगा, कुछ **लख** लगा'
५. आराधना, गीत ८६, ८६ — 'कली के हार के भार डाली **लजी**'
६. आराधना, गीत ४४, ४४ — 'विजय तुम्हारी नभ मे **लहरे**'
७. आराधना, गीत १, १ — 'निरख निरख कर **लहें** अलख सुख'
८. बेला, गीत ६३, ७१ — 'वरण **लाजे**'
९. गीतिका, गीत ७६, ८१ — '**साधो** पग पग यह डग'
१०. कुकुरमुत्ता, स्फटिक शिला, ५९ — 'ले कर आनद है **सिधारता**'
११. आराधना, गीत २६, २६ — 'जीवन के धन तुम **सुलसो**'
१२. बेला, गीत १६, २४ — '**सूले** है वे बहार के दिन'
१३. परिमल, पचवटी प्रसग (४), २५२ — 'फिर **सृजती** है सृष्टि नई'
१४. अपरा अर्चना, १७४ — 'सहस्र किरण **हरसो**'
१५. परिमल, अध्यात्म-फल, १०१ — '**हूले** शूल जो दुख मूल मे'
१६. तुल०—सूर० बिरह अनल **आंचे** (२००३)

उलसना, सरसना और हुलसना क्रियाओं के अनुकरण पर लगभग उन्हीं अर्थ में है। यहा 'समृद्ध होना या बढ़ना' अर्थ भी लग सकता है।

क्रिया-विकार

गूजता[1] (गुजाता), चलने[2] (ला), चिखा[3] (च), छई[4] (छा), छये[5] (छा), जावगे[6] (जाओगे), जेयेंगे[7] (जायेंगे), टुटा[8] (टू), फुटा[9] (फू), सिख[10] (सी)

हिंदी मे 'गुजाना' स० क्रि० (स० गुंज) ही है, '**गूजना**' नही। हि० '**चलना**' अ० क्रिया का यहां सकर्मक क्रि० 'चलाना' की भांति प्रयोग किया गया है जोकि नया है। '**चिखाना**' स० क्रि० भी नवीन ही है।

हिंदी में 'टूटना' (स० √त्रुट्) और 'फूटना' (स० स्फुटन) क्रियाए पहले ही अकर्मक है अतः **टुटना** और **फुटना** नवीन अ० क्रि०-प्रयोग ही माने जाएगे।

व्रजभाषा मे '**सिखना**' स० क्रि० भी है।

कही कही शिशु-भाषा की **बंथ**[11] (बैठ) जैसी क्रियाए भी मिल जाती है।

लिंग

निराला जी ने लिंग-निर्णय के सम्बंध मे भी अपनी स्वतन्त्र रुचियों का परिचय दिया है। जिन पुं० सज्ञाओं को उन्होंने स्त्री० मे लिखा है वे इस प्रकार है —

---

१. नये पत्ते डिप्टी साहब आये ८७ — 'खवार कर मारे गांव को **गूजता** हुआ'
२. नये पत्ते, झीगुर डट कर बोला, ५७ — 'फासले से गोली **चलने** लगा'
३. आराधना, गीत, ४२, ४२ — 'भजन क्या भोजन **चिखा** दो'
४. आराधना, गीत ३१, ३१ — '**छई** है विषण्ण लाज'
५. आराधना, गीत ९५, ९५ — '**छये** सुख-शर के आमोद'
६. गीतिका, गीत ९१, ९६ — 'प्रियतम तुम **जावगे** चले'
७. अणिमा, स्वामी प्रेमानद जी महाराज, ७९ — 'बैठ कर **जेयेंगे**'
८. बेला गीत ५१, ५९ — 'सितारे सितारे **टुटा** जा रहा है'
९. बेला, गीत ५१, ५९ — 'तरह पानी की वह **फुटा** जा रहा है'
१०. परिमल वासंती ७६ — '**सिख** लो, तुम भी कुछ **सिख** लो'
११. कुकुरमुत्ता स्फटिक शिला, ५७ — '**बंथ** जाओ'

अंजन [1], गात [2], तन [3], मलयानिल [4], वात [5], समीर [6], समीरण [7], और हठ [8]।

संस्कृत में 'अञ्जन' नपुं० है। 'गात्र' भी संस्कृत में नपुं० ही है। '**गात**' उसी का तद्भव रूप है।

'**तन**' संस्कृत के 'तनू' या 'तनु' स्त्री० शब्द से प्रभावित हो कर स्त्री० में रखा गया जान पड़ता है। अंतिम पाँच संज्ञाएँ तो प्रायः संस्कृत, हिंदी और व्रजभाषा में पुल्लिंग ही रहती हैं।

'**देह**' [9] हिंदी में स्त्री० है किंतु कवि ने इसे संस्कृत-पद्धति पर पुं० रूप में ग्रहण किया है।

हिंदी और व्रजभाषा में **धुंधी** [10] और **पताक** [11] शब्द प्रायः स्त्री० ही हैं। कवि ने इन्हें पुं० रूप में लिखा है।

---

१. अनामिका उद्बोधन, ६७ — 'नव जीवन की तू **अंजन** लगा पुनीत'

२ (क) अपरा, यमुना के प्रति, ९६ — 'ज्योत्स्ना-सी **गात**'

(ख) आराधना, गीत ५८, ५८ — 'अलसाई **गात** हुई'

३ आराधना, गीत ७१, ७१ — 'सजी क्या **तन** तुम्हारे लिए'

४ अनामिका, प्रिया से, ४२ — 'अलक-सुगंध मंद **मलयानिल** धीरे धीरे ढोती'

५. अपरा सरोज-स्मृति, १५३ — 'बह चली एक अज्ञात **वात**'

६ (क) अनामिका, रेखा, ७१ — 'आती **समीर**'

(ख) आधुनिक हिंदी काव्य भाषा, ५७७ — 'बह चली अब अलि शिशिर-**समीर**'

७ गीतिका गीत ५६ ६१ — 'बही **समीरण**, जुड़ा मन'

८. गीतिका, गीत २४, २६ — 'मैंने जिसकी **हठ** ठाना'

९ अपरा, नाचे उस पर श्यामा, १३७ — '**देह** चाहता है सुख-संगम'

१०. नये पत्ते, छलांग मारता चला गया, ८६ — '**धुंधी** छा जाता है'

११. बेला, गीत ७१, ७९ — 'पत्तों में ध्वज-**पताक** फहरे'

तुल०— (i) सूर० 'पजरत धुजा, **पताक** छत्र' (९—८३)

(ii) सूर० 'सीस पर ध्वज **पताक** (२३७७)

'**विटपी**' शब्द हिंदी मे सस्कृत 'विटपिन्' की भांति पुं० शब्द ही माना जाता है किंतु 'ईकारांत' देख कर भ्रम से कवि ने स्त्री०[1] रूप में प्रयुक्त किया है।

वचन

व्याकरण के नियमानुसार आकारात स्त्री० संज्ञाओ के बहुवचन प्रायः 'ए' जोड़ कर बनाए जाते हैं किन्तु कवि ने एक स्थल पर 'शाखे'[2] लिखा है। वस्तुतः यहां 'शाखा' की अपेक्षा 'शाख' से बहुवचन बनाया गया जान पड़ता है।

एक अन्य स्थल पर 'राजा' का बहुवचन '**राजे**'[3] लिखा गया है। हिंदी मे 'राजा' शब्द ही बहुवचन में चलता है. 'राजे' नही होता।

इन प्रयोगो के अतिरिक्त कवि ने कुछ सज्ञाओ को बहुवचनों में भी यथावत् (एकवचन मे ही) रहने दिया है। ये सज्ञाए विचारणीय है — कुठ,[4] रागिनी[5] हाथ[6]।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भाति निराला जी ने भी सस्कृत के **अ**, **अन्** (हि० अन), **प्र** और **सु** उपसर्गों के प्रति अपने आकर्षण का परिचय दिया है।

अभावसूचक 'अ' **उपसर्ग** वाले कुछ शब्द ये है —

अकलुष, अकूल, अचपल, अजान, अजाने, अदर्शित, अदिव्य, अप्रमाद, अबाध, अलख, अविचार अशंकित, अशब्द, अनामय, असहन, अस्मित।

सस्कृत '**अन्**' या **हिं०** '**अन**' **उपसर्ग** वाले शब्द देखे —

---

१. परिमल, गीत ४३ — कांप उठी **विटपी**'

२. अनामिका अपराजिता १४३ — 'तरु की तरुण-तान **शाखें**'

३. (क) नये पत्ते, **राजे** ने अपनी रखवाली की २४
   (ख) बेला, गीत ६३, ७१ — '**राजे** दिनकर जैसे'

४. नये पत्ते, देवी सरस्वती, ६७ — '**कुंठ** सब टूटी'

५. तुलसीदास, पद ९६, ५९ — 'बहती जो वे **रागिनी** सकल सोएगी'

६. बेला, गीत ५५, ६३ — 'हजारो **हाथ** के उठते समर देखे'

अनगिन, अनगिनित, अनबोली, अनमोल, अनहारी, अनवद्यता और अनाकामित। कुछ नये प्रयोग ये है — अनामिल [1], अनूद्व [2]।

संस्कृत का ' **प्र** ' **उपसर्ग** इन शब्दो में लगा है — प्रकम्प, प्रकार, प्रकीर्ण, प्रतनु, प्रभास, प्रलम्ब, प्रवर्षण, प्रशमन, प्रशाखाए, प्रसक्ति, प्रसुप्त, प्रसुप्ति, प्रस्फुट, प्रस्वेद और प्रस्रवण।

' **सु** ' **उपसर्ग** वाले शब्द ये है — सुचारुतम, सुचिक्कण, सुछवि सुछाह, सुतनु, सुदल, सुदृढ़ता, सुनयन, सुनिर्धार, सुफल, सुभार, समद, सुमिलन, सुरुख, सुरग, सुरति, सुरम, सुरूप, सुवास, सुवेश, सुमिचित, सुस्वर, सुहृत।

सन्धि

स्वर संधियो मे कवि को दीर्घ एव गुण दोनों प्रकार की संधियां समान रूप से रुचिकर लगती हैं।

दीर्घ स्वर संधियों के नमूने ये हैं — अमृताक्षर कमलासन, करुणांचल, गगनांगन, चक्राकार, ज्ञानाज्ञान, तिमिराचल, दिवसावसान, पवनाचल, पृष्ठाक्षर, प्रधानामत्य, महाकाश, मिलनाग्रह, विश्वाधार, सागराम्बरा स्पर्द्धार्ध, स्वर्णालिकार हताश्वास।

कुछ **गुण संधियां** ये है — अर्थागमोपाय कूलोपल गन्धोच्छ्वस चीत्कारोत्पल, चेतनोर्मियों ज्ञानोद्धत तारकोज्ज्वल, तृणोद्धत पुजोत्तरात, रक्तोत्पल रम्योद्यान, सर्वोत्तम, सुखोन्माद।

विसर्ग संधियां भी हैं — नभश्चुम्बिनी, निश्रम निश्शरण मनोगगन, मनोरंजिनी मनोवेदना, यशोलिप्सा, शिरश्चरण, शिरोरत्न।

व्यंजन संधियाँ बहुत कम है। ' विद्युद्दुति ' [3], ' पियच्छवि ' [4] जैसी संधियां

---

१ गीतिका, ५०, ५५ — अलस्तता मधु-गध **अनामिल** '

२. आराधना गीत ३४, ३४ — ' एक अनुभव **अनुद्व** हृदय में रहे '

३ अपरा, छत्रपति शिवाजी का पत्र, ९१ — 'चमकेगे खडग सब **विद्युद्दुति** '

४ आराधना, ९१, ९१ — ' उडने को **पियच्छवि** की दिशा '

तो तत्सम और तद्भव शब्दो का घपला हैं। इन मे विद्युत् और छवि संस्कृत के तत्सम शब्द हैं और 'दुति' तथा 'पिय' व्रजभाषा के शब्द हैं।

समास

निराला जी ने कई प्रकार के समास प्रयुक्त किए हैं। जिन में अव्ययीभाव समासों या द्वन्द्व समासों की प्रचुरता है। प्रथम प्रकार के समासों में आठों गांठ, बारहोमास, बीचोंबीच और मुहोमुह जैसे शब्द देखे जा सकते हैं।

संस्कृत में **अव्ययीभाव** समासों मे एक प्रकार वह है जिस में 'यौगपद्य' अर्थ मे समस्त पद मे 'सह' का प्रयोग कर के 'स' कर दिया जाता है यथा — 'चक्रेण युगपद्=सचक्रम्'। अन्य कवियों की भांति निराला जी ने भी 'स' अव्यय से आरंभ होने वाले अनेक शब्द लिखे है यथा सकाम, सचार, सजल, सदया, सदल, सनयन[1], सप्रयास, समल, सलज्ज, सलाज[2], सलास[3] सविनय, सशरीर, सस्नेह, सस्वर, सहास, सानन्द।

उर्दू के द्वन्द्व समास प्रायः दो शब्दो के मध्य मे '**वाओ**' (हिंदी मे जिसका उच्चारण 'ओ' होता है) जोड कर बनाए जाते है। निराला जी ने उर्दू की इस समास शैली से प्रभावित हो कर भी कुछ समास लिखे है यथा रंगोआब, रंगो बू, रंगोदाब, शराबोप्याले, और सुब्होशाम।

अन्य शब्द-विकार

संज्ञा, विशेषण और क्रिया मे आए हुए विकृत शब्दों के अतिरिक्त कुछ और शब्द-रूप भी हैं यथा काली[4] (खाली), गृहि[5] (गृही), चालपाई[6] (चारपाई)

---

१. अपरा, देवी सरस्वती, १६२ — 'कवि की **सनयन** कविता'

२. अपरा, नवल खुलीं, १७ — 'श्वेत वसन लौटी **सलाज** घर'

३. बेला, गीत ५०, ५८ — '**सलास** वे पतझर से बहार लायेगी'

४. कुकुरमुत्ता, स्फटिक शिला, ५७ — 'बैथ जाओ, **काली** है'

५. गीतिका, गीत ९७, १०२ — '**गृहि** जन निज द्वार'

६. कुकुरमुत्ता, स्फटिक शिला, ५७ — '**चालपाई** डाली है'

और विशेखकर [1] (विशेषकर)

'**काली**' शिशु भाषा का शब्द-विकार है। सस्कृत में समास के नियमानुसार 'गृहिजन' हो सकता है किन्तु हिंदी में 'गृही' सं० पु० शब्द (सं० गृहिन्) ही है '**गृहि**' नहीं। ब्रजभाषा में भी 'गृही' रूप ही अधिकांशत: देखा गया है — उद० सूरदास : तुल० 'मुनि भागवत **गृही** गुन गावैं' — (सूर० १०, १२७)

'**चालपाई**' भी शिशु-भाषा की देन है। '**विशेखकर**' भी शब्द-विकृति का स्पष्ट उदाहरण है।

एक स्थल पर 'रजनीगंधा' के पर्यायवाचक शब्द के रूप में '**यामिनी गंधा**' [2] (स० स्त्री० शब्द) लिखा गया है जिसका हिंदी में अधिक प्रचलन नहीं है।

सार्वनामिक स्त्री० विशेषण 'कितनी' भी एक स्थल पर '**कितने**' [3] लिखा गया है। डॉ० रामकुमार सिंह के मतानुसार यह प्रयोग बैसवाड़ी है।

शब्द-लोप

निराला जी की कुछ कविताओं पर दुर्बोधता का जो दोषारोपण किया जाता है उसका एक कारण शब्द-लोपी वाक्य-विन्यास भी है। कविता की लय और ताल को बनाए रखने के लिए यदि यह लोप अपनाया जाए तो क्षम्य हो सकता है। किंतु स्थल स्थल पर अधूरे वाक्यों का विन्यास करना कविता के रसास्वादन में नीरस चट्टाने खड़ी कर देना है। प्राय: शब्दों की इन खाइयो को पुरना श्रमसाध्य हो जाता है।

कर, की, पर, में और **से** — इन शब्दों के लोपों के उदाहरण इस प्रकार है —

१. चौंक चमक (**कर**) छिप जाती विद्युत् [4]

२. गीत-गध-रस-वर्णों (**की**) अनुपम [5]

---

१. अनामिका, सेवा-प्रारंभ, १७८ — 'पुखता सब में **विशेखकर**'

२. आधुनिक हिंदी काव्य-भाषा, ५७५ — '**यामिनी-गंधा** जगी'

३. आधुनिक हिंदी काव्य-भाषा, ५७७ — '**कितने** बार पुकारा'

४. परिमल, बादल-राग (४), १८२

५. अपरा, गीत, १७१

३. बस नयन (की) किरणों मे लख लूगा [1]
४. शाख शाख किसलयों (पर) तुली है [2]
५. पाटल होठों (पर) मुस्कान [3]
६. तू नानी की गोद (में) जा (कर) पली [4]
७. जिस पवन (से) लहरा दिगन्तर [5]
८. खोल नयन आंसुओ (से) धो कर [6]

नव शब्द

कुछ संदेहास्पद शब्द इस प्रकार हैं — कांवले [7], तमस्तूर्य [8], तू-तुकार [9], पिनपिन [10], भेला [11], मरहर [12], सुनिर्धार [13]।

हिंदी में 'कौंवरा' वि० शब्द है (अर्थ : घबराया हुआ, विकल, पागल), किन्तु 'कांवला' देशज प्रयोग जान पड़ता है।

'प्रभापूर्य' की भांति 'तमस्तूर्य' भी नवीन शब्द ही माना जाएगा। डॉ० रामकुमार सिंह के अनुसार — 'प्रभापूर्य एव तमस्तूर्य शब्दों को लेकर संस्कृत-व्याकरण

---

१. परिमल, वासती, ७६
२. अपरा, गीत, १८५
३. नये पत्ते, कैलाश में शरत्, ९८
४. अपरा, सरोज-स्मृति, १४९
५. आराधना, गीत ३५, ३५
६. आराधना गीत ५०, ५०
७. बेला, गीत ८२, ९० — 'जैसा दिखा था पहले, देखा न कांवले से'
८. तुलसीदास, २ — 'तमस्तूर्य दिङ्मंडल'
९. बेला, गीत ६८, ७६ — 'अपनी ही रिमझिम तू-तुकार'
१०. बेला, गीत ८०, ८८ — 'चढ़ा राग पिनपिन होगा जब'
११. अपरा, मैं अकेला — 'हँस रहा यह देख कोई नहीं भेला'
१२. अपरा, चतुर्थ संस्क०, बसन बासंती लेगी — 'मरहर को वरेगी, बसन बासंती लेगी'
१३. अनामिका, ८५ — 'चुनती जनता राष्ट्रपति उन्हें ही सुनिर्धार'

में नये पुराने पण्डितों ने कभी कभी उन्हें 'सिद्धांत कौमुदी' पढ़ने की सलाह दी किन्तु हिंदी में इसका सर्वत्र स्वागत हुआ।'[१]

हिंदी में 'तू तड़ाक' की भांति 'तू-तुकार' भी 'अशिष्ट शब्दों में वाद-विवाद करने'[२] या किसी को 'तू' कह कर उपेक्षा या तिरस्कारपूर्वक संबोधित करने'[३] के अर्थ में है। यहां अर्थ है — 'व्यर्थ प्रलाप'। यहां इसका मुहावरे की भांति प्रयोग हुआ है।

हिंदी में 'पिनपिन' एक अनुकरणवाचक सं० स्त्री० शब्द है। जिसका अर्थ है 'बच्चों के रह-रह कर रोने पर होने वाला अनुनासिक और अस्पष्ट शब्द'। 'पिनपिनाना' अ० क्रि० नकिया कर रोने के अर्थ में भी है। यहां 'रुक रुक कर गाना' यह नया अर्थ विकसित हुआ है। 'नकिया कर अलापना' अर्थ भी सम्भव हो सकता है।

'भेला' एक बंगला शब्द है जिसका अर्थ है 'छोटी गी'। बाबू रामचंद्र वर्म्मा के अनुसार इसका अर्थ है — 'एकत्र होने की क्रिया या भाव'।[४] उदाहरणार्थ उन्होंने निराला जी का वही वाक्य चुना है जो हम ने भी दिया है। किंतु पूरा वाक्य पढ़ने से 'छोटी डोंगी' अर्थ ही ठीक बैठता है। निराला जी बंगला भाषा के भी प्रकाण्ड विद्वान् थे। अपने जीवन की सांध्य-बेला में उन्होंने ये पंक्तियां लिखी थीं —

जानता हूं नदी झरने जो मुझे थे पार करने
कर चुका हूं, हंस रहा यह देख
कोई नहीं **भेला**

वर्म्मा जी ने इस शब्द की व्युत्पत्ति 'हिं० भेंट या संस्कृत भेलन'[५] (?) से मानी है जो उचित नहीं जान पड़ती।

---

१. आधुनिक हिंदी काव्य-भाषा, डॉ० रामकुमार सिंह, ५७४ (प्र० संस्क०)
२. नालन्दा विशाल शब्द सागर, दे० शब्द 'तू'
३. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० शब्द 'तू', दे० मुहा०
४. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० शब्द 'भेला
५. कोश वही, शब्द वही।

हिंदी में ' मरघट ' अर्थ में ' मरहट ' स० पु० शब्द है, ' **मरहट** ' [१] नहीं। छपाई की अशुद्धि भी सभव है अथवा ' श्मशान ' अर्थ में ही कवि ने ' मरहर ' का नव प्रयोग किया है।

' **सुनिर्धार** ' का अर्थ यहां ' भली भांति निर्धारित करके ' है।

उपर्युक्त शब्दो के सिवा कवि ने ' **हरीतिमा** [२] शब्द का भी नव प्रयोग किया है।

इसी प्रकार हिंदी में ' **किल** ' [३] क्रि० वि० (सं० √किल्+क) शब्द का अर्थ है निश्चित रूप से। निश्चय ही। [४] ' किल ' से कवि ने ' कलि ' अर्थ प्रकट करना चाहा है, ऐसा प्रतीत होता है।

प्रिय शब्द

महाप्राण निराला के प्रिय शब्द इस प्रकार हैं —

अगणन, अनामिल, अमुख, आलबाल, इमन, किल, कोकनद, चल, ज्योति, झिल, निगह, नीलोत्पल, नूतन, प्रतनु, प्रस्तार, बन्दू, बारहमासी, मरार, लह, लुठन, लोगबाग, शीकर, सकाल, सस्वर, सुब्होशाम।

ध्वन्यात्मक शब्द

संगीतप्रिय कवि निराला ने अपने कविता-कानन मे प्रकृति की विभिन्न स्वर-लहरियों को शब्दबद्ध करने का प्रयास किया है।

---

१. आधुनिक हिंदी काव्य-भाषा, डॉ० रामकुमार सिंह, ५८२

२. अनामिका, वे किसान की नई बहू की आंखे, १४६ — ' ज्यो **हरीतिमा में बैठ** '

३. आराधना, गीत ९१, ९१ — ' रवि की किरण की **किल जब** खिली '

४. उदा० — केशवदास ' कै श्रोणित कलित कपाल यह **किल कापालिक काल की** '

उदाहरणतः जल के लिए **कलकल**[1], नद के लिए **खलखल**[2] और बौछारों के लिए **छनछन** जैसे शब्द द्रष्टव्य हैं। लहरों की **छलछल**[3], **कलकल**, **कुलकुल**. **टलमल टलमल**[4] भी चित्रात्मक हैं। धाराए, निर्झर और वारिद यहां '**झरझर**' करते हुए झरते हैं। '**घरघर**' भी जल-वर्षण की ही ध्वनि है।

अनल यहां भी '**झकझक**' करता है या '**धकधक**' करता हुआ धधकता है।

कोयल '**कुऊ-कुऊ**' करती कूकती है। मधुप '**गुन-गुन** के गुजन से हमारा मन लुभाते है। पपीहे '**पी-पी**' पुकारते हैं।

अस्त्र-शस्त्रो मे बन्दूके '**कड़कड़-सन्सन्**[6] करती मनसनाती हैं। तोपें '**अररर अररर**'[7] करती घड़घड़ाती है। महाफनक '**लकलक**'[8] करता हुआ चमचमाता है।

परिवहन के साधनों में रथ '**घर्घर**'[9] करते हुए सड़को की छातियां रौंदते हैं।

कवि का प्रिय संगीत-स्वर है — '**ताताधिन्ना**'। वाद्य-यन्त्रो में किंकिणी '**किण किण**' करती क्वणित होती है और घंटे '**घन घन**'[11] करते हुए घनघनाते। रणभूमि मे रण-भेरी '**भररर भरर**' करती गूंजती है।

---

१. परिमल, गीत, ४४ — 'कहती कुछ **कलकल**'

२. परिमल, बादल-राग (१), १७६ — 'हँसता है नद **खल्खल**'

३. परिमल, गीत, ४४. — 'देख लोल लहरों की **छलछल**'

४. परिमल, शरत्पूर्णिमा की विदाई. १३९

५. परिमल, गीत, १०२ — 'झरती धारायें **झर झर झर**'

६. अपरा, नाचे उस पर श्यामा, १२५ — '**कड़कड़-कड़ सन्सन्** बन्दूके'

७. अपरा, कविता वही, 'अररर अररर **अररर** तोप'

८. अपरा, राम की शक्ति पूजा

९. अपरा, सहस्राब्दि, १७० — 'रथ का **घर्घर**'

१०. अपरा. सहस्राब्दि, १७० — 'घण्टो की **घनघन**'

नूपुरों की कवि ने ये ध्वनियां दी हैं —

रनझन, रुनरिन [१], **रणन रणन**, **रिन रिन**। इन में अंतिम ध्वनि के संबंध में डॉ० मोहन अवस्थी लिखते हैं — " वस्तुतः पायल की ध्वनि छनछन, रुनझुन या छमछम ही हो सकती है। ' **रिनरिन** ' तो सारंगी की आवाज से निकलती है। ' रिनरिन ' में सम है। चलने में पैर उठते-गिरते है। अतः पायल मे पैर के उठने पर एक प्रकार की ध्वनि होगी, गिरने पर दूसरे प्रकार की। "[२]

इसी प्रकार धूलिकण हवा में ' **फुर फुर** ' [३] उड़ते हैं।

वस्तुतः ' सभी आधुनिक हिंदी कवियो में अकेले महाप्राण निराला ने ही ३५-४० वाद्य-यन्त्रों के नाम लिए हैं जो उनके प्रगाढ़ संगीत-प्रेम का ही परिचय देते हैं। सच तो यह है कि वाद्य-यन्त्रों की गणना की दृष्टि से वे सर्वप्रथम स्थान के अधिकारी घोषित किए जा सकते हैं। ' [४]

अंत में हम कह सकते हैं कि अन्य कवियों की भांति निराला ने भी ध्वन्यात्मक शब्दों की सहायता से शब्द-चित्रों का निर्माण किया है।

---

१. परिमल, गीत, १०७ — ' बाजे नूपुर रुन-रिन, रनझन '

२. आधुनिक हिंदी काव्य-शिल्प, डॉ० मोहन अवस्थी, ३४२ (प्र० संस्क० सन् १९६२)

३. परिमल, कण, १७२ — ' कभी परागो में फुरफुर उडते हो '

४. मेरा एक शोध-पत्र — सप्तसिंधु, अक्तूबर सन् १९६५, २५ — ' आधुनिक हिंदी काव्य में अस्त्र-शस्त्र-औज़ार और वाद्य-यन्त्र '

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

संज्ञा

कवि की शब्द-चेतना ब्रजभाषा से विशेष रूप से प्रभावित है। अन्य लोक-भाषाओं का प्रभाव भी देखा जा सकता है। कुछ विशिष्ट संज्ञा-प्रयोग इस प्रकार हैं—

अजान [1], अडिगपना [2], अन्तरतर [3], अलियो [4], इच्छा-द्रुम [5], उसक [6],

1. हम विषपायी जनम के, निज ललाट की रेख, २६ — 'कालकूट जो घोल जीवन-रस में अजान में तुम ने'
2. हम विषपायी जनम के, निरंजन की ललकारे मेरी, ७९ — 'निज हिय में अडिगपना पर्वत का'
3. हम विषपायी जनम के, राजेश्वर मानव, १२९ 'अपने वश अपना अन्तरतर'
4. हम विषपायी जनम के, प्रज्वलित वह्नि, २४६ — 'धरता है दीवे अलियों में'
5. रश्मि-रेखा, तुम मम मदार-सुमन, २९ — 'मम अपूर्ण चाहों के तुम ही हो इच्छाद्रुम'
6. हम विषपायी जनम के, विनिपात, — २०९ 'दिखलाने दो नीति धर्म की उसक'

गमता [१], चढ़ा-ऊपरी [२], छिनगी [३], जनमी [४], डरियां [५], थरियां [६], नवनी [७], पंखियां [८], मल्लरियां [९], रनियां [१०], रोने [११], लरियां [१२], सूर्यकार [१३]

संस्कृत में '**अज्ञान**' सं० पुं० नञ् तत्पुरुष समास है। यहां '**अजान**' उसी का तद्भव रूप और भाववाचक संज्ञा है।

हिंदी में '**अडिगपना**' शब्द (भाव०) अधिक प्रचलित नहीं है।

'अन्तरात्मा' या 'मन' के अर्थ में '**अन्तरतर**' शब्द भी नवीन ही है।

---

१. हम विषपायी जनम के, विनिपात, २०५ — 'हृदय में इसके चिर प्रकाश-**गमता** है'

२. हम विषपायी जनम के, सिरजन की ललकारे मेरी, ५० — 'देख कर जग में **चढ़ाऊपरी** इतनी'

३. रश्मि-रेखा, तरुवर आज हुए अनुरागी, ९७ — 'सूखी शाखा, सूखी **छिनगी**'

४. हम विषपायी ..., दुराव, २७ 'तुम्हारे विश्वागी **जनमी** तुम को नहीं बताते'

५. हम विषपायी ..., मनोरथ ३४३ — 'चिड़िया चहकी **डरियां डरियां**

६. हम विषपायी ..., मनोरथ ३४३ — 'नव आर्ति कल्ह **थरियां थरियां**'

७. हम विषपायी ..., मृत्तिका की गुड़ियों के गीत, ५८५ — 'हार है तुम्हारी चिर सगिनी अरे **नवनी**!'

८. रश्मिरेखा, जागो मेरे प्राण पिरीते, ३४ — 'नव कलिया खोल रही है **पंखियां**'

९. हम विषपायी ..., सस्मरण-नोदना, ३११ —'महक रही है अये आज तक वे अधर-स्फुट **मल्लरियां**'

१०. हम विषपायी ..., दीपमाला, २७७ — 'भोली नन्ही **रनियां**'

११. हम विषपायी ..., बयालीसवें वर्षांत में, ४ — '**रोने** गेये है कई कई'

१२. हम विषपायी ..., मनोरथ, ३४३ — 'गज उठी **लरियां लरियां**'

१३. हम विषपायी .. आज क्रांति का शंख बज रहा ४८३ 'हम **सूर्यकार** ..'

संस्कृत में 'आली ' स० स्त्री० शब्द (आलि+ङीष्) का एक अर्थ ' पंक्ति ' भी है। हिंदी ' अली ' शब्द का भी यही मूल है। ' **अलियों** ' बहुवचन हुआ।

' कल्पवृक्ष ' के कल्पद्रुम और कामतरु[1] शब्दों के अनुकरण पर कवि ने ' **इच्छाद्रुम** ' नया पर्यायवाची शब्द गढा है।

अवधी मे ' उसकब ' अ० क्रि० का अर्थ है ' उठना, हटना, जरा-सा कष्ट करना ' (स०√शक् — अर्थ सकना)। यहा ' प्रेरणा या उकसाहट ' अर्थ है।

' गम ' शब्द से भाववाचक संज्ञा बनी है — ' **गमता** '। अर्थ हुआ — ' जाने या पहुचने का भाव। '

' **चढ़ा-ऊपरी** ' स० स्त्री० शब्द का अर्थ है ' होड़, प्रतियोगिता '। इसी अर्थ मे ' चढ़ाचढी ' और ' होड़ाहोड़ी ' शब्द भी है। ' चढ़ा-उतरी ' शब्द अलग है।

अवधी मे ' छिनगाइब ' (स० छिन्न) स० क्रि० का अर्थ है ' छोटी छोटी डालों को काट कर साफ करना '। ' **छिनगी** ' इसी से बना हुआ संज्ञा शब्द है। अर्थ -- ' छोटी डाल। '

सस्कृत मे ' जन्मिन् ' स० पुं० शब्द है — अर्थ ' प्राणी, जीव '। इसी से ' जनमी ' शब्द बना है।

डरियां, **थरियां** और **पंखियां** शब्द ब्रजभाषा के हैं। वहा ये क्रमशः डरिया, थरिया और पखिया के बहुवचन रूप है — क्रमशः अर्थ हैं — डाल, थाली, पख (या पखुड़ी)। ' या ' के ऊपर अनुनासिक (चन्द्रबिंदु) ही रहता है, अनुस्वार नही होता।[2] कवि नवीन ' अनुस्वार ' ही लगाते हैं। **डरियां** (हिं० डाल), **थरियां** (हि० थाल) और **पंखियां** (हिं० पख) सब सं० स्त्री० बहु० शब्द है। यहा ' पंखिया ' का अर्थ पखुडिया है, पख नही।

सस्कृत मे ' मल्लिका ' (बेले की जाति का एक सफेद फूल) के अर्थ में

---

१. वृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी, १९-२०, दे० ' कल्पवृक्ष '

२. उदा०, सूरदास — ' बाम भुजाहि सवा अँस दीन्हे, दच्छिन कर द्रुम **डरियां** —' (सूर० ४७०)

'मल्लि' या 'मल्ली' शब्द-रूप भी हैं। कवि ने '**मल्लरी**' यह नया शब्द उसी अर्थ में घड लिया है। कदाचित् 'वल्लरी' का भी कुछ प्रभाव रहा होगा — जिस का अर्थ है 'लता, मजरी'। '**मल्लरियां**' स्पष्टत: बहुवचन है।

व्रज० में '**रनियां**'[1] स० स्त्री० शब्द 'रानी' अर्थ में है।

पत जी ने 'कलपना' अ० क्रि० से बनी 'कलपने' सज्ञा प्रयुक्त की थी। उसी भाति नवीन जी ने 'रोना' अ० क्रि० से '**रोने**' स० बहु० शब्द लिखा है।

व्रजभाषा में 'लरी' स० स्त्री० शब्द एकवचन मे है — अर्थ 'लड, लड़ी'। '**लरियाँ**' उसी का बहुवचन रूप है।

'**सूर्यकार**' की भाति कवि ने **चन्द्रकार**[2] भी लिखा है। सस्कृत में 'कार' विशेषण शब्द भी है। समासांत शब्द मे 'कार' का अर्थ 'करने वाला, बनाने वाला' होता है यथा — कुम्भकार, ग्रन्थकार, चमत्कार स्वर्णकार। संस्कृत और फ़ारसी दोनो में 'कार' सज्ञा पु० शब्द का अर्थ 'कार्य' या 'करने वाला' है। फारसी मे भी काश्तकार, जिनाकार. पेशकार और रजाकार शब्द चलते है। कवि ने चन्द्रकार और सूर्यकार शब्दो का नया प्रयोग ही किया है।

संज्ञा-विकार

कुछ विकृत संज्ञा-रूप इस प्रकार है —

अनहिंसा[3] (अहिंसा), अनिर्वार्यता[4] (अनिवार्यता), अरचा[5] (अर्चा),

१. तुल० सूरदास — चकित भई नंद रनियाँ — (१०—८३)
२. हम विषपायी .., आज क्राति का शंख बज रहा, ४८३ — 'हम **चन्द्रकार**...'
३. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २४ — '**अनहिंसा** के भव्य भवन का'
४. विनोबा-स्तवन, अहो मत्रद्रष्टा, हे ऋषिवर, १० — 'ध्वात की **अनिर्वार्यता** दूर हुई'
५. हम विषपायी ..., वह बांकी झांकी, ३५२ — 'करती हैं अब तक **अरचा**'

अहनिशि [1] (अहर्निश), आर्ति [2] (आरती), आश [3] (शा), आह्वाहन [4] (आह्वान या आवाहन), उच्छवास [5] (च्छ्), कलिल [6] (कलोल या कल्लोल), किंकिणि [7] (णी), कीकड [8] (कीकर), कुंझटिका [9] (कुज्झटिका), फेनों [10] (फे), रेलमपेल [11] (रेलपेल), संधार्ति [12] (ध्या-आरती), सामां [13] (सामान), सिंदुर [14] (दू)

यहां ' अनहिंसा ' नञ्-तत्पुरुष समास में ' अन ' संस्कृत का नहीं, ' अन ' हिंदी का उपसर्ग जुड़ा है। कवि ने ' अहिंसा ' अर्थ में ' अनहिंसा ' लिखा है।

संस्कृत मे ' अर्चा ' स० स्त्री० शब्द ' पूजा ' शृंगार आदि अर्थों में है। ' अरचा ' उसी का तद्भव रूप हैं।

संस्कृत ' अहर्निशम् ' अव्यय शब्द है। व्रजभाषा मे ' अहनिसि ' शब्द-रूप है। कवि ने उसी से प्रभावित हो कर ' अहनिशि ' रूप लिखा जान पडता है।

---

१. रश्मिरेखा, कुहू की बात, ५४ — ' गगन का वक्ष है अहनिशि उजागर '

२. (क) हम विषपायी ..., मनोरथ, ३४३ — ' नव आर्ति करूं '

(ख) हम विषपायी ... , संध्या आरती, ६०९ — ' करता हूं संधार्ति '

(ग) हम विषपायी ..., प्रज्वलित वह्नि, २४६ — ' पूतार्ति दीप की बत्ती मे '

३. विनोबा-स्तवन, अहो मन्त्रद्रष्टा ... , ७ — ' जीवन की आश करो '

४. हम विषपायी ..., गरजे मेरे सागर पहाड, ४१२ — ' निर्वाणाह्वाहन दुर्वह '

५. हम विषपायी ... , क्या ? ३१२ — ' क्यो छाया उच्छवास ? '

६. हम विषपायी ... , मृत्यु-वध, ६१८ — ' जीवन कलिल भरी सरिता है '

७. हम विषपायी .. . आये नूपुर के .. , १८६ — ' है अनगुंजित किंकिणि '

८. हम विषपायी ... , यो शूल-युक्त ३५ — ' कांटा कीकड़ का '

९. वही, क्या ?, ३१२ — ' कुंझटिका का क्यों छाया उच्छवास '

१०. वही किरकिरी. ३२१ — ' हृदय-सिंधु के फेनों मे '

११. वही, कम्बर ! कोऽहं ?, १४५ — ' देखी हैं रेलमपेल कई '

१२. वही, संध्या-आरती, ६०९ — ' करता हूं संधार्ति '

१३. वही, बिंदिया, ३९२ — सामां इन प्राणों की फासी का '

१४. वही बिंदिया, ३९२ — ' यह बिन्दी है सिंदुर की '

संस्कृत में 'आरात्रिक' (नपु०) है उसी से हिंदी में 'आरती' स्त्री० शब्द बना है। कवि ने 'आरती' अर्थ में ही '**आर्ति**' शब्द-रूप लिखा है। संस्कृत का 'आर्ति' सं० स्त्री० शब्द दुख, पीड़ा, रोग आदि अर्थों मे एक भिन्न शब्द है।

आवाहन और 'आह्वान' का गड्डमड्ड है '**आह्वाहन**' जोकि अशुद्ध है।

सस्कृत का 'कलिल' (नपु०) शब्द 'समूह या ढेर' के अर्थ में है। यहा '**कलिल**' शब्द 'कल्लोल' (स० पुं० शब्द) का ही विकार है।

कविता मे '**किंकिणि**' शब्द-रूप भी चलता है। सस्कृत मे 'किङ्किणिका' और 'किङ्किणी' शब्द-रूप ही प्रचलित हैं।

'बबूल' अर्थ मे हिंदी मे 'कीकर' पु० शब्द (स० किकराल) ही अधिक प्रचलित है, '**कीकड़**' नही। पजाबी 'किक्कड' का प्रभाव हो सकता है।

'कोहरा' अर्थ मे सस्कृत मे 'कुज्झटिका' और 'कुज्झटी (टि) स० स्त्री० शब्द है। इन मे प्रथम शब्द का ही विकार है 'कुझटिका'

ब्रजभाषा मे 'फेन' (झाग) अर्थ में 'फॅनु'[1] शब्द रूप भी मिलता है। कदाचित् '**फॅनों** उसी से प्रभावित स० पु० शब्द है।

हिंदी में रेल-पेल, स० स्त्री० शब्द (हि० रेलना+पेलना) ही चलता है, '**रेलमपेल**' कवि की निजी निर्मिति है। दक्खिनी हिंदी मे 'रेलछेल[2] शब्द-रूप भी है। इन सब का अर्थ 'भीड़' ही है।

'**सामां**' फारसी पु० शब्द 'सामान' का ही विकार है। ब्रजभाषा मे यह शब्द-रूप मिलता है।

सस्कृत और हिंदी मे 'सिन्दूर' शब्द-रूप ही अधिक शुद्ध है '**सिंदुर**' नही।

---

१. सूरदास — 'तुम हम कौ कहँ कहँ न उबारयौ, पियौ कालौ मुह **फॅनु**'

(सूर० ५०२)

२. दक्खिनी हिंदी का उद्भव और विकास, डॉ० श्रीराम शर्मा, — '**वेनिहायत** रेलछेल' (सबरस), १६४

विशेषण

सज्ञाओं की भाँति विशेषणों के क्षेत्र में भी नवीन जी ने कतिपय प्रयोग किए हैं यथा अलसाने [1], उकठ [2], घोरमय [3], झुटपुटी [4], निराशी [5], प्रेमल [6], बासंती [7], विश्रम [8], शंकरी [9], स्वप्निल [10], हुरिहारे [11]।

व्रजभाषा में '**अलसाने**' [12] अ० क्रि० बहु० (सं० अलस, हिं० 'अलसाना') का अर्थ है — 'थक गये, शिथिल हो गये'। कवि ने इसी शब्द का यहां विशेषण-रूप में नवीन प्रयोग किया है।

व्रजभाषा में 'उकठा' वि० शब्द 'शुष्क' अर्थ में है। कवि ने उसी से प्रभावित हो कर '**उकठ**' [13] का प्रयोग किया है।

घायल और पुञ्छल जैसे शब्दों के साम्य पर 'प्रेम' सज्ञा में 'अल' प्रत्यय जोड कर कवि ने '**प्रेमल**' विशेषण बनाया है।

'सदाबहार' (Ever green) वि० की भांति कवि ने लगभग उसी अर्थ

---

१. हम विषपायी जनम के, बसत, ३३६ — 'आकुल हैं **अलसाने** बैना'
२. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २९ '**उकठ** काठ की हांडी चढ़ न सकेगी बारंबार'
३. हम विषपायी ..., सिरजन की ललकारें मेरी, ८३ — 'इक ललकार **घोरमय**'
४. वही हंसिनि उडी अकाम, २३२ — 'भई **झुटपुटी** सांझ'
५. वही, क्या ?, ३१३ — '**निराशी** निर्मम-सा हो गया अह'
६. रश्मिरेखा, सजल नेह-घन भीर रहे, ४५ — '**प्रेमल** स्रोत अटूट चलें'
७. हम विषपायी ..., बसन्त-बहार, ३१४ — 'हम **बासंती** सतत सनातन'
८. वही, १९३०वे वर्ष की समाप्ति पर, ४२८ — '**विश्रम** अवकाश मनाने को'
९. वही, सिरजन की ललकारें मेरी, ८३ — 'वह है एक **शंकरी** हलचल'
१०. वही. ओ सदियों मे आने वाले, ४५० — '**स्वप्निल** नयनो से'
११. वही, फागुन, २६० — 'अरे **हुरिहारे** फागुन मास'
१२. तुल० — 'बल मोहन दोऊ **अलसाने**' (सूर० १०—२३०)
१३. तुल० — 'कौन काज ठाढ़ी रही बन में काहे न **उकठ** परी' (सूर० २७४१)

मे ' **बासंती** ' वि० गढ लिया है । यहां ' आनंदी ' अर्थ भी लग सकता है ।

' ई ' प्रत्यय जोड़ कर झुटपुटी, निराशी और बासंती के तौल पर ' **शंकरी** ' भी बना लिया गया है ।

' **स्वप्निल** ' वि० शब्द मे मत्वर्थीय ' इल ' प्रत्यय लगा है ।

' होलिहार ' या ' **हुरिहार** ' सं० पु० शब्द एक स्थानिक प्रयोग है जिसका अर्थ है — ' जो धूम-धाम से होली खेले ' । यहां ' उपद्रवी ' अर्थ भी संभव है । ' हुरिहार ' का ही सबोधन रूप हो सकता है ' **हुरिहारे** ' ।

विशेषण-विकार

अनुग्रहीत [1] (गृ), उज्वल [2] (ज्ज), उत्फुल्लित [3] (उत्फुल्ल), उनीस [4] (न्नी), उन्निस [5] (न्नी), ककरीले [6] (कटीले), गहर [7] (रा), झिलमिलती [8] (ला), प्रफुल्लित [9] (प्रफुल्ल), बेताले [10] (ल), मधुरी [11] (मधुर), राजनैतिक [12] (नी), हिंस [13] (हिंस्र) ।

---

१. हम विषपायी ..., कार्य-कारण-शून्यता, १६० — ' सदा तुम्हारा **अनुग्रहीत** '
२. वही, मेरे अतीत की ज्योति-लहर, ५०१ — ' **उज्वल** विगत काल '
३. (क) वही, पावस-पीड़ा, ३४१ — ' **उत्फुल्लित** जलजानन में '
(ख) क्वासि, मान छोड़ो, ६४ — ' आज **उत्फुल्लित** निशा है '
४. प्राणार्पण, द्वितीय आहुति, १६ — ' आया **उनीस** सौ तीस वर्ष '
५. प्राणार्पण, द्वितीय आहुति, १२ — ' था **उन्निस** सौ इकतीस '
६. क्वासि, मनुहार, ७६ — ' **कँकरीले** नयन करकते हैं '
७. हम विषपायी ..., स्मरण-विहँगम, ५६१ — ' **गहर** महार्णव '
८. रश्मि-रेखा, इकतारा, ७४ — ' कुछ **झिलमिलती** '
९. हम विषपायी ..., प्यास, २५५ — ' **प्रफुल्लित** गान '
१०. वही, भैरव नटनागर, ४२१ — ' हम नाचे तो किंतु हो गये ... **बेताले** '
११. रश्मि-रेखा, प्रथम प्यार का चुम्बन, ४९ — ' **मधुरी** स्मृतियों का '
१२. प्राणार्पण, द्वितीय आहुति, १३ — ' **राजनैतिक** उफ़ान '
१३. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ३९ — ' घोर **हिंस** कृत्य '

काव्य में ' **उज्वल** ' [1] वि० भी चलता है। उत्फुल्ल और प्रफुल्ल पहले ही वि० शब्द हैं अतः **उत्फुल्लित**, **प्रफुल्लित** जैसे विशेषण नवीन ही माने जाएगे।

हिंदी में ' **उन्नीस** ' संख्यात्मक विशेषण शब्द-रूप ही अधिक चलता है।

' **कंकरीले** ' वि० का अर्थ तो ' ककड़ वाला ' है। ठीक इसी प्रकार ' कंटीली ' की अपेक्षा ' **कटीली** ' [2] आंखें कहना शुद्ध प्रयोग है। ' कटीला ' वि० शब्द हिं० ' काट ' में ' ईला ' प्रत्यय जोड़ कर बना है। इसी का स्त्री० ' कटीली ' है।

हिंदी और व्रजभाषा में '**गहर** ' वि० ' गहरा ' अर्थ में नहीं चलता। प्राकृत मे ' गहीर ' (सं० गम्भीर) है। अवधी में ' गहिर ' विशेषण है — उदा०

' अहिर क पेट **गहिर**, कुरमी क पेट मड़ार ' [3]

कविता में प्रायः ' **गहर** ' प्रयोग भी मिल जाता है।

हिंदी में विशेषण के लिंग का विशेष्य के लिंगानुसार होना अनिवार्य नही है। अतः ' मधुर ' भी लिखा जा सकता था किन्तु प्रायः ' मधुरी ' स्त्री० रूप भी मिल जाता है। उदा०

' कहावत ' : लम्बा टीका **मधुरी** बानी, दगाबाज की यही निशानी

प्रायः संस्कृत के विद्वान् हिंदी में ' राजनैतिक ' (वि०) रूप को अशुद्ध बतला कर ' राजनीतिक ' लिखने-बोलने का आग्रह करते है। किंतु प० किशोरीदास वाजपेयी भी हिंदी की विकास-परम्परा को दृष्टि में रख कर ' राजनैतिक ' वि० भी शुद्ध मानते हैं। वे कहते हैं — " यह न हो सकेगा कि ' नैतिक ' एक जगह लोग लिखें और दूसरी जगह ' नीतिक ' लिखें "। [4]

संस्कृत में ' हिंस्र ' वि० शब्द (सं० हिंस्+रक्) का अर्थ ' हिंसक ' है। यहां ' **हिंस** ' उसी का विकृत रूप है।

---

१. तुल० — सूरदास — ' किसमिस **उज्वल** गरी बदाम ' (सूर० १०—२१२)

२. (क) अच्छी हिंदी, बाबू रामचन्द्र वर्म्मा, ३२६

(ख) मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड, दे० शब्द ' कटीला '

३. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी ' समीर '

४. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ५८

विशेषण-विपर्यय

कुछ विशेषण-विपर्यय के नमूने इस प्रकार है —

आसावरी [1] (प्रिया), प्रवाही [2] (उपकरण), भौंराले [3] (अलिगण), विदेशिनी [4] (पीड़ा)

वस्तुत: ये उदाहरण 'लक्षणा' शब्द-शक्ति के अन्तर्गत भी लिए जा सकते हैं।

क्रिया

पूर्ववर्ती कवियों की भांति नवीन जी ने भी ब्रजभाषा और अन्य लोक भाषाओं की क्रियाओं का अधिक प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण ये हैं —

अनुकूली [5], अनुकूलो [6], अनुमानते [7], अनुलेखी [8], आराधू [9], आराधूंगा [10],

---

१. क्वासि, कलिका इक बबूल पर फूली, १५ — 'इसकी **आसावरी** प्रिया का'
२. क्वासि, कब मिलेंगे ध्रुव चरण वे, २ — '**प्रवाही** उपकरण ये'
३. रश्मि-रेखा, हिंडोला, ६३ — 'अलि-गण मडराते है काले **भौंराले**'
४. हम विषपायी ..., यह रहस्य-उद्घाटन-रत-जन, ९४ — 'हिये मे यह **विदेशिनी** पीडा'
५. क्वासि, कलिका इक बबूल पर फूली, १४ — 'मधुऋतु इम पर कब **अनुकूली** ?'
६. रश्मिरेखा, तुम चिरकाल हसो फूलो, १०२ — 'मुझ पर सतत **अनुकूलो**'
७. वही, तुम इसे पहचानते हो, १०५ — 'क्या खेल ही **अनुमानते हो**'
८. हम विषपायी ... सूना सब ससार हुआ है, १२० — 'ताल तलैयां भी **अनुलेखी**'
९. वही, प्रज्वलित वह्नि, २४६ — 'किस को **आराधू**'
१०. वही, आकुल की उपासना, २७७ — 'दुलरा कर **आराधूंगा**'

उट्ठा [1], उट्ठी [2], उट्ठे [3], कटकटाती [4], झरियां [5], झौंक [6], देख [7] ('दिखाई' अर्थ में प्रयुक्त) पेख [8], पेखा [9], पेखो [10], प्रकटाने [11], प्रकटी [12], प्रकटे [13], प्रकटो [14], प्रगटी [15], फनफन [16], बतियाओ [17], भ्रमे [18], मेटे [19], लाँघ [20], लेख [21], सुलसा [22], हहरने [23]।

---

१. क्वासि, लिख विरह के गान, ४ — 'मचल उट्ठा आज है'
२. क्वासि, मेरे मधुमय स्वप्न रंगीले, १६ — 'यों ही कांप उट्ठी है'
३. रश्मि-रेखा, तुम इसे पहचानते हो, १०५ — 'बोल उट्ठे तो निर्बल'
४. रश्मि-रेखा, माघ-मेघ, १०९ — 'विद्युत्-छटा कटकटाती चली'
५. हम विषपायी ..., बसन्त, ३३३ — 'नीरस पत्रावलिया झरियां'
६. विनोबा-स्तवन, जग चुकी है वर्तिका, १६ — 'झौंक उठी जब शतघ्नी'
७. हम विषपायी ..., भ्रमजाल, ३८६ — 'पाप मुझे तो कहीं न पड़ता देख'
८. क्वासि, प्रिय मम मन आज श्रांत, ६३ — 'पेख पेख हूं अवाक्'
९. क्वासि, मेरे स्मरण-दीप की बाती, ४० — 'उन्मन तुम को चढ़ते पेखा है'
१०. विनोबा-स्तवन, अहो मन्त्रद्रष्टा ..., ९ — 'यह नव क्रीड़ा तो पेखो'
११. हम विषपायी ..., विनिपात, २०५ — 'निज वैभव प्रकटाने को'
१२. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४२ — 'प्रकटी थी चिर आश'
१३. रश्मि-रेखा, कह लेने दो, ६६ — 'किमि प्रकटे'
१४. हम विषपायी ..., निवेदन, २९४ — 'चन्द्रावली सरिस प्रकटो'
१५. रश्मि-रेखा, रुनझुन, ६९ — 'मेरे शिशु में प्रगटी मानवता'
१६. हम विषपायी ..., नरक के कीड़े, ५२० — 'करते नारी पर फनफन हैं'
१७. वही, प्रश्नोत्तर, २७० — 'धीरे धीरे बतियाओ मत'
१८. विनोबा-स्तवन, अहो मन्त्रद्रष्टा ..., ४ — 'निकल भ्रमे'
१९. हम विषपायी ..., प्रिय बोल दो, १६ — 'मेटे यह संघर्ष'
२०. क्वासि, चेतन-वीणा, ११ — 'इतिहास-कथा सकल सृष्टि लाँघ उठी'
२१. हम विषपायी ..., घुन, २५९ -- 'तू अपने को लेख'
२२. हम विषपायी ..आकुंचन की उपासना, २७६ — 'अग्नि नव जीवन-तरु सुलसा देवे'
२३. क्वासि, मान छोड़ो, ६५ — 'हहरने लगता है हृदय यह'

इन में अनुलेखी, झरिया, डौंक, देख, फनफन, लाँच और सुलसा विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है।

हिंदी में 'अनुलेखन' स० पु० शब्द का अर्थ है — 'घटना या कार्य आदि का लेखा लिखना'। 'देखना' नये अर्थ मे यहा 'अनुलेखना' स० क्रि० का नव प्रयोग हुआ है।

ब्रजभाषा मे 'झरना' अ० क्रि० (सं० क्षरण) है। 'झरियां' उसी का भूतकालिक रूप है।

अवधी में 'चौकना' अर्थ में 'डौंकब' अ० क्रि० भी है। 'डौंक' का यहा 'गरजने या गूजने' के अर्थ मे प्रयोग जान पडता है।

'देख' पूर्वी प्रयोग है। शिष्ट हिंदी मे ऐसे क्रिया-प्रयोगों को नवीन ही कहा जाएगा।

ब्रजभाषा मे 'फनफनाना' एक अनुकरणात्मक अ० क्रि० है जिसका अर्थ है 'फनफन करना, चचलता से इधर उधर हिलना-डोलना'। यहा दूसरा अर्थ सम्भव है।

क्रिया-विकार

कीजे [१] (कीजिए), चक्खोगे [२] (चखोगे), ठिटकी [३] (ठिठकी), निखराए [४] (बि), बरबराओ [५] (बड़बडाओ), भलने [६] (भ), रैंग [७] (रें), लिक्ख [८]

---

१. हम विषपायी , मेरे अम्बर मे निपट अधेरा छाया, ५०१ — 'किसका कीजे विश्वास'

२. क्वासि, दिन पर दिन बीत चले, ३१ — 'क्या चक्खोगे औरों की हाला'

३. हम विषपायी कुण्डल, ३५० — 'दुपहरी ठिटकी'

४. वही, तुम्हारे सामने, ३०१ — 'झोंके निखराए कछ फल'

५. वही सिरजन की ललकारें मेरी, ५७ — 'व्यर्थ बरबराओ मत'

६. वही, नरक के कीडे, ५२२ 'अराजय को यो भलने का मत मौका दो'

७. वही, ओ सदियों मे आने वाले, ४५२ रैंग रहे थे जोकि पे के ब'

८. वही, पत्र, ३५१, — 'क्या क्या लिक्ख कोरी पाती मे

(लिखू), सँजा [1] (सजा)

इन मे **चक्खोग** और **लिक्खू** जैसी क्रियाए बोलचाल की है। पहले हम उट्ठा, उट्ठी, उट्ठे जैसे क्रिया-प्रयोग देख चुके हैं। बाबू रामचन्द्र वर्म्मा के मतानुसार बोलने में 'रक्खना' ही आता है अतः 'रक्खा' ही लिखना अधिक ठीक है। [2]

किंतु पं० किशोरीदास वाजपेयी शिष्ट-साहित्यिक हिंदी में 'रखना', 'लिखना आदि लिखने के ही पक्ष में हैं।

व्रजभाषा मे 'बरबर' सं० स्त्री० शब्द 'व्यर्थ की बात या बकवाद' अर्थ में है। कदाचित् उसी से कवि ने '**बरबराना**' क्रिया बना ली है।

'भूलना' पहले ही अ० क्रिया है। अतः 'भुलना' अकर्मक प्रयोग नया ही माना जाएगा।

व्रजभाषा मे '**रेंगना**' [3] अ० क्रिया है।

अन्य क्रिया-प्रयोग

कुछ लोक भाषाओं मे है, हैं, हूं, हो जोड कर विशिष्ट क्रियाए प्रयुक्त की जाती हैं। कवि ने भी इस ओर अपनी रुचि प्रदर्शित की है। उदाहरण इस प्रकार है—

१. उठे है [4], जान सके है [5], झलके है [6], दीख पड़े है [7], सुने है [8]

२. जाने है [9], पूछे है [10]

---

१. वही, दीपमाला, २७७ — '**संजा** दो धीरे धीरे दीप-अवलियां'
२. अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा, ३२६
३. उदा० सूरदास — 'एक ग्वालि गो-सुत ह्वै रैंगति' — (सूर० ३४८४)
४ हम विषपायी ..., घन, २५८ — 'रह रह टीस **उठे है** छिन छिन'
५ वही, ओ मदियो मे आने वाले, ४५१ — 'तुझ को तू ही **जान सके है**'
६. वही, विनिपात, २०८ — 'नर मे **झलके है** नारीपन'
७. रश्मि-रेखा डोने वालो, ४७ — 'अभदूर तक **दीख पड़े है**'
८. हम विषपायी, मिरजन की ललकारें ५९ 'कौन तुम्हारी आह **सुने है** !'
९. क्वासि, हम नूतन प्रिय राग, १३ — 'हम **जाने हैं**'
१० हम विषपायी, आये नूपुर के स्वर, १८४ '**सब पूछे हैं** अनझन क्या है ?'

३. खोजू हू [1], जानूं हू [2], ढूढू हू [3], दीख पडू हूं [4], पूछू हूं [5] सोचू हूं [6]

४. कोसो हो [7], घबराओ हो [8], घूमो हो [9], जानो हो [10], झाको हो [11], देखे हो [12], देखो हो [13], पूछो हो [14], बोलो हो [15], मार

---

१. वही, पार्थिव, ३२३ — 'मैं खोजू हूं कही यही'

२. (क) प्राणार्पण, अथ श्री प्रथम आहुति, ५ — 'मैं इतना जानू हूं'

(ख) क्वासि, मेरे आंगन खजन आए, ८९ — 'मैं जानू हूं मेरे प्रिय के'

(ग) रश्मि-रेखा, भीग रही है मेरी रात, ७९ — 'मै ही जानू हूं कैसा है'

(घ) रश्मि-रेखा, मेरे परिपथी, १८५ — 'इतना मै जानू हूं'

(ङ) हम विषपायी ..., नास्तिक का आधार, १०४ — 'प्रिय मैं जानू हूं'

३, वही, कस्त्व ? कोऽह ? १४८ — 'जिसको ढूढू हूं'

४. वही, विस्मरण खेल, ५७३ — 'याचक-सा दीख पड़ हूं'

५. वही, सूना सब ससार हुआ है, १२० — 'देख भ्रमित नभ पूछू हूं'

६. क्वासि, अभिशाप, ६१ — 'आज सोचू हूं'

७. हम विषपायी ..., यौवन-मदिरा, २८२ — 'मादकता को कोसो हो ?'

८. वही, विषपान, ४५७ — 'इस से क्यो घबराओ हो'

९. वही, एकाधिपत्य, ३७० — 'घूमो हो'

१०. रश्मि-रेखा, वर्षा-लोके, ५ — 'तुम जानो हो'

११. क्वासि, मेरे स्मरण-दीप की बाती, ४० — 'झांको हो मन-वातायन मे'

१२. हम विषपायी ..., खोज, ३९८ — 'ठिठक ठिठक क्या देखे हो'

१३. वही, त्रयस्त्रीसवें वर्षान्त में, ३ — 'क्या देखे हो इन मे'

१४. रश्मि-रेखा, कह लेने दो, ६६ — 'मुझ से पूछो हो'

१५. हम विषपायी ..., पत्र-व्यवहार, २७२ — 'सब जग मे बोलो हो'

हो [1], याद करो हो [2], सकुचाओ हो [3], सोचो हो [4]।

इन में ' जानू हूँ ' कवि को सर्वाधिक प्रिय है।

लिंग

नवीन जी ने लिंगो के प्रयोग में भी रुचि-स्वातन्त्र्य का परिचय दिया है। उदाहरणस्वरूप खान [5], थाह [6], देह [7], वय [8] और हाट [9] जैसे शब्द हिंदी में स्त्रीलिंग ही माने जाते हैं जबकि कवि ने इन्हें पुल्लिंग में लिखा है।

संस्कृत में ' खनि ', ' खनी ' और ' खानि ' और हिं० ' खान ' स्त्री० शब्द ही हैं। हिंदी और ब्रज० में ' थाह ' (सं० स्था) सं० स्त्री० शब्द है। ' देह ' शब्द संस्कृत मे पुं० और नपु० दोनो मे चलता है। इसी प्रकार संस्कृत में ' वयस् ' नपु० है और हिंदी में ' वय ' सं० स्त्री० शब्द है। इसी प्रकार हिंदी और ब्रज० में ' हाट ' सं० स्त्री० शब्द ही है। संस्कृत में ' हट्ट ' अवश्य सं० पुं० शब्द है।

इस के विपरीत कवि ने हिंदी मे पुल्लिंग माने जाने वाले शब्दों को स्त्रीलिंग

---

१. वही, सो जाने दो, २६४ — ' क्यो मारो हो स्मृति-बाण ? '

२. वही, एकाधिपत्य, ३७० — ' तुम याद करो हो इन इन को '

३. वही, विषपान, ४५७ — ' मन मे सकुचाओ हो '

४. वही, प्रिय मै आज भरी भारी-सी, ५८१ — ' शायद सोचो हो मन में '

५. हम विषपायी ..., ओ तुम मेरे प्यारे जवान, ५०९ ' स्वप्नो के तुम सुरस खान '

६. वही, बोल अरे दो पग के प्राणी, ८५ — ' भावार्णव का थाह '

७. वही, ओ सदियो में आने वाले, ४४६ — ' जिन ने अपना देह दान कर '

८. अपलक, १७ — ' बहुत हुआ इतना वय बीता '

९. हम विषपायी ... , ढुलमुल, ३८१ — ' उजड़ चला है प्रेम-प्राण का हाट '

में लिखा है यथा अतिरेक [१], कुंज [२], घूंट [३], जाल [४], फाग [५], बरसें [६], मृदंग [७], रव [८], रुझान [९], और हठ [१०]।

संस्कृत में **अतिरेक** (या अतीरेक) सं० पु० शब्द ही है। '**कुञ्ज**' संस्कृत, हिंदी और व्रज० में स० पु० शब्द है। संस्कृत में यह नपुं० भी है। '**घूट**' हि० और व्रज० में सं० पुं० है। '**जाल**' के सम्बध में भी यही है। सस्कृत मे 'जाल' नपुं०है। '**फाग**' भी हि० और व्रज० में सं० पु० शब्द है। '**बरस**' की स्थिति भी यही है। शेष शब्द भी हिं० और व्रज० में पुल्लिग रूप में ही चलते है। **मृदंग**, **रव** और **हठ** तो संस्कृत में भी पुल्लिग ही है। 'रुज्हान' अरबी में पु० शब्द ही है। उसी को हिं० और व्रज मे '**रुझान**' रूप मे लिखा जाता है।

खगी [११] और **फंदी** [१२] नये स्त्री० शब्द हैं।

'**चरचा**' [१३] शब्द कवि ने स्त्री० मे लिखा है। सस्कृत में चर्चा या चर्चिका

---

१. हम विषपायी ..., घुन, २५८ — 'रुदन-वेदना की है यह **अतिरेक**'

२. वही, शिखर पर, ४२६ — 'यह जीवन की **कुञ्ज**'

३. वही, विप्लव गायन, ४२९ — 'वह खून की **घूट** हो जाये'

४. वही, १९३० वे वर्ष की समाप्ति पर, ४२७ — 'पूर्ण भूत की मुधड **जाल** मे'

५. वही, विद्रोही, ४८२ — 'खेली प्राणों की रक्त **फाग**'

६. वही, हम परित्याग के आदी हैं, ५७७ — 'बरसो पर **बरसें** बीत गई'

७. वही, क्या है यह अधकार, ६१६ — 'मृत्यु की **मृदंग** बजी'

८. वही, सिरजन की ललकारे मेरी, ७३ — 'मैं क्यों सुनू उपेक्षा की **रव**'

९. वही, वही, ६१ — 'है नर की **रुझान** युग युग से'

१०. रश्मि-रेखा, मान कैसा, ४९ — 'देख कर यह **हठ** तुम्हारी'

११. क्वासि, गान-निरत मम मन-खग, ११७ — (i) '**खगी** विरह बन आया क्या ?'
(ii) '**खगी** निमंत्रण मिस यह'

१२. रश्मि-रेखा, मेरे परिपंथी, ११७ — 'डाल गले मे **फंदी**'

१३. हम विषपायी ···, नहीं नही, ३७८ — 'क्या ही **चरचा** नया चली'

सं० स्त्री० शब्द 'वहम, पुनरावृत्ति, बार बार पढना' आदि अर्थों मे है। हिंदी और ब्रज० में 'चरचा'[1] और 'चर्चा'[2] स० स्त्री० शब्द ही हैं। उर्दू वाले आकारांत देख कर इस शब्द को पुल्लिग मानते हैं।[3]

कही कही 'पहेला'[4] जैसे नये पुल्लिग शब्द भी गढ़े गये है।

वचन

लिंगो की भांति वचनो के क्षेत्र मे भी कवि ने विचित्र प्रयोग किए हैं। उदाहरणत: जहां बहुवचन का प्रयोग होना चाहिए वहा कवि एकवचन ही रहने देता है। कुछ शब्द-प्रयोग देखे —

इन्द्रिय[5], घंटी[6], पगधारी[7], बूद[8], बेटी[9] और लाठी[10]।

व्याकरण के नियमानुसार '**अनेकों**' शब्द का सर्वनाम के रूप मे तो प्रयोग हो सकता है, विशेषण के रूप मे नही। "विशेषण की भांति प्रयुक्त होने पर अनेक का 'अनेको' नही बनता, किंतु सर्वनाम के रूप मे 'अनेको' ही बनता' है।[11] यथा: अनेको ने भोजन किया है।

१, तुल० — 'हरि-जन हरि-**चरचा** जो करै' (सूर० ७—८)

२. तुल० — '**चर्चा** परी बहुत' (सूर सारावली. ६४६)

३. (क) मानक हिंदी कोश. दूसरा खण्ड. दे० 'चरचा'

(ख) अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्म्मा, २४७ — 'वो कत्ल भी करते है तो चरचा नही होता'

४. हम विषपायी ..., तुम हो ? १०८ — 'तुम तो एक **पहेला** हो'

५. वही, कस्त्व ? कोऽहं ?, १३८ — 'इन दस **इन्द्रिय** के बंधन में'

६. रश्मि-रेखा, मेरे प्रियतम मेरे मगल, ८३ — 'गायो की घंटी का टुनटुन'

७. हम विषपायी ..., कस्त्व ? कोऽहं ?, १३९ — 'कई **पगधारी** की बारी आई'

८. वही, प्रज्वलित वह्नि, २८५ — 'उस से निकली ये **बूद** चर'

९. वही, पथ-निरीक्षण, ४१८ — 'ये दोनों बडे बाप की **बेटी** है'

१० प्राणार्पण चतुर्थ आहुति. ५० — 'भाले तने, **लाठी** उठी'

११ (क) अच्छी हिंदी कैसे लिखे. डॉ० भगीरथ मिश्र, १६१

(ख) अच्छी हिंदी, रामचन्द्र वर्मा. २५५

किन्तु नवीन जी ने अनेक स्थलों पर 'अनेको'[1] वि० लिखा है। इसी प्रकार एक स्थल पर 'शिखरे'[2] स्त्री० बहु० भी है। 'यह' स्थान के पर एकवचन में 'ये'[3] भी कहीं कहीं देखा जाता है।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति नवीन जी को भी अ, अन्, (हिं० अन), निर्, सु उपसर्ग विशेष रूप से प्रिय हैं।

'अ' उपसर्ग वाले शब्द ये हैं — अऋतु, अकथ, अकुशल, अगुणता अचलित, अजान, अथोर, अधीनी, अपरस्पर, अबद्ध, अबोले, अभीति, अमन, अमानव, अमाप, अरसीले, अलखित, अव्यभिचार और असलग्नता।

संस्कृत 'अन्' या हिं० 'अन' उपसर्ग वाले शब्द ये हैं —

अनगाढ, अनगिनत, अनगिनती, अनजाने, अनपावन, अनपेक्षा, अनबोले,

---

१. (क) प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४० — 'जहां हैं अनेकों हिन्दु'

(ख) क्वासि, मैं तो सजन आ ही रही थी, ८४ — 'युग अनेकों हो चुके हैं'

(ग) रश्मि-रेखा, प्राण तुम मेरे हृदय दुलार, १९ — 'अनेकों आकांक्षाएं क्षार'

(घ) हम विषपायी ..., एकाकीपन, १० — 'अनेकों विकट सतरी'

२. वही, कस्त्वं ? कोऽहं ?, १५३ — 'पर्वत शिखरें कंप जायें ये'

३. वही, धरती के पूत, १८१ — (क) चिर परिचिता पहाड़ी ये

(ख) चोटी-निरी उघाड़ी ये'

अनमिल, अनमोल, अनश्रुत [1] अनहिंसा [2], अनाहूत, अनिगित, अनुच्छिष्टा और अनुर्वर।

'निर्' उपसर्ग इन शब्दों में लगा है — निरलस, निरवधि, निरवलम्ब, निराहार, निराहुत, निरिंद्रिय निर्जला, निर्देह, निर्बंध, निर्भय, निर्भ्रान्ति, निर्लज्जा, निर्वैर।

'सु' उपसर्ग वाले शब्द देखिए — सुअंकित [3], सुकृत, सुकेशी, सुगृही, सुचरण, सुजान, सुदूर, सुनयन, सुपरस, सुपरिधि, सुपुरातन, सुभृकुटी, सुमनुहार, सुमनोरथ, सुमन्त्र, सुमहेष्वाग, सुमुखि, सुरति, सुरस, सुलक्ष्य, सुवास, सुविकास, सुविगत, सुविजित, सुविश्वास, सुशांत, सुगुप्त, सुसंचित, सुसंभव, सुसंस्कृत, सुसज्जित, सुसफलता, सुसामयिक, सुस्थान, सुस्थिर, सुस्पंदन, सुस्वन, सुस्वर।

संस्कृत 'वि' उपसर्ग की भांति उसी अर्थ में फ़ारसी का **बे** '**उपसर्ग**' है। इन शब्दों मे यही उपसर्ग है — बेकरार, बेढंगे, बेडर, बेताब, बेताल, बेतुक, बेभरम, बेमन, बेमाप, बेमेल, बेहाल।

सन्धि

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ **दीर्घ स्वर-संधियां** ये हैं — किरणांगुलियों, किरणासव, क्रान्त्यांदोलन, क्षणानन्द, मंदादर, सकेताक्षर, स्वत्त्वाधिकार।

कुछ आलोचकों के अनुसार '**स्वत्त्वाधिकार**' [4] शब्द अशुद्ध है। वस्तुत: '**स्वत्त्व**' का अर्थ ही अधिकार है। फिर भी आधुनिक कोशो में इस शब्द को सम्मिलित कर लिया गया है। अर्थ है — '**वह अधिकार जो स्वत्त्व के रूप में हो**'।

कुछ **गुण-संधियां** ये है — अपूर्णोत्क्रमण, आत्मोत्पादन, गगनोन्मुख, गमनोन्मुख

---

१. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४३ — 'नवल सदेश **अनश्रुत** और अकथ के'
२. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २४ — '**अनहिंसा** के भव्य भवन का'
३. क्वासि, कमला नेहरू की स्मृति मे, ९९ — 'अश्म-रेखा सी **सुअंकित**'
४. अच्छी हिंदी कैसे लिखें, डॉ० भगीरथ मिश्र, १६४

जनोद्यम, **बलिदानोत्कंठा**, रत्नोपजटित, लीलोत्सुक, लेखनोत्सुकता, सम्मिलनोत्सुकता, **स्नेहोदक और स्वेदोदक** ।

कुछ **व्यंजन संधियां** ये है — जगज्जन, जगन्नायक, मदनुष्ठानों, विद्युद्वेग, सदसत्, सदानन्द, सद्विचार ।

कुछ **विसर्ग संधियां** ये हैं — अधश्चोर्ध्व, तपोज्वलित, तेजोमय, ज्योतिर्मय, तपोराज, बहिस्साधनावलम्बित, मनोराज्य ।

जनर्लोक [1] और **तपर्लोक** [2] नई संधियां है। क्रमशः जन-लोक और तपोलोक ही अधिक शुद्ध है। पुराणानुसार ऊपर के सात लोकों मे से छठा लोक ' तपोलोक ' (पु० — सं० तपस्-लोक, मध्य० स०) है जो जन-लोक के बाद और सत्य-लोक के पहले पड़ता है। [3]

कही कही कवि स्वर-संधियां न करके उन्हे यथापूर्व ही लिख देता है। जैसे— गतआश [4], श्वासउच्छ्वास [5] सुअंकित [6], सुआसन [7], हतआश [8] ।

---

१. हम विषपायी जनम के विनिपात, १९९ — (क) **जनर्लोक** के गमनागमन मे

(ख) **जनर्लोक** ही कहलाया है

२. वही, विनिपात, १९८ (क) **तपर्लोक** में आ टकराया

(ख) **तपर्लोक** से भी तो

(ग) मानो **तपर्लोक** में ज्योतित

३. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० ' तपोलोक '

४. हम विषपायी ..., किमिदम्, ३६१ — ' मनोरथ एक साथ **गतआश** हुए '

५. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४२ — ' **श्वासउच्छ्वास** से उड़ाएगा '

६. हम विषपायी, कमला नेहरू की स्मृति मे, ४९८ ' अश्म-रेखा सी **सुअंकित** '

७. वही, प्रज्वलित वह्नि, २४५ — ' पोछता **सुआसन** फूल-फूल '

८. वही, ओ तुम हो काल के भी काल, ५१२ — ' क्यों बनो **हतआश** तुम ? '

दीर्घ स्वर सधियां मिला कर न लिखने का एक कारण तो हिन्दी भाषा में ' ऽ ' चिह्न का कम प्रयोग करना है। किन्तु शेष संधियो को वैसे ही छोड़ देना नया प्रयोग ही माना जाएगा।

समास

अन्य कवियो की भांति नवीन जी को भी कर्मधारय समास और सम्बंध तत्पुरुष समास सर्वाधिक प्रिय हैं।

कुछ **कर्मधारय समास** ये हैं —

उद्यम-मंदिर, उपकरण-नीप, **कलम- कुल्हाड़े**, काल-नभ, काल-मेघ, **जनोद्यम-रथ**, जीवन-नद, जीवन-निर्झर, जीवन-यवनिका, तर्क-रवि, दृग-झारी, नयन-कमल, **नयन-खिड़कियां**, प्रयत्न-तीर, फणीन्द्र-रज्जु, भक्ति-फूल, भाव-विहग, भोग-पाश, मन-अंबर, मन-गगन, मन-नभ, मन-प्रागण, मन-मदिर, मन-मोती, मन-वातायन, मन-सर, मन्दर-मेरुदण्ड, मेरु-मथानी, यौवन-सूर्य, लगन-घन, लोचन-शशि, **विस्मृति-तृण**, श्वास-विजन, संदेश-दिवाकर, संस्कृति-सूर्य, सस्मरण-फूल, सस्मृति-सौरभ, समय-नदी, **स्मर-फुहियां, स्मरण-अंबर**, स्मरण-कटक, स्मरण-गगन, स्मरण-ग्रीव, स्मरण-द्वीप, स्मरण-द्विज, स्मरण-पिटारी, स्मरण-विहगम, स्मृति-प्रसून, स्मृति-रथ, स्वर-प्रसून।

इन से सिद्ध होता है कि कवि को ' आकाश ' और ' स्मरण ' तथा उनके पर्यायवाची शब्दों के समास बहुत प्रिय हैं।

सम्बंध तत्पुरुष समासों के कुछ उदाहरण ये है —

अकाल-क्रीड़ा, अग्नि-चिता, अग्नि-पारावार, अनल-घेरा, अनल-फाग, इतिहास-कथा, कर-अगुलिया, क्षितिज-रेखा, घन-दामिनी, चितन-रग, जग-ग्रीवा, तप-प्रसाद, **दर्शन-ओझलता**, नट-कछनी, नभ-धाराएं, नयन-तारे, नेह-रग, नेह-शृंखला, पग-रेखाएं, पथ-कणो, पराजय-गीत, प्राण-दान, बलिदान-तान, भूख-ज्वाला, मन्थ-दण्ड, **माघ-मेघों**, मानव-तन, मिलन-वरदान, मुक्ता-कण, युग-धर्म, रति-रस, **रथ-अश्व** रथ-चालक, विष-विलास, व्योम-पथ, **सिंगार-मंजूषा**, सिद्धांत-कथन।

'स' जोड़ कर कवि ने कई **अव्ययीभाव समास** बनाए हैं यथा — सकरुण, सगुण, सचर, सचराचर, सजल, सजातीय, सदेही, सनिकेतन, सबल, सभय, समल, समोद, सलज, सलाज, सविकार, सवेग, सायास, सालस, साश्रय, सेंद्रियता और सोल्लास।

अन्य **विविध समास** ये है — अमृत-साधना, उपल-हृदय, कल-कीर, गति-पग, छेदन-समर्थ, नेह-पाती, मानस-बसेरा, रैन-बसेरा, जयद-झंकार, शब्द-मूढ़, स्वागत-गायन।

अन्य शब्द-विकार

कुछ विशेष शब्द-विकार इस प्रकार हैं —

आदन्त[१] (आद्यन्त), उधरी[२] (उधर ही), जदपि[३] (यद्यपि) तुह्मी[४] (तुम्हीं), नगीच[५] (नजदीक), यदपि[६] (यद्यपि), यां[७] (यहां), वां[८] (वहां), सरबस[९] (सर्वस्व) और हमीं[१०] (हम ही)।

---

१. हम विषपायी ..., सिरजन की ललकारें मेरी, ५७ — 'है **आदन्त** शस्त्र-सज्जित जग'

२. वही, प्रणय-लय, २८९ -- 'चलो **उधरी** को'

३. रश्मि-रेखा, आज है होली का त्यौहार, २६ — '**जदपि** रमे हो'

४. हम विषपायी ..., कार्य-कारण-शून्यता, १६० — '**तुह्मीं** कह रहे हो ...'

५. क्वासि, इकतारा, ७३ — 'वातायन के **नगीच**'

६. विनोबा-स्तवन, महाप्राण के स्वन, २० — '**यदपि** है तप-कृश इसकी काया'

७. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २८ — '**यां** कुशल-क्षेम ही ...'

८. क्वासि, डोले वालो, ४७ — 'पर **वां** द्वैत-विचार रे'

९. हम विषपायी ..., नौका-निर्वाण, ४१ — 'तुम पे सब **सरबस** वारूं'

१०. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४० — '**हमीं** से देखो कहता है'

' ह् ' का लोप खड़ी बोली की प्रमुख विशेषता है। प्रायः सर्वनामों के साथ 'ही' जोड़ते समय विकल्प से सर्वनाम के अन्त्य 'अ' और 'ही' के 'ह्' का लोप देखा जाता है यथा उस + ही = उसी। इसी, किसी भी ऐसे ही बनते है। किन्तु 'तुम' सर्वनाम 'तुम्ही' बनेगा, तुमी या तुह्मी नही। 'तुम्ही' मे अनुस्वार का आगम हो गया है। 'ह्' का लोप यहा नही है। इसी विधि से 'हम्ही' बनना चाहिए था किंतु 'हमीं' रूप ही अधिक देखा जाता है। 'हमीं' में 'ही' का 'ह' लुप्त और अनुस्वार का आगम हो गया है। पं० किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार "दो 'ह' एक जगह नही बैठते"[1]। इसके अपवाद स्वरूप 'हहरना' जैसी क्रियाएं मिल जाती है। 'उधरी' भी इसी नियम से बन जाएगा।

व्रजभाषा मे जदपि[2] और यदपि (स० यद्यपि) अव्यय हैं। इसी प्रकार व्रजभाषा मे 'नगीच' शब्द है। 'निकट' अर्थ में ही अवधी में भी 'नगीच' है। 'यां' और 'वां' उर्दू मे क्रमशः यहां और वहां के संक्षिप्त रूप हैं। व्रजभाषा में 'सरबस'[3] म० पु० शब्द है।

कवि ने नये सर्वनामो का भी आश्रय ग्रहण किया है यथा —

इनने[4], उनने[5] किन ने[6] जिनने[7]। इन के शुद्ध रूप हैं— इन्होने,

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, २४ (प्रथमावृत्ति)
२. तुल० 'जदपि नंदनंदलहि नाना भांति नचावति' (सूर० ६५५)
३. (क) तुल० 'सरबस लै हरि धरयौ मवनि को' (सूर० ६५४)
(ख) तुल० 'सिव कौ धन संतनि कौ सरबस' (सूर० १—११४)
४. प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति, ४४ — 'इन ने तो सिद्ध किया ईशावतरण को'
५. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २४ — 'उन ने कब उन्नति की'
६. हम विषपायी . . . सतत प्रवासी, २१५ — 'किन ने तुम्हे संदेस पठयौ'
७. (क) हम विषपायी . . . यह रहस्य-उद्घाटन-रत-जन, १०१ — 'जिन ने दिया ज्ञान भंडार'
(ख) प्राणार्पण, चतुर्थ आहुति ३७ — 'जिन ने बिगाड़ी'
(ग) पृष्ठ वही, — 'जिन ने मिटाये'
(घ) वही, ४४ — 'जिन ने स्वधर्म हित'
(ङ) वही, द्वितीय आहुति, १२ — 'जिन ने एक सपना देखा था'
(च) वही, १३ — 'जिन ने मचवाय आपस में झगड़ा'

उन्होंने, किन्होंने, जिन्होंने । 'जिन ने' तो कवि को सर्वाधिक रुचिकर लगता है।

अंग्रेजी भाषा की शब्द-योजना से प्रभावित हो कर कवि ने कई स्थलों पर 'यह' को य'[१] और वह को व'[२] लिखा है। कही कही तो 'ये' को भी 'य'[३] लिखा है जिस से वचन सम्बधी भ्रांति होने की सभावना रहती है।

शब्द-लोप

कारको का लोप कवि को अत्यधिक रुचिकर लगता है। प्राय: कविता मे यह लोप क्षम्य माना जा सकता है। कुछ उदाहरण ये है - -

१. नाटक (का) परदा आन गिरा[४]
२. उस सिहरते नीम (के) नीचे[५]
३ वर्जित सध्या के झुटपुटे (के) समय[६]
४- हम (ने) नूतन पिय पाये[७]

१, (क) हम विषपायी जनम के, मनोरथ, ३४३ — 'किस ग्रीव मे हार य' डाल'
(ख) वही, नाविक, ३७६ — 'विकराल-सी य' कगार है'
(ग) वही, प्यासा, ४०० — 'हुई है वर्षा जब से य' आफत'
(घ) वही प्यासा, ४०१—'य' जा के पूछो'
(ङ) वही आराइया, ५८५ — नबीयत य' लुट हो जाती है'
(च) वही, गभीर भेद का भरम, ६०० — 'य' साध दिल की'
२. वही, प्यासा, ४०१ — 'व' कह रहा है'
३. वही, प्यासा, ४०० — 'य' सुर्ख डोरे पडे हुए है'
४. वही, छेडो न, २८७
५. रश्मि-रेखा, मिल गये जीवन-डगर मे १३४
६. हम विषपायी ..., पराजय- गीत, ४७४
७. क्वासि, हम नूतन पिय पाए, १२

५. ऐसी ध्वनि पड़ रही कान (में) यह [1]

६ सोच रहा यों अपने मन (में) [2]

७. ध्वनि सुनी कान (में) [3]

८. घटनाएं देखी है इन आंखों (से) भर भर [4]

नव शब्द

कुछ विशिष्ट शब्द-प्रयोगों का विवेचन यहां किया जाता है। ये शब्द इस प्रकार हैं -

अड़गड़ो [५], अनीनिका [६], उपमनव [७] ऊबामासी [८], ऐल [९], किलकिल, [१०], क्षेपणियां [११], खमण्डल [१२], गन्नाटा [१३], गाहे गाहे [१४], चुनमुन [१५],

---

१. रश्मि-रेखा, मेरे प्रियतम मेरे मगल, ८३

२ हम विषपायी ... , यह रहस्य-उद्घाटन-रत-जन, १०१

३ वही, अये नूपुर के स्वन झन भन झन, १८८

४ वही, छोटे की स्मृति मे, ३२९

५ वही, एक बार तो देख, ४६१— ' बैरक और **अड़गड़ों** में '

६ वही यह है द्वापर १९१ — यह **अनीनिका** चढ़ आई है शख-नाद कर '

७. (क) वही, मानव की क्या अंतिम . . १७२ ' मानव को **उपमानव**-सा लख '

(ख) महात्मा गाधी, छन्द ११, ११ — ' मानव हो तो फिर **उपमानव**

८. हम विषपायी .. जीवन प्रवाह, १६५ — ' प्रश्नो की **ऊबा-सांसी** में '

९ वही, बसन-बहार, ३१४ — ' गलबहियां-सी **ऐल** विहंसती बन जाओ गलहार '

१० वही, तुम हो, १०९ — ' इस पकिल थल की **किलकिल** मे '

११ अपलक, ९८ — ' मेरे हाथो मे है **क्षेपणियां** दुविधा की '

१२. क्वासि, अगणित तव दीपमाला, ४१ — ' **खमण्डल** थिरकते हैं '

१३. (क) आराम, ३७ — ' एक अजब **गन्नाटा**-सा है '

(ख) अपलक, ३४ — ' उन **गन्नाटों** में उलझा लघु मन '

(ग) अपलक, ३७ — ' इस मदिरा के **गन्नाटे** में '

१४ हम विषपायी विनिपात, २०८ ' एक व्यक्ति मे होते नारी-नर **गाहे-गाहे** '

१५ रश्मि-रेखा, रुनझुन-झुन ९८ — ' किलकना मेरा छोटा-सा **चुनमुन** '

जगड्वाल [1], दीप्ति-सक्रिय-तत्त्व [2], नो-बन्धन-कील [3], पाड़ [4], फुट्टफैयल [5], बिरात [6], रात्रि-पर्यटन-बंधन-आज्ञा [7], लवण-चोर [8], वात-वसन [9] और हू-हू [10]।

हिंदी में 'अडगडा' शब्द (सं० पु०) का अर्थ है बैल-गाड़ियों आदि के ठहरने का स्थान। 'अड़गोड़ा' एक अन्य शब्द है जिसका अर्थ है — उपद्रवी चौपाये को भागने से रोकने के लिए उसके गले में डाला हुआ लकडी का मोटा डण्डा, ठेकुर, ढेंगना। यहा '**अड़गड़ों**' स० पु० बहु० का सम्बन्ध जेल के उन कमरो से जान पड़ता है जिन में लडकी के मोटे डण्डे लगे हो।

सस्कृत मे 'अनीक' (पु०, नपुं०—अर्थ सेना') शब्द का स्त्री० 'अनीकिनी' है। 'सेना' अर्थ में '**अनीनिका**' कवि द्वारा गढ़ा हुआ एक नया शब्द है। सेना के पर्यायवाची शब्दो मे अनी, अनीक और अनीकिनी [11] का ही अधिक प्रचलन है, अनीनिका का नहीं।

पत जी की भांति नवीन ने भी '**उपमानव**' शब्द का अर्थ 'मानव से

---

१. (क) हम विषपायी .... कस्त्वं ? को ह ?, १३८ 'स्वयभूत हैं **जगड्वाल**'
   (ख) वही मानव की क्या अतिम ..., १७१ — 'यह चेतना **जगड्वाल** मे'
   (ग) विनोबा-स्तवन अहो मन्त्रद्रष्टा ..., ८ — 'विराट् से **जगड्वाल** की'
   (घ) वही, ईशावास्योपनिषत् बोला, २६ — 'यह नही तुम्हारा **जगड्वाल**'
   (ङ) कविता वही, २६ — 'इस **जगड्वाल** से भी विशाल'
२. अपलक, ९८ — '**दीप्ति-सक्रिय-तत्त्वों** की श्रेणी में'
३. अपलक, ९८ — '**नौ-बंधन-कील-रहित** यह जर्जर दारु-खण्ड'
४. हम विषपायी . . . विनिपात, २०३ — 'सदियों के ये **पाड़**-पडौसी'
५. वही, हम अलख निरंजन के वंशज, ४३३ -- 'हम रहे **फुट्टफैयल** यां पर'
६. वही, नौका-निर्वाण, ४० — 'यह रात **बिरात** हुई है'
७. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २२ — '**रात्रि-पर्यटन-बन्धन-आज्ञा** लागू होती है'
८. वही, द्वितीय आहुति, १२ — 'यह **लवण-चोर** की लीलाएं'
९. अपलक, ९८ — 'जीर्ण शीर्ण **वात-वसन**, दुर्गति है नौका की'
१०. हम विषपायी ..., व्यवहारवादिता, ७ — 'जीवन इक **हू-हू** चिड़िया है'
११. वृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी, ५८

समानता रखने वाले प्राणियों ' लिया है। पंत जी को ' उपनर ' शब्द प्रिय है और नवीन जी को ' उपमानव '।

हिंदी में ' ऊभासांसी ' सं० स्त्री० शब्द (हिं० ऊबना+सांस) ही अधिक प्रचलित है। ' घबराहट या दम घुटने ' के ही अर्थ में ' ऊबासांसी ' नव शब्द-रूप है।

अवधी मे ' ऐरन ' (स० पु०) ' एक कर्णाभूषण है जो नीचे लटकता है '। यहां वाक्य मे ' गलहार ' शब्द देख कर ' ऐल ' को भी ' ऐरन ' का विकार मानने का भ्रम हो सकता है। किन्तु हमारे विचार में ' ऐल '[1] यहां अलई नाम की कँटीली लता ही है ' जिसकी पत्तियां लगभग एक फुट लम्बी होती हैं '।[2] सूर ने भी ' एलि '[3] स० पु० शब्द का इसी अर्थ में प्रयोग किया है। यहां ' ऐल ' का कवि ने देशज प्रयोग ही ग्रहण किया है।

यहां ' **किलकिल** ' सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है ' कलह या व्यर्थ की कहा-सुनी '।

संस्कृत मे ' क्षेपणि ' या ' क्षेपणी ' (स० स्त्री०) शब्द का एक अर्थ ' पतवार ' है। ' **क्षेपणियां** ' बहुवचन है।

' आकाश ' अर्थ मे गगनमण्डल, नभमडल और वायुमण्डल जैसे शब्दों के तौल पर ' **खमण्डल** ' है जिसका अधिक प्रचलन नही है।

यहां ' **गन्नाटा** ' (सं० पुं०) कोई देशज शब्द जान पड़ता है। इस अनुकरणवाचक शब्द का ' चुप्पी ' या ' गनगन ' शब्द करना अर्थ संभव है। धीरे धीरे पर बराबर शब्द करने ' के अर्थ में अवधी में ' गनकब ' और ' गनगनाब ' अ० क्रियाएं हैं।

फ़ारसी में गाह गाह, गाह ब गाह, और **गाहे गाहे**[4] ' यदा-कदा ' अर्थ में विशेषण बताए जाते हैं किन्तु संस्कृत में ' यदा कदा ' अव्यय है, विशेषण नही। अतः यहा भी यह अव्यय ही माना जाएगा।

---

१. मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड

२. व्रजभाषा सूर-कोश, प्रथम खण्ड

३. तुल०--फूले बेल, निवारी फली एलि फूले, मरुवी मोगरो (सूर० २४०५)

४. उर्दू हिन्दी शब्द-कोश, मुहम्मद मुस्तफा खाँ मद्दाह ' १९०

बोलचाल मे शिशुओं के लिए '**चुनमुन**' (सं० पु०) लाड़-भरा शब्द है।

'**जगड्वाल**'[1] (स० पुं०) शब्द भी कवि को बडा प्रिय है। कदाचित् इस का अर्थ 'व्यर्थ का आडम्बर या बखेडा' है।

रेडियम जैसे पदार्थों के लिए '**दीप्ति-सक्रिय-तत्त्व**' यह लम्बा शब्द भी नव निर्मिति ही जान पडती है।

'लगर' के लिए '**नौ-बंधन-कील**' भी नव शब्द है।

हिंदी में 'पाड़ा' (स० पु०) शब्द 'टोला' और 'मुहल्ला' अर्थों में है यथा : धोबी पाडा, मोची पाड़ा। अत: कुछ घरो के पृथक् समूह के लिए भी कवि ने '**पाड़**' शब्द लिखा है।

हिंदी में 'फुट्टैल'[2] वि० शब्द (स० स्फुट, पा० फुट+ऐल प्रत्यय) का अर्थ है 'पक्षी या पशु जो झुण्ड या दल से अलग हो गया हो'। 'हतभाग्य' अर्थ भी है। कदाचित् इन्हीं अर्थों मे कवि ने 'फुट्टफैयल' स० पु शब्द लिखा है। 'फुट्ट' यहा अलग अर्थ में ही है। अरबी मे 'फेल'[3] ('फेयल' — उच्चारण) शब्द 'कार्य' अर्थ में है। व्रजभाषा मे भी 'फैल'[4] स० पुं० शब्द काम, खेल और नखरा आदि अर्थों में चलता है। अत: 'फुट्ट' (अलग) और 'फैयल' (कार्य, स्वभाव) शब्दों को जोड़ कर अर्थ हुआ—अलग रहना ही जिसका कार्य स्वभाव हो। अवधी में भी इसी अर्थ में 'फुट्टइल' और 'फुट्टफायँ' शब्द-रूप है।[5]

'बिरात' स० स्त्री० शब्द भी ध्यान देने योग्य है। अवधी मे 'बिरति'[6] सं० स्त्री० शब्द (स० वि+रात्रि) बहुत रात, विलम्ब आदि अर्थों मे है। उर्दू गजल की एक पंक्ति है — 'रात बिरात हुई जाती है'। यहा भी 'बिरात' का यही अर्थ जान पडता है। लोक-भाषा मे भी इसी अर्थ में शब्द चलता है।

डॉ० रमेशचन्द्र जैन लिखते है — 'रात-बिरात' मे रात की भयकरता को ले

---

१. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड
२. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड
३. उर्दू-हिंदी शब्द कोश, 'मद्दाह', ४०६
४. व्रजभाषा सूर-कोश, डॉ० दीनदयाल गुप्त दे० 'फैल'
५. अवधी कोश, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', २७६
६. अवधी कोष, 'समीर', १६८

कर भय और अनिष्ट का भाव जुड़ा हुआ है जो केवल रात कहने से व्यक्त नहीं होता '।[१]

अंग्रेजी शब्द Curfew Order (सं० पुं०) के लिए ही कवि ने '**रात्रि-पर्यटन-बंधन-आज्ञा**' शब्द गढ़ा है।

नमक सत्याग्रह आंदोलन के नेता गांधी के लिए ही कवि ने '**लवण-चोर**' शब्द प्रयुक्त किया है। स्पष्ट ही है कि कृष्ण के 'माखन-चोर' सम्बोधन की यहां छाप पड़ी है।

'पाल' अर्थ में '**वात-वसन**' भी नया समासयुक्त शब्द है। डॉ० धर्मवीर भारती इन नव शब्द प्रयोगों के संबंध में लिखते हैं — 'पतवारों के लिए **क्षेपणियां** और पाल के लिए **वात-वसन** और पहले के छन्द में लङ्गर के लिए '**नौ-बन्धन-कील**' का प्रयोग देख कर बरबस डॉ० रघुवीर और पं० सुन्दर लाल दोनों को ही क्षमा कर देने को जी होता है — '[२]

'हू-हू' पक्षी का नाम भी नया ही है। 'हुदहुद'[३] पक्षी को ही कदाचित् कवि ने 'हू-हू' लिखा है। अंग्रेजी में इसे 'हूपी' कहते हैं। यूनान देश में यह 'इपौपस' और रोम में 'उपुपा' के नाम से प्रसिद्ध है। कहीं कहीं 'हुदहुद' को 'हजामिन' भी कहा जाता है।[४] पक्षियों को उड़ाने के लिए भी 'हू-हू' शब्द किया जाता है। सम्भव है जीवन की हलचल या नश्वरता प्रकट करने के लिए कवि ने ऐसा लिखा हो।

प्रिय शब्द

नवीन जी ने अपनी कविताओं में जिन शब्दों की आवृत्तियां की हैं उन से उन की रुचियों का अनुमान लगाया जा सकता है। कुछ शब्द ये हैं —

अंतरतर, अनवन्त, अजान अजिर, अथोर, अनन्तता, अनिगित, अनिकेतन, अनेकों अंतरहित, अमल, अमाप, अमित, अमिय, अवश, अहर्निशि, अहरह, उड्डीयन,

---

१. हिंदी समास-रचना का अध्ययन डॉ० रमेशचन्द्र जैन, १३३

२. आलोचना अप्रैल सन् १९५२, ९१

३. बृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी, ९८, दे० 'कुछ प्रसिद्ध पक्षी'

४. विश्वज्योति जनवरी सन् १९६८, लेख 'हुदहुद', श्री ब्रह्मस्वरूप पाठक, ४२

उपमानव, औघड़ दानी, कर्तव्य, किमि, कुंझटिका, गैल, चंग, चिर, जगद्व जगन्मोक्ष, झारी, टल्ला, टुक, टूक, तव, त्वदीय, दूजा, दूजी, दूजे, दूना, दूभर, न गंग, नैक, पग-थली, पांजनियां, पिरीते, पेखो, प्रकेत, प्राणार्पण, फाग, बिचारा, बि मघवा, मन्वन्तर, मम, मृण्मय, यदपि, रंच, रार, लपझप, लरजे, लेखो, लौं, वराचि विद्युन्मणि, विरथ, विलग, वैश्वानर, शतशत, श्वासोच्छ्वास, षण्ढ सश्लथ, संस्मर संस्मृति, सनेह, समुद, सलोने, सलौनी, सुपुरातन, सुरस, सेन्द्रियता हहर, हहराता।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि की कविताओं में अनुकरणवाचक शब्दों का बाहुल्य है।

यहां गोलों के लिए **सनसन** [१], तोपो के लिए '**धायें धायें**' [२] और बा के लिए '**सरसर**' [३] शब्द मिलते है। वाद्य-यन्त्रो मे घटे '**घनन घन**' [४] अं घड़ियाल '**घन घन**' [५] करते हुए घनघनाते है। घंटियां '**टुन टुन**' [६] और डम '**डिम डिम**' [७] करते हैं।

आभूषणों में कगन '**खन खन**' [८], नूपुर और जंजीरें '**झनझन**' [९] कर हैं। पांजनियां **खन खन, गुन गुन, छुन छुन, रुनझुन, रुनुन झुनुन** [१०] करती है।

---

१. हम विषपायी ... सिरजन की ललकारें मेरी, ४९ ' गोले बरसे **सनसन** '
२. कविता वही, ४९ — ' तोपें **धायें धायें** करती है '
३. रश्मि-रेखा, ढरक बहो मेरे रस-निर्झर, ४३ — ' इन बाणो की **सरसर** '
४. हम विषपायी .., जीवन-प्रवाह १६६ — ' जागरण घण्ट **घनन घन** '
५. वही, घड़ियाल बजाने वाले, ३५६ — ' **घन घन** करते '
६. रश्मि-रेखा, मेरे प्रियतम मेरे मगल, ८३ — ' घंटी की **टुन टुन** '
७. हम विषपायी ..., गरल पियो तुम, ४१६ — ' बजा **डिम-डिम-डिम** डमरू
८. क्वासि, तुम सत्-चित्-अवतार रे ८२ — ' कगनन की **खन खन** '
९. (क) रश्मि-रेखा, विहँस उठो प्रियतम तुम, १२० — ' नूपुर की **झनझन** मे
(ख) क्वासि, फागुन, ६७ — ' छ ई जजीरों की **झनझन** '
१०. (क) रश्मि-रेखा, रुन झुन झुन, ६७ — ' पांजनियाँ की **खनखन** मे '
(ख) रश्मि-रेखा, आई यह अरुणा सुकुमारी, १ — ' **रुनझुन गुनगुन** भ्रमरी
पांजनियां गुजारीं

इसी प्रकार कवि पशु-पक्षियों की आवाजों से भी शब्द-चित्रों का निर्माण कर सका है। पक्षियों के सामान्य स्वर हैं '**फिर फिर फिर-चिवँ चिवँ चिवँ**'[1] और '**चें-चुक चुक**'[2]। विशेष पक्षियों में काक की '**कांव कांव**'[3], तोतों की **टुंइँयँ टुंइँयँ, टें टें, ठेकं ठेकं-टिया**'[4] चिड़ियो की **चहचह**[5], कोयल की **कुहू-कुहू**[6], भृङ्ग, मधुकरी तथा मधुपों की '**गुनगुन**'[7], वानरो की '**किचकिच**[8] और सियारों का '**हुआ हुआ**'[9] शब्द देखते ही बनते हैं। **फरफर**[10]' **सनसन**[11] और **सरसर**[12] पंखों की ध्वनियां हैं।

परिवहन के साधनों में गाड़ी '**हचर-हचर-खड़भड़**'[13] आदि शब्द करती

---

१. क्वासि, गान-निरत मम मन-खग, ११६ '**फिर फिर फिर चिवँ चिवँ** बोल रहे'

२. रश्मि-रेखा, ठिठुरे हैं विकल प्राण, १२६ — '**चें चुक चुक** करती'

३. हम विषपायी ..., कांव कांव, ३२६ — '**कांव कांव** करो न कागा'

४. (क) रश्मि-रेखा, ठिठुरे हैं विकल प्राण, १२६ — '**टुंइँयँ टुंइँयँ** बोल रहे'

(ख) हम विषपायी, ..., पिंजर-मुक्ति-भुक्ति, ३१ 'व्यर्थ करो मत **टें-टें**'

(ग) वही, वही, ३० — '**शुक** जी **ठेकं ठेकं-टियां** लगे करने'

५. वही, ओ हिरनों की आखो वाली, ५७३ — '**चह चह** करता चला'

६. रश्मि-रेखा, फिर गूंजे नव स्वर प्रिय, ४६ — '**कुहू कुहू** कूक उठी कोयलिया'

७. (क) हम विषपायी, एकाकीपन, १० — '**गुन-गुन** उनके गुण गायन-रत'

(ख) रश्मि-रेखा, नयन स्मरण-अंबर में, ९ '**गुन-गुन** की गान-तान उलझी'

(ग) हम विषपायी ..., सुन्दर, ११८ — 'केवल मधुपों की ही **गुनगुन**'

८. विनोबा-स्तवन, महाप्राण के स्वन, २१ — 'वह **किच-किच** कर नर-वानर'

९. हम विषपायी ..., बुझ चली, १२४ — '**हुआ हुआ** कर उठे स्यार'

१०. (क) रश्मि-रेखा, ओ मेरे मधुराधर, १३ — '**फरफर** करती आई'

(ख) रश्मि-रेखा, मम मन पंछी, ४० 'मनोरथ पंख व्यजन सम **फरफर**'

११. क्वासि, उड्डीयमान, ३० — '**डैनों** की **सनसन** में'

१२. विनोबा-स्तवन, उड़ान, १३ — 'जिसके पंखों की **सर सर**'

१३. हम विषपायी ..., तुम हो ? ११४ — 'टूटी गाड़ी **हचर हचर-खड़-भड़-गड़-बड़-भड़-भड़**'

चलती है। वायुयान ' **घर्घर घर्घर** '[1] करते हुए घरघराते हैं।

यहां अग्नि ' **धू धू** '[2] करती धधकती और **धक-धक**[3], **भक-भक**[4] करती भभकती है। अंगारे भी ' **धक धक** '[5] करते दहकते है। लपटें **लपलप**[6] करती लपलपाती हैं। तारे और दीपशिखा ' **लपझप** '[7] करते टिमटिमाते हैं।

नद ' **हहर हहर हर** '[8] करते हैं। बादल ' **घहर घहर** '[9] करते उमड़ते-घुमड़ते और ' **झरझर** '[10] करते बरस पड़ते हैं। जल-वर्षण की कर्णहारी ध्वनियां हैं ' **रिमझिम रिम** '[11] और ' **रिमि रिमि झिमि** '[12]। यहां बूंदे ' **टप-टिपिर-टिपिर** '[13] करती टपकती हैं। अश्रु भी ' **टप टप** '[14] करते हैं। मेघ ' **झरर झरर झर** '[15] भी करते हैं।

---

१. वही, सिरजन की ललकारें मेरी, ४९ — ' **घर्घर घर्घर** वायुयान '
२. प्राणार्पण, प्रस्तावना, २ — ' धू-धू करती औ बलखाती '
३. हम विषपायी, धधक उठे अब औ वैश्वानर, १८० ' **धक-धक** धधक उठी ज्वालाए .
४. वही, वही, १७९ — ' उमडी ज्वाल लाल **भक-भक** कर '
५. प्राणार्पण, प्रस्तावना, २ — ' दहक उठे अगारे **धक-धक** '
६. (क) प्राणार्पण, प्रस्तावना, २ — ' लपटो की जिह्वाए लपकी **लप-लप** '
(ख) हम विषपायी .. , अरी धधक उठ, २८३ — ' लपटे **लप-लप** करती '
(ग) वही, खिचड़ी, ४३९ — ' **लप-लप** लपक रही ज्वालाए '
७. (क) रश्मि-रेखा, भीग रही है मेरी रात, ७९ — ' तारो की यह **लपझप** पांत '
(ख) रश्मि-रेखा, मेरे स्मरण-दीप की बाती, ३९ — ' यह **लपझप** बाती '
८. हम विषपायी ... , जीवन-प्रवाह, १६२ — ' **हहर-हहर-हर** यह जीवन-नद '
९. प्राणार्पण, द्वितीय आहुति, १७ — ' बादल **घहर घहर** '
१०. हम विषपायी ..., करुणा-घन, ३६ — ' **झर-झर-झर** बरसे करुणा-घन '
११. वही, बोल अरे दो पग के प्राणी, ८७ — ' वह **रिम झिम रिम** '
१२. वही, सतत प्रवासी, २१७ — ' **रिमि रिमि झिमि** तव करुणा बरसी '
१३. रश्मि-रेखा, फिर गूंजे नव स्वर प्रिय, ४५ — ' बूंदें **टप-टिपिर-टिपिर** टपकीं '
१४. वही, माघ-मेघ, ११० — ' टपक चले '
. हम विषपायी ..., उमँगे सावन के धाराधर, ५५६ — ' **झरर झरर झर** '

इन के अतिरिक्त लहरें और सलिलाएं '**कलकल**'[1] समीर **सनन**[2], **सन सन**[3], **सरसर**[4] करता है। '**सरसर**'[5] तो तृण-तरुओं की भी सरसराहट है। '**खर खर**'[6] और '**मर्मर**'[7] पत्तों की चरमराहट है। सड़कें '**सायं सायं**'[8] कर के सूनेपन को गहरा रही हैं।

अन्य विविध पदार्थों में '**अरर**'[9] किवाड़ो के खुलने और बन्द होने का स्वर है। '**चर-चर-चू-चू**'[10] कोल्हू के चलने का शब्द है। 'चू **चरर चरर**'[11] घानी की ध्वनि है। पनघट पर गागरें '**खन खन**'[12] करती खनकती हैं। चक्की '**घर्म्मर**'[13] करती गूजती है। डंडा और बेड़ियां '**घन घन**'[14] करती हैं।

अंग-उपांग में दाढ़ें **किट-किट**[15] करती किटकिटाती हैं।

---

१. रश्मि-रेखा, सजल नेह-घन भीर रहे, ४५ 'सुरधुनी आए **कलकल** ध्वनि करती'

२. वही, आई यह अरुणा सुकुमारी, १ — 'विचरा **सनन** समीरण'

३. वही, प्राण तुम्हारी हँसी लजीली, ४ — 'अनिल यह बहा झूमता **सन-सन**'

४. वही, ओ मेरे मधुराधर, १६ '**सर-सर-सर-सर** करता नाच उठा मधु-समीर'

५. हम विषपायी ..., करुणा-घन, ३६ — '**सर-सर** सिहर तृण-तरु-तन'

६. वही, बसंत, ३३३ — '**खर खर मर्मर** कर नीरस पत्रावलियां'

७. रश्मि-रेखा, क्यो उलझ मन, ११३ — 'द्रुम-दल का **मर्मर**'

८. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २२ — '**सायं सायं** करती है सड़कें'

९. क्वासि, प्रिय मम मन आज श्रान्त, ९४ — 'आवृत दिक्-काल-**अरर**'

१०. हम विषपायी, संशय-दैन्य, २२१ '**चर-चर-चूं-चूं** करि रह्यौ जीवन-कोल्हू'

११. वही, मृत्तिका की गुड़ियो के गीत, ५८६ — '**चूं चरर** घानी मे'

१२. (क) वही, तुम्हारा पनघट, २६६ — 'गागरियो की **खनखन**'

(ख) क्वासि, फागुन, ६७ — 'पनघट की **खनखन**'

१३. वही, फागुन, ६६ — 'चक्की के **घर्म्मर** में'

१४. वही, वही, ६७ – 'डंडा-बेड़ी की यह **घन-घन**'

१५. प्राणार्पण, अथ श्री प्रथम आहुति, ११ — 'दाढ़ें **किट-किट कर**'

'थम-थम '[१] पदों की थमक है। 'ता-थई-ता-थई '[२] नृत्य की ही तालमय ध्वनि है। शृगालों की भांति निशिचर भी 'हा-हा-हू-हू '[३] करते उछलते कूदते हैं।

१. हम विषपायी ..., कस्त्वं ? कोऽहं ?, १५४ — 'पद-निक्षेपों की थम्-थम्'
२. वही, आये नूपुर के स्वन झन-झन, १८५ — 'ता-थई ता-थई कर नाच उठे'
३. प्राणार्पण, तृतीय आहुति, २१ — 'निशिचर शृगाल-सम करते थे हा-हा! हू-हू'

श्री उदय शंकर भट्ट

संज्ञा

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ विवेचनीय संज्ञाएं इस प्रकार हैं —

ऊंचा [१], ऊंचे [२], कथकली [३], किजल्किनी [४], घरजानी [५], झरों [६], तनातनी [७], नीचा [८], पन्था [९],

---

१. विसर्जन, आज जगत् की उथल में, ८४ — 'गिरता क्यों जाता है ऊंचा'

२. (क) विसर्जन, वही, ८२ — 'ऊंचे की आंखों में जल में'

(ख) विसर्जन, वही, ८३ — 'कौन पुकार रहा ऊंचे को'

(ग) विसर्जन, विद्रोही, ११२ — 'ऊंचे के नीचे बेठे को'

३. (क) कणिका, मुक्तक, ९५, ५५ — 'कथकली बूंद नृत्य'

(ख) इत्यादि, प्राणो के छन्द, १०९ — 'महफिल में कथकाली का नर्तन'

४. इत्यादि, पर्वत : जीवन-प्रतीक, ९८ — 'किजल्किनी के प्राणमय रस-कोष'

५. मानसी, आडम्बर, ६० — 'ईश्वर के बल पर नर करता घरजानी मनमानी'

६. विसर्जन, उन्मुक्त, ८ — 'झर रहे निर्झर झरों में'

७. तक्षशिला, पंचम स्तर, १५३, — 'राज्य-नियंत्रण में न कही भी तनातनी थी'

८. विसर्जन, विद्रोही, ११२ — 'उठता क्यों जाता है नीचा'

९. (क) विसर्जन, मेघ गीत, ६९ — 'प्रेम पन्था में चले जो'

(ख) विजय-पथ, सर्ग ४, ५४ — 'सुनिश्चित जय पन्था के'

फ़ेनाचल [1], मरना [2], मेरापन [3], सिरदानी [4], हिमांगिनी [5]।

यहां 'ऊंचा' विशेषण का ही संज्ञा-रूप में नव प्रयोग किया गया है। अर्थ — 'धन, पद आदि की दृष्टि से समाज में ऊंचा स्थान रखने वाला व्यक्ति'।

'कथकली' (या कथकाली) सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'कथक जाति द्वारा विकसित नृत्य का एक प्रकार विशेष'।

संस्कृत में 'किञ्जल्क' पुं० शब्द का एक अर्थ 'कमल पुष्प' भी है। यहां 'किंजल्किनी' स्त्री० रूप है।

अवधी में 'घरजानी' वि० शब्द है। वहा घरजानी-मरजानी पद समास रूप में यह अर्थ रखता है — 'व्यक्तिगत व्यवहार' (जिसे दूसरे न जानें)। यहां यही अर्थ है।

यहां 'झरों' स० स्त्री० बहु० शब्द 'झाड़ियो' अर्थ मे है।

यहां 'तनातनी' स० स्त्री० शब्द नया है। अर्थ — 'खिचाव (Tension) झगडे, उपद्रव, गडबडी' इत्यादि।

'नीचा' वि० यहा संज्ञा रूप मे है। अर्थ — 'धन पद आदि की दृष्टि से समाज मे नीचा स्थान रखने वाला।'

'पन्था' स० पुं० शब्द का यहा अर्थ है — पन्थ, मार्ग। संस्कृत मे 'पथिन्' (अर्थ 'मार्ग') का प्रथमा विभक्ति एकवचन मे 'पन्थ :' रूप होता है। यहां विसर्ग लोप से वही ले लिया गया है।

'फेनाचल' पु० शब्द भी नया है। यहा अर्थ है — 'अचल के समान ऊंचा उठने वाली फेन'।

'मरना' अ० क्रि० यहा 'मृत्यु' अर्थ मे संज्ञा की भांति प्रयुक्त हुई है।

---

१. यथार्थ और कल्पना, अमृत-मथन, ७२ — 'आलोडन-उत्थित **फेनाचल**'
२. मानसी, कुसुम, २५ — 'जीवन देना, **मरना लेना**'
३. इत्यादि, नामकरण, ६० — 'मिट न जाये **मेरापन**'
४. यथार्थ और कल्पना, कविता २२, ४२ — 'प्रलय रोक लो बढ़ **सिरवानी**'
५. यथार्थ और कल्पना, कविता २५, ४७ — '**हिमांगिनी** किरीटिनी'

'मेरापन' भाव० संज्ञा यहां 'अहंत्व, अहंता' आदि अर्थों में है।

'सिरदानी' नवीन संज्ञा है। अर्थ — 'बलिदानी व्यक्ति' है।

'हिमांगिनी' स० स्त्री० शब्द यहां 'हिम समान अंगों वाली' इस नवीन अर्थ में जान पड़ता है।

संज्ञा-विकार

इस के अनेक उदाहरण हैं —

असत[1] (त्), आल्हाद[2] (ह्ल), आश[3] (शा), आशीष[4], आशीस[5] (शिस् या शिष्), उच्छवास[6] (च्छ्), उद्देश[7] (उद्देश्य), कन[8] (ण), किरन[9] (ण), कौस्तुभी[10] (भ) क्षन[11] (ण), गाथ[12] (था), चटान[13] (ट्ट), चिनौती[14] (चु), चेतस[15] (स्), चेतावनि[16] (नी),

---

१. मानसी, प्रकाश, ८ — 'और असत ऐसा मिश्रण'
२. युगदीप, कविता ३१, ५० — 'थका हुआ आल्हाद-हीन'
३. यथार्थ और कल्पना, साहित्य स्रष्टा : मैं, १५ — 'आश विगर्वित'
४. विजय-पथ, तृतीय सर्ग, ४३ — 'सदा आशीष देती'
५. तक्षशिला, स्तर ६, २११ — 'मस्तक पर कर रक्खा दे आशीस'
६. युगदीप, कविता ३२, ५४ -- 'उच्छवास दो मसार दो'
७. युगदीप, कविता ८, ८ — 'उगने का उद्देश रहा क्या'
८. इत्यादि, मानव के विजय-दीप, ६९ — 'बूंद के कन ले'
९. इत्यादि, कन्याकुमारी का ..., २९ — 'इधर समुद्र पर किरन लहर हुई'
१०. यथार्थ और कल्पना, अमृत-मंथन, ७४ -- 'सुरधेनु, कौस्तुभी-मणि'
११. (क) युगदीप, कविता १७, १८ — 'अभी हैं शेष जीवन-क्षन'
(ख) यथार्थ और कल्पना, कविता १६, २८ — 'सांसो के क्षन'
१२. (क) तक्षशिला, स्तर १, १२ — 'उस उजड़ी बस्ती की गाथ'
(ख) तक्षशिला, स्तर ६, २०६ — 'सुन्दर कहते फिर फिर गाथ'
१३. इत्यादि, कन्याकुमारी का ..., ३० — 'जल विभोर हो गई चटान'
१४. इत्यादि, तुम सजग साँस दो, २२ — ये चिनौती मुझे घार का गीत दे'
१५. इत्यादि, आवरण हटाओ, ११२ — 'मैं परम सृजन चेतस हूं'
१६. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू, ५८ — 'चेतावनि, झिडकी'

जगत[1] (त्), ज्वालामुख[2] (खी), तड़ित[3] (त्), तरंगिणि[4] (णी), द्ररिद्री[5] (द्र), दामिनि[6] (नी), दारिद[7] (दारिद्र्य), दिक[8] (क्) द्वारे[9] (र), नाँच[10] (नाच), नौकों[11] (नो), परिषद[12] (द्), पश्चाताप[13] (त्त), प्रान[14] (ण), प्रेयसि[15] (सी), बुदबुद[16] (बुद्बुद), भविष्यत[17]

---

१. (क) तक्षशिला, स्तर १, पंजाब प्रशस्ति, २ — ' जगत के तट-कूटों को '

(ख) तक्षशिला, स्तर २, ५८ — ' तुच्छ जगत '

२. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ३९ —' कर्मों के ज्वालामुख पर '

३. (क) तक्षशिला, स्तर, ४, ९७ — ' तड़ित की गति-सी त्वरा '

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, १९२ — ' तीव्र तड़ित का '

४. विसर्जन, गीत, ८० — ' यह तरंगिणि वेग से '

५. तक्षशिला, स्तर ६, १९७ — ' दरिद्री भिखमगे संसार के '

६. यथार्थ और कल्पना, कविता १६, २८ — ' दामिनि से छन '

७. तक्षशिला, स्तर ३, ६४ — ' गुणी में दारिद बसा हुआ है '

८. तक्षशिला, स्तर ६, १६३ — ' फैली दश दिक पूर '

९. इत्यादि, प्राणों के छन्द, १११ — ' द्वारे से वरदानी सब लौटाये '

१०. तक्षशिला, स्तर ६, २०६ — ' पाते नित्य नया सा नाँच '

११. विसर्जन, दूसरा चित्र, १६३ — ' तुम तलवारों की नौकों पर '

१२. (क) तक्षशिला, स्तर ६, १७१ — ' परिषद में निर्बाध '

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, २१७ — ' नृप आये परिषद में '

(ग) तक्षशिला, स्तर २, ३८ — ' देखा परिषद-गति को '

१३. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ४९ — ' दारुण पश्चाताप के '

१४. युग-दीप, कविता २९, ३९ — ' बेचैन प्रान '

१५. युग-दीप, कविता १३, १३ —' प्रेयसि का शृंगार '

१६. युग-दीप, कविता २४, २३ — ' बुदबुद आहों में '

१७. (क) अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, राम, ८२ — ' भूत, भविष्यत, वर्तमान '

(ख) वही, वही, ८२ — ' भविष्यत की चिंता में '

(ग) कणिका, मुक्तक ३६, २१ — ' भविष्यत का पद '

(त्), मंत्रि [1] (त्री), मंदाकिनि [2] (नी), महिने [3] (ही), माथ [4] (थे), युधजित [5] (युधाजित्), राजन [6] (न्), रिक्ष [7] (ऋक्ष), वक्षस्थल [8] (वक्षःस्थल), वन्हि [9] (वह्नि), विद्युत [10] (त्), विद्वान [11] (न्), विपति [12] (त्ति), विपद [13] (द्), विहगि [14] (गी), शीस [15] (शीर्ष या शीश), सम्राट [16] (ट्),

---

१. (क) तक्षशिला, स्तर, ६, १७३ — 'आज्ञा-पत्र मन्त्रि को सौंपा'

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, १७५ — 'मंत्रि वृद्ध ने'

२ (क) तक्षशिला, स्तर ४, १२६ — 'मंदाकिनि बहा दी'

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, २२३ — 'आनंदों की मदाकिनि'

३. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू, ५९ — 'धोती हर महिने फट जाती'

४. तक्षशिला, स्तर १, १३ — 'झुकते बड़े बड़ों के माथ'

५. तक्षशिला, स्तर २, ५२ — 'अयुत युधजित भड़के'

६. तक्षशिला, स्तर २, ४५ — 'तेजः पुंज बनोगे राजन'

७. विजय-पथ, सर्ग २, ३२ — 'एक रिक्ष मारने के हेतु'

८. (क) विजय-पथ, सर्ग ३, ३७ — 'वक्षस्थल की विशालता से'

(ख) युग-दीप, कविता ३०, ४६ — 'नभ का वक्षस्थल चीर'

(ग) यथार्थ और कल्पना, साहित्य-स्रष्टा, १५ — 'उन्नत वक्षस्थल'

९. (क) वही, कविता २१, ४१ — 'आंखों में प्रलय-वन्हि भर'

(ख) वही, आग की लपटों में, ६८ — 'वन्हि सब नभ ...'

१०. विसर्जन, चित्र के दो रूप, १०१ — 'मेरी जिह्वा विद्युत समान'

११. तक्षशिला, स्तर ७, २३९ — 'प्रजा-सखा विद्वान'

१२. तक्षशिला, स्तर ६, २०२ — 'हरिश्चन्द्र पर विपति पड़ी'

१३. तक्षशिला, स्तर ६, २२० — 'इन्हे विपद में जान'

१४. यथार्थ और कल्पना, कविता १२, २२ — 'विहगि चुप'

१५. तक्षशिला, स्तर २, ३६ — 'शीस झुका जाते थे'

१६. (क) तक्षशिला, स्तर ४, ११४ — 'सम्राट को प्रिय है सदा'

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, १८८ — 'क्या देते सम्राट'

सरित [१] (त्), सृष्टा [२] (स्र), सोत [३] (स्रोत या सोते), स्फुलिंग [४] (लिंग), हनुमान [५] (न्) और हानी [६] (नि)।

विशेषण

कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये हैं —

अमंदी [७], अरुक [८], कुहरित [९], चाराचोर [१०], छटाधूत [११], भावनावनी [१२], भूकंपी [१३], मयंकित [१४], मेघिनी [१५], लहरित [१६], वज्री [१७], श्मशानी [१८],

---

१. विसर्जन गीत, ७५ — 'लघु **सरित** मे महा सागर-सा'
२. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ३१ — '**सष्टा** के धैर्य'
३. विसर्जन, जागरण की ओर, १०६ — 'साहस दृढता के **सोत** चले'
४. (क) विसर्जन, जागरण की ओर १०७ — '**स्फुलिंग** उड़े'
   (ख) विजय-पथ, सर्ग १ १५ — '**स्फुलिंग** स्वय'
५. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, वैदेही ५९ — 'मुझे चाहिए **हनुमा**न के'
६. तक्षशिला स्तर ३, ६९ — 'मृत्यु प्रजा-हित **हानी**'
७. इत्यादि वर्षगाठ पर, ९८ — 'पख **अमंदी** उड रहे'
८. इत्यादि, तुम बुझाओ दहकती .., ७२ — 'मैं **अरुक** शक्ति का'
९. युग-दीप, कवि के जन्म-दिवस पर, ५९ — 'कौन **कुहरित** बन्ध धारा'
१०. इत्यादि यह मेरा मन ?, ११८ — '**चाराचोर** गाय की तरह'
११. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, १५ वह बिजली-सी **छटाधूत** सीता'
१२. इत्यादि कन्याकुमारी का , २९ — 'कल्पना सशक्त प्राण **भावनावनी**'
१३. कणिका, मुक्तक ९, ५ — 'कितने **भूकंपी** प्रलय पीसने दौड़े'
१४. इत्यादि. शिव : विवेक, ८५ — 'स्वर्गगा ... रही आ अकम **मंकित**'
१५. इत्यादि, राजघाट की समाधि पर ११६ — 'फूली कादम्बिनी **मेघिनी**'
१६. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू, ६१ — 'न्याय पताका **लहरित**'
१७. (क) अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ६ — '**वज्री** तन से थे टकराये'
   (ख) वही, राम, ७१ — 'सुदृढ़ तनु **वज्री**'
१८. इत्यादि, तुम बुझाओ दहकती , ७२ 'मृत्यु की सी **श्मशानी** धरा धूल हो'

सनाथित [1], सरोजी [2], स्वप्निल [3], हासी [4], और हिमानी [5]।

कुहरित, मयंकित, लहरित और सनाथित — इन सब विशेषणों में क्रमशः कुहर, मयंक, लहर और सनाथ प्रातिपदिकों में मत्वर्थीय 'इत' प्रत्यय जुड़ा है।

'**अमंदी**' वि० का अर्थ है — 'बहुत तेज़ उडने वाले, जो मंद गति वाले न हों'।

'**अरुक**' वि० का अर्थ है — 'बेरोक, जो रोकी न जा सके, दुर्निवार'।

'**ताराचोर**' वि० 'तारा चुराने वाली' अर्थ मे है।

'**छटाधूत**' वि० भी नया है। अर्थ 'हिलती, कांपती हुई छटा वाली'।

'**भावनावनी**' वि० में 'आवनी' हि० प्रत्यय 'कारिणी' या 'मयी' अर्थ मे जुड़ा है यथा डरावनी और भयावनी मे जुड़ता है।

'**भूकंपी**' में 'ई' प्रत्यय सम्बन्धार्थक है।

'**मेघिनी**' वि० भी नया ही है। यह 'कादम्बिनी' का पर्याय जान पड़ता है।

'**वज्री**' (सं० वज्रिन्) यहा 'इन्द्र' अर्थ मे नहीं है। अपितु 'वज्र समान कठोर' अर्थ मे है।

'**श्मशानी**' मे 'ई' प्रत्यय सम्बन्धार्थक है। '**सरोजी**' मे भी यही प्रत्यय है। '**स्वप्निल**' मे 'इल' मत्वर्थीय हि० प्रत्यय है। '**हासी**' (सं० हासिन्) का यहा अर्थ है — 'किसी पर हँसने वाला'।

'**हिमानी**' वि० मे जिस्मानी, बर्फानी, रूहानी की भांति 'आनी' हि० प्रत्यय की कल्पना कर ली गई है। यहा 'हिमानी' स्त्री० शब्द 'बर्फ का ढेर' अर्थ में नहीं है अपितु 'बर्फीला' अर्थ मे है।

---

१. तक्षशिला स्तर ४, ११३ — 'हम को **सनाथित** कीजिये प्रभु'
२. इत्यादि, आखिरी शाम, ६२ — '**सरोजी** पंखुड़ी के गीत'
३. विसर्जन गीत ७५ — 'आज **स्वप्निल** प्राण में'
४. कणिका मुक्तक १८, ११ — दुःख **हासी** चाँद शंभु मस्तक पर
५. इत्यादि, कौन वह बाजीगर ८९ 'रात के हाथ में **हिमानी** दीया दे गया'

विशेषण-विकार

अनुगामिनि [1] (नी), अनौखा [2] (नो), आक्रन्ता [3] (क्रा), आह्लादिनि [4] (नी), कीर्तिमान [5] (न्), कृतघ्नी [6] (घ्न), गतिमान [7] (न्), तेजस्वि [8] (स्वी), धर्षिणि [9] (णी), नादिनि [10] (नी), निष्ठावान [11] (न्), प्रलयी [12] (प्रलयंकर), प्रेयस [13] (स्), बलवान [14] (न्), भूतिमान [15] (न्) मतिमान [16]

---

१. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, वैदेही, ५८ — ' **अनुगामिनि** मन के पीछे '

२. विसर्जन, मेरा बचपन, ३२ — ' **अनौखा** सुघड खिलाड़ी '

३. तक्षशिला, स्तर ७, २४० — ' मारे ही **आक्रन्ता** भूपेश '

४. यथार्थ और कल्पना, कविता ३, ५ — ' रम **आल्हादिनि** हे '

५. विसर्जन, दूसरा चित्र, १०८ — ' हो दयाधाम, हो **कीर्तिमान** '

६ तक्षशिला, स्तर ६, १८८ — ' क्रूर **कृतघ्नी** को अधेपन '

७. इत्यादि, वर्षगाठ पर, ९४ — ' मैं उस मे **गतिमान** हू '

८. विजय-पथ, सर्ग ४, ६३ — ' **तेजस्वि** प्रखर बलधारी '

९. तक्षशिला, स्तर ३, ६७ — ' अरि दल **धर्षिणि** '

१०. इत्यादि राजघाट की समाधि पर, ११६ — ' कल**नादिनि** यमुना '

११. तक्षशिला, स्तर १, २९ — ' सत्यपरायण **निष्ठावान** '

१२ इत्यादि, मानव के विजय-दीप, ६९ — ' प्रकृति **प्रलयी** तिमिर सग म '

१३. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ३४ — ' **प्रेयस** है उस की ब्रह्म-सृष्टि '

१४. तक्षशिला, स्तर ४, १०२ — ' रण-निपुण **बलवान** थे '

१५. तक्षशिला, स्तर १, १ — ' **भूतिमान** भारत राकेश '

१६. (क) तक्षशिला, स्तर ४, १०२ — ' शासक महा **मतिमान** थे '

(ख) तक्षशिला स्तर ४ १२६ — ' **मतिमान** पुत्र अशोक ने '

(ग) तक्षशिला, स्तर ७, २३८ — ' नृप कनिष्क **मतिमान** '

(न्), महत [1] (त्), महान [2] (न्), मूर्तिमान [3] (न्) मूल्यवान [4] (न्), मृत्युजित [5] (त्), वरदायिनि [6] (नी), विभ्राट [7] (ट्), विराट [8] (ट्), विश्वासू [9] (सी), संहारिणि [10] (णी)

क्रिया

कुछ क्रिया-प्रयोग द्रष्टव्य है —

औछ [11],

---

१. (क) युग-दीप, कविता ३१, ५१ — ' कब जीवन किया **महत** '

(ख) अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, १५ — ' **महत** भ्रांति '

२. (क) तक्षशिला, स्तर १, १५ — नगर **महान** '

(ख) तक्षशिला, स्तर १, १९ — ' शब्द **महान** '

(ग) तक्षशिला, स्तर १, ३७ — ' वृत्तान्त **महान** '

३. (क) तक्षशिला, स्तर २, ३८ — ' वह **मूर्तिमान** है भरत नृपति '

(ख) तक्षशिला, युग युग का मेरा ... ११७ — ' अपरूप हो उठा **मूर्तिमान** '

(ग) अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, २७ ' वही तो **मूर्तिमान** '

४. विसर्जन, कंकाल, २५ — ' पर वही अंत में **मूल्यवान** '

५. इत्यादि, कवि-कर्म, ४ — ' एक बार कवि-कर्म **मृत्युजित** '

६. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू, ५७ ' प्रति नव मास सृजन **वरदायिनि** '.

७. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अन्तर्दर्शन, ७ ' **विभ्राट** विश्व को कर दूंगा '

८. (क) तक्षशिला, स्तर १, ३४ — ' हाटों में **विराट** सामग्री '

(ख) तक्षशिला, स्तर ६, १८८ — ' चिता हुई **विराट** '

९. तक्षशिला, स्तर ५, १२९ — ' भृत्य **विश्वासू** रखना '

१० यथार्थ और कल्पना, कविता ३१, ८१ — ' मैं **संहारिणि** लहरों से लड़ '

११. (क) इत्यादि, तुम सजग साम दो, १८ — ' मौत को **औछ** दूं '

(ख) इत्यादि, मन-विहँग, ६८ — ' फूलों के मद कुंद **औछ** जाती जो '

गसे [1], चीन्हता [2], भोई [3], रसे [4] और सनमानते [5]।

'**औंछना**' स० क्रि० देशज (हिं० पौंछना') प्रयोग है। **अर्थ** — 'निछावर करना, वारना या पोछना'।

'**गसना**' स० क्रि० (स० कषण) यहां अकर्मक रूप में है। **अर्थ है**— 'कसा या जकड़ा जाना'।

'**चीन्हना**' स० क्रि० यहा 'पहचानना' अर्थ में है।

ब्रज० में '**भोई**' [6] का अर्थ है — 'मग्न या लीन हुई'।

ब्रज० मे '**रसना**' (या रसनो) अ० क्रि० 'प्रफुल्लित या परिपूर्ण होना' अर्थ में भी है। यहा 'युक्त होना' अर्थ भी लग सकता है।

इसी प्रकार ब्रज० में '**सनमानना**' (या सनमाननो) स० क्रि० का **अर्थ** है 'आदर-सत्कार करना'।

क्रिया-विकार

कुछ विकारग्रस्त रूप ये हैं —

उट्ठे [7] (उठे), झिरना [8] (झरना), झिरनी [9], झिरने [10], झुंठना [11] (झु)

---

१. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ७ — 'बाहो मे **गसे**'

२. इत्यादि, अभी दूर मजिल, ८६ — '**चीन्हता** पथ सहारे सहारे'

३. कणिका, मुक्तका ३०, १८ — 'जिन्दगी यहीं पर उगी फली रस **भोई**'

४. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अंतर्दर्शन, ७ — 'मुख रुधिर प्रभा से **रसे**'

५. तक्षशिला, स्तर ६, २०४ — 'ममग्र भूप कभी **सनमानते**'

६. तुल० त्यों जिय रहै विषय-रस **भोइ** (सूर० १० — १२७)

७. कणिका, मुक्तक ७८, ३३ — 'आकाक्षा के दीप जल **उट्ठे**'

८. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ३८ — '**झिरता** रहता है'

९. वही, वही, ५० — 'पके धान-सी **झिरती**'

१०. युग-दीप, विक्रम संवत्सर, ६८ — 'बूद बूद **झिरते** देखा'

११. यथार्थ और कल्पना, कविता २१, ५० — 'ये झ: कर **झुंठला** देते'

देख [1] (दिखाई), धुंधियाया [2], नशाही [3] (नशाई या नसाइ), न्हा [4]
हा), न्हाई [5] (न) न्हाता [6] (न), न्हाते [7] (न), न्हाना [8] (न), न्हाया [9]
) न्हाये [10] (न), न्हिलाता [11], निहलाता [12] (नह) न्हिलाती [13] (नह),
ाने [14] (नह) रक्खा [15] (रखा),

(क) विमर्जन, गीत, ७९ — ' प्यालो मे मधु छलकता देख पड़ता '

(ख) पृष्ठ वही — ' मसार उड़ता देख पड़ता '

तक्षशिला, स्तर ६, १८० — ' क्रोध-धूम धुंधियाया '

तक्षशिला, स्तर ३, ७३ — ' सतोष अभाव नशाही '

(क) विजय-पथ, मर्ग १, २१ — दया से न्हा कर रक्षक '

(ख) यथार्थ और कल्पना , कविता ७, १० — ' धरा न्हा उठी '

युग-दीप, कविता १०, १० — ' रुधिर से न्हाई हुई '

युग-दीप, गीत ६, ६ —' मानव रुण्ड रुधिर मे न्हाता '

इत्यादि, कल्पना के चरण, ४४ — ' फुल न्हाते रहे '

मानमी, मानव, ४६ — ' पीडा के मागर मे न्हाना '

अनर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अनर्दर्शन, २९ — ' लहरों मे न्हाया-सा '

(क) इत्यादि, गीत, १२७ — ' दूध से न्हाये नयन मे '

(ख) विमर्जन, किशलय-कथा, २७ — ' प्राण न्हाये '

(ग) तक्षशिला, स्तर १, ९ — ' न्हाये म्लेच्छ '

(क) विमर्जन, प्रतिकूल, ४१ — ' प्राण न्हिलाता रहता '

(ख) वही वही, ६५ — ' विश्व न्हिलाता चल '

विमर्जन, ककाल, २५ — ' रस मे निहलाता '

इत्यादि, मन-विहँग, ६८ — ' दूध से न्हिलाती जो '

(क) विजय-पथ, सर्ग १, ३८ — ' न्हिलाने को धवलित '

(ख) अतर्दर्शन : तीन चित्र, वैदेही, ६२ — ' न्हिलाने के लिए '

तक्षशिला, स्तर ६, २११ — ' कर रक्खा दे आशीस '

लिक्खा[1] (लिखा), **लिक्खी**[2] (लिखी)

उर्दू क्रियाएं

उर्दू शैली की कुछ क्रियाएं ये हैं —

खोजा किए[3], **ढूढा की**[4] और **दौड़ा किया**[5]

उपसर्ग

अ, **अन्** (हि० अन), **दुर्**, **निर्**, **प्र**, **बे** (फा०) **सम्**, और **सु** उपसर्गों के नमूने क्रमश: इस प्रकार है --

अगीत, अतर्कित, अदेखा, अपदार्थ, अप्रभाव, अबझ, अमाप अरुक अलीन, अवाम, अविरुद्ध, अमुनिश्चित, अहीन।

अनकहा, अनकही, अनकहे, अनक्षर, अनचाहा, अनचीन्ही अनतिकाल, अनदेखा, अनरुक, अनस्पृश्य, अनागत, अनाहूत, अनुपमेय, अनौदार्य इत्यादि।

दुरन्त, दुरवस्था, दुराग्रह, दुराराध्य, दुर्घट, दुर्दमनीय, दुर्विचार, दुर्विदग्धी, दुर्विधि।

निरकुशता, निरर्थ, निरस्त्र, निरीह, निरुपाय, निर्घोष, निर्विषय, निर्वृति।

---

१. (क) विसर्जन, कंकाल, २५ — ' उस ने **लिक्खा** वह कागज '

(ख) युग-दीप, कविता १३, १३ — ' **लिक्खा मैं** ने चिर शिव '

२. (क) यथार्थ और कल्पना, साहित्य-स्रष्टा : मैं, १५ — ' जो **लिक्खी मैं** ने '

(ख) इत्यादि वर्षगांठ पर, ९३ -- ' जो **लिक्खी** थी ग्रन्थ में '

३. (क) यथार्थ और कल्पना, कविता २३ ८८ ' होश मेरे नक्शे ही **खोजा किए** '

(ख) इत्यादि, कल्पना के चरण, ४३ — ' पंथ **खोजा किए** '

४. विसर्जन, नव निर्माण ५१ — ' **ढूढा की** मेरी बेहोशी '

५. इत्यादि, जिंदगी भर चला .. , ५१ — ' काफिला **दौड़ा किया** दिन रात '

प्रकम्प, प्रचय, प्रज्वाल, प्रपीड़न, प्रपूत, प्ररोम, प्रवेग और प्रहस्त।

बेअंत, बेकार, बेगुनाहों, बेजार, बेदेखे, बेबोले, बेमानी, बेहाल।

समधिष्ठित, समभीष्ट, समाख्यान, समुद्भव, समुन्मत्त, समुपाय, समुपासक, समुपेक्षित, इत्यादि।

सुअवसर, सुगौरव, सुचन्द्र, सुचतुर, सुचिर, सुबाहुबल, सुमध्य, सुमहान, सुसंतुष्ट, सुसम्मत, सुहास, सुहित।

लिंग

इन हिं० स्त्री० शब्दों को कवि ने पुं० रूप में लिखा है — उठान [1], खाद [2] ज्वार [3] और डोर [4]। व्रजभाषा मे भी प्राय: ये शब्द स्त्री० ही है।

जिन हिं० पु० शब्दो को कवि ने स्त्री० मे लिखा है उनके उदाहरण ये हैं —

अभिलाष [5], इंतज़ार [6], कंदुक [7], कुंज [8], ज्वालामुखिया [9], धाता [10],

---

१. मानसी, आकाश, ३६ — 'तेरे मंजुल मृदु **उठान** पर'

२. तक्षशिला, स्तर ८, ९५ — 'डाला **खाद** मिथ्या मोह का'

३. कणिका, मुक्तक ८७, २६ — 'जागृति के उठते **ज्वार**'

४. विसर्जन, २० — 'इधर व्योम के जल **डोरों** से'

५. (क) विसर्जन, उन्मुक्त, ८ — 'खिल रही **अभिलाष** बाँकी'

(ख) विसर्जन, विसर्जन, १८ — 'हिमालय-शृंग-सी **अभिलाष**'

(ग) विसर्जन, किशलय-कथा, २९ — '**अभिलाष** आसू बन ढली थी'

६. इत्यादि, आवरण हटाओ, ११३ — 'करना भविष्य है **इन्तज़ार** आशा की'

७. विसर्जन, चित्र के दो रूप, १०० — 'उत्थान-पतन की **कंदुक**'

८. तक्षशिला, स्तर ५, १३१ — 'प्रफुल्लित हुई मंजु **कुंजें**'

९. (क) विसर्जन, ६२ — '**ज्वालामुखियां** है दबी हुई'

(ख) विजय-पथ, सर्ग ५, ७० — 'दो **ज्वालामुखियां** हों फूटी'

१०. यथार्थ और कल्पना, कविता २, ४ — 'ज्ञान, शक्ति, बल की **धाता** तू'

साकी [1] और साख [2] ।

इन में अभिलाष, ज्वालामुखी और धाता शब्द संस्कृत, हिं० और व्रज० में प्राय: पुं० ही हैं । कंदुक और कुंज संस्कृत मे पुं०, नपुं० तथा हिंदी में पुं० है । इन्तजार और साकी अरबी तथा हिं० में पुं० शब्द ही हैं । 'साख' हिं० और व्रज० में उभय लिंगों में ही चलता है ।

वचन

एकवचन में प्रयुक्त कुछ शब्द संदिग्ध स्थिति में हैं — यथा आंख [3], किन्नरकंठी [4], प्राण [5], बिजली [6], और सांस [7] । 'प्राण' शब्द तो सदा बहुवचन में ही लिखा जाता है । अन्य शब्दो को भी बहुवचन की अपेक्षा एकवचन में ही रहने दिया गया है ।

'अनेकों' [8] वि० बहु० व्याकरण-सम्मत नहीं है ।

---

१. युग-दीप, कविता ९, ९ — 'सुनो पुकार रही है साकी'

२. तक्षशिला, स्तर ६, १७७ — 'छोड़ो उसकी साख'

३. कणिका, मुक्तक १०३, ५९ —'दो आंख है, दो कान'

४. तक्षशिला, स्तर १, २२ — 'गाती किन्नरकंठी राग-विहाग'

५. (क) मानसी, कुसुम, २४ — 'स्व' प्राण का प्राण पिघलता'

(ख) विसर्जन, किसान, ११९ — 'मेरा संताड़ित प्राण गरल'

(ग) मानसी, विवेचना ६६ — 'हंस रो कर अपना प्राण भर रहा'

६. कणिका, मुक्तक ९, ५ — 'कितनी बिजली की कड़क'

७. युग-दीप, कविता १३, १३ — 'शैशव मे दो सांस मिली थी'

८. (क) विसर्जन, मैं पथिक अवरुद्ध पथ, ९५ — 'दूत मुंह बाये अनेकों'

(ख) वही, वही, ९४ — 'प्यास क्यो उस मे अनेकों'

(ग) वही, वही, ९४ — 'एक मैं आशा अनेकों'

(घ) तक्षशिला, स्तर, ७, २२४ — 'किए अनेकों सुत अशोक ने युद्ध'

(ङ) ुग-दीप कवि के जन्म-दिवस पर, ५५ — 'यथामति सब ही अनेकों'

संधि

कुछ **दीर्घ स्वर संधियां** ये है — कर्तव्यालम्बन, चरणांकन, पश्चिमाभिमुख, विद्यानुराग और स्फुरिताधर।

गुण संधियां भी हैं आनंदोत्सव, कल्पकल्पोत्थान, प्रबलेच्छा, भविष्योज्ज्वल, व्यापारोन्नति, शास्त्रेच्छा, श्वासोच्छ्वास, सिंधूत्पन्न, सूर्योदय, हर्षोत्कर्ष और ह्रासोल्लासों।

कुछ **व्यंजन संधियां** ये हैं — अशेषच्छवि, छविच्छटाएं, सन्न्याय, निजच्छवि, और स्वच्छच्छवि।

कतिपय **विसर्ग संधियां** द्रष्टव्य है — अन्तस्तरो, छदोमय, तपोनिधि, तमोविकार, धनुर्ज्या, धनुर्विद्या, नभोमंडल, मनोगिरि, मनोभाव, मनोभूमि, मनोमय, मनोव्याधि, यशोगाथा, यशोगान, यशोग्रंथियां, यशोमय।

कवि को मनः, यशः की संधिया प्रिय हैं।

समास

कुछ **सम्बंध तत्पुरुष समास** देखिये —

अश्रु-नदी, मोक्ष-प्राप्ति, रण-आग, विजय-वासना, विष-ग्रंथि, सर्प-दर्प, सिक्ख-धर्म, स्वर्ग-द्युति, स्वर्ण-छत्र और हिंदू-धर्म।

करण तत्पुरुष समास भी है यथा पुष्प-सुगंधित, रागिनी-विह्वल, विपत्ति-ग्रस्त विष-दग्ध।

कुछ **द्वन्द्व समास** ये है — अनुभव-विवेक, गति-यति, ज्ञान-कर्म, धर्म-कर्म, **पश्चिम-उत्तर**, रवि-शशि।

कुछ **कर्मधारय समास** ये हैं—आशा-प्रासाद, काल-दीमक, काल-नाग, कीर्ति-पर्वत, जीवन-भूधर, नक्षत्र-दीप, पाप-व्याध, **पीड़ा-पर्वत**, यश-परिमल, **यौवन-कंगूरों**, विरह-सागर, शोक-तरु, **समुद्र-वीणा** और सौंदर्य-उदधि।

'स' शब्द जोड़ कर बने हुए **अव्ययीभाव समास** भी है यथा — सकौतुक, सदल, सलज, सशरीर, सस्मित, साक्षर, सालकारिक, सोत्कठ इत्यादि ।

शब्द-लोप

का[1], **की**[2], **पर**[3], **में**[4] और **से**[5] शब्द अनेक वाक्यो में लुप्तप्राय से जान पड़ते है ।

अन्य शब्द-विकार

कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है —

ऽनुरक्ति[6] (अनुरक्ति), ऽनुराग[7] (अनुराग),

---

१. तक्षशिला, स्तर ६, १८६ — 'है नानापन (**का**) भान'
२. मानसी, दिव्य दृष्टि, ४९ — 'मा (**की**) छाती में चिपटा शिशु'
३. (क) मानसी, मानव, ४३ — 'यम के सिर (**पर**) पग दिए खड़ा हू'
(ख) इत्यादि, कवि, ७ — 'कगार (**पर**) खड़े तुम को पुकारता हू'
(ग) अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, २५ — 'यह कौन नाचता सिर (**पर**) मेरे'
४. (क) युग-दीप, रात की गोद मे, ४३ — 'ले हृदय (**में**) आग'
(ख) युग-दीप, कवि के जन्म-दिवस पर, ५९ 'काल के गुरु गर्भ (**मे**) सोती'
(ग) अंतर्दर्शन : तीन चित्र, राम, ६७ — 'प्राप्य मानव-चेतना के मन (**में**) समाया है'
५. इत्यादि, कौन वह बाजीगर, ९० — 'पर्वत की आख खुशी (**से**) आसू भर लाती है'
६. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ११ — 'जीने की **ऽनुरक्ति**'
७. युगदीप, कविता २९, ३९ — 'झूठाऽनुराग'

अहर्निषि [1] (अहर्निश), ऽऽगया, [2] (आ गया), आधीन [3] (अधीन), ऽऽयुर्वेद [4] (आयुर्वेद), कदाचित [5] (त्), कयी [6] (कई), चतुर्दिक [7] (क्), मुझी [8] (मुझ ही), यदपि [9] (यद्यपि), शनै [10] (शनैः), हमीं [11] (हम ही), हीने [12] (हीन)।

---

१. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ४५ — ' **अहर्निशि** सीता सुधा '
२. तक्षशिला, स्तर २, ५४ — ' प्रदेशा**ऽऽगया** अन्त मे '
३. तक्षशिला, स्तर ७, २३१ — ' धरा को किया निखिल **आधीन** '
४. तक्षशिला, स्तर ५, १५८ — ' धनुर्वेद सपूर्ण तथा**ऽऽयुर्वेद** '
५. तक्षशिला, स्तर २, ४७ — ' लज्जा उन्हे **कदाचित** '
६. इत्यादि, आखिरी शाम, ६३ — ' नयी नयी **कयी कयी** रेखाए बनने दो '
७. (क) तक्षशिला स्तर १, २० — ' **चतुर्दिक** औघट घाट '
(ख) तक्षशिला, स्तर १, २७ — ' माला पहिने हुए **चतुर्दिक** '
(ग) तक्षशिला, स्तर १, ३४ — ' विस्तृत थे बाजार **चतुर्दिक** '
८. (क) युग-दीप, पांच गीत, ५ — ' अंत तेरा है **मुझी** में '
(ख) अंतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अंतर्दर्शन, ५ — ' **मुझी** से धन्य ... **मुझी** मे साभिमान '
९. (क) तक्षशिला, स्तर ४, ९९ — ' **यदपि** आशका पराजय की '
(ख) युग-दीप, कविता २३, २८ — ' चलना **यदपि** अधेरा '
(ग) इत्यादि, शब्द और अर्थ, १४ — ' **यदपि** मानता रहा तुम्हे '
(घ) इत्यादि, युग-पुरुष से, ३७ — ' **यदपि** पोषण '
१०. यथार्थ और कल्पना, कविता २५, ४८ — ' द्वीप-सा **शनै शनै** '
११. (क) विजय-पथ, सर्ग ५, ७५ — ' क्या **हमीं** न श्रेष्ठ ... '
(ख) अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ११ — ' नट का आरभ **हमीं** से है '
(ग) कणिका, मुक्तक ८७, ५२ — ' **हमीं** से काम लेते है '
१२. तक्षशिला, स्तर ४, १४४ — ' चमू चामर से **हीने** '

नव-शब्द

भट्ट जी ने अनेक नव शब्दो का स्वय निर्माण भी किया है। कुछ शब्द पहिले से प्रचलित हैं। सब मिले जुले उदाहरण इस प्रकार हैं —

अन्तिकिनी [१] (एन्टिगोनस या गोन्ट्स), अन्त्यलकादश (एन्टियाक्लिडस), अप्पयदास [२] (एपोलोडोटस), अभिधागिरिश (एब्डागसेज), अर्काश्रया [३] (आर्केशिया), अजितयश (आशेज), अलक्षेन्द्र, अलिसुन्दर (अलेक्जेंडर), कल्हारों [४] (कल्हारो). गाण्डीव पुरुष (गोडाफ़ोरस), जयकर अप्पयदास (यूक्रे टाइडस), तुरुमय [६] (टालमी), तुरुष्क [७] (इजिप्ट), दात्तामित्रि [८] (डेमेट्रियस), पयोनद [९] पलबाहें [१०], पवित्रतावादी [११], पौरुष [१२] (पोरस), फणिशिरवाश्थ [१३] (फनीशिया गांधार का एक प्रदेश), फलाकायेश (कजुला काफसस). भीमकायेश, (बीमा काफिशस), मिलिन्द (मनाण्डर), विविधालवणिका [१४] (बेबीलोनिया), श्रोत्रियमेध (मोतीमेंधस), समरजीत [१५] (समरजित्)

---

१. तक्षशिला, स्तर ६ १६६
२. तक्षशिला, स्तर ७, २२६ — ' उस के वशज अप्पयदास प्रखर '
३. तक्षशिला, स्तर ४, ९७
४. तक्षशिला, स्तर ६, १६६
५. (क) विजय-पथ, सर्ग ३, ३६ — ' कल्हारों के सरल हास्य पर '
(ख) इत्यादि, तथागत के प्रति, ९२ — ' कल्पना कल्हार सुरभित '
६. तक्षशिला, स्तर ६, १६६
७. तक्षशिला, स्तर ४, ९७
८. तक्षशिला, स्तर ७, २२५ — ' उन में दात्तामित्रि बना था '
९. यथार्थ और कल्पना, कविता एक, २ — ' मैं पूर पयोनद का मद '
१०. अतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ८ — ' काल आज लम्बी पलबाहें '
११. मानसी, कटु सत्य, ५७ — ' पवित्रतावादी न सही पर '
१२. तक्षशिला, स्तर ४, ९१ — ' पौरुष अधिप पर किया धावा '
१३. तक्षशिला, स्तर ४, ९७
१४. तक्षशिला, स्तर ४, ९७
१५. अंतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, १८ — ' कुभकर्ण से समरजीत '

इन में से अधिकांश नाम ग्रीक नामों के संस्कृतीकरण हैं।

प्रिय शब्द

कवि के प्रिय शब्द ये हैं —

अट्टहास, अनधीत, अनवरत, अबुझ, अभिलाष, अवाम. अविचार, अविरुद्ध, अविवेक, अश्लथ. आस्मान, उच्छल, उज्ज्वल, उद्धूम, उन्मादी. खूंदना, कल्हार, गत (गतगर्व, गतप्रभ, गतमद इत्यादि), चतुर्दिक्, छार, जगत्, ज्वालामुखियां, झटिति, टुक, तदनु, धाता, निगूहित, निरपराध, निर्घोष, निस्वन, नीके, पलांश, प्रत्यक्षर, प्रपंच, बड़वानल. भस्मसात् महान्. मुद्रांकित, यदपि, रण-ध्वनि, रूरे, ललाम, विचुम्बित, विराट्, शीस, सद्धर्म. सरोजी, सानन्द, सुकोमल, सुघड़, सुनिश्चित, स्फुलिंग, स्मय, स्वर्णिल, हिलकी और हुंकृति।

ध्वन्यात्मक शब्द

भट्ट जी की ध्वनि-चेतना भी पर्याप्त समृद्ध है।

निर्झर, नीर और हिल्लोल की 'कलकल'[1], सरिता की कलकल झलझल[2] झरने की कुलकुल कुलबुल[3], झर-झर[4] ध्वनि यहा भी है। 'झर झर'[5] तो गागर

---

१. (क) (i) मानसी, निर्झर, ३० — 'निर्झर कलकल ...'
(ii) मानसी, रहस्य, २४ — 'स्वर कलकल'
(ख) तक्षशिला, स्तर १, २१ — 'कलकल करता पल पल नीर'
(ग) युग-दीप, कविता २४, २३ — 'हिल्लोल लजीली की कलकल'

२. मानसी, सरिता, ३८ — 'मैं कलकल झलझल बहती हू'

३. विजय-पथ, सर्ग ३, ३५ — 'झरने कुलबुल कुलबुल करते'

४. (क) विजय-पथ, सर्ग ३, ३४ — 'झरने झरझर'
(ख) यथार्थ और कल्पना, कविता एक, २ — 'झरने झर झर झर चलते'

५. (क) इत्यादि, शरद, ७४ — 'झर झर उड़ेलता रस-गागर'
(ख) इत्यादि, व्यापारी, २३ — 'पुष्प झर झर कर'

और पुष्प के झर कर गिरने की भी ध्वनि है। निर्झर का एक स्वर '**छहर छहर**'[१] भी है।

मेघ यहां **घनन घनन, झम झम**[२] करते बरसते है। बूदो की **रिमझिम**[३], लहरो की **छप् छप्**[४], सागर-जल की **तड़तड़-कड़-कड़**[५] यहा भी है। तारक **झल झल**[६], चाँद **चमचम, झलमल**[७], दीपकों की **टिम-टिम**[८] आसुओ और मेघ-बूदो की **टप-टप**[९], गगा, धार, निर्झर और रथ की '**घर्घर**'[१०], आभा और हीरों की **झिलमिल**[११], उदधि और सुरा की **छलछल**[१२] यहा भी है। कम्पन का

---

१. मानसी, निर्झर, २९ — '**छहर छहर** कर बहते है'

२. (क) इत्यादि, शब्द और अर्थ, १४ — 'वह **घनन घनन घन** का गर्जन'
(ख) इत्यादि, प्राणो के छन्द, ११० — '**झम झम झम झम** मेघो के गर्जन'

३. यथार्थ और कल्पना, कविता एक, २ 'बूदो के नर्तन मे जीवन की **रिमझिम**'

४. इत्यादि, पर्वत : जीवन-प्रतीक, ९९ — 'मेरी लहर की **छप्-छप्**'

५. यथार्थ और कल्पना, अमृत-मंथन, ७३ — 'महाशब्द मे **तड़ तड़ तड़ कड़ कड़**'

६. इत्यादि, पर्वत : जीवन-प्रतीक, ९९ — '**झल-झल** लगे कँपने'

७. (क) इत्यादि, शरद, ७३ — 'चदा का तिलक दिये **चमचम**'
(ख) इत्यादि, प्राणो के छन्द, ११० — 'जो चन्द्र ... **झलमल झलमल**'

८. इत्यादि, ये दीपक, १०४ — '**टिमटिम टिम टिम**'

९. (क) विसर्जन, प्रारंभ, ६ —'आसू बन कर **टप-टप** बहना'
(ख) विसर्जन, समन्वय, ४१ — '**टप-टप** हृदय बहा कर'
(ग) इत्यादि, ये दीपक, १०५ — 'कुल्हियों मे **टप-टप** कर के'

१०. (क) विजय-रथ, सर्ग २, २३ — 'गति **घर्घर** चलती जिस मे हो'
(ख) इत्यादि, प्राणो के छन्द, ११० — '**घर्घर** घहराती मधु-धारो मे'
(ग) इत्यादि, शिव: विवेक, ८६ — 'नव स्वर-**घर्घर**'
(घ) यथार्थ और कल्पना, कविता ३१, ८१ — 'रवि का **घर्घर** रथ'

११. (क) मानसी, आकाश, ३६ — '**झिलमिल झिलमिल** आभा'
(ख) मानसी, प्रारभ १ — '**झिलमिल** हीरे'

१२. (क) मानसी, जिज्ञासा, १६ — 'महोदधि **छलछल** भरता'
(ख) विसर्जन, विद्रोही गीत, ७१ — 'गिरा करती सुरा **छल छल**'

ब्द है **डगमग, थर थर**[1]। घूट का स्वर है **गटागट**[2]। पत्रों और समीरण का **मंर**[3], किसलय-दल की **चुर मुर**[4], धूल की **लपझप**[5], तरुओं की **हहर**[6], ईंटों ौर तूफ़ान की **तड़ातड़**[7], पीसने और कवच टूटने की **तड़तड़**[8] भी देखने योग्य हैं। ज़ीर और तूफान **झनझना**[9] उठते हैं। तिलक **चमचम**[10] चमचमाता है। चिताएं **टचट**[11]

. (क) यथार्थ और कल्पना, कविता ५. ७ — ' **डग मग डग मग** भूधर डोले '

(ख) विसर्जन, विद्रोही, ११५ — ' कांप विश्वास गये सब **थर-थर** '

(ग) तक्षशिला, स्तर १, २० — ' पवन विकम्पित अविरल **थर-थर** '

(क) कणिका, मुक्तक ९८. ५७ — विष भी **गटागट** पिया '

(ख) यथार्थ और कल्पना' कविता एक, २ — ' मद **गटागट** करके पी जाता '

. (क) इत्यादि, आखिरी शाम, ६२ — ' **मर्मर** करते है पत्र '

(ख) विसर्जन, किसलय कथा, ३० ' **मर्मर** में हंसो ' ... ' **मर्मर** में सुलाने '

(ग) इत्यादि, पर्वत : जीवन-प्रतीक, ९८ — ' समीरण का शुष्क **मर्मर** सुन '

इत्यादि, यह शरद का हास, १०७ — ' **चुर-मुर** म्लान दल की '

. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू ५५ — ' **लपझप लपझप** धूल उड़ाता '

. विजय-पथ, सर्ग ३, ३९ — ' तरुओं के तन गिरे **हहर** कर '

. (क) यथार्थ और कल्पना, आग की लपटों में, ६४ ' ईंटे बरसात की **तड़ातड़** '

(ख) इत्यादि, ये दीपक, १०५ — ' **तड़ातड़** तूफानों से '

(क) इत्यादि, राजघाट की, ११७ -- ' पीस रहा अपनी दाढ़ों में **तड़ तड़ तड़** '

(ख) विजय पथ, सर्ग ४, ५१ — ' टूट उठा हो **तड़-तड़** कवच देह का '

. (क) विसर्जन, विजयादशमी, १२६ — ' सदियों की जंजीर **झनझना** '

(ख) विसर्जन, जागरण की ओर १०६ — ' **झनझना** उठें तूफान '

. इत्यादि शरद ७३ — ' तिलक दिये **चमचम** '

. युग-दीप, कविता २६, ३३ — ' चिता का **चट-चट** स्वर '

करके **चटखतीं** और जंजीरें **खड़खड़ा** [1] कर टूटती हैं। जिह्वाएं और ज्वालाएं **लपलपाती** [2] हैं। **धुक-धुक्** [3] और **धू-धू** [4] जलने का शब्द है। गाना गुनगुनाया जाता है **गुन-गुन** [5]। यंत्र बोलते हैं—**खट खट-ठक-ठक** [6]।

तारे और शस्त्र झनझनाते हैं **झनझन** [7]। शर चलते हैं **खर-खर** [8], **सन सन** [9]। गोलियां **ठाँय ठाँय, धाँय धाँय** [10] और **धाँय धाँय, सन-सन** [11] करती चलती हैं।

मक्खियाँ **भन-भन** [12], बछड़े **रँभा-रँभा** [13] और नाग **हिस्-हिस्** [14] करते है।

इनके अतिरिक्त '**कड़-कड़**' [15] करके कपाल खाये जाते हैं। '**खिलखिल**' [16]

---

१. विसर्जन, विजयादशमी, १२८ — 'जजीरे **चटचटा** उठेगी'

२. (क) विसर्जन, विद्रोही, ११४ — '**लपलपाती** जिह्वा से'

(ख) विसर्जन, मैं पथिक अवरुद्ध पथ, ९५ — 'यह **लपलपाती** ज्वाला'

३. मानसी, प्रश्न, १२ — 'सुन्दर यौवन **धुक-धुक** जलते'

४. युग-दीप, विक्रम सवत्सर, ७० — '**धू धू** कर के महानाश है जाग उठा'

५. (क) तक्षशिला, स्तर ५, १३१ — 'लगे न चने **गुन गुन** गा कर'

(ख) मानसी, कुसुम, २४ — '**गुन गुन** गाने वाला'

६. इत्यादि, युग पुरुष से, ३७ — 'यन्त्रों की **खट खट ठक ठक** मे'

७. (क) तक्षशिला, स्तर ६, १९० — 'यद्यपि **झनझन** तार'

(ख) तक्षशिला, स्तर ३, ६९ — 'शस्त्रों ने **झनझन तार**'

८. तक्षशिला, स्तर, २, ५३ — 'शर तरकस से **खर-खर** करते'

९. विजय-पथ, सर्ग ५, ६८ — '**सन्-सन्** शर छोड़ रहे थे'

१०. यथार्थ और कल्पना, आग की लपटो मे, ६६ — 'बन्दूक **ठाँय ठाँय धाँय धाँय**'

११. वहा, वही, ६४ — '**धाँय-धाँय सन-सन** गोलियो की मार'

१२. यथार्थ और कल्पना, आग की लपटो मे, ६७ — 'मक्खिया हा बैठी **भन-भन**'

१३. विजय-पथ, सर्ग ३, ३४ — 'भरे चौकड़ी **रंभा रंभा** कर'

१४. इत्यादि, शब्द और अर्थ, १३ — 'नाग जो **हिस् हिस्** करता'

१५. अंतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अतर्दर्शन, ८ '**कड़-कड़** कर खाता होगा कपाल

१६. विसर्जन, किशलय-कथा, २८ — 'मदभरी-सी हँसी **खिलखिल**'

करके हँसा जाता है। कलम घिसता-चलता है टिप्-टिप् [1]। झाड़ी 'फुड़फुड़ा' [2] कर रह जाती है। चरचरा [3] कर पर्यंक (पलग) चरमराते हैं। प्रासाद धमधमा [4] उठते हैं। स्वर्गंगा की हर-हर-हर-हर [5] भी देखने योग्य हैं। शरीर 'हरहरा' [6] कर काँप उठते हैं।

अत: इस कवि ने भी अनुकरणवाची शब्दों के प्रति अपनी जागरूकता का परिचय दिया है, ऐसा कहा जा सकता है।

---

१. यथार्थ और कल्पना, दफ्तर का बाबू, ५८ 'टिप् टिप् करता कलम घिसता'

२. विजय-पथ, सर्ग ३, ३५ — 'उधर फुड़फुड़ा कर झाड़ी भी ...'

३. अंतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अंतर्दर्शन, १७ — 'चरचरा गया पर्यंक'

४. वही, वही, १७ — 'धमधमा उठा प्रासाद'

५. इत्यादि, शिव: विवेक, ४६ — 'पंथ-छांटती हर-हर-हर-हर'

६. अंतर्दर्शन : तीन चित्र, रावण का अंतर्दर्शन, १७ 'हरहरा उठा कंपित शरीर'

श्री सुमित्रा नन्दन पंत

संज्ञा

कवि पंत के काव्य में कुछ उल्लेखनीय संज्ञाएं इस प्रकार हैं :—

अग्निबीज [1], अजानता [2], अतितम [3], आशी [4], उजागरिया [5], उपनर [6], ऊब-डूब [7], कटनी [8], कटिनी [9], कलपने [10], कदिरा [11],

---

१. युगपथ, युगान्तर, जागरण, १०२ — ' किरणें जिसमें अग्निबीज बो . . '

२. पल्लव, बालापन, १८० — ' वह अजानता की सुंदरता '

३. सौवर्ण, ६० — ' अति से अतितम हूं '

४. मानक हिंदी कोश — ' मुझ अचलवासी को तुमने शैशव में आशी दी '

५. स्वर्णधूलि, मानसी, १५१ — ' हम नवयुग की ज्योति उजागरियां '

६. स्वर्णकिरण, अशोक वन, १६६ — प्रभुपद अनुचर उपनर वानर '

७. कला और बूढ़ा चांद, भाव-रूप, ७३ — ' चांद ऊब-डूब कर रहा है '

८. वीणा-ग्रंथि, गीत १९, २४ — ' कटनी के घुंघरु रुनझुन '

९. वीणा, २४ — ' कटिनी के घुंघरु रुनझुन '

१०. सौवर्ण, १०१ — ' कहां रे धरती के दुख भरे कलपने ? '

चंदिरा [1], **झर** [2], **तरुवासिनी** [3], **धरारमण** [4], **नयनता** [5], **नयनिमा** [6], **मधुबाल** [7], **रंगिणि** [8], **विहंगिनि** [9], **शशिहासिनि** [10], **सकाल** [11]।

अब हम बारी बारी से इन सब पर विचार करेंगे।

'**अग्निबीज**' पुं० शब्द 'स्वर्ण' के अर्थ में है।

संस्कृत के 'अज्ञान' शब्द का तद्भव रूप है 'अजान', उसी में 'तल्' प्रत्यय जोडकर '**अजानता**' भाव० संज्ञा बनी है।

'**अतितम**' में 'तम' प्रत्यय लगा है जो प्रायः संस्कृत विशेषणों के अंत में लग कर 'सब से बढ कर' यह अर्थ द्योतित करता है। यहां यह नितान्त नवीन प्रयोग है।

संस्कृत में '**आशी**' स्त्री० शब्द 'आशीर्वाद' के अर्थ में है।

व्रजभाषा में 'उजागर' पुं० शब्द है (सं० उद् = ऊपर या अच्छी तरह + जागर = जागना, प्रकाशित होना)। इसका स्त्री० 'उजागरी' या 'उजागरि' है — अर्थ 'प्रसिद्ध'। यहां इसी का बहुवचन रूप है '**उजागरियां**'।—

---

१. (क) कला और बूढा चांद, शरदशील, ३१ — 'कांसे की दूध फेन सेज पर **चंदिरा** सोई है।'

(ख) मानक हिंदी कोश — 'शरद **चंदिरा** उतर रही धीरे धरनी पर'

(ग) आधुनिक हिंदी काव्य-भाषा, डॉ० रामकुमार सिंह, ६१२ — '**चंदिरा** की अनावृत ज्वाला को लिपटाए'

२. मधुज्वाल, गीत १०१, १०१ — 'पी लो मदिरा की **झर**'

३. वीणा, ७८ — 'कूक उठी सहसा **तरुवासिनी**'

४. वीणा, ३० — हे **धरारमण**!

५. वीणा-ग्रंथि, ग्रंथि, १२७ — 'कुछ कुछ खुली **नयनता** से, कुछ रुकी मुस्कान से'

६. (क) स्वर्णकिरण, स्वर्णोदय, १०८ — 'चपल **नयनिमा** ने पाए'

(ख) मानक हिंदी कोश — 'कहां **नयनिमा** ने पाए ये फूलों के मादक शर'

७. वीणा, ८० — 'डोले **मधुबाल**'

८. वीणा, ७७ — 'प्रथम रश्मि का आना **रंगिणि**!'

९. वीणा, ७७ — 'कहां कहां हे बाल **विहंगिनि**'

१०. वीणा, १० — 'मेरा मानस तो **शशिहासिनि**!'

११. पल्लव, मौन निमंत्रण, ९१ — 'जबकि **सकाल** खोलती कलिका उर के द्वार'

'**उपनर**' में 'उप' संस्कृत उपसर्ग 'निम्न कोटि का' अर्थ रखता है। सादृश्य' अर्थ में भी यहां यह उपसर्ग माना जा सकता है। कवि नवीन ने भी '**उपमानव**'[1] शब्द के प्रति अपनी विशेष रुचि प्रदर्शित की है।

हिंदी में 'ऊभ-चूभ' सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है 'डूबने उतराने की क्रिया' [हिं० ऊभ (उमंग) + अनु० चूभ]। कवि ने 'ऊब' 'उतराने' के अर्थ में मान कर '**ऊब-डूब**' यह नया शब्द गढ़ लिया है। अर्थ में भी कोई अतर नही है।

'**कटनी**' या '**कढिनी**' शब्द यहां कटि या '**करधनी**' अर्थ में जान पड़ते हैं।

'**कलपने**' शब्द 'कलपना' सज्ञा का बहुवचन बनाया गया है। सज्ञा रूप में 'कलपने' बहु० शब्द का अधिक प्रचलन नही है।

'**चंदिरा**' शब्द भी कवि की निजी निर्मिति है। सस्कृत मे 'चदिर:' और 'चदिर:' पुं० शब्द 'चन्द्रमा' के अर्थ में हैं। कदाचित् उन्ही से कवि ने 'चादनी' इस नये अर्थ में 'चंदिरा' शब्द का आविष्कार किया है।

संस्कृत मे 'झर:' पु० शब्द 'झरना' अर्थ मे है। व्रजभाषा मे '**झर**'[2] सं० स्त्री० शब्द झड़ी, निरंतर वर्षा आदि अर्थों में है। यहा 'धार' या 'धारा' अर्थ लग सकता है।

'कोकिल' के अर्थ में '**तरुवासिनी**' स० स्त्री० शब्द भी नया ही है।

'वसंत' अर्थ मे '**धरारमण**' का भी अधिक प्रचलन नही है।

'**नयनता**' का अर्थ है 'नयन का भाव'। '**नयनिमा**' शब्द मे भी कवि ने यही भाव अभिव्यक्त करना चाहा है। इस शब्द का 'चितवन' अर्थ भी संभव है। 'नयनता' और 'नयनिमा' (स० स्त्री० शब्द) ये दोनों शब्द कवि की निर्मिति है।

'**मधुबाल**' कवि के अत्यन्त ही प्रिय शब्दों मे से एक है। छोटे छोटे मधुपों के लिए उसने ही यह शब्द गढ़ा है।

---

१. (क) हम विषपायी जनम के, आज क्रांति का शख बज रहा — 'मानव के **उपमानव**-पन के'

(ख) संग्रह वही, मानव की क्या अंतिम गति-विधि ? — 'मानव को **उपमानव** मा लख'

(ग) संग्रह वही, गरल पियो तुम, ४१७ — 'मानव हो तो फिर **उपमानव**'

२. तुल० — सूरदास के प्रभु सों कहियौ नैनन है झर लायौ (सूर० २८१५)

'रंगिणि' और 'विहंगिनि' (सं० स्त्री० शब्द) 'पक्षिणी' को सम्बोधित करते है। स्त्रीलिंग-रूप में ये शब्द कवि के ही आविष्कार जान पड़ते हैं।

'चांदनी' अर्थ में 'शशिहासिनि' सम्बोधन भी नया प्रयोग है।

संस्कृत में 'सकाल' वि० शब्द (कालेन सह, ब० स०) का अर्थ है सामयिक। 'सकाल' अव्यय वहां समय से, बड़े तड़के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है।[1] व्रजभाषा में 'सकार'[2], 'सकारे'[3] और 'सकारौ' शब्द भी इसी अर्थ में हैं। बंगला में भी 'सकारे' है। इन सब का अर्थ 'सवेरे सवेरे' ही है।

संज्ञार्थक विशेषण

पंत जी कहीं कहीं संज्ञाओं को विशेषणों के रूप में भी प्रयुक्त करते हैं। इन्हें 'संज्ञार्थक विशेषण' कहना चाहिए। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :—

१. नथुनो मे फेन उगलती अजगर तरगे[4],

२. प्रार्थी आज मनुज आत्मज मन[5],

३. विचरा हू मै इन धूपछांह शिखरों पर[6]।

संज्ञा-विकार

कवि ने अपनी कविताओं में अनेक स्थलों पर संज्ञाओं के विकृत रूप लिखे हैं। कुछ उदाहरण देखें :—

आकाश[7] (आ), अट्टहास्य[8] (स),

---

१. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, स० चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा : प० तारिणीश झा
२. तुल० 'बहुरि यह मग जावहु-आवहु राति साझ सकार' (सूर० ११७१)
३. तुल० 'पुनि खेलिहौ सकारे' (सूर० १० — २२६)
४. कला और बूढा चाद, घर, ७९
५. स्वर्णकिरण, आवाहन, ७५
६. अतिमा, कूर्मांचल के प्रति, १३६
७. पल्लव, १०३ — 'छा जाते हम अवनि अकाश'
८. शिल्पी, ध्वस शेष, ५८ — 'निज अट्टहास्य से'

अन्वेषन [1] (ण), कर्णाधार [2] (कर्णधार), किटाणु [3] (की), झुटपुट (डा), झौकों [4] (झों), तिली [5] (तितली), पियालों [6] (प्या), बहनी [7] (बहन भोंहों [8] (भौं), मृगनयनि [9] (नी)।

इन के अतिरिक्त कवि ने किशोरि, शिल्पि और सुकुमारि शब्द भी सम्बोध इतर प्रसंगों में लिखे हैं। झारें, (झाड़े), तलैटी (तलहटी), भ्रात (ता), मा (ता), रखवाल (ला), वरिद (वा) और हिंडोर (रा या ला) शब्द भी विकृ रूप ही माने जाएगे।

विशेषण

संज्ञाओं की भांति विशेषणों के क्षेत्र में भी कवि ने कतिपय प्रयोग किए हैं कुछ विशेषण इस प्रकार है —

आवागमनी [11], कुवलयित [12], ग्राहमुखी [13], धूमाली [14], पेरोज [15] सतजल [16], और स्वप्नप्रभ [17]।

---

१. पल्लव, भूमिका ' अचिर में चिर का **अन्वेषन** '

२. वीणा, ५५ — कहां हो **कर्णाधार** ? — तुल० ... महादेवी की पंक्ति — ' विसर्जन ही है **कर्णाधार** ' (यामा

३. सौवर्ण, स्वप्न और सत्य, ११५ — ' **किटाणु** महामारी के '

४. प्रसिद्ध पक्ति — ' बांसों का झुरमुट, सध्या का **झुटपुट** '

५. युग-वाणी, कृष्ण घन, ८७ — ' झझा **झौको** पर '

६. युग-पथ, तितली, ५२ — ' प्रिय **तिली** ! फूल सी ही फूली '

७. पल्लव, १४ — ' **पियालों** मे फलो के '

८. स्वर्णकिरण, भू-लता, ७७ — ' मै सगी काल की **बहनी** '

९. पल्लव, आंसू, ७२ — ' करुण **भोंहों** मे था आकाश '

१०. मधुज्वाल, गीत १७, १७ — ' किस **मृगनयनि** ? '

११. ग्राम्या, पतझर, ९७ — ' **आवागमनी** पत्तो '

१२. स्वर्णकिरण, नारी-पथ, ८४ — ' अवयव **कुवलयित** सृष्टि '

१३. कला और बूढा चाद, अतस्तरण, १६६ — ' उत्ताल तरगे **ग्राहमुखी** '

१४. ग्राम्या, सध्या के बाद, ६८ — ' नभ के नीचे नभ सी **धूमाली** '

१५. कला और बूढा चांद, नया देश, १३० — ' इस नील हरी **पेरोज** घाटियों में

१६. (क) अतिमा, चन्द्र के प्रति, ३८ — **सतजल** पुलिनो मे सुखदायक '

(ख) उत्तरा, आवाहन, ६६ — ' उसे रग दो स्वर्गिक स्मिति से **सतजल** '

(ग) वाणी, नवोन्मेष, ३८ — ' फूलो के **सतजल** पावक मे ढकी दिशाए '

१७. युगपथ, कवीन्द्र रवीन्द्र के प्रति, ११० ' **स्वप्नप्रभ** पंखो से आज नही छू पात।

इन में 'पेरोज' का अर्थ 'फीरोजी' (रंग) है।

कहीं कहीं ऐसे विशेषण भी हैं जो 'ई' प्रत्यय जोड़ने से बने हैं यथा — इन्द्रधनुषी [1], कचनारी [2], गंगा यमुनी [3], बाली [4]।

उर्म्मिल, तोंदिल, धूमिल, पंकिल, फेनिल और बोझिल शब्दों [5] के तौल पर कवि ने 'इल मत्वर्थीय प्रत्यय जोड कर 'स्वप्निल' [6] शब्द (Dreamy के अनुकरण पर) गढ़ लिया है। इसी प्रकार कसीला और डसीला [7] शब्दों के साम्य पर सकर्मक क्रिया 'ऐंचना' (अर्थ = खींचना) में 'ईला' प्रत्यय जोड़ कर 'ऐंचीला' [8] वि० बनाया गया है जिस का अर्थ है 'जो खींचा या ताना जा सके, लचीला'। इसी प्रकार हेमाभ, हरिताभ आदि शब्दों के अनुकरण पर 'मदिराभ' [9] भी बनाया गया है।

इसी प्रकार 'हरे' प्रत्यय जोड़ कर रुपहरे और सुनहरे तथा 'हले' प्रत्यय से 'रुपहले' और 'सुनहले' शब्द निर्मित किए गए है।

एक स्थान पर 'मुखर' के तौल पर 'नखर' [10] यह नवीन वि० शब्द मिलता हैं।

संस्कृत में भूतकालिक कृदन्त 'क्त' प्रत्यय लगा कर बनते हैं यथा पठित, रक्षित, हसित। पंत जी ने अलसित [11] और निर्जीवित [12] जैसे शब्द भी लिखे हैं।

---

१. गुंजन, भावी पत्नी के प्रति, ४१ — 'इन्द्रधनुषी पट से ढक गात'

२. अतिमा, अंत : क्षितिज, ३१ — 'कचनारी कलियों का कोमल'

३. युगपथ, त्रिवेणी, १६५ — 'गंगायमुनी जीवन-धारा'

४. वीणा-ग्रंथि, गीत १९, २४ — 'शृंगार तुम्हारा करता है वय बाली में'

५. हिंदी में प्रत्यय-विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति:, १५७

६. (क) गुंजन, कविता २५, ५२ — 'स्वप्निल पंखड़ियां खोल'

(ख) सरस्वती, दिसम्बर सन् १९२४ —' स्वप्निल मुस्कान'

७. हिंदी में प्रत्यय-विचार, प्र० सं० सन् १९६४, १७९

८. आधुनिक कवि, सप्तम सं०, १९ — 'ऐंच ऐंचीला भ्रू सुरचाप'

९. गुंजन, सप्तम सं०, ५५ — 'खोलता लोचन दल मदिराभ'

१० युगांत, प्र० सं०, १८ — 'प्रखर नखर नव जीवन की लालसा'

११. सरस्वती, जून सन् १९२४, ६१७ — 'निद्रा के इस अलसित वन में'

१२. वीणा-ग्रंथि, गीत १, २ — 'इन निर्जीवित शब्दों में'

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण देखें :—

जीवन-मृत (जीवन्मृत) और तेजोज्वल [१] (तेजोज्ज्वल) विकृत विशेषण हैं। फेनोज्वल, रक्तोज्वल और विरहोज्वल भी ऐसे ही शब्द हैं।

विशेषण-विपर्यय

कवि ने विशेषणों को स्थानांतरित करके भी काव्य-बिम्बो का अनुपम विधान किया है उदाहरणस्वरूप :— अनिमेष [२] (सुषमा), कुम्हलाई [३] (हाटें) ग्रामीण [४] (नयन), धारोष्ण [५] (प्रकाश), बौनी [६] (झोंपड़ियां), मधुपायी [७] (उड़ान), रंभाती [८] (नदियो !), रेशमी [९] (कुहासे, जलद, वायु), लगड़ी [१०] (किरण) और सुरीले [११] (हाथ)

क्रिया

कवि पंत ने व्रजभाषा की क्रियाओं के प्रति अपनी विशेष रुचि का प्रदर्शन किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है —

---

१. वाणी, १३१ — ' अग्नि-स्तभ उठता तेजोज्वल '
२. कला और बूढ़ा चांद, प्रेम, ४७ — ' तुम अपनी अनिमेष सुषमा की '
३. कला और बूढ़ा चांद, मधुछत्र, २३ — ' उन्होंने कुम्हलाई हाटे लगाई '
४. ग्राम्या, ग्राम दृष्टि, १५ — ' ग्रामीण नयन से '
५. कला और बूढ़ा चांद, धेनुएं, २० ' अपना धारोष्ण प्रकाश अनामय अमृत पिलाओ '
६. सौवर्ण, ८१ — ' बौनी झोंपड़ियां है '
७. कला और बूढ़ा चाद, मधुछत्र, २३ — ' मधुपायी उड़ान भरूंगा '
८. कला और बूढ़ा चांद, धेनुएं, १९ — ' ओ रंभाती नदियो ! '
९. (क) कला और बूढ़ा चांद, अन्तर्मानस, ५१ — ' रेशमी कुहासे छंट गये '
(ख) उत्तरा, प्रीति समर्पण, १३६ — ओसों के रेशमी जलद '
(ग) वाणी, आत्मिका, १३६ — ' गंध-गुथी रेशमी वायु थी '
१०. कला और बूढ़ा चांद, द्यावा पृथवा, १८१ — ' एक लंगड़ी किरण भर है '
११. वीणा-ग्रंथि, ग्रंथि, १३६ — ' वेदना के ही सुरीले हाथ से '

अवलोको [1], आराधो [2], उन्मील [3], गहती [4], गहराई [5], गहराने [6], चापोगे [7], चालो [8], झिला [9], दलें-मलें [10], दिप [11], दिपती [12], दिपते [13], दुरा [14], दुरी [15], निर्माऊ [16], पुलकाया [17], पूरो [18], पैरते [19], प्रकटा [20], प्रकटाऊं [21], प्रकटाओ [22], प्रकटाते [23]

---

१. वीणा-ग्रंथि, गीत ४५, ५९ — 'अवलोको मन अवलोको'

२. वाणी, नवोन्मेष, ३९ — 'जीवन श्रद्धा से आराधो'

३. (क) वीणा-ग्रंथि, गीत १६, २० — 'दृष्टि द्वार उन्मील बुलाया तुम्हें'

(ख) गुंजन, मधुवन, ५४ — 'नयन शिथिल सरसिज उन्मील'

४. स्वर्णधूलि, छायाभा, ६६ — 'विपद में बांह सदा गहती'

५. उत्तरा, युगछाया, ५ — 'युग संध्या गहराई'

६. कला और बूढ़ा चांद, खोज, २७ — 'कुहासा गहराने लगा है'

७. उत्तरा, गीत विभव, ७२ — 'मुख पर चापोगे तुम शीतल चुंबन'

८. युगवाणी, खोज, ८९— 'मूल व्यक्ति को फिर से चालो'

९. शिल्पी, रूपक 'शिल्पी', १४ — भव संग्राम झिला'

१० कला और बूढ़ा चांद, आत्मानुभूति, १८७ — 'पंखुरिया आंखियां दलें-मलें'

११. स्वर्णधूलि, छायाभा, ६६ — 'दिप जाते तारे इन्दु पीत'

१२. स्वर्णकिरण, उषा, ५३ — 'दिपती छिपती प्रतिपल'

१३. वाणी, नवोन्मेष, ४० — 'दिपते वन में, घन मे'

१४. गुंजन, कविता २७, ६३ — 'दृगो में दुरा कठोर'

१५. पल्लव, शिशु, ११३ —'दुरी हो अंतर में अनजान'

१६. वीणा-ग्रंथि, गीत ६१, ८४ — 'मैं भी माला निर्माऊं'

१७. वीणा-ग्रंथि, गीत १२, १५ — 'मृदु लहरों ने पुलकाया'

१८. अतिमा, प्राणों की सरमी, ७४ — 'डूबो हे पूरो अभिलाषा'

१९. पल्लव, बादल, १२९ — 'समुद पैरते शुचि ज्योत्स्ना में'

२०. पल्लव, बादल, १२९ — 'प्रकटा विकट महा आकार'

२१. वीणा-ग्रंथि, गति ६१, ८३ — 'यह दुख कैसे प्रकटाऊं ?'

२२. युगवाणी, मन के स्वप्न, ६६ — 'रूप गंध रस में प्रकटाओ'

२३. वीणा-ग्रंथि, गीत २०, २५ — 'प्रभा प्रकटाते हो'

प्रकटी [1], प्रसार [2], बतिया [3], बिला [4], बौरे [5], भास [6], लहरी [7], लुन [8] विकसी [9], विचरो [10], वितरती [11], वितरूँगी [12], विलोकता [13], सजती [14] समोई [15], सहेजूंगी [16], हरस [17], हरसे [18]।

विशेषणों की भांति क्रियाएँ भी स्थानांतरित की जा सकती हैं। उदाहरण-स्वरूप 'कूदना' अ० क्रि० अब तक प्राणि-जगत् के लिए आती रही है किन्तु कवि लिखता है —

'जघनो योनियो में नया आनन्द कूद रहा' [19]

चूंकि यहां काव्य-बिम्ब क्रिया पर आश्रित है और क्रिया हटा लेने पर बिम्ब

---

१. स्वर्णकिरण, उषा, ३१ — 'श्रद्धा प्रकटी अतर्लोचन'
२. युगवाणी, आम्र विहग, ५३ — 'मैं भी प्रसार अपने विचार'
३. ग्राम्या, ग्राम वधु, ३३ — 'सखियो से रो धो कर बतिया कर'
४. वाणी, आत्मिका, १५६ — 'बिला गई हो भौतिक सत्ता'
५. गुंजन, कविता २४, ५० —'आज बौरे रे तरुण रसाल'
६ स्वर्णधूलि, सन्यासी का गीत, २३ — 'स्त्री मे जिसको होती पत्नी भास'
७. स्वर्णकिरण, हिमाद्रि और समुद्र, ४५ — 'जिसमें विराट् ससृति लहरी'
८. शिल्पी, रूपक 'शिल्पी', ४३ — 'लुन लुन कर नित शस्यो के स्वर्णिम कण'
९. गुजन, कविता १८, ३७ — 'पुलिन पर वह विकसी'
१०. उत्तरा, गीत पथ, उत्तरा, १ — 'विचरो प्रिय'
११. स्वर्णकिरण, अभिवादन, १ — 'स्वर्णिम क्षण वितरती स्वर्णकिरण'
१२. स्वर्णधूलि, मानसी, १५३ — 'जग में नव जीवन वितरूँगी'
१३. रजत शिखर, फूलों का देश, ७० — 'मुख विलोकता नए रूप से'
१४. युगवाणी, जीवन-स्पर्श, ६७ — 'कौन शक्ति सजती जीवन का वासती शृंगार'
१५. अतिमा, विज्ञापन, ९४ — 'अब मन में गध समोई'
१६. स्वर्णधूलि, मानसी, १५३ — 'फिर से सहज सहेजूंगी'
१७. रजतशिखर, रजत शिखर, ७ — 'शुभ्र शांति रही हरस'
१८. स्वर्णधूलि, मानसी, १४८— 'मानव उर में हरसे करुणा'
१९. कला और बूढ़ा चांद, कीर्ति, ११५

ही लुप्त हो जाता है अत: इसे क्रिया-बिम्ब की संज्ञा भी दी जा सकती है।

ठीक इसी प्रकार गाए, बकरियां और भैंसे दुही जाती हैं, किरणें नहीं। किंतु कवि ने लिखा है —

'मैं सूर्य की किरणें दुहूं तुम चांद की'[1]

किंतु कुछ विद्वान् यहां 'लक्षणा' शक्ति को मानेंगे जो ठीक है।

क्रिया-विकार

क्रियाओं को कवि ने बहुत कम विकृत किया है। जो क्रियाएं हैं उन में से अधिकांश व्रजभाषा की ही हैं और अविकृत रूपों मे हैं। कुछ क्रिया-विकार इस प्रकार हैं —

झारें (झाड़ें), तरासी[2] (सी), न्हाईं (न), न्हाए[3] (न), बिनी[4] (बी)

लिंग

कवि ने लिंग-निर्धारण में भी वैयक्तिक रुचियों के अनुसार नवीन प्रयोग किये हैं। उदाहरणतया अंचल[5], क्षेम[6], छाता[7], डर[8], प्रभात[9], प्रवाह[10], भोर[11], मित्र[12],

१. कला और बूढ़ा चांद, अमृत, ६२
२. कला और बूढ़ा चांद, कोपलें ६६ — 'भद्दी डालियां काटी तरासीं'
३. वाणी, जीवन-गीत, ३० — आसू जल में न्हाए'
४. सौवर्ण, ९६ — 'बिनी चेतना सुवर चदारिया'
५. पल्लव, निर्झरी, १२५ — 'सजल आंसुओं की अंचल'
६. स्वर्ण किरण, अवगुंठिता, ३९ — 'मुझे घर की क्षेम चाहिए'
७. अतिमा, आ धरती कितना देती है, ३८ — 'छोटी छोटी छाता ताने खड़े हैं'
८. वीणा-ग्रंथि, द्वि० संस्क०, ३९ — 'रहती नही धूलि की डर'
९. (क) गुंजन, मधुवन, ५३ — प्रभात तुम्हारी मुख छवि-सी रुचिमान्'
   (ख) पल्लव, ५४ — 'पल्लवों की यह सजल प्रभात'
१०. स्वर्णकिरण, नील धार, ८५ — 'तुम हृदय-ग्रंथियों की प्रवाह'
११. पल्लव, विज्ञापन, १३ — 'उमड़ी हिमजल सस्मित भोर'
१२. पल्लव, उच्छ्वास, ५९ — 'बालिका मेरी मनोरम मित्र थी'

बात [1], और समर्पण [2] शब्द हिंदी में पुल्लिग ही हैं किंतु कवि ने इन्हें स्त्रीलिंग के रूप मे लिखा है। ब्रजभाषा मे भी ये शब्द पुल्लिग ही हैं, स्त्रीलिंग नही।

संस्कृत में अंचल और क्षेम शब्द पुं० और नपु० हैं। प्रभात, मित्र, और समर्पण भी नपुं० हैं। छत्र और भय भी सस्कृत में नपुं० ही हैं। अत: नियमत: ये सब शब्द हिंदी में पुं० होने चाहिये। 'प्रवाह' और 'वात' तो सस्कृत में भी पुं० ही हैं।

इन के अतिरिक्त कवि ने 'बूद' और 'कम्पन' जैसे शब्दो को प्रसगानुसार उभय लिंगो में रखा है। उस का स्पष्टीकरण इस प्रकार है — 'जा छोटी सी बूद हो वहां स्त्रीलिंग, जहां बडी हो वहां पुल्लिग [3], जहा हल्की-सी हृदय की कम्पन हो वहां स्त्रीलिंग, जहां जोर जोर से धड़कने का भाव हो वहां पुल्लिग [4]'। सं० में 'कपन' नपु०, 'बिंदु' पुं० है किन्तु हिंदी में 'कंपन पुं० है और बूद स्त्री०।

कहीं कहीं छात्री [5] और पथिकिनी [6] जैसी नयी स्त्री० सज्ञाएं भी हैं।

निम्नलिखित उदाहरणों में कवि ने 'शोभालकार' का लिंग 'दुर्बलता' के अनुसार तथा 'द्वार' का लिंग 'पावनता' के अनुसार (स्त्रीलिंग) ही रखा है —

१. जिनकी अविकच दुर्बलता ही थी जग की शोभालकार [7]

२ जिनकी अबोध पावनता थी जग के मगल की द्वार [8]

वचन

कवि ने वचन बनाते समय भी व्याकरण के नियमों का अतिक्रमण किया है।

---

१. गुंजन, मधुवन, ५५ — 'डोलने लगी मधुर मधु बात'
२. गुंजन, चांदनी, ९० — प्राणो की मधुर समर्पण'
३. उद० पल्लव, स्याही का बूद, १४६ — 'अचानक यह स्याही का बूद'
४. पल्लव, छठा सस्क० विज्ञापन, २३
५. स्वर्णधूलि, मानसी, १४४ — 'मानव सहचरि जीवन छात्री'
६. वीणा-ग्रंथि, गीत ११, १३ — 'मुझ पथिकिनी को भी आश्रय दो'
७. पल्लव, बालापन, १४२
८. पल्लव, बालापन, १४२

आकृतिएं [1], जातें [2], निशिए [3], बाहुए [4], और संस्कृतिएं [5], जैसे बहुवचन रूप विचारणीय हैं। इसी प्रकार ज्वालें [6] और माले [7] जैसे बहुवचन दर्शनीय हैं। वस्तुत: ये शब्द 'ज्वाल' और 'माल' के बहुवचन हैं, ज्वाला और माला के नहीं।

उभय लिंगों में एक समान रहने वाले 'सत्य' शब्द का बहुवचन 'सत्यें' [8] बनाया गया है। यह स्पष्टत: अंगरेजी के 'Truths' शब्द का हिंदी समानक है।

कहीं कहीं बहुवचन में भी एकवचन-रूप ही रखे गये हैं यथा आंख [9], मुद्रा [10] और योजना [11]।

सर्वनाम 'यह' को कवि एकवचन मे 'ये' भी लिख जाता है यथा — 'ये रेती की चमक न'।

संधि

कवि को व्यंजन संधियों की अपेक्षा स्वर संधियां अधिक रुचिकर जान पड़ती हैं। इन में भी प्रचुरता दीर्घ स्वर संधियों की है। कुछ उदाहरण ये हैं —

---

१. शिल्पी, रूपक 'शिल्पी', — हँसमुख अकलुष आकृतिएं'
२. अतिमा, दीप रचना, ११ — 'अजर अमर देवों की जातें'
३. अतिमा, आवाहन, २४ — दीपित कर निशिएं अतीत की'
४. शिल्पी, प्रथम दृश्य, २० — 'शाखाओं सी आजानु बाहुएं'
५. अतिमा जीवन-प्रवाह, ९३ — 'कोटि सभ्यताए संस्कृतिएं'
६. अतिमा, विद्रोह के फूल, ९९ — 'उर में भीषण ज्वालें'
७. अतिमा, विद्रोह के फूल, ९८ — 'मणि की मालें रहीं झूल'
८. शिल्पी, रूपक 'शिल्पी', दृश्य २, ३२ — 'आध्यात्मिक सत्यें भी प्रतिमाएं हो हैं'
९. गुंजन, कविता २२, ४७ — 'नील नलिन सी हैं वे आंख'
१०. वीणा-ग्रंथि, गीत ५५, ७२ — 'अगणित मुद्रा दान दिए'
११. रजत शिखर, रूपक 'रजत शिखर', ३१ — 'मेरे पास अनेक नई योजना बनी हैं'

आभासीन, कोमलाभ, कोमलालोक, दसनावलि, फेनाकार. भीमाकाश, मदिरारुण, मधुपालाप, मारुतामोद, मुक्तालोकित, मृदूर्मिल, मृदूष्ण, मौनालाप, लहरांचल, वसुधानन, शोभातप, सुखमाकार, स्वर्णाकांक्षा, स्वर्णातप, और हरितांधकार।

गुण संधियां ये हैं — अस्तोदय. गंधोच्छ्वास, धारोष्ण, नक्षत्रोन्मेष, नीलिमोद्धार, प्रजोत्कर्ष, फेनोच्छ्वसित, फेनोज्वल, रक्तोज्वल, विरहोज्वल, शिलोच्चय, स्वप्नोत्पल।

जो व्यंजन संधियां हिंदी में कम प्रचलित हैं कवि ने उन को भी ग्रहण किया है यथा — चिच्छक्ति, जगज्जलधि, महज्ज्योति, विद्युल्लतिका, सच्छास्त्र और सदुच्च।

ऊपर 'मारुतामोद' दीर्घ स्वर-सधियों मे आया है। वस्तुत: यहां व्यजन संधि के नियमानुसार 'मारुदामोद' होना चाहिए था किंतु कवि ने ऐसा नही किया है। इसी प्रकार कवि ने मरुताकाश'[1] सधि लिखी है। उस का कथन है — 'मुझे 'मरुदाकाश ऐसे लगा जैसे आकाश में धूल भर गई हो, बादल घिर आए हों — स्वच्छ आकाश देखने ही को नहीं मिलता, इसलिए मै ने उस के बदले 'मरुताकाश' लिखना ही उचित समझा"।[2]

विसर्ग संधियो के प्रति भी कवि का आकर्षण है। आशीर्वैभव और मनोनभ ऐसी ही संधियां हैं।

'सद्योज्ज्वल' सधि-रूप विवादास्पद है।

समास

कवि की समास-सम्बंधी रुचियां इन उदाहरणों से निर्धारित की जा सकती हैं — अनिल-कुसुम, क्षण-मूढ़, गंध-अंध, गंध-कुंतल[3], छाय-अभिनय[4], जन-भेड़े[5], और रंग-बादल[6]।

---

१. पल्लव, पल्लव, ५४ — 'सुरभि से अस्थिर मरुताकाश'
२. पल्लव, छठा सस्क०, विज्ञापन, १३
३. वाणी, आत्मिका, १३६ — 'स्वर्ण गंध-कुंतल छहराए'
४. मधुज्वाल, १२२ वां गीत, १२२ — 'छाया-अभिनय आज'
५. सौवर्ण, ३६ — 'जन-भेड़ों को रहे हांकते'
६. स्वर्णकिरण, व्यक्ति और विश्व, ६६ — 'घिरते ये रंग-बादल'

'**पल्लव**' की भूमिका में पत जी ने काव्य मे '**समासों की कैंची**' अधिक न चलाने के लिए अन्य कवियों से अनुरोध किया है [1]।

अव्ययीभाव के कुछ समासों मे शब्दों से पूर्व 'सह' शब्द ('साथ' अर्थ मे) जोड़ कर उसे 'स' कर दिया जाता है यथा — सकाल, समोद, सस्मित, सालस, सोभार।

उपसर्ग

संस्कृत में स्वरादि शब्दों से पूर्व 'अन्' उपसर्ग जोडने का नियम है। किन्तु हिंदी मे 'अन' (सस्कृत 'अन्' मे विकसित) उपसर्ग व्यजनादि शब्दों से पूर्व भी लगा दिया जाता है। पंत जी की कविताओं मे अनगिन [2], अनचाह [3], अनबिधे [4] और अनसूंघे [5] शब्द देखे जा सकते हैं।

इसी प्रकार कवि ने दूसरे नञ् **तत्पुरुष समासों** में तत्सम और तद्भव शब्दों से पूर्व निषेधसूचक 'अ' जोडा है। यथा :—अकप, अकथ, अकथित, अकलुष, अकवि।

संस्कृत '**वि**' **उपसर्ग** जोड़ कर विद्रवित, विनीरव, विमान और विश्री जैसे शब्द बनते है।

सस्कृत '**निर्**' **उपसर्ग** से बने शब्द ये हैं — निरर्थ, निर्जर, निर्जल, निर्बोध और निर्गुण। इसी उपसर्ग से हिंदी में '**नि**' **निषेधसूचक उपसर्ग** घड लिया जाता है। कभी कभी यह तत्सम शब्दो से पूर्व भी लगा दिया जाता है यथा 'निकाम' [6]।

फ़ारसी के '**बे**' **उपसर्ग** को भी कवि ने ग्रहण किया है— बे-आप [7] ऐसा ही शब्द है।

---

१. पल्लव, छठा सस्क०, 'विज्ञापन' शीर्षक भूमिका
२. वाणी, विकास-क्रम, ७० — '**अनगिन** अदृश्य पग'
३. रजत शिखर, रूपक 'रजत शिखर', ३७ 'श्रान्त क्लान्त **अनचाहा** मानव'
४. कला और बूढ़ा चांद, अत: स्फुरण, १६२ — 'इन में **अनबिंधे** मोती हैं'
५. कला और बूढ़ा चांद, अत: स्फुरण, १६२ — 'स्वर-वृंत पर **अनसूंघे** फूल'
६. शिल्पी, रूपक 'ध्वस शेष', ८७ — 'उतरो भू पर **निकाम**'
७. पल्लव, विश्व वेणु, १०३ — 'भगा बावलों से **बेआप**'

संस्कृत का ' सु ' उपसर्ग इन शब्दों मे लगा है — सुदुस्तर, सुनागरिक, सुपुनीत, सुस्मृति ।

' प्र ' उपसर्ग जोड कर प्रसक्ति, प्रस्तवित और प्रहृष्ट शब्द बने हैं ।

अन्य शब्द-विकार

सज्ञा, विशेषण और क्रिया का अध्ययन करते समय हम ने कुछ शब्द-विकारों का सकेत किया है । अन्य उदाह ण भी है यथा ' आधीन ' (अधीन) विशेषण शब्द देखा जा सकता है । अन्य कवियों ने भी अपनी कविताओं में मात्रिक पूर्ति के लिए ' आधीन ' (वि०) लिखा है ।

कही कही कवि ' निन्दित ' को ' निनदित ' भी लिख जाता है ।

अगरेजी पद्धति का अनुकरण कर के भी कवि ने कुछ शब्द विकृत रूपो मे प्रस्तुत किये हैं यथा अनिर्वच [१] (अनिर्वचनीय), ह्लाद [२] (आह्लाद) और ' च्छ्वास ' [३] (उच्छ्वास) ।

कही कवि ने ' प्रियाऽह्लाद ' लिखने की अपेक्षा ' प्रि-आह्लाद ' [४] लिख कर ही काम चला लिया है । इसी प्रकार ' भौंहों ' के सम्बन्ध में वह लिखता है — " भौंहों से मुझे ' भोंहों ' मे अधिक स्वाभाविकता मिलती है, भौहें ऐसे जान पडती है जैसे उनके काले काले बाल क्रोध मे कठोर रूप धारण कर खडे हो गए हो — " [५]

इसीलिए कवि ' भोंहों ' [६] ही लिखता है ।

---

१. गुजन, चांदनी, ९१ — ' वह है, वह नही अनिर्वच '

२. स्वर्णकिरण, स्वर्णोदय, ९६ — ' शैशव के मुक्त ' ह्लाद मी '

३. ग्राम्या, नक्षत्र, १०४ — ' पा मेरे सुख दुख भाव ' उच्छ्वास '

४. गुजन, कविता ६, १८ —' प्रिय प्रि-आह्लाद रे इसका ' — दे० गुजन, प्रथम संस्क०, विज्ञापन, ३

५. पल्लव, छठा सस्क०, विज्ञापन, १४

६. पल्लव, आंसू, ७२ — ' करुण भोंहों में था आकाश '

नव शब्द

कुछ अन्य नव शब्द-प्रयोग इस प्रकार हैं —

अतिमा [1], अनिल-कुसुम [2], अल्पना [3], गुंजरण [4], ग्रामिक [5], तपन [6], ('सूर्य' अर्थ मे), थपथपी, ध्वंसभ्रंस, नयन-शिशु [7] ('आंसू'), निर्माणकाज [8], पतन [9] ('सूर्यास्त' अर्थ मे), परिप्रोत, पर्वतपाटी [10], प्रास [11], रेभण, वनाली [12], सीधेमगगामी, सुमन-चेतन [13] (तितली), स्वर्मन ।

इन में 'अतिमा' शब्द अगरेज़ी के Transcendence शब्द (अर्थ 'श्रेष्ठता') का हिंदी समानक बनाया गया है। संस्कृत में 'अतिमाय' वि० शब्द (अत्यादि तत्पुरुष समास) 'सांसारिक माया से मुक्त' या 'पूर्णमुक्त' अर्थ में है। कवि ने उसी से 'अतिमा' अंश ग्रहण किया जान पडता है। अरविंद दर्शन में अतिमानव और अतिमानुष आदि शब्दो की वैसे भी प्रचुरता है। कवि ने उसी से प्रभावित हो कर 'अतिमा' शब्द लिखा है।

'तितली' अर्थ में 'अनिल-कुसुम' और 'सुमन-चेतन' ये सामासिक शब्द

---

१. कवि के एक कविता-संग्रह का नाम है।
२. युग-पथ, तितली, ५३ — 'फूलों से ली अनिल-कुसुम नभ ने'
३. स्वर्णधूलि, भावोन्मेष, २६ — 'कला धरा पर रचे अल्पना'
४. अतिमा, नव जागरण, १० — 'सुन पडता फिर स्वर्ण गुंजरण'
५. ग्राम्या, २२ — 'ये मनुजाकृति ग्रामिक अगणित'
६. ग्रंथि, ७ — 'निज कनक किरणो से तपन'
७. वीणा-ग्रंथि, ग्रंथि, १३० — 'अश्रु ! हे ... नयन के नादान शिशु'
८. ग्राम्या, विनय, १०८ — 'हो जीवन निर्माणकाज'
९. ग्रंथि, ७ — 'अरुण आभा में रगा था वह पतन'
१०. प्रसिद्ध पंक्ति — 'खिल पड़ी निखिल पर्वत पाटी' (कविता 'पावस')
११. युगवाणी, नव दृष्टि, ३ — 'खुल गये प्रास के रजत पाश'
१२. सौवर्ण, स्वप्न और सत्य, प्रथम दृश्य, ७३ — 'मर्मर भरी वनाली'
१३. युग-पथ, तितली, ५३ — 'क्या कहूं ? यही सुमन-चेतन ?'

और कवि की निजी निर्मिति हैं।

बंगाल में 'अल्पना' स्त्रियों द्वारा त्योहारों के दिन फर्श पर की जाने वाली चित्रकारी है इसे 'साँझी' भी कहते है। इसी को गुजरात मे सथिया, महाराष्ट्र में रंगोली, दक्षिण भारत मे 'कोल' कहते हैं।

संस्कृत मे 'गुञ्जन' (नपु०) शब्द है। व्रजभाषा मे 'गुंजरना' अ० क्रि० है। कवि ने इन दोनों के योग से 'गुंजरण' स० पु० शब्द घड लिया है।

'ग्रामिक' शब्द स० पु० और विशेषण दोनों रूपों में है। यहां 'ग्रामवासी' अर्थ है।

'थुपथुपी'[१] स० स्त्री० शब्द 'थपकी' अर्थ में है। 'धुकधुकी' शब्द अलग है, अर्थ भी भिन्न है।

संस्कृत मे 'भ्रंस' पु० शब्द (√भ्रंश [स्] + घञ्) 'नाश' अर्थ में है। 'ध्वंसभ्रंस' इसी शब्द के योग से बना है।

'आंसू' अर्थ मे 'नयन-शिशु' बिल्कुल नया है।

भूतकालिक कृदन्त 'प्रोत' शब्द का अर्थ है — 'किसी के साथ या किसी में अच्छी तरह मिला हुआ।'[२] ओतप्रोत पद के साम्य पर यहा 'परिप्रोत' शब्द बनाया गया है। 'परि' संस्कृत उपसर्ग है ही।

'पर्वतपाटी' भी नया शब्द है। संस्कृत मे 'पाटी' स० स्त्री० शब्द है। इसके प्रणाली, रीति, पंक्ति आदि अर्थ है। यहा अंतिम अर्थ संभव है। व्रजभाषा मे भी 'पाटी' स० स्त्री० शब्द (स० पाट) के शिला, चट्टान आदि अर्थ है।

'अनुप्रास' के अर्थ में 'प्रास' भी नवीन है।

संस्कृत 'रेभ' (वि०) का अर्थ 'कठोर वचन बोलने वाला' है। 'रेभण' सं० शब्द उसी से सम्बधित जान पड़ता है।

संस्कृत में 'वनालिका' स० स्त्री० शब्द (वन+अलिका) हस्तिशुण्डी लता, सूरजमुखी पुष्प आदि अर्थों में है। कवि ने इसी से 'वनाली' बना लिया है।

---

१. मानक हिंदी कोश, तीसरा खंड

२. मानक हिंदी कोश, तीसरा खंड

प्रिय शब्द

जिन शब्दो की पंत जी की कविताओं में आवृत्ति होती रही है वे इस प्रकार है —

अगीत, अजान, अभिषेकित, जावक, ज्योति, दिवांध, धारोष्ण, निरस्त, निर्जर, पदचार, फुल्ल, फेनिल, बौरे, मधुलिह्, मानुष्य, मिथ, रत्नच्छाय, लोकायन, वनाली, वास्तवता, विश्री, शब्दित, सकाल, सतजल, सतरंग, सुज्ञ, स्फार और स्वप्निल ।

इन में ' ज्योति ' शब्द तो कवि के व्यक्तित्व पर अरविंदवादी दर्शन का ही प्रभाव प्रकट करता है । इस शब्द के योग से उसने अनेक शब्द बनाए हैं यथा ज्योतिकण, ज्योति चरण, ज्योति जाल, ज्योति दुग्ध, ज्योति देश, ज्योति पंख, ज्योति पुरुष, ज्योति भूमि, ज्योतिवाह, ज्योति वृषभ, ज्योति शिखर, ज्योति स्तंभ इत्यादि ।

ठीक इसी प्रकार ' स्वर्ण ' शब्द की आवृत्तिया देखे—

स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, स्वर्णनिर्झर, स्वर्णबीज । ' स्वप्न ' और ' ज्वाल ' (पावक या अग्नि) शब्दों से भी कवि को ऐसा ही मोह है । कुछ उदाहरण ये हैं—

स्वप्न चरण स्वप्न तूली ।

अग्निचक्षु ज्वालपख, ज्वालमुख, ज्वालवसन, पावक कण, पावक पुकार इत्यादि ।

' बाल ' शब्द का भी कवि ने अनेक बार प्रयोग किया है यथा खग बाल, पिक बाल, मधुबाल ।

' कल्पना ' शब्द की प्रचुरता तो सारे छायावादी काव्य में है । पत जी ने कविताओ को ' कल्पना के ये विह्वल बाल ' [1], भावो को ' कल्पना के ये शिशु नादान ' [2], छाया को ' कवियो की गूढ़ कल्पना-सी ' [3], नक्षत्रो को ' अनन्त की अगम

---

१ पल्लव, पल्लव, ५४

२. पल्लव, मुस्कान, १००

३. पल्लव, छाया, १०७

कल्पना '[1] और बादलों को ' अम्बुधि की **कल्पना** महान् '[2] कह कर पुकारा है। एक और सम्बोधन में भी ' कल्पना ' शब्द आया है—

निखिल **कल्पनामयि** ! अयि अप्सरि ![3]

ध्वन्यात्मक शब्द

पंत जी के काव्य मे प्रकृति के विविध उपादान और पशु-पक्षी अपनी कर्णमधुर स्वर-लहरियो से हमें मंत्र-मुग्ध कर देते हैं। वहां सरिताए ' **कलकल** ' और ' **छलछल** ' करती प्रवाहित होती हैं। **टलमल**, **रणमण**[4], और **रलमल**[5] भी उन्हीं की ध्वनियां हैं। वहां मेघ ' **रिम झिम झिम** ' और ' **झिम झिम** ' करके पर्वतपाटियो का आंचल भिगोते हैं। झरने ' **झर झर** ' करते झरते हैं और जल धारा ' **तड़ तड़** ' करती गिरती है। ' **छपछप** '[6] करके रेतीले कगार टूटते हैं। समीर ' **सनसन** ', पत्ते ' **सर सर** ' और तरु ' **चर चर** ' करते है।

पशु-पक्षियो मे कौए अपनी **कांव कांव**, मुर्गे **कुकड़ू कूं**, कोयल ' **कुहू कुहू** ', झींगर या झिल्लियां ' **झन झन** ', दादुर ' **टर टर** ' चिड़िया **टी-वी-टी-टुट-टुट**[7], चातक ' **पिऊ-पिऊ** ' और **पी-पी**, भ्रमर ' **उन्मन उन्मन** '[8], और ' **भन भन** ' तथा सियार ' **हुआ** ' शब्द करते है।

इतना ही नही वाद्य-यंत्रों का भी ' आर्केस्ट्रा ' सजा हुआ है। यहां दुदुभियां

---

१. पल्लव, नक्षत्र, १२०

२. पल्लव, बादल, १३३

३. गुंजन, अप्सरा, ९२

४. (क) स्वर्ण किरण, हिमाद्रि, १२ — ' **रणमण** उछल उत्स करते कलगान '

(ख) पल्लव, निर्झरी, ११५ — ' **रणमण** रोड़ो पर सयाम '

५. पल्लव, निर्झरी, ११५— ' फिरती हो रंगिणि **रलमल** '

६. युगपथ, युगांतर, त्रिवेणी, १५८ — ' **छप्-छप्** टूट रहा चादी सा बालू का तट '

७. प्रसिद्ध पंक्ति — ' है चहक रही चिड़ियां **टी-वी-टी-टुट-टुट** '

८. गुंजन, गुंजन — ' **उन्मन उन्मन** गुंजन '

कुडुम, कुडुम, घंटियां खन खन, घड़ियाल घनन घनन घन, पायल छमछम और छमछम, डमरू डगडग, ढोलक धाधिन धातिन, झिम झिम और खिनखिन, नूपुर रनन झणन, झन करते हुए देखे जा सकते हैं।

इनके अतिरिक्त कवि ने घन-नाद के लिए ठङ्-ठङ्-ठन, तालियों के लिए 'थप-थप', चरखे के भ्रम-भ्रम-भ्रम, तीर के लिए सनन् और सीटी के लिए 'सी-सी' की ध्वनियां लिखी हैं। उस की कविताओं में अग्नि 'धू-धू' करती धधकती है और अग्निशिखाएं 'लपलप' करती लपलपाती हैं।

इस प्रकार अनुकरणात्मक शब्दों के प्रति कवि ने अपनी स्वर-चेतना की गहनता का परिचय दिया है।

भगवती चरण वर्मा

संज्ञा

कवि ने प्राय. साधारण संज्ञाओ का ही प्रयोग किया है। कही कही काट [1], मदमातो [2] और हरीतिमा [3] जैसी विशिष्ट संज्ञाए है।

यहा '**काट**' स्त्री० (हि० काटना) का अर्थ है—कपटपूर्ण आचरण, युक्ति या व्यवहार। 'काट-काट' पु० शब्द भी इसी अर्थ मे चलता है।

'**मदमातों**' शब्द हि० मदमाता (स० मदमत्त) का बहुवचन रूप है।

'**हरीतिमा**' स्त्री० 'हरियाली' अर्थ मे पत जैसे छायावादी कवियो द्वारा पहले ही प्रचलित हो चुका है।

संज्ञा-विकार

इसके कुछ उदाहरण देखे—

अतध्यनि [4] (अतर्धान), अकाश [5] (आ), असत [6] (त्), अहम [7] (म्),

---

१, त्रिपथगा, द्रौपदी, ९६ — 'केवल छल-बल है एक **काट**'

२. प्रेम-संगीत, गीत ४, २६ — 'हम **मदमातों** की दुनिया मे'

३. त्रिपथगा, कर्ण, १७ — 'नन्दन-वन की मकर **हरीतिमा**'

४. मधुकण, नूरजहा की कब्र पर, ६७ — हलचल को करने को **अंतर्ध्यान**'

५. मानव, विस्मृति के फूल, १२५ — 'निकट **अकाश**'

६. मानव, याद, ४८ — 'वह चहल-पहल बन गया **असत**'

७. मधुकण, तारा एकाकी, ६० — '**अहम**-भाव है मुख्य'

आगी [1] (आग), आराध [2] (ध्य), आशीष [3] (शिस् या शिष्), उच्छवास [4] (च्छ्), उडुगन [5] (उडुगन), कन [6] (ण), करुना [7] (णा), गिरहकाट [8] (कट), चित [9] (चित् या चित्त), जगत [10] (त्), जनम [11] (जन्म), तनमयता [12] (न्म), पतिंगा [13] (पतंगा), प्रमान [14] (ण), प्राकृति [15] (प्रकृति), प्रानों [16] (णों), प्रेयसि [17] (सी), बाँकापन [18] (बाकपन),

---

१. मधुकण, कसक कहानी, १६ — ' प्रतिपल आगी पानी '

२. मानव, विस्मृति के फूल, १३६ — ' कौन सा आराधक है और कौन आराध '

३. मधुकण, तारा एकाकी, ६२ — ' तुम्हे गुरु पत्नी का आशीष है '

४. (क) मानव, एक रात, ३३ — ' कुछ ठडे से उच्छवास लिए '

(ख) मधुकण, जीवन, २६ — कालिका का उच्छवास-भरा '

५. मानव, गीत १, १७ — ' रवि शशि उडुगन बिखराते '

६. (क) मानव, गीत १, १८ — ' जग का प्रति कन '

(ख) रगो मे मोह, होली, ९८ — ' भू का प्रति कन '

७. मानव, विस्मृति के फूल, १२७ — ' करुना का एक अनोखा हास '

८ मानव, भैसागाडी, ७७ — ' हैं जहा चोर औ' गिरहकाट '

९. (क) मधुकण, कवि, ६ — ' तुम्ही में है सत, चित, आनन्द '

(ख) रंगो मे मोह, उलटी-सीधी, ८५ — ' बन गये हैं सत-चित-आनन्द '

(ग) त्रिपथगा, कर्ण, १९ — ' कभी न मेरे चित से '

१०. मधुकण, कवि, ७ — ' जगत के तुम मतवालेपन '

११. रगो से मोह, मेरी भूलो से मत उलझो, ३२ — ' जनम जनम का मैं अज्ञानी '

१२. प्रेम-सगीत, समर्पण, २ — ' जो तनमयता लाई थी '

१३. रगों से मोह, क्या जाने है कौन यहां पर, ३४ — ' सदा पतिंगा जलता आया '

१४. मानव, गीत २, १९ — ' इन दो सांसों का क्या प्रमान ? '

१५. मधुकण, नूरजहां की कब्र पर, ४९ — ' प्राकृति ही है इसके प्रतिकूल '

१६. रंगों से मोह, वसतोत्सव, ९९ — ' मेरे मुरझाए प्रानों में '

१७. वही, मान मनौता, ८९ — ' प्रेयसि नारी का अधिकार है '

१८. मधुकण, नूरजहाँ की कब्र पर, ४५ — ' बना भृकुटियों का बाँकापन '

बातास[1] (बतास), मरजात[2] (मरजाद या मर्यादा), मरम[3] (मर्म), मारग[4] (मार्ग), वक्षस्थल[5] (वक्ष स्थल), विद्युत[6](त्), विभ्राट[7] (ट्), ससय[8] (संशय), सत[9] (त्), समीरन[10] (ण), सम्पत[11] (त् या द्), सम्राट[12] (ट्), सरवर[13] (रो), साम्राज्ञी[14] (साम्राज्ञी), सिरहन[15] (सिहरन), सृष्टा[16] (स्र)।

---

१. (क) प्रेम-संगीत, गीत ४, २३ — ' मलय बातास डोली '
(ख) वही, गीत ८, ४३ — ' कम्पित-भ्रमित-सा बातास है '

२. रंगों से मोह, वर्मा जी ने मारी लात, ९४ — ' सेठ करोड़ी की मरजात '

३. मानव, गीत ८, ३९ — ' इस जीवन का एक मरम है '

४. रंगों से मोह, देखो-सोचो-समझो, ६० — ' मारग ही सीधा है '

५. (क) मधुकण, ससार, ३५ — ' निज वक्षस्थल पर ' ... ३८, ' उदधि के वक्षस्थल में '
(ख) वही, बादल, ४१ — ' जलधि के वक्षस्थल मे '

६. (क) मानव, मानव, ११९ — ' विद्युत को निगल लिया '
(ख) मानव, विस्मृति के फूल, १३६ — ' विद्युत की ज्वाल '

७. मधुकण, बादल, ४१ — ' घन बन विभ्राट विशाल '

८. मधुकण, कसक कहानी, १५ — ' संसय कभी, कभी विश्वास '

९. मधुकण. कवि, ६ — ' तुम्ही मे है सत '

१०. (क) त्रिपथगा, महाकाल, ५४ — ' झुक झुक रहा समीरन '
(ख) रगों से मोह, होली, ९६ — ' फिर मलय समीरन डोली '

११. वही, कुत्ते की दुम, ८७ — ' सुख-सम्पत की गड्डी '

१२. (क) त्रिपथगा, द्रौपदी, ८७ — ' सम्राट सकल भारत के '
(ख) वही, वही, ९४ — ' सम्राट बन चुका भारत का '

१३. (क) वही, कर्ण, २९ — ' दुर्गंध युक्त सरवर है '
(ख) वही, द्रौपदी, ९२ — ' गिर पड़े कि यह सरवर है '

१४. मधुकण, नूरजहां की कब्र पर, ४९ — ' साम्राज्ञी थी किंतु दैव था '

१५. मानव, गीत ४, २४ — ' किस मौन विवशता की सिरहन '

१६. मानव, गीत ११, ५८ — ' क्या सृष्टा का अस्तित्व घृणा '

विशेषण

विशेषण-प्रयोग भी कम ही हैं। अपवाद रूप में अठमहला [१] और स्वप्निल [२] कहीं कहीं उपलब्ध हो जाते हैं। 'स्वप्निल' तो छायावादी कवियों ने अंग्रेजी के 'Dreamy' शब्द के अनुकरण पर गढ़ा था।

विशेषण-विकार

इस के कुछ उदाहरण देखें—

अनूठ [३] (ठा), अपूरन [४] (अपूर्ण), उज्वल [५] (ज्ज), गतिमान [६] (न्), गहिरा [७] (गहरा), दयावान [८] (न्), निर्लज [९] (ज्ज), प्रवीन [१०] (ण), बुद्धिमान [११] (न्), भाग्यवान [१२] (न्), मगन [१३] (मग्न), महान [१४] (न्), मूर्तिमान [१५] (न्),

---

१. मानव, विषमता, ६९ — 'वह अठमहला उनका ही ऐश्वर्य-सदन'
२. मानव, मानव, ११७ — 'स्वप्निल छाया प्राचीन हुई'
३. रंगो से मोह, उलटी सीधी, ८४ — 'मैं भी बड़ा अनूठ'
४. मधुकण, प्रेम की प्यास, ३० — 'रह गई अपूरन आस'
५. (क) प्रेम-संगीत, समर्पण, २ — 'उज्वल प्रकाश आशा का'
(ख) वही, गीत ४, २७ — 'अनुभूति बनूं मैं अति उज्वल'
६. रंगो से मोह, चौंक उठी है काली रात, ३७ — 'हम है गतिमान'
७. मधुकण, तारा, ६० — 'दृढ़तर गहिरा सम्बंध है'
८. (क) मानव, विषमता, ६९ — 'धर्म-मूर्ति वे दयावान हैं'
(ख) मानव, राजा साहब का वायुयान, ८७ — 'श्रीमान बड़े हैं दयावान'
९. त्रिपथगा, द्रौपदी, १०५ — 'निर्लज भाव से हंसता है'
१०. मानव, गीत ११, ५८ — 'यौरप तो रक्तपान में है प्रवीन'
११. मानव, राजा साहब का वायुयान, ८८ — 'राजा साहब हैं बुद्धिमान'
१२. त्रिपथगा, द्रौपदी, १०२ — 'सुयोधन भाग्यवान है'
१३. मानव, कवि का स्वप्न, ३७ — 'अभिलाषा में लीन मगन'
१४. मधुकण, मेरी आग, ९ — 'आहुतियां ले आया हूं आज महान'
१५. त्रिपथगा, कर्ण, ११ — 'मृत्यु आज मूर्तिमान'

विराट[1] (ट्), विषद[2] (विशद), विशाक्त[3] (षा), शक्तिवान[4] (मान्), श्रीमान[5] (न्)।

विशेषण-विपर्यय

इन के उदाहरण भी विरल ही है। यथा—

विकल[6] (पीड़ाएं), और समर्थ[7] (शीश)

क्रिया

कुछ उल्लेखनीय क्रियाएं ये हैं—

अनुमान[8], अनुरागे[9], तड़े[10], निर्माण[11], संचारे[12], सन्धानो[13], सृजतीं[14], और सृजें[15]।

---

१. (क) त्रिपथगा, कर्ण, १४ — 'केशव **विराट** को देखूं'
(ख) त्रिपथगा, द्रौपदी, १११ — 'बन कर **विराट**'

२. (क) मानव, विषमता, ७० — 'व्यापार **विषद**'
(ख) मानव, राजा साहब ..., ९२ — '**विषद** ज्ञान'

३. रंगों से मोह, समर्थ शीश दान दो, ५६ — '**विशाक्त** हास्य हंस रही'

४. मानव, राजा साहब का वायुयान, ९१ — 'है राजा साहब **शक्तिवान**'

५. मानव, वही, ८७ — '**श्रीमान** बड़े है दयावान'

६. मानव, गीत ३, २१ — 'मेरी पीडाए एक एक है बदल रहीं करवटे **विकल**'

७. रगो से मोह, कविता-शीर्षक — '**समर्थ** शीश दान दो'

८. मानव, मानव, १२२ — 'अब तक न यहां **अनुमान** सका'

९. त्रिपथगा, कर्ण, १३ — 'ये बाण युगो की हिंसा से **अनुरागे**'

१०. मानव, ट्राम, ८० — 'कुछ थे जेबों को **तड़े** हुए'

११. मानव, विस्मृति के फूल, १३५ — 'मै ने ही **निर्माण** किए हैं'

१२. त्रिपथगा, कर्ण, ३७ — 'यों एक एक कर सात बाण **संचारे**'

१३. (क) त्रिपथगा, कर्ण, २६ — '**सन्धानो** अपने शर'
(ख) त्रिपथगा, कर्ण, ३२ — 'बाण **सन्धानो**'
(ग) त्रिपथगा, कर्ण, ३६ — 'तुम **संधानो** निज बाण'

१४. मानव, विस्मृति के फूल, १४५ — 'अभिलाषाएं **सृजतीं** एक असीम'

१५. प्रेम-संगीत, गीत ९, ४७ — 'हम तुम मिल कर के चलो **सृजें**'

इन में ' **लड़ना** ' स० क्रि० ' ठूँसना, ऊपर तक भरना ' अर्थ में नयी है।

' **निर्माणना** ' स० क्रि० भी ' निर्माण ' म० क्रि० के अनुकरण पर नयी ही गढ़ी गई है। अर्थ—निर्माण करना।

क्रिया-विकार

ये भी विरल ही है यथा रक्खी [1] (रखी), और रक्खे [2] (रखे)

उपसर्ग

अ, अन (सं० अन्) **दुर्, निर्, प्र, बे,** (फा०) और **सु** उपसर्ग जोड़ने वाले शब्द क्रमशः इस प्रकार हैं--

अगणिन, अगनित, अजान, अजाने, अथक, अप्राकृत, अबल, अभद्रा, अविचार अविवेकी, इत्यादि।

अनगिनती, अनचाही, अनचाहे, अनबद्ध, अनर्गल अनाचार, अनादि, अनायार, अनुचित और अनुपम।

दुर्दान्त, दुर्दैन्य।

निरपराध, निरर्थक, निरवलम्ब, निरादर, निरापद, निरामिष, निरुपाय, निर्गुण, निर्बंध, निर्विवाद।

प्रज्वलित, प्रबुद्ध, प्रशात, प्रस्फुटित और प्रस्वेद।

बेकार, बेकौडी, बेगाना, बेचारो, बेचैन, बेपीर, बेसुध और बेहद।

सुकुमार, सुकोमल, सुमधुर, सुमुखि, सुयश और सुरुचि।

लिंग

कवि ने उठान [3], उथल-पुथल [4] और बूंद [5] हिं० स्त्री० शब्दों को पुं० में लिखा है। संस्कृत में उत्थान नपुं० और बिंदु पुं० शब्द हैं।

' **मनौता** ' [6] नया पुं० शब्द है (मनौती स्त्री० से)।

इन के विपरीत जिन हिं० पुं० शब्दों को कवि ने स्त्री० माना है वे ये हैं —

---

१. प्रेम-सगीत, गीत १६, ६६ — ' पहन **रक्खी** है मैं ने '

२. मानव, जीवन-दर्शन, ६४ — ' मैं देख रहा हूं भू पर **रक्खे** '

३. मधुकण, संसार, ३६ — ' है **विप्लव का कभी उठान** '

४. मधुकण, अतीत स्मृति, ७५ — ' वह **यौवन** का **उथल-पुथल** '

५. मानव, साकी, २०६ — ' तेरी मदिरा का **बूंद बूंद** दीवाना '

६. रंगो से मोह, मान-मनौता, ८९ ' मान-**मनौता** प्रेयसि नारी का अधिकार है '

जाल[1], झंझावात[2], धन्वा[3], पिक[4], प्रलय[5], बाजार[6], सामर्थ्य[7], स्पंदन[8], और हुँकार[9]।

संस्कृत में **जाल, सामर्थ्य, स्पन्दन** नपुं० शब्द हैं। वहां **झंझावात, पिक, प्रलय** और **हुँकार** भी पुं० ही है। संस्कृत में धन्वन् पुं०, नपु० है। हिं० में '**धन्वा**' पुं० ही है।

खट्ठ या खड्डा पुं० शब्द से खड्डी[10] नया स्त्री० शब्द बना लिया गया है।

वचन

वचन सम्बन्धी भूलें बहुत कम हैं। **प्राण**[11] शब्द सदा बहुवचन में ही आता है। किंतु कवि ने इसे एक वचन में भी लिखा है।

---

१. मधुकण, तारा एकाकी, ६२ — 'सुन्दरता की **जाल** हो'

२. मधुकण, तारा एकाकी, ६६ — 'तुम हो **झंझावात** भयानक क्रांति की'

३. (क) त्रिपथगा, कर्ण, १३ — 'सुयोधन मेरी **धन्वा** देखो'

(ख) त्रिपथगा, कर्ण, २६ — 'अपनी **धन्वा** पर सधानो'

४. प्रेम-सगीत, गीत ६, २८ — 'पंचम मे **पिक** बोली'

५. रंगों से मोह, समर्थ शीश दान दो, ५५ — '**प्रलय** उमड रही'

६. मानव, कुछ क्षण, १०३ — '**बाजार** उठ रही'

७. रगो से मोह, सपनो पर अधिकार, ४७ — 'है इतनी **सामर्थ्य** भला कब'

८. (क) त्रिपथगा, महाकाल, ४८ — 'मैं छवि की **स्पन्दन** हूं'

(ख) रगों से मोह, चौंक उठी है काली रात, ३७ — 'छवि की **स्पंदन**-सी'

९. मानव, मानव, ११७ — 'जब जीवन की **हुंकार** हुई'

१०. रगों से मोह, कुत्ते की दुम, ८७ — 'नही है कोई खाई **खड्डी**'

११. (क) मानव, मानव, ११६ — 'जब कौतूहल-सा **प्राण** मिला'

(ख) मानव, विस्मृति के फूल, १३० — 'मेरा छोटा सा **प्राण**'

'अनेकों'[1] बहु० शब्द सर्वनाम के रूप में आ सकता है (यथा अनेकों ने भोजन किया है) किंतु कवि ने इसे विशेषण के रूप मे भी लिखा है।

संधि

कुछ दीर्घ स्वर संधियां दर्शनीय हैं—

कण्टकाकीर्ण, गर्वांध, चिन्ताकुल, प्रेमालिगन, प्रेमासव, मेघावलिया, रक्तांचल रक्तांजलि, वस्त्राभूषण, विश्वात्मा, शरणागत इत्यादि।

स्वरों की गुण संधियां विरल है यथा गर्वोच्छ्वास, गर्वोन्नत, और प्रेमोन्मत्त। तेजोमयी और मनोभाव सरीखी विसर्ग संधियां भी कम ही है।

समास

कुछ सम्बन्ध तत्पुरुष समास ये है—

अग्नि-पुंज, चरण-चुम्बन, जीवन-नाथ, देव-रक्त, निशि-बेला, पद-माप पुत्र-ममता, मधुप-होली, राम-नाम, वारिद-माला, सकोच-भार, ससार-सृजन, सून-पुत्र, सौरभ-भार, स्वर्ग-लाभ, स्वेद-कणों, हृदय-रक्त।

करण तत्पुरुष समास ये है — क्षुधा-ग्रस्त, गौरव-युक्त, जल-प्लावित, व्यथा-सिक्त।

अपादान तत्पुरुष समास भी है यथा पथ-भ्रष्ट, मति-भ्रष्ट और लक्ष्य-भ्रष्ट।

कुछ द्वन्द्व समास देखे — कुडल-कवच, घृणा-धर्म, जस-अपजस, नृत्य-संगीत, भमि-संपदा, विलाप-रुदन, सुख-शृंगार, सुख-सपना।

कतिपय कर्मधारय समास द्रष्टव्य है—

अपमान-गरल, उच्छ्वास-सुधा, उर-मंदिर, कल्पना-पख, कल्पना-सुरा काल-चक्र, चेतना-दीप, मृत्यु-धूम्र, विनाश-घन, समय-सिंधु और सुख-सिंधु। इन में उपमानोत्तरपद समास ही हैं।

'स' जोड़ कर बनने वाले कुछ अव्ययीभाव समास देखे — सकरुण, सकाम, सगर्व, सजल, सतेज, सनाथ, सबल, सविनय, सशक्त, ससीम, सहास, साकार और सोल्लास।

---

१. त्रिपथगा, महाकाल, ५४ — 'रहे अनेकों निर्झर'

अन्य शब्द-विकार

कुछ विशिष्ट शब्द-विकार देखें—

निशदिन [1] (निशिदिन या निसदिन), पृथक [2] (क्). स्वयम [3] (म्

अव्यय 'निशिदिन' [4] का प्रयोग ही अधिक देखा जाता है। 'निसि
भी उपलब्ध हो जाता है, किंतु 'निशदिन' बहुत कम मिलेगा। पृथक् और स
शुद्ध अव्यय-रूप हैं।

नव शब्द

कुछ विशिष्ट शब्द-प्रयोग विवेचनीय हैं—अनुपक्षी [5], अमरौत
अलफजों [7],

---

१. मधुकण, स्वागत, ७१ — 'खेला करती है **निशदिन** प्राणों से'

२. मानव, विस्मृति के फूल, १३७ — '**पृथक-पृथक** व्यक्तित्व यहां है — पृ
पृथक है य

३. (क) प्रेम-संगीत, गीत ५, ३१ — 'मै **स्वयम** डुबा लूं जिस में'

(ख) मानव, समस्या, ९८ — मै **स्वयम** ही गुन रहा हूं'

(ग) मानव, कानपुर मेमोरियल वेल पर, १०९ '**स्वयम** ही जल जाता है

(घ) रंगो से मोह, मैं ने जीवन को कब समझा, २५ — 'भार बन गई है
चेतना **स्वय**

४. तुल० '**निशि दिन** रहत सूर के प्रभु बिनु मरिवो तऊ न जात जियो (
२५४

५. त्रिपथगा, द्रौपदी, ७५ — 'पूजित है द्रौण क्योंकि कुरुकुल **अनुपक्षी** है'

६. रंगों से मोह, बहते जाना भाई, २२ — 'है कौन यहां पर ऐसा जो खा अ
ही **अमरौ**

७. रंगों से मोह, वर्मा जी ने खाए आम, ३१ — 'छै **अलफ़ंजों** पाव पाव के'

कुहू [1], दन्द [2], रूमझूम [3], सरजात [4], सीबल [5]।

अनुपक्षी' संज्ञा पु० शब्द का यहा अर्थ है पक्षपाती — पक्ष लेने वाला। 'अनु' उपसर्ग यहां 'पीछे' अर्थ मे ठीक वैसे ही नही है जैसे 'अनुपदी' में है।

'अमरौती' भाव० सज्ञा है (स० अमर+हि० औती प्रत्यय) अर्थ — अमरत्व अमरता, अनश्वरता।

'अलफ़ांजों' आमो का एक प्रकार विशेष है।

'कुहू' (या कुहु) स्त्री० शब्द तत्सम है। अर्थ — अमावस्या, कोकिल की हूक। यहां 'कोकिल' नया अर्थ ही माना जाएगा। यह अर्थ-विस्तार का सुन्दर उदाहरण है।

'दन्द' (स० द्वन्द्व) पुं० शब्द यहां फारसी के 'शोशा' अर्थ मे संभव है जिसका अर्थ है 'व्यग्य करते हुए कोई झगडे वाली बात कहना' या 'कोई त्रुटि निकालना'।

व्रजभाषा में 'रूमना' स० क्रि० 'झूमना' की भाति अनुकरणात्मक है। इन दोनों के मेल से नयी क्रिया बनी है — रूमझूम। अर्थ — 'झूम झूम कर'। तुल० 'जाने किसकी स्मृति रूमझूम' (महादेवी वर्मा)

फ़ारसी मे 'सरजाह' (और सरजग) पु० शब्द सरदार, सेनापति अर्थो मे है। इसी से हि० 'सरजा' पु० शब्द सम्बद्ध है। यह छत्रपति शिवा जी की एक

---

१. (क) मधुकण, ससार, ३३ — 'बौर पर बौरा कुहू-समाज'

(ख) मानव, विस्मृति के फूल (२), १४३ — 'कुहु-कुहु स्वर में कुहु अथक'

२ रगों से मोह, उलटी सीधी, ८५ —'बैठे ठाले कुछ नया दन्द या फन्द'

३. मधुकण, ससार, ३२ — 'झर रहे रूमझूम कर निर्मल निर्झर'

४. रंगो से मोह, वर्मा जी ने खाए आम, ९२ — 'काले बाजार का है सरजात बुलाकी राम'

५ त्रिपथगा, द्रौपदी, १०३ — 'उस मे ही हम भाग्य-विहीनों का सीबल है'

उपाधि [१] भी है। इसी 'सरजा' का विकृत रूप है 'सरजात'। अर्थ — मुखिया, प्रधान।

'सीबल' पु० शब्द यहां सं० तत्सम शब्द 'सम्बल' का ही विकार जान पड़ता है। यहां 'सहारा' अर्थ संभव है।

प्रिय शब्द

कवि की प्रिय शब्दावली इस प्रकार है — अजान, अथाह, अनियंत्रित, अपनापन, अपनेपन, अलसित, अविकल, अमत, अमह, अहम्, आशीष, जागृति, तन्मयता, पुलकन, प्रतिकाल, बेसुध, मर्माहत, महान्, मानापमान, राग-रग, रूप-राशि, वक्षस्थल, व्यंग, सकरुण, सकल, सत्, सिहरन, सुखद, सुख-सुषमा, सुख-स्वप्न और स्वयम्।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि ने ध्वनि-चित्रों का भी विधान किया है किन्तु उन की सख्या बहुत अधिक नहीं है।

लहरों की **कलकल** [२], लता की **मर्मर** [३], वर्षा की **रिमझिम** [४], पीपल की **खड़ खड़** [५] यहां भी है।

पक्षियों मे कोयल की **कुहु-कुहु** [६], भ्रमर का **गुन-गुन** [७], चातक की **पिहु-पिहु**, [८] उलूक की **फड़फड़** [९] यहा भी दर्शनीय है।

---

१. तुल० साजि चतुरग वीर रग मे तुरग अति
सरजा सिवा जी जंग जीतन चलत है (कवि भूषण)

२. (क) मानव, मानव, ११३ — 'लहरों को **कलकल** गान मिला'
(ख) मानव, विस्मृति के फूल (२), २८२ 'कलकल ध्वनि में छलक रहा है'

३. मानव, समस्या, ९९ — 'गा उठी **मर्मर** स्वरों मे लता'

४. त्रिपथगा, द्रौपदी, १११ — 'सावन की **रिमझिम**'

५. मानव, याद, ४८ — '**खड़ खड़** कर कांप उठा मेरे दरवाज़े का पीपल'

६. मानव, विस्मृति के फूल (२) १४३ — '**कुहु-कुहु** स्वर में कुहु अथक'

७. (क) त्रिपथगा, महाकाल, ५४ — 'भ्रमरों में पागलपन का **गुन-गुन** गुंजन'
(ख) रंगों से मोह, मेरी पहचान, १५ — 'अलि मे **गुन-गुन** गुंजन'

८. मानव, विस्मृति के फूल (२), १४३ — '**पिहु-पिहु** रटता है चातक'

९. मानव, याद, ४७ — '**फड़-फड़** उड़ गया कर्कश उलूक'

परिवहन के साधनो में ट्रामें **घर-घर-घर** [1], भैंसागाड़ी **चरमर चरमर चूं चरर मरर** [2] करती चलती हैं।

नूपुर और पायल की **रुनझुन** [3] यहां भी है। घंटे यहां भी **घन-घन** [4] 'करते घनघनाते है। घड़ी '**टक टक** [5]' करती है और तारे '**टिमटिम**' [6] टिमटिमाते हैं।

अत: वर्मा जी ध्वन्यात्मक शब्द-योजना के प्रति भी जागरूक माने जा सकते है।

---

१. मानव, ट्राम, ८० — '**घर-घर-घर-घर** चल पड़ी ट्राम'

२. मानव, भैंसागाडी, ७३ '**चरमर-चरमर-चूं-चरर-मरर** जा रही चली भैंसागाड़ी'

३. (क) प्रेम-सगीत,समर्पण, २ — 'नूपुर के **रुनझुन** स्वर में'

(ख) रंगों से मोह, होली, ९८ — 'जब **रुनझुन रुनझुन** छमक उठी'

४. (क) मानव, याद, ४८ — '**घन-घन** वह घटे का प्रहार'

(ख) मानव, गीत ११, ५३ — '**घन-घन** घण्टों की ध्वनि में'

५. मानव, याद, ४८ — 'सुन रहा घड़ी-सी **टक-टक** करती'

६. मानव, याद, ५१ — '**टिम-टिम** करने वाले तारे'

डॉ० राम कुमार वर्मा

संज्ञा

वर्मा जी की कविताओ में सज्ञाओ के प्रयोग ठीक ही हुए है। सज्ञा-रूपों को विकृत करना उनकी शब्द-रुचियो के विपरीत है।

जागृतपन [1] और शिशुपन जैसी भाव० सज्ञाए विशेष रूप मे द्रष्टव्य है। एक स्थल पर 'होनी' [2] स्त्री० शब्द का नया प्रयोग है। यहां 'सभव' अर्थ में 'होनी' शब्द जान पडता है।

विशेषण

नये विशेषण-प्रयोग भी नगण्य है। अधचबी [3] जैसे वि० शब्द तो अब काव्य मे प्रचुर होते जा रहे है।

कुछ विशेषण-विकार ये है — ऐकाग्र [4] (एकाग्र), चक्रित [5] (चकित), मिष्ठ [6] (मिष्ट)।

---

१. आधुनिक कवि, रूपराशि, ८९ — 'भूलो इस **जागृतपन** की याद'

२. एकलव्य, सर्ग ४, प्रेरणा, ७९ — '**होनी**-सी बात कह रे'

३. एकलव्य, सर्ग ९, संकल्प, १८२ — '**अधचबी** दूब छोड़'

४. एकलव्य, एकलव्य, स्तव, ७ — 'ऐसी साधना दो मुझे **ऐकाग्र** एकलव्य'

५. एकलव्य, एकलव्य, स्तव, ७ — '**चक्रित** हो साधना मे यह सृष्टि सारी ही'

६. (क) एकलव्य, लाघव, २४७ — 'शीघ्र उस भृत्य मे सजाए **मिष्ठ** व्यजन'

(ख) एकलव्य, सर्ग १४, दक्षिणा, ३०३ 'जैसे **मिष्ठ** भोजन दे जीभ कोई काट ले'

' चकित ' अर्थ में ब्रजभाषा में ' चक्रित ' [1] विशेषण-रूप भी चलता है।

कहीं कहीं संज्ञार्थक विशेषण भी हैं यथा भिक्षुक [2] हाथ।

क्रिया

कुछ उल्लेखनीय क्रियाएं ये हैं — यथा चपेटता [3], दहो [4], संधाना [5], हहर [6] इत्यादि।

ब्रजभाषा में ' चपेटना ' स० क्रि० ' दबोचना या दबाना ' अर्थ में है।

यहां ' दहना ' अ० क्रि० ' जलना ' अर्थ मे ही है।

' संधानना ' [7] स० क्रि० भी ब्रजभाषा में चलती है। अर्थ — ' लक्ष्य पर तीर छोडना, निशाना लगाना '।

' हहरना ' अ० क्रि० अनुकरणात्मक है। अर्थ — ' हहर हहर करना '।

क्रिया-विकार

कुछ उदाहरण देखे —

जाय [8] (जाये या जाए)

---

१. तुल० ' सुनत नद जसुमति चक्रित चित, चक्रित गोकुल के नर-नारि '
(सूर० ४३०)

२ आधुनिक कवि, अभिशाप, ११७ ' उठा शून्य में रह जाता है मेरा भिक्षुक हाथ '

३. एकलव्य, सर्ग ९, संकल्प, १८५ — ' झाड़ियों के झुडो को चपेटता या मेटता '

४. आधुनिक कवि. आत्म समर्पण, २४ — ' प्रेम की अग्नि से यदि तुम दहो '

५. एकलव्य, सर्ग २, परिचय, ३५ — ' एक बाण को अनेक विधि से सधाना है '

६. आधुनिक कवि, अजलि, १२७ — ' लहर हहर कर यदि चूमे तो '

७. तुल० (क) मनु मदन धनु-सर संधाने देखि धन-कोदंड (सूर० १ — ३०७)
(ख) काम-बाण पांचों संधाने — (सूर० — १० — १०५)

८. एकलव्य, सर्ग ८, ममता, १५५ — ' रक्षा करने के लिए कौन अब जाय '

लाय[1] (लाये या लाए) और सताय[2] (सताये या सताए)

उपसर्ग

अ, कु और सु उपसर्ग कवि को विशेषतः प्रिय हैं — । उदाहरण इस प्रकार हैं --

अकुशल, अजान, अदर्शन, अबंदी, अबोल, अमलीन, अमित्र, अरथी, अशरीर और अश्रोत्रिय ।

कुअक, कुछाल, कुभाग्य, कुभूमि, कुविप्र, कुशब्द ।

स-अंग, सुग्राही, सुचल, सुदृढता सुदृष्टि, सुनेम, सुभूमि, सुभृत्य, सुमूर्ति, सुराग, सुसाध्य, सुस्थापित ।

लिंग

वर्मा जी ने सर्वत्र लिंगानुशासन का पालन ही किया है। अपवाद रूप में 'चेतना'[3] शब्द पुं० रूप में प्रयुक्त हुआ है। संस्कृत और हिंदी उभय भाषाओं में यह स्त्री० ही है।

वचन

वचनों के सम्बंध में भी नये प्रयोग लगभग न के बराबर है। एक स्थल पर 'रीति'[4] शब्द बहुवचन में भी वैसे ही रहने दिया गया है।

---

१. एकलव्य ममता, १५६ — 'तुम्हारा सब सख लौटा लाय'

२. एकलव्य, ममता, १५५ — 'निर्बल प्राणी को न कभी कोई बलवान सताय'

३. एकलव्य, सर्ग १०, साधना, २०२ 'तो समस्त चेतना है अनरा आलाप-सा'

४. एकलव्य, द्वन्द्व, २६२ — 'मैं ने समझा दिया उसे विभिन्न रीति से'

संधि

कुछ **दीर्घ स्वर-संधियां** ये हैं—

अम्बराम्बर, चक्राकार, चिंतनाकाश, जटाटवी, दर्शनाभिलाषी, नखाघात, रक्तिमांगुष्ठ, सध्याकाश, सागरांत, साधनावकाश।

अस्तोन्मुख, मन्दोच्छ्वास जैसी **गुण स्वर संधियां** बहुत कम हैं।

डमन्निनाद[1] जैसी संधियां हिंदी में अधिक प्रचलित नहीं हैं।

एक स्थल पर 'तपोऽग्नि' की बजाय तपोअग्नि[2] अशुद्ध संधि-रूप लिखा गया है। हिंदी में 'ऽ' चिह्न का अभाव है उसी को कवि ने कदाचित् 'अ' लिख कर बताना चाहा है।

समास

कुछ **सबंध तत्पुरुष समास** ये हैं —पावस-तम, पूजा-हार, लक्ष-साधना, सुधा-धार, स्वर-लिपि।

कर्मधारय समास कवि को बहुत पसंद है यथा — अभिलाषा-तरु, उर-तट, गीत-विहंग, जीवन-तरी, जीवन-दीप, तारक-फूल, नभ-पथ, रूप-ऋतुपति, ससार-विविर, समय-लता।

'स' जोड़ कर बनने वाले कतिपय **अव्ययीभाव समास** ये हैं — स-ओज, सगति, सतम, सतेज, सनरेश, सनेत्र, सभग, स-भूल, समौन, सरत्न, सरौद्र, सलक्ष्य, सश्रद्धा, ससमीर, साकर्षण, साश्रु।

कुछ **विविध समास** ये हैं — अपनापन-पथ, किरण-गान, किरण-सांस, पुष्प-शरीर, मन-भर।

---

१. एकलव्य, स्तव, ४ — 'हल् जैसे डमन्निनाद सूत्र'

२. एकलव्य, सर्ग २, परिचय, ३१ — 'भाग्य-लेख मानो तपोअग्नि'

शब्द-लोप

'के लिए '[1], को [2], पर [3], में [4] और से शब्द अनेक वाक्यों में लुप्त से जान पड़ते है। कहीं कहीं ये लोप लय की आवश्यकता के अनुसार ही हैं।

अन्य शब्द-विकार

अनन्द (आनन्द), गाअ (गाय), दूद (दूध), मआलाज (महाराज), माथ (माथा), माल (माला) और रेख (रेखा) जैसे शब्द-विकार भी द्रष्टव्य हैं। इन में गाअ, दूद और मआलाज शब्द तो शिशु-भाषा के सुंदर नमूने हैं।

मनीमन[6] (मन ही मन) शब्द-संयोग का उदाहरण है।

नव शब्द

एकलव[7],

---

१. (क) एकलव्य, सर्ग ८, ममता, १४८ — 'जीवित रह गई न जाने इस जीवन में क्या क्या खोने' (**के लिए**)

(ख) एकलव्य, सर्ग ८, ममता, १४८ — 'शेष क्या रहा इन्हे इस मन में धोने' (**के लिए**)

२. एकलव्य, सर्ग १३, द्वन्द्व, २६१ — 'रात्रि होने (**को**) आई है'

३. आधुनिक कवि, एकलव्य, ३८ 'शिक्षा-नीति राजनीति के पदो (**पर**) हैचलती'

४. (क) एकलव्य, सर्ग ८, ममता, १५९ 'लाल के लिए विजन (**में**) विचरूंगी'

(ख) एकलव्य, सर्ग ८, ममता, १४८ — 'खोज रही हू आज तुझे मैं सूने घर के कोने कोने' (**में**)

५. आधुनिक कवि, अंजलि, १३७, 'और पुतली ने धीरे (से) छुआ'

६. एकलव्य, सर्ग ४, प्रेरणा, ७७ — 'बात सोचेगा **मनीमन**'

७. एकलव्य, सर्ग ३, अभ्यास, ७६ — 'चाहता है दास एकलव्य **एकलव से**'

वियति [1], और हरीतिमा जैसे शब्द-प्रयोग विशिष्ट कहे जा सकते हैं।

' एकलव ' स्त्री० शब्द यहां नया है। अर्थ — अनन्यमनस्कता, एकाग्रचित्तता, मनोयोग।

' वियति ' स्त्री० निरर्थक है। जैसे ' पानी-धानी ' में ' धानी ' अर्थहीन है वैसे ही नियति-वियति मे ' वियति '।

' हरीतिमा ' स्त्री० तो पंत जैसे छायावादी कवियों द्वारा पहले ही चलाया जा चुका है। अर्थ — ' हरियाली '।

प्रिय शब्द

ये शब्द-प्रयोग कवि की शब्द-रुचियों के वाहक हैं —

आशीस्, इन्द्रधनुषी, जागृतपन, नाराच, ब्राह्मवेला, रेख, शिशुपन, सजीव, सतम, सभीत, सवेग, सहास, सीकबाण, सुदृष्टि, सुभूमि और सुरत्न।

इन में भी इन्द्रधनुषी, सतम और सवेग शब्दों की अनेक बार आवृत्ति हुई है।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि की कविताओं मे इन शब्दों की सख्या बहुत कम है यथा जल के लिए कलमल, छलछल, पत्तो के लिए चरमर [2], मरमर।

वृक्ष-डाल यहां भी ' तड़ाक् ' [3] से टूट जाती है। लक्ष्य सधानता हुआ बाण ' घुर-घुर ' [4] ध्वनि से गिरि-कदराओ को गुंजा देता है। अंगार ' धक्-धक् ' [5] करता हुआ धधकता है।

किंतु ऐसे शब्द सख्या में कम हैं।

---

१. आधुनिक कवि, रूपराशि, ९२ — ' भूलें नियति-वियति का चक्र '

२. एकलव्य, सर्ग १२, लाघव, २३९ — ' वृक्ष चरमर टूटते हैं मूल से '

३. एकलव्य, लाघव, २३९ — ' डाल डाल बोझ से तड़ाक टूट जाती है '

४. एकलव्य, लाघव, २३८ — ' घुर-घुर शब्द से गूंजता गिरि गह्वर '

५. एकलव्य, सर्ग २, परिचय, ५० — ' हृदय अंगार जैसा धक्-धक् जलता था '

श्री जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द'

संज्ञा

डॉ० रामकुमार वर्मा की भांति मिलिंद जी का काव्य-संभार भी बहुत कम है अतः उन के द्वारा प्रयुक्त शब्द-प्रयोगों की संख्या भी कम ही है। कवि द्वारा प्रयुक्त विशिष्ट संज्ञाओं में जगमग [1] और महाप्राणता [2] विशेषत: उल्लेखनीय हैं —

'**जगमग**' यहां 'जगमगाहट' अर्थ में है।

'**महाप्राणता**' में 'तल्' प्रत्यय जुडा। है अर्थ — शक्तिमत्ता, गरिमा।

संज्ञा-विकार

कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

अघातों [3] (आ), आशीष [4] (शिष् या शिस्), परवा [5] (परवाह),

---

१. बलिपथ के गीत, पथिक और दीपावलि, ६१ — 'जग की **जगमग** देख अपार'

२. जीवन-संगीत, झांसी वाली रानी की समाधि पर, १०५ — 'देश को जिसने **महाप्राणता** दे डाली'

३. बलिपथ के गीत, परतंत्र भारत की आत्मग्लानि, १०५ 'अगणित **अघातों** से'

४. वही, मन्वन्तर, १४१ — 'गुरुता का वर या **आशीष**'

५. वही, विश्वयुद्ध-सैनिक भारत में, १११ 'उच्च लक्ष्यों के हित **परवा क्या है?**'

विद्वान[1] (न्), शताब्दि[2] (ब्दी), सम्राट[3] (ट्)।

विशेषण

विशेषणों में नये प्रयोग नगण्य हैं। विशेषण-विकार अवश्य हैं यथा—

गतिमान[4] (न्), द्युतिमान[5] (न्), प्राणवान[6] (न्), बलवान[7] (न्), महान[8] (न्), विराट[9] (ट्) और हृदयवान[10] (न्)।

विशेषण-विपर्यय

इसके उदाहरण भी विरल है यथा आषाढ़ी[11] (आंखों)

---

१. भूमि की अनुभूति, नव सस्कृति, ३९ — 'ऐसे विद्वान बहुत'
२. बलिपथ के गीत, बापू के आँसू, ३० — 'एक अर्ध शताब्दि से भी'
३. भूमि की अनुभूति, श्रमजीवी की मर्मव्यथा, १०६ — 'सम्राट हुए कितने'
४. (क) जीवन-संगीत, कुछ का कुछ, ३६ — 'गंगा फूट पड़ी गतिमान'

   (ख) वही, प्रतीक्षा, ५३ — 'बने गतिमान'
५. (क) वही, राका मे, ३५ — 'नभ में जग-मग द्युतिमान'

   (ख) वही, झांसी वाली रानी की समाधि पर, १०२ — 'द्युति से है द्युतिमान'
६. भूमि की अनुभूति, लघुता का विद्रोह, ७५ — 'साधना-निरत स्वर प्राणवान'
७. बलिपथ के गीत, दिल्ली मे हलचल क्या है ?, ९८ — 'वे मानव बलवान'
८. (क) वही, परतंत्र भारत की आत्मग्लानि, १०५ — 'एक महान राष्ट्र'

   (ख) भूमि की अनुभूति, आषाढस्य प्रथम दिवसे, ५० 'उस महान कवि की'
९. (क) जीवन-सगीत, मरणोन्मुख — 'विराट की महिमा'

   (ख) बलिपथ के गीत, परतंत्र भारत की आत्मग्लानि, १०८ 'एक विराट स्वप्न'
१०. भूमि की अनुभूति, किरण और कुटीर, ५७ — 'जो हृदयवान है'
११. जीवन-सगीत, स्नेहमयी, ३३ — 'इन आषाढ़ी आंखों में अंतर् का स्नेह'

क्रिया

क्रिया तथा क्रिया-विकार में विशेष रूप से उल्लेखनीय उदाहरण खोजने पर भी नहीं मिले हैं। सभी प्रयोग साधारण ही हैं।

उपसर्ग

अ, अन (सं० अन्), दुर्, निर्, प्र, बे, सम्, और सु उपसर्गों के उदाहरण क्रमश: इस प्रकार हैं—

अचेतना, अजान, अथक, अनिकेतन, अपढ़, अमौलिक, अलख, अविवेक, असुंदर।

अनंत, अनजाना, अनतिदूर, अनदेखा, अनमोल, अनाभरण, अनावृष्टि।

दुर्गति, दुर्दंड, दुर्दम्य, दुर्दिन, दुर्द्धर्ष, दुर्निवार, दुर्निवार, दुर्लभ।

निरवधि, निराधार, निराभरण, निर्दय, निर्विकार।

प्रकंपन, प्रज्ज्वलित, प्रदीप्ति, प्रवंचित, प्रसुप्त।

फा० 'बे' इन शब्दों में है — बेघर, बेझिझक, बेनकेल, बेबस, बेहाल और बेहोशी।

समादृत, समुन्नत।

सुकुमार, सुपरिचित, सुयोजित, सुवास, सुशीतल और सुसज्जित।

लिंग

दाह[1] और श्वास[2] शब्द संस्कृत, हिंदी और ब्रजभाषा में प्राय: पुं० ही रहते हैं जबकि कवि ने इन्हें स्त्री० में भी लिखा है। उर्दू में 'सांस'[3] स्त्री भी है उसी के

---

१. जीवन-संगीत, प्रायश्चित्त, ८८ — 'उर की है यह दारुण दाह'

२. बलिपथ के गीत, क्रांतिप्रेमी का प्रेम, ९१ — 'आत्मबलि की श्वास से जीता'

३. मानक हिंदी कोश, पांचवां खण्ड ; दे० 'सांस'

प्रभाव से यहां ' श्वास ' को स्त्री० लिखा गया है।

' प्राण '[1] शब्द सदा बहुवचन में हा प्रयुक्त होता है पर कवि ने इसे एकवचन में भी लिखा है।

आशान्वितों[2] और चतुरो[3] बहु० रूप भी देखने योग्य हैं।

संधि

कुछ दीर्घ स्वर संधियां ये हैं — अजरामर, आत्मार्पण, उच्चादर्शों, द्वैधाचार, निविड़ांचल, प्रलयाग्नि, प्रेमामृत, मौनालाप, स्नेहांचल, स्नेहालय, स्नेहालिंगन इत्यादि।

गुण स्वर संधियां देखें — अस्तोन्मुख, आदर्शोन्मुख, चरणादक, मरणोन्मुख, शशिमिलनोन्मुख, हृदयोद्गार इत्यादि।

विसर्ग संधियों के नमूने ये हैं — अनर्जग, अंतर्जीवन, अतर्लोक, अतर्वसंत, अधोगति, तपोनिष्ठ, निश्शक, निश्शेष, निष्कप, निष्कपट, निष्काम, निष्क्रियता, निष्ठुर निष्पाप, निष्फल, निस्सबल, निस्सीम, निस्स्वन।

समास

कतिपय सम्बंध तत्पुरुष समास द्रष्टव्य हैं — अमर-लोक, कवि-जीवन, खग-कलरव, चिता-भस्म, जग-आंगन, दर्शन-सुख, पथ-रेखा, वन-कुसुमों, विदा-काल, शशि-किरणो, सौंदर्य-पिपासा।

कुछ द्वन्द्व समास देखिये —

कुश-कंटक, त्याग-तृप्ति, वन-पर्वत, शक्ति-अशक्ति, हास-रोदन।

' स '- जुड़े अव्ययीभाव समास भी हैं यथा — सकप, सकरुण, सदय, सपरिवार, समुद, सरस, सविवेक, सशक्त, सस्मित, सस्वर, सहास, सहृदय, साकार, साधिकार, सानद, सोल्लास।

---

१. भूमि की अनुभूति, दुर्भिक्ष, ११४ — ' स्वेद जिसका, प्राण जिसका '

२. वही, ठूंठ और अंकुर, १८ — ' उन नए आशान्वितों का '

३. वही, नव संस्कृति, ४१ — ' मिल कर उन चतुरों से '

कुछ **कर्मधारय समास** द्रष्टव्य हैं —

अनुभूति-प्रदीप, आशा-तारक, उर-वीणा, काल-चक्र, **जीवन-झोली**, जीवन-दीपक, जीवन-निर्झर, **तम-अंचल**, **पलक-प्रदीप**, भाव-तारिका, भाव-प्रसून, **भावना-तूलिका**, मनुज-कुसुम, मरण-सागर, मृत्यु-याचक, रूप-सुधा, वज्र-हृदय, विपत्-शूलों, विपत्ति-वनचर, विपद्-सिंधु, विश्व-विपिन, विश्व-विहग, वेदना-वशी, वेदना-विपंची, समय-प्रहरी, समय-सिंधु, सर्वनाश-ज्वाला, **साधना-प्रदीप**, सुख-सरिता, सौंदर्य-किरण, हृदय-गगन, हृदय-दीप, हृदय-प्याली इत्यादि। इनमे उपमानपूर्वपद और उपमानोत्तरपद दोनों प्रकार के कर्मधारय समास मिले जुले हैं।

अन्य शब्द-विकार

कुछ उदाहरण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं —

अहोरात्रि [1] (अहोरात्र पुं० — स० अहन् + रात्र) तुझी [2] (तुझ ही)

हमीं [3] (हम ही)

इन में **तुझी** और **हमीं** तो ' ह् ' लोप वाली प्रवृत्ति से ही बने शब्द-सयोग हैं।

नव शब्द

हिंदी में विस्तृततर [4] और श्रेष्ठतम [5] जैसे शब्द-प्रयोग विशेष रूप से विचारणीय है।

' श्रेष्ठ ' वि० का मूल अर्थ ही है — ' सब से अधिक अच्छा या सुदर '। ऋग्वेद मे ' श्रेष्ठ ' शब्द इसी अर्थ में है। धीरे धीरे इस का सामान्य अर्थ ' अच्छा '

---

१. बलिपथ के गीत, किसान से, ५३ — ' चिता में लगे हुए **अहोरात्रि** '

२. (क) जीवन-सगीत, लुटी निधिया, ७४ — ' **तुझी** से पाया है जीवन '

(ख) वही, कस्तूरी मृग, १५५ — ' जो रहस्य है निहित **तुझी** में '

३. भूमि की अनुभूति,, नव संस्कृति, ३९ — ' आश्रय यदि दे न **हमीं** '

४. जीवन-संगीत, विश्व-रूप, १० — ' हर झांकी में **विस्तृततर** बन कर आओ '

५. बलिपथ के गीत, अगस्त-क्रांति का गीत, ९० ' बलिदान **श्रेष्ठतम** करना होगा '

विकसित हुआ। इसीलिए 'श्रेष्ठतम' जैसे प्रयोग भी देखने में आए। डॉ० केशवराम पाल इस शब्द का इतिहास बताते हुए लिखते है — 'महाभारत आदि ग्रंथों में तुलनासूचक तर (तरप्) प्रत्यय से युक्त 'श्रेष्ठतर' शब्द का भी प्रयोग मिलता है। आजकल हिंदी में 'श्रेष्ठ' शब्द में सर्वाधिकता के भाव को न समझे जाने के कारण 'सब से अच्छा, सर्वोत्कृष्ट' के लिए पुन: सर्वाधिकतासूचक 'तम' प्रत्यय लगा कर 'श्रेष्ठतम' शब्द का प्रयोग किया जाता है।" [१]

प्रिय शब्द

कवि की प्रिय शब्दावली यह है —

अगणित, अथक, अधीर, अनिकेतन, अन्तर, अन्तरतर, अन्तरतम, अनमोल, अपनापन, अपराजित, अपरिग्रह, अविचल, अविरत, अविराम, आदिक, उज्ज्वल, करुणांचल, कुश-कटक, गर्वोन्नत, चितचोर, जन्म-मरण, तर (प्रत्यय—अतरतर गभीरतर, पीडिततर, विस्तृततर), निर्भय, निर्मम, निविड़ालिंगन, निस्सीम, नीलांबर, प्राणाधार, सौंदय (सौंदर्यदृष्टि, सौंदर्य निर्झर. सौंदर्यबोध) सोल्लास।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि इन शब्दो के प्रति भी सजग है। नदी की **कलकल** [२], वर्षा की **रिमझिम** [३], और आंसुओं की **झर झर** [४] यहां भी है। तारे **झलमल** [५], **झिलमिल** [६]

---

१. हिंदी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दो में अर्थ परिवर्तन, डॉ० केशवराम पाल, ३४९

२. (क) जीवन-सगीत, सागर, ८२ — 'नदियों ने अपने **कलकल** में'

(ख) पृष्ठ वही — 'सरिता का **कलकल** सुकुमार'

३. बलिपथ के गीत, साधक, २४ — 'बन जाते हो सावन **रिमझिम**'

४. भूमि की अनुभूति, किरण और कुटीर, ५७ — 'आंसू **झर-झर** झरते'

५. जीवन-सगीत, पागल, ४२ — 'ये तारे जो **झलमल** हैं'

६. (क) वही, प्रभात-तारा, १२२ — 'करते थे **झिलमिल** आलोक'

(ख) वही, दीपावली, ४८ — '**झिलमिल** तारक-दीपों में'

(ग) वही, प्रकाश की प्रार्थना, १२० — 'जीर्ण कुटी का **झिलमिल** दीप'

(दीप भी) करते झिलमिलाते हैं और ओस-कण चमचम [1] करते चमचमाते हैं। कंपन की थर-थर [2]; ज्वाला की धू-धू [3] यहां भी है। जलने की क्रिया है धक-धक [4]। जीप कार सन्नाती [5] हुई गुज़र जाती है।

अत: हमें इस कवि को ध्वनि-बोध की दृष्टि से भी सचेत मानना पड़ेगा।

---

१. वही, व्यथित और वसंत, १३३, — 'बिखरे चमचम ओस-कणों में'

२. वही, उगता राष्ट्र, ६२ — 'कांप उठता जीर्ण जगत् थर-थर'

३. (क) बलिपथ के गीत, कलाकार से, ६७ — 'जला चाहती हो धू-धू कर'

(ख) भूमि की अनुभूति, रेगिस्तानी, ६७ — 'धू-धू कर जलती था'

४. जीवन-संगीत, उगता राष्ट्र, ६२ — 'तारक-सा धक-धक जल'

५. भूमि की अनुभूति, रह गई चढ़ी बारात, ८४ — 'सन्नाती जीप-कार'

श्रीमती महादेवी वर्मा

संज्ञा

महादेवी जी सस्कृत भाषा की विदुषी हैं। उनकी कविताओ में अशुद्ध संज्ञा-प्रयोग बहुत कम हैं। कुछ उल्लेखनीय सज्ञाए देखे — ओरे [1] और विभूत [2]।

हिंदी में ' ओर ' स्त्री० शब्द (स० अवार = किनारा) है। यहां ' ओरें ' बहुवचन-रूप है। अगरेजी ' Sides ' की भाति हिंदी में ' ओरें ' बहु० शब्द का अधिक प्रचलन नही है।

सस्कृत में ' विभूति ' स्त्री० शब्द का एक अर्थ ' राख ' भी है। यहा उसी अर्थ में ' विभूत ' नयी सज्ञा है।

सज्ञा-विकार

कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

अभिलाष [3] (षा), अलोक [4] (आ), अह्वान [5], (आ) आश [6] (आ), उर्म्म [7] (ऊर्मि

---

१. रश्मि, वे दिन, २६ — ' यह दोनों ओरें थीं संसृति की चित्रपटी की '

२ नीरजा, १०२ — ' विभूत मे फिर आकर अपने पद-चिह्न बना जाना '

३. नीहार, सूना सदेश, ५० — ' चूर हो कर मेरी अभिलाष '

४. नीहार, विस्मृति, ५४ — ' जहां बनती अलोक समाधि '

५. नीहार, उनका प्यार, ४१ — ' कहां से आया वह अह्वान '

६. नीहार, उस पार, २२ — ' चमकती जिस में मेरी आश '

७. नीरजा, गीत ३२, ६८ — ' लेकर मृदु उर्म्म बीन '

कसकन [१] (कसक), ज्योतिष्ना [२] (ज्योत्स्ना), ज्योती [३] (ज्योति), वंशरी [४] (वंशी) स्पनागार [५] (स्वप्नागार)।

संस्कृत मे ' **अभिलाष** ' (स) पु० शब्द हा है। संस्कृत में ' अलोक ' वि० (न० ब०), ' अदृश्य ' अर्थ में भी है। यहां यह वि० भी हो सकता है।

विशेषण

कुछ विशेषण उल्लेखनीय है—

अग्निपथी [६], अज्ञातदेशी [७], आहटहीन [८], ऊने [९], कुशली [१०], कुहकिनी [११], ज्वालवाही [१२], तिमिरवेषी [१३], दुर्मिल [१४], निर्निमेषी [१५], शतरंगी [१६], सार्थवाही [१७], और सीरे [१८]।

---

१. रश्मि, निभृत मिलन, ४० — ' प्राणों मे पीडा की **कसकन** '
२. नीहार, आसू की माला, ७१ — ' **ज्योतिष्ना** की पलकों में '
३. नीहार, आसू की माला, ७२ — ' धुंधली जीवन की **ज्योती** '
४. दीपशिखा, गीत ४१ — ' मूक पिक की **वंशरी** है '
५. नीहार, परिचय, ७९ — ' उन्मादो का **स्पनागार** '
६. दीपशिखा, गीत ३६, १२८ — ' **अग्निपंथी** मै तुझे दू कौन-सा प्रतिदान ? '
७. दीपशिखा, गीत २३, १०५ — ' आज स्पदन भी हुई उर के लिए **अज्ञातदेशी** '
८. दीपशिखा गीत १, ६८ — ' मृदुल **आहटहीन** सपने '
९. दीपशिखा, गीत २० — ' अब धरा के गान **ऊने** '
१० सांध्य-गीत, ४६ — 'नियति बन **कुशली** चितेरा '
११. सांध्यगीत, ५२ — ' साथ **कुहकिनी** रात री '
१२. दीपशिखा, गीत ४२, १३७ — ' **ज्वालवाही** श्वास तेरा '
१३. दीपशिखा, गीत २३, १०५ — ' कल-पल सब **तिमिरवेषी** '
१४ दीपशिखा, गीत १५, ९२ — ' बिंध गये पगो में शूल व्यथा के **दुर्मिल** '
१५. दीपशिखा, गीत २३, १०५ — ' चल पलक है **निर्निमेषी** '
१६. दीपशिखा, गीत ४४, १३९ — ' **शतरंगी** रज बरसा करती '
१७. दीपशिखा, गीत ३१, ११९ — ' मेरे **सार्थवाही** स्वप्न '
१८ महादेवी वर्मा अभिनंदन ग्रंथ, लेख ' महादेवी जी की काव्य-भाषा, डॉ० कैलाश चंद भाटिया, ९ — ' चौंका दे जग सांस न **सीरे** '

इन विशेषणो में से अधिकाश ' ई ' प्रत्यय जोड़ कर बने हैं।

' **ऊने** ' वि० (स० √ऊन्, अर्थ = कम करना) यहां अधूरे, कम आदि अर्थों में है। तुल० ' शमित करने को स्वमद अति **ऊन** ' (दिनकर)

' **कुशली** ' (सस्कृत में ' कुशलिन् ') वि० के अर्थ हैं—

प्रसन्न अच्छा दशा मे, भरा-पूरा, स्वस्थ, चतुर। यहां अतिम अर्थ लगता है।

' **कुहकिनी** ' स्त्री० शब्द (स० कहक) व्रज भाषा में कोयल ; जादूगरनी आदि अर्थों में है। यहां वि० रूप मे नव प्रयोग है। अर्थ — ' कुहकने वाली '।

' **दुर्मिल** ' वि० [स० दुर् + √मिल (मिलना) + क] का अर्थ है— ' दुष्प्राप्य, जो सहज मे न मिल सके '।

विशेषण-विकार

' **क्षणिकभंगुर** ' [1] वि० भी कम ही मिलेगा। ' क्षणभगुर ' वि० ही अधिक चलता है।

विशेषण-विपर्यय

उदाहरण विरल है यथा धूपछाँही [2] (विरह बेला)

उल्टे-विशेषण

कविताओ में वाक्य-विन्यास के अनुसार विशेषण संज्ञा के बाद भी आते हैं यथा लहरें बाल [3], रजनी बाल [4], प्रसून सुहासी [5]। इनमें ' **उद्देश्य** ' पहले है और ' **विधेय** ' बाद में।

१. नीहार, मेरा एकांत, ४४ — ' **क्षणिकभंगुर** यौवन पर भूल '
२. सांध्यगीत, ४६ — ' **धूपछांही** विरह-बेला '
३. नीहार, मेरी साध, २५ — ' सिहर जाती हों लहरें **बाल** '
४. नीहार, कविता ?, ७ — ' बांट देती जो रजनी **बाल** '
५. दीपशिखा, गीत ४५, १४१ — ' कुम्हला चले प्रसून **सुहासी** '

पं० किशोरीदास वाजपेयी यहां 'बाल' और 'सुहासी' शब्दों को पर-प्रयोग के कारण 'विधेय-विशेषण' कहेंगे। उन के मतानुसार वाक्य में 'उद्देश्य' का पूर्व प्रयोग तथा 'विधेय' का पर प्रयोग हुआ करता है। संस्कृत में 'उद्देश्य' को 'अनुवाद्य' कहते हैं क्योंकि वह पहले से ज्ञात रहता है।[1] वाजपेयी जी ने अपने मत की स्पष्टता के लिए 'मानस' की यह पंक्ति उद्धृत की है—

'भूमि सयन, बलकल बसन, असन कन्द फल मूल'

क्रिया

कवयित्री द्वारा प्रयुक्त विशिष्ट क्रिया-प्रयोग इस प्रकार हैं—अंकवाऊं[2], चुपा[3], धाता[4], नपने[5], बखानती[6], भेटूंगी[7], लहरीं[8], लेखो[9], शिथिलाईं[10] और सहेजो[11]।

'आंकना' स० क्रि० का प्रेरणार्थक रूप है — 'अंकवाना'।

'चुपना' क्रि० ब्रजभाषा की है और इसका सकर्मक एवं अकर्मक दोनों रूपों में प्रयोग चलता है।

'धाना' अ० क्रि० 'दौड़ना' अर्थ में है।

'नपना' यहां 'नापना' स० क्रि० का अकर्मक रूप ही है।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ३३३
२. नीरजा, गीत २८, ५८ 'झुलसे पत्तों को चुन लाऊं उन पर दीपशिखा अंकवाऊं'
३. सांध्यगीत, २६ — 'मैं आज चुपा आई चातक'
४. नीरजा, मुर्झाया फूल, ३५ 'आज तुझ को देख कर चाहक भ्रमर धाता नहीं'
५. सांध्यगीत, ४१ — 'चिर विरह-माप ले आज चला लघु जीवन नपने'
६. दीपशिखा, गीत १९, ९९ — 'शूल आज बखानती री'
७. सांध्यगीत, ८५ — 'मैं सुख दुख भेटूंगी भुज भर'
८. सांध्यगीत, ८५ — 'प्रतिरोमों में पुलकें लहरीं'
९. दीपशिखा, गीत २८, ११३ — 'टूटा स्वर संधान न लेखो'
१०. नीहार, स्वप्न, २७ — 'आंखें शिथिलाईं सिहरी'
११. दीपशिखा, गीत २, ७० — 'रोष की भ्रू-भंगिमा पतझार को चाहे सहेजो'

'बखानना' स० क्रि० 'वर्णन करना' अर्थ रखती है।

'भेंटना' स० क्रि० 'मिलना' अर्थ में है।

'लहरना' अ० क्रि० के कई अर्थ हैं — 'लहरें मारना, आनन्दित होना' इत्यादि।

'लेखना' स० क्रि० के यहां सोचना, विचारना आदि अर्थ संभव हैं।

'शिथिलाना' अ० क्रि० 'शिथिल होना' अर्थ रखती है।

सहेजना स० क्रि० सभालने, समझा बुझा कर सौंपने आदि अर्थों में है।

इन क्रियाओं में से अधिकांश ब्रजभाषा की है।

क्रिया-विकार

उदा० — ढुलते [1] (ढुलकते), जोर [2] (जोड़) और पिन्हाये [3] (पहनाये)।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति महादेवी जी को भी अ, अन (सं० अन्), प्र, सु उपसर्ग प्रिय जान पड़ते हैं। क्रमश: उदाहरण ये हैं—

अकथ, अकपित, अछोर, अजान, अथक, अदेखा, अमोल, अलक्षित।

अनगिन, अनदेखा, अनदेखे, अनबींध, अनमांगी, अनमेल, अनमोल, अनहित।

प्रदिशाएं, प्रशिष्य, प्रहर्षित।

सुकोमल, सुगोल, सुडोल, सुतर, सुदक्षिणा, सुभ्रू, सुमंद्र, सुवंश और सुविचार।

फ़ारसी का 'बे' उपसर्ग जोड़ कर भी कवयित्री ने बेपीर और बेमोल जैसे शब्द प्रयुक्त किए हैं।

---

१. सांध्यगीत, गीत १, १८ — 'आंसू मिस हिम के कण ढुलते'

२. नीहार, अनन्त की ओर, ५६ — 'इन्हीं बिखरे तारों को जोर'

३. रश्मि, विनिमय, ६० — 'पिन्हाये मैं ने आंसू हार'

लिंग

लिंगों के क्षेत्र में कवयित्री ने कहीं कहीं नियम-भंग किया है। उदाहरणत: अभिलाष [1] और अवगुंठन [2] शब्द हिंदी में प्राय: पुं० ही रहते हैं जबकि कवयित्री ने इन्हें स्त्री० में भी लिखा है।

'**अभिलाष**' तो संस्कृत में पुं० ही है। किंतु कवयित्री ने इसे 'अभिलाषा' की भांति स्त्री० में लिखा है।

'**अवगुण्ठन**' संस्कृत में नपुं०, हिं० में पुं० है। कवयित्री ने इसे उभय लिंगों में रखा है। पुल्लिंग रूप के उदाहरण [3] भी मिल जाते हैं।

इसके विपरीत संस्कृत में ओषधि, ओषधी, औषधि, औषधी — ये सब संज्ञा-रूप स्त्री० ही हैं। किंतु कवयित्री ने एक स्थल पर '**औषधि**' [4] पुं० में भी लिखा है। संस्कृत में '**औषध**' अवश्य नपुं० होता है, औषधि नहीं। उसी का प्रभाव जान पड़ता है।

संस्कृत में '**स्पन्दन**' [5] शब्द नपुं० और हिंदी में पुं० है। कवयित्री ने इसे

---

१. नीहार, सूना संदेश, ५० — 'चूर हो कर मेरी **अभिलाष**'

२. (क) नीहार, प्रतीक्षा, ५१ — 'उजियारा **अवगुण्ठन** में'

(ख) रश्मि, कविता १, ६ — 'उसे पहनाई **अवगुण्ठन**'

(ग) रश्मि, अतृप्ति, १३ — 'छिप दुख की **अवगुंठन** से'

(घ) नीरजा, गीत ३०, ६३ — 'अपनेपन की **अवगुंठन** बिन'

(ङ) नीहार, मेरा एकांत, ५३ — 'झिलमिलाती **अवगुंठन** डाल'

३. (क) नीरजा, गीत ३१, ६६ — 'तेरे छिपने का **अवगुंठन**'

(ख) नीरजा, गीत ३५, ७८ — 'मिथ्या प्रिय मेरा **अवगुंठन**'

४. सप्तपर्णा, ८९ — 'तेरा जो शुभ गंध मिला **औषधि** जलकण में'

५. (क) सांध्यगीत, ३४ 'एक **स्पंदन** कह रहा है अकथ युग युग की कहानी'

(ख) सांध्यगीत, ३२ — 'पलकें चलीं **स्पंदन** रही चल'

उभय लिंगों में रखा है।

वचन

अभिलाषे [1], पतझारे [2], बुदबुदे [3], हंसियां [4] बहु० शब्द-रूपों का हिंदी में अधिक प्रचलन नहीं है।

वचनो के नियमानुसार 'प्रति' शब्द जुड़ कर बनने वाला समस्त पद उभय वचनों में एक सा रहता है। किंतु कवयित्री ने 'प्रतिरोम' का बहुवचन 'प्रतिरोमों' [5] भी लिखा है। हिंदी में इसी प्रकार 'प्रत्येक', [6] 'हर-एक' [7] (हरेक) शब्द सदा एक-वचन में ही रहते हैं।

'यह' [8] सर्वनाम भी एकवचन की अपेक्षा बहुवचन में प्रयुक्त किया गया है। श्री विश्वभर 'मानव' के मतानुसार — 'व्याकरण के इस बंधन को तोड़ने के लिए

---

१. नीहार, मिटने का खेल, ६ — 'शून्य मडरायेंगी अभिलाषें'

२. नीरजा, प्रतीक्षा, ५२ — 'कितनी बीती पतझारें'

३. नीहार, गीत ६१, १०८ — 'उलझने नित बुदबुदे शतशत'

४. सप्तपर्णा, अज-विलाप, १७५ — 'हंसियां गति मदिर अलसित'

५. (क) सान्ध्यगीत, ८५ — 'प्रतिरोमों में पुलकें लहरी'

(ख) नीरजा, गीत ३७, ७९ — 'मेरे प्रतिरोमों से अविरत'

६. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास बाजपेयी, ३५७

७. हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा १३० परि० 'वचन'।

८. (क) रश्मि, वे दिन, २६ — 'यह दोनो ओरे थी संसृति की'

(ख) सान्ध्यगीत, ३० — 'पथ के यह शूल मुझे अलि प्यारे ही हैं'

(ग) शेष उद्धरण महादेवी की रहस्य-साधना, मानव, १८०

(i) दुर्मद के चपल यह नयन

(ii) यह खिलौने और यह उर

(iii) उड़ रहे यह पृष्ठ पल के

केवल स्वरपात का तर्क ही कुछ उपस्थित किया जा सकता है '।[१]

आदरार्थ भी एकवचन में भी कभी कभी 'ये' सर्वनाम बहु० प्रयुक्त होता है। किंतु महादेवी जी ने ऐसे प्रसग में भी 'यह'[२] एकवचन ही लिखा है।

बहुवचन शब्दो के अन्त में 'मय' जोड़ना महादेवी जी को बहुत प्रिय है यथा घड़ियोमय, तारोंमय, नवरङ्गोमय, मूलोंमय।[३]

संधि

कुछ दीर्घ स्वर संधियों के नमूने ये है — एकाश्रय, किरणांगुलि, छायालोक, दीपालोक, दूरागत, नीलाकाश, पर्वताकार, पुलकाकुल, बालार्क और निताचल।

निर्वाणोन्मुख जैसी गुण स्वर संधियां बहुत कम है।

समास

कुछ सम्बंध तत्पुरुष समास ये हैं —

अगरु-गध, अमरता-सुत, अश्रु-कण, आभा-कण, कुलिश-भार क्षितिज-रेख, बमन-बेला, पद-चाप, प्रलय-घन, मधु-प्याले, वेणी-बंध, सलिल-कण, सीमा-बधना, सुमन-भार।

करण तत्पुरुष समास ये हैं—ओस-गीले, कुहर-म्लान, जावक-रचे, भार बोझिल, मधु-माते, मेघ-रूंधा[४] वेदना-चर्चित।

कुछ कर्मधारय समास द्रष्टव्य हैं—

---

१. महादेवी की रहस्य-साधना, मानव, १८०

२. (क) साध्यगीत, ६६ — 'जन्म से यह साथ है, मैं ने इन्हीं का प्यार जाना'
(ख) साध्यगीत, ४१ — 'यह प्रतिपल तरणी बन आते'

३. महादेवी वर्मा अभिनंदन ग्रथ, लेख — 'महादेवी जी की काव्य-भाषा,' डॉ० कैलाश चद्र भाटिया, ९२

४. सांध्यगीत, ४७ — 'मेघ-रूंधा अजिर गीला'

उर-पिंजर, कनक-रश्मियां, किरण-चामर, केश-जाल, खोज-खग [1], छाया-तन [2], जीवन-गगरी, जीवन-दीप, जीवन-फूल, जीवन-बीन, तम-सिंधु, तिमिर-गात, दुख-अतिथि, दुख-पथिक, दुखप्यास, दुखव्रती, दुखसागर, दृगखंजन, दृगजलजात, नीलम-मंदिर, पलक-सीपी, प्राण-पिक, मानस-अलि, मानस-कुंज, मानस-बोली, मानस-पिक, मानससर, मिलन-इंदु, रवि-पात्र, विस्मृति-पथ, समीर-परियां, सुख-सरिता, सुधि-विहान, स्वप्न-पंख, और स्वर्ण-पिंजर। इनमें उपमानपूर्वपद और उपमानोत्तरपद उभय समास हैं।

कुछ विविध समास देखने योग्य हैं — आलोक-अंकुर, दूर-खग, [3], नाश-पथ, निशि-मूक, पुलक-पंखी, [4] बीन-बंदी, मेघव्रती, संध्या-अंशुक, सितअसित।

इन मे प्राचुर्य दुख-अतिथि, दुखपथिक जैसे समासों का है जो कि कवयित्री के दुःखवादी दर्शन के अनुरूप बन पड़े हैं।

कहीं-कहीं स्वर-संधियां संभव होने पर भी नहीं की गई हैं यथा मानस-अलि मिलन-इंदु, सितअसित।

शब्द-लोप

पद्य के वाक्य-विन्यास और लय की आवश्यकताओं के अनुसार कभी-कभी शब्द-लोपों का भी आश्रय-ग्रहण करना पड़ता है।

---

१. सांध्यगीत, ८२ — 'आज मेरा खोज-खग गाता चला लेने बसेरा'

२. नीरजा, गीत २५, ५३ — 'तुम को क्या बांधूं छाया-तन'

३. सांध्यगीत, ६२ — 'दूर-खग आ निकटता के अमर बंधन में बसा है'

४. सांध्यगीत, ८२ — 'पुलक-पंखी विरह पर उड़ आ रहा है मिलन मेरा'

महादेवी जी ने भी अनेक स्थलों पर कर[1] और में[2] शब्दों का लोप किया है।

अन्य शब्द-विकार

अधार (आधार), कर्णाधार[3] (कर्णधार) और मुझी[4] (मुझ ही) जैसे शब्द-विकार भी देखने योग्य हैं।

अंग्रेजी शब्द-प्रणाली की लाघवता भी मिल जाती है यथा अवगुंठन के लिए '**गुंठन**[5]' और विद्युत् के लिए '**विद्यु**[6]' शब्दों का प्रयोग दर्शनीय है। संस्कृत में '**गुंठन**' नपुं०, हिंदी में पुं० शब्द है किंतु 'घूंघट' अर्थ में नहीं मिलता।

प्रिय शब्द

महादेवी जी की कविताओं और गीतों में जिन शब्दों की आवृत्तियां हुई हैं वे इस प्रकार हैं—

---

१. (क) नीहार, उस पार, २२ -- ' रैन बोली सज (**कर**)कृष्ण दुकूल '

(ख) रश्मि, कौन है ?, १७ — ' तब चमक (**कर**) जो लोचनों को मूदता '

२. (क) नीहार, संदेह, १७ — ' माला मैं ने पाई थी उपहार (**में**)

(ख) नीरजा, गीत ३७, ७९ — ' मैं मीमा की गोद (**में**) पली '

(ग) नीरजा, गीत ३९, ८३ — ' नहीं कल सोना होगा धूल (**में**)

(घ) नीरजा, गीत ५२, १०८ — ' वे नभ (**में**) छाये, मैं वन (**में**) फूला '

३. पंक्ति — ' विसर्जन ही है **कर्णाधार**, वही पहुचा देगा उस पार '

४. दीपशिखा, गीत २२, १०४ — ' प्रिय **मुझी** में खो गया '

५. सांध्यगीत, ६० — ' उठा दूं जो सुमुख से सजल **गुंठन** '

६. (क) सांध्यगीत, ७७ — ' फूटो शतशत **विद्यु**-शिखा से '

(ख) सांध्यगीत, ६६ — ' **विद्यु**-हीरक से जड़ी-सी '

अन्तर्नाद, अभिसार, अमोल, आग्र, आह्वान, कन कन, चांदी, चिर, तुहिन, नमित, नीलम, पीड़ा, प्रवाल, बेपीर, मनुहार, मरकत, मोती, रजत, रोदन, ललाम, विहग, सकरुण, मीना, हिम अधर ।

ध्वन्यात्मक शब्द

इन शब्दों की संख्या बहुत अधिक नहीं है । फिर भी जल, निर्झर और लहर की 'कलकल'[1], आंसुओं, किरणों, सामान्य फूलों, जल-वर्षण और हरसिंगार की झरझर[2] तथा पल्लवों की 'मर्मर'[3] यहां भी है । प्याले झलमल[4] झलमलाते हैं । जाली, तारे, दर्पण और दीपक की ध्वनि है झिलमिल[5] । अवगुंठन भी झिलमिलाती[6]

---

१. (क) रश्मि, दुविधा, ५१ — 'जल की कलकल में'

(ख) रश्मि, वे दिन, ३५ — 'गति की कलकल में अभिराम'

(ग) नीहार, मेरा एकांत, ५३ — 'निराली कलकल में अभिराम'

२. रश्मि, दुख, १९ — 'बहते झर-झर कण कण से आंसू'

(ख) रश्मि, गीत, ४१ — 'झरती किरणें झर-झर'

(ग) नीरजा, गीत ११, २३ — 'अंचल से झर-झर झरते......स्वर्ण-फूल'

(घ) नीरजा, गीत १९, ४१ — 'नित घिरूं झर-झर'

(ङ) नीरजा, गीत ३, ५ — 'हरसिंगार झरते है झर-झर'

३. (क) रश्मि, रश्मि, १२ — 'मर्मर का मधु संगीत'

(ख) नीरजा, गीत १५, ३३ — 'मर्मर की वंशी में......'

४. नीरजा, गीत ५४, ११३ — 'जड़ कण कण के प्याले झलमल'

५. (क) नीहार, मेरा राज्य, १९ — 'झिलमिल तारों की जाली'

(ख) नीहार, मोल, ६७ — 'झिलमिल तारों की पलकों में'

(ग) नीरजा, गीत ३१, ६५ — 'झिलमिल-सा तुम ने हँस हँस दे डाला'

(घ) नीरजा, गीत २७, ५७ — 'स्नेहहीन यह दीपक झिलमिल'

६. नीहार, मेरा एकांत, ५३ — 'झिलमिलाती अवगुण्ठन डाल'

है। दीवाली की जगमग [1] और मदिरा की 'छलछल' [2] यहां भी है। नूपुर 'रुनझुन' [3] करते हैं।

मधुपों की 'गुनगुन' [4] और पपीहों की 'पी-पी' [5] यहां भी मिल जाएगी।

समग्रत: कवयित्री को इन शब्दों के प्रति भी जागरूक माना जा सकता है।

---

१. रश्मि, दुविधा, ५० — 'देखू जगमग दीवाली'
२. नीरजा, गीत ५४, ११३ — 'छलकी जीवन-मदिरा छलछल'
३. (क) नीरजा, गीत १६, ३५ — 'नूपुर रुनझुन ले'
(ख) सांध्यगीत, ३२ — 'इन नूपुरों की करुण रुनझुन'
४. सांध्यगीत, ५७ — 'मधुपों की मधुर गुनगुन'
५. रश्मि, पपीहे के प्रति, ७३ — 'यह पी-पी घनों को सुहाता नहीं'

श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

संज्ञा

प्रेमी जी की कविताओं पर व्रजभाषा और अन्य लोक भाषाओं का प्रभाव देखा जा सकता है। कुछ विशेष रूप से उल्लेखनीय संज्ञाएं ये हैं--।

आपा [1], चलाचली [2], चितेरापन [3], तोड़ [4], भंगेड़ी [5], मरना [6], रणछोड़ों [7] और शहीदी [8]।

'आपा' पु० शब्द निजत्व या अहं-भाव अर्थ में है।

'चलाचली' स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है — 'एक के बाद दूसरे का भी जाना।'

'चितेरापन' भाव० संज्ञा शब्द है। अर्थ — 'चित्रकार का भाव, कला।'

---

१. अनंत के पथ पर, ३१ — 'पत्थर के इन टुकड़ों पर क्यों दुनिया आपा खोती'
२. अग्नि-गान, राखी के दिन राख, २१ — 'यहां तो रहती चलाचली की बारी'
३. रूपरेखा, रंग दो सुरधनु, २ — 'चितेरापन हुआ बेहोश है'
४. अग्निगान, नव निर्माण, २९ — 'हम को देता है ताण्डव का तोड़ सुनाई'
५. अग्निगान, महादेव-मानव, १०८ — 'मुझे भंगेड़ी भी है मानव'
६. रूपरेखा, प्यार है मुझ पर, १०४ — 'जीवित रहूं तो जिंदगी मरना बने'
७. अग्निगान, नवनिर्माण, ३२ — 'गिरे गाज अब रणछोड़ों पर'
८. अग्निगान, स्वर्णद्वीप, ४६ — 'फूलों में रंग शहीदी का छाया है'

'**तोड़**' पुं० शब्द के 'मानक हिंदी कोश' मे जितने भी अर्थ दिए हैं उन में यहां कोई भी सटीक नही बैठता। यहा कोलाहल, रव, नाद आदि अर्थ संभव हो सकते हैं।

'**भंगेड़ी**' पुं० (हिं० भाग+एड़ी प्रत्यय) का अर्थ है 'भँगड़, वह व्यक्ति जिसे भाँग पीने की लत पड गई हो।'

'**मरना**' अ० क्रि० ही यहां 'मरण' अर्थ में सज्ञा के रूप में प्रयुक्त हुई है।

'**रणछोड़**' पु० शब्द भगवान् श्री कृष्ण का एक नाम भी है जब वे जरासध के आक्रमण के समय व्रज छोड कर द्वारका चले गये थे। किंतु यह 'युद्धभूमि में पीठ दिखाकर भाग जाने वाले व्यक्ति' यह नया अर्थ विकसित हुआ है। '**रणछोड़ों**' बहु० है।

'**शहीदी**' अर० वि० 'शहीद' के अर्थ में है। यहां 'शहीद' वि० से भाववाचक सज्ञा 'शहीदी' भी सभव हो सकती है।

संज्ञा-विकार

कवि ने अनेक स्थलो पर संज्ञाओ के विकृत रूप प्रस्तुत किए हैं। इसकी स्वीकारोक्ति भी है—

"मैं ने कुछ शब्दो के लिखने में जान बूझ कर भूल की है — जैसे जगत् को जगत, अन्तर् को अन्तर, महान् को महान, और वक्ष:स्थल को वक्षस्थल। शब्दो के रूप के प्रति अत्यधिक कठोर रहने वाले पडित प्रवर इसके लिए मुझे क्षमा करें।" [१]

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष संज्ञा-विकार ये हैं—

अंतर [२] (अतर्),

---

१. अनंत के पथ पर, भूमिका, पृष्ठ ङ.

२. अनंत के पथ पर, अंतर के स्वर पहचाने?, १०२ — 'सारा अंतर युग युग से पिला रही हूं'

अशीश [1], आशीश [2] (शिष् या शिस्), उच्छवास [3] (च्छ्), उजेला [4] (जा), कल्लोलिनि [5] (नी), कुमुदिनि [6] (नी), खड़गे [7] (ग), जगत [8] (त्), झौंका [9] (झों), झौंपडी [10] (झो), तरू [11] (रु), द्रोपदी [12] (द्रौ), नयना [13] (नयन), निशीकर [14] (निशिकर), बहना [15] (बहन), मनाई [16] (मनाही), मानसर [17] (मानसरसर), मावस [18] (अमावस),

---

१. अग्निगान, स्वर्णद्वीप, ४३ — ' मिली अशीश नियति की हम को '

२. आंखो में, २१ — ' तू आशीश उसे देती है '

३. रूपदर्शन, जो बुझाए से न बुझती, १५० — ' जो न रोके रुक सके उच्छवास '

४. अनन्त के पथ पर, ८४ — ' करता है स्नेह उजेला '

५. अनन्त के पथ पर, ४१ — ' कल्लोलिनि लहराती है '

६. अनन्त, ८०, — ' कुमुदिनी का उर दीवाना '

७. अग्नि-गान, नव-निर्माण, २१ — ' अब खड़गे की खनकार सुनाओ '

८. अनत के पथ पर, १०१ — ' बन गया जगत यह कारा '

९. अग्नि-गान, सर्वनाश के समय, ८३ — ' सर्वनाश का निष्ठुर झौंका '

१०. अग्नि-गान, अग्नि-गान, ९९ — ' एक झौंपड़ी नदी-किनारे '

११. रूपरेखा, कौन जागे आज, ४ — ' पल्लवित वे तरू हुए हैं '

१२. रूपदर्शन, मुसकुराहट पूछती है, २१७ — ' द्रोपदी का चीर क्यो है ? '

१३. आंखों में, ४५ — ' ये पागल नयना विद्रोही '

१४. आंखों में, ६८ — ' हँस उठता है जब निशीकर '

१५. आंखो में, १८ — ' तू क्यो आ पहुचा है बहना '

१६. रूपरेखा, रूप को मैं चाहता हूं, १४२ — ' प्यार करने की प्रकृति ने क्या कभी की है मनाई ? '

१७. रूपदर्शन, मूक यौवन ने, १८ — ' रूप के इस मानसर में उर-कमल '

१८. अग्नि-गान, अग्नि-गान, ९८ — ' मावस की काली रजनी में '

लोहू [1] (लहू), वक्षस्थल [2] (वक्ष:स्थल), विद्युत [3] (त्), विहंगिनि [4] (नी), शलाखाएं [5] (शलाकाएं), शैवलिनि [6] (नी), सरित [7] (त्)।

इन में उजेला, खड़गे, नयना, बहना, मनाई, मावस और लोहू जैसे शब्द-प्रयोग भी लोक-भाषा के अन्तर्गत स्वीकार किये जाने चाहिए। शेष संज्ञा-विकास कवि की स्वतंत्र रुचियों का ही बोध कराते हैं।

विशेषण

'ई' प्रत्यय लगाकर विशेषण बनाने की प्रवृत्ति कवि में विशेष रूप से लक्षित हुई है। अनगिनती [8], आषाढ़ी [9] और शहीदी [10] इसी प्रकार के विशेषण माने जा सकते हैं। 'स्नेहल' [11] भी नवीन प्रयोगों में ही गिना जाएगा। यहां 'ल' मत्वर्थीय तद्धित प्रत्यय है। फेनल, मांसल, वत्सल में भी यही प्रत्यय है।

विशेषण-विकार

जिस प्रकार संज्ञाएं अनेक स्थलों पर विकृत रूपों में विद्यमान हैं, उसी प्रकार विशेषण भी। कुछ उदाहरण इस प्रकार है—

---

१. अग्नि-गान, नव-निर्माण, ३१ — 'सरिता-सागर में हो लोहू'
२. अनन्त के पथ पर, ५९ — 'सागर के वक्षस्थल पर'
३. अनन्त के पथ पर, ६२ — 'मैं चचल विद्युत-रेखा'
४. रूपदर्शन, बावला हो उड़ चला, १ — 'मन विहंगिनि का चकित है'
५. अग्नि-गान, अमर ज्योति, २५ — 'क्यों तप्त शलाखाएं जग'
६. रूपरेखा, मन गगन से पूछता है, १०६, 'शैवलिनि की धार में बहते'
७. रूपरेखा, चीरता निस्तब्धता को, १२० — 'तन सरित का सूखता'
८. रूपदर्शन, मौत-सी इस जिन्दगी को, १३६ — 'घाव अनगिनती किए हैं'
९. आंखों में, ४३ — 'उन आषाढ़ी आंखों के घन, समर्पण', 'जिनकी आषाढ़ी आंखों ने'
१०. अग्नि-गान, नव-निर्माण, ३१ — 'सब में भरो शहीदी रंग निराला'
११. रूपरेखा, ओ गगन के चांद, ३ — 'गीत है शीतल, सरल, स्नेहल'

उज्वल [1] (ज्ज), उज्वलतम [2] (ज्ज) उन्मादिनि [3] (नी), दुखदाई [4] (यी), बिचारे [5] (बे), महान [6] (न्), मुधुर [7] (म),, मुरझी [8] (मुरझाई), रुष्ठ [9] (रुष्ट), समुज्वल [10] (ज्ज) ।

कहीं कही विशेषण-विपर्यय भी देखे जा सकते है ।

कुछ उदाहरण देखे — शीतल [11] (ज्वाला), अंधी [12] (अभिलाषाओं) और भोले [13] (खेल)

क्रिया

कवि ने जहा तक सभव हो सका है क्रियाओ के शुद्ध रूप ही प्रस्तुत किए हैं । नवीन क्रियाओ का प्राय. अभाव ही है । कही कही अपवाद रूप में ' निर्माण ' [14] संज्ञा

---

१. अनंत के पथ पर, १३९ — ' चमकेगी किरणे उज्वल '
२. आंखों में, ५९ — ' विद्युत् सी उज्वलतम छवि ने '
३. अग्नि-गान, मूक ज्वाला, ५९ — ' कितनी ही उन्मादिनि रात '
४. आखों में, ८३ — ' प्यास बढी है दुखदाई '
५. आखो में, ७५ — ' क्या अधिकार चकोर बिचारे का ' ?
६. अनन्त के पथ पर, ११२ — ' जग के महान महलो की '
७ रूपरेखा, हृदय के बावलेपन को, ८७ — ' मधुर मुस्कान बरसाता '
८. आखो मे, ८५ — ' क्या मेरी मुरझी मूरत ? '
९ रूपदर्शन, चद्रमा माना जिन्हे, २०० — ' मौन से हो रुष्ठ जाते '
१०. अनत के पथ पर, ५७ — ' कहता दीप समुज्वल '
११. आंखो में, ५४ — ' शीतल ज्वाला, मीठी पीड़ा '
१२. आंखो में, १०३ — ' मैं इन अंधी अभिलाषाओं से भोली '
१३. अग्नि-गान, नव-निमाण, ३२ — ' भोले खेल खिलावें '
१४. रूपदर्शन, आंसुओं को बोलने का, १८२ — ' स्तूप अपना जिंदगी का कर लिया निर्माण मैंने '

का क्रिया रूप में प्रयोग मिल जाता है। 'लपटती'[1] और 'हर्षी'[2] जैसी क्रियाएं तो अब चल निकली है।

क्रिया-विकार

क्रियाओ के कतिपय विकृत रूप भी यत्रतत्र उपलब्ध हो जाते हैं जो इस प्रकार हैं—

गुंथती[3] (गू), चढ़ता[4] (ढ़ा), छायगी[5] (ए या ये), जाय[6] (ए या ये), पाय[7] (ए, ये), बहकता[8] (बकना), मुस्काय[9] (ए या ये), रक्खी[10] (रखी), रक्खू[11] (रखू), रक्खूगा[12] (रखूगा), रक्खे[13] (रखे), रक्खे[14] (रखे), शरमाय[15] (ए या ये), समझता[16] (समझा)

इन मे छायगी, जाय, पाय, मुस्काय, शरमाय आदि शब्दों के अवलोकन से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 'ये' की बजाय 'य' लिखना कवि को

---

१. आंखों में, २९ — 'लाल लपटती है जीवन बसी की तान'
२. रूपदर्शन, प्यार की मजिल, ४ — 'मेघ बरसे, भूमि हर्षी'
३. अग्नि-गान, मूक ज्वाला, ५६ — 'सजनी, गुंथती हो फूलो की माला'
४. रूपरेखा, प्यार कर लेना सरल है, १३६ 'कलिया चयन कर जग चढ़ता मूर्ति पर'
५. रूपरेखा, चंद्रमा को चूम लू, ६० — 'छाया वही पर छायगी'
६. रूपरेखा, रात आई नींद बोली, ६९ — 'अब जरा सो जाय जीवन'
७. रूपरेखा, रात आई नींद बोली, ६९, — 'कुछ नयापन पाय जीवन'
८. रूपदर्शन, नशे में हैं नयन, १२६ — 'न जाने क्या बहकता है मगज में कुछ...'
९. रूपरेखा, रात आई नीद बोली, ६९ — 'फिर सुबह मुस्काय जीवन'
१०. अनंत के पथ पर, ९८ — 'कर रक्खी तरु ने छाया'
११. आंखों में, ५७ — 'आंखों में अंकित कर रक्खूं'
१२. आंखों में, ८० — 'मैं रक्खूंगा तुम को घेरे'
१३. अग्नि-गान, महाक्रांति का घूघट खोलो, ८०, 'अपने लिए न कुछ भी रक्खें'
१४. अग्नि-गान, महादेव-मानव, ११२ — 'मैं ने प्राणों मे भी भर रक्खे'
१५. रूपरेखा, रात आई नीद बोली, ६९ — 'किसलिए शरमाय जीवन ?'
१६. अनंत के पथ पर, ४७ — 'है प्रेम न समझता जाता जिस जग में इतना काला'

उपसर्ग

निषेधात्मक उपसर्गों में ' अ ' या ' अन् ' उपसर्ग लगा कर अनेक शब्द बनाए गए हैं जिन में से अधिकांश पुराने शब्द ही हैं। कुछ शब्द अवश्य अब प्रचलन में में आए हैं यथा अजान [1], अलभ [2] और असुध [3]। फा० का ' बे ' उपसर्ग भी यत्र तत्र मौजूद है।

बेकार, बेघर, बेदर्द, बेपर्द, बेमोल, बेवफा, बेशर्मी, बेसहारा, बेसुध और बेहोशी ऐसे ही शब्द है। **बेपर्द** [4] तो उर्दू शब्द ' बेपरदा ' का ही सक्षिप्त रूप जान पड़ता है। संस्कृत का ' निर् ' उपसर्ग भी उन्होंने कई शब्दों से पहले जोड़ा है। निराश्रय, निर्जन निर्बल, निर्मल, निर्वासन और निर्विकार।

' वि ' और ' सु ' उपसर्ग कवि को विशेष रूप से पसंद हैं। ' वि ' उपसर्ग वाले शब्दों मे विमूर्च्छित, विमोहित हैं। इसी प्रकार कुछ ' सु ' उपसर्ग वाले शब्द देखिए :—सुकोमल, सुचरणों, सुछवि, सुतन, सुनयनों, सुनिश्चित, सुपरिचित, सुमति, सुयश, सुरजित, सुविस्तृत और सुशीतल।

संधि

अन्य कवियों की भांति प्रेमी जी को भी स्वर संधियों में **दीर्घ संधियां** अपेक्षाकृत अधिक पसंद हैं। एकाकार, करुणाकर, तृषातुर, नीलाम्बर, प्राणाधार, प्रेमामृत, भाग्याकाश, मदिरालय, रत्नाकर, वाणासुर, विकटाकार, वेश्यालय,

---

१. आंखों मे, ६५ — ' तड़पन मे तूफान **अजान** ' आंखो में, २० — ' उतर गया सब नशा **अजान** '

२. आंखों मे, ७३ — ' जितना **अलभ** स्नेह प्रियतम का ', अग्नि-गान, पंछी की पीड़ा, ६० — ' **अलभ** लक्ष्य का दीवाना हूं '

३. आंखों में, ३१ — ' आंखों मे ही **असुध** चकोर '

४. अग्नि-गान, पीड़ा का पर्दा, ९४ — ' पीड़ा को **बेपर्द** बनाऊं ?

शस्त्रास्त्र — ऐसी ही संधियां है। कहीं कहीं कवि ने संधि के नियमों का पालन नहीं किया है और बिना संधि किए शब्दों को वैसे ही लिख दिया है जैसे महाअनल [1], सुअर्जित और स्वइच्छित [2]। ठीक रूप हैं महानल, स्वर्जित और स्वेच्छित।

गुण संधियां बहुत कम हैं। मिलनोन्मुख और महोत्सव जैसी संधियां अधिक नहीं हैं। ठीक यही बात व्यंजन संधियों के सम्बंध मे भी कही जा सकती है। 'उल्लास' और 'तल्लीन' जैसी **व्यंजन संधियां** अपवाद ही समझी जाएगी। अतः कहा जा सकता है कि संधियों में कवि ने दीर्घ स्वर संधियों के प्रति ही अपना विशेष रुझान प्रकट किया है। संधियों के अन्य रूप उपेक्षित ही रह गए है।

समास

जहां तक समासो का प्रश्न है कवि ने तत्पुरुष समास और उन में भी **सम्बन्ध तत्पुरुष समासों** के प्रति अपना विशेष मोह प्रकट किया है। कुछ उदाहरण देखें—

अंतर-पीर, उर-ज्वाला, उर-ताप, **करुणा-कण**, कवि-साधना, काल-दिवस, काल-रात्रि, गिरि-सुता, गुण-गान, अग-दृग, जल-कण, **जलद-बूंदों** दीप-शिखा, पथ-रेखा, **पूर्णता-भाव**, प्रणय-कथा, प्रिय-मूर्ति, भाग्य-रेखाए, मगल-सूत्र, मदिरा-पान मास-मीत, मरण-व्यथा, **मिलन-मार्ग**, **मिलन-समय**, रवि-रश्मियां, रस-पान रूप-माधुरी, विष-पान, सौदर्य-राशि, सौख्य-नीड, स्मृति-चिह्न, स्वाति-सलिल और हिम-कण।

करण-तत्पुरुष समास भी कहीं कहीं हैं यथा: विरह-व्यथित और सौरभ-भरा। किन्तु इन की संख्या बहुत ही कम है।

कर्मधारय समास उन्हें बहुत पसद है। उदाहरण प्रस्तुत हैं—

अग्नि-परी, **अनल-पक्षी**, अलि-अधर, अश्रु-मोतियो, आशा-तडित्, उर-कुज, उर-कुसुम, उर-प्रसून, करुणा-कालिदी, करुणा-सागर, कल्पना-कैलास गीत-गगा, **छवि-अनल**, छवि-मदिरा छवि-शर जीवन-नैया, नयन-घन, निराशा-घन, निराशा-निशि, **पीयूष-अक्षर**, प्रकृति-परी, प्रतीक्षा-पथ, **प्रेम-गली**, प्रेम-पथ, मन-गगन, मन-मधुप,

---

१. अग्नि-गान, महादेव-मानव, १०७ — 'चिनगारी को महाअनल में **महाअनल** कर'

२. रूपरेखा, नाग के फन का पिया विष, ३३ — 'मूर्तियां ढली **स्वइच्छित**'

मन-मल्लाह, **मरु-उर**, मुक्ति-मूर्ति, मुख-चंद्र, मेघ-दूत, मेघ-मंडप, **याद-दामिनी**, यौवन-लहरें, रत्न-शशि, रूप-तारा, **वियोग-अंधड़**, विरह-घट, विश्व-दर्पण, **व्यथा-गगन**, शांति-सीता, समय-सिंधु, समीरण-दूत, **सुमन-मन**, स्नेह-दीपक, **स्मृति-अंबर**, **स्मृति-पतवार**, स्वर-सरि, हृदय-सिन्धु और हृदय-सुमन । इन में ' उपमान ' **पूर्वपद में भी है** और उत्तरपद में भी ।

द्वन्द्व समासों का भी अभाव नहीं है — ज्ञान-संयम, **दृष्टि-अधरों**, **धूप-छांह**, नभ-भू, **पतन-उत्थान**, रात-दिन और सूर्य-शशि ।

बहुव्रीहि समास भी कहीं कहीं हैं । जीवन-धन और रूप-धन ऐसे ही समास हैं ।

अन्य शब्द-विकार

संज्ञा, विशेषण और क्रिया का अध्ययन करते समय हम ने शब्द-विकारों पर भी प्रकाश-प्रक्षेपण किया था । इन के अतिरिक्त अन्य-विकार कम ही है । कुछ उदाहरण ये है—

चतुर्दिक [1] (क्), तुमारे [2] (तुम्हारे), पृथक [3] (क्), मुझी [4] (मुझ ही) युग युगों [5] (युग-युग), हमीं [6] (हम ही) ।

' अपने ' शब्द के स्थान पर कवि ने अनेक स्थलों पर ' मेरे ' [7] सर्वनाम का भी प्रयोग किया है जो अनुचित है ।

---

१. रूपरेखा, आ मसीबत, १३२ — ' तू जला ज्वाला **चतुर्दिक** '
२. रूप-दर्शन, जवानी तो चला करती, २०४ — ' **तुमारे** भाग्य की रेखा '
३. रूपरेखा, प्यार है यदि प्यार, १०० — ' पर **पृथक** प्रिय को हृदय से '
४. अनंत के पथ पर, ७० — ' बन जाती सर्प **मुझी** को '
५. रूपरेखा, कौन जाने आज, ४ — ' **युग युगों** से वाटिका पर '
६. अग्नि-गान, असंतोष की आग, १०६ — ' **हमीं** परिश्रम कर के इनके कोष भर रहे '
७. रूपरेखा, सुमन पर हे सुमन !, ११२ — ' तुम्हारे मौन से **मेरे** हृदय का गान टकरा दूं '

नव शब्द

प्रेमी जी ने शब्दों के नव निर्माण पर बहुत कम ध्यान दिया है। हां, कुछ शब्द अवश्य ऐसे मिल जाते है जिनका हिंदी में अधिक प्रचलन नही है। पूर्णतापूर्ण [१], बेपर्द [२] और रब [३] ऐसे ही शब्द-प्रयोग हैं। 'रब' तो शुद्ध पंजाबी भाषा का शब्द है जो वहां 'ईश्वर' के अर्थ में प्रचलित है। अत: कहना चाहिए कि संज्ञा, विशेषण और क्रिया से अलग नव शब्दों की संख्या बहुत ही कम है।

प्रिय शब्द

प्रत्येक जागरूक कवि की भांति प्रेमी जी को भी कतिपय शब्द विशेष रूप से प्रिय लगते हैं। उन के काव्य में जिन शब्दो की आवृत्तियां होती रही है वे इस प्रकार हैं—

अतर. अजान [४], अबोध [५],

---

१. आंखों मे, ३५, 'जहां जीर्णता है पतझड़ की, वहीं **पूर्णतापूर्ण** वसंत'

२. अग्नि-गान, पीड़ा का पर्दा, ९४ — 'क्यों बेदर्द जगत के आगे पीड़ा को **बेपर्द** बनाऊ ?'

३. रूपरेखा, रूप को मै चाहता हू, १८२ — 'राह **रब** को प्राप्त करने की मुझे दी है दिखाई'

४. अग्नि-गान, स्वर्ण-द्वीप, ४२ — 'तुम **अजान** मुस्कानों मे भर,'

५. (क) अग्नि-गान, वसंती साड़ी, ४७ — 'ये **अबोध** अंखियां मतवाली,'

(ख) अग्नि-गान, नव-निर्माण, ३३, 'वे ही हैं **अबोध** प्राणों में'

(ग) अग्नि-गान, नव-निर्माण, ३२ — 'जहां **अबोध** बना मानव को'

अलभ, आरसी, उच्छ्वास [1], उज्वल, झारी [2], दूना, दूनी [3], नासूर, निर्वासन, पारावार, प्राणाधार [4], बरसात, बाले [5], बेकार, बेदर्द, बेसुध [6], रत्नाकर, लोहू,

---

१. (क) रूपरेखा, दूर है ऊंचा गगन, १२८ — 'वह भूमि का **उच्छ्वास** है'

(ख) रूपरेखा, गगन का प्रश्न नयनों से, १११ — 'अवनि के सिंधु से **उच्छ्वास**'

(ग) रूपरेखा, देह यद्यपि दूर दुर्लभ, ११० 'बनने लगे **उच्छ्वास** तेरे'

(घ) रूपदर्शन, जो बुझाए से न बुझती, १५० — 'जो न रोके रुक सके **उच्छ्वास**'

२. (क) अग्नि-गान, स्वर्ण-द्वीप, ४४ — 'ली हाथों में जल की **झारी**'

(ख) अग्नि-गान, मत छीनो मुझ से प्याला, ३५ — 'मत छीनो मुझ से **झारी**'

(ग) अग्नि-गान, सर्वनाश की होली, ७३ 'आज चुक गई सारी **झारी**'

३. (क) आंखों में, ८६ — '**दूनी** पीड़ा बढ़ चली'

(ख) आंखो में, ६८ — 'आंखों में **दूनी** बरसात'

४. (क) आंखो मे, ९० — 'और प्यार ही **प्राणाधार**'

(ख) आंखों में, ५५ — 'पीता कैसे **प्राणाधार**'

(ग) आंखो में, ९६ — 'सुनते होंगे **प्राणाधार**'

(घ) आंखो मे, १०१ — 'मिलते हो तुम **प्राणाधार**'

५. (क) अग्नि-गान, चिनगारी, ६६ — 'साथ-साथ तुम आई **बाले**'

(ख) अग्नि-गान, पीड़ा का परदा, ८९, 'व्यथा हृदय की तुम से **बाले**'

(ग) अग्नि-गान, असंतोष की आग, १०२ — 'बिकती है पैसों से **बाले**'

(घ) अनंत के पथ पर, ९३ — 'मत समझो दुर्लभ **बाले**'

६. (क) अनत के पथ पर, २० — 'किसकी सुधि में **बेसुध** हो जाता?'

(ख) अनंत के पथ पर, ६४ — 'जिसको सुनते ही **बेसुध**'

शतशत, सदय, [1], समरभूमि, सुकोमल और हाहाकार [2]।

इन में 'उज्वल' शब्द उन्हें विशेष रूप से पसद है। इस शब्द का उन्होंने सब से अधिक संख्या में प्रयोग किया है।

ध्वन्यात्मक शब्द

प्रेमी की कविताओं मे अनुकरणवाचक शब्दों का भी अभाव नहीं है। किंतु पत और नवीन जैसा विशेष आग्रह भी नही है। केवल परम्परा निभाने के नाते उन्होंने इन शब्दों का आश्रय ग्रहण कर के कही कही नाद-चित्रों की सृष्टि की है।

उन की कविताओं मे सरिता और धारा के लिए 'कलकल [3]'. सिन्धु और

---

१. (क) रूपरेखा, है कठिन विषपान से भी, ७७ — 'हो कर सदय आ जायं प्रियतम'

(ख) रूपरेखा, अश्रु भी हैं मुस्कराते, २० 'छवि की नजर होती सदय'

(ग) रूपरेखा, यह न पूछो बांसुरी मे, ८, — 'मुझ पर सदय होता नही जो'

(घ) रूपरेखा, है वही सौंदर्य सुंदर, ७ — 'जग न उसके प्रति सदय'

(ङ) रूपरेखा, दूर है ऊँचा गगन, १६८ — 'सब को बिठा लेती सदय'

२. (क) आंखों मे, १०५ — 'सुनेंगे कैसे उर का हाहाकार'

(ख) आंखों में, १०८, — 'उर के आधे हाहाकार'

(ग) आंखो में, ३५ — 'मचल रहा है हाहाकार'

(घ) आंखो में, ५४ — 'अमर वेदना, हाहाकार'

(ङ) रूपदर्शन, आज पहली बार, १३८ — 'किंतु हाहाकार गूंजा'

३. (क) आंखों में, ३५ — 'सरिता कर कलकल बहती'

(ख) अनंत के पथ पर, ७३, 'कलकल छलछल अविरल चलती बलखाती धारा'

लहरों के लिए 'छलछल'[1] तथा घन और निर्झर के लिए 'झरझर'[2] शब्दों के दर्शन होते हैं। कम्पन 'थरथर'[3] शब्द में मूर्तिमन्त हो जाती है और सिक्के 'खनाखन'[4] शब्द करते हुए खनखनाते हैं। पायल 'रुनझुन'[5] की ध्वनि से शब्दायमान है। आंधी 'घू घू'[6] करती है और अग्नि भी 'धू धू'[7] करती धधकती है।

अत: कहा जा सकता है कि ध्वन्यात्मक व्यंजना की दृष्टि से भी कवि ने अपनी कविताओं की शब्दावली को समृद्ध किया है।

---

१. आंखों में, ६० — 'स्नेह-सिंधु लहराता सा, क्या वह छलछल'

२. (क) आंखों में, २४ — 'कितने घन के टुकड़े आ कर झरझर बरस चले आते'

(ख) अनंत के पथ पर, ७६ — 'बह बह कर अविरल मधुर झरझर'

३. अनंत के पथ पर, १४४ — 'थरथर कंपती सागर की छाती'

४. अग्नि-गान, वसंती साड़ी, ५० — 'हुआ खनाखन शब्द कहीं पर'

५. रूपदर्शन, गीत जो दिल गा रहा था, १२४ 'पायल का स्वर मधुर रुनझुन'

६. अग्नि, राखी के दिन राख, १८ ' — घू घू करती आंधी आती'

७. अग्निगान, नव निर्माण, ३४ — 'धू धू करके विश्व जल उठे'

डॉ० हरिवंश राय बच्चन

संज्ञा

बच्चन जी की कविताओं में उल्लेखनीय संज्ञाए इस प्रकार हैं —

अधड़[1], आघाती[2], उटघे[3], गई[4], गिरों[5], चैतन्यता[6], जगहर[7], झरोखेबाज[8], त्राहि[9], दुखमन[10], धाकड़ो[11], परधारी[12], पुलपिट[13], पूरेपन[14],

---

१. सूत की माला, कविता २६, ४९ — 'किस जड अधड़ ने मारी विष की फूंके'

२. खादी के फूल, कविता २०,४० 'सिर झुका दिया कितना उसका आघाती ने'

३. बुद्ध और नाचघर, रेगिस्तान का सफर, ९८ — 'कही बैठे उटघे लेते'

४. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत १२७ — 'एक युग मैं ने गई की ओर देखा'

५. धार के इधर उधर, आजाद हिंदुस्तान, ५२ — 'जगत के सब गिरों का गर्वमय उत्थान'

६. मधुकलश, लहरों का निमत्रण, १०४ 'जडता शीघ्र बदलेगी सरस चैतन्यता में'

७. प्रणय-पत्रिका, गीत ८, ३७ — 'जगहर सुनकर के भी अक्सर'

८. बुद्ध और नाचघर, कड़ुआ अनुभव, १०४ — 'भले ही धोखेबाज, झरोखेबाज'

९. सतरंगिनी, एक दाह, १५९ — 'जीवन की त्राहि एक'

१०. आरती और अंगारे, गीत ११, ४६ — 'कौन दुखमन तार मे बीनू चदरिया'

११. वही, गीत ८६, २०९ — 'हू नही उन धाकड़ों मे'

१२. प्रारंभिक रचनाए, भाग २, उपवन, ९० — 'कल्पना-चपल परधारी हूं'

१३. प्रारंभिक रचनाएं, भाग १, ईश्वर और प्रेम, १०५ 'खड़े कबाडी, पुलपिट...'

१४. आरती और अंगारे, गीत ३५, ९९ — 'अपने पूरेपन को वाणी देने'

बदलाई [1], मंगन [2], मंझधारे [3], मथाव [4], मिंबर [5], मेघचर [6], लहरा [7], स्वरकार [8] और स्वागतकार [9]।

हिंदी मे 'अधड' और 'अधड़ा' वि० शब्दों का अर्थ है 'जो मध्य में हो, असंबद्ध' इत्यादि। किन्तु यहां 'अधड़' तो 'अधेड़' (सं० अर्द्ध + हि० एेर — प्रत्यय) का ही विकार जान पड़ता है जिसका अर्थ है 'ढलती अवस्था का'। हार्नली के अनुसार एड़, एर और एरी प्रत्ययों का सम्बध स० 'दृशं' (= सदृश) से है [10]। डॉ० श्रीराम शर्मा ने 'एरी' प्रत्यय की उत्पत्ति 'हरी' से मानते हुए दक्खिनी हिंदी का यह उदाहरण दिया है—

बाला बूढा अधेड़ तरना [11]

'आघातक' (वि० — आघात करने वाला) के अर्थ मे 'आघाती' है। हिंदी में इसका अधिक प्रचलन नही है।

'उटघे' स० पु० शब्द देशज प्रयोग है। यहां 'नीद के झोंके' (पीनक) या 'झकझूले' अर्थ सभव है।

---

१. सूत की माला, कविता २६, ८९ — 'की है उसने केवल कर की बदलाई'
२. खादी के फूल, गीत ४७, ७३ — 'थे शाहशाह छिपाए अपने मंगन मे'
३. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत २२, १४८ — 'चलो चलें मंझधारे'
४. खादी के फूल, गीत ९३, १३६ 'किस के मरने पर इतना हृदय मथाव हुआ'
५. प्रारभिक रचनाए, भाग १, ईश्वर और प्रेम, १०५ 'खड़े कबाडी पुलपिट मिंबर'
६. मधुकलश, मेघदूत के प्रति, ११० — 'मैं मेघचर द्वारा बुलाता'
७. मधुकलश, गुलहजारा, १२२ — 'फिर एक लहरा मेह बरसा'
८. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत २१, ३९ — 'वीणा ने स्वरकार को अर्पित किया जो'
९. बुद्ध और नाचघर, आह्वान, २७ — 'नए संसार के स्वागतकार'
१०. कम्पेरेटिव ग्रामर ऑफ गौडियन लेंग्वेजेस, हार्नली, २५१, पृ० १२१
११. दक्खिनी हिंदी का उद्भव और विकास, डॉ० श्रीराम शर्मा, १५५

'गई'[1] वि० शब्द वस्तुत: 'गया' का स्त्री० रूप नहीं है। यहां 'गई' का 'अतीत' अर्थ मे नव प्रयोग है।

कवि चतुर्वेदी जी ने भी अकुलातों, उजड़तो, उठनों, ऊंचों, डूबतों, पिसतों इत्यादि सज्ञाओं के प्रति अपनी रुचि प्रदर्शित की थी। यहां 'गिरों' सज्ञा पुं० शब्द भी वैसा ही है।

'चैतन्य' शब्द सं० पु० और वि० दोनों है। उसी में 'तल्' प्रत्यय जोड़ कर भाववाचक सज्ञा बनाई गई है — 'चैतन्यता'। अर्थ वही हैं जो 'चैतन्य' शब्द के हैं।

हिंदी मे 'जगहर' स० स्त्री० शब्द ('जगना' से बना) है। अर्थ — जागते रहने की अवस्था या भाव।

'झरोखेबाज' स० पु० शब्द नितान्त नवीन है। फ़ारसी में 'बाज़' प्रत्यय शौकीन या व्यसनी अर्थ में है। किन्तु यहां इस की सगति नही बैठती। 'झरोखेबाज' का अर्थ छिद्रान्वेषी (दुर्गुणखोजी) सभव है।

'त्राहि' वस्तुत: संस्कृत का एक अव्यय है — अर्थ 'रक्षा करो, बचाओ'। 'करना' क्रिया के साथ लगने पर 'हार मान लेना', 'परेशान हो जाना', 'प्रार्थना करना' आदि अर्थ हो जाते हैं।[2] यहां 'त्राहि' का सज्ञा रूप में नवीन प्रयोग है। यहां रक्षा, हार, तोबा आदि अर्थों में से कोई एक सभव है।

सत कबीर ने 'सुखमन' और 'दुखमन' शब्दों का प्रयोग किया है। 'सुखमन' स० स्त्री० शब्द तो सस्कृत के 'सुषुम्ना' (एक नाड़ी का नाम) का ही विकार है। 'सुखमन' के ही साम्य पर कबीर ने 'दुखमन' घड़ लिया होगा, जिसका सांकेतिक अर्थ 'कोई अन्य नाडी' रही होगी। किन्तु यहां 'दु:ख' की ओर ही कवि इंगित कर रहा है।

---

१. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड

२. ब्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड, दे० 'त्राहि'

'धाक' संज्ञा में 'अड़'[1] पर-प्रत्यय जोड़ कर 'धाकड़' कर्तृवाचक संज्ञा बनती है। इसी प्रकार 'भंग' से 'भगड़' और भख से 'भुक्खड़' शब्द भी निर्मित होते हैं। यहां 'धाकड़' स० पु० शब्द का अर्थ है — 'जिसकी खूब धाक या दबदबा हो, प्रभावशाली'।

फारसी मे 'पर' स० पु० शब्द 'पख' अर्थ मे है। यहां उसी 'पर' में 'धारी' वि० शब्द (स० धारिन्) जोड़ कर समास बनाया गया है। 'परधारी' — अर्थात् 'पंख धारण करने वाला — पक्षी'। खद्दरधारी, सेवाधारी आदि शब्दों के साम्य पर 'परधारी' नव निर्मिति है।

अगरेजी शब्द 'पुलपिट' (Pulpit) का अर्थ है मच या उपदेशक-समुदाय। यहां प्रथम अर्थ ठीक है।

'पूरेपन' नयी भाववाचक सज्ञा है। 'पन' हिंदी प्रत्यय है।

'बदलना' स० क्रि० मे 'आई' पर-प्रत्यय जोड़कर भाववाचक सज्ञा बनी है 'बदलाई' (बदल+आई)। कतर से कतराई, जड से जड़ाई, गढ़ से गढ़ाई और लिख से लिखाई भा० सज्ञाए भी ऐसे ही बनती है।[2]

व्रजभाषा मे 'मंगन'[3] स० पु० शब्द (हि० मागना) का अर्थ 'भिखमगा' है। यहा यही अर्थ ठीक जान पड़ता है।

बगला भाषा का प्रभाव 'मझधारे' शब्द पर पड़ा है — अर्थ 'मंझधार में'। व्रजभाषा में भी इसी अर्थ में 'मँझारे'[4] शब्द है।

चुनाव, छिडकाव, जड़ाव, बरताव, भराव[5] आदि भाव० संज्ञाओं की भांति 'मथना' सक० धातु से 'आव' पर-प्रत्यय जोड कर 'मथाव' भा० सं० बनी है। अर्थ 'मथने की क्रिया या भाव'।

---

१. हिंदी में प्रत्यय विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति:, ९५

२. वही, १३८

३. तुल० 'मागध मंगन जन लेत मन भाइ कै' (सूर० — २६२८)

४. तुल० — इक दिन बैठे सभा मँझारे — (सूर० — ४-५)

५. हिंदी में प्रत्यय विचार, डॉ० उप्रैति:, १४१

'**मिंबर**' अरबी सं० पुं० शब्द का अर्थ है — 'मसजिद का वह ऊंचा चबूतरा जहां इमाम (मुल्ला) बैठ कर नमाज पढ़वाते, उपदेश करते या खुत्बा पढ़ते हैं।

'मेघदूत' के अर्थ मे '**मेघचर**' नया उपमानोत्तरपद कर्मधारय समास है।

यहां '**लहरा**'[१] स० पु० अवधी शब्द का अर्थ है 'वर्षा का झोका'। अवधी में 'यक लहरा' और 'दुइ लहरा' प्रयोग चलते हैं। 'यक' = 'एक', दुइ = दो।

सस्कृत और फारसी में 'कार' प्रत्यय करने वाला, बनाने वाला' आदि अर्थों में है। फारसी में 'गुलू' सं० पु० शब्द 'कठ' अर्थ मे है। वहा 'गुलूकार' शब्द 'गवंया' अर्थ में चलता है। यहां उसी का हिंदी समानक '**स्वरकार**' गढ़ा गया है।

हिंदी में '**स्वागतकार**' सं० पुं० शब्द का भी अधिक प्रचार नहीं है। अर्थ — 'स्वागत करने वाले'।

संज्ञा-विकार

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ संज्ञा-विकार इस प्रकार हैं :—

अंधेला[२] (अंधेरा या अंधियाला), आकाशीदीप[३] (श), आश[४], (शा या स), उच्चश्रवा[५], (उच्चैः), उच्छवास[६] (च्छ्), उपनिषद[७] (द्), ऊलझनों[८]

---

१. अवधी कोष, रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', दे० 'ल[illegible]रा'

२. एकांत सगीत, गीत ४३, ५९ — 'जब मिटा भ्र[illegible] का अंधेला'

३. प्रारभिक रचनाए (२), गांधी जी के विलायत, ३[illegible] — 'आकाशीदीप हजारो'

४. (क) कविता वही, १९ — 'लगा रक्खी है जिस[illegible] से आश'

(ख) कविता वही, २८ — 'दिलाते हो क्या मुझ[illegible] आश?'

५. आरती और अगारे, गीत ४१, ११३ — 'हृदय से ..[illegible]च्चश्रवा'

६. आरती और अंगारे, गीत ८३, २०४ — 'यक्ष का उच्[illegible]स है'

७. धार के इधर उधर, मनुष्य की मूर्ति, ३३ — 'उपनिषद[illegible]ी वर वाणी'

८. आरती और अगारे, गीत ४२, ११४ — 'ऊलझनों को [illegible] बताऊ?'

(उ), कवित [1] (त्त), गगर [2] (गगरी या गागर), चिन्गारी [3] (चिंगारी या चिनगारी), छल-छुद्र [4] (छल-छिद्र), जगत [5] (जगत्), तपोधनी [6] (न), तरतीबी [7] (ब), तिरग [8] (गा), तिस्ने [9] (हिं० तिशने, अर० स्त्री० तश्नीअ), दामिनि [10] (नी), दृष्टा [11] (द्र), नद्दी [12] (दी), नारि [13] (री), प्रतिद्वन्दी [14] (प्रतिद्वन्द्वी), प्रायश्चित [15] (त्त), प्रावृट [16] (ट्) बगाले [17] (ल), बातास [18] (बतास), बारामास [19] (बारहमासा), ब्रम्हचर्य [20] (ह्म), भगवत् गीता [21] (द्),

---

१. वही, गीत ८३, २०४ — ' या किसी कवि का **कवित** है '
२. वही, गीत ४४, १२० — ' मेरी इस अल्प **गगर** में '
३. वही गीत ४१, ११२ — ' जो फूट कभी है पड़ती **चिन्गारी** '
४. बंगाल का काल, गीत ५८, ८४ — ' जग **छल-छुद्रों** मे उफनाएं '
५. मधुकलश, कवि का गीत, ६७ — ' था **जगत** का और मेरा '
६. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत ३२, २२८ — ' सिद्ध औ **तपोधनी** '
७ आकुल अतर, गीत ३८, ६८ — ' कभी से **तरतीबी** से '
८. धार के इधर उधर, देश के सैनिकों से, ७६ ' **तिरंग** आज क्यों न फिर गड़े '
९. प्रारंभिक रचनाए (२), माली, १२६ — ' ताने **तिस्ने** किसे सुनाता '
१०. आरती और अगारे, गीत ४१, ११२ — ' रह रह **दामिनि** दमक रही थी '
११. खादी के फल, गीत १९, ३७ — ' **दृष्टा** तुम थे '
१२. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत ३, ६८ — ' जब **नद्दी** मे जोबन आता है '
१३. खादी के फूल, गीत ६६, ९९ — ' गाधी ने लाखो **नारि**-नरो को तारा '
१४. निशा-निमत्रण, गीत ४४, ६८ — ' खडे समबल **प्रतिद्वन्दी** '
१५. खादी के फूल, गीत ५६, ८५ — ' यदि करना है **प्रायश्चित** '
१६. मधुकलश, मधुकलश, २५ — ' **प्रावृट** में, विद्युत में हँसता '
१७. बंगाल का काल, २१ — ' पड़ गया **बंगाले** में काल '
१८. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत २३, १५० — ' भीग रही **बातास** '
१९. प्रारंभिक रचनाए (२) झूला, ८७ — ' गाती कजली, गाती **बारामास** '
२०. खादी के फूल, गीत १७, २९ — ' वाणी मे भर कर **ब्रम्हचर्य** '
२१. वही, गीत ६९, १०३ — ' दोनो **भगवत्गीता** कुरान '

भविष्यत [1] (त्), महानता [2] (महत्ता), मानसर [3] (मानस सरोवर या मानससर), रंगरेल [4] (लि या ली), राष्ट्रता [5] (राष्ट्रीयता), वक्षस्थल [6] (वक्ष: स्थल), वाचाली [7] (ल), वातास [8] (बतास), विद्युत [9] (त्), विपता [10] (विपदा या बिपता), वीण [11] (णा), वुभुक्षा [12] (बु), शिफारिश [13] (सिफारिश),

---

१. बुद्ध और नाचघर, शोणित की प्यास, ४२ — ' भेद भविष्यत के '

२. (क) खादी के फूल, भाग १, कविता ५९, ८८ — ' महानता उस महानतम सत्ता की '

(ख) सूत की माला, गीत ४२, ६५ — ' उनकी महानता पहचानी '

(ग) प्रारंभिक रचनाएं (१) जेल में रक्षाबंधन, ११३ — ' रक्षाबंधन की महानता '

३. प्रणय-पत्रिका, गीत ४५ ११२ — ' मानसर सूना हुआ है '

४. बुद्ध और नाचघर, बुद्ध और नाचघर, १७३ — ' मनमानी रंगरेल '

५. सूत की माला, ५८ — ' राष्ट्रता मिलो हमको सस्ती '

६. (क) आकुल अंतर, गीत १२, ३४ — ' है वह वक्षस्थल कहां ? '

(ख) सूत की माला, गीत ९२, १३४ — ' बापू जी का वक्षस्थल '

७. प्रणय-पत्रिका, गीत ३७, ९५ — ' रहने दो वाचाली '

८. (क) वही, गीत ४३, १०८ — ' बहता है वातास कसा ? '

(ख) धार के इधर उधर, विप्लव-गान, ३६ — ' डालेगी मधु वातास '

९. प्रारंभिक रचनाएं, गुदगुदी, ७७ — ' जो विद्युत-मुस्कान '

१०. सूत की माला, गीत ४२, ६५ — ' इस विपता में हम '

११. आकुल अंतर, गीत ७१, १२० — ' वीण के निज तार कम कर '

१२. एकांत संगीत, गीत ५, २१ — मानव की अमिट वुभुक्षा में '

१३. प्रारंभिक रचनाएं (२), गांधी जी के विलायत ... २७ — ' शिफारिश मेरी...'

सम्राट [1] (ट्), सिकचों [2] सीकचों या (मीखचों), हद्द [3] (हद), हलचली [4] (हलचल), हारी [5] (र)

संस्कृत में ' कपट, छलपूण व्यवहार ' अर्थ में ' छल-छिद्र ' [6] (द्वन्द्व समास) सं० पु० शब्द है। ' छल-छुद्र ' नव निर्मिति है। यहा ' छुद्र ' शब्द भी ' क्षुद्र ' का विकार नहीं है।

अरबी में ' तश्नीअ ' [7] सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है — ' बुरा-भला कहना, लानत-मलामत करना '। हिंदी में उसी का विकृत रूप ' तिशना ' [8] स० पु० शब्द है। यहां ' तिस्ने ' उसी का बहुवचन रूप है।

' बंगाले ' [9] शब्द-रूप भी लोक-भाषा में प्रचलित है। दक्खिनी हिंदी में यह शब्द भी उपलब्ध हो जाता है।

हिंदी विशेषकर व्रजभाषा मे ' बतास ' [10] स० स्त्री० शब्द (स० वातामह) ' वायु ' अर्थ में है। बातास और बानास उसी के शब्द-विकार हैं। अन्य कवि [11] भी इन रूपों का व्यवहार करने लगे है।

---

१. हलाहल, चतुष्पदी, ६२ — ' राख होंगे सब कवि सम्राट '
२. प्रारंभिक रचनाए (२), वमन, ५७ — ' दिया सिकचों में उस को छोड़ '
३. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत २, २० — ' हद्द भी पहचानता है '
४. प्रणय-पत्रिका, गीत ४६, ११४ — ' हलचली है मच गई '
५. खादी के फूल, गीत ३०, ४२ — ' खिल्कत ने मानी हारी है '
६. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड
७. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, ' मद्दाह '।
८. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड
९. तुल० सटे भारां बंगाले की शकर की (इब्ने निशाती के ' फूलबन ' से)
१०. तुल० कोउ लै जात बतास-कना रे (सूर० ९०८)
११. तुल० जो ' उठती हो बिना प्रयास, ज्वाला-सी पा कर बातास ' (कवि पंत)

संस्कृत व्याकरणानुसार 'महान्' से 'महानता' बनाना अशुद्ध रूप-रचना है। संस्कृत में 'महत्' 'प्रातिपदिक' (मूल शब्द) मे 'ता' प्रत्यय जोड़ कर 'महत्ता' बन सकता है क्योंकि वहां 'त्व' और 'ता' आदि तद्धित प्रत्यय संस्कृत शब्दों में ही लगा करते हैं। किंतु पं० किशोरीदास वाजपेयी हिंदी में 'महानता' शब्द को भी शुद्ध मानते हैं। उनका तर्क है — 'हिंदी में संस्कृत के ऐसे शब्द प्रथमा विभक्ति के एकवचन मे निष्पन्न 'मूल शब्द' के रूप मे गृहीत हैं। हिंदी में महान्, पिता, राजा आदि 'मूल शब्द' (प्रातिपदिक) के रूप में गृहीत हैं, महत्, पितृ तथा राजन् नहीं।...तो, जबकि 'महान्' शब्द हिंदी में गृहीत है तो उससे 'ता' प्रत्यय हो गया।'[1]

वैसे भी महत्ता, महत्त्व और महानता मे सूक्ष्म अन्तर है। 'यह उन की बड़ी महानता है' यहां 'महानता' के स्थान पर 'महत्ता' या 'महत्त्व' नहीं लिखा जा सकता।

इन के अतिरिक्त कुछ रूप तो हिंदी मे बिलकुल खप मे गये है यथा आश, उच्छ्वास, कवित, जगत, मानसर (या मानसरोवर), वक्षस्थल, त्रिगुन, वीण, सम्राट। कविता में किंकिणि, दामिनि, रगरेल जैसे शब्द-रूप क्षम्य ही हैं।

विशेषण

कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये है —

अखबारी[2], अगस्ती[3], अट्टहासी[4], अरमानी[5], आकाशी[6], आसमानी[7],

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, २९०

२. आकुल अंतर, गीत २८, ५५ — 'अखबारी दुनिया की हलचल'

३. प्रणय-पत्रिका, गीत ३०, ८० — 'वह अगस्ती रात मस्ती की'

४. वही, गीत २४, ६९ — 'अट्टहासी व्यंग-सा करती दिशाएं'

५. आरती और अंगारे, गीत ५७, १४८ — 'बतियाने का तू अरमानी'

६. (क) मिलन-यामिनी, मध्य भाग, गीत २९, १७३ 'आकाशी कुसुमों कलियों को'
(ख) प्रणय-पत्रिका, गीत २२, ६५ — 'आकाशी शिखरों से किस ने'

७. वही, गीत ४२, १०६ — 'आसमानी स्वप्न ललचाते उसे हैं'

उड़न [1], करकती [2], चौमापी [3], जलसिंचे [4], तकदीरी [5], तनतनाई [6], दयमारी [7], पगलाई [8], पलायनी [9], पहाड़ी [10], बलक [11], बसंती [12], बहारी [13], मतमारे [14], मदढाले [15], मनमलीन [16], मौसमी [17], लखोखा [18], लहरधर [19],

---

१. वही. गीत ८, ५७ — ' यह कवियों की **उड़न** कल्पना '

२. वही, गीत ५८, १३८ — ' मैं घर की ले याद **करकती** '

३ (क) आरती और अंगारे, गीत १२, ४८ — ' शब्दों की **चौमापी** अवनी '

(ख) वही, गीत ५१, १३५ — ' **चौमापी** धरती अम्बर को '

४ मतरगिनी, जयमाल, १८४ — ' **जलसिंचे** पथ पर कुसुम '

५. मिलन-यामिनी, मध्य भाग, गीत ३३, १९१ — ' यह थी **तकदीरी** बात '

६. आरती और अंगारे, गीत ७६, १८८ — ' **तनतनाई** बीन से ध्वनि '

७ वही, गीत ९२, २२१ — ' मेरी **दयमारी** आंखों को '

८ (क) मिलन-यामिनी, गीत १२, पूर्व भाग, ३० ' कल्पनाएं आज **पगलाई** हुई हैं '

(ख) प्रणय-पत्रिका, गीत ५, ३१ — ' उस **पगलाई** सी बदली को '

९ धार के इधर उधर, चेतावनी, २, ६८ — ' तजो **पलायनी** प्रवृत्ति '

१० बुद्ध और नाचघर, १३१ — ' **पहाड़ी** छातियों मे '

११ आरती और अंगारे, गीत ३१, ९० — ' जिंदगी क्या है **बलक** जवानी '

१२. (क) मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत ८, ८५ — ' मांस **बसंती** आएगी '

(ख) प्रणय पत्रिका, गीत ४७, ११७ — ' जो **बसंती** बात बतलाते '

१३. (क) वही, गीत ४४, १११ — ' कह जाती है बात **बहारी** '

(ख) मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत ७, ८३ ' क्या था उस कूक **बहारी में** '

१४. बुद्ध और नाचघर, दिल्ली के बादल, १४७ — ' ओ **मतमारे**... '

१५. कविता वही, १४८ — ' ओ घन काले, ओ **मदढाले** '

१६. बुद्ध और नाचघर, नागिन और देवकन्या, १५५ — ' धरती क्यों **मनमलीन** '

१७. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत, २६, ४४ — ' **मौसमी** गायन कहो मत '

१८. सूत की माला, गीत ४३, ६६ — ' **लखोखा** बिलट गये '

१९. बुद्ध और नाचघर, शैल विहगिनी, १०८ — ' **लहरधर** कुंतलों मे '

विषही[१], विहँसित[२], स्नेहालु[३] और स्वप्निल[४]।

इन विशेषणों में से अधिकाश 'ई' प्रत्यय जोड़ कर बनाए गये अखबारी, अगस्ती, अट्टहामी इत्यादि।

व्रजभाषा में दईमार, दईमारा, दईमारो[५] वि० शब्दों (स० दैव, हिं० मारना) का अर्थ है — 'जिस पर दैव का कोप हो, अभागा'। यहा इन्ही श से प्रभावित होकर '**दयमारी**' वि० (अर्थ 'अभागिन') लिखा गया है।

'**पलायनी**' वि० शब्द 'पलायन' सज्ञा मे 'ई' प्रत्यय जोडकर के 'Escapist' वि० का हिंदी समानक बनाया गया है। अर्थ — 'पलायन से वाला'।

व्रजभाषा मे 'बलकना'[६] अ० क्रि० का अर्थ है — 'उबलना, उमँग या जोश मे आना'। '**बलक**' वि० का यहा अर्थ है — खौलती, जोशीली।

यहां '**लखौखा**'[७] वि० शब्द का अर्थ है — 'कई लाख'। अ 'लाखौ'[८] वि० (स० लक्ष) इसी अर्थ मे है। लखपति से भी अधिक धनवान् को 'लखौखापति' कहते है।

'**विषहो**' विशेषण विशेष रूप से विचारणीय है। संस्कृत म 'विषह 'विषहर' वि० शब्दो का अर्थ है — 'विषनाशक'। वहा 'विषहा' स०

---

१. बुद्ध और नाचघर, ११४ — 'एक बडी **विषही** नागिन'

२. प्रारंभिक रचनाए (१), मधुकर, ३६ — '**विहँसित** होता कजरूली का

३. एकांत संगीत, गीत १२, २८ — '**स्नेहालु** दृगो का'

४. (क) मधुकलश, मधुकलश, ३२ — 'अपने उर की **स्वप्निल** छाया'

(ख) मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत ९, ९२ '**स्वप्निल** तत्वो का अमल

५. व्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड

६. तुल० (क) प्रिये प्रेम बर बारुनी **बलकति** बल न सँभार (सूर० ११८२

(ख) आपुहि आप **बलकि** भए ठाढ़े (सूर० १० — २१८)

७. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड।

८. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', दे० 'लाख'

शब्द का एक अर्थ ' निर्विषी ' भी है।[1] यहां ' विषहो ' का ' विषैली ' अर्थ में नवीन प्रयोग है।

कृपालु, झगडालु, दयालु और श्रद्धालु के साम्य पर कवि ने (' आलुच् ' सम्कृत प्रत्यय, या हिंदी ' आलु ' प्रत्यय से) ' स्नेहालु ' घड़ लिया है। डॉ० मुरारी लाल जी ' आलृ '[2] प्रत्यय ही मानते हैं, ' आलु ' नहीं।

विशेषण-विकार

कतिपय विशेषणो को भी कवि ने विकृत रूपो में प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार हैं—

अकरपन[3] (अकृपण), अन्मोल[4] (न), उज्वल[5], उज्जवल[6] (ज्ज), उत्तरदाई[7] (यी), कृतघ्नी[8] (घ्न), गुंजान[9] (गुंजायमान), धनवान[10] (न्), निर्द्वन्द[11] (निर्द्वन्द्व), प्रतापवान[12] (न्), बलवान[13] (न्),

---

१ मानक हिंदी कोश, पाचवा खण्ड

२ हिंदी मे प्रत्यय-विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति: १५६

३ प्रणय-पत्रिका, गीत ५५, १३३ — ' सूरज, चाँद, अकरपन तारे '

४ प्रारंभिक रचनाएं (२), गीत विहँग, ९९ — ' विश्व की सब निधियां अन्मोल '

५. (क) प्रणय पत्रिका, गीत ४६, ११५ — ' उज्वल मोतियों से हाय '

(ख) खादी के फूल, गीत २४, ४५ — ' सब से तेजोज्वल तारा '

६ वही गीत ७२, १०९ — ' उज्जवल रूप दिखा के '

७. प्रारंभिक रचनाएं (२), आत्म समर्पण, ८३ — ' न उत्तरदाई मुझ को मान '

८. वही, गाधी जी के विलायत ..., २४ — ' कृतघ्नी सागर ... '

९. (क) वही, गांधी जी के जन्मदिन ..., ३८ — ' दिशाए हो जाएं गुंजान ... '

(ख) वही, कोयल, २७ — ' उन कणों पर होंगे भ्रमरो के नर्तन गुंजान '

१०. खादी के फूल, गीत ५०, १३३ — ' दान से धनवान दुनिया '

११. बुद्ध और नाचघर, वरदान, ३६ — ' निर्बंध और निर्द्वन्द '

१२. धार के इधर उधर, कामना, ६३ — ' चले सदा प्रतापवान लेखनी '

१३. वही, मानव का अभिमान, १७ — ' बना बलवान '

बहोत [१] (बहुत), बेडौले [२] (ल), बोझी [३] (बोझिल), महान [४] (ः
मूर्त्तिमान [५] (न्), मूल्यवान [६] (न्), मृयमाण [७] (म्रियमाण), वाग्मि
(वाग्मी), विराट [६] (विराट्), वृहद [१०] (वृहत्). सुखदाई [११] (यी) ।

इन में उज्वल, धनवान, प्रतापवान, बलवान, महान, मूर्तिमान, मूल्यव
विराट जैसे शब्द तो कविताओं मे इसी रूप मे लिखे जाते है ।

फारसी में भी ' गुंजान ' वि० शब्द गहन, घना अर्थ मे है । किन्
' गुंजान ' वि० शब्द ' गुंजायमान ' के अर्थ मे जान पडता है ।

---

१. बुद्ध और नाचघर, रेगिस्तान का सफ़र ७८ ' अकेला भी **बहोत** बडा है इस

२. बंगाल का काल, ६५ — ' सज **बेडौले** औजारों मे '

३. एकांत संगीत, गीत ६५, ८१ — ' देख सामने **बोझी** गाडी '

४. (क) खादी के फूल, कविता ५२, ७९ — ' कितना **महान** आदर्श हमें '

(ख) प्रारंभिक रचनाएं (१) आगे, २० — ' सरल हो जाते कार्य **महान** '

(ग) वही, मेरा धर्म, ५० — ' ज्योति **महान** '

(घ) वही, आत्म-सदेह, ५७ — ' मन में उठे **महान** '

५. (क) खादी के फूल, गीत ६६, ९९ — ' थी **मूर्तिमान** गीता '

(ख) वही, गीत ७३, १११ — ' तुम **मूर्तिमान** बन गए गान '

६. सूत की माला, गीत ७९, ११२ — ' कुछ **मूल्यवान** सा '

७. खादी के फूल, गीत ८०, ११७ — ' उसकी **मृयमाण** जली काया '

८. बंगाल का काल, ३८ — ' **वाग्मि** घोष की ... '

९. (क) हलाहल, चतुष्पदी, ५० — ' जगत है चक्की एक **विराट** '

(ख) वही, चतुष्पदी, ६१ — ' मुकुट **विराट** '

(ग) वही, चतुष्पदी, ६४ — ' ऐसा यन्त्र **विराट** '

१०. एकांत संगीत, गीत २२, ३८ — ' **वृहद** संसार '

११. प्रारंभिक रचनाएं (१), जेल मे रक्षाबंधन, ११४ ' प्यार भरी रक्षा **सुखदाई**

विशेषण-विपर्यय

अपराधी [1] (हाथ), आकाशी [2] (कल्पना, गंगा), आसमानी [3] (प्रलोभन), चमत्कारी [4] (याद), बलिदानी [5] (शव), हिटलरी [6] (हार) ।

क्रिया

क्रियाओं के क्षेत्र में अन्य कवियों की भाँति बच्चन जी ने भी ब्रजभाषा के प्रति अपना मोह व्यक्त किया है । अवधी भाषा के प्रति भी उनका विशेष आकर्षण है । कुछ क्रियाएं इस प्रकार हैं —

अखुआई [7], अनुमाना [8], अनुरागे [9], अनुसरते [10], अपमानो [11], अलगाऊं [12], आचरता [13], आदरते [14], आराधा [15],

---

१. प्रारंभिक रचनाएं (१), कलियों से, ४५ — ' क्षमा मांगते ये **अपराधी** हाथ '

२. (क) आरती और अंगारे, गीत १२, ४८ — ' कल्पना हो **आकाशी** '

(ख) वही, गीत ९६, २२९ — ' **आकाशी** गंगा से '

३. वही, गीत ८७, २११ — ' **आसमानी** इस प्रलोभन मे '

४. सतरंगिनी, काल, १६५ — ' मानवों की **चमत्कारी** याद '

५. खादी के फूल, गीत १०१, १४७ — ' बापू के **बलिदानी** शव पर '

६. धार के इधर उधर, नौ अगस्त ' ४२, ३७ — ' हार **हिटलरी** लगी '

७. आरती और अंगारे, गीत ७९, १९४ — ' फिर तरुवर की शाखे **अखुआई** '

८. खादी के फूल, गीत ३९, ६३ — ' कब **अनुमाना** जाता है '

९. बंगाल का काल, गीत ४८, ७२ — ' उस से **अनुरागे** '

१०. बंगाल का काल, ४६, — ' पद-चिह्नों को **अनुसरते** '

११. आरती और अंगारे, गीत ६०, १५४ — ' धरती को **अपमानो** '

१२. प्रणय-पत्रिका, १४० — ' कैसे दोनों को **अलगाऊं** ? '

१३. प्रारंभिक रचनाएं (१), आत्म-सदेह, ६२ — ' जहां मानव **आचरता** '

१४. सूत की माला, गीत ५१, ७६ — ' नीचों को भी **आदरते** हैं '

१५. प्रणय-पत्रिका, गीत ११, ४३ — ' तुझ को **आराधा** '

उआ [१], उद्गारे [२], उद्गारो [३], उनए [४], उपदेशे [५], उवा [६], ओड़े [७], कढ़िल [८], कदराता [९], खाँच [१०], गहराई [११], डरपातीं [१२], तची [१३], तलझी [१४], थाप [१५], थापी [१६], दवा [१७], दिपता [१८], दुपक [१९], दूढ़ाए [२०], नियराया [२१], पगलाए [२२], पात [२३], पिछुआता [२४],

---

१. बुद्ध और नाचघर, नया चाँद, ५८ — 'उआ हुआ है नया चाँद'
२. आरती और अंगारे, गीत ६४, १६२ — 'कहां उमे उद्गारे ?'
३. प्रणय-पत्रिका, गीत ३, २७ — 'तुम चाहो उद्गारो'
४. बंगाल का काल, ४६ — 'ऐसे प्रश्न हृदय मे है उनए'
५. आरती और अंगारे, गीत ८१, १९८ — 'मधुवन भोगे, मरु उपदेशे'
६. मिलन यामिनी, उत्तर भाग, गीत १२, २०८ — 'शुक्र पूर्व में उवा हुआ'
७. निशा-निमत्रण, गीत ५, २४ — 'ओड़े थे न मैं ने शब्द-वेधी बाण'
८. बंगाल का काल, ८२ — 'लाखहा कढ़िल कढ़िल कर मौत पा चुके'
९. प्रणय-पत्रिका, गीत १६, ५२ — 'सोच सोच मन कदराता था'
१०. सूत की माला, गीत ८७, १२४ — 'दृढ काली रेखा खाँच उठी'
११. मिलन-यामिनी, मध्य भाग, गीत ५, ७४ — 'हरियाली गहराई'
१२. वही, वही, गीत १६, १२४ — 'पलकों को डरपातीं'
१३. वही, उत्तर भाग, गीत ८, २०४ — 'तपी तची अर्चन'
१४. प्रारंभिक रचनाएं (१), तितली, ८४ — 'तलझी, तलफी'
१५. खादी के फूल, गीत ७७, ११६ — 'गरिमा को फिर से थाप दिया'
१६. बंगाल का काल, ७९ — 'युग युग थापी अमर घोषणा'
१७. सूत की माला, गीत ९८, १४१ — 'दवा दुख से इतना अन्तर'
१८. सतरंगिनी, नागिन, ४६ — 'दिनमणि-सा दिपता'
१९. मिलन यामिनी, उत्तर भाग, गीत ११, २०७ — 'दीप मे दुपक रही अवनी'
२०. एकांत सगीत, जुगनू, ३३ — 'आशा दूढ़ाए कौन बैठा है ?'
२१. प्रणय-पत्रिका, गीत ४८, ११० — 'अब हेमंत-अंत नियराया'
२२. वही, १०८ — 'उन्ही को देख पगलाए हो ?'
२३. प्रारंभिक रचनाए (१) पत्रोत्तर, ७० — 'पात किया न दृष्टि'
२४. आरती और अंगारे, गीत ८१, १९९ — 'गया सुख को पिछुआता'

पिछुआते [1], पुखड़ [2], पुरता [3], प्रेरे [4], फंदे [5], बतियाने [6], बदराया [7], बलकता [8], बहुरे [9], बिलगाये [10], बिलट [11], भंभाता [12], मनूगा [13], महमहाओ [14], मुखरने [15], मुर्भुराई [16], लमक [17], लहलहा [18], विलमती [19], विस्तारा [20], विस्तारी [21], शोधता [22], सन्माना [23],

---

१. वही, गीत २५, ७४ — 'अपनी छाया पिछुआते थे'
२. सतरंगिनी, निर्माण, १०७ — 'जड़ समेत उखड़-पुखड़ कर'
३. बुद्ध और नाचघर, ९२ — 'घाव लगता है कभी पुरता नहीं है'
४. प्रणय-पत्रिका, गीत २०, ६१ — 'लेखनी को आज फिर प्रेरे हुए'
५. बंगाल का काल, २४ — 'लदे फलों से, फंदे फलों से'
६. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत १५, ११८ — 'उसके बतियाने गाने के'
७ प्रणय-पत्रिका, गीत २१, ६२ — 'उन्माद गगन बदराया'
८. निशा-निमंत्रण, गीत ६३, १०९ — 'जिसमें विद्रोह बलकता है'
९. प्रणय पत्रिका, गीत २२, ६४ — 'मोती बन बहुरे'
१० प्रणय-पत्रिका, ६७ — 'वर्षा में मत्त बिलगाये'
११. सूत की माला, गीत ४३, ६६ — 'लखोखा बिलट गये'
१२ हलाहल, चतुष्पदी ८८ — 'पड़ा भंभाता था सुनसान'
१३. एकांत संगीत, गीत ९३, १०९ — 'रूठा हूं, न मनूगा'
१४. बुद्ध और नाचघर, १२६ — 'खिलखिलाओ महमहाओ'
१५. आरती और अंगारे, गीत ८६, २०९ — 'मुखरने को मिला है गीत'
१६. बुद्ध और नाचघर, नीम के दो पेड़, १४१ — 'लेती युगों की मुर्भुराई'
१७ वही, दिल्ली के बादल, १५३ — 'दिल्ली पर ही तू न लमक'
१८. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत ९, २७ — 'एक पत्ता भी न पाया लहलहा मैं'
१९. वही, १७२ — 'मीठी मीठी नींद विलमती'
२०. खादी के फूल, गीत ६८ १०२ — 'इस गति से विस्तारा था'
२१. सूत की माला, गीत ९१, १०२ — 'महिमा और तुम्हारी विस्तारी'
२२. मिलन यामिनी, उत्तर भाग, गीत ३१, २२७ — 'एक स्वर्ग शोधता रहा'
२३. खादी के फूल, गीत ८०, १२० — 'पदवी मे उनको सन्माना'

सन्मानें [1], सन्माने [2], समर्पे [3], सुमिर [4], से [5], सेई [6], सेती [7], हलकाते [8]

अवधी में अँखुआ, अँखुवा और आँखा सं० पुं० शब्द (सं० अक्षि) ' अंकुर अर्थ में है। यहां ' अखुआई ' (अर्थ — अंकुरित हुई) भूत० अ० क्रिया है।

हिंदी और व्रजभाषा में ' उअना ' अ० क्रि० का अर्थ है — उदय होना निकलना। अवधी में भी इसी अर्थ में ' उअब ' [9] अ० क्रि० है।

हिंदी और व्रज० में ' उनवना ' (सं० उन्नमन) अ० क्रि० का अर्थ है— ' उमड़ना, नीचे झुकना, छा जाना ' । व्रजभाषा में इन्ही अर्थों में ' उनइब ' य ' उनवब ' अ० क्रि० भी है। ' उनए ' का सम्बध भी इन मे ही है।

' कढ़ना ' अ० क्रि० (स० क्वथन) का एक अर्थ ' दूध आदि तरल पदार्थ का आग पर औट कर गाढ़ा होना ' भी है। यहां ' कढ़िल ' का लक्षणा से ' दुःख पा कर अर्थ निकलता है।

' तलफना ' अ० क्रि० का अर्थ है ' तड़पना ' । कवि ने उसी अर्थ मे ' तलफना ' अ० क्रि० का प्रयोग किया है।

यहां ' दवना ' (सं० दव) क्रिया का ' जलना ' अर्थ में अकर्मक प्रयोग है

अवधी में ' दुपदुपाब ' [10] अ० क्रि० का अर्थ है — दुप दुप करना, कांपते रहना। यहां उसी से प्रभावित हो कर ' दुपकना ' क्रिया आई है।

---

१. सूत की माला, भारत-नेपाल मैत्री-संगीत, ११२ — ' एक दूसरे को सन्मानें '
२. प्रणय-पत्रिका, गीत ३८, ९७ — ' क्या पहचाने क्या सन्माने '
३. आरती और अंगारे, गीत १७, ५८ — ' मै ने तुम को फूल समर्पे '
४. बुद्ध और नाचघर, डैफोडिल, ६० — ' उसी दिन को सुमिर '
५. निशा-निमंत्रण, गीत ९३, ११७ — ' हृदय मे से चुका हू '
६. प्रणय-पत्रिका, गीत ३, २६ — ' मैं ने ले सेई एक तुम्हारी थाती '
७. मिलन यामिनी, ८३ — ' प्रकृति ही बैठी थी सेती '
८. प्रणय-पत्रिका, गीत १९, ५९ — ' कुछ कुछ लोचन हलकाते '
९. तुल० — ' नजवौं आजु कहां दहुँ उआ ' (जायसी, सिंहलद्वीप खण्ड १)
१०. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी ' समीर ', १२९

ब्रज० में 'दृढ़ाना' स० क्रि० 'दृढ़ करना' अर्थ में है। उसी से 'दृढ़ाए' (अर्थः दृढ़ किए हुए) क्रिया बनी है।

अवधी में 'पछुआइब' और 'पिछुआइब'[1] स० क्रि० 'पीछे पीछे चलने' के अर्थ में है। यहाँ 'पिछुआना' स० क्रि० बना ली गई है।

हिंदी में 'बादल' अर्थ में 'बादर' संज्ञा है उसी से 'बदराना' अ० क्रि० 'फैलने, महराने' के अर्थ में घड़ी गई है।

अवधी में 'बिलटब'[2] अ० क्रि० उलट जाने, नष्ट हो जाने आदि अर्थों में है। कवि ने उसी से 'बिलटना' क्रिया बना ली है।

'भभाना' अ० क्रि० भी 'सायं सायं' करने के अर्थ में नवीन प्रयोग ही है।

इसी प्रकार 'मानना' अ० क्रि० के विद्यमान होते हुए भी 'मनना' अ० क्रिया रची गई है।

अवधी मे 'मुरझराब'[3] (मुलझुराब या मुलझुलाब) अ० क्रि० 'मुरझा जाने' अर्थ में है। कवि ने उसी से 'मुरझुराना' क्रि० रूप रच लिया है।

हिंदी और ब्रज० में 'सेना' स० क्रि० 'सेवा करना, रक्षा करना' आदि अर्थों मे है। अवधी मे भी इन्हीं अर्थों में 'सेइब' स० क्रि० है।

शेष क्रियाओं में से प्रायः सभी व्रजभाषा की है।

---

१. वही, १८२, १४९

२. वही, १६८

३. वही, १९०

क्रिया-विकार

कुछ विकृत क्रिया-रूप ये हैं—

कहराती [१] (कहरती), गूंज [२] (गुंजा), जायगा [३] (ए या ये), डरवाती [४] (डराती), पिन्हा [५] (पहना), पिन्हाना [६], पिन्हाने [७], पिन्हायें [८], बगेरे [९] (बगारे या बगराये), रक्खा [१०] (रखा), रक्खी [११], रक्खें [१२], रक्खे [१३], रक्खो [१४], हुमास [१५] (हुमसा)।

---

१. बुद्ध और नाचघर, शोणित की प्यास, ३९ — 'चिर वत्सलता से कहराती'
२. खादी के फूल, कविता १०४, १५३ — 'कविताओं ने नभ गूंज दिया'
३. मधुकलश, माझी, ९० — 'जायगा भर घोर हाहाकार से'
४. प्रारंभिक रचनाए (१), मृत्यु, १२४ — 'तू आती दुनिया डरवाती'
५. (क) वही, जेल मे रक्षा-बंधन, ११३ — 'रक्षा मुझे पिन्हा देने को'

(ख) वही, सबोधन, १८ — 'पिन्हा दू हार'

६. आरती और अगारे, गीत ७७, ८० — 'अमरता को पिन्हाना चाहता हूं'
७. प्रारंभिक रचनाए (१), रिहाई, ६७ — 'पिन्हाने तब मैं आता'
८. वही, कलक, १२० — 'भुजहार पिन्हायें'
९. प्रणय-पत्रिका, गीत ७, ३४ — 'जिन पर हम ने प्यार बगेरे'
१०. (क) निशा-निमत्रण, गीत ७३, ९७ 'रक्खा क्या पेय प्रखर'

(ख) एकात सगीत, गीत ७२, ८८ — 'मूद जिसे रक्खा'

११. (क) प्रारभिक रचनाए (२), गांधी जी के बिलायत..., १९, 'लगा रक्खी है जिससे आश'

(ख) मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत २६, १५९ — 'आग दबा रक्खी है'

१२. प्रारभिक रचनाएं (२), गांधी जी के विलायत..., २७ — 'रक्खें ध्यान'
१३. मधुबाला, पाटल-माल, ७१ — 'छिपा रक्खे ढक मूंद'
१४. प्रारभिक रचनाएं (२), गाधी जी के विलायत..., ३२ — 'रक्खो स्वच्छ'
१५. सूत की माला, गीत ८१, ६४ — 'शक्ति ने ऊपर उसे हुमास दिया'

'रक्खना' कवि की सर्वाधिक प्रिय क्रिया है। श्री रामचन्द्र वर्म्मा के मतानुसार बोलचाल की दृष्टि से यही रूप शुद्ध है।[१] किन्तु पं० किशोरीदास वाजपेयी के विचारानुसार "धातु 'रख' है, 'रक्ख' नहीं।...जहां 'रक्खा' बोला जाता है, चलता रहेगा, चलता रहे। वहां 'रखा' को भी उसी तरह पढ़ेंगे। परन्तु राष्ट्रभाषा से वह 'गलस्तन' छंट जाएगा। जैसे कि 'रोट्टी' 'धोत्ती' आदि से अनावश्यक तत्त्व छंट कर 'रोटी', 'धोती' आदि बना लिए गए"।[२]

हम भी इस तर्क से सहमत हैं। शिष्ट और मानक हिंदी में 'रखना' रूप ही लिखा जाना चाहिए।

ब्रज० में 'पिन्हाना' स० क्रि० चलती ही है।

हिंदी में 'हुमसाना' और ब्रज० में 'हुमसाना' तथा 'हुमसानो' स० क्रियाएं 'ऊपर उठाना, उभाड़ना, उछालना, उत्तेजित करना' आदि अर्थों में हैं। यहां 'हुमासना' नयी क्रिया अवधी की 'हुमासब'[३] क्रि० से प्रभावित है जिसके उपर्युक्त अर्थ ही है।

बोलचाल और उर्दू भाषा की प्रेरणा से बच्चन जी ने 'करना' क्रिया के ऐसे प्रयोग भी किए है — अनजान किया[४], कान करना[५], कान किया[६], गूंजा

---

१. अच्छी हिंदी, छठा संस्क०, रामचद्र वर्म्मा, फुटकर बातें, ३१४

२. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी, ६३-६४

३. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर', २२७

४. प्रारंभिक रचनाएं (२), माली से, १११ — 'लघुता से सदा रहा अनजान किया'

५. आरती और अंगारे, गीत ५४, १४३ — 'कान करनी चाहिए जो कुछ'

६. वही, गीत ९६, २३० — 'उनका कहना भी कान किया'

किए [1], तरसा किए [2], देखा किए [3] इत्यादि । कहीं कहीं 'देना' [4] क्रिया 'लगाने' अर्थ मे भी है ।

उपसर्ग

कवि को अ, अन, दुर्, निर्, प्र, बे, (फा०), वि और 'सु' उपसर्ग विशेष रूप में प्रिय हैं। उदाहरण देखे —

१. 'अ' उपसर्ग — अकथित, अकाज, अकुशल, अगिनती, अगणित, अघट, अघटन, अचन्द्र, अचिन्त, अजात, अजान, अजानी, अजानेपन, अज़ाहिर, अटूट, अडोल, अथकित, अथिरता, अदाग, अनत, अनियारे, अनिवारिणि अपदार्थ, अपावन, अपूरित, अभावुक, अभीत, अमद, अमरण, अमान, अलक्षित, अलेखे, अविरामी, अविवाद, अशक्य, अशब्द, अशांतिमय, अशुचि, असफल, असमर्थ, असमय, असम्मिलित, असाधु और असुप्त ।

२. हिं० 'अन' उपसर्ग — अनगिन, अनगिनत, अनचाहा, अनचाहे, अनजान, अनजाना, अनजानी, अनजाने, अनडिग, अनदिखी, अनदेखी, अनबुझ, अनबूझ, अनमन, अनमिल, अनमेल, अनमोल, अनरक्षित, अनसुनी ।

३. 'दुर्' उपसर्ग — दुर्जय, दुर्दम, दुर्दिन, दुर्धर

४ 'निर्' उपसर्ग — निरंकुशता, निराकुल, निर्गंध, निर्जीव, निर्द्वन्द्व, निर्धार, निर्नियन्त्रित, निर्बंध, निर्बुद्धि, निर्मम, निर्मल, निर्वासित, निर्विकार, निर्विलम्ब, निर्विवेक ।

५. 'प्र' उपसर्ग — प्रफुल्ल, प्रबल, प्रबुद्ध, प्रमोद ।

६. बे उपसर्ग (फ़ारसी) — बेकल, बेकस, बेकाम, बेखबरी, बेखुद, बेगुनाही, बेघर, बेचारी, बेचैन, बेचैनी, बेजबान, बेजाने, बेजार, बेढंगा, बेताब,

---

१. वही, गीत ३९, १०९ — 'शब्द मेरी पंक्ति में गूंजा किए हैं'

२. वही, गीत, ७२, १७९ — 'जो तरसा किए है'

३. एकांत संगीत, गीत १९, ३५ — 'उन्हें देखा किया मैं लोचनों से'

४. आरती और अंगारे, गीत ७२, १७९ — 'दिल पर लाख की मुहरें दिये हैं'

बेनिशान, बेपनाहों, बेपहचाने, बेगीर, बेफिकरी, बेबस, बेवानी, बेमोल, बेरोक, बेवफ़ाई, बेशर्माए, बेसबरी, बेसुध, बेहद, बेहयाई, बेहिचक, बेहोशी ।

७. '**वि**' **उपसर्ग** — विनिद्रित, विनिर्मित, विमुक्त, विषाद ।

८. '**सु**' **उपसर्ग** — सुअंक, सुअंकुरित, सुकुमार, सुकोमल, सुगंधि, सुछवि, सुदिन, सुदूर, सुदृढ, सुनाम, सुनोल, सुपथ, सुपरिचित, सुफुल्ल, सुबद्ध, सुभग, सुभाग, सुमुखि, सुयश, सुरंजित, सुरम्य, सुरम्य सुरत्नि सुरेखा सुवास, सुविशाल, सुविस्तृत, सुसज्जित, सुसज्जिता, सुहासिनी ।

लिंग

लिंगो के निर्धारण में भी कवि ने निरकुशता का परिचय दिया है । जिन पुंलिंग माने जाने वाले शब्दो को उस ने स्त्रीलिंग मे रखा है वे इस प्रकार हैं — अभिलाष [1], खड्ग [2], खोल [3], चाबुक [4], जाल [5], ताप [6], ताल [7] पेच [8], बिल [9],

---

१. (क) प्रणय-पत्रिका, गीत ३९,१०० — 'भाग मे मिलती है **अभिलाष**'
(ख) प्रारभिक रचनाएं (१), मृत्यु — 'मेरे मन में भी **अभिलाष** थी'

२. बगाल का काल, कविता १, १७ — 'देश की **खड्ग** थे तो वही **थे**'

३. खादी के फूल, गीत १६, २२ — 'थी चढ़ी उस पर ... **खोल**'

४. धार के इधर उधर, आप किन के साथ हैं ?, ४७ — 'हाथों की **चाबुक** से'

५. प्रारभिक रचनाए (२), गीत- विहंग, ९८ — 'कठोरा यह कांटों की **जाल**'

६. वही, गांधी जी के विलायत ..., २५ — 'ग्रीष्म की कठिन **ताप**'

७. बगाल का काल, २२ — 'देती परम तुष्टि की **ताल**'

८. प्रारंभिक रचनाएं (१), तितली, ८४ — 'धीरे से बस **पेच** घुमाई'

९. बुद्ध और नाचघर, नागिन और देवकन्या, १५४ — 'धरती की **बिल** में'

बेर [१], भँवर [२], मीनार [३], वरदान [४], बात [५], साकी [६], साख [७], सार [८], हठ [९] और हुंकार [१०]।

इन में '**जाल**' (फंदा अर्थ में), **बिल** और **वरदान** शब्द संस्कृत में नपुं० और हिंदी मे पुं० ही है। '**सार**' शब्द संस्कृत में पु०, नपु० और हिंदी मे पु० है।

खोल (सं० खोलक पुं०), **चाबुक** और **पेच** फारसी और हिंदी में सं० पु० शब्द ही हैं। '**मीनार**' उर्दू में स० पुं० है और '**साकी**' अरबी वि० शब्द (अर्थ 'मदिरा पिलाने वाला') भी पुं० ही है। 'मीनार' तो हिंदी में कहीं कहीं स्त्री० भी है। हां 'साकी' हिंदी में भी स० पु० ही है। मन कवियों ने 'साकी' के स्थान पर कलवारिन, 'कलालिन' या 'कलाली' स्त्री० शब्दों (स० 'कल्यपाल' पु०) का भी प्रयोग किया है।

संस्कृत, हिंदी और व्रजभाषा मे जो शब्द प्रायः पु० ही है वे ये हैं — **खड्ग** ('तलवार' अर्थ मे), **ताप** [११] (गर्मी), **ताल** (ताली), **वात** (वायु), **हठ** और **हुंकार**। 'ताप' शब्द अवश्य व्रजभाषा मे कष्ट, दुःख, पीडा आदि अर्थों में कही कही स्त्री० भी है।

---

१. प्रारंभिक रचनाएं (२), कवि और देशभक्त, ४६ — 'खट्टी कच्ची **बेरों** पर'
२. खादी के फूल, गीत १०८, १०४ — 'शाप की **भंवरों** मे'
३. (क) हलाहल, चतुष्पदी, ५९ — 'कुतुब की नभचुंबी **मीनार**'
(ख) सूत की माला, गीत १०१, १४८ — 'मस्जिद की **मीनारें**'
४. सतरंगिनी, कौन तुम हो, १३४ — 'देवताओं की ... **वरदान** तुम हो'
५. प्रणय पत्रिका, गीत ४४, १११ — 'कह जाती है **बात** बहारी'
६. मधुबाला, सुराही, ३३ — 'बनती मैं **साकी**'
७. बंगाल का काल, कविता २, २४ — 'है बधी **साख**'
८. प्रारंभिक रचनाएं (२), गीत- विहँग, ९९ — 'आज इन के जीवन की **सार**'
९. सूत की माला, कविता ३८, ६१ — 'ठानी कैसे अंतर मे ऐसी **हठ**'
१०. धार के इधर उधर, क्रांति-दीप, ४० — 'विप्लव की **हुंकार**'
११. तुल० सरनागत की **ताप** निवारी (सूर० १ — २८)

बेर, भँवर और **साख** शब्द ध्यान देने योग्य हैं। संस्कृत मे 'बदरिका' स्त्री० में है किन्तु हिंदी में 'बेर' ('फल' अर्थ में) स० पु० ही है। हिंदी और ब्रज० में 'भँवर' (स० भ्रमर पु०, पा० भमर, प्रा० भँवर) स० पु० शब्द ही है। हिंदी और ब्रज० में 'साख' स० पु०, स्त्री० दोनों रूपों मे मिलता है।

संस्कृत में 'पक्षी' (पक्षिन्) वि० शब्द 'पंखों वाला' अर्थ में है। 'पक्षिणी' संज्ञा स्त्री० रूप है। किंतु कवि ने '**पक्षियां**' [1] स्त्री० बहु० रूप लिखा है। **विहँगिन** [2] और **संगिन** [3] अन्य नये स्त्री० शब्द है।

जो शब्द स्त्री० में हैं किंतु कवि ने उन्हे पु० माना है वे इस प्रकार है — ईंटे [4], उडान [5], उल्का [6], कलम [7], दाढ़ [8], बरफ़ [9], बूंद [10], शान [11] और सिहरन [12]।

इन में 'ईंट' और 'ईंटा' हिंदी में दोनो शब्द स्त्री० ही हैं। कहीं कहीं

---

१. प्रारंभिक रचनाए (२), गांधी जी के विलायत ..., १९ — '**पक्षियां** श्यामा'

२. बुद्ध और नाचघर, शैल विहँगिनी, १०७ — 'एक तुम सी थी **विहँगिन**'

३. (क) निशा-निमंत्रण, गीत ४५, ६९ — '**संगिन** छूटी, संगी छूटा'

(ख) सतरंगिनी, वर्षा-समीर, १० — '**संगिन** मिलिन'

४. बंगाल का काल, ६५ — 'या पत्थर **ईंटे** नोकीले'

५. प्रारंभिक रचनाए (१), आत्म-संदेह, ५७ 'थे या कवियों के बस काल्पनिक **उड़ान**'

६. बुद्ध और नाचघर, दोस्तों के संदर्भ १, ८८ — '**उल्का** होते है उन के पास'

७. आकुल अंतर, गीत ६३, १०९ — 'तू अपना पूरा **कलम** डुबा'

८. सतरंगिनी, सतरंगिनी, ७ — 'आगे खुला यम **दाढ़** जब'

९. आरती और अंगारे, गीत ७१ १७७ — 'मलाई के **बरफ़** की ठंड जानी'

१०. निशा-निमंत्रण, गीत ७८, १०२ — 'कहता एक **बूंद** आंसू झर'

११. प्रारंभिक रचनाए (२), आत्म-समर्पण, ८३ — 'मैं ने भुला दिया सब **शान**'

१२ सतरंगिनी, नागिन, ४२ — 'तेरी काया के **सिहरन** में'

'ईंटा' (स० इष्टका स्त्री०, पा० इट्ठका) अवश्य पु० भी मिल जाता है। '**उड़ान**' स० स्त्री० शब्द (स० उड्डयन) ही है। 'उल्का' संस्कृत और हिंदी में स० स्त्री० शब्द है। संस्कृत और अरबी दोनों भाषाओं मे 'कलम' स० पुं० शब्द है। हिंदी में स्त्री० रूप ही अधिक चलता है, पु० कम। संस्कृत में 'दंष्ट्रा' स्त्री है, 'दाडक' पुं० है। हिंदी में '**दाढ़**' स्त्री० ही है। '**बर्फ**' फारसी में स० पु० और स्त्री० दोनों ही है, हिंदी में बरफ़ और बर्फ शब्द स्त्री० में ही अधिक मिलते है। संस्कृत मे बिंदु सं० पु० शब्द है, पर 'बूंद' हिंदी मे स्त्री० है। कवि पंत ने 'बूंद' शब्द को उभय लिंगो मे प्रयुक्त किया है। '**शान**' अरबी मे स० स्त्री० शब्द है, हिंदी मे भी। '**सिहरन**' भी हिंदी और व्रज० मे स० स्त्री० शब्द ही है।

इन के अतिरिक्त '**अठखेल**'[१] और **रंगरेल**[२] नये शब्द रूप है। ये शब्द क्रमशः अठखेलि (या अठखेली) और 'रंगरेलि' (या रंगरेली) के विकार हैं। कहीं कहीं '**प्रवंचन**'[३] जैसे पु० शब्द भी है जिनका हिंदी मे अधिक प्रचलन नही है।

हिंदी में विशेषण का लिंग विशेष्य के लिंगानुसार ही रखा जाए, यह आवश्यक नही है। कवि ने '**नवोन्मेषशाली**'[४] को 'आशा' (स्त्री०) का विशेषण बनाया है।

वचन

वचनों का प्रयोग करते समय भी कवि ने कही कही व्याकरण के बन्धन तोड़े

---

१. वही, वर्षा-समीर, ९ — '**अठखेल**-इठलाती हवा'

२. कविता वही, १० — '**रंगरेल**-रंगराती हवा'

३. निशा-निमंत्रण, गीत १७, ४१ — 'बड़ा भारी **प्रवंचन**

४. बुद्ध और नाचघर, शोणित की प्यास, ४२ — '**नवोन्मेषशाली** आशा'

है। उदाहरणस्वरूप आंसू [1] दर्शन [2] और प्राण [3] शब्द सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं किंतु कवि ने इन्हे एकवचन में भी लिखा है। इसके विपरीत 'यह' [4] एकवचन सर्वनाम को उस ने बहुवचन मे भी प्रयुक्त किया है।

जिन बहुवचन शब्दो का हिंदी मे अधिक प्रचलन नही है वे इस प्रकार है — अनयों [5], जवाबदेहियां [6], पताके [7] और बुढ़िये [8]।

इसी प्रकार जो शब्द बहुवचन बना कर लिखे जाने चाहिएं उन्हें कवि ने एकवचन मे ही रहने दिया है यथा आख [9], आशा [10],

---

१. सूत की माला, गीत ६६ ९६ — 'दुनिया भर का आंसू झडना'
२. मधुबाला, सुराही, २८ — 'पा कर मादक दर्शन मेरा'
३. (क) सतरगिनी, तुम गा दो, १८० — 'मेरा प्राण अमर हो जाए'
(ख) सूत की माला, कविता २८, ५१ — 'गया है प्राण उनका'
(ग) एकात सगीत, गीत ८४, ६० — 'प्राण सौरभ मे भिदा है'
(घ) प्रारंभिक रचनाए (१), मृत्यु, १२१ — 'प्राण सभी का हरने वाली'
(ङ) वही (२), सुमन-चयन, १२७ — 'फूलो मे भी होता है प्राण'
४ (क) मधुबाला, हाला, ४९ — 'यह अपनी कागज की नावे'
(ख) मधुबाला इस पार उस पार, ७७ — 'लहरा लहरा यह शाखे'
५. बगाल का काल, ३६ — अनयो का विरोध कहा है?'
६. धार के इधर उधर, चेतावनी २, ६८ — 'हरेक पर जवाबदेहियां बडी'
७. आरती और अगारे, गीत ७८, १९३ — 'सिदूर-पताके नही ... फहराये'
८. वही, गीत ३३, ९५ — 'बुढ़िये आ कर ...'
९. (क) निशा-निमत्रण, गीत ४८, ७२ — 'जागता मैं आंख फाड़े'
(ख) प्रारंभिक रचनाए (२), गाधी जी के विलायत ..., ३३ — 'कोटि छाछठ ये देगी आंख'
(ग) सतरगिनी, नागिन, ५० — 'तू ने आखों में आंख डाल'
१०. प्रारंभिक रचनाएं (१), गुदगुदी, ७२ — 'चूर बडी बडी आशा हो जाती'

कान [1], किरण [2], चाह [3], दीवार [4], दुनिया [5], धार [6], धृष्ठता [7], नौबत [8], बूंद [9], मुट्ठी [10], रजनी [11], रीति [12], लाठी [13], शब्द [14], संध्या [15], समस्या [16], सांस [17]

---

१. वही, मध्याह्न, ३२ — 'बहरा अपना **कान** बनाया'
२. निशा-निमंत्रण, गीत ९, ३३ — 'थी **किरण** अगणित बिछी'
३. एकांत संगीत, गीत १९, ३५, '**चाह** मेरी वे गये कितनी कुचल कर'
४. प्रारंभिक रचनाएं (१), जेल में रक्षाबंधन, ११५ — 'रोक सकेगी जेलों की **दीवार**'
५. (क) धार के इधर उधर, भारत-नेपाल-मैत्री-संगीत, ११२ — 'दोनों **दुनिया** को दिखलाएं'
(ख) प्रणय-पत्रिका, गीत २, २५ — 'सौ **दुनिया** की दूरी'
६. निशा-निमंत्रण, गीत ४९, ७३ — 'आंसू की दो **धार** बहेगी'
७. प्रारंभिक रचनाएं (१), पागल ८१, — 'दो-चार करूं **धृष्टता**'
८. निशा-निमंत्रण, गीत ७९, १०३ — 'विहगावलियां **नौबत** झड़ती'
९. (क) मिलन-यामिनी, पूर्व भाग, गीत ६, २४ — 'स्नेह की दो **बूंद**'
(ख) वही, वही, गीत ११, २९ — 'अश्रु की दो **बूंद**'
(ग) सतरंगिनी, पथ की पहचान, ८० — 'रक्त की दो **बूंद** गिरती'
(घ) वही, वेदना का गीत, १३७ — 'दो **बूंद** आंसू की गिरा कर'
१०. निशा-निमंत्रण, गीत ४९, ७३ — 'दो दो **मुट्ठी** राख उड़ेगी'
११. आकुल अंतर, गीत २६, ५१ — 'सौ **रजनी**-सी वह रजनी थी'
१२. प्रारंभिक रचनाएं (१), पागल, ८० — 'विविध **रीति** से तुम्हें मनाता'
१३. धार के इधर उधर, गणतन्त्र दिवस, ९७ — 'कितनों ने **लाठी** खाई'
१४. आरती और अंगारे, गीत २७, ८० — 'चार मुर्दा **शब्द** की माला पहना कर'
१५. आकुल अंतर, गीत २६, ५१ — 'सौ **संध्या**-सी वह संध्या थी'
१६. धार के इधर उधर, आजाद हिंदुस्तान .., ५२ — 'सौ **समस्या** से भरा संसार'
१७. मिलन यामिनी, पूर्व भाग, गीत २०, ३८ — '**सांस** दो जब एक होती'

और हथेली [1]।

कवि ने कही कही 'राजा' का बहुवचन 'राजों' [2] भी लिखा है। 'दिखलाया' [3] क्रिया भी एकवचन है जबकि बहुवचन में होनी चाहिए थी।

संधि

कवि ने अधिकांशत: संधि के नियमों का पालन ही किया है। कुछ दीर्घ स्वर संधियां ये हैं — अंशावतार, अरुणाभा, इन्द्रासन, एकाकार, करुणार्द्र, कुसुमावलियां, क्रोधातुर, गहनांधकार, तमाच्छन्न, तमसावृत, तृषाकुल, तृषातुर, ध्वंसावशेष, नवाकार, परमार्थ, पिपासाकुल, पुलकाकुल, प्रेमालाप, भावाकुल, मदिराभ, मदिरालय, मलयानिल, मिलनातुर, युगांतर, रक्ताभ, रत्नागार, रेखाकार, लोकाचार, वज्राघात, विरहाकुल, विहगावलियां, शयनागार, शुभागमन, शुभाशीष, समरांगण, सुरासुरों, स्वप्नाभिलाषी, स्वाधीन और हरिताभ।

कुछ गुण-संधियां ये है — क्रीड़ोद्यान, गंधोन्माद, गर्वोन्नत, जीर्णोद्धार तप्तोच्छ्वास, नवोत्थान, नवोल्लास, पतनोत्थान, प्रथमोन्माद, प्रथमोन्मेषक, प्रेमोद्यान, मंत्रोच्चार, महोन्माद, मूलोच्छेद, विजयोल्लास, शोकोद्गार, हृदयोद्गार।

उर्दू शैली से प्रभावित संधियां भी है यथा गंगोजमुन [4], मस्तिष्कोहृदय [5]।

कुछ विसर्ग संधियां ये हैं — अन्तर्ज्वाला, अन्तर्दाह, ज्योतिर्मंडल, तमोमय, मनोमोहिनी। ज्योतिमय [6], सहजनुभूति [7] नई संधियां हैं।

---

१. सतरंगिनी, अंधेरे का दीपक, ६४ — 'हाथ की दोनों हथेली'
२. आरती और अंगारे, गीत ८ ३९ — 'राजों-शाहों के दरबारों मे'
३. प्रारंभिक रचनाएं (१) मृत्यु, १२१ — 'बड़े बड़े पंजे दिखलाया'
४. आरती और अंगा गीत ५२, १३८ — 'गंगोजमुन के तीर'
५. वही, गीत २७, ७० — 'कर दिया है फर्क मस्तिष्कोहृदय मे'
६. मधुकलश, मेघदूत के प्रति, ११८ — 'कलाधर ज्योतिमय जिसको बनाता'
७. बुद्ध और नाचघर, के दो पेड़, १३८ — 'सहजनुभूति कारण मत पूछना'

समास

कवि ने अनेक प्रकार के समास अपनाये हैं। कुछ **सम्बन्ध तत्पुरुष समास** देखें — अश्रु कण, उदर-क्षुधा, उदर-ज्वाल, उर-ज्वाल, **ओस-कण**, कंकण-ध्वनि, कर्त्तव्य-सुघरता, **कवि-उर**, काल-प्रहारी, कीर्ति-गायन, कोकिल-पंचमतान, **चिता-राख**, **चीन-दीवार**, छत्र-छाया, जन-समाज, जल-कण, **जीवन-अभाव**, तरु-दल, **तारक-दल**, **दिन-बीच**, नभ-दीपो, **पग-पायल**, पूजा-भाव, प्रात-समीरण, प्रेम-पाश, **बादल-दल**, भाव-सरसता, मंदिर-प्रतिमा, **मधु-प्यासे**, **मधु-विक्रेता**, **मानव-देह**, मानस-मंथन, यौवन-रंगरेलियो, विश्व-नियंता, विहगम-दल, शिला-खण्डों, सागर-जल, सिंधु-लहर, स्नेह-बंधन, स्नेह-सरसता, स्वप्न-लोक और हृदय-भावना।

कुछ **कर्मधारय समास** ये हैं — अधर-पंखुरिया, **अभिलाषा-डाले**, **कंचन-पीले**, कर-कुलिश, कल्पना-खग, कविता-विहग, कुच-कलश, **कांति-कोकिला**, **गान-विहग**, **घन-अवगुंठन**, छाया-तन, **जीवन-क्यारी**, जीवन-जलयान, जीवन-डाली, जीवन-तरु, जीवन-तरुवर, जीवन-यान, **तिमिर-अवसाद**, दर्पण-नयनों, दर्पण-स्वच्छ, **दाग-पराग**, **दुग्ध-उज्ज्वल**, नख-नक्षत्रों, नभ-गुंबद, निराशा-पतझड़, **पलक-पांखरी**, पवन-पुरोहित, **भाव-विहंगम**, मन-मंदिर, मन-वीणा, मानस-गगन, **मुकुर-उर**, **मोती-आंसू**, रवि-रथ, विश्व-घट, विश्व-सागर, विश्व-बीच, वृक्ष जीवन, **व्याध जग**, शब्द तूलिका, **सौरभ-यश**, स्मृति-दर्पण स्वर-कुठारा, स्वेद-रक्त हाथ-हथौड़े, हृद्-गगन।

इन में उपमानपूर्वपद और उपमानोत्तरपद उभय प्रकार के कर्मधारय समास हैं।

करण तत्पुरुष समास देखें—

अचरज-भरा, अश्रुकण-सिंचित, अश्रु-भरे, उन्माद-तरल, उल्लास-चपल, **क्रोध-कंपित**, गंध-भरा, **ग़म-भरा**, नम-प्रपूरित, तम-भरा, तम-विनिर्मित, **दुख-दुर्बल**, **पाद-लुंठित**, प्यार-भरे, भाव-भरा, मधु-सिंचित, वसंत-सेवित, स्वप्न-विनिर्मित।

अधिकरण तत्पुरुष समास भी हैं यथा अंतरिक्ष-विलीन, चिता-दग्ध, **पथ-डेरा**, मधु-मज्जित, मुकुर-बिंबित, **रव-रत**, **सुधि-बसे**।

'स' ('सह' अर्थ में) जोड़ कर बने **अव्ययीभाव समास** ये हैं—

सकरुण, सकलंक, सभाव, सचित्र, सजग, सजल, सजीव, सजीवन, **सदय**

सदल, सनीर, सनेह, सपथ, सप्यार, सप्रेम, सफल, सभीत, सयत्न, सरस, सलज्ज, सलालिमा, सवेग, सस्मित, सस्वर, सहास, साधिकार और सोत्साह।

अन्य विविध समास ये हैं — अग्नि-आनन, कल्पना-पथ, क्रीड़ा-केलि, खेल-मिचौनी, गति-विधि, गीत-गंध, छल-व्यापार, जन्म-गोदी, जादू-भवन, **पर-स्वर,** प्यार-पूजा, मन-वांछित, राज-मार्ग, **सूत्र-वाणी,** स्नेह-चुंबन **और** हित-मित्र।

कुछ **समास-विपर्यय** देखने योग्य हैं—

दण्ड-भुज, दण्ड-माप, प्याम-प्रणय, मग्न-नीर, मालिक-मधुशाला, लग्न-समाधि।

शब्द-लोप

यद्यपि लय और छंद की आवश्यकतानुसार कविता में शब्द-लोप भी कहीं कहीं क्षम्य हो जाता है तथापि उसका प्राचुर्य नहीं होना चाहिए। **का**[1], **को**[2], **पर**[3], **में**[4] और से[5] शब्दों का लोप देखें—

---

१. प्रारंभिक रचनाएं (१), चित्र-समर्पण, ६५ — 'रग एक (**का**) मैं चित्र बनाऊं'

२. मधुबाला, मुराही, २९ — 'मैं मृत्यु (**को**) विजय कर के'

३. (क) कविता वही, २९ — 'मैं कुंभकार की चाक (**पर**) चढी'

(ख) मधुबाला, मधुबाला, ४ — 'थे जड़वत् प्याले भूमि (**पर**) पड़े'

४. (क) प्रारंभिक रचनाएं (२), भ्रम, ७५ 'नहीं मैं हार-जीत के पक्ष (**में**)'

(ख) वही (१), गुदगुदी, ७३ — 'पीछे उन्हें मिलाता कीच (**में**)'

५. (क) वही (१), तितली, ८५ — 'चिमनी के मुंह वेग (**से**) समाई'

(ख) वही (२), गांधी जी के बिलासन .., १८ — 'ये मेरे हाथ दबाते तुझे न सीने (**से**)'

(ग) वही (२) वही, ३५ — 'अग्नि में वेग (**से**) तुम्हें मैं कर दूंगी बरबाद'

अन्य शब्द-विकार

कुछ शब्दों की विकृतियां इस प्रकार हैं—

अकस्मात [१] (त्), गैंडी [२] (गांधी), चतुर्दिक [३] (क्), प्र'ध्वनित [४] (प्रतिध्वनित), भागा-दौड़ी [५] (भाग-दौड़), मां भारत [६] (भारतमाता), मुझी [७] (मुझ ही), विधिवत [८] (त्), हमी [९] (हम ही), हेरफेरा [१०] (हेर-फेर)

इन शब्दों में '**गैंडी**' अंगरेजों द्वारा किया हुआ 'गांधी' का विकृत उच्चारण है। "**प्र'ध्वनित**" शब्द भी अगरेजी भाषा-शैली का प्रभाव सूचित करता है। '**मुझी**' और '**हमीं**' तो खड़ी बोली की 'ह्' लोप की प्रवृत्ति के निदर्शन हैं।

---

१. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत २३, १४९ — '**अकस्मात** यह बात'

२. बुद्ध और नाचघर, तुम्हारी नज़रों मे वे .., ६८ — 'उसका नाम हां **गैंडी...गैंडी**'

३. (क) प्रारंभिक रचनाए (२), पाचजन्य, १३२ — 'सुन पडे **चतुर्दिक**'
(ख) हलाहल, चतुष्पदी, ६३ — '**चतुर्दिक** आधी के आसार'
(ग) वही, चतुष्पदी, ८७ — '**चतुर्दिक** जिसके बाग-तड़ाग'

४. (क) आरती और अगारे, गीत ११, ४५ — '**प्र'ध्वनित** था कठ'
(ख) वही, गीत २४, ७३ — '**प्र'ध्वनित** मै ने'
(ग) वही, गीत ५०, १३४ — 'जो **प्र'ध्वनित** आकाश करता'

५. वही, गीत ६७, १६९ — 'खंडहर से होगी **भागा दौड़ी**'

६. प्रारभिक रचनाएं (१), झण्डा, २३ — 'हमें बुलाती है **मां भारत**'

७. एकांत संगीत, गीत १६, ३२ — '**मुझी** मे लीन हो'

८. हलाहल, चतुष्पदी, १४ — 'झुका है मेरा **विधिवत** माथ'

९. हलाहल, चतुष्पदी, ११७ — '**हमीं** में स्थित'

१०. आरती और अंगारे, गीत ६८, १७० — '**हेरफेरा** हो गया है'

कवि ने सर्वनामों के कुछ ऐसे प्रयोग भी किए हैं जो साहित्यिक हिंदी में प्रचलित नहीं हैं यथा तुम को, हम को [1]। इनके स्थान पर 'तुम्हें', 'हमें' चाहिए। 'सबो' [2] सर्वनाम भी है। 'सब' पहले ही बहुवचन में है अतः पुनः बहुवचन रूप 'सबों' ठीक नहीं है। [3] 'जो' की अपेक्षा 'जिसे' [4] भी मिल जाएगा।

नव शब्द

नव शब्दों में से अधिकांश समास ही है। उदाहरण इस प्रकार है — अखमुदौल [5], करुणापीन [6], खोजनहार [7], चिंतापीन [8], छपकछैया [9], जलनाथ [10], जुलाहेशाह [11], झराझर [12], ठट्टिम ठट्टा [13], दुरुपेक्षा [14], दे-ले [15], दो-तारा [16],

---

१. मिलन यामिनी, मध्य भाग, गीत १०, ९५ '**हम को तुम को** बस दिखलाया'
२. बुद्ध और नाचघर, पूजा, ३२ — 'लघुतम **सबों** से क्षीण'
३. हिंदी प्रयोग, रामचन्द्र वर्म्मा, १३६
४. (क) खादी के फूल, गीत ४२, ६७ 'वह मृत्यु **जिसे** सुकरात सुधी ने पाई थी'
(ख) वही कविता, ६७ — 'वह मृत्यु **जिसे** ईसा ने गले लगाई था'
५. सतरंगिनी, अजेय, ९८ — 'न **अंखमुदौल** खेलना'
६. (क) प्रारंभिक रचनाए (१), मृत्यु, १२२ — 'तुझे कहूं मैं **करुणापीन**'
(ख) वही (२), गाधी जी के विलायत, २२ — 'दशा यह तेरी **करुणापीन**'
७. हलाहल, चतुष्पदी, ७६ — 'स्वयं खो जाता **खोजनहार**'
८. प्रारंभिक रचनाए (१) उपहार, ४९ — 'निशिदिन **चिंतापीन**'
९. आरती और अंगारे, गीत ८३, २०३ 'छीलर कि जिसमें तू **छपकछैया** करेगा'
१०. प्रारंभिक रचनाए (२), गांधी जी के विलायत, २६ 'क्षुब्ध हो जाता है **जलनाथ**'
११. आरती और अगारे, गीत ११, ४६ — 'हे **जुलाहेशाह**!'
१२. बुद्ध और नाचघर, शैल विहंगिनी, ११२ — '**झराझर** नयन झरते'
१३. बंगाल का काल, ६६ — 'हुए इकट्ठा **ठट्टिम ठट्टा**'
१४. प्रारंभिक रचनाएं (१), काव्य-अप्रकाशन, ६६ — '**दुरुपेक्षा** का अपमान'
१५. मिलन यामिनी, मध्यभाग, गीत ३३, १९० 'हर एक लगा है अपनी अपनी **दे-ले** में'
१६. आरती और अंगारे, गीत ८४, २०६ — 'सांसों का यह **दो-तारा**'

धुन-धंधों[१], **न-कुछ**[२], **नत-माथ**[३], **निर्विलम्ब**[४], **पद-लगा**[५], **पीलिमामयी**[६], **बाजंतर**[७], **बाजंतरी**[८], **बूदम**[९], **भयपीन**[१०], **मति-मंशा**[११], **मृग-भ्रम**[१२], **यश-अकामी**[१३], **लहराव**[१४], **विसुधबुध**[१५], **वेदना-विनोदी**[१६], **शाखावशेष**[१७], **सिंधु-रुखी**[१८] और **सुरुआ**[१९] ।

'आँखमिचौनी' के अर्थ में '**अंखमुदौल**' देशज प्रयोग है।

करुणापीन, चिंतापीन, भयपीन — करण तत्पुरुष समासों के उदाहरण हैं। हिंदी मे इनका अधिक प्रचार नहीं है।

व्रजभाषा मे 'हार' प्रत्यय जोड़ कर कर्तृवाचक संज्ञा-रूप बनते हैं यथा ओढ़नहार, खेवनहार, डसनहार, दिखहार, मथनहार, मेटनहार, राखनहार, लिखहार

---

१. हलाहल, चतुष्पदी, ४९ — 'सब **धुन-धन्धों** को छोड'
२. बुद्ध और नाचघर, दोस्तों के सदमे १, ८७ — 'मैं हूं अपदार्थ **न-कुछ**'
३. धार के इधर उधर, विजयदशमी, ४८ — 'उनका देश है **नत-माथ**'
४. वही, नौ अगस्त '४२, ३७ — '**निर्विलम्ब** देश एक हो'
५. आरती और अंगारे, गीत १४, ५१ — '**पद-लगा** मै हूं तुम्हारा'
६. मिलन-यामिनी, उत्तर भाग, गीत ६, २०२ 'प्रकृति विकारवान **पीलिमामयी**'
७. आरती और अंगारे, गीत २६, ७९ — '**बाजंतर** मे, कंठ, लेखनी मे'
८. वही, गीत ११, ४५ — 'बज रही **बाजंतरी** थी'
९. बंगाल का काल, ७४ — 'कहा पड़े बेदम के **बूदम**'
१०. प्रारंभिक रचनाएं (१), मृत्यु, १२१ — 'कुटिल महा **भयपीन**'
११. आरती और अंगारे, गीत ४१, ११३ — '**मति-मंशा** का'
१२. सतरंगिनी, मृगतृष्णा, ११७ — '**मृगभ्रम** तुम'
१३. आरती और अंगारे, गीत २७, ८० — '**यश-अकामी** चित्रकारो'
१४. बुद्ध और नाचघर, डैफ़ोडिल, ६३ — 'हवा में इनके **लहराव**'
१५. सतरंगिनी, जयमाल, १४५ — 'हो गये सहसा **विसुधबुध**'
१६. प्रारंभिक रचनाएं (२) वेदने, — 'यह **वेदना-विनोदी** यौवन'
१७. सतरंगिनी, प्रतिकूल, ९२ — 'एक पेड़ **शाखावशेष**'
१८. आरती और अंगारे, गीत १८, ६१ — '**सिंधु-रुखी** सरिता'
१९. बंगाल का काल, ४१ — 'रोटी **सुरुआ**-बोटी'

और सिरजनहार।[1] ये सब एकवचन पु० रूप हैं। '**खोजनहार**' संज्ञा भी इसी कोटि की है।

'**छपकछैया**' भी देशज शब्द है। हिंदी में 'छपकना' स० क्रि० और 'छपछपाना' अ०, स० क्रि० 'छप छप करने' के अर्थ में हैं। 'छपकछैया' नवीन संज्ञा है।

संस्कृत में '**जलनाथ**' सं० पु० शब्द 'समुद्र' अर्थ में है। यह समास 'जलपति' और 'जलेश' आदि पर्यायवाची शब्दो के साम्य पर है। हिंदी मे इसका प्रयोग अधिक नही होता।

'**जुलाहेशाह**' संत कबीर के लिए नया संबोधन है। '**झराझर**' नया अनुकरणवाचक शब्द है।

'भीड' अर्थ में '**ठट्टम-ठट्टा**' भी नवीन शब्द ही है। अवधी में 'ठटा'[2] और 'ठट्ठ' शब्द पहले ही 'झुण्ड' अर्थ मे हैं।

'**न-कुछ**' शब्द अंगरेजी के 'NOTHING' शब्द का हिंदी समानक है।

'**नत-माथ**' में 'नत' संस्कृत तत्सम शब्द है और 'माथ' शब्द (स० मस्तक) तद्भव है। 'नतशिर' और 'नतमस्तक' के साम्य पर यह समास लिखा गया है।

हिंदी में 'पिछ-लगा' (पिछलगू या पिछलग्गू) वि० शब्द 'दीन भाव से किसी के पीछे-पीछे लगे रहने वाले' को कहते है। यहां '**पद-लगा**' उसी के अनुकरण पर घड़ा गया है।

हिंदी 'पीला' वि० शब्द में 'इमा' पर-प्रत्यय लगा कर '**पीलिमा**'[3] भाववाचक संज्ञा बनाई जाती है — अर्थ 'पीलापन'। किंतु हिंदी मे यह अधिक प्रचलित नही है।

---

१. ब्रजभाषा सूर-कोश, द्वितीय खण्ड, परिशिष्ट, २०२०

२. तुल० — 'जबहिं आइ जुरिहै वह **ठटा**' (जायसी)

३. हिंदी मे प्रत्यय-विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति:, १२९

हिंदी में 'बजंत्री'[१] सं० पुं० शब्द का अर्थ है — 'बाजा बजाने वाला, बजनियाँ'। यहां 'बाजा' अर्थ में **बाजंतर** और **बाजंतरी** शब्द-विकार आए है।

फ़ारसी में 'बूदमे बेदाल'[२] सं० पुं० शब्द का अर्थ है— 'दाल' अक्षर अर्थात् 'द' से रहित 'बूम' — (अर्थ उल्लू, मूर्ख)। यहा केवल '**बूदम**' शब्द ले कर इन्ही अर्थों मे प्रयुक्त किया गया है।

'मृगतृष्णा' अर्थ मे '**मृग-भ्रम**' एक नया पर्यायवाची शब्द है।

उलझाव, बहकाव, भटकाव, सुलझाव आदि के साम्य पर 'आव' प्रत्यय लगा कर '**लहराव**' बना है।

'**शाखावशेष**' शब्द 'ध्वसावशेष' के तौल पर गढा गया है।

'**रुआ**'[३] (सं० पु०) अवधी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है — 'शोरबा, मांस आदि का रस'।

प्रिय शब्द

कवि के प्रिय शब्द ये हैं — अन्तर्ज्वाला, अन्तर्ध्यान, अज्ञान, अमान, अविवेक, आश, आशिष, आशीष, ओढना, खिनवार, चिरौंधा, जगत, तमतोम, तमहर, दरकार, द्वन्द्व, धरहरा, नखत, नछत्र, पिन्हाना, पीन, बिस्तरिया, भुज-दण्ड, भुजपाश, मधुमान, मधुवन, मरमर, महान्, रेख, ललाम, लोहु लुहान, वक्ष:स्थल, वानास, विराट्, विहान, संप्रदायपन, सजीवन, समा, सुकुमार, सुखमा, हमी, हराभरापन, हरेक और हालाहल।

ध्वन्यात्मक शब्द

ध्वन्यात्मक अथवा अनुकरणात्मक शब्द भी कम नहीं हैं। कवि ने इस क्षेत्र मे भी अपनी शब्द-संपदा की बहुलता प्रकट की है। कुछ ध्वन्यात्मक शब्द तो कवि को

---

१. मानक हिंदी कोश चौथा खण्ड, दे० 'बजत्री'।

२. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, 'मद्दाह', दे० १. बूदमे बेदाल २-बूम

३. अवधी कोष, रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर'

सर्वाधिक प्रिय हैं यथा **मरमर**[१] शब्द जो कि पत्तों की मरमराहट है। पत्तों की और भी ध्वनियां मिलती हैं **खड़ खड़ खर खर, पटर पटर**[२] '**छर छर**'[३] नीर की ही ध्वनि है। नदियां '**कलकल**'[४] करते हुए बहती है और निर्झरो[५] की भी यही ध्वनि है। **टलमल**[६] भी निर्झरो का ही मधुर गान है। इसी प्रकार '**झरझर**'[७] की ध्वनि अश्रुओं, झझाओ, वृष्टि और वस्त्रो का एक साथ प्रतिनिधित्व कर रही है। घटाए '**रिमझिम**'[८] करती हुई बरस बरस जाती हैं। '**झरझर**'[९] भी उनका जल-सगीत है। हवाएं **फर फर**[१०], **सर-सर**[११], **सायँ, सायँ**[१२] और

१. (क) निशा-निमंत्रण, गीत २०, ४४ — 'पल्लव **मरमर** गान कहां अब'

(ख) प्रारभिक रचनाएं (१), ग्रीष्म बयार, ९६ — 'तरु से **मरमर**'

(ग) एकात सगीत, गीत ९, २५ — 'निज **मर मर** गायन'

२. बुद्ध और नाचघर, रात का अपराध, ४७ '**खड़ खड़** में, **खर खर** मे, **पटर पटर** में'

३. मधुकलश माझी, ९२ — 'कब उठेगा नीर **छर छर**'

४. (क) मधुकलश, मधुकलश, २४ — 'वह गाती जाती है **कलकल**'

(ख) आरती और अगारे, गीत १८, ६१ — 'लहरों का **कलकल** होता'

५. निशा-निमत्रण, गीत ५६, ८० — '**कलकल** करते सरित निर्झर'

६. मधुबाला, इस पार उस पार, ८३ — 'निर्झर भूलेगा निज **टलमल**'

७. (क) निशा-निमत्रण, गीत ४३, ६७ — 'है गिराती अश्रु **झर झर**'

(ख) निशा-निमत्रण गीत ७, २७ — 'खेला झझा के **झर झर** से'

(ग) मिलन यामिनी, म० भा०, गीत १३, १११ '**झर झर** लो वृष्टि लगी होने'

(घ) मधुबाला, मालिक मधुशाला, १० — '**झर झर** लहराते पट देखो'

८. (क) निशा-निमत्रण, गीत ३३, ६२ — 'रो पड़ी **रिमझिम** घटा में'

(ख) प्रारभिक रचनाए (१), मधुकर, ३४ — '**रिमझिम** रिमझिम कर के'

(ग) मिलन यामिनी, पू० भा०, गीत २७, ४५ — '**रिमझिम** है मेघ'

९. आरती और अगारे गीत, १०, ४४ — 'बरसेगा जब **झर झर** सावन'

१०. प्रारभिक रचनाए (१), ग्रीष्म बयार, ९६ — 'उड़ती वस्त्रों में **फर फर फर**'

११. बुद्ध और नाचघर, रेगिस्तान का सफ़र, ७५ — 'हवा में **सर सर सर**'

१२. खादी के फूल, कविता २०, ४० — 'मलयानिल भी अब **सायँ सायँ**'

हरहर [1] करते हुए बहती हैं। '**सन सन**' [2] प्रभंजन की ही सनसनाहट है।

इनके अतिरिक्त विद्युत् '**कड़क**' [3] ध्वनि करती हुई कड़कती है और मेघ '**गडगड**' [4] करते हुए गडगड़ाते हैं। आसू '**छलछल**' [5] करते हुए छलकते हैं। कोयल [6] और मधुकर '**गुन गुन**' [7] करते हुए गुनगुनाते हैं। कोयल की और ध्वनियां भी कवि ने दी हैं यथा — **कूऊ कुऊ** [8], **कुहु कुहु** [9], **कुहुक कुहुक** [10]। बिल्ली यहां '**आउ आउ**' [11] करती हुई मिमियाती है।

आभूषणों में वलय की **खनन खनन** [12], पायल की **छन छन** [13] **रुनुक भनक** [14], नूपुरों की **छुम छनन** [15] और किंकिणी की **छनन छनन** [16] आदि

---

१. (क) निशा-निमत्रण, गीत १०, ३४ — 'चलता करता **हर हर**'
(ख) मधुकलश, मधुकलश, २६ — 'गिरि कानन पर करना **हर हर**'
(ग) प्रारंभिक रचनाएं (१), ग्रीष्म बयार, ९२ 'हर हर वृक्षों पर करती'
२. (क) मधुकलश, माझी, ९० — 'वेग में कर शब्द **सन सन**'
(ख) मिलन यामिनी, म० भा०, गीत २१, १४३ · प्रभंजन का रव **सनसन**'
३. (क) प्रारंभिक रचनाए (१), झूला, ८९ — 'मैं **कड़क** ध्वनि हो कर'
(ख) सतरंगिनी, सतरंगिनी, १, ७ — 'अति क्रुद्ध मेघों की **कड़क**'
४. आरती और अंगारे, गीत ४१, ११२ — 'यह **गड़गड़** का शोर'
५. आरती और अंगारे, गीत १८, ६१ — 'आसू की **छलछल** में'
६. प्रारंभिक रचनाए (१), कोयल, २७ — 'निज **गुनगुन** गान'
७. प्रारंभिक रचनाए (१) मधुकर, ३७ — '**गुनगुन** कर के गुण गाना'
८. प्रारंभिक रचनाए (१), कोयल, २९ 'फिर '**कुऊ**' पूर्ण आवेश सुना कर'
९. सतरंगिनी, इन्द्रधनुष की छाया में, ३ — 'कूकी **कुहु कुहु** कोयल'
१०. प्रारंभिक रचनाए (१), मध्याह्न, २९ — '**कुहुक कुहुक** कोयल का'
११. निशा-निमत्रण, गीत ४५, ६९ — '**आउ आउ** कर किसे बुलाती'
१२. मिलन यामिनी, उ० भा०, गीत १७, २१३ — 'वलय **खनन खनन**'
१३. मधुबाला, २१ — '**छन् छन्** पायल'
१४. मिलन यामिनी, म० भा०, गीत २१, १४५ — 'उसकी **रुनुक झुनुक** पर'
१५. मधुबाला, मधुबाला, २ — 'मेरे नूपुर की **छूम छनन**'
१६. मिलन यामिनी, उ० भा०, गीत १७, २१३ — 'किंकिणी बजी **छनन छनन**'

श्रुतिमधुर ध्वनियां भी हैं। चरण **छम्छम्**[1] और **झनन झनन**[2] करते हुए थिरक रहे हैं। घंटे '**टनटन**'[3] करते हुए टनटनाते हैं और बेड़िया, हथकड़ियां '**झनझन**'[4] करती हुई झनझनाती हैं। बिगुल भी '**धुतू-धकर**'[5] करते हुए धुकधुकाते हैं।

चिता की ध्वनिया ये है -- **चट चट**[6], **दह-दह**[7], **धू-धू**[8], **भर-भर**[9]। गोलियां '**तड़ तड़ तड़**'[10] करते हुए चलती है। झण्डे फर-फर, हर-हर[11] कर के फरफराते हैं। खेत '**लह लह**'[12] करते हुए लहलहाते है। घूघट '**झिल्-मिल्**'[13] करते हुए झिलमिलाते है।

बाते की जाती हैं **गिटपिट गिटपट**[14]। हिलने की ध्वनि है **डगमग**[15]। धमक की ध्वनि है '**धम**'[16] और कूदना भी '**धमाधम**'[17]। छाती **धक धक**[18]

---

१. मधुबाला, पगध्वनि, ९४ - 'चरणो की कल **छम् छम्**'
२. मिलन यामिनी, उ० भा० गीत १७, २१३ — 'चरण ध्वनित **झनन झनन**'
३. निशा-निमंत्रण, गीत १६, ४० — 'गिरजे से घंटे की **टनटन**'
४. (क) मधुकलश, कवि की वासना, ४० — 'बेड़ियो का शब्द **झनझन**'
   (ख) बंगाल का काल, २६ — 'हथकड़ियों-बेड़ियों की **झनझन**'
५. बंगाल का काल, ६० — 'बिगुल की **धुतू** धकर'
६. सूत की माला, गीत ८७, १२५ — 'चिता से **चट चट** कर के'
७. सूत की माला, गीत ८०, ११३ — 'चिता दहकती है दह **दह**'
८. सूत की माला, गीत ८४, ११९ — '**धू धू** करके धधकी थी'
९. सूत की माला, गीत ७९, ११२ — 'जो चिता जल रही **भर भर**'
१०. सूत की माला, गीत ५९, ८६ — 'चले गोलिया **तड़-तड़-तड़**'
११. बंगाल का काल, ६० — 'झंडो की **हर-हर, फर फर**'
१२. बंगाल का काल, २३ — '**लह-लह** लहराते खेत'
१३. मधुबाला, मालिक मधुशाला, १० — '**झिल्-मिल्** हिलते घूघट'
१४. सूत की माला, गीत १०२, १४९ — '**गिटपिट गिटपट** करती फिरती'
१५. बंगाल का काल, ५३ — 'वह **डगमग डगमग** हिलती है'
१६. हलाहल, चतुष्पदी, ६१ — 'धरा पर '**धम**' से देगे डाल'
१७. आरती और अंगारे, गीत ३३, ९४ — 'कूद कूए में जाएं **धमाधम**'
१८. (क) खादी के फूल, कविता ६२, ९३ — 'छाती **धक-धक**'
   (ख) एकांत संगीत, गीत १०, २६ — '**धक-धक** करती मेरी छाती है'

करके धकधकाती है। नाव '**थरथर**'[१] और '**चरमर**'[२] करते चलती है। **मदिरा** '**छलछल**'[३] करते छलकती है। लौ 'दुप दुप'[४] कर के टिमटिमाती है।

---

१. मधुकलश, मांझी, ९० — 'कांप मेरी नाव **थरथर**'

२ मधुकलश, मांझी, ९२ — 'प्रताड़ित हो करेगी नाव **चरमर**'

३. (क) मधुबाला, सुराही, ३० — '**छल् छल्** कर के वाचाल हुई'

(ख) मधुबाला, पांच पुकार, ८९ — 'छल्-छल्' कहे माणिक मदिरा'

४. सूत की माला, गीत ८२. ११६ — 'दुप-दुप करती दबती जाती लौ'

'डॉ रामधारी सिंह दिनकर'

संज्ञा

दिनकर जी के काव्य में कुछ विशिष्ट संज्ञाएं इस प्रकार हैं —

अज्ञातशीलकुलता [1], अवशंसी [2], अहमित्व [3], आगमनी [4], आगाही [5], कत्तिन [6], निर्देहता [7] और सुगबुगी [8]।

'अज्ञातशीलकुल' वि० में 'तल्' प्रत्यय जोड़ कर '**अज्ञातशीलकुलता**' भाववाचक संज्ञा गढ़ी गई है।

संस्कृत में 'शंसिन्' वि० शब्द का अर्थ है 'प्रशंसा करने वाला, कहने वाला'। यहां 'अव' उपसर्ग लगाकर '**अवशंसी**' नयी संज्ञा निर्मित की गई है— अर्थ 'निन्दक'।

---

1. रश्मिरथी, पंचम सर्ग, ९२ — '**अज्ञातशीलकुलता** का विघ्न'
2. रश्मिरथी, षष्ठ सर्ग, १२५ — 'मैं नहीं गिरा **अवशंसी** था'
3. सामधेनी, कलिंग-विजय, ५० — 'भूल कर भूपाल का **अहमित्व**'
4. हुंकार, विपथगा, ७२ — 'अपनी **आगमनी** बजा रही मैं'
5. नील कुसुम, स्वर्ग के दीपक, ६० — '**आगाही** सुनते नहीं सितारे हँसते हैं'
6. रेणुका, कविता शीर्षक '**कत्तिन** का गीत'
7. नील कुसुम, नर्तकी, ३० — 'रूप वह **निर्देहता** की ज्योति हो जिस में'
8. वही, जीवन, ३८ — 'पत्थरों में भी कहीं कुछ **सुगबुगी** है'

'अहंता' या 'अहम्मन्यता' अर्थ में '**अहमित्व**' भी नव संज्ञा-रूप ही है।

व्रजभाषा मे 'अवाई' और 'आगम' सज्ञा शब्दों का अर्थ आगमन है। किंतु यहां '**आगमनी** बजाना' मुहावरा 'स्वागत करना' अर्थ में जान पड़ता है।

फारसी में '**आगाही**' स० स्त्री० शब्द के अर्थ है — 'ज्ञान, सूचना, जानकारी, परिचय' इत्यादि।

व्रजभाषा मे 'चर्खा कातने वाली' अर्थ मे 'कत्ती'[1] (स० कर्त्री) शव्द है। उसी अर्थ मे '**कत्तिन**' शब्द-रूप भी है।

'निर्देह' मे 'तल्' प्रत्यय जोड कर '**निर्देहता**' भाववाचक सज्ञा बनी है। हिंदी मे इसका भी अधिक प्रचार नही है।

व्रजभाषा मे 'सगबगाना या सगबगानो अ० क्रिया के 'लथपथ होना, शकित या भयभीत होना, चकित होना' आदि अर्थ है। यह क्रिया सकर्मक भी है। किंतु यहां '**सगबगी**' सज्ञा धडकन, हलचल आदि अर्थों मे भिन्न है।

सज्ञा-विकार

कतिपय सज्ञा-विकार भी द्रष्टव्य है—

आपा-आपी[2] (आपा-धापी), आश[3] (आशा या आस), आसिन[4] (आश्विन), उच्छवास[5] (उच्छ्), उनमाद[6] (उन्माद), कपालिक[7] (का),

---

१. कृषक जीवन सम्बधी व्रजभाषा शब्दावली, प्रथम खण्ड, १९७

२. नील कुसुम, नील कुसुम, २ — 'है मची हुई **आपा-आपी** मस्तानो मे'

३. (क) रश्मिरथी, सर्ग ४, ७१ — 'कर्ण-विजय की **आश** तडप कर'

(ख) रश्मिरथी, सर्ग ७, १८२ — 'जय की किञ्चित भी नही **आश**'

४. नील कुसुम, आरभिक पृष्ठ — '**आसिन** का जल बिलकुल दर्पण-सा'

५. सामधेनी, कविता ४, १७ — 'घन बन छायेगा ही **उच्छवास**'

६. रेणुका, निर्झरिणी, ४७ — '**उनमाद** की रागिनी'

७. रसवंती, संध्या, ८४ —'अम्बर-**कपालिक** शीर्ण'

गिरी [1] (रि), चाकचिक्य [2] (चाकचक्य), जगत [3] (त्), धूर्जटी [4] (टि), नारि [5] (री), फोले [6] (फफोले), बिघा [7] (बी) मरमी [8] (मर्मी), मुस्की [9] (स), मोगल [10] (मुगल), रजिनी [11] (रजनी), वक्षस्थल [12] (वक्षःस्थल), वामी [13] (बामी या बाबी),

---

१. रश्मिरथी, सर्ग २, २३ — उस महेंद्र गिरी पर तुम ने '
२. रश्मिरथी, सर्ग ३, ५३ — ' कुछ चाकचिक्य, कुछ क्षण विलास '
३. (क) नील कुसुम, सब मे बड़ी आवाज, २१ — ' यह जगत '
   (ख) वही, ये गान बहुत रोये, २८ — ' जगत जो सारा '
   (ग) वही, नर्तकी, ३० — ' जगत के रूप सारे '
४. सामधेनी, जवानी का झंडा, ७९ — ' धूर्जटी ने बजाया विषान '
५ (क) उर्वशी, अंक १, २८ — ' नहीं उर्वशी नारि नहीं '
   (ख) सामधेनी कलिंग-विजय, ५६ — ' नारि सजती है विजय का दीप '
६. रसवंती, सावन मे, ९१ — ' हरे हुए दिल के फोले '
७ धूपछांह, दो बिघा जमीन, ३० — ' दो बिघे '
८ (क) बापू, कविता ४, ९ — ' कोई मरमी पाता जिसका परिचय '
   (ख) कविता वही, ९ — ' मानवता का मरमी सजान '
९. रसवंती, बालिका से वधू, १४ — ' मुस्की आ जाती मुख पर '
१०. रेणुका, वैभव की समाधि पर, १०५ — मोगल गरिमा सोती है '
११. रसवंती, कालिदास, ७८ — ' ऋषि-रजिनीमुख '
१२. (क) बापू, कविता १, ३ — ' हवा के वक्षस्थल पर '
   (ख) बापू, अघटन घटना..., ५१ — ' वसुधा अपने वक्षस्थल पर '
   (ग) कविता वही — ' मेरे वक्षस्थल पर सदेह '
   (घ) रश्मिरथी, सर्ग ३, ३२ — ' भूमंडल वक्षस्थल विशाल '
१३. (क) बापू, कविता १०, २२ — ' घूमता हो सापों की वामी पर '
   (ख) बापू, कविता ११, २६ — ' वामी से कढ बाहर आवे '
   (ग) पृष्ठ वही — ' वामी वामी पर घूम घूम '

विद्युत[1] (त्), **विपद**[2] (द्), **विभ्राट**[3] (ट्), **शताब्दि**[4] (ब्दी), **शूरमा**[5] (सू), **सनेह**[6] (स्नेह)।

इन में आसिन, उच्छवास, उनमाद, कपालिक[7], गिरी, जगत, नारि, मरमी, वक्षस्थल, विद्युत, सनेह आदि शब्द-रूप कविताओं मे देखे ही जाते हैं।

हिंदी में '**सूरमा**' ही अधिक प्रचलित है, शूरमा (सं० शूर) नही।

उर्दू में 'मुग़ल'[8] (तुर्की में शुद्ध उच्चारण 'मुगुल') पुं० शब्द का अर्थ है 'तुर्किस्तान का निवासी'। अगरेजी वर्तनी में यह Moughal लिखा जाता है जिसके प्रभाव से 'मोगल' रूप भी हिंदी मे मिलता है।

हिंदी मे 'फफोला' (स० प्रस्फोट) का अर्थ 'छाला' है। उर्दू मे एक शेयर है—

> दिल के **फफोले** जल उठे सीने के दाग से
>
> इस घर को आग लग गई घर के चिराग से।

अवधी मे 'मुमकी'[9] स० स्त्री० शब्द 'व्यंग्यपूर्ण हँसी' अर्थ में है। यहां '**मुस्की**' उसी का विकृत रूप है।

---

१. रश्मिरथी, सर्ग ४, ६९ — '**विद्युत** छू गई कर्ण के तन को'
२. उर्वशी, अंक ५, १५५ — 'हम को आपन्न **विपद** का'
३. उर्वशी, अंक ३, ६८ — 'सम्राज्ञी **विभ्राट**'
४. उर्वशी, अंक ३, ६९ — '**शताब्दि** की बूंदो मे'
५. (क) रश्मिरथी, सर्ग १, ३ — '**शूरमा** कब तक सह सकता है'

   (ख) रश्मिरथी, सर्ग २, २० — 'तपोदीप्त **शूरमा**'
६. (क) रश्मिरथी, सर्ग २, २२ — 'वैसा **सनेह** मै करता था'

   (ख) रश्मिरथी, सर्ग ३, ३८ — 'मां का **सनेह** पाया न कभी'
७. तुल० जमन, **कपालिक** जैनी (सूरसागर — ९-११)
८. उर्दू हिंदी शब्दकोश, मद्दाह, दे० मुग़ल, मुगुल।
९. अवधी-कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर'

षण

कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये है :—

अट्टहासी [1], अरबी [2], आकुलित [3], आलुलायित [4], आवेशित [5], ऐकायनिक [6], त [7], किरणवपु [8], चकमक [9], चान्द्र [10], दूरवाही [11], धुमैली [12], निवट [13], यित [14], मदभोरी [15], रुखड़ी [16], वानरी [17], सन्धानित [18], हुंकरित [19]।

इन मे आकुलित, आलुलायित, आवेशित, मदनायित आदि शब्द संस्कृत रण के अनुसार है किंतु हिंदी में इनका अधिक प्रचार नहीं है।

हुंकार, भविष्य की आहट, ७९ — 'अट्टहासी ! आ विकट युगदेव ';
द्वन्द्वगीत, पद ६६, ३८ — 'जले कुरा अरबी रेतों में'
उर्वशी, अक ३, ८० — 'चेतना आकुलित उस भय मे रहती है'
रेणुका, गीतवासिनी, ७१ — 'आलुलायित केश'
उर्वशी, अक ३, १०० — 'आवेशित उद्गार'
उर्वशी, अक ३, ६८ — 'प्रणय की ऐकायनिक समाधि'
उर्वशी, अक ३, ५९ — 'कर्पूरित, उन्मद, सरम्य'
हुंकार, कल्पना की दिशा, ६५ — 'सुर होते कृशकाय, किरणवपु'
नील कुसुम, वैभव की समाधि पर, १०७ — 'चाँदी-सी चकमक रातें'
उर्वशी, अक ५, १६३ — 'चांद्र साम्राज्य मूक नारी का'
नील कुसुम, कला-तीर्थ, ७९ — 'किसी दूरवाही निर्झर ने'
(क) वही, स्वप्न और सत्य, १५ — 'धुमैली गध बादल की'
(ख) कविता वही — 'धुमैली गध जो ऊपर'
रश्मिरथी, सर्ग ६, १४४ — 'मेरी रणकला निवट रह जाएगी ?'
उर्वशी, अक ५, १६१ — 'मदनायित नयन-शरों को'
नील कुसुम, कला-तीर्थ, ७७ — 'यौवन का मधु हूं मदभोरी !'
दिल्ली, भारत का यह रेशमी नगर, १९ 'रेशम से रुखड़ी चीज न कोई सटती है'
रश्मिरथी, सर्ग ७, १७१ — 'वानरी ध्वजा दूर से'
रश्मिरथी, सर्ग ७, १७१ — 'शायक सन्धानित तूर्ण करो'
रेणुका, बोधिसत्व, १७ — 'हुंकरित हुआ कठिन युग-धर्म'

तुरकी में ' चक्माक़ '[1] सं० पु० शब्द का अर्थ है — ' एक आग देने वाला पत्थर '। हिन्दी में ' **चकमक** ' शब्द उसी का विकार है। यहां विशेषण रूप में नया प्रयोग है। अर्थ है ' चमकाली '।

' **धुमैली** ' वि० शब्द (सं० धूमिल) तो कविताओं में प्रचलित ही है। अर्थ— ' धुंधली '।

' **निवट** ' वि० शब्द ' निपट ' का विकृत रूप जान पड़ता है। यहां अर्थ है — ' निरी, खाली, असफल '। हिंदी में ' निवट ' शब्द-रूप का भी अधिक प्रचलन नहीं है।

' भोली ' अर्थ में सूरदास ने ' भोरी '[2] वि० शब्द अनेक बार प्रयुक्त किया है। ' **मदभोरी** ' का अर्थ हुआ ' मद के प्रति अनजान-सी ' या ' मस्ती से भरी और भोली '।

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण ये हैं—

अनूपम[3] (नु), कितने[4] (नो), किमाकर[5] (किमाकार), ठगिनि[6] (नी),

---

१. उर्दू हिन्दी शब्दकोश, मद्दाह. दे० ' चक़्माक़ '

२. तुल० (क) दिन थोरी. **भोरी** अति गोरी — (सूर०, १० — ३००)

(ख) अबला हम **भोरी** — (सूर० ३३३५)

३. (क) रश्मिरथी, सर्ग ४, ७४ — ' कनक-रचित निश्रेणि **अनूपम** '

(ख) सर्ग वही, ७५ — ' इस से बढ़ कर दान **अनूपम** '

४. (क) रसवंती, नारी, ४४ — ' लोहू कांप गया **कितने** का '

(ख) रसवंती, नारी, ४५ — ' संसार-बीच **कितने** का मन बांधोगी ? '

५. रश्मिरथी, सर्ग १, १४६ — ' गर्जन का दानव **किमाकर** '

६. रसवंती, रसवंती, ४ — ' **ठगिनि** माया जीवन का मोल '

निर्वाक [1] (क्), निस्फल [2] (निष्फल), बिसुध [3] (बे), महान [4] (न्), विकासिनि [5] (नी), विरहिनि [6] (णी), बिराट [7] (ट्), सबुज [8] (सब्ज़), सुहासिनि [9] (नी) ।

इन मे ' अनूपम ' [10] वि० तो ब्रजभाषा में भी है ।

संस्कृत में ' किमाकार ' और ' किम्भूत ' वि० शब्दों का अर्थ है ' किस प्रकार या स्वभाव का ' । यहा ' किमाकर ' शब्द-रूप अशुद्ध है, ' किमाकार ' चाहिए ।

हिंदी में ' सुध ' संज्ञा ' होश, ज्ञान ' आदि अर्थों में है । उस में फ़ारसी के ' बे ' उपसर्ग का ही प्राय: योग देखने में आता है । बेसुध — अर्थ ' बेहोश ' । यहां सं० ' वि० ' उपसर्ग के अनुकरण पर ' बि ' उपसर्ग जान पड़ता है ।

फ़ारसी मे ' सब्ज़: ' [11] स० पुं० शब्द ' हरी घास, हरियाली ' आदि अर्थों

---

१. बापू. अघटन घटना..., ५७ — ' निर्वाक, उपेक्षित '

२. रसवंती, राम की मुरली, ३७ — ' आज निस्फल सारे शृंगार '

३. रेणुका, मिथिला में शरत, ५४ — ' चांदनी बिसुध भू आन खसी '

४. (क) बापू, कविता ३, ७ — ' सब से महान '

(ख) बापू, कविता ३, ७ — ' समर सब से महान '

(ग) रश्मिरथी, सर्ग, ३, ५७ — ' नरता का है भूषण महान '

५. रेणुका, मिथिला मे शरत, ५७ — ' वह पुण्य-विकासिनि '

६. रेणुका, कोयल, ५१ — ' विरहिनि शकुनला '

७. (क) बापू, कविता १४, ३२ — ' तेरा बिराट यह रूप '

(ख) बापू, कविता १४ ३३ — ' मानव बिराट '

८. रसवती, बालिका से वधू, १४ — ' सबुज रग की धार '

९. रेणुका, मिथिला में शरत, ५७ — ' यह भाव-सुहासिनि '

१०. तुल० (क) चंदन खौरी अनूपम राजति (सूर० ६४१)

(ख) अद्भुत एक अनूपम बाग (सूर०१६ ८०)

११. उर्दू हिंदी शब्दकोश, मद्दाह, दे० सब्ज़:

में है। उसी से '**सब्ज़**' (अर्थ 'हरा') वि० शब्द का सम्बन्ध है।

काव्य में विकासिनि, विरहिनि, सुहासिनि शब्द-रूप भी चलते ही हैं।

विशेषण-विपर्यय

इसके उदाहरण बहुत कम हैं। यथा गूंगी [1] (ईंट), फ़ौलादी [2] (दीवार)।

क्रिया

दिनकर जी ने व्रजभाषा की क्रियाओं के प्रति अपना विशेष मोह-भाव प्रकट किया है।

कुछ उल्लेखनीय क्रियाएं ये है—

आराध [3], उतराते [4], उपटे [5], गहरायी [6], जानू [7], जुगा [8], जुगाऊं [9], जुगाता [10], जुगाते [11], जुगाना [12], जुगाये [13],

---

१. नील कुसुम, नींव का हाहाकार, ३९ — '**गूंगी ईंट** की आवाज़ क्या है ?'

२. सामधेनी, कविता ६, २१ — '**फ़ौलादी** दीवार उठाती हूं'

३. रश्मिरथी, सर्ग ५, २५ — 'चन्द्र-देवता को **आराध** रही हैं'

४. (क) नील कुसुम, संकेत, ३७ — 'नभ मे पावन चरण-चिह्न **उतराते** हैं'

(ख) रेणुका, वैभव की समाधि पर, १०५, 'वैभव के कितने सपने इसमें **उतराते**'

५. रेणुका, ताण्डव, २ — '**उपटे** अनल, फूटे ज्वालामुख'

६. उर्वशी, अंक ५, १९ — 'रात अब बहुत अधिक **गहरायी**'

७. द्वन्द्वगीत, पद ३२, २० — 'हृदय की क्या **जानू** ?'

८. नीम के पत्ते, अरुणोदय, १५ — '**जुगा** इसको पीछे तस्वीर अभी जो छूट गई'

९. धूप छांह, तीन दर्द, ५७ — 'किस तरह तुझ को **जुगाऊं** वेदने !'

१०. नील कुसुम, लोहे के पेड़..., ९० — 'सब के लिए **जुगाता** चल'

११. नीम के पत्ते, रोटी और स्वाधीनता, २ — 'ज्योति **जुगाते** फिरते'

१२. वही, वही, २ — 'आजादी का पाना ही नहीं, **जुगाना** भी'

१३. नील कुसुम, सब से बडी आवाज़, २० — 'कब तक **जुगाये** नाद की लहरी'

जुगायेगा [1], जोग [2], जोगना [3], डकार [4], दिपते [5], दीप [6], दीपते [7], दूषते [8], नशाने [9], निवसती [10], पगता [11], प्रकटी [12], प्रकटे [13], बतियाने [14], बोधूं [15], बौरने [16], भिदे [17], याच [18], विचरो [19], विनश [20], विरम [21], विरमेगी [22],

---

१. नीम के पत्ते, रोटी और स्वाधीनता, १ — 'यह गौरव कहां जुगायेगा'
२. दिल्ली, नई दिल्ली के प्रति, ७ — 'पलके जोग रहीं बीते वैभव की निशानी'
३. रश्मिरथी, सर्ग ३, ५३ — 'धन राशि जोगना लक्ष नही'
४. रश्मिरथी, सर्ग ६, १२५ — 'सुहाग जाती डकार यह कुटिल आग'
५. रश्मिरथी, सर्ग ३, ३२ — 'दिपते जो ग्रह-नक्षत्र-निकर'
६. उर्वशी, अंक १, ५ — 'विकीर्ण तारे यों दीप रहे हैं'
७. रश्मिरथी, सर्ग ५, ८९ — 'देवता दीपते जो कनकाभ बसन में'
८. उर्वशी, अंक ४, १०६ — 'दृग दूषते नहीं अजन वाली आंखो को'
९. रश्मिरथी, सर्ग ३, २७ — 'शूलों का मूल नशाने को'
१०. नील कुसुम, नर्तकी, २९ — 'ग्रीवा में निवसती है'
११. रश्मिरथी, सर्ग ४, ७८ — 'पावन स्वरूप में जितना ही पगता हूं'
१२. कुरुक्षेत्र, सर्ग ४, ७६ — 'प्रकटी होती मधुर'
१३. नील कुसुम, राष्ट्र देवता का विसर्जन, ८६ — 'प्रकटे तुम पद-मर्दित'
१४. बापू, अघटन घटना..., ५८ — 'तरसोगे तुम बतियाने को'
१५. रश्मिरथी, सर्ग ३, ३६ — 'दुर्योधन को बोधूं कैसे ?'
१६. रेणुका, जागरण, ३९ — 'बौरने को आम्र आकुल'
१७. नील कुसुम, कवि और समाज, ७९ — 'जनता की छाती भिदे'
१८. रेणुका, अगुरु-धूम, २९ — 'मैं याच रहा बलिदान पूर्ण'
१९. रेणुका, सप्रहारंभ — 'रूप धर विचरो जरा वनफूल में'
२०. नील कुसुम, हिमालय का सदेश १०० — 'जिस पर विनश रहा संसार'
२१. द्वन्द्व गीत, पद ८४, ४९ — 'ढूंढ रहा फिर यहां विरम'
२२. उर्वशी, अंक ४, १०९ — 'किसी पुरुष की दृष्टि नहीं विरमेगी'

विहरेंगे [1], **शूलते** [2], **संधानता** [3], **साजती** [4], **साजू** [5], **साजूंगी** [6], **साजेगा** [7], **साजो** [8], **सिरजा** [9], **सेवती** [10], **हर्षाने** [11], **हलराती** [12], **हुंकरता** [13] ।

हिंदी में '**उतराना**' (स० उत्तरण) अ० क्रि० के अर्थ हैं — 'पानी के ऊपर आना, प्रकट होना' इत्यादि ।

इसी प्रकार व्रजभाषा में '**उपटना**' अ० क्रि० (सं० उत्पट=पट के ऊपर, या उत्पतन=ऊपर उठना) के अर्थ हैं — 'निशान पड़ना, उखड़ना' । यहा 'ऊपर उठना' अर्थ संभव है ।

व्रजभाषा मे जुगवना और जोगवना (स० योग) स० क्रियाओं का अर्थ 'किसी वस्तु को सम्हाल कर या सावधानी से रखना' है । यहां '**जुगाना**' और '**जोगना**' क्रियाएं भी इसी अर्थ में है । ये कवि की प्रिय क्रियाए है ।

हिंदी में 'डकार' स० पुं० शब्द (स० डक्क=पुकार) से '**डकराना**'

---

१. रसवंती, कविता १, १० -- 'जलद **विहरेंगे** बन कर चित्र'

२. उर्वशी, अक ३, ६१ — 'द्वन्द्व **शूलते** जिसे'

३. नील कुसुम, नई आवाज, ३६ — 'शायक वृथा **संधानता** है'

४. रसवंती, संध्या, ८४ — '**साजती** अभिसार के शृ गार'

५. रसवंती, अन्तर्वासिनी, ६० — '**साजूं** मैं तुम्हे कमल से'

६. रेणुका, कविता की पुकार, १४ — 'विद्युत् छोड दीप **साजूंगी**'

७. हुंकार, कल्पना की दिशा, ६७ — 'चित्र नहीं **साजेगा**'

८. उर्वशी, अंक ५, १४५ — 'तो **साजो** विकराल सैन्य'

९. कुरुक्षेत्र, सर्ग ७, १३५ — 'यह बधन **सिरजा** है'

१०. रश्मिरथी, सर्ग ३, ४१ — '**सेवती** मास दस तक जिस को'

११. रेणुका, कविता की पुकार, १५ — 'खेतों में तो **हर्षाने** दो'

१२. नील कुसुम, नील कुसुम, २ — 'गोद में उठा-उठा **हलराती** है'

१३. दिल्ली, नई दिल्ली के प्रति, २ — '**हुंकरता** न गगन संघाती'

स० क्रिया बनती है — अर्थ ' चुपचाप दूसरे की धन-संपत्ति हज़म कर जाना । ' इस क्रिया के अर्थ पर ' डकार तक न लेना ' मुहावरे का प्रभाव पड़ा लगता है ।

' **दूषना** ' स० क्रि० (सं० दूषण) ' दोष लगाने ' के अर्थ में है ।

इसी प्रकार ' **नशाना** ' स० क्रि० (सं० नशा) ' नष्ट या बरबाद करना ' अर्थ में भी है ।

' **पगना** ' अ० क्रि० (सं० पाक) ' रस मे लिपटना, सनना, अनुरक्त होना ' आदि अर्थों में है ।

' **हलराना** ' अ०, स० क्रि० (हिं० ' हिलोरा ') ' हिलना-डुलना ' या हिलाना-डुलाना ' अर्थ रखती है । इसी प्रकार ' **हुंकरना** ' अ० क्रि० (सं० हुंकार) का अर्थ है ' हुंकार भरना । '

क्रिया-विकार

कुछ विकृत क्रिया-रूप ये है—

उट्ठेगी [१] (ठे), खलमला [२] (खलबला), जितू [३] (जी), धुधुआ [४] (धुंधुआ), पिन्हा [५] (पहना), पिन्हाऊ [६], पिन्हाते [७], पिन्हाने [८], रक्खे [९] (रखें),

---

१. नील कुसुम, कवि की मृत्यु, ३४ — ' चमक उट्ठेगी सभा सितारो का '

२. रश्मिरथी, सर्ग ७, १६३ — ' **खलमला** उठा ऊपर खगोल '

३. रश्मिरथी, सर्ग ३, ५६ — ' **जितू** कि समर में डूब मरूं '

४. रश्मिरथी, सर्ग ७, १५५ — ' बहुत **धुधुआ** चुकी अब आग फूटे '

५. (क) नील कुसुम, सेतु-रचना, ४२ — ' पायले **पिन्हा** पहले भी '

(ख) रसवती, रास की मुरली, ३८ — ' **पिन्हा** बाहों के मृदुल मृणाल '

६. (क) वही, विश्व-छवि, ६४ — ' वह हार **पिन्हाऊं** मैं '

(ख) रसवंती, रास की मुरली, ३६ — ' **पिन्हाऊं** किसे यूथिका-हार '

७. नीम के पत्ते, व्यष्टि, २३ — ' जूते क्यों नही **पिन्हाते** हो '

८. वही, अरुणोदय, १३ — ' कमला जयहार **पिन्हाने** का '

९. नील कुसुम, नर्तकी, ३१ — ' **रक्खें** चरण चट्टान पर '

रक्खो [1], सजना [2] (सजाना)।

हिंदी में ' जीतना ' स० क्रिया है, ' जितना ' अ० क्रि० नहीं है। कारण यह है कि ' जितना ' पहले ही एक सार्वनामिक विशेषण के रूप में विद्यमान है। फिर भी कहीं कहीं ' जितना ' क्रिया भी दिखाई दे जाती है किन्तु इसका अधिक प्रचलन है।

हिंदी मे ' धुंधुआना ' और ' धुंधुवाना ' अ० क्रियाएं हैं। अर्थ ' धुआं देते हुए जलना '। ' धुआँना ' अलग क्रिया है जिसका अर्थ ' धुआं लगने से दूध, पकवान आदि का स्वाद बिगड़ना ' है।

व्रजभाषा मे ' पन्हाना ' स० क्रि० है। ' पिन्हाना ' इसी का विकृत रूप है। ' जुगाना ' की भांति यह क्रिया भी कवि को बहुत प्रिय है।

' रक्खना ' स० क्रिया-रूप तो बोलचाल का है, यह पहले बताया जा चुका है।

व्रजभाषा मे ' सजना ' क्रिया का सकर्मक रूप मे भी प्रयोग होता है। अतः यहां ' सजना ' कम प्रचलित क्रिया-रूप ही समझा जाए।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति दिनकर जी ने भी संस्कृत के अ, अन् (हिं० अन) दुर्, निर्, प्र, सम् और सु -- उपसर्गों के प्रति अपना आकर्षण प्रकट किया है। कुछ उदाहरण ये है—

अकथ, अकरुण, अकलंक, अकाज, अकारण, अगभीर, अगाध, अगीत, **अगुण,** अगुनी, अगेय, अचिर, अचुम्बित, अचेतन, अछूने, अजान, अजय, अजेय, अतर्कित, अतल, अथक, अथाह, अथोर, अदृश्य, अदृष्ट, अनिमन्त्रित, अपरिणीता, अप्रतिम, अप्रतिहत, अबंध, अबल, अविद्ध, अबुध, अभग, अभय, अभयकारी, अभयदान, अभीत,

---

१. उर्वशी, अंक ५, १४१ — ' संभाल **रक्खो** मेरी संज्ञा को '

२. दिल्ली, नई दिल्ली के प्रति, १ — ' तुझे रूप **सजने** की सूझी '

अभुक्त, अमन्द, अमलिन, अमिट, अमित, अमूल, अमेय, अम्लान, अयाचित, अरुद्ध, अलक्ष्य, अलभ, अलभ्य, अवध्य, अवारित, अविचारी, अविदित, अविनश्वर, अविराम, अविवेक, अविवेकी, अविश्लिष्ट, अव्यय, अशंक, अशब्द, अशरण, अशुभ, असंग, असमय, असहिष्णु, अहन्ता और अहित।

'अन्' या 'अन' उपसर्ग देखें—अनगढ़, अनगिनती, अनचाहा, अनजान, अनजाने, अनधीर, अनबोले, अनब्याही, अनमिल, अनमोल, अनर्थ, अनल्प, अनवरुद्ध।

'दुर्' उपसर्ग के योग से ये शब्द बने हैं—दुरन्त, दुर्जय, दुर्द्धर्ष, दुर्निवार, दुर्भाग्य, दुर्भार, दुर्विपाक।

निर् उपसर्ग के उदाहरण देखें — निरभ्र, निरभ्रता, निरशन, निराकारता, निरापद, निरामय, निरावरण, निरावृत्त, निराहार, निरीह, निरुद्देश्य, निरुपाय, निर्गरल, निर्घोष, निर्जीव, निर्दोष, निर्द्वन्द्व, निर्धन, निर्धूम, निर्निमेष, निर्बंध, निर्बाध, निर्भय, निर्भीक, निर्भीत, निर्मुक्त, निर्मेघ, निर्मोघ, निर्मोही, निर्लज्ज, निर्वाक, निर्वासित, निर्विकल्प, निर्विकार, निर्विष, निर्विषता।

'प्र' उपसर्ग इन शब्दों में जुड़ा है — प्रकांति, प्रकोप, प्रक्षालित, प्रखर, प्रगुण, प्रचण्ड, प्रज्वलित, प्रतप्त, प्रदाह, प्रदीप, प्रदीप्त, प्रबुद्ध, प्रबोध, प्रभार, प्रमदा, प्रमुदित, प्रमोद, प्रलम्ब, प्रवंचिकाएं, प्रवाचत, प्रवर, प्रवेग, प्रशमित, प्रशस्त, प्रसाधन, प्रसुप्त, प्रस्रवण, प्रहर्ष और प्रहृष्ट।

कवि ने संस्कृत के 'सम्' उपसर्ग के प्रति भी अपना मोह-भाव सूचित किया है। कुछ शब्द देखें—

समाराधन, समुज्ज्वल, समुत्साह, समुत्सुक, समुद्भूत, समुद्धारक, समुद्वेलन, समुद्वेलित और समुन्नत।

'सु' उपसर्ग वाले शब्द ये है — सुअंक, सुकर्म, सुकीर्ति, सुकुमार, सुकोमल, सुगंभीर, सुगत, सुचरिता, सुचरिते, सुनील, सुपुनीता, सुपूरित, सुभव्य, सुमधुर, सुमन्द, सुमार्ग, सुमुख, सुयश, सुयोग, सुरम्य, सुवरिष्ठ, सुवास, सुविकास, सुशोभन, सुसिद्ध, सुस्पष्ट, सुस्वादु और सुस्थिर।

लिंग

लिंग-विपर्यय भी दिनकर जी की कविताओं में मिल जाता है। उदाहरणत: असमञ्जस [१], एशिया [२], काजल [३], कीच [४], चीत्कार [५], तावीज़ [६], दस्तूर [७], बांध [८], सरगम [९]. और सामर्थ्य [१०] शब्द हिंदी में प्राय: पुल्लिग माने जाते हैं किंतु कवि ने इन्हें स्त्रीलिंग में प्रयुक्त किया है।

इन में '**चीत्कार**' संस्कृत, हिंदी और व्रजभाषा में सं० पुं० शब्द ही है। '**काजल**' (काजल) और **सामर्थ्य** सस्कृत में नपुं० और हिं०-व्रज० में प्राय: पुं० ही हैं। 'कच्छ' संस्कृत मे पु० और नपु० दोनों है, शेष दोनो भाषाओ में '**कीच**' सं० पुं० शब्द है। अरबी पु० शब्द '**तावीज़**' और फ़ारसी पुं० शब्द '**दस्तूर**' हिंदी और व्रज० में भी पुं० ही है। अंतिम दो भाषाओं में '**बांध**' और '**सरगम**' भी स० पुं० शब्द ही हैं।

---

१. रश्मिरथी, सर्ग २, २३ — 'सता रही है मुझ को **असमञ्जस** कैसे ?'

२. हुँकार, भविष्य की आहट, ७७ — 'जगी विराट् **एशिया**'

३. रसवती, नारी, ४७ — 'आंखो मे गीली **काजल**'

४. (क) कुरुक्षेत्र, सर्ग २, १४ — 'लोहू भरी **कीच** का कमल'

(ख) इतिहास के आंसू, मगध-महिमा, २४ — 'रुधिर की **कीच**'

(ग) रश्मिरथी, सर्ग ७, १९६ — 'जहर की **कीच** मे ही आ गये'

५. इतिहास के आंसू, मगध-महिमा, २५ — 'वैधव्य की **चीत्कार**'

६. (क) दिल्ली, हक की पुकार, १५ — 'जिसकी **तावीज़** पहन कर तुम'

(ख) दिल्ली, हक की पुकार, १५ — 'पहले वाली **तावीज़** तुम्हारी'

७. धूपछांह, दो बिघा ज़मीन, ३३ — 'यह अच्छी **दस्तूर**'

८. सामधेनी, हे मेरे स्वदेश, ३८ — 'धीरज की **बांध** नहीं टूटे'

९. नील कुसुम, गायक, २७ — 'ज्यो बज रहा हो ज्योति की **सरगम**'

१०. (क) धूपछांह, तीन दर्द, ५७ — 'हाय यदि होती मुझे **सामर्थ्य**'

(ख) द्वन्द्व-गीत, पद ११५, ६६ — 'सहने की अब **सामर्थ्य** नहीं'

हिंदी में अनुचरी [1], घटी [2], तटी [3] और निर्झरी [4] स्त्री० शब्द तो पहले से ही प्रचलित हैं किन्तु केहरिणी [5], खगी [6], और धनुषी [7] शब्दों का अधिक प्रचार नहीं है। ' इन्द्रधनुषी ' [8] सं० स्त्री० शब्द तो कवि को अत्यंत ही प्रिय है। यह भी नव प्रयोग ही है।

इस के विपरीत अग्नि [9], खान [10] और महक [11] शब्द हिंदी में स्त्री० ही हैं जबकि कवि इन्हें पुं० रूप में लिखता है। ' अग्नि ' तो संस्कृत में भी पुं० ही है किन्तु ' खनि ', ' खनी ' और ' खानि ' शब्द ' खान ' अर्थ में संस्कृत में भी स्त्री० ही हैं। महक (सं० महक्क) शब्द हिंदी और व्रज० मे सं० स्त्री० शब्द ही है।

---

१. उर्वशी, अंक ४, ११८ — ' नहीं अनुचरी किरीट मुकुट की '

२. नील कुसुम, अशब्द, ८८ — ' अक्षय अमृत-घटी-सा '

३. (क) द्वन्द्व गीत, पद २८, १७ — ' तटी की दूब '

(ख) वही, पद २९, १७ — ' दूब-भरी इस शैल-तटी में '

(ग) वही, पद ९६, ५६ — ' जिनको न तटी से प्यार '

४. नील कुसुम, जीवन, ३८ — ' निर्झरी बन फूटती पाताल से '

५. उर्वशी, अंक ५, १५३ — ' केहरिणी मतियों में '

६. नील कुसुम, सब से बड़ी आवाज, २१ — ' एक छोटी सी खगी '

७. रसवंती, दाह की कोयल, २२ — ' इन्द्र की धनुषी सजल रंगीन '

८. (क) उर्वशी, अंक ४, १०५ — ' रगीन इन्द्रधनुषी भी उग आती है '

(ख) वही पृष्ठ, ' और इन्द्रधनुषी के उग आने पर '

(ग) उर्वशी, अंक १, १६ — ' इन्द्रधनुषी उमंग भरती है '

९. उर्वशी, अंक ४, १११ — ' अग्नि ही स्वयं फूट कर कढ़े चले आते हों '

१०. रसवंती, मानवर्ती, ४२ — ' चाँदी सोने का खान मुझे '

११. रश्मिरथी, सर्ग ७, १९१ — ' मचे भूडोल प्राणों के महक में '

वचन

वचन-निर्धारण मे भी कहीं कहीं अव्यवस्था मिलती है। उदाहरणत: '**प्राण**'[१] शब्द सदा बहुवचन में ही प्रयुक्त होता है किंतु कवि ने इसे एकवचन मे भी लिखा है। इसी प्रकार हिंदी व्याकरणानुसार 'अनेकों' बहुवचन शब्द सर्वनाम या संज्ञा के रूप में तो लिखा जा सकता है यथा 'अनेकों ने भोजन किया है' किंतु विशेषण के रूप में यह अशुद्ध है। कवि ने अनेक स्थलों पर विशेषण '**अनेकों**'[२] लिखा है।

हिंदी मे 'राजा' का बहुवचन '**राजे**'[३] भी अशुद्ध समझा जाता है।

इसी प्रकार जिन शब्दों को कवि ने बहुवचन बनाने की अपेक्षा एकवचन में ही रहने दिया है वे ये है—

जहांगीर[४], नयन[५], मोती[६], लैला[७], शीरी[८] और श्रवण[९]।

---

१. (क) रश्मिरथी, सर्ग ६, १३१ — 'पर्वत का भी हिल **प्राण** उठा'
(ख) रश्मिरथी, सर्ग ७, १८६ — 'छोडना मुझे है आज **प्राण**'

२. (क) रश्मिरथी, सर्ग ७, १५३ — 'है **अनेकों** काम इसको'
(ख) सर्ग वही, १५९ — '**अनेकों** भांति से गोविंद मुझ को'
(ग) रेणुका, मिथिला में शरत, ५९ — 'खिल गए **अनेकों** कंज-फूल'

३. (क) रश्मिरथी, सर्ग २, १४ — 'उद्धत होते है **राजे**'
(ख) पृष्ठ वही — '**राजे** और सुखी हों'

४. रेणुका, समाधि के प्रदीप से, १०० — 'कितने **जहांगीर** ने किया इसे आबाद'
५. उर्वशी, अंक ३, ६१ — 'नारी जब देखती पुरुष को इच्छा भरे **नयन** मे'
६. रेणुका, जीवन-संगीत, ९२ — 'उतर गया कितने **मोती** का पानी'
७. रेणुका, समाधि के प्रदीप से, १०० — 'कितनी **लैला** के मजनू...'
८. पृष्ठ वही — '... औ **शीरीं** के फ़रहाद' (उपर्युक्त पक्ति के साथ ही)
९. उर्वशी, अंक ३, ५० — 'गूंज कर सब ओर ही **श्रवण** में लौट आता'

संधि

दिनकर जी ने प्राय: सभी प्रकार की संधियां अपनाई हैं।

दीर्घ स्वर संधियों के कुछ उदाहरण ये हैं — अगलासन, आनन्दातिरेक, उच्चाभिमान, उदयाचल, एकाकार, कनकाभ, कामार्त्त, कुमुदासन, कुसुमाकर, कोपाकुल, क्रीड़ागार, क्रोधांध, क्रोधाकुल, क्षुधाग्नि, गगनांगण, गाढ़ालिगन, गौरवाधार, चन्द्राह्वान, चित्रालय, छिन्नाधार, जनारण्य, जन्मनिरोधातुर, झञ्झानिल, तमसाकार, तलातल, तिमिरांचल, तिमिरांत, तिमिराम्बरा, दर्भांकुश, दिगायाम, दीपाधार, दृश्याधार, द्रुमांचल, द्वीपांतर, नीलाकाश, नीलाम्बर, पदाम्बुज, पुलकाकुल, पुलकातिरेक, पूर्णावतार, पूर्णाहुति, प्रतिमाकार, प्रस्तरावरण, प्रमातिरेक, बालारुण, भग्नावशेष, भस्मासुर, भिक्षाटन, भीमाकार, भीमाकृति, मंडलाकार, मदान्ध, रुधिराक्त, विरूपाकार, शुभाशीर्वाद, शुभाशुभ, शून्यासन, समराग्नि, सहस्राब्द, सीमातीत, स्वर्णांचल, स्वर्णातप और हृदयाकाश।

कुछ **गुण संधियां** ये हैं — अस्तोदधि, काकोदर, कामेच्छा, कालोदधि, क्षीरोज्ज्वल, क्षीरोदधि, क्षुद्रोपहार, गंधोच्छ्वास, गर्वोन्नत, चपलोष्ण, जीर्णोद्धार, देवोपम, परमोज्ज्वल, पार्थोपम, पुण्योदय, पूजोपहार, मन्त्रोच्चार, मदोन्मत्त, महोदधि, महोच्चार, यौवनोत्फुल्ल, रसोदधि, रसोद्रेक, वैराग्योन्मुख, सहोदर, सुधोपम और स्वर्णोदय।

कुछ **व्यंजन संधियां** ये हैं — ईषल्लघु, जगज्जीवन, जगद्दहन जगन्नियन्ता, विद्युन्मय, वियल्लोक, सन्नारी।

विसर्ग संधियां भी हैं यथा — अंतर्गगन, अन्तर्गायन, अन्तर्जलन, अन्तर्दाह, अन्तर्दीप्त, अन्तर्नभ अन्तर्मुख, अन्तर्वासिनी, आयुर्बल, आशीर्वचन, कविर्मनीषी, ज्योतिरंचल, ज्योतिर्धारा, ज्योतिर्मय, ज्योतिर्विहार, तपश्चरण, तपोनिधान, तपोनिष्ठ, तपोभंग, तपोव्रत, तेजोबल, तेजोहीन नभश्चरण, निश्चल, निश्चिह्न, निश्चेत, निष्कंप, निष्कलंक, निष्कलुष, निष्कासित, निष्पेषित, निष्प्रभ, निस्तल, निस्तैल, निस्त्राण, निस्पन्द, निस्सहायता, निस्सार, निस्सीम, निस्सीमता, मनस्तेज, मनोगगन, मनोदेश,

मनोबल, मनोमुग्धकारी, मनोव्यथा, वक्षोदेश।

प्राय: संधि के नियमों का उल्लघन नहीं हुआ है।

समास

अन्य कवियों की भांति दिनकर जी को भी **सम्बंध तत्पुरुष समास** सर्वाधिक प्रिय हैं। कुछ उदाहरण देखे—

अन्तर-बीच, अमिय-धार, अमृत-घट, अमृत-देश, अलका-छवि, आंसू-कण, कक्ष-बीच कटि-सूत्र, कर-स्पर्श, कर्पूर-गध, कर्पूर-सुरभि, कलिंग-विजय, कुतल-भार, कुबेर-पद, कैलास-शिखर, घुटनों-बल, चन्द्र-किरण, चरण-प्रहारी, जन-मन, जीवन-दान, तपोवन-बीच, तरुणी-उर, तिमिर-जाल, तिमिर-व्यूह, तुहिन-कण, दासता-प्रचारक, दूज-कला, दृग-नीर, धूम-जाल, ध्वंस-राग, नंदन-वन, नख-ज्योति, नालदा-खण्डहर, नालंदा-बीच, निर्झर-तट, परी-पट, पीयूष-कलश, प्रलय-पयोद, प्रेम-पुकार, प्रेमिका-कंठ, प्रेयसि-समाधि, बधु-वध, भुज-परिधि, मदन-बाण, मन्दार-हार, मानव-दल, मानव-मन, माया-व्यवधान, मुनि-मन, मुमताज-विरह, यमुना-कछ र, रत्न-किरीट, रमणी-कच, रस-कोष, रस-प्याला, रूप-आरती, ललाट-चदन, लिच्छवि-शान, लौह-अर्गला, वारि-धार, विष-कलश, वेदना-पुत्र, वैभव-मद, व्योम-विवर्तन, शस्त्र-भार, शायक-सन्धानों, समय-पुकारों, समर भेरी, सलिल-मंथन, साड़ी-द्युति, साधक-चरणों, सिकता-कण, सुधा-वर्षण, सुमन-हार, स्मृति-पूजन, हिय-हार।

कुछ **कर्मधारय समास** ये हैं — कविता-परी, कामना-वह्नि, काल-नौका, काल-सर्प, गंध-स्यंदन, गागर-यौवन, घन-तिमिर, घन-पाहुन, छवि-दुकूल, जीवन-जुलूस, जीवन-लता, जीवन-लहर, जीवन-समर, दया-मेघ, नवनीत-कपोल, पकज-पद, प्रेम-बिरवा, प्रेम-रसायन, प्रेम-सुधा, भारत-सागर, मानस-समुद्र, मृणाल-नलिका, मोती-बीज, यौवन-नाग, विश्व-सर, शंका-तिमिर, शांति-सुंदरी, शोभा-वितान, संकेत-सुरा, समय-सागर, स्नेह-दीप, स्मृति-पख, स्वतंत्रता-दीप, हिरण्य-धूलि, हीरक-ओस, हृदय-कुंज और हृदय-यमुना।

इन में कर्मधारय समास के उपमानपूर्वपद और उपमानोत्तरपद ये उभय प्रकार मिले जुले हैं।

कुछ द्वन्द्व समास देखिये — अंधड़-आग, कोकिल-कीर, गंध-छाया, गृह-वसन, चन्द्रमा सूर्य, जन्म-मरण, जेता-स्वामी, दिन-रात, दूब-फूल, नरक-स्वर्ग, पाप-पुण्य, वीरता-साहस, सतुलन-विनाश, साधना-सिद्धि, सायं-प्रात, सूरज-चंदा, हिंसा-प्रतिहिंसा।

करण तत्पुरुष समास भी हैं — ताप-तप्त, दूब-भरी।

कुछ अपादान तत्पुरुष समास ये हैं — प्रकाश-वंचित, राग-मुक्त, स्पर्श-मुक्त।

अव्ययीभाव समास भी है — बीचोंबीच, रातोंरात। अव्ययीभाव समास 'स' जोड कर भी बने है — सक्षेम, सचेष्ट, सप्रयास, समोद, सवाक्, सशब्द, सहास, सादर, सानुकूलता, सामोद, साश्रु और सोल्लास।

शब्द-लोप

कवि ने बहुत कम शब्द-लोपी वाक्य लिखे हैं। की, को और से विभक्तियों का लोप देखे—

१. मैं ने एक कविता बना दी तथ्य (की) बात मांग[1]
२. नीचे आने (को) विधु लनक रहा।[2]
३. आप अपने (से) धोखा खाना है।[3]

अन्य शब्द-विकार

कुछ विकृत शब्द-रूप ये है — चतुर्दिक[4] (क्),

---

१. रेणुका, सुन्दरता और काल, ९७
२. रेणुका, मिथिला मे शरत, ५९
३. रश्मिरथी, सर्ग ४, ६०
४. (क) बापू, वज्रपात, ४१ — 'है खड़ा चतुर्दिक काल'
(ख) बापू, कविता ६, १३ — 'छा रहा चतुर्दिक विकट धूम'
(ग) रसवंती, अन्तर्वासिनी, ६० — 'छा रहा चतुर्दिक मन में'

मुझी [१] (मुझ ही), यदपि [२] (यद्यपि), शास्वत [३] (शाश्वत), सर्वस [४] (सर्वस्व), हमीं [५] (हम ही)

मुझी और हमीं तो खड़ीबोली, की ' ह् ' - लोप की प्रवृत्ति से सम्बंध रखते हैं। व्रज भाषा में ' यदपि ' (या जदपि [६]) और ' सर्वस ' [७] दोनो शब्द वर्तमान है।

अंगरेज़ी पद्धति पर कहीं कहीं वह [८] और वे [९] के स्थान पर व ' लिख कर काम चलाया गया है। ' पर ' की बजाय प ' [१०] भी लिखा गया है।

कहीं कहीं ' उन्होंने ' सर्वनाम को ' उन ने ' [११] लिखा गया है।

---

१. (क) रश्मिरथी, सर्ग २, २४ — ' छीनना पड़ा मुझी को '

(ख) रश्मिरथी, सर्ग ३, ३३ — ' जन्म मुझ मे...लौट मुझी मे '

२. उर्वशी, अंक ३, ६५ — ' यदपि इस मधु निक्षेपण मे '

३. रसवंती, समय, ६६ — ' रहेगा शास्वत जीवन '

४. सामधेनी, राह और बांसुरी, ९१ — ' जाने सर्वस क्यों गान हुआ ? '

५. (क) सामधेनी, अतीत के द्वार पर, ४० — ' हमीं नही खोजने '

(ख) रश्मिरथी, सर्ग ७, १९२ — ' हमीं धर्मार्थ क्या दहते रहेंगे ? '

६. तुल० जदपि नँदलालहि नाना भाँति नचावति (सूर० ८५५)

७. तुल० जाकी जहाँ प्रतीति सूर सो सर्वस तहाँ सँचै री (सूर० २२७०)

८. सामधेनी, जवानिया, ८४ — ' व ' देख जो जवानियो की जल रही मशाल है '

९ (क) कविता वही, ८२ — ' पड़ी व ' टूट देख लो, चली व ' बाढ बन कर '

(ख) कविता वही, ८३ — ' आलरे व ' टक्करो मे फूटने लगी '

(ग) कविता वही, ८४ — ' व ' गिर रहे है, व ' आसमां मे आ रहे हैं '

१०. कविता वही ८३ — ' प्रभजनो प ' आ रही जवानियां '

११. (क) धूपछांह, पानी की चाल, १५ — ' ताकत को उन ने तोला '

(ख) नील कुसुम, लोहे के पेड हरे होंगे ९१ — ' उन ने बडा कमाल किया '

(ग) उर्वशी, अंक ५, १५६ — ' उन ने कितना सम्मान दिया था '

नव शब्द

कुछ विशेष शब्द-प्रयोग ये है --

अग्रजन्मा [1], अभीक [2], आयमु [3], उलर [4], एकघ्नी [5], छाली [6], छिगुन [7], द्रुमाली [8] पपनी [9], मन-काम [10], रसवाह [11], लरछे [12], विबध [13], हरीतिमा [14], और ह्रीण [15]।

---

१. रश्मिरथी, सर्ग ५, ९३ — 'मुझ-सा अग्रजन्मा नहीं'

२. उर्वशी, अंक ५, १३५ — 'प्रभु अभीक ही रहे'

३. रेणुका, राजा-रानी, ४२ — 'रानी! आयमु है, लिए गर्भ वन जाओ'

४ रसवन्ती, मानवती, ४० — 'उलर रही मंजरी कास की'

५. (क) रश्मिरथी सर्ग ६, १४५ — 'एकघ्नी कराल यदि द्विरथ-युद्ध में छूटेगी'

(ख) रश्मिरथी, सर्ग ६, १४५ — 'एकघ्नि-हव्य के लिए'

६. (क) धूपछांह, नींद, ५५ — 'जबकि नींद पर जमती है कुछ छाली'

(ख) धूपछांह, पुस्तकालय, ५९ — 'पानी पर मिट्टी छाली सी फैली'

७. रेणुका, मिथिला मे शरत, ५५ — 'कुछ छिगुन छिगुन रह जाती है'

८. इतिहास के आंसू, वैभव की समाधि पर, ६९ — 'कलियो से लदी द्रुमाली'

९. रसवती, बालिका से वधु, १३ — 'पपनी पर आंसू की बूंदे'

१०. इतिहास के आंसू, मगध-महिमा, १० — 'हमारे पूरे ज्यों मन-काम'

११ रसवती, राम की मुरली, ३६ — 'तरंगित यौवन का रसवाह'

१२. धूपछांह, पुस्तकालय, ६३ — 'कपड़े बुनते जाते हैं लरछे पर है हाथ'

१३. रसवंती, पुरुष-प्रिया, ५३ — 'उमड़ा व्याकुल यौवन विबध'

१४. (क) नील कुसुम, अर्धनारीश्वर, ८५ — 'मनुष्य निज में हरीतिमा पाए'

(ख) उर्वशी, अंक ३, ७१ — 'वन में हरीतिमा'

(ग) रेणुका, ३७ — 'चन्द्रधौत हरीतिमा'

१५. रसवंती, नारी, ४७ — 'दबी ह्रीण ग्रीवाएं'

'पापी' अर्थ में 'अघजन्मा' नया सामासिक विशेषण है।

संस्कृत में 'अभीक' नञ् बहुव्रीहि समास है — अर्थ 'निर्भीक'। हिंदी में इस विशेषण के इच्छुक, कामुक, भयानक आदि अर्थ हैं। हिंदी में 'निर्भीक' अर्थ में 'अभीक' का अधिक प्रचलन नहीं है।

अवधी में 'आइसु' और 'आयसु' स० स्त्री० शब्दों का अर्थ है — 'आज्ञा', नेवता (भोजन का निमंत्रण)। वहां 'आइब' अ० क्रि० 'आना' अर्थ में है। इसी 'आइब' का तृ० पुरुष का विधिलिङ का रूप 'आयसु' (अर्थ 'तू आना') होता है। कदाचित इसी से 'आज्ञा' अर्थ भी विकसित हो गया है।[1] तुलसी की भी पंक्ति है — उठे सकल नृप आयसु पाई।

दिनकर जी ने भी 'आज्ञा' अर्थ में ही 'आयसु' लिखा है।

हिंदी मे 'उलरना' और अवधी मे 'उलरब' अ० क्रियाए 'उछलने, ऊपर-नीचे होने, घिरने' आदि अर्थों मे है। यहा 'उलरना' क्रिया (सं० उद् + लर्व = डोलना या उल्ललन) दूसरे अर्थ मे जान पडती है।

संस्कृत में 'घ्न' विशेषण यौगिक शब्दों के अन्त मे लग कर यह अर्थ देता है — 'नष्ट करने वाला'। यथा कृमिघ्न, पापघ्न, विषघ्न। स्त्रीलिंग रूप 'घ्नी' है जोकि यहां एक सख्यावाचक विशेषण के अंत में जोड़ा गया है। 'शतघ्नी' की भांति 'एकघ्नी' भी कोई प्राचीन क्षेप्यास्त्र जान पडता है।

हिंदी, व्रज० और अवधी मे 'छाली' स० स्त्री० शब्द (स० छल्लि या छल्ली) का अर्थ 'छाल' या 'कटी हुई सुपारी' है। यहा 'धुधलाहट' अर्थ सभव है।

सस्कृत मे 'द्रुम' और 'आली' संज्ञाए क्रमशः वृक्ष और पक्ति अर्थ में हैं उन्हीं के योग मे सबध तत्पुरुष समास बनाया गया है 'द्रुमाली' — अर्थ 'वृक्षों की पक्ति'।

'पपनी' एक देशज स० स्त्री० शब्द है। अर्थ है 'पलक के बाल, बरौनी'।

संस्कृत में 'मनोकामना' शब्द संधि के नियमों मे नही बन सकता। यह केवल हिंदी में ही चलता है। 'मन' शब्द के 'अ' को 'ओ' हो जाता है,

---

१. अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी, 'समीर,' दे० 'आयसु' शब्द।

'कामना परे हो, तो — मनोकामना । यह अकेला शब्द है । हिंदी की यह अपनी सन्धि है । कहीं यह संधि नहीं भी होती है— 'पूजै मनकामना तुम्हारी' । 'मनःकामना' हिंदी मे नहीं चल सकता, क्योंकि 'मनोकामना' ने घर कर लिया है । ... हिंदी का 'मनोकामना' एक विशिष्ट अर्थ देता है । 'कामना' मात्र से वह बात न बनेगी । 'मनोकामना' स्त्री-सुलभ प्रयोग है ।'[१]

अतः 'मन-कामना'[२] अर्थ में ही यहां 'मन-काम' लिखा गया है ।

'रसवाहिनी' सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'वैद्यक के अनुसार खाए हुए पदार्थ से बने सार-भाग को फैलाने वाली नाड़ी' । इसी से प्रभावित हो कर कवि ने 'रसवाह' सं० पु० शब्द का प्रयोग किया है । 'गंधवह' (अर्थ 'वायु' — गंध को ले जाने वाला) के तौल पर 'रसवाह' नवीन शब्द घड़ा गया है ।

'लरछा' बुनाई सम्बंधी औज़ारों के किसी भाग का नाम जान पड़ता है ।

'निर्बंध' अर्थ मे यहाँ 'विबंध' शब्द का अर्थ-विस्तार किया गया है । विशेषण रूप मे 'विबंध' (बहुव्रीहि समास) का अधिक प्रचलन नहीं है । यहां 'वि' उपसर्ग 'रहित' अर्थ में है ।

संस्कृत में 'ह्रीण' वि० शब्द का अर्थ है — 'लज्जा से युक्त, लज्जित' ।

प्रिय शब्द

कवि को जो शब्द विशेष रूप से रुचिकर हैं वे इस प्रकार हैं — अघोर, अनवरुद्ध, अनाचार, अनुभवन, अन्तर्नभ, अन्तर्मन, अन्धता, अभग, अमोघ, अवढर, अशब्द, असमय, आशिष, इन्द्रपरी, उड्डयन, उदग्र, एकघ्नी, औचक, किल्विष, कृषक-मेघ, कोपाकुल, क्षीणबल, खमंडल, गगनांगण, घूर्णिचक्र, चतुर्दिक, चिग्घार, जुगाना, टुक, तपश्चरण, दूरागत, धन-खेतों, नाही, निनद, निरभ्र, निर्धन, निर्धूम, निर्बंध, निर्विष, नीराजन, पिन्हाना, प्रदाह, बीचोंबीच, बेकली, भावुक, मुर्भी, मुनिसत्तम, याकि, रण खेत, रुधिराक्त, रोमंथन, रोर, लोकोत्तर, विभ्राट्, सद्धर्म, समयुगीन, सुगंभीर, सुगबुगा, सोदर, स्पर्शन और हरीतिमा ।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी, ११०—१११

२. तुल० — जौ लौ मन-कामना न छूटै (सूर० २ — १९)

ध्वन्यात्मक शब्द

ध्वन्यात्मक व्यंजना की दृष्टि से भी कवि के शब्द-प्रयोग सफल हैं। उद स्वरूप यहां भी जल की ध्वनि **खलखल**[1] और **छपछप**[2] है। सरिता और सुर के लिए '**कलकल**'[3] की ध्वनि है। जन-रव भी '**कलकल**'[4] करता है। '**छल** भी सरिताओं का ही स्वर है।

अश्रु, निर्झर और मेघ यहां भी '**झरझर**'[6] करते हुए झरते हैं और उसकी बूंदें यहां भी '**रिमझिम**'[7] की ध्वनि से हमारा मन मोह लेती हैं यहां '**मर्मर**'[8] करते हुए मरमराते हैं और मंजरी '**मँहमँह**'[9] करती महकत धूल तक भी '**महमह**'[10] करती महकती है। फूल '**थरथर**'[11] करते थरथरा

---

१. उर्वशी, अंक १, १५ — '**खलखल** कर बह रहा ... वह जल है'
२. रश्मिरथी, सर्ग ५, १०० — 'जल में जब तब मछली **छप-छप**'
३ (क) नील कुसुम, अर्धनारीश्वर, ८४ — 'निरन्तर सरिता का **कलकल**
(ख) रसवन्ती, परुष-प्रिया, ५५ — 'था किसी सुरा का मद **कलकल**'
४. इतिहास के आंसू, मगध-महिमा, १३ — 'जन-रव का मुकुलित **कलकल** है
५. रेणुका, मंगल आह्वान, ख — 'सरित का कल-कल **छल-छल**'
६. (क) सामधेनी, कलिंग-विजय, ५० — 'आंख से **झर झर** बहाते अम्बु'
(ख) रेणुका, कवि, ७५ — 'नयन से झरता **झर-झर** नीर'
(ग) रेणुका, मंगल आह्वान, ख, — 'निर्झर का अविरल **झर-झर**'
(घ) धूपछांह, बच्चे का तकिया १० — '**झर झर** झरता मेघ'
७. (क) रसवन्ती, पावस-गीत, ६२ — '**रिमझिम** बरस रहे जलधर'
(ख) रेणुका, मंगल आह्वान, ख — 'पावस की बूंदों की **रिमझिम**'
८. (क) रसवती, संध्या, ८६ — 'पर्ण-कुजों में न **मर्मर**-गान'
(ख) रेणुका, मंगल आह्वान, ख — पीले पत्तों का **मर्मर**'
९. रसवती, बालिका से वधू, १५, — '**मँहमँह** कर मंजरी'
१०. (क) इतिहास के आंसू, मगध-महिमा, ८ — 'धूल गमकती **महमह**'
(ख) कविता वही, १३ — 'धूल फूल सी **मह-मह** करती'
११. धूपछांह, वर-भिक्षा, ४६ — '**थरथर** चेरी के फूल'

घट 'डुग-डुग'[1] करते भरा जाता है।

अलि भी 'गुन गुन'[2] करते है और प्राणी भी। नूपुर या पैजनी 'रुनझुन'[3] करती बजती है। नृत्य होता है — छूम-छनन-छन्[4]।

अस्त्र-शस्त्र और उन में विशेषकर तलवारे 'झनझन'[5] करती हुई झनझनाती हैं। विशिख (तीर) 'सन सन'[6] करते हुए सनसनाते हैं।

परिवहन के साधनो में रथ 'घर्घर'[7] करते हुए घर्घराते हैं। चरखे भी 'घर्घर'[8] करते चलते हैं। विमानों से गगन 'तिल तिल किल किल'[9] कर

---

१. उर्वशी, अक ५, १३६ — 'डुगडुग ध्वनि जल-धारा मे घट भरने की'

२. (क) रेणुका, मंगल आह्वान, ख — 'अलि का गुनगुन'

(ख) धूपछांह, पुस्तकालय, ६१ — 'गाने लगा मनुज गुनगुन'

(ग) उर्वशी, अक १,१९ — 'कौन यह गुनगुन कर गाती है'

३ (क) रेणुका, अमा सध्या, ६६ — 'रुनझुन रुनझुन किसका शिंजन'

(ख) रेणुका, आशीर्वचन कहो ..., क — 'रुन झुन-झुन पंजनी चरण में'

४. उर्वशी, अंक १, ९ — 'हम फिरती हैं भवन भवन, छूम-छनन-छन्,'

५. (क) नील कुसुम, युद्ध-देवता, ९८ — 'झन झन झन झन झनन झनन'

(ख) रेणुका, कस्मै देवाय ?, ३१ — 'दिक् दिक् में शस्त्रो की झन झन'

(ग) रेणुका, पाटलिपुत्र की गंगा से, २६ — 'गूंज रही झन झन धूलों में मौर्य की तलवारों की'

(घ) रश्मिरथी, सर्ग ७. १६३ — 'झनझना उठी असिया झन-झन'

६. (क) रश्मिरथी, सर्ग ७, १६३ — 'सनसन कर उड़ने लगे विशिख'

(ख) वही, सर्ग ७, १८६ — 'उड़ते हों तिग्म विशिख सनसन'

७. (क) नील कुसुम, जनतंत्र का जन्म, ५८ — 'रथ का घर्घर-नाद'

(ख) रश्मिरथी, सर्ग ७. १७१ — 'महारथ की घर्घर आवाज'

८ (क) रसवंती, कत्तिन का गीत, ६३ — 'यह घर्घर का नाद'

(ख) पृष्ठ वही — 'मधुर चरखे का घर्घर-गान'

९. रश्मिरथी, सर्ग ७, १७५ — 'विमानों से तिल तिल किलकिल-नदित गगन'

उठता है।

इन के अतिरिक्त डमरू यहां भी '**डिम डिम**'[१] करते हुए डगडगाते हैं। रोशनी '**लकदक**'[२] करती है, आग भी '**लपलपाती**'[३] है। दीपक भी '**टिमटिम**'[४] करते टिमटिमाते हैं।

ये सब शब्द कवि की ध्वनि-चेतना की विपुलता सिद्ध करते हैं।

---

१. रेणुका, ताण्डव, ३ — '**डिम डिम डमरू बजा**'

२. दिल्ली, हक की पुकार, १६, — '**रोशनी की लक-दक**'

३. नील-कुसुम, नीव का हाहाकार, ७० — '**लपलपाती आग**'

४. (क) रेणुका, कविता की पुकार, १४ — '**टिमटिम दीपक के प्रकाश में**'
(ख) रेणुका, वैभव की समाधि पर, १० — '**डिमडिम-सा दीपक**'

श्री अज्ञेय

संज्ञा

जो संज्ञाएं अज्ञेय की कविताओं में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं वे इस प्रकार हैं—

अगवैया [१], अत्यन्तगता [२], अनी [३], आलते [४], एकायन [५], कनबतियां [६], कमकरों [७], कांद [८],

---

१. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २०९ — 'मधु का गरबीला अगवैया'

२. वही, द्वितीया, १३५ — 'उस अत्यन्तगता की स्मृति'

३. (क) बावरा अहेरी, तुम फिर आ गये क्वांर ?, ५५ — 'भाले की अनी-सी'

(ख) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, एक दिन जब, १२ — 'बिद्ध जीवन की अनी से'

(ग) बावरा अहेरी, बावरा अहेरी, १७ — 'आलोक की अनी से अपनी'

४. आंगन के पार द्वार, भीतर जागा दाता, १५ 'जल पर आलते की छाप छोड़'

५. चिता, एक खण्ड का शीर्षक 'एकायन'

६. (क) आगन के पार द्वार, चक्रांत शिला, गीत ६, ४४ 'सन्नाटे की कनबतियां'

(ख) वही, वही, गीत ११, ५१ — 'मर्मर कनबतियों मे'

७. अरी ओ करुणा प्रभामय, औद्योगिक बस्ती, ४७, 'कमकरों की दुस्साध्य विषमताएं'

८. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — 'कांद लम्बी टिट्टिभ की'

कोजागरी [१], झंकार [२], खोंचों [३], गोखों [४], चौड़े [५], छालियां [६], झाऊ [७], ढोंड़ियां [८], तीसी [९], दौगरा [१०], फुनगा [११], बारस [१२], भीड़पने [१३], महानता [१४], मालञ्च [१५], मुंहजोही [१६], मेघाली [१७], वैजयन्ती [१८], शहरातियों [१९], सिरिस [२०], सिरोपे [२१]।

---

१. (क) हरी घास पर क्षण भर, शरद, ३६ — ' दीप कोजागरी वाले '
(ख) पृष्ठ वही, — ' दोले है कोजागरी का दिया '
२. आँगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — ' कूजों का झंकार '
३. वही, बना दे चितेरे, १२ — ' तनावों, खींचों और मरोड़ों को '
४. वही, एक उदास साँझ, २५ — ' गोखों में पीली मन्द उजास '
५. बावरा अहेरी, कांगड़े की छोरियां, ४७ — ' हम चौड़े में खड़े लुट गये '
६. वही, झरने के लिए, ५८ — ' उमगती हैं छालियां किसी दूर कछार पर '
७. वही, ये मेघ साहसिक सैलानी, २२ — ' गहार झाऊ की सांसों में सिहरी '
८. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — ' टुच्ची-बुच्ची ढोंड़ियां '
९. आंगन के पार द्वार, भीतर जागा दाता, १६ — ' नीलिमा तीसी की '
१०. हरी घास पर क्षण भर, पहला दौगरा, ५६ — ' पड़ा यह दौंगरा पहला '
११. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — ' इठलाती आई फुनगी '
१२. वही, प्रतीक्षा, २१९ — ' नया ऊगा चाँद बारस का '
१३. अरी ओ करुणा प्रभामय, रात और दिन, १४३ — ' भीड़पने की लहरों के '
१४. चिंता, विश्वप्रिया, ६६ — ' स्वर्गंगा की महानता में '
१५. (क) इत्यलम्, बाहु मेरे रुक रहे, २०० — ' तट मालञ्च से अवलबिता '
(ख) हरी घास पर क्षण भर, कलगी बाजरे की, ५८ ' मालञ्च पर संवरी जुही '
१६. चिंता, विश्वप्रिया, ३८ — ' आज्ञापन की हम मुंहजोही ही न करेंगे '
१७. हरी घास पर क्षण भर, हरी घास पर क्षण भर, ६० — ' मेघाली, पौधे...'
१८. इत्यलम्, धूल भरा दिन, ११० — ' मत्त वैजयन्ती निज गा ले '
१९. हरी घास पर क्षण भर, कलगी बाजरे की, ५८ — ' हम शहरातियों को '
२०. (क) चिंता, विश्वप्रिया, २३ — ' बबूल पर भी सिरिस कोमल बौर पलता '
(ख) चिंता, एकायन, १११ — ' सिरिस ने बुन बुन कर सौरभ '
२१. बावरा अहेरी, बावरा अहेरी, १७ — ' पहनू सिरोपे-से ये कनक-तार तेरे '

हिंदी में अगवाई या अगवानी सं० स्त्री० शब्दों का अर्थ है 'किसी का आगे बढ़ कर स्वागत करना।' स्वागतकर्त्ता के अर्थ में '**अगवैया**' नयी संज्ञा है।

संस्कृत में 'अत्यन्तगत' वि० का अर्थ है — 'सदैव के लिए गया हुआ, जो लौट कर न आवे'। स्त्री० रूप हुआ — '**अत्यन्तगता**'।

'**अनी**' संज्ञा शब्द संस्कृत के 'अणि' या 'अणी' (पुं०, स्त्री०) का तद्भव रूप है। यहां 'नोक' अर्थ है।

'**आलते**'[1] (सं० अलक्त का अलक्तक) का अर्थ है 'महावर, वृक्षों का लाल छाल या बकला'।

संस्कृत में '**एकायन**' त्रि० का अर्थ है — 'एक के गमन करने योग्य' (पगडंडी)। 'एकायन' नपुं० के अर्थ है — एकांत स्थान, मिलने की जगह, नीतिशास्त्र इत्यादि।

हिंदी में '**कनबतियां**' सं० स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'धीरे से या कान में कही हुई बात' (कान+बात)

संस्कृत 'कर्मकार' का ही तद्भव रूप है '**कमकर**'। अर्थ — 'सेवा सम्बधी छोटे छोटे काम करने वाला'। यहा 'श्रमिक' अर्थ है।

इसी प्रकार संस्कृत 'क्रदन' शब्द से 'कांदना' क्रिया और फिर '**कांद**' संज्ञा भी गढ़ ली गई है। अर्थ — 'रोना, चिल्लाना'।

'आश्विनी पूर्णिमा' या उस में होने वाले उत्सव विशेष का नाम 'कोजागर' (स० को जागर्ति, पृषो० सिद्धि, पुं०) है। '**कोजागरी**' नया स्त्री० रूप है। ऽर्थ "शरद पूर्णिमा की रात या उस का" (दीपक आदि)

कूंजों (क्रौंच पक्षियों) के कूजन के लिए '**कंकार**' नया अनुकरणात्मक शब्द है।

'खींचना' स० क्रिया से 'खींच-तान' के अर्थ में 'खींच'[2] सं० स्त्री० शब्द बनता है। '**खींचों**' बहु० है।

---

१. बृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी, १४५ — दे० 'आलता'
२. तुल० — 'अति सोक सोच संकोच के खींच-बीच नरपति परे' (रत्ना०)

'**गोख**'[1] राजस्थानी में 'झरोखे' को कहते हैं। संस्कृत 'गवाक्ष' का ही 'गोख' सं० पुं० तद्भव शब्द है।

'**चौड़े**'[2] क्रि० वि० का अर्थ है — 'खुले आम, सब के सामने'। इसी का संज्ञा रूप में यहां प्रयोग है। हिन्दी के 'चौड़े' वि० से इस का सम्बंध स्थापित किया जा सकता है।

पश्चिम मे 'उछाल' अर्थ में 'छाल' सं० स्त्री० शब्द एक स्थानिक प्रयोग है। 'छाली' अल्पार्थक हुआ। बहुवचन में '**छालियां**' बन सकता है।

'**झाऊ**'[3] पुं० शब्द (सं० झावुक') मोरपंखी की जाति के एक पौधे को कहते हैं जिसकी पत्तियां औषध के काम आती हैं।[4]।

हिंदी में 'ढोंढी' (सं० तुड, हि० ढोंढ़) का अर्थ है 'कपास, पोस्ते आदि की कली'। यहां बहुवचन रूप मे 'ढोंड़ियां' लिखा गया है।

'**तीसी**' स० स्त्री० शब्द (स० अतसी) 'नीले रग के फूलों वाले एक पौधे' को कहते हैं जिसके बीज गोल, घुडीदार और मटमैले रग के होते हैं।

हिंदी में '**दौंगरा**' (या दवँगरा) 'पावस ऋतु की पहली वर्षा या छीटे' को कहते हैं। अवधी में 'दवँगरा' शब्द 'हल्की वर्षा' अर्थ मे है।

वृक्ष की शाखा के अग्रभाग के लिए 'फुनंगा या फुनगा' स० पुं० शब्द है। '**फुनगी**' स्त्री० अल्पार्थक है।

चांद्रमास के कृष्ण या शुक्ल पक्ष की बारहवीं तिथि को '**बारस**' कहते हैं। ग्यारस, तेरस, चौदस प्रयोग भी चलते ही हैं।

'भीड़' संज्ञा से नयी भाववाचक संज्ञा गढ़ी गई है — '**भीड़पने**'। 'पने' हि० प्रत्यय है ही।

---

१. तुल० 'ऊभी **गोख** अवेखियौ पेलां रौदल सेर' — (कविराजा सूर्यमल)
२. तुल० — कोई कहै छाने कोई कहै **चौड़े** लियोरी बजता ढोल — मीरां।
३. तुल० '**झाऊ** वृक्ष की झाड़ी भीतर करने लगे रति धीर' — आचार्य श्री रामचन्द्र शुक्ल द्वारा 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में उद्धृत।
४. मानक हिन्दी कोश, दूसरा खण्ड, दे० 'झाऊ'

पं० किशोरीदास वाजपेयी '**महानता**'[1] सं० स्त्री० शब्द को हिंदी की प्रकृति के अनुकूल मानते हैं। उन के मतानुसार महानता, महत्त्व और महत्ता में एक सूक्ष्म बुद्धिगम्य अन्तर है।

'**मालंच**' (सं० पुं० शब्द) एक प्रकार के साग को कहते हैं जो पानी में होता है। यह एक देशज प्रयोग है।[2]

हिंदी में 'मुंहदेखी' स्त्री० शब्द (पुं० मुंहदेखा) का एक अर्थ है-- 'ऐसा काम जो किसी का सामना होने पर औपचारिक रूप से उसका लिहाज़ करते हुए, या संकोचवश तथा ऊपरी मन से किया जाता हो जैसे मुंहदेखा प्यार, मुंहदेखी बातें।' किंतु यहां अर्थ है — आज्ञा की प्रतीक्षा में मुंह देखते रहना'।

'घनाली'[3] के तौल पर यहां '**मेघाली**' सं० स्त्री० शब्द (सं० मेघ +आली) आया है। अर्थ-- 'मेघों की पंक्ति।'

'**वैजयन्ती**' सं० स्त्री० शब्द यहां एक नये अर्थ 'विजयसूचक रागिनी' में प्रयुक्त हुआ है।

'शहरी' (फा० वि० शब्द) अर्थ में '**शहराती**' सं० पुं० शब्द भी नवीन ही है। घराती, बराती शब्दों में 'आती' प्रत्यय 'आए हुए' अर्थ में ही है। 'घराती' का ही एक नया पर्याय भी चल पड़ा है 'सराती'[4] — अर्थ वही — 'बेटी वालों के यहां आये हुए अतिथि'।

सिरिस (सं० शिरीष) सं० पुं० शब्द का अर्थ है 'शीशम-सा एक लम्बा-ऊंचा वृक्ष।'

'सिरोपाव'[5] (हि० सिर+पाँव) राजदरबार की ओर से किसी को सम्मानपूर्वक भेंट किया जाता है। इस में अंगा, दुपट्टा, पगड़ी, पटका, पाजामा आदि सिर से पैर तक पहनने के सब कपड़े होते हैं। अरबी में इसी को 'खिल्अत'[6] कहा जाता है। '**सिरोपा**' भी इसी अर्थ मे शब्द-विकार है।

---

१. हिंदी शब्दानुशासन, पं० किशोरीदास वाजपेयी

२. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० 'मालंच'

३. तुल० 'चंचला थी चमकी, **घनाली** घहराई थी' (गुप्त, साकेत)

४. हिंदी शब्द-रचना, माईदयाल जैन, १९६

५. मानक हिंदी कोश, पाँचवाँ खण्ड दे० 'सिरोपाव'

६. उर्दू हिंदी शब्द, मद्दाह, दे० 'खिल्अत'

संज्ञा-विकार

विकृत संज्ञा-रूपों का भी कवि ने व्यवहार किया है। कुछ उदाहरण देखें—

अकास [1] (आकाश), अन्तस्थल [2] (अन्तस्तल), अभीमान [3] (भि), असाढ़ [4] (अषाढ या आषाढ), असीसे [5] (आशीषे) आसिधारव्रत [6] (असिधाराव्रत), कच [7] (कांच). किङ्किण [8], किङ्किणि [9], (णी), कुमुदनी [10] (दि), कुलाहल [11] (को), खँडर [12] (खँडहर), छननी [13] (छा), जगत [14] (त्), जाग्रति [15] (गृ),

---

१. बावरा अहेरी, जाता हूं माने, २९ — 'अकास के तारों...'

२. चिंता, विश्वप्रिया, ९० — 'अन्तस्थल में फूट जगाने वाली'

३. इत्यलम् दूरवासी मीत मेरे, ८२ — 'अभीमान के वे दिन'

४. वही, पानी बरसा, २०४ — 'असाढ़ की निशानी'

५. हरी घास पर क्षण भर, पहला दौंगरा, ५६ — 'हियो मे कितनी असीसें'

६. अरी ओ करुणा प्रभामय, घाट घाट का पानी, १५२ 'आसिधारव्रत जिसने ठाना'

७. वही प्याला : सतहें, ३० — 'कच-टकड़े के हर स्तर पर'

८. इत्यलम्, भग्नदूत, गीत-१, ३१ — 'किङ्किण, नुपुर शब्द'

९. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८५ — 'मेखला-किंकिणि···'

१०. चिंता, एकायन, १२५ — 'रोमांचित होती कुमुदनी'

११. इत्यलम्, बाहु मेरे रुके रहे, २०२ — 'कुलाहल का आस्फालन'

१२. बावरा अहेरी, बावरा अहेरी, १७ — 'मेरे इस खँडर की'

१३. इत्यलम्, रक्तस्नात वह मेरा साकी, ६८ — 'छननी मे छन कर'

१४. (क) चिंता, विश्वप्रिया, ८५ — 'मैं जगत को प्यार कर के'
(ख) इत्यलम्, मैं तुम्हारे ध्यान में हूं, ११३ — 'जगत है सापेक्ष'

१५. (क) वही, तंद्रा में अनुभूति, १०५ — 'जाग्रति में केवल पीड़ा'
(ख) चिंता, एकायन, १२७ — 'जाग्रति-स्मृति यह'
(ग) चिंता, विश्वप्रिया, २० — 'किसी स्वप्न-जाग्रति मे'

झुटपुट [1] (टा), ठेर [2] (थेर), तड़ित [3] (तड़ित्), तरवार [4] (तरवारि या तलवार), तिसूल [5] (त्रिशूल), दामिनि [6] (नी), नाज [7] (अनाज), निबलता [8] (निर्बलता), निरदई [9] (निर्दयी), निर्म्माण [10] (निर्माण), पांवर [11] (पांवड़े), पाखी [12] (पाँ), प्रान [13] (ण),प्रास [14] (अनुप्रास), प्रेयस [15] (स्), प्रेयसि [16] (सी),

---

१. (क) हरी घास पर क्षण भर, अकेली न जैयो..., ३२ ' घना हो चला झुटपुट '

(ख) तुल० ' बासों का झुरमुट, सध्या का झुटपुट ' (पत)

२. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, नयी कविता : एक सभाव्य भूमिका, ४२ — ' ठेर-महासभा जब जुटी '

३. (क) इत्यलम्, सावन-मेघ, १५४ — ' तड़ित मे झुलसा '

(ख) इत्यलम्, सावन-मेघ, १५५ — ' तड़ित के आघात से '

४. अरी ओ करुणा प्रभामय, घाट घाट का पानी, १५२ ' बार बार तरवार घाट पर '

५. बावरा अहेरी, बावरा अहेरी, १९ — ' कलम-तिसूल वाले '

६. इत्यलम्, भग्नदूत, २७ — ' ज्यों दामिनि घन मे '

७. बावरा अहेरी हवाई यात्रा, ४० — ' ढेर नाज के '

८. चिंता, विश्वप्रिया ८१ — ' हृदय की विकल निबलता '

९. इत्यलम्, पार्क की बेंच, १७० — ' निरदई हण्डे ने '

१०. इत्यलम्, अपना गान, ४३ — ' स्वप्नो का निर्म्माण '

११. इत्यलम्, जैसे तुझे स्वीकार हो, १७४ — ' धरा पांवर सी बिछी है '

१२. इत्यलम् आज थका हिय-हारिल मेरा, १३८ — ' प्राणों का हारिल-पाखी '

१३. इत्यलम्, चिन्तामय, १२७ — ' थक गए हैं प्रान मेरे '

१४. (क) हरी घास पर क्षण भर, छन्द है यह फूल, ६७ — ' छन्द है यह फूल, पत्ती प्रास '

(ख) तुल० — ' खुल गये प्रास के रजत पाश ' (पंत)

१५. चिंता, एकायन, १२७ — ' प्रेयस ! मन के किरण-कर '

१६. इत्यलम्, ओ मेरे दिल, १४४ — ' प्रेयसि के आग्रह से '

फोला[1] (फफोला), बद्दल[2] (बादल), बिजुलियां, बिजुली[3] (ज), बिस्वास[4] (विश्वास), बुद्बुद्[5] (बुद्बुद), मचैया[6] (मचिया), मट्टी[7] (मि), ममत्त्व[8] (त्व), मश्शाल[9] (मशाल), मनिनि[10] (मानिनी), माल[11] (ला), मौमाखियां[12] (ममाखिया), रेणुक[13] (रेणु या रेणुका) वातास[14] (बतास), विरहिन[15] (विरहिणी), बीन[16] (वीणा), सन्यासिनि[17] (नी), सम्पति[18] (त्ति) और सौदामनि[19] (सौदामनी या सौदाम्नी)[20] ।

---

१. चिंता, विश्वप्रिया, ८४ — ' फूटा स्मृति-मलय, का फोल. '
२. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, वैशाख की आँधी, २६ — ' घहराया काला बद्दल '
३. (क) इत्यलम्, चेहरा उदास, १८१ — ' सोई थी बिजुलियां '
(ख) वही, वही १८२ — ' तडपती बिजुली '
४. बावरा अहेरी, जाता हूं सोने, २९ — ' अन्धा बिस्वास '
५. चिंता, एकायन, १५२ — ' मदिरा मे भी चवल बुद्बुद् '
६. इत्यलम, माघ-फागुण-चैत, २१० — ' किसान की झकी मचैया '
७. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, क्योंकि तुम हो, ४७ — ' अपने को मट्टी कर '
८. इत्यलम्, चलो चले, ७३ — ' यह ममत्त्व भी क्यों रह जाए ? '
९ इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, टेसू, २५ — ' मश्शाल जला द '
१०. चिंता, एकायन, १२६ — ' मानिनि क्या मान छिपाती ? '
११. हरी घास पर क्षण भर, किरण मर जायगी, २२ — ' तारकों की माल '
१२. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८२ — ' मौमाखियां...करती हैं गुंजार '
१३. बावरा अहेरी, ये मेघ साहसिक सैलानी, २८ — ' रेणुक-कण रूखे '
१४. अरी ओ करुणा प्रभामय, उन्मत्त, ९० — ' अंजली वातास की '
१५. चिंता, एकायन, १५० — ' आज विरहिन भी है '
१६. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८३ — ' बीन के तारों में '
१७. इत्यलम्, द्वितीया, १३५ — ' अब है संन्यासिनि '
१८. इत्यलम्, जीवन-दान, ५७ — ' अंतिम सम्पति परिहृत '
१९. इत्यलम्, भग्नदूत, २१ — ' सौदामिनि सी दौड़ जायगी '
२०. दे० हिंदी भाषा: अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद ' सुमन ', ४८-४९

विशेषण

कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये है—

अगोरते [1], अड़ब [2], अपरिम [3], अरुणाली [4], उछटती [5], उड़ने [6], कटखनी [7], कठेंठे [8] कर्री [9], चेतहर [10], झौंसी [11], टटकी [12], तिरस्कारी [13], तोतापरी [14], निथुरे [15] निहोरे [16], नीलिम [17],

---

१ आंगन के पार द्वार अन्तरग चेहरा, २२ — हेरते, **अगोरते** लोचन दो '

२ वही, भीतर जागा दाता, १७ — ' यह **अड़ब** उमड़ना '

३ इत्यलम् सूर्यास्त, ९७ — ' इस रहस्य **अपरिम** के आगे '

४. (क) चिंता, विश्वप्रिया, ११९ — ' **अरुणाली** किरणें बोलीं '

(ख) इत्यलम्, चलो चलें, ७३ — ' चिर जागर से है **अरुणाली** '

५ वही, चरण पर धर चरण, १८३ — ' लोचनों की **उछटती**-सी बेकली '

६. बावरा अहेरी, बावरा अहेरी, १६ — ' बेडौल **उड़ने** जहाज '

७ अरी ओ करुणा प्रभामय, डरौने पर कौआ, १२१ — ' हवा **कटखनी** बहती है '

८. वही, मैंने कहा, पेड — ' पर भीतर ठोठ **कठेंठे** खड़े हो '

९. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — ' ओले की **कर्री** चपत '

१० इत्यलम्, शिशिर की राका-निशा, १६६ — ' केवल झलमलाते **चेतहर** '

११. (क) अरी ओ करुणा प्रभामय, एक प्रश्न, ३५ ' घृणा की एक **झौंसी** सांस भी '

(ख) वही, औद्योगिक बस्ती, ४७ — ' ये **मुंहझौंसी** चिमनियां '

१२. हरी घास पर क्षण भर, कलगी बाजरे की, ५७ — ' **टटकी** कली चम्पे की '

१३. इत्यलम्, जैसे तुझे स्वीकार हो, १७१ — **तिरस्कारी** वर्जना हो '

१४. बावरा अहेरी, हवाई यात्रा, ४० — ' **तोतापरी** खेत गेहूं के '

१५. वही, अन्धड़, ५९ — ' **निथुरे** समीर पर '

१६. हरी घास पर क्षण भर, दीप थे अगणित, २१ — ' शब्द पोपले वाचाल ये थोथे **निहोरे** '

१७. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, सागर-तट पर सीपियां, ९६ — ' सीपियां ये शुभ्र **नीलिम** '

पुरनम [1], प्रपातित [2], फटियल [3], बिछलती [4], बिछली [5], भस्मकरी [6], रणरणित [7], रपटना [8], लँढ़ूरी [9], ललाती [10], लहरिल [11], लालिम [12], लोलक [13], **वनैला** [14], शिलित [15], सर्पिल [16], सलग [17], सीठी [18], स्वप्निल [19], हरखाई [20] और

---

१. बावरा अहेरी, वहां — रात, ५३ — ' **पुरनम** टमकते तारे '

२. वही, वह नाम, ३३ ' धारा के **प्रपातित** बिंदुओं का ह्रास '

३. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, महानगर : रात, ५९ — ' **फटियल**-सा इश्तहार '

४. बावरा अहेरी, वहां — रात, ५३ — ' **बिछलती** डगर सी '

५. हरी घास पर क्षण भर, कलगी बाजरे की, ' हरी **बिछली** घास '

६. इत्यलम्, मत मांग, ' ज्वाल...**भस्मकरी** विकराल '

७. हरी घास पर .., छन्द है यह फूल, ६७ ' स्वयं **रणरणित** होते रहो मेरे मीत ! '

८. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, गोवर्द्धन, ५५ — ' यह मार्ग **रपटना** है '

९. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — ' ढोंडिया **लँढ़ूरी** '

१०. हरी घास पर..., कलगी बाजरे की, ५७ — ' **ललाती** सांझ '

११. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, क्योंकि तुम हो, ४६ — ' फुटकी की **लहरिल** उड़ान '

१२. (क) हरी घास पर..., कतकी पूनो, ३७ — ' उजली **लालिम** मालती '
(ख) इत्यलम्, दिवाकर के प्रति दीप, ६४ — ' **लालिम** गगनाम्बर '
(ग) हरी घास पर..., प्रणति, १६ - ' तप्त **लालिम** शिखे '

१३. इत्यलम्, शाली, २०३ — ' **लोलक** लट घुघरारी '

१४. बावरा अहेरी, खद्योत दर्शन, ५० -- ' वन तो **वनैला** है '

१५. आंगन के पार द्वार, गीत १०, ४९ — ' युग-कल्प **शिलित** कर गये हमारे पल '

१६. वही, गीत २०, ६१ — ' **सर्पिल**-सी फिसली चली गयी '

१७. (क) इत्यलम्, अचरज, १५८ — ' जग से अलग, किंतु परस्पर **सलग** '
(ख) पृष्ठ वही, ' **सलग** प्रणय की आंधी में '

१८. बावरा अहेरी, चांदनी जी लो, ५६ — ' बत्तियां खड़ी हैं **सीठी** '

१९. (क) चिंता, एकायन, १३० — ' **स्वप्निल** सचेत निद्रा से '
(ख) इत्यलम्, निमीलन, १०० — ' **स्वप्निल** निद्रा में लीन '

२०. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — ' डोल उठी **हरखाई** नैया '

इन में तिरस्कारी और हेमंती वि० शब्द ' ई ' प्रत्यय के योग से बने हैं। इसी प्रकार लहरिल, सर्पिल और स्वप्निल ' इल ' मत्वर्थीय प्रत्यय जोड़ कर बने हैं।

पूरब की भाषा में ' अगोरना ' स० क्रिया ' प्रतीक्षा करना ' अर्थ में है उसी से ' अगोरते ' विब० नाया गया है।

' अडूब ' निषेधसूचक वि० शब्द है। अथ — ' बिना डूबे '।

' असरिम ' शब्द ' असीम ' अर्थ में है।

घुघराली और मटियाली की भांति ' अरुणाली ' में भी हेमंती[१]।

' आली '[२] प्रत्यय जुड़ा है। घूघर और मिट्टी की तरह यहां मूल संज्ञा ' अरुण ' में कोई विकार नहीं है।

हिंदी में ' उछटना ' अ० क्रि० (या ' उचटना ') ' जी ऊबना, उखड़ना, हटना ' आदि अर्थों में है। उसी से ' उछटती ' वि० सम्बद्ध है।

' उड़ने ' वस्तुत: ' उडन ' वि० शब्द (अर्थ: उड़ने वाला, उदा० ' उड़न-खटोला ') का ही विकार है। यहां यह नया विशेषण-रूप है।

' कटखना ' वि० पुं० (हिं० काट+खना क्रि०) का अर्थ है ' काट खाने वाला '। ' तेज़ ' (हवा) अर्थ भी सभव है। ' कटखनी ' स्त्री० है।

' कठेठा ' वि० ' कठोर, मस्त ' अर्थों में है। किंतु यहां ' एठा ' प्रत्यय ' काठ '[३] में लगा है, ' कंठ '[४] में नहीं।

' करौ ' का अर्थ है ' करारी, कड़ी, उग्र '। ' करौ ' पुं० वि० देशज भाषा में इन्हीं अर्थों मे है। यहा उसी का स्त्री० रूप है।

---

१. (क) चिता, विश्वप्रिया, ९४ — ' दिन अलसाए हेमंती '

(ख) वही, वही, ९३ — ' उचटे से हेमंती बादल '

२. हिंदी में प्रत्यय-विचार, डॉ० मुरारी लाल उप्रैति:, १५६, दे० आल/आ

३. मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड, दे० ' कठेठा '

४. ब्रजभाषा सूर कोश, प्रथम खण्ड, दे० ' कठेठ '

'**चेतहर**' का यहां 'मनोहर' अर्थ संभव है क्योंकि 'चेत' का एक अर्थ 'चित्त' भी है।

'**झौंसी**' वि० 'झुलसी या जली हुई' अर्थ में है। 'मुंह-झौंसी' का अर्थ हुआ — 'मुंह जली' (एक गाली)। 'झौंसना' स० क्रि० का अर्थ है 'झुलसना'।

'**टटकी**' वि० स्त्री० (सं० तत्काल) के अर्थ है — 'ताजी, नयी, इसी समय की।

'**तोतापरी**' (या तोताफरी) आमों की एक बढ़िया किस्म होती है। यहां उसका 'रंग' ही अभीष्ट है।

'निथुरे' वि० का सम्बंध 'निथरना' अ० क्रि० (स० निम्तरण) से है जिस का अर्थ है 'जल का स्थिर हो कर साफ हो जाना'। यहा '**निथुरे**' का अर्थ 'निर्मल' हो सकता है।

यहां '**निहोरे**'[1] वि० (स० मनोहार, हिं० मनुहार) का अर्थ है 'विनती करने या गिडगिडा कर कहे जाने वाले' (शब्द)।

अरुणिम, रक्तिम, लालिम और स्वर्णिम की भांति 'नीलिम' वि० बना है। इस में भी 'इम' प्रत्यय जुडा है।

फारसी में '**पुरनम**' वि० के अर्थ है — 'आंसुओं से भरी हुई आंख, भीगा, गीला'।

'प्रपातन' संज्ञा पुं० शब्द का अर्थ है—जोर से नीचे गिराना, फेकना। इसी से '**प्रपातित**' वि० का संबंध जोडा जा सकता है — अर्थ — 'गिरे हुए'।

'**फटियल**' का अर्थ देशज भाषा मे 'फटा हुआ' है।

'बिछलना' अ० क्रि० 'फिसलना' अर्थ मे है उसी से **बिछलती** और **बिछली** वि० शब्द बने है।

'**भस्मकरी**' वि० वस्तुत: 'भस्मकारी' (स० भस्मकारिन्) का विकृत रूप

---

१. (क) तुल० 'सोइ कृपालु केवटहि **निहोरे**' (तुलसी)
(ख) तुल० 'धरहुँ देह नहि आन **निहोरे**' (तुलसी)
(ग) तुल० 'सूर स्याम कौ मधुर कौर दै कीन्हें तात **निहोरे**' (सूर० १०-२२४)

है — अर्थ — जला कर भस्म करने वाला।

संस्कृत में ' रणरण ' (नपु०) का एक अर्थ ' उत्कण्ठा या लालसा ' भी है। ' रणरणित ' का अर्थ हुआ — उत्कंठित, उमंगपूर्ण। ' रणरण ' अनुकरणवाचक शब्द भी है। अत: यहां ' शब्दित, ध्वनि-युक्त ' आदि अर्थ भी लग सकते हैं।

यहां ' रपटना ' वि० ' चिकना, फिसलने वाला ' अर्थ में है। ' रपटना ' अ० क्रि० (सं० रफ़न, फा० रफ्तन) ही यहां वि० रूप मे है।

' लंडूरी ' (देशज) वि० का अर्थ है ' जिस का (पूंछ आदि) कोई शोभा-जनक अंग कट गया हो '।

' ललाना ' अ० क्रि० का अर्थ है ' लाल होना '। ' ललाती ' वि० एक नवीन प्रयोग है। अर्थ ' लाल '।

मत्वर्थीय ' इल ' प्रत्यय वाले ' लहरिल ' वि० (अर्थ ' लहरदार ') का भी अधिक प्रचलन नहीं है। नीलिम की भांति ' लालिम ' वि० भी नया ही माना जाएगा।

' लोलक ' में यहां ' क ' स्वार्थिक प्रयोग ही है। अर्थ ' लोल, चंचल, कम्पायमान '।

कसैला और विषैला की भांति ' बनैला ' भी ' ऐला ' प्रत्यय के योग से बना है। पर ' बनैला ' का ' जंगली, वन्य ' अर्थ में बहुत कम प्रयोग होता है। यहां संज्ञा शब्द ' वन ' के विशेषण के रूप मे इस का अर्थ ' भयंकर, बीहड़, सघन ' आदि हो सकता है।

' शिलित ' के अर्थ हैं — ' शिलीभूत, जड़, निष्प्राण '। ' शिल ' सं० स्त्री० का एक अर्थ ' शिला या सिल ' भी है।

' सर्पिल ' वि० का अर्थ है — सांप की तरह टेढा-मेढ़ा।

' सलग ' वि० (स० सलग्न) ' अलग ' का विपरीतार्थक शब्द है। अर्थ — ' सटा हुआ '।

' सीठो ' वि० (सं० शिष्ट, प्रा० सिट्ठ) का अर्थ है ' फल आदि का वह अंश जो रस निचोड़ लेने पर शेष रहता बचता है '। यहां ' प्रकाशहीन ' अर्थ सभव है।

'हरखाई'[1] वि० 'हरखाना' अ० क्रि० से बना है। अर्थ — प्रसन्न, हर्षित।

यहां 'हेमंती' वि० का अर्थ है — 'हेमत ऋतु के'।

विशेषण-विकार

विशेषणों के कुछ विकृत रूप ये हैं —

अतिश:[2] (अतिशय), उज्वल[3], गतिमान[4] (गतिमान्), छविमान[5] (न्), ठूंठ[6] (ठूंठ) दीप्तिमान[7], निबल[8] (निर्बल), निलज[9] (निर्लज्ज), बोधी[10] (बोधि), मतियाया[11] (मटियाया), महान[12] (न्), मायाविनि[13] (नी) विबुध[14] (विबुद्ध)।

---

१. तुल० 'तुरत उठे लछिमन हरखाई' — (तुलसी)
२. इत्यलम्, चरण पर धर चरण, १:४ — 'अतिश: मौन है'
३. अरी ओ करुणा प्रभामय, रश्मिबाण, ९२ — 'उज्वल प्रकाश में'
४. (क) हरी घास पर क्षण भर, कितनी शांति ! (२), १३ 'धाम से गतिमान'
(ख) अरी ओ करुणा प्रभामय, नया कवि : आत्मोपदेश, ५१ — 'चतुर्दिक् गतिमान'
५. इत्यलम्, तेरा स्थान, २८ — 'यह रचना भैरव छविमान'
६. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, मलाबार का एक दृश्य, ५७ — 'ठूंठ तने'
७. इत्यलम्, चार का गजर, १७६ — 'दीप्तिमान नारी-मुख'
८. वही, चिंतामय, १८५ — 'निबल आकुल हृदय मे'
९. वही, प्रतीक्षा, २१९ — 'निलज लम्बी छाह'
१०. वही, ओ मेरे दिल, २४२ — 'बोधी तरु की छाया'
११. हरी घास पर ..., ये मेघ साहसिक ... 'मतियाया सा भरा पाना'
१२. चिंता, विश्वप्रिया, ७३ — 'पा कर यह आकाश महान'
१३. अरी ओ करुणा प्रभामय, रात कटी, १५६ — 'मायाविनि छायाओं की'
१४. इत्यलम्, रात होते प्रात होते, १७३ — 'विबुध सपनों की सखा'

विशेषण-विपर्यय

कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

अधीर [1] (टाप), कँटीला [2] (चांद), कंटीले [3] (रूप), कुलबुलाती [4] (दलदल), गरवीली [5] (हरियाली), गुथीला [6] (धुआं), गोरी [7] (चमक), चकित [8] (छलांगो), चापहीन [9] (एकलव्य), छरहरे [10] (पेड़), झीना [11] (चांद), धारदार [12] (विडंबना), धीर [13] (थाप), प्रभामय [14] (करुणा), फ़रियादी [15] (रूप) बांझ [16] (अनुकम्पा), बाल [17] (क्षण), बुदबुदाता [18] (अंधकार), मखमली [19] (स्वर),

---

१. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८२ — ' घोड़े की टाप **अधीर** '

२. बावरा अहेरी, शरद की सांझ के पंछी, २६ — ' उठा दूज का चांद **कँटीला** '

३. इन्द्रधनु रौंदे हुए थे, सागर-तट की सीपियां, ९६ — ' **कँटीले रूप** से सँकोच '

४. अरी ओ करुणा प्रभामय, नये कवि से, २७ — ' एक **कुलबुलाती दलदल** है '

५. वही, सरसों फूली, १०२ — ' **गरवीली** हरियाली ने '

६. हरी घास पर क्षण भर, पुनर्णाविष्कार, ४६ — ' **गुथीला** व्योमग्रासी **धुआं** '

७. अरी ओ करुणा प्रभामय, नदी तट : एक चित्र, ७२ — ' **गोरी** चमक बालू की '

८. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८२ — ' थाप दादुर की **चकित छलांगों** की '

९. इन्द्रधनु रौंदे हुए थे, इतिहास की हवा, ३१ — ' कितने **चापहीन एकलव्य** '

१०. आंगन के पार द्वार, भीतर जागा दाता, १५ — ' **छरहरे** पेड़ की '

११. अरी ओ करुणा प्रभामय, अरी हवा अब, १०१ — ' **झीना चांद** '

१२. वही, बड़ी लम्बी राह, २२ — ' **धारदार** विडंबना '

१३. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा , ८२ — ' **धीर** थाप भैंसों के भारी खुर की '

१४. अरी ओ करुणा प्रभामय, दीप पत्थर का, ८३ — ' करुणा **प्रभामय** '

१५. वही, रात कटी, १५६ — ' कुरते का **फ़रियादी** रूप '

१६. आंगन के पार द्वार, सूनी सी सांझ एक, २८ — ' **बांझ** अनुकम्पा समाज की '

१७. वही, सांप का पुतला, ३६ — ' कौतुक भरा **बाल** क्षण '

१८. इन्द्रधनु रौंदे हुए थे, हम ने पौधे से कहा, ८५ — ' **बुदबुदाता** अंधकार '

१९. इत्यलम्, वीर-बहु १८७, — ' **मखमली** स्वर से '

रुँधे [१] (दर्द), रुपहली [२] (करुणा), लजीली [३] (किरण), शीलवान् [४] (तरुओं), स्वीकारी [५] (आंसू) ।

क्रिया

कुछ सामान्य और विशिष्ट क्रिया-प्रयोग इस प्रकार हैं —

अड़ड़ाता [६], अनुकूलो, अनुरागो, अवतरेंगे [७], असीमती, आँज [८], उकेरते [९], उकेरूंगी, उमसना [१०], ओप, कंपने, कुरमुराता [११], कोच, खूँदते, गाला [१२], गोड़, घुंट [१३], चिहुँक, चिहुंकती, चिहुकते, चीन्ह, चीन्हता, चीन्हा, चेत, छवा, छेक, जानू, झिपता, झिपती, झिपे, झीकते [१४], झोंकता [१५], ठिलती, ढँप, ढरकी, तँचती [१६],

१. अरी ओ करुणा प्रभामय, हम कृती नहीं है, १७ — 'रुंधे दर्द की भी दीवार'
२. वही, धरा-व्योम, ८१ — 'रुपहली करुणा'
३. वही, दीप पत्थर का, ८३ — 'लजीली किरण का'
४. आंगन के पार द्वार, परायी राह, २३ — 'शीलवान् तरुओं की...छाँहें'
५. वही, चक्रांत शिला, गीत ७,४६ — 'स्वीकारी आंसू मे ढलका'
६. हरी घास पर क्षण भर, सबेरे सबेरे, ३९ — 'अड़ड़ाता है कागा काँय काँय'
७. अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर पर सांझ, १३७ — 'रग भरेंगे, रूप अवतरेंगे'
८. इत्यलम्, नन्ही शिखा, १९९ — 'बोध को ही आंज जाती है'
९. अरी ओ करुणा प्रभामय, हम कृती नहीं है, १८ — 'चाहे परिचिति को गहरे उकेरते'
१०. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, एक रोगिणी बालिका..., ५३ 'मेरे भी मन ने उमसना'
११. हरी घास पर क्षण भर, देखती है दीठ, १८ — 'कुरमुराता मूल में है...कीट'
१२. अरी ओ करुणा ..., प्याला : सतहें, २९ — 'हृदय मे गाला हम ने एक कुआँ'
१३. इत्यलम्, एक चित्र, १२४ — 'घुंट जाते हैं हाथ चौखटे पर'
१४. अरी ओ करुणा ..., दाता और भिखारी, १६० — 'अनगिन झींकते झींगुर'
१५. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, मैं वहां हूं, २० — 'यह जो तंदूर झोंकता है'
१६. अरी ओ करुणा ..., चांदनी चुपचाप, १४६ — 'आँच पर तँचती रही'

दरकी, दिप, दिपता, दिपती, दुरदुराया, दोले, ध्याऊं, ध्यावे, नम, नमो, निमजती, परचती, पुरती, प्रकटावेगा, फीचती, फीचते, बदा, बरजता, बिछलना, बिलमो, बुदकती [1], भँसाते [2], मिस, मिसता, मुरझ, रचने, रपटे, रीतें, लख, लखती, लखते, लखने, लखा, लला [3], लेखे, विलमाने, सँची [4], समो, समोता, सहार, सालता, सालती, सालेगा, सिराने [5], सीझ, सुमिरने, सोख, स्रजते, स्वीकारी, हरसाता, हुलसता, हेरा और हेरे।

'**अड़ड़ाना**' कौए के '**काँय काँय**' करने का स्वर है।

'**अवतरना**' अ० क्रि० (सं० अवतरण) का यहां सकर्मक प्रयोग है। अर्थ — प्रकट करना, अंकित करना इत्यादि।

'**आँजना**' स० क्रि० (स० अञ्जन) का यहां लक्षणा द्वारा 'निखारना, सवारना' अर्थ संभव हो सकता है।

'**उकेरना**' स० क्रि० के यहां 'गहराना', 'बढ़ाना' उभारना आदि अर्थ लगाए जा सकते हैं।

'**उमसना**' अ० क्रि० 'उमंगना' और 'उमहना' के अनुकरण पर घड़ी गयी जान पड़ती है। अर्थ -- 'उमंग मे आना'। 'उमस' स० स्त्री० शब्द से इस का कोई सम्बधं नही है।

'**कुरमुराना**' अ० क्रि० 'कुलबुलाना' अर्थ मे नयी है।

'**गालना**' स० क्रि० 'खोदना' अर्थ में अधिक प्रचलित नही है।

'**घुंटना**' अ० क्रि० यहां 'कसना' अर्थ में नयी है। 'घोटना' स० क्रि० का यह अकर्मक प्रयोग भी हो सकता है।

---

१. हरी घास पर क्षण भर, हरी घास पर ..., ६० — '**बुदकती** गड्डमड्ड अकुलाहट'
२. अरी ओ करुणा प्रभामय, बाँगर और खादर, ४३ — 'डाँगर **भँसाते** हैं'
३. वही, पूनो की साँझ, ६७ — 'साँझ ... **लला कर** ओट हो गयी'
४. इत्यलम्, प्रतीक्षा, २१९ — 'युगावधि से **सँची** लम्बी चाह'
५. चिता, एकायन, १२६, — गंगा-कूल **सिराने** ओ लघु दीप'

यहां ' **झींकना** ' अ० क्रिया ' झीखना ' अ० क्रि० के **अनुकरण पर है। अर्थ** — ' कुढ़ना, व्याकुल हो कर शब्द करना '।

' **झोंकना** ' स० क्रि० का भी यहां नया अर्थ विकसित हुआ है — ' **जलाना** '। ' मानक हिंदी कोश ' में यह अर्थ नहीं है।

' **तँचना** ' अ० क्रिया-रूप ' तचना ' से प्रभावित है। अर्थ वही — ' गर्म होना '।

' **बुदकना** ' अ० क्रि० पर ' बुदबुदाना ' अनुकरणात्मक क्रिया का प्रभाव स्पष्ट है। यहा अर्थ है — ' मन ही मन मे घुमड़ना '

बगला मे ' भसाना ' स० क्रि० का अर्थ है — ' किसी चीज को पानी मे डुबोना या तैरने के लिए छोडना '। यहां ' **भँसाना** ' स० क्रि० मे चन्द्रबिंदु का आगम हो गया है जैसे तँचना मे हुआ है। लशकरी भाषा मे 'जहाज़ भसाना' (पानी मे तैरने के लिए छोड़ना) कथन प्रचलित है।

' **ललाना** ' अ० क्रि० (हि० लाल) यहा ' लाज से लाल होना ' अर्थ में है।

' **सँचना** ' स० क्रि० (स० सचयन) एकत्र करना, देख-भाल करना आदि अर्थों में है। यहा ' तैयार करना, सुरक्षित रखना अर्थ सभव है।

' **सिराना** ' स० क्रि० का यहां अर्थ है — ' जल में प्रवाहित करना '।

क्रिया-विकार

कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

अचकचा[१] (अकचका), **आय**[२] (ए या ये), **उट्ठा**[३] (उठा), **ऊगा**[४] (उ),

---

१. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, सागर-तट की सीपियां, ९६ — ' **अचकचा** कर अध-खुला ही रह गया है '

२. अरी ओ करुणा प्रभामय, इशारे ज़िन्दगी के, ७७ — ' लहरो पर तिर **आय** '

३. इत्यलम्, दूरवासी मीत मेरे, ८१ — ' तड़प **उट्ठा** है पिघल कर '

४. (क) बावरा अहेरी, **ऊगा** तारा, ३१

(ख) अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर पर सांझ, १३७ — ' **ऊगा तारा** '

गहराय [1], जाय [2], जायगी [3], नितारा [4] (निथारा), न्हा [5] (न), न्हाई [6], न्हाती [7], न्हाने [8], पाय [9] (ए या ये), पिन्हाऊं [10] (पहनाऊं), पिन्हाना [11] (पहनाना), रक्खा [12] (रखा), समाय [13] (ए या ये) ।

उर्दू क्रियाएं

उर्दू शैली से प्रभावित हो कर भी कवि ने कुछ क्रियाए प्रयुक्त की हैं यथा डगमगाया किया [14], ताका किए [15] और देखा किए [16] ।

---

१. वही, चुपचाप, ७७ — 'ठहरी आंखों में गहराय'

२. (क)वही, वही, वही — 'विराट् हम में मिल जाय'

(ख) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, देना जीवन, ९५ — 'चप रहा न जाय'

३. इत्यलम्, भग्नदूत, ८१ — 'दौड़ जायगी मेरे तन मे'

४. आगन के पार द्वार, गीत २१, ६३ — 'जो नितारा, जो छाना'

५. हरी घास पर क्षण भर, शरद, ३६ — 'धप मे न्हा-निखर कर'

६. वही, कलगी बाजरे की, ५७ — 'नीहार-न्हाई कुई

७. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २०० — 'न्हाती गौरैया'

८. अरी ओ करुणा प्रभामय, गरम सोते का स्थान, १२२ — 'न्हाने का सुख'

९. (क) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, देना जीवन, ९५ — 'बहा न पाय'

(ख) वही, पृष्ठ ९५ — 'ढहा न पाय'

१०. चिता, विश्वप्रिया, ३५ — 'मालाए तुम्हे पिन्हाऊं'

११. अरी ओ करुणा प्रभामय, इशारे जिन्दगी के, ३२ — 'माला पिन्हाना'

१२. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, यही एक अमरत्व है, ४८ — 'नहीं बांध कर रक्खा जाता'

१३. वही, देना जावन, ९४ — 'एक अहं में वह न समाय'

१४. आंगन के पार द्वार, भीतर जागा दाता, १५ — 'झूम झूम आया, डगमगाया किया'

१५. इन्द्रधनु रौंदे हुए, थे हम ने पौधे से कहा, ८५ — 'हम मुग्ध ताका किए'

१६. अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर पर सांझ, १३६ 'चुपचाप देखा किए सागर को'

उपसर्ग

कवि अज्ञेय ने अ, अन, (सं० अन्), अनु, दुर्, निर्, प्र, प्रति, और सु उपसर्गों के प्रति अपनी रुचि विशेष का परिचय दिया है।

क्रमश: उदाहरण इस प्रकार हैं —

अकथ, अगिन, अछल, अजनमे, अद्रवित, अनयना, अभ्रांत, अयाना, अयानी और असग।

अनकहनी, अनकहा, अनकही, अनकहे, अनगिन, अनचीती, अनचीन्हे, अनजले, अनझरा, अनझिप, अनथक, अनदेखे, अनपहचाना, अनपहचाने, अनबुझी, अनबूझ, अनभूली, अनमिल, अनसुनी, अनसुलझ, अनागत, अनागता, अनाघ्रात, अनाविल, अनाहूत, अनिंद्रिय।

अनुक्रम, अनुक्षण, अनुगूंज और अनुपल।

दुरन्त, दुराशा, दुर्जय, दुर्जेय, दुर्दम, दुर्दमनीय, दुर्दम्य, दुर्धर, दुर्निवार, दुर्बोध्य, दुर्भावनाएं, दुर्मद, दुर्वह, दुर्वार।

निर्गंधा, निर्बुद्धि, निर्लक्ष्य, निर्वैयक्तिक।

प्रकम्प, प्रकम्पित, प्रक्रियाएं, प्रगाढ़, प्रमत्त, प्रलम्ब, प्रस्वेद, प्रहर्ष, प्रोज्ज्वल।

प्रतिकूल, प्रतिकूलता, प्रतिज्योति और प्रतिश्रुत।

सुकृति, सुकृती, सुदूर, सुदूरता, सुवासित, सुविस्तृत और सुस्पष्ट।

फारसी का 'बे' उपसर्ग भी इन शब्दों में है —

बेअन्त, बेकल, बेघरा, बेघरे, बेचारे, बेचैन, बेझिझक, बेटूट, बेडौल, बेथाह, बेधड़क, बेपनाह, बेपरवाह, बेपीर, बेबस, बेमेल, बेरोक, बेसबरे, बेसुध, बेहया।

इन के अतिरिक्त हिंदी का 'नि' उपसर्ग भी कवि को प्रिय है। उदाहरण— निचिन्त, निबल, निरस और निलज।

लिंग

जो शब्द हिंदी में प्राय: पुल्लिंग रूप में ही आते हैं उन्हें कवि ने स्त्री० में भी लिखा है उदाहरणत :—

उच्छ्वासो [1], औषध [2] खेल [3], गर्जन [4], गुंजार [5], चैत [6] प्राचीरें [7], मीनार [8], लेख [9], विरह [10] शोध [11], सांस [12], सामर्थ्य [13] और हुलास [14]।

---

१. इत्यलम्, भग्नदूत, २७ — 'मान्य रश्मियों की उच्छ्वासों'
२ चिंता, खंड, एकायन, ११९ —'विष-प्याले में क्या औषध घोली'।
३. वही, वही, १३९—'मेरी खेल बड़े जोखिम की'।
४ चिंता, एकायन, १२३ — 'तेरी स्मृति लहरों की गर्जन'
५. (क) इत्यलम्, पूर्व स्मृति, ३४ — 'बिखरी भौंरों की गुंजार'
(ख) वही, वही, ३३ — 'वन मे भौरों की गुंजार'
६. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २०९ — 'पात पुरानो चैत के'
७. (क) इत्यलम्, भग्नदूत, २२ — 'प्राचीरें थी सीमा मेरे नभ की'
(ख) वही, पराजय गान, ३९ — 'टूटी प्राचीरों का'
(ग) वही, दूरवासी मीत मेरे, ८१ — 'सुदृढ़ प्राचीर मेरी'
(घ) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, क्यो आज, ७७ — 'गढ़ी हुई दो प्राचीरों'
८. इत्यलम्, शिशिर की राका-निशा, १६६—'चीत्कार-सी मीनार'
९ अरी ओ करुणा प्रभामय, बड़ी लम्बी राह, २४ — 'विधि की लेख'
१०. चिंता, एकायन, १४८—'विरह पहुंच सीमा पर आत्यंतिक हो जाती है'
११. बावरा अहेरी, जनवरी छब्बीस, ४६—'शोध मे अपने उसी धुंधले युगो के स्वप्न की'
१२. (क) इत्यलम्, भग्नदूत, २७—'ताराओं की कम्पित सांसो'
(ख) चिंता, विश्वप्रिय, २३—'सुरभित मलय की सांस'
१३. इत्यलम्, विधाता वाम होता है, ११५—'तर्क की सामर्थ्य हम में है'
१४. हरी घास पर क्षण भर, कतकी पूनी, ३७--'मन मे दुबकी है' हुलास

इन मे **उच्छ्वास, औषध, गर्जन, प्राचीर** और **सामर्थ्य** — ये शब्द संस्कृत में नपुं० और हिंदी मे प्राय: पुं० ही है। अतिम को छोड़ कर शेष सभी ब्रजभाषा में भी प्राय: पुं० रूप मे ही आते है। व्रज० मे सामर्थ स्त्री० भी है।

खेल, गुजार, चैत, सांस और **हुलास** शब्द हिंदी और ब्रजभाषा दोनों में पुं० ही हैं। सस्कृत मे ' खेला ' (' केलि ') स्त्री० भी है। **उल्लास, चैत्र** और **श्वास** तत्सम शब्द-रूप भी वहां पुं० ही हैं। ' सास ' के अतिरिक्त अन्य शब्द व्रजभाषा में भी पुं० ही हैं। ' सांस ' शब्द व्रज० मे उभय लिंगो मे मिलता है।

लेख, विरह और **शोध** सस्कृत, हिंदी और व्रज० प्राय: तीनो भाषाओं में पुं० ही हैं।

' **मीनार** ' उर्दू मे पुं० शब्द है पर हिंदी में उभय लिंगों में मिल जाता है।

इसके विपरीत कवि ने उल्का [1] और झंझा [2] स्त्री० शब्दों को पुं० मे लिखा है। सस्कृत मे दोनों शब्द स्त्री० ही है।

बहेली [3] और **मंजूष** [4] हिंदी में नये पुल्लिंग शब्द माने जा सकते हैं। इनके स्थान पर हिंदी मे बहेलिया पुं० और मजूषा स्त्री० रूप ही अधिक प्रचलित हैं।

इसी प्रकार हिंदी में नए स्त्री० शब्द-रूप ये है — **आश्वासना** [5], **क्रन्दना** [6]

---

१. अरी ओ करुणा प्रभामय, टेर रहा सागर, १६७ — ' जब जब उल्का गिरा '

२. इत्यलम्, धूल भरा दिन, ११० — ' झंझा आता है झूल झूल '

३. हरी घास पर क्षण भर, कितनी शांति..., १५ — ' क्षणों के तुम पटु बहेली '

४. (क) बावरा अहेरी, जनवरी २६, ४५ — ' यह सुघर मंजूष भी '

(ख) हरी घास पर क्षण भर, ' बने मंजूष यह अतस् ', ६८

५. इत्यलम्, बाहु मेरे रुके रहे, २०० — ' अहेतुक आश्वासना से '

६. वही, अपना गान, ४२ — ' चकवी की क्रन्दना '

और धुरा [1]। आश्वासन और क्रंदन संस्कृत में नपुं हैं। उन्हीं को यहां स्त्री० रूप में लिखा गया है। अरबी में 'साकी' पुं० और हिंदी में स्त्री० [2] है। कवि ने स्त्री० ही माना है।

वचन

वचनो के क्षेत्र में भी कवि ने निरंकुशता का परिचय दिया है। आंसू [3] और प्राण [4] शब्द प्राय: बहुवचन में लिखे जाते हैं किंतु कवि ने इन्हे एकवचन मे भी लिखा है। 'दिशा' [5] शब्द एक स्थल पर बहुवचन की अपेक्षा एकवचन मे ही रखा गया है।

शब्दों के कम प्रचलित अथवा नये बहुवचन रूप इस प्रकार हैं — अनेकों [6], प्यारियां [7], भरियां [8], लूहें [9] (लूए),

---

१. वही, शिशिर के प्रति, ४१ — 'धुरा उस मैत्री की'

२. वही, रक्तस्नात वह मेरा साकी, ६९ — 'जब साकी ही विधवा है'

३. वही, कवि, ४६ — 'आंसू उमड़ आता है'

४. (क) चिंता, एकायन, १४७ — 'कब तक यह प्राण रहेगा'
(ख) वही, १६८ — अब मधु ही है प्राण हमारा'

५. इत्यलम्, उड चला हारिल, १४६ — 'दसों दिशा मे'

६. (क) इत्यलम्, मैं तुम्हारे ध्यान मे हूं, ११३ — 'कठिनताएं अनेकों'
(ख) हरी घास पर क्षण भर, शरद, ३६ — 'अनेकों फबतियां कसते'
(ग) अरी ओ करुणा प्रभामय, रात भर आते रहे सपने, १४४, — 'मुझ को अनेकों बार'

७. बावरा अहेरी, कांगड़े की छोरियां, ४७ — 'प्यारियां'

८. पृष्ठ वही — 'हरियां-भरियां'

९. हरी घास पर क्षण भर, विश्वास का वारिद, २३ — 'बहेंगी लूहें'

शशों [1], शाखें [2], (शाख का बहुवचन, 'शाखा' का नहीं) सलिलाओं [3] और हरियां [4]।

विशेषण-रूप में 'अनेकों' व्याकरणसम्मत नहीं है।

संधि

कुछ **दीर्घ स्वर संधियां** ये हैं—

अन्तरानुभूति, कार्याभाव, गगनाम्बर, चिन्तातुर, जीवनानुभूति, तर्कातीत, दिनारंभ, दिवसावसान, पिकाकुल, प्राणावसान, मर्माहत, युगातीत, रणातुर, रागातीत, रूपातीत, वज्राहत, वाताहत, शब्दातीत, श्वासाहत, सख्यातीत, स्पर्शातीत, स्वप्नातीत, हिमाहत।

इनमें अतीत, आतुर, आहत शब्दों की संधियों के प्रति कवि की विशेष रुचि प्रकट होती है।

गुण स्वर संधियां ये हैं — ज्ञानगोचर, एकोन्मुख, कवेजनोचित, क्षीरोदधि तरंगोर्मियों, नीडोन्मुखता, परमोन्मेष, प्रत्ययोन्मुख, प्राणोन्माद, प्राणोन्मेष, रजोर्मियों, भावोद्दीपक, मरणोन्मुख, मिलनोचित, रणोद्यत और सहजोन्मेष।

कुछ **व्यंजन संधियां** ये हैं — जीवन्मुक्त, तडिल्लता, महच्छक्ति, महदाकांक्षा, विद्युल्लता।

कतिपय **विसर्ग संधियां** द्रष्टव्य हैं—

अन्तर्गुहा, अन्तर्ज्योति, अन्तर्ज्योतित, अन्तर्दाह, अन्तर्मन, अन्तर्मुख, ज्योतिर्मय, ज्योतिर्मालाएं, तेजोमय, तेजोवय, तेजोरूप, दुश्चिन्ता, दुस्सह, निश्चल, निश्छाय, निश्शब्द, निष्करुण, निष्कलंक, निष्पाप, निष्प्राण, निष्फल, निस्संकोच, निस्संग, निस्संबल, निस्साधन, निस्सार, निस्सीम, मनोरंग।

---

१. हरी घास पर क्षण भर, कतकी पूनो, ३७ — 'शशों की जोड़ी'
२. इत्यलम्, शिशिर के प्रति, ४० — 'काली शाखें'
३. हरी घास पर..., सपने मैं ने भी देखे हैं, ३८ — 'सलिलाओं के पुलिनों पर'
४. बावरा अहेरी, कांगड़े की छोरियां, ४७ — 'हरियां-भरियां'

समास

कुछ **सम्बंध तत्पुरुष समास** इस प्रकार हैं—

अभिमान-भरोसे, आंसू-कन, आंसू-धार, **ईश्वर-आश्रय**, कंचन-कण, कुटीर-द्वार कोकिल-कूक, गंध लोभी, **जग-हिय**, दिनकर-ज्वाला, धूलि-कण, नरक-द्वार, **निदाघ-ज्वाल** पथ-प्रकार, प्रणय-कथा, प्रणय-बात, **प्रणय-वेदने**, प्रणय-व्यथा, प्रस्थान-बेला, **प्रेमी-उर**, मन्दिर-द्वार, मुक्ति-आवाहन, सुख-दिन और हिमगिरि-भाल।

इन में कन (या कण) ज्वाला, द्वार और प्रणय शब्दों के समास अधिक हैं।

कतिपय **करण तत्पुरुष समास** दर्शनीय हैं।

अभिमान-भरे, अरमान-भरे, आकांक्षा-भरी, उपहास-भरा, कसक-भरी, किलक-भरा, कोलाहल-भरे, कौतुक-भरा, गंध-दूषित, गंध-मूर्च्छित, गर्व-भरा, गौरव-दृप्त, छेदों-भरी, तनाव-भरा, ताप-रुद्ध, तारों-टँका, **तेज-भस्म**, त्रास-भरी, दर्प-स्फीत, दुख-भरे, धुंध-ढकी, धुआं-भरी, धूल-धवला, धूल-भरे, नाद-भरा, मान-भरे, **मेघ-आकुल**, मोद-भरा राख-भरा, राग-भरी, राग-भरे, **रिक्ति-भरे**, रोष-भरे, लालसा-भरे, वात्सल्य-भरा विश्वास-भरी, विस्मृति-विषाक्त, व्रीडा-जर्जर, शोणित-सिक्त, संन्यास-भरी, स्नेह-भरे।

इन में 'संज्ञा + विशेषण' (भरा, भरी, भरे) के समास अधिक हैं।

अपादान तत्पुरुष समास विरल हैं यथा पथ-विमुख, भार-मुक्त, रण-विमुख।

कर्मधारय समास कवि को विशेषकर प्रिय हैं। यथा —

अनुभव-डलिया, अनुभव-भार, अनुभव-लहर, अनुभव-हालाहल, आंचल-छाया, काल-निर्झर, **किरण-अंगुलियां**, किरण-कर, जीवन-दीप, जीवन-ज्वाला, जीवन-मरु, जीवन-समर, प्राण-दीप, प्राण-धागा, प्राण-वधूटा, प्राण-वीणा, प्राण-सुधा, **बादल-सेज**, **मन-फूल**, मन-विविर, मन-विहग, मानस-कानन, मानस-मरु, मानस-मुकुर, मृत्यु-धूल, मृत्यु-राग, मेघ-दूत, मेघ-पताका, यौवन मधु, **रूप-केकी**, **वज्र-कठोर**, विश्व-देवता,

विश्व-नगर, **वेदना-व्योम**, व्यथा-ज्वाल, शब्द-निर्झर, संगीत-सुमन, **सुख-शय्या**, **सुख-सपना**, स्नेह-तरी, स्नेह-पारावार, स्मृति-गगन, स्मृति-घन, स्मृति-शेफाली, स्मृति-शृंखला, स्वप्न-वितान, स्वप्न-वीथी, **स्वागत-पंखुड़ियां**, **हिम-शीतल** और **हृदय-द्वार**, ।

कुछ **द्वन्द्व समास** ये हैं—अग-जग, उत्थान-पतन, **कीच-दलदल**, घाट-बसेरे, ज्योति-तिमिर, तन-प्राण, **पल-छिन**, **प्रेमी-प्रिय**, भय-त्रास, मिलन-बिछुड़न, मिलन-विरह, मौन-मुखर, शीत-शिशिर, सुप्त-जाग्रत ।

इन समासों में अधिकांश ऐसे है जो पर्यायवाची या विपरीतार्थक शब्दो के मेल से बने हैं।

कुछ **बहुव्रीहि समास** देखे—

अचल-पंख, अनल-गर्भ, कुश-धार, खड्ग-हस्त, गुफा-गेह, तप-क्षीण, धैर्य-धन, **प्रलम्ब**-कर और सहस्र-फन ।

'स' **अव्ययीभाव** के कुछ समास ये हैं—

सक्षमता, सजग, सजल, सजीव, सदय, सदेह, सनाथ, सबल, समुद, सरस, सलज्ज, सवत्सा, सव्रीड . सशोक, ससीम, सस्मित, साकांक्ष, साकार, सानुराग, साभिमान और सालस ।

कुछ **विविध समास** इस प्रकार हैं—

अन्त-घड़ी, अस्तित्व-प्राप्त, कृपा-वाक्य, **चोर-पैर**, तम-घिरती, तम-घिरते (नभ), दृष्टि-पथ, धन-खेत, धुआं-घुटे, पल्लवन-पतझरों, पवन-तरी, पीड़ा-निर्झर, प्रकाश-सायक, मिलन-निशा, मुह-चुराने, लीला-कर, **सांचे-ढले** (समाज), सुरभि-हिंडोलों सौरभ-नाविक, सौरभ-निर्झर, सौरभ-मालाए, स्वप्न-मूर्त, स्वर- सभार और हठ-साधना ।

'**बीच-बाग**' जैसे उल्टे समास भी कहीं कहीं देखे जा सकते हैं। ऐसे समासों को 'समास-विपर्यय' कहा जा सकता है।

ाब्द-लोप

में, पर और हो शब्दो का अनेक स्थलों पर लोप-सा जान पड़ता है। कुछ ाहरण इस प्रकार हैं—

१. (क) ला फेंका निर्मोही तू ने किस घनघोर अंधेरे (में)[1]

(ख) मेरी आंखों (में) बसा नगर की गली का हाहाकार[2]

(ग) कानों (में) झुमके बालियां[3]

(घ) जो घड़े डुबा गये मंझधार (में)[4]

(ङ) यही देख मन (में) रंजित हो तुझ से करते हैं सुमन ठ ोली[5]

(च) अग्नि-धर्म हम हृदय (में) धरेंगे[6]

२. करों (पर) तुम्हारे हूं, फिर भी एक भीड़ में[7]

३. ऊंचाई कम (हो) चली[8]

चिता, एकायन, १५९

इत्यलम्, विपर्यास, ८३

बावरा अहेरी, कांगड़े की छोरियां, ४७

हरी घास पर क्षण भर, माहीवाल से, ४५

इत्यलम्, प्रश्नोत्तर, २९

इत्यलम्, अखंड ज्योति, ६०

चिन्ता, विश्वप्रिया, ४५

बावरा अहेरी, हवाई यात्रा, ४१

अन्य शब्द-विकार

संज्ञा, विशेषण और क्रिया का अध्ययन करते समय कुछ शब्द-विकार प्रस्तुत किये गये थे। कुछ अन्य विशिष्ट विकार ये हैं —

तुझी [१] (तुझ+ही), तुम्हारा [२] (अपना), ना [३] (न) पृथक [४] (पृथक्) फेर [५] (फिर), मझ [६] (अपने), मुझी [७] (मुझ ही), यदपि [८] (यद्यपि).

---

१. (क) चिंता, विश्वप्रिया, २७ — ' तुझी को तो था वह उपहार '
(ख) चिंता, एकायन, १५९ — ' उपहार तुझी से पाया था '

२. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, मैं तुम्हारा प्रतिभू हूं, ३६ — ' तुम ने तुम्हारा शेष कष्ट भोगने के लिए मुझे चुना '

३. (क) वही, यही एक अमरत्व है, ४८ — ' ना ये सुन्दर दिन '
(ख) वही, वही, ४९ — ' ना ये दिन, ना रात '

४. (क) इत्यलम्, बाहु मेरे रुके रहे, २०१ — ' पृथक धारो मी '
(ख) पृष्ठ वही — ' रग अपने पृथक रखती है '
(ग) पृष्ठ वही — ' ऐक्य में दोनों पृथक '

५. (क) इन्द्रधनु रौंदे हुये ये, यही एक अमरत्व है, ४८ — ' फेर नहीं आती '
(ख) वही, वही, ४९ — ' फेर नहीं खिलने वाल '

६. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८३ — ' पर मझ को मैं भूल गया '

७. (क) इत्यलम्, निवेदन, १२८ — ' मुझी से स्पर्धा '
(ख) बावरा अहेरी, उषा-दर्शन, ५२ — ' मुझी में समा गया '
(ग) वही, जो कहा नहीं गया, ६५ — ' मुझी से सहा नहीं गया '

८. (क) चिंता, विश्वप्रिया, ७३ — ' यदपि सोचता बड़े यत्न से '
(ख) चिंता, एकायन, १५४ — ' यदपि आज जग में '
(ग) इत्यलम्, शिशिर के प्रति, ४० — ' यदपि आंखें भर आयें '
(घ) वही, मैं वह धनु हूं, ८४ — ' यदपि ध्वनि '

युगों युगों [1] (युग युग) और हमीं [2] (हम ही)।

नव शब्द

अज्ञेय जी की कविताओं में कुछ नव शब्द-प्रयोग विवेचनीय हैं यथा—

अचकच [3], आड़ी [4], उदीषा [5], एकस्वर [6], कन्था [7], कमपि [8], कर धुनना [9] (मुहावरा), करारे [10],

---

१. (क) चिंता, एकायन, १४१ — ' युगों युगों तक '
(ख) वही, विश्वप्रिया, १९ — ' युगों युगों का भार '
(ग) वही, एकायन, १५१ — ' युगों युगों का स्नेह सोया '
(घ) वही, वही, १६४ — ' युगों युगों पर तेरे स्वर का '

२. (क) आंगन के पार द्वार, झील का किनारा, २१ — ' हमीं ने दुबारा फिर नहीं दिया ? '
(ख) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, हवाई यात्रा : ऊंची उड़ान, ६१ ' हमीं अपना सपना हैं '

३. इत्यलम्, पार्क की बेंच, १६९ — ' अचकच देखता ही रह जाता हूं '
४. हरी घास पर क्षण भर, हवाई यात्रा, ४१ ' अपने आड़ी किसान की जोखिम '
५. आंगन के पार द्वार, बना दे चितेरे, १४ — ' उस अन्तहीन उदीषा को '
६. (क) वही, असाध्य वीणा, ८१ — ' जल-प्रपात का प्लुत एकस्वर '
(ख) चिंता, एकायन, १२८, — ' गाता जावे चिर एकस्वर '
(ग) वही, वही, १५२ — ' एक मूक आह्वान सदा एकस्वर '
७. हरी घास पर —, हवाई यात्रा, ४० — ' सलवट की ओट बिछा है कन्था '
८. इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, नयी कविता : एक सभाव्य भूमिका ४४ ' आप को, कमपि को '
९. चिंता, एकायन, ११४ — ' खड़ी ही रहेगी कर धुनती '
१०. इन्द्रधनु ..., मैं वहां हूं, २२ — ' नये करारे तोड़ती '

कारुवाद्य [1], **कौली** [2], गंभीरऽर आऽह्वाऽन [3], **घरवे** [4], **घुघुंर** [5], **चिनिचाहटें** [6], **चिनियाहट** [7], **डरौने** [8], **डाक** [9], **थाक** [10], **परिगण** [11], **प्रतिम** [12], **बिन-कारण** [13] (समास), **भूंक** [14], **मिट्ठी** [15], **यकसां** [16], **यन्त्र-गरुड़** [17], **वीर-बहू** [18], **सतभैये** [19],

---

१. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ७८ — 'अभिमंत्रित **कारुवाद्य**'

२. हरी घास पर क्षण भर, ये मेघ साहसिक सैलानी, २३ — **कौली** भर मतियाया सा भूरा पानी'

३. इत्यलम्, उष:काल की भव्य शांति, १६४

४. अरी ओ करुणा प्रभामय, बांगर और खादर, ४३ — 'मिट्टी के **घरवे** हैं'

५. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — 'गर्जन **घुघुंर**, चीख'

६. अरी ओ करुणा प्रभामय, रात कटी, १५६ — 'घुओं की **चिनिचाहटें**'

७. वही, सागर-चित्र, १३४ — 'उड़े झाग की **चिनियाहट** गालों पर'

८. (क) वही, सूनी साँझ, ११३ — '**डरौने** की पसरी परछाहीं'
(ख) वही, **डरौने** पर कौआ, १२१ — 'एक **डरौने** पर बैठा है'

९. हरी घास पर क्षण भर, पावस प्रात-शिलङ्, ३४ — 'बेसुर **डाक**'

१०. वही, वही, — 'रहेगी बस एक मुट्ठी खाक ! **थाक्** ! **थाक्** ! **थाक्** !'

११. आंगन के पार द्वार, गीत १२, ५२ 'परिचित **परिगण** में भी आत्मीय सभी'

१२. इन्द्रधनु ..., तुम हंसी हो, ९२ — 'जो संघर्ष-रत मेरे **प्रतिम** का'

१३. इत्यलम्, उष : काल की भव्य शांति, १६४ — '**बिन-कारण** पदाक्रांत पिल्ले'

१४. (क) आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ ' — **भूक**, हुक्का, चिचियाहट'
(ख) वही, वही, ८१ — 'चीख, भूक'

१५. वही, अनुभव-परिपक्व, २६ — 'मां, मुझे लाल। **मिट्ठी** दे दो'

१६. चिंता, विश्वप्रिया, ७६, 'चित्रता पर उस चतुर की आज तक **यकसां** रही है'

१७. अरी ओ करुणा प्रभामय, हवाई अड्डे पर विदा, १४१ — 'उड़ गया गरजता **यन्त्र-गरुड़**'

१८. इत्यलम्, वीर-बहू, १८७ — 'अंकी मी रहस्यमयी **वीर-बहू**'

१९. हरी घास पर क्षण भर, हरी घास पर, ६३ — '**सतभैये** शोर मचाते'

सब-बोरन [1], सम-दुःखी [2], सह-पथिक [3], और हुक्का [4] ।

'अचकच' वि० शब्द का अर्थ है — चकित । हिंदी में 'अचकचाना' अ० क्रि० है उसी से यह शब्द बना है ।

'आड़ी' स० स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'अपने पक्ष का साथी' (खेल में)

'उदीषा' सं० स्त्री० शब्द का यहां अर्थ है — 'उत्कट इच्छा, लालसा' ।

'एकस्वर' सं० पुं० और वि० शब्दों का अर्थ है जो 'बराबर एक-सा स्वर उत्पन्न करता हो और इसीलिए जिससे मन ऊब जाए' । [5] (अं० 'मोनोट्नस')

'कंथा' स० स्त्री० शब्द यहां नगर या बस्ती अर्थ में है । शक भाषा में भी 'कंथ' का अर्थ 'नगर' ही है । ईरानी भाषा में इसी का विकृत रूप 'कंद' एक स्थानवाचक उत्तरपद है — उदा० ताशकन्द, यारकद, समरकंद ।

'कमपि' संस्कृत में 'कम् + अपि' जोड़ कर बना है — अर्थ 'किसी (अमुक) को' ।

कर मलना और सिर धुनना की भांति यहां 'कर धुनना' यह नया मुहावरा उन्हीं अर्थों मे प्रयुक्त किया गया है ।

'करारे' [6] सं० पुं० बहु० शब्द यहां 'कगारे' अर्थ में है ।

---

१. इत्यलम्, आषाढस्य प्रथम दिवसे, २१२ — 'सब-बोरन, मदम ती वह आएगी'

२. वही, शिशिर के प्रति, ४० — 'सम-दुःखी ओ विधुर शिशिर'

३. वही, भादो की उमस, १७९ — 'सहपथिक कल के'

४. (क) आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — 'भूंक, हुक्का, चिचियाहट'

(ख) पृष्ठ वही — 'चीख, भूक, हुक्का'

५. मानक हिंदी कोश, पहला खंड, दे० शब्द 'एकसुरा'

६. (*i*) तुल० — 'माँगत नाव करार पं ठाढ़े' (अवधी कोष, समीर, दे० 'करारा')

(*ii*) तुल० — 'लखन दीख पय उतर करारा' (तुलसी)

'**कालवाद्य**' सं० पुं० एक सामासिक शब्द है — अर्थ 'वाद्य-कलाकार'।

'**कौली**' सं० स्त्री० शब्द 'कटोरी' अर्थ मे पंजाबी भाषा में विद्यमान है।

'**गंभीऽर आऽह्वाऽन**' में 'ऽ' चिह्न की आवृत्ति स्वर की दीर्घता सूचित करती है।

'**घरवे**' सं० पुं० बहु० शब्द यहां 'घरौंदे' अर्थ मे है। हिंदी में '**घरवाहा**' और अवधी भाषा मे 'घरवना'[1] और 'घरौना' स० पु० शब्दो के भी यही अर्थ हैं।

'**घुंघुर**' एक ध्वनिसूचक शब्द है। अवधी मे इसी 'घुर-घुर' की ध्वनि के लिए 'घुरघुराव[2]' अ० क्रि० भी है।

'**चिनिचाहट**' सं० स्त्री० शब्द नया प्रयोग है। 'धूएं के कारण आंखों में होने वाली कड़वाहट' — यहां यह अर्थ सभव है।

'**चिनियाहट**' स० स्त्री० शब्द भी नया ही है। संभव है इसका अर्थ हो — 'चीनी के बर्तनो की भांति चिकनाहट'। अवधी मे चीनी वाले बर्त्तनों के लिए '**चिनिहा**'[3] शब्द प्रचलित है।

'**डरौने**' स० पु० बहु० शब्द 'खेतो मे पक्षियों को डराने के लिए कपड़े पहना कर खड़े किए गए ढांचों' को कहते है। व्रज० मे भी 'डरावा[4]' स० पुं० शब्द का इसी से मिलता जुलता अर्थ है। देशज भाषा मे 'डरौने' का पर्यायवाची शब्द 'बिजूका' या 'बिजूखा'[5] है। इस पर प्राय: काली काली हांड़ी भी टँगी रहती है।

---

१. अवधी-कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर,' दे० घरवना'

२. अवधी कोष, दे० 'घरघुराव'

३. अवधी कोष, दे० 'चिनिहा'

४. (क) मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड दे० 'डरावा'

(ख) व्रजभाषा सूरकोश, प्रथम खण्ड, दे० 'डरावा'

५. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० 'बिजूका,' 'बिजूखा'

हिंदी में ' डाक ' सं० स्त्री० शब्द (सं० डक्क) बंगला के ' डाकिबा ' शब्द से प्रेरित जान पड़ता है जिस का अर्थ है ' पुकार '। ' डाक शब्द काली के अनुचरों के अर्थ मे संस्कृत वाङ्मय मे प्रयुक्त है। प्राय: समस्त संस्कृत कोश ग्रंथों में यह पद उपलब्ध है। इसी का स्त्री० डाकिनी पद है जो हिंदी में खूब प्रचलित है। '[1] यहां ' पुकार ' अर्थ ही है।

' थाक '[2] सं० पुं० शब्द ढेर, राशि, थकावट आदि अर्थों में है। यहां पहला अर्थ ठीक जान पड़ता है।

' परिजन ' पु० शब्द ' परिवार के सदस्य या आश्रित जन ' के अर्थ में पहले ही विद्यमान है। इसी अर्थ में ' परिगण ' शब्द नया ही माना जाएगा।

' प्रतिम पुं० शब्द यहां ' बराबर, तुलना ' आदि अर्थों मे संभव हो सकता है।

' भूंकना ' अ० क्रि० से बना ' भूंक ' सं० स्त्री० शब्द भी अधिक प्रचलित नही है।

' मिट्ठी ' सं० स्त्री० शब्द घरेलु भाषा में ' चुम्बन ' अर्थ में चलता ही है। ' मीठा ' वि० से इसका सम्बंध है।

फ़ारसी में ' यकसां ' वि० ' बराबर, सदृश, समतल, चौरस, एक-सा ' आदि अर्थों में है।

' वायुयान ' अर्थ में ' यन्त्र-गरुड़ ' शब्द कवि की निजी निर्मिति ही है।

' वीर वधूटी ' सं० स्त्री० शब्द पहले ही विद्यमान है। अर्थ — ' गहरे लाल रंग का छोटा रेंगने वाला कीड़ा, जो देखने में बहुत सुंदर होता है। ' बीर बहूटी, इसी का एक पर्याय है। ' बीर-बहू ' नया पर्यायवाची शब्द माना जाना चाहिए।

---

१. धर्मयुग ७ जनवरी सन् १९६८, स्तंभ ' आपका पत्र मिला ' देवरकोण्ड दीप्तिविलास शास्त्री का पत्र, पृष्ठ ७

२. तुल० ' पंख जरे तन थाक ' (जायसी, पद्मावत)

यहां '**सतभैये**' सं० पुं० बहु० का अर्थ है 'पेंगिया मैना पक्षियों का समूह'। हिंदी में 'सतभइया'[1] शब्द-रूप इसी अर्थ में है।

'**सब-बोरन**' मे 'सब' हिंदी का और 'बोरन' 'डुबाने वाला' अर्थ में ब्रज० का शब्द है। समग्रत: अर्थ हुआ 'सब-कुछ को डुबाती' (मस्त)

'हमदर्द' अर्थ में '**समदु:खी**' और 'हम सफ़र' अर्थ में '**सह-पथिक**' भी नये शब्द ही हैं।

'**हुक्का**' नया ध्वन्यात्मक शब्द है।

प्रिय शब्द

कवि अज्ञेय की प्रिय शब्दावली देखें —

अकथ, अकारण, अकिंचन, अगिन, अचचल, अचिर, अजस्र, अथक, अनगिन, अनझिप, अनथक, अनमना, अनमिट, अनागता, अनिमिष, अनी, अनुक्षण, अन्तर, अन्तर्दाह, अपलक, अप्रतिहत, अबाध, अभिमंत्रित, अम्लान, अयानी, अरुणाली, अलस, अविरल, असह, असीम, आरक्त, आवाहन, आहूत, उच्छल, ऊर्ध्वंग, कनी, किरीटी, खर, गहना, ज्योतिर्माला, दिक्चक्र, दुर्दम, दुर्दान्त, दुर्धर, दुर्निवार, दुस्सह, घनखेत, धारासार, नरसल, निरीह, निरुपाय, निर्वाक्, निर्वेद, प्रगाढ़, प्रोज्ज्वल, प्लवन, बेबस, मर्माहत, यदपि, युगों युगों, रूपाकार, लख, लाल, लुनाई, वन-खंडी, विजित, विधना, समुद, सरीखा, सहचर, सिरिस, स्वर्गंगा, हुताशन और ह्लाद।

ध्वन्यात्मक शब्द

अज्ञेय जी ने ध्वनि-चित्रों की भी सुंदर प्रदर्शनी सजाई है। यहां भी लहरों की

---

१. मानक हिंदी कोश, पाँचवाँ खण्ड, दे० 'सतभइया'

ध्वनि कलकल[1], **सरसर**[2] कगार की '**छप्-छड़ाप**'[3] और जल का ध्वनि **छुल छुल**[4] है।

पत्ते, पीपल, फरास और शाखाएं सभी **सर सर**[5] करते हैं। पत्तों और पलासों की ध्वनि '**खड़ खड़**'[6] है। इसी प्रकार अकासनीम, पत्ते, फूल, मेघ और सोते '**झर झर**'[7] करते हैं। '**झम झम झम**'[8] जल वर्षण का स्वर है। बूंदें '**पट पट**'[9]

---

१. इत्यलम्, उषा के समय, १०३ — 'लहर लहर का **कल कल**'

२. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — 'लहरियों की **सर सर** ध्वनि'

३. वही, वही, ८१ — 'रेतीले कगार का गिरना **छप्-छड़ाप**'

४. वहीं, वही, ८६ — 'बहते जल की **छुल-छुल**'

५. (क) चिंता, एकायन, १५४ — 'पत्तों का यह अविकल **सर सर**'

(ख) इन्द्रधनु रौंदे हुए ये, वैशाख की आंधी, २६ — 'स्वर लाया **सरसर** पीपल का'

(ग) बावरा अहेरी, ये मेघ साहसिक सैलानी, २३ — 'फरास का ध्वनि **सर सर**'

(घ) इत्यलम्, पूर्व स्मृति, ३४ — 'कंपती हैं शाखाएं **सर सर**'

६. (क) इत्यलम्, पानी बरसा, २०४ — '**खड़खड़** कर उठे पात'

(ख) इन्द्रधनु ..., वैशाख की आंधी, २६ — '**खड़खड़** पलास का'

७. (क) हरी घास पर क्षण भर, कतकी पूनो, ३७ — '**झर झर** पड़े अकासनीम'

(ख) बावरा अहेरी, ये मेघ साहसिक सैलानी, २४ '**झर झर** ... पत्ते सूखे'

(ग) वही, वही, २२ — 'फूल झरे **झर-झर-झर**'

(घ) इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — '**झर-झर-झर** लग गई झड़ी'

(ङ) वही, तीसरा पक्षी, १६२ — 'फूटा सोता वेदना का **झर-झर**'

८. इन्द्रधनु ..., चातक पिउ बोलो, ७५ — '**झम-झम-झम** पानी'

९. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८० — 'वर्षा-बूंदों की **पट-पट**'

गिरती हैं। झाऊ, निझर, पत्त, पीड़ा, वृक्ष और स्वर का 'मर्मर'[१] भी देखने योग्य है। ओस की 'तिप् तिप्'[२] और जल की 'गुड़ुप्'[३] यहां भी है।

पवन सनसनाता[४], हवा सरसराती[५] है। सन्नाटा 'सांय सांय'[६] करता गूजता है। आंधी भी सनसनाती[७] है। ज्वार, बद्दल, बवंडर, लहर, शब्द और सागर — सभी 'हहर हहर'[८] करते हुए हहराते हैं।

---

१. (क) इन्द्रधनु ..., वैशाख की आंधी, २६ — 'मर्म कछार के झाऊ का'
(ख) इत्यलम्, गोप-गीत, ९९ — 'निर्झर का मर्मर'
(ग) आंगन के पार द्वार, गीत ११, ५१ — 'पत्तों का मर्मर'
(घ) चिंता, एकायन, १२८ — 'प्राणों में पीड़ा का मर्मर'
(ङ) आंगन के पार द्वार, गीत २,४० — 'वृक्षों में एक मर्मर'
(च) चिंता, एकायन, १६४ — 'तेरे स्वर का मीठा मर्मर'

२. हरा घास पर क्षण भर, पावस-प्रात-शिलङ्, ३४ — 'ओस की तिप्-तिप्'

३. अरी ओ करुणा प्रभामय, ताल, १०६ — 'कूदा दादुर:गुड़ुप्'

४. इन्द्रधनु ..., ओ लहर, ६६ — 'सनसनाता पवन'

५. अरी ओ करुणा प्रभामय, सागर पर सांझ, १३६ 'सरसराती हुई इस हवा'

६. (क) इत्यलम्, शाली, २०३ — 'संसृति की सांय सांय बोली'
(ख) आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — संसृति की सांय सांय'

७. चिंता, विश्वप्रिया, ८६ — 'चल रही आंधी सनसनाती'

८. (क) हरी घास पर क्षण भर, कितनी शांति ..., १३ 'हहराते ज्वार-सा'
(ख) इन्द्रधनु ..., वैशाख की आंधी, २६ 'हहर हहर घहराया काला बद्दल'
(ग) इत्यलम्, अकाल-वन, ७२ — 'उठे बवडर हहराए'
(घ) इन्द्रधनु ..., ओ लहर, ६७ — 'हहराती आ लहर!'
(ङ) इत्यलम्, वद्ध, ५१, — 'हहर हहर कर ... एक प्रकंपित शब्द'
(च) वही, विश्वास, ८७ — 'जीवन-सागर हहर हहर कर'

तारे यहां भी टमकते [1] हैं। हिमखण्ड यहां भी 'चट चट' [2] चटकते हैं। चेहरे और दीप झिपते [3] हैं। दीप जगमग [4] करने और टिमटिमाने [5] वाले भी हैं। कंचन की झलमल [6] और हृदय की छलछल [7] यहां भी है। चक्की की घर-घर [8] और गाड़ी की धड़-धड़ [9] यहां भी है।

दिल धड़कता है धक् धक् [10]। पैर पड़ते हैं टप्-थब [11]।

काक पक्षी की ध्वनि है कांय कांय [12] और 'हाक् हाक्' [13]। यही उसकी बेसुरी डाक है।

पेड़ अररा [14] कर गिरते हैं। शब्द झन्नाते [15] हैं। नृत्य की ध्वनि है —

---

१. बावरा अहेरी, वहां-रात, ५३ — 'पुरनम टमकते तारे'

२. इन्द्रधनु ..., बर्फ की झील, ८९ — 'चट-चट-चट कर तड़क गये हिमखंड'

३. (क) बावरा अहेरी, चांदनी जी लो, ५६ — 'कुहासे में झिपते चेहरे'

(ख) चिंता, एकायन, १३१ — 'दीप झिपते झिपते बहते जाओ'

४ चिंता, विश्वप्रिया, १०५ — 'जगमग जिस दीपक का'

५ वही, वही, ८८ — 'टिमटिमाने में धुआं जो दीप'

६. इत्यलम्, अंतिम आलोक, १०४ — 'था कंपित कंचन झलमल'

७ वही, अचरज, १५८ — 'छलछल उमड़ा आवे'

८. वही, बन्धुत्व, ८० — 'चक्की की घर-घर ध्वनि'

९. आंगन के पार द्वार, सूनी सी सांझ एक, २७ — 'धड़-धड़ गाडियों की'

१०. इत्यलम्, ओ मेरे दिल, १४१ — 'धक्-धक् ओ मेरे दिल'

११. इन्द्रधनु ..., महानगर : रात, ४८ — 'टप-थब, टप्-थब नामहीन आयेगा'

१२. हरी घास पर क्षण भर, सवेरे सवेरे, ३९ — 'अड्डाता है कागा कांय कांय'

१३. वही, पावस-प्रात-शिलङ् ३४ — 'काक में ... बेसुर हाक्'

१४. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — 'पेड़ों का अररा कर टूट टूट कर गिरना'

१५. हरी घास पर क्षण भर, दीप थे अगणित, २१ 'झन्नाते रहें या मूक हों सब शब्द'

ता-थैया [1]। घंटियां टुन टुन [2] करती टुनटुनाती [3] हैं। जीभ लपलपाती [4] है।

समग्रत:, कवि अज्ञेय की ध्वनि-चेतना समृद्ध कही जा सकती है।

---

१. इत्यलम्, माघ-फागुन-चैत, २१० — ' नाचे ता-थैया '

२. आंगन के पार द्वार, असाध्य वीणा, ८१ — ' गोधूली की लघु टुन-टुन '

३. हरी घास पर क्षण भर, दीप थे अगणित, २० — ' घंटियां टुनटुनाती थीं '

४. इत्यलम्, पार्क की बेंच, १६९ — ' लपलपाती जीभ '

श्री नरेन्द्र शर्मा

संज्ञा

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ विशिष्ट संज्ञाएं ये हैं—

अल्पना [1], घरघुसनेपन [2], तीमन [3], पसारा [4], बासा [5], भरन [6], मेरापन [7] और वासा [8]।

---

१. (क) अग्निशस्य, क्यों न ?, ५७ — 'आँकती थी हृत्कमल पर अल्पना में'

(ख) मिट्टी और फूल, छाया-छन की रात, ३२ 'कौन अल्पना काढ़ रही है विस्मित भू पर'

२. हंसमाला, हिन्दू मुसलमान, १८ — 'घरघुसनेपन का रहा रोग'

३. मिट्टी और फूल, गांव की धरती, २४ — 'तीमन को साग'

४. कदली-वन, कच्चा धागा, ३८ — 'फिर डाल पसारा पल छिन का'

५. प्रवासी के गीत, गीत ३९, ७० — 'भूतों का बासा मैं मरघट का पीपल'

६. (क) हंसमाला, यौवन के आँसू, ५३ 'सावन भादों की भरी भरन से लगते'

(ख) मिट्टी और फूल, यहां की बरसात, ४० 'भरी भरन उतरी सिर पर से'

७. अग्निशस्य, पत्नी के प्रति, २३ — 'तुम ने मुझे दिया मेरापन मेरी पत्नी बन'

८. वही, अमिट कहानी, १०८ — 'दीपक क्षणभंगुर अमर ज्योति का बासा'

'**अल्पना**'[1] (स्त्री०) बंगला भाषा में फर्श पर बेल बूटे बनाने की क घरेलू कला को कहते हैं। गुजरात में इसी को सथिया, महाराष्ट्र में रंगोली, दक्षिण ारत में कोलम् तथा अन्यत्र 'साँझी' भी कहते हैं।

हिंदी मे '**घरघुसनापन**' (अं० 'नॉस्टेलजिया) का अर्थ है — 'घर में ही धिक पड़े रहने की प्रवृत्ति'। घर-घुमना और घर-घुसा वि० शब्द है।

पूरबी बोली में '**तीमन**' (या तीअन स्त्री०, सं० तृणान्न) का अर्थ है — बनी हुई तरकारी या उसका रस।'

'**पसारा**' पुं० (स० प्रसार) प्राय: पद्य मे ही प्रयुक्त होता है अर्थ 'फैलाव।'

'**बासा**'[2] और 'वासा' (सं० निवास) पु० शब्द 'डेरा, निवास-स्थान, बसेरा' आदि अर्थों में हैं।

'**भरन**'[3] स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'ऐसी भरपूर वर्षा जिससे खेत आदि अच्छी तरह भर जायें'।

'**मेरापन**' भाववाचक संज्ञा है। अर्थ — 'निजत्व'। 'पन' हिंदी प्रत्यय है।

संज्ञा-विकार

कुछ संज्ञा-विकार द्रष्टव्य हैं—

अगन[4] (अग्नि), अलखनंदा[5] (अलकनदा), आग[6] (शा), उच्छवास[7]

---

१. तुल० — 'कला धरा पर रचे अल्पना' (कवि पंत)

२. तुल० — 'मानस पंखि लेहि फिर बासा' —(जायसी)

३. तुल० (i) आने से उसके दिल का मेरे खिल गया चमन,
ऐशो तरब के अब्र की पड़ने लगी भरन। —(नज़ीर)
(ii) कहावत — 'सावन की झड़ी, भादों की भरन'

४. कदली-वन, अगन, ४३ — 'जग जिसको निर्धूम अगन कहता है'

५. कामिनी, अतिथि, २६ — 'अलखनंदा के किनारे कुटी'

६. (क) अग्निशस्य, गीत १३, ३४ — 'हो मिलन की आश जिसको'
(ख) वही, गीत १३, ३४ — 'किंतु मेरी आश के संग'

७. प्रवासी के गीत, गीत ४७, ८२ — 'उच्छवास सदृश अब पल पल पर'

(च्छ्), करता [1] (कर्त्ता), कर्धनी [2] (करधनी), कामिनि [3] (नी), किरन [4] (किरण), खन खन [5] (क्षण क्षण), गन [6] (ण), गलबय्यां [7] (गलबहियां), गुन [8] (ण), गुलमोर [9] (गुलमुहर), घन्नाद [10] (घननाद), चित [11] (त्त), जगत [12] (त्), तेजस [13] (स्),

---

१. पलाश-वन, सुख दुख, ५४ — ' तू अपना हरता-करता है '
२. कामिनी, अतिथि, १९ — ' वह रजत कर-कर्धनी की रेख '
३. कदली-वन, मरुथल की मेंहदी, ८९ — ' मारु उसकी कामिनि '
४. (क) कदली-वन, चमेली, ६० — ' रूप-किरन से है मुखरित मग '
(ख) अग्निशस्य, सन्ध्यात ८८ — ' धूलिकण में किरन-कन ने '
५ प्रवासी के गीत, गीत ५१, ९१ — ' खन खन खेल खिलाती छलना '
६. (क) प्रभात फेरी, कर्णफूल, ६१ — ' प्रिय के गुन-गन गाने '
(ख) वही, लहरी, १५३ — ' रवि, शशि, उडुगन '
७. पलाश-वन, हुआ न तेरा ही कोई, ४९ — ' लहरें गलबय्यां डाले बलखातीं '
८ (क) प्रभात-फेरी, कर्णफूल, ६१ — ' प्रिय के गुन '
(ख) वही, भिखारिन, १२३ — ' उसी के प्रतिपल गुन गाती '
९. अग्निशस्य, मेरी याद, ३ — ' सोने की गुलमोर लोचनों मे '
१०. (क) प्रभात फेरी, मेरा वैभव, ६ ' मारुत जब घन्नाद सदृश भरता है स्वर '
(ख) अग्निशस्य, निराला जी के प्रति, १६ — ' घन्नाद स्वर-संगीत '
११. पलाश वन, कौमानी, ३४ — ' नभ ज्यों योगी का निर्मल चित '
१२. (क) अग्निशस्य, गीत २३, ४७ — ' क्या जगत मे '
(ख) वही, आग्रह, २८ — ' मिट्टी के जगत में '
(ग) पलाश-वन, चादनी में भ्रम, ९ — ' सोते जगत मे '
१३. (क) अग्निशस्य, होली, ९८ — ' शर भर भर तेजस का तूणीर '
(ख) कामिनी, फूल और पत्र, २९ — ' वह प्रथम तेजस बिन्दु '

दर्पन [1] (ण), दामिनि [2] (नी), दारुयौसत [3] (योषित्), नदि [4] (दी), नय्या [5] (नैया), नारि [6] (री) निश्वास [7] (निःश्वास), नीलमा [8] (नीलिमा). पट बिजना [9] (नी), परतीत [10] (प्रतीति), पुंछल [11] (पुच्छल), प्रणयिनि [12] (नी) प्राणि [13] (णी), प्रान [14] (ण), बिपत [15] (विपत्ति), बुद्बुद् [16] (बुद्बुद) भागीरथि [17]

---

१. (क) कामिनी, निशि-वासर, ५३ — ' ओ मेरे छोटे से **दर्पन** '

(ख) कदली-वन, राम कहानी, ५३ — ' मेरी छाया **दर्पन** मे '

२. (क) प्रभात फेरी, तुम, ४४ — ' सहसा **दामिनि**-सी हंस '

(ख) कदली-वन, मरुथल की मेहदी, ८९ — ' बिन बादर की **दामिनि** '

३. अग्निशस्य, विनय, ३० — ' **दारुयौसत** यही है '

४. अग्निशस्य, अवसान और आरोह, १४ — ' नदि-नद-समुद्रों को '

५. (क) प्रवासी के गीत, गीत १३, ३३ ' श्वास के पतवार **नय्या** देह की है '

(ख) द्रौपदी, सर्ग ५, ५० — ' नारी नर की **नय्या** '

६. (क) हंसमाला, हंसमाला, ११ — ' देख ले अब **नारि**-नर '

(ख) द्रौपदी, सर्ग ५, ४२ — ' दिया **नारि** का मानस '

७. (क) प्रवासी के गीत, गीत ७, २३ — ' **निश्वास** मे '

(ख) अग्निशस्य, सूरज और भूरज, ६८ — ' प्राणवायु **निश्वास** ईश की '

८. कामिनी, निशि-वासर, ६१ — ' उस धुली **नीलमा** मे '

९. हंसमाला, हृदय होम, ५४ — ' **पट बिजना** से चांद-सितारे '

१०. प्रवासी के गीत, गीत ५१, ९१ — ' अपनी भी **परतीत** नहीं जब '

११. मिट्टी और फूल, युग और मै, ६२ — ' छूट रहे **पुंछल** तारे '

१२. पलाश-वन, वासना की देह, ६९ — ' दे चुकी **प्रणयिनि** परीक्षा '

१३. हंसमाला, प्राण आज, ६६ — ' **प्राणि** का जीवन अलम् '

१४. (क) कदली-वन, कच्चा धागा, ३७ — ' है जिस पंछी का नाम **प्रान** '

(ख) वही, औरंगजेब की कब्र, ८७ — ' बिखरी पड़ी है **प्रान** की जंजीर '

१५. हंसमाला, चेतावनी, ४१ — ' मिटे **बिपत** के बादल काले '

१६. प्रभात फेरी, रूढ़िवाद , १६ — ' ज्यों क्षण-भंगुर **बुद्बुद्** '

१७. मिट्टी और फूल, संकट-काल, ७५ — ' प्रगति-रथ **भागीरथि** का '

(थी), मनी [1] (मणि), मरम [2] (मर्म), मानसर [3] (मानस सर), मानसरोवर [4] (मानस सरोवर), यमुन [5] (ना), याज्ञसेनि [6] (नी), रतन [7] (रत्न), रोहिणि [8] (णी), वक्षस्थल [9] (वक्ष:स्थल), वरण [10], वरन [11] (वर्ण), बातास [12] (बतास), विद्युन [13] (त्), विद्युति [14] (त्), विद्वान [15] (न्) '

---

१. कदली-वन, वर्षा का तूफान, ५९ — ' मरकत-मनी-समान ,
२. प्रवासी के गीत, गीत १४, ३५ — ' मेरे उर के छिपे मरम '
३. (क) अग्निशस्य, संध्यांत, ८८ — ' शशि-विचुंबित मानसर को '
(ख) हंसमाला, हंसमाला, ११ — ' बुलाता है तुझे फिर मानसर '
(ग) कामिनी, अतिथि, १५ ' मानसर का श्याम सुधि-जलजात '
४. कदली वन, निर्वासित, ३६ — ' कहा कि तज दे मानसरोवर '
५. वही, किस किनारे ?, ३० —' मिलन तन-यमुन मन की जाह्नवी का '
६ द्रौपदी, परि० १, ९ — ' कह रही याज्ञसेनि पांचाली '
७. हंसमाला, वह साथी, २८ — ' मन था वह इस्पात, रतन '
८. द्रौपदी, परि० ४, ३७ — ' बोझिल मंद मे रोहिणि-शकट '
९. (क) मिट्टी और फूल, एक रात, ३१ — ' दूधिया लहरों का वक्षस्थल '
(ख) प्रभात फेरी, आज और कल, ४१ — ' मिलने जब वक्षस्थल '
(ग) वही, आज न सोने दूंगी बालम, १०९ — ' निज वक्षस्थल में '
१०. प्रवासी के गीत, गीत ३४, ६० — ' तू हो गई मरकतवरण '
११. पलाश वन, कौसानी ३१ — ' नव धान-वरन परिधान पहन '
१२. कामिनी, निशिवासर, ६३ — ' सौरभ-भरी बातास ... मधुर बातास ... '
१३. (क) प्रभात फेरी, सतत प्रतीक्षा, ९४ — ' विद्युत से हँस कर '
(ख) वही, चादी की तरी, २४ — ' विद्युत-स्फार सी है '
१४. कदली-वन, बादल-दल, ६३ ' विद्युति की असि '
१५. अग्निशस्य, युगनेता, ४ — ' पश्चिम के विद्वान '

शक्तिमान [1] (न्), शुभाशीष [2], शुभाषीस [3] (शिस् या शिष्), श्रवन [4] (ण), संवत [5] (त् या द्), सनेह [6] (स्नेह), सपन [7] (स्वप्न या सपना), स्वारथ [8] (स्वार्थ) और हनुमत [9] (त्) ।

विशेषण

कतिपय विशेषण-प्रयोग भी द्रष्टव्य हैं —

अधरायी [10], अनंती [11], अन्धाकार [12], इन्दीवरी [13], इन्सानी [14], चौमुख [15],

---

१ (क) प्रभात फेरी. प्रभात फेरी, २ — ' शक्तिमान स्वामी के वाहक '

(ख) पृष्ठ वही — ' शक्तिमान हो शीश नवाते '

२. पलाश-वन, अल्मोड़े की युवती, २८ — ' फैला है बन कर शुभाशीष '

३. प्रभात फेरी, प्रयाग, २३ — ' हे शुभाषीस '

४. (क) वही, प्रथम चुम्बन, ४३ — ' जब उठ प्रदीप श्रवन में '

(ख) वही, वर्षा-श्री. ११२ — ' ले सागर-तट में मधुर श्रवन '

(ग) वही, शैल कुमारी, ११९ — ' सुख-गीत श्रवन में लहराए '

५ कदली-वन, कणिकाए, ९३ — ' मिट्टी है संवत सुख रस मद '

६. अग्नि शस्य, पत्नी के प्रति, २८, — ' बरसा सनेह-केसर '

७. प्रवासी के गीत. गीत ४.१७ — ' आती सपन बन '

८ हंसमाला, वह साथी. २९ — ' जो मेहनत स्वारथ की चेरी '

९ द्रौपदी, परि० ४, ३५ — ' भेंट हनुमत से हुई जब '

१०. वही, परि० ५, ४२ — ' अधरायी धूमायित धरती '

११ हंसमाला, सुंदर-असुंदर, ५७ — ' अनंती बरती लिरिक या तराने '

१२. प्रभात फेरी, चिता, १३७ — ' बढ़ रहा है नभ अन्धाकार '

१३ द्रौपदी, परि० ३, २४ — ' देख ली इन्दीवरी छवि '

१४. हंसमाला, वह साथी, २८ ' इन्सानी दिल की तस्वीर ... इन्सानी दिल फूल '

१५ (क) कामिनी, अतिथि, १८ — ' भीतर बार चौमुख दीप '

(ख) कामिनी, निशि-वासर, ५९ — ' चौमुख दिवला बार '

धनुषई [1], परकाले [2], शुक्लपाखी [3], हरितद्युत [4], और हल्दिया [5] ।

कविताओं में ' अंधर ' पुं० शब्द ' अंधेरा ' अर्थ में चलता है । उसी में ' आई ' प्रत्यय जोड़ कर ' अंधरायी ' वि० बना है । अर्थ — ' अंधेरी, धुंधली ' । अन्य पर्याय अंधारी, अंधियारी, अंधेरी हैं ।

' अनंती ' वि० का अर्थ है ' जिस का अंत न हो । सस्कृत में ' अनत ' वि० पुं० का स्त्री० रूप ' अनता ' चलता है । उदा० ' हरि अनंत हरि कथा अनंता ' । ' अनंता ' शब्द उसी अर्थ में हिंदी का ' ई ' प्रत्यय जोड़ कर बनाया गया है ।

' अंधाकार ' वि० (हि० अंध+आकार) भी नया है और ' गोलाकार ', वर्तुलाकार आदि के अनुकरण पर घडा गया जान पड़ता है । यहां अर्थ है — ' अंधे को दिखाई देने वाले अंधेरे की भाति गहरा ' (तम) ।

' इन्दीवरी ' और इंसानी दोनो में ' ई ' हिं० प्रत्यय सम्बंधार्थक है ।

' चौमुख ' वि० शब्द यहां ' चौमुखा ' (चारों ओर मुख रखने वाला) अर्थ मे है ।

' धनुषई ' वि० शब्द में ' अई ' प्रत्यय भी नया है यथा फालसा से ' फालसई ' (अंत्य ' आ ' स्वर के लोप से) । यहां अर्थ है ' इन्द्रधनुष के रंग का ' ।

' परकाले ' वि० का यहां अर्थ है — ' विकट, भयानक, घने ' । इस रूप मे यह अर्थ ' आफ़त का परकाला ' हिंदी मुहावरे से प्रभावित जान पड़ता है जिसका

---

१. मिट्टी और फूल, पावस की सांझ, ४५ ' धनुषई चीर लहराती सध्या पावस की '

२. हंसमाला, चेतावनी, ४० — ' लदन पर घिरे मेघ परकाले '

३. मिट्टी और फूल, द्वादशी का इंदु, ७२ ' पूर्णता की ओर उन्मुख शुक्लपाखी चांद '

४. प्रभात फेरी, शैल कुमारी, ११९ — ' अब सजा हरितद्युत स्वप्न-देश '

५. पलाश-वन, साथी, १४ — ' हल्के रंग का हल्दिया चांद '

अर्थ है — 'वह (व्यक्ति) जो बड़े बड़े **विकट** काम कर सकता हो'। फ़ारसी में 'पर्काल:'[1] पुं० के अर्थ हैं अंश, खण्ड, चिनगारी, पतंगा। वहां 'पर्कालए आतश'[2] बहुत धूर्त व्यक्ति को कहते हैं।

'**शुक्लपाखी**' वि० का अर्थ है — 'शुक्ल पक्ष का' (चांद)।

'**हरित्द्युत**'[3] वि० का यहां अर्थ है 'हरा, हरिताभ'।

'**हल्दिया**' वि० में भी 'इया' प्रत्यय देखने योग्य है। 'हल्दी' संज्ञा में यह प्रत्यय जुड़ा है। संज्ञा से विशेषण बनाते समय इस प्रत्यय का बहुत कम प्रयोग होता है। 'हल्दिया' वि० शब्द नवीन ही है।

विशेषण-विकार

कुछ विशेषण-विकार ये हैं —

अन्याई[4] (अन्यायी), अपबीती[5] (आप), अवतीरण[6] (अवतीर्ण), उज्वल[7] (ज्ज), कृपाकांक्षिणि[8] (णी), गोरसधारिणि[9] (णी),

---

१. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, 'मद्दाह', दे० 'पर्काल:'।

२. कोश वही, दे० 'पर्कालए आतश'।

३. तुल० — मेरी भव बाधा हरो राधा नागरी सोइ
जा तन की झाईं परै स्याम **हरित दुति** होइ
— (बिहारी सतसई)

४. प्रभात फेरी, शिव-स्तुति, १३२ — '**अन्याई** का उर झुलसा दें'

५. मिट्टी और फूल, चुनौती, ६८ — 'तो मैं **अपबीती** बात कहूं'

६. प्रभात फेरी, भावी सन्तति, १० — 'शंभु के वह्निनयन से हम **अवतीरण**'

७. (क) प्रभात फेरी, सपने मे, ५९ — '**उज्वल** नक्षत्र दीपावलियां,
(ख) वही, चमेली, ६० — 'चद्रकला से है **उज्वलतर**'
(ग) वही, कगाल, १२८ — 'रग-रंजित **उज्वल** जाल'

८. द्रौपदी, परि० ३, २४ — '**कृपाकांक्षिणि** उभय'

९. अग्निशस्य, होली, ९९ — '**गोरसधारिणि** धरा'

गौरववान [1] (न्), दिगंतवासिनि [2] (नी), निदारे [3] (निंदारे या निंदासे), वीन [4] (ण), बुद्धिजीव [5] (वी), भस्मभूत [6] (भस्मीभूत), मधुवर्षिणि [7] णी), महत [8] (त्), महान [9] (न्), मानिनि [10] (नी), मायाविन [11] (नी), ुक्तहासिनि [12] (नी), मूर्तिमान [13] (न्),

---

१. प्रभात फेरी, चिता, १३५ — 'भाग्य का प्यारा **गौरववान**'

२. प्रवासी के गीत, गीत ४६, ८१ — '**दिगंतवासिनि** समीर'

३. (क) प्रभात फेरी, आज न सोने दूंगी बालम, १०७ 'मेरे अधिक **निदारे** बालम'

(ख) वही, वही, १०९ — 'अलि-से रैन-**निदारे** बालम'

(ग) कामिनी, निशि-वासर, ५२ — 'रात के **निदारे**'

४. कदली-वन, बादल-दल, ६३ — 'रस-पीन राग-गायक **प्रवीन**'

५. मिट्टी और फूल, गतिरुद्ध, ५२ — 'मैं **बुद्धिजीव** अबुद्ध हूं'

६. (क) प्रभात फेरी, भावी सन्तति, ९ — 'वैं व को हर **भस्मभूत कर**'

(ख) पलाश-वन, ज्येष्ठ का मध्याह्न, ७० — '**भस्मभूत** सब को करती'

७. अग्निशस्य, चातक मनुज, ८१ — 'ज्वाला वह **मधुवर्षिणि**'

८. अग्निशस्य, विश्वोदधि, ५९ — 'हुए **महत** से महत्तर'

९. प्रभात फेरी, यौवन, ११७ — 'जीवन का शुभ सत्य **महान**'

१०. (क) वही, तुम, ४४ — '**मानिनि** बन सुख की शय्या पर'

(ख) वही, धीरज, १०५ — 'मैं भी **मानिनि** बन जाऊंगी'

११. (क) वही, पूनों की रात, ८४ — '**मायाविन** आधी रात'

(ख) वही, गीत १४,३६ — 'थी वह **मायाविन** मृगी कौन'

(ग) पृष्ठ वही — 'मेरी वह **मायाविन** न रही'

(घ) वही, वर्षा-श्री, ११३ — '**मायाविन** यामिनी बन आई'

१२. मिट्टी और फूल, एक नारी के प्रति, ८३ — 'छिटकाती चली वह **मुक्तहासिनि**'

१३. (क) कदली-वन, कदली-दल, ३ — 'अभय-सा **मूर्तिमान** वरदान'

(ख) प्रभात फेरी, रूढ़िवाद, १६ — 'यह **मूर्तिमान** जाग्रत मसान'

(ग) वही, प्रयाग, २१ — 'उस शांति-स्तंभ मे **मूर्तिमान**'

मूल्यवान [१] (न्), रुग्ध [२] (रुद्ध), विमोहिनि [३] (नी), विराट [४] (ट्), विशद् [५] विषद् [६] (विशद), शुभाकांक्षिणि [७] (णी) और हिरण्यमयि [८] (यी) ।

विशेषण-विपर्यय

निम्नलिखित उदाहरणों का सम्बन्ध शब्द की लक्षणा शक्ति से भी हो सकता है। ऐसे कुछ विशेषण-विपर्यय दर्शनीय हैं—

आकांक्षी [९] (भुजाएं), इस्पाती [१०] (नभ), क्षिप्रपाखी [११] (हृदय), तूफानी [१२] (क्षण), भिखारी [१३] (नैना), मिठबोली [१४] (वातास), मैदानी [१५] (मन), मोमी [१६] (मोती), सितपख [१७] (भाषा)

---

१. पलाश-वन, अपने से, ६० — ' तो मूल्यवान हो तेरी मिट्टी '
२. प्रभात फेरी, स्वप्न, ५५ — ' पर था उत्कंठित कंठ रुग्ध '
३. अग्निशस्य, भारत की नारी, ६७ — ' फिर भुवन-विमोहिनि माया '
४. हंसमाला, तिनके और तूफ़ान, २४ — ' वह जिस विराट का अंश '
५. प्रभात फेरी, मेरा वैभव, ६ — ' उस विशद् राज्य के खंड खंड '
६. (क) प्रभात फेरी, गर्वीला, ५० — ' साम्राज्य तुम्हारा विषद् '

   (ख) वही, वही, ५१ — ' है सौर-राज्य से विषद् '

७. द्रौपदी, परि० ३, २४ — ' शुभाकांक्षिणि कृपाकांक्षिणि '
८. अग्निशस्य, १५ अगस्त १९४७, ४८ — ' थी हिरण्यमयि वसुधरा '
९. प्रभात फेरी, जरा-चिंतन, १११ — ' भुजाएं आकांक्षी सुविशाल '
१०. मिट्टी और फूल, युग और मैं, ६२ — ' इस्पाती नभ पर लिखते जो '
११. वही, द्वादशी का इंदु, ७२ — ' क्षिप्रपांखी हृदय ने भी तोड़ डाला बांध '
१२. पलाश-वन, इच्छाएं ५२ — ' कुछ तूफ़ानी क्षण भी आते '
१३. कदली-वन, किस किनारे ?, ३० — ' दो नैना भिखारी कहां होंगे ? '
१४. कामिनी, वासर-मास, ६३ — ' मिठबोली बनी सौरभ-भरी वातास '
१५. मिट्टी और फूल, पहाड़ की याद, ५८ — ' सीधा सादा मैदानी मन शरमाया '
१६. पलाश-वन, मन समझाने की बात, ३९ — ' ममता का वह मोमी मोती '
१७. हंसमाला, हंसमाला, १२ — ' शांति की सितपंख भाषा '

क्रिया

कुछ विशिष्ट क्रियाएं ये हैं --

डाकती [1], दिप [2], धौरा [3], फिकते [4], रुप [5]।

'डाकतीं' मे 'डाकना' (स० डक्क या बंगला डाकिबा) स० क्रि० है। 'दीपना' या 'दिपना' अ० क्रि० यहा 'प्रकाशित होना' अर्थ में है। 'धौराना' क्रि० धौरा वि० शब्द से बनी है —। अर्थ 'धवल होना, उजला होना'। 'फिकते' वस्तुत: 'फेंकना' स० क्रि० का अ० रूप है। 'रुपना' भी 'रोपना' (अर्थ: लगाना, गाड़ना, जमाना आदि) स० क्रि० का अ० रूप है। यहां अर्थ है गड़ना, लगना, अड़ जाना।

क्रिया-विकार

इस के उदाहरण गिने चुने हैं —

उट्ठा [6] (उठा), गूदी [7] (गूंधी) और छेको [8] (छेकी)।

उर्दू-क्रियाएं

यथा जला किया [9], नाचा किया [10] और रोया किया [11]। ये संयुक्त

---

१. कामिनी, अतिथि, २१ — 'उड़ती जा रही डाकतीं वे'
२. मिट्टी और फूल, अकेलेपन, ४९ — 'दिप रहा है कनक चम्पक'
३. कामिनी, वासर-मास, ६६ — 'मेघ अब धौरा गये'
४. हंसमाला, क्षुधा-सिंधु, ३३ 'माताओं के हाथों पथ में शिशुओं को फिकते देखा'
५. मिट्टी और फूल, सकट-काल, ७५ — 'रुप न जाये पथ मे पत्थर'
६. अग्निशस्य, स्वर्णशस्य, १९ — 'करुणा से उट्ठा पसीज'
७. कदली-वन, घड़ा, २४ — 'पांवो ने गूदी थी मिट्टी'
८. वही, गीत सुनाओ, ५ — 'बीच बीच मे छेको क्यारी'
९. हंसमाला, हृदय-होम, ५४ — 'बिना ज्योति के जला किया मैं'
१०. मिट्टी और फूल, नव आभास, ६९ — 'नाच नाचा किया छायावत्'
११. पलाश-वन, साथी, १५ — 'ओसों में बरसा औ रोया किया चाँद'

क्रियाएं उर्दू मे चलती है। हिंदी में ये क्रियाएं उर्दू-शैली का ही प्रभाव प्रदर्शित करती है।

उपसर्ग

नरेंद्र जी ने भी अ, अन् (या अन), निर, प्र, बे (फ़ा०) और सु उपसर्गों के प्रति अपना मोह-भाव प्रकट किया है। क्रमशः उदाहरण देखें —

अकाम, अकामी, अकृत, अदेखे, अप्रकेत, अप्रज्ञात, अबोल, अयुद्ध, अविचार, अविचारी।

अनगाए, अनचाहे, अनदेखा, अनदेखे, अनदेखों, अनसुना, अनसुनी, अनासक्ति, अनिच्छा, अनीह और अनुदार।

निरपराध, निरुद्देश्य, निर्गुनी, निर्बोध, निर्भ्रांत, निर्वसन इत्यादि।

प्रकाम, प्रकेत, प्रतनु, प्रवचित, प्रशांत, प्रस्वेदग्रस्त, प्रस्वेदित और प्रहसित।

फा० का 'बे' उपसर्ग देखे — बेकल, बेचारी, बेजबान, बेपानी, बेफ़िक्रे, बेबस, बेबसी, बेमल, बेरहम और बेसुध।

'सु' उपसर्ग इन शब्दों मे है — सुकविता, सुगति, सुमगला, सुरेख, सुलक्ष्मी, सुवक्ष, सुविशाल, सुस्मिति, सुहास इत्यादि।

लिंग

हिंदी में प्रायः स्त्री० माने जाने वाले शब्दो को कवि ने पुं० लिखा है यथा दलदल [1] पतवार [2], पदचाप [3] और पलक [4]। ये सभी व्रजभाषा में भी प्रायः

---

१. मिट्टी और फल, हिरना-हिरनी, ६५ — 'आया एक सामने दलदल'

२. कदली-वन, निर्वासित, ३६ 'छीन लिया दाता क्यों तुम ने मेरे हाथों से पतवार'

३. प्रवासी के गीत, गीत ४०, ७२ — 'सुन कर अपने ही पद-चाप'

४. (क) वही, गीत ४, १७ — 'कभी भीगे पलक जब'

(ख) वही, गीत ९, २७ — 'क्षण भर मुंदते जब थके पलक'

स्त्री० ही रहते हैं।

संस्कृत में 'दलदल' का समानार्थी 'कच्छ' शब्द अवश्य पुं०, नपुं० उभय रूपों में है। उसी के प्रभाव से हिं० 'दलदल' पुं० हो गया है। संस्कृत में 'पत्रवाल' या 'पत्रबाल' (जिस से 'पवार' तद्भव शब्द का सम्बंध है) अवश्य पुं० शब्द है।

फारसी का 'पलक' स्त्री० शब्द हिंदी और व्रज० मे भी स्त्री० ही रहता है।

इन के विपरीत हिंदी में प्राय: पुं० रहने वाले इन शब्दों को कवि ने स्त्री० में रखा है — अभिलाष [1], अमृत [2], कल [3], कीच [4], कुठार [5], खेवा [6], गिरि [7], गुनिया [8], दरिया [9], पिक [10], प्राचीर [11], फाग [12],

---

१. कदली-वन, नवयुग, ८१ — 'उन्हे नई अभिलाष चाहिए'
२. हंसमाला, तुम से, ६७ — 'रमी रही ज्यों अमृत सोम मे'
३. प्रभात फेरी, आज और कल, ४१ — 'कल जाने कैसी होगी कल'
४. (क) अग्निशस्य, अनुनय, २० — 'चेतना की कीच'

(ख) मिट्टी और फूल, रात और प्रभात, ८० — 'गलियारे मे हुई कीच'

५. कदली-वन, पेड़, ८२ — 'काल की कुठार कठिन'
६. अग्निशस्य, अवसान और आरोह, १४ — 'समुद्रों को तरेगी स्नेह-खेवा'
७. कामिनी, वासर-मास, ६६ — 'गिरि भी हुई घनश्याम'
८. मिट्टी और फूल, युग और मैं, ६३ — 'गर्क हो रही वह गुनिया'
९. हंसमाला, स्वागत वार्ता, ३५ — 'उथली टेढ़ी मेढ़ी दरिया'
१०. (क) प्रभात फेरी, प्रथम चुम्बन, ४३ — 'प्राणों की पिक कुहुकी'

(ख) वही, कोयल, ६३ — 'भर लाई पिक मधु की प्याली'

(ग) प्रवासी के गीत, गीत २९, ५३ — 'बोली पिक'

(घ) वही, गीत ३७, ६६ — 'मेरी पिक के'

(ङ) वही, गीत ४६, ८१ — 'पिक कुहुकेगी'

११. वही, नव आभास, ६९ — 'बेध डाली तिमिर की प्राचीर'
१२. पलाश-वन, पलाश, १ — 'लो चली फाग'

वात [1], समीर [2] और हुंकार [3]।

इन में जो शब्द संस्कृत, हिं० और व्रज० मे प्राय: पुं० ही है वे ये हैं— अभिलाष, कुठार, गिरि, पिक, वात, समीर, हुंकार। यहां अभिप्रत अर्थों में अमृत और प्राचीर संस्कृत में नपुं०, हिं० और व्रज० मे पुं० हैं। दरिया (उच्चारण दर्या) पुं० शब्द फारसी का है। शेष प्राय: हिं० और व्रज० में पुं० ही हैं।

वचन

बहुवचनों के स्थान पर कवि ने एकवचनों का ही प्रयोग किया है यथा कथा [4] कली [5], दिशा [6], पंख [7] और लपट [8]।

कहीं कहीं अनेकों [9] बहु० रूप भी विशेषण के रूप में है जो कि व्याकरण-सम्मत नहीं है।

---

१. प्रभात फेरी, पूनों की रात, ८५ — ' कहीं सोई है चंचल वात '

२. वही, प्रयाग, २१ — ' मधु गंध-भरी बहती समीर '

३. (क) हंसमाला, कौन सुनेगा ?, ३१ — ' यहां हुंकार गरजती '

(ख) वही, आदेश, ४७ — ' सुनो हिंदुस्तां की हुंकार '

४ पलाश-वन, मन समझाने की बात, ४० —' व्यथा की कथा बहुत है '

५. प्रवासी के गीत, गीत ४७, ८३ — ' सब कली झरी '

६. (क) कदली-वन, औरंगजेब की कब्र, ८७— ' दस दिशा में दृष्टि दौड़ा '

(ख) वही, कणिकाएं, ९३ — ' चेरी हैं चार दिशा '

७. वही, कच्चा धागा, ३७ — ' वह पांच पंख का पंछी है '

८. (क) हंसमाला, हृदय-होम, ५४ — ' आग लगी दो लपट दे गई '

(ख) प्रवासी के गीत, गीत १८, ४२ — ' लपट उट्ठी '

९. अग्निशस्य, गृद्ध लगे मंडराने, १२५ — ' बम के संग भाग्य अनेकों फूटें '

संधि

कुछ दीर्घ स्वर संधियां ये हैं—चरणाम्बुज, तिमिरांचल, पुलिनाश्रित, मधुराभिषेक, सत्याकर्षण, स्नेहानुराग, स्वप्नागंतुक इत्यादि।

गुण स्वर संधियों के नमूने देखें— अमरत्वोन्मुख, अरुणोदय, गर्वोन्नत, नयनोत्पल, नयनोन्मीलन, मन्त्रोच्चारण, मदोन्मत्त रक्तोत्पल, हर्षोन्मत्त

कुछ विसर्ग संधियां देखिये—अन्तर्शतदल, अन्तर्शोध, तेजोमय, निश्चल, निष्प्रभ, निस्तल, निरस य, निस्सारता, निस्सीम, मनोज्योति, मनोमुक्ति।

'मनोकामना' संधि भी है जिसे प० किशोरीदास वाजपेयी हिन्दी की प्रकृति के अनुसार शुद्ध मानते है। संस्कृत के संधि-नियमों के अनुसार यह संधि अशुद्ध है।

'विद्युज्ज्योति' जैसी व्यंजन संधियां बहुत कम हैं।

समास

कुछ संबंध तत्पुरुष समास ये हैं—

ऋण-भार, गौरव-मद, धन-मद, नभ-तारक, पद-पूजन, स्वाति-बूंद इत्यादि।

कुछ करण तत्पुरुष समास देखें—कल्पना-निर्मित, चंदन-चर्चित, त्याग-तप्त, मधुभीत और सुख-विह्वल।

द्वन्द्व समास भी हैं यथा अश्रु-हास, कलि-किसलय, घर-आंगन, धूप-छांह, शांति-क्रांति, सांझ-सवेरे।

कुछ कर्मधारय समास भी द्रष्टव्य हैं—

आनंद-बीन, उर-शतदल, कञ्चन-तन, चुम्बन-मणि, जीवन-रण, नयन-झरोखों, नयन-नौकाएं, नयन-प्याले, नयन-भिखारी, पाषाण-करों, मन-मधुकर, मन-मुकुल, समय-हंस, सुधि-सारिका और स्वप्न-वणिक। इन में उपमान पूर्व और उत्तर दोनों पदों में हैं।

'स' शब्द जोड़ कर बनने वाले कुछ अव्ययीभाव समास ये हैं—सकरुण,

सगर्व, सतृष्ण, सदेह, सलील, सस्मिता, सालस, सोत्साह, सोभार, सोल्लास इत्यादि।

शब्द-लोप

'पर'[1] और 'में'[2] शब्द अनेक वाक्यों में लुप्त से जान पड़ते हैं। अधिकांशतः ये लोप पद्यानुरूप ही है।

अन्य शब्द-विकार

कुछ विशिष्ट शब्द-विकार, जो शेष रह गये हैं इस प्रकार हैं —

अलम[3] (म्), अर्हनिशि[4] (अर्हनिश), चतुर्दिक[5] (क्), दरवज्जे[6] (दरवाजे), ना[7] (न), पृथक[8] (क्) मुझी[9] (मुझ ही)।

---

१. (क) प्रवासी के गीत, गीत ७ २८ — 'तुम्हें किस आसन (पर) बिठाऊं?'
(ख) पलाश वन, पलाश, १ — 'हर फुनगी (पर) लाल फूल दहके'

२. कामिनी, अतिथि १४ — 'बिना दो इस देश (में) जीवन शेष'

३. हंसमाला, बुद्धि-अहंकार, १९ — 'अलम बस दो दिन चहल पहल के'

४. प्रभात फेरी, बबूल, १२ — 'मै हूं एक समान अर्हनिशि'

५. (क) अग्निशस्य, ८८ — 'पर चतुर्दिक विचरती मधु गंध'
(ख) कदली वन, ज्योति और तम, १९ — 'चतुर्दिक जाज्वल्य जागृति'

६. मिट्टी और फूल, पावस की सांझ, ४५ — 'महराबी मानिक दरवज्जे'

७. (क) प्रभात फेरी, अलि दल, ९६ — 'गर्जन ना, सखि गुंजन लाए'
(ख) वही, वही, वही — 'पावस ना वसंत भर लाये'

८. प्रवासी के गीत, गीत १९, ४३ — 'छाया प्रकाश से पृथक-पास हम'

९. (क) पलाश-वन, आषाढ़, ६६ — 'लिपट लो गई मुझी से फाग'
(ख) मिट्टी और फूल, मिट्टी और फूल, १ — 'ये खड़ी मुझी पर मीनारें'

नव शब्द

श्री नरेंद्र शर्मा ने अपनी कविताओं में देशज शब्द-प्रयोग का अनेक स्थलों पर प्रयोग किया है। जो शब्द विशेष रूप से विवेचनीय है वे इस प्रकार हैं —

ऊतल-पातल [1], ओलाती [2], झिनमिन [3], खगर [4], खुसटिया [5], झूमका [6], न्यार [7], नैऋत्य [8], पछय्या [9], परकैंच [10] पैछर [11], फुलक [12], बटिया [13] बूंदोंबीनी [14], मठार [15], मालंच [16], वर्तरी [17] सोनाधूल [18], सोनापीली [19]।

---

१. द्रौपदी, परि० १,९ — 'युग-परिवर्तन के हेतु क्रांति ऊतल-पातल की तृष्णा'

२. मिट्टी और फूल, यहां की बरसात, ३९ — 'झरती होगी खामोशी से ओलाती'

३. पृष्ठ वही, ... 'ओलाती भी झिनमिन कर'

४. प्रभात फेरी, कृषकों की अंतरात्मा, १९ —'हम हैं बेजबान खंगर'

५. प्रवासी के गीत, गीत ४०, ७२ — 'वह छोटी-सी जान खुसटिया'

६. कामिनी, निशि-वासर, ४९ — 'ज्योति जगाना सात सखी का झूमका'

७. मिट्टी और फूल, गांव की धरती, २४ — 'दे न्यार बैल को'

८. हंसमाला, जागरण-नयन जावा, ४६ — 'ज्योतित है नैऋत्य दिशा'

९. कदली-वन, फागुन मास, ७८ — 'लगा डोलने पवन पछय्या'

१०. पलाश-वन, सोना या क्षार, ५७ — 'कर परकैंच कह रहे हो क्यों'

११. कामिनी निशि-वासर, ४९ — 'मैं ने जानी पिय की पैछर'

१२. कदली-वन, कवि गाता है, ६५ — 'फुलक-मूल में शूल-फूल मे'

१३. मिट्टी और फूल, गांव की धरती, २४ — 'चली होगी बटिया पर पग धरती'

१४. मिट्टी और फूल, यहां की बरसात, ४० — 'बूंदों-बीनी धानी साड़ी पहने थी बरसात'

१५. पलाश-वन, फागुन की आधी रात, ६७ — 'भटकता सड़कों पर चलता मठार'

१६. कामिनी, अतिथि, १६ — 'कुसुम-गुंफित शांति-लतिका से सजा मालंच'

१७. पलाश-वन, दीपावली, २२ 'वर्तरी के वृन्त हैं जिन पर खिली ज्योतित कली'

१८. मिट्टी और फूल, सुबह, ४४ — 'धरती सोनाधूल जैसे'

१९. वही, यहां की बरसात, ४० — 'रौशनी बिखरती थी जिन पर सोनापीली'

हड़कल[1] हिन्नीपैना[2], हिमावत[3]।

कुछ नये समास ये हैं — अश्रुगीली[4], किरणपखी,[5], दिशाभूल[6], दूधधोई[7], रीतबदल[8]।

इन मे अधिकांश व्रजभाषा के शब्द हैं।

'ऊतल-पातल' शब्द का अर्थ है — उथल-पुथल।

'औलती' स्त्री० (औलवाती[9]) का व्रजभाषा में अर्थ है — 'वर्षा का पानी बह कर नीचे गिरने का छप्पर का किनारा'। यहां यही अर्थ है।

'किनमिन' वर्षा की बूंदो का शब्द है। छोटी छोटी बूंदों की झड़ी या फुहार 'किनवानी'[10] कहलाती है।

'खंगर'[11] पु० देशज शब्द है। अर्थ — 'एक साथ चिपकी और पकी हुई कई ईंटे या उनके टुकड़े'।

'खसटिया' स्त्री० शब्द खूसट पु० मे सम्बद्ध माना जा सकता है जिस का अर्थ है — 'बहुत मूर्ख, अरसिक'।

'झूमका' देश० शब्द यहा 'कृत्तिका नक्षत्र' के अर्थ मे नया प्रयोग ही है।

---

१ प्रवासी के गीत, कविता-शीर्षक — 'पावों की हड़कल'

२. कामिनी, निशि-वासर, ४९ — 'पच्छिम ओर गगन मे आया हिन्नीपैना'

३. कदली-वन, नव झंकार, ७२ — 'हिमावत के हृदय को गला दो'

४. कामिनी, निशि-वासर, ४७ — अश्रुगीली सुधि सहेजी'

५. वही, फूल और पत्र, २७ — 'किरणपंखी सा खुला नभ म कनक-आलोक'

६. (क) हंसमाला, पावस और शरद, ४५ — 'दिशाभूल हे सेनाए'

(ख) कामिनी, समर्पण गीत, ९ — 'मेरी दिशाभूल सी आखे'

७. वही, अतिथि, २१ — 'दूधधोई चांदनी से परिंदों का मेल'

८. मिट्टी और फूल, युग और मैं, ६२ — 'रीतबदल है त्यौहारों में'

९. कृषक जीवन संबधी व्रजभाषा शब्दावली, द्वितीय खंड, १२७-दे० औलवाती'

१०. मानक हिंदी कोश, पहला खण्ड, दे० 'किनवानी'

११. कोश वही, दूसरा खण्ड। दे० 'खंगर'

'**न्यार**'[1] पुं० शब्द भी ब्रजभाषा में 'चारा' अर्थ में खूब प्रचलित है।

संस्कृत में 'नैर्ऋती' स्त्री० शब्द का अर्थ है — 'दक्षिण-पश्चिम के मध्य दिशा या कोण'। यहां इसी का विकृत रूप है — **नैऋत्य**। अर्थ भी वही है। इसी अर्थ में सं० 'नैर्ऋत्य' पु० शब्द भी है। अत: यहां छपाई की अशुद्धि भी हो सकती है।

'**पछय्या**' स्त्री० शब्द यहां 'पश्चिम से आने वाली हवा' के अर्थ में है।

'**परकैंच**' (फा० पर + तुर्की कैंच) शब्द का अर्थ है — पंख काटने की क्रिया।

'**पैंछर**'[2] स्त्री० ब्रजभाषा मे 'पद-चाप' अर्थ में है।

'**फुलक**'[3] पु० ब्रज० मे 'चने के पौधे का सिरा, ऊपरी भाग' आदि अर्थों मे है।

'**बटिया**'[4] स्त्री० ब्रज० में 'पगडडी' को कहते हैं जो खेतों में चलने से बन जाती है (स० वर्त्मन्)

'**बूदोंबीनी**' स्त्री० यहा 'बुदकीदार' (जिस पर बूंदों के से चिन्ह हों) अर्थ मे है। या 'बूदो द्वारा बीनी हुई' (चादर) अर्थ हो सकता है।

'**मठार**' पु० शब्द भी ब्रज० के 'मट्ठर' या 'मट्ठा'[5] का ही विकार जान पडता है। अर्थ — 'बैल जो हल न जुतवाने से सुस्त बन जाए।

'**मालंच**'[6] देशज शब्द का अर्थ है — 'एक प्रकार का साग जो पानी मे होता है।'

---

१. कृषक जीवन सम्बन्धी शब्दावली, प्रथम खण्ड ४ / ८, ११५ / २४०, १५५ / २७४, १७९ / ३०३

२. कोश वही, १४१ / २६३, दे० पैंछर

३. कोश वही, ३६ / ११९, ५१ / १७१, १८६ / ३०५ दे० 'फुनक'

४. कोश वही, ६५ / १९२ दे० 'बटिया'

५. कोश वही, ११७ / २४० — तुल० 'बंधुवा बछरा ह्वै जाय मट्ठर' अर्थ "खूंटे मे बंधा रहने वाला बछड़ा आलसी हो जाता है।"

६. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० 'मालंच'।

'**बर्तरी**' स्त्री० यहां संस्कृत वर्ति या वर्ती स्त्री० शब्दों का विकार है। अर्थ — 'दीपक की बत्ती'।

'**सोनाधूल**' और '**सोनापीली** दोनों शब्द स्वर्णिम रंग के वाचक हैं।

'**हड़फल**' स्त्री० यहां 'पावों की वेडी' अर्थ में है।

'**हिन्नी पैना**' का अर्थ है — मृगशिर व्याध नक्षत्र।

'**हिमावत**' (स० हिमवत् पुं०) यहा 'हिमालय' अर्थ में नया पुं० शब्द माना जा सकता है।

प्रिय शब्द

कवि की प्रिय शब्दावली द्रष्टव्य है। अगति, अगन, अगवानी, अग्नि, अचूक, अचेतन, अजान, अनगिनत, अनगिनती, अम्लान, अवा, आपुलक, आशीष, इस्मानी, इस्पाती, कनक, किरन, खेवा, घन्नाद, चतुर्दिक, चम्बन, जागृति, ज्योति, तिमिर-गर्भ, त्रिपथगा, दूरागत, नियति, निश्वास, नीरजात, पिक, प्रवासी प्रमाणित, बुद्बुद, बेसुध, भू-रज, मधुराधर, महान् मायावित, मातम मीना, रजत-स्फार, रथ-चक्र, वक्षःस्थल, वसंती, वात, वानाम, शक्तिमान्, श्रवन, मकान, सगर्व, समीर, सुकुमार सुकुमारी, सूक, मृजनहार, सोंधी, स्वर्ण और हरित।

ध्वन्यात्मक शब्द

नरेंद्र शर्मा ने ध्वन्यात्मक शब्दों की प्रदर्शनी भी सजायी है।

बिजली की ध्वनि है **कड़क-कड़क**[१]। पेड टूट कर गिरते हैं **कड़-कड़ चड़चड़**[२]। लहरे और सरिताए '**कलकल**'[३] करती बहती है। '**रलमल झलमल**[४]'

---

१. मिट्टी और फूल, यहां की बरसात, ४२ — '**कड़क-कड़क** बिजली तड़पे'

२. पलाश-वन, कौमानी, ३३ — '**कड़-कड़ चड़-चड़** टूटते पेड़'

३ (क) वही, तुम, ४ — 'लहर लहराती ... **कलकल** स्वर-ध्वनि'

(ख) वही, कूर्मांचल, २८ — 'सरिताए गुण गाती **कलकल**'

४. (क) वही, वही, वही — 'निर्झर झरते **रलमल-झलमल**'

(ख) कामिनी, निशि-वासर, ५० — 'मन सरिता की **रलमल-झलमल**'

निर्झरों और सरिताओं का स्वर है। '**झलमल**'[1] दीपशिखा, नक्षत्र, मणि, लहर — सभी की ध्वनि है। पत्ते यहां भी **खड़खड़**[2] और **चरमर**[3] करते हैं।

तारे '**डब डब**'[4] करते है। नयन '**छलछल**'[5] छलकते हैं। '**चमचम**'[6] चांदी की चादर और नैया की, और '**थर-थर**'[7] कम्पन की ध्वनि है। वर्षा की बूदें '**रिमझिम**'[8] करती हैं।

पक्षियों मे काग **कांव कांव**[9], कोयल **कुहुक-कुहुक**[10], **मुहु-मुहु, कुहु-कुहु**[11],

---

१. (क) कदली-वन, गीत सुनाओ, ६ — '**झलके झलमल** दीपशिखाएं'
(ख) कामिनी, निशि-वासर, ४९ — '**झलमल** ज्योति जगाता... **झूमका**'
(ग) पलाश-वन सागर-तट, ५० — 'मणि **झलमल** झलक दिखाती'
(घ) वही, सागर पर चन्द्रोदय, ६१ — '**झलमल** सौंदर्यमयी लहरें आईं'

२. (क) प्रवासी के गीत, गीत ४०, ७२ — **खड़-खड़-खड़** कर उठते पत्ते'
(ख) वही, गीत ८०, ७३ — '**खड़ खड़** हुई, गिरा पत्ता'

३ कदली-वन, फागुन-मास, ७८ — 'सूखे पत्तों को **चरमर** कर'

४. (क) प्रवासी के गीत, गीत ४०, ७२ — 'डर मे **डब डब** करते तारे'
(ख) कामिनी, निशि-वासर, ८९ — 'नीलम नग लुब्धक **डब-डब**'

५. (क) वही, निशि-वासर, ४९ — '**छल-छल** दो नैना'
(ख) मिट्टी और फूल, लुब्धक, १३ — 'मेरी आंखो-सा **छल-छल**'
(ग) वही, हिरना-हिरनी, ६५ — 'प्यासी आखे **छल-छल**'

६. (ख) वही, वर्षा-श्री, ७९ — '**चमचम** करती चादर चादी की'
(ख) वही, पंचमी आज, ३३ — 'चांदी की लघु **चमचम** नय्या'

७. (क) प्रभात फेरी, नाविक के प्रति, २९ — 'दिग्मडल **थर्-थर्**'
(ख) वही, वही, २८ — 'डर से **थर-थर** कापी धरनी'

८. (क) वही, वर्षा-श्री, ११३ — 'करती नित **रिम-झिम** नृत्य-राग'
(ख) पलाश-वन, कौसानी, ३१ — 'था बरस रहा **रिमझिम** पानी'
(ग) मिट्टी और फूल, यहा की बरसात, ३९ 'बरस रही बूंदे **रिमझिम** कर'

९. पलाश-वन, ज्येष्ठ का मध्याह्न, ७२ — '**कांव कांव** कर उठा काग'

१०. कामिनी, निशि वासर, ५० — 'क्यों **कुहुक-कुहुक** पिक रही बोल'

११. प्रभात फेरी, कोयल, ६२ — '**मुहु-मुहु कुहु-कुहु** कुहुकी कोयल'

चिड़ियां चह-चह [१], और मधुप 'गुन-गुन' [२] करते हैं। टिटिहरी 'ट्रिल-टिरिल-ट्रिल' [३] करती घूमती है।

छागले छम छम [४], पांजनियां छन छन [५], रुनझुन [६] करती है।

हथौड़ा खन-खन [७] और शमशीर लपक-लहक [८] करती है। मन धुप-धुप [९] और टापें पट-पट [१०] करती है। जूते छप-छप [११] करते हैं। फण धू-धू [१२] फुकारते हैं। चिता 'धांय धांय' [१३] करती लहकती है। पवन और वन सायँ सायँ [१४] करते गूंजते हैं।

गंगा और लूएं दोनों 'हर हर' [१५] करती बहती है।

अतः हम कह सकते हैं कि कवि की ध्वनि-चेतना भी काफी समृद्ध है।

---

१ मिट्टी और फूल, खुला दिन १४ — 'चह-चह करती चिड़िया'

२. प्रभात फेरी, कर्णफूल, ६१ — 'गुन-गुन प्रिय के गुन-गुन गाने बन गया मधुप'

३ कामिनी, अतिथि, २१ — 'टिटिहरी की ट्रिल-टिरिल-ट्रिल'

४ अग्निशस्य परिणति का फल, २७ — 'छड़ों की छम-छम छागल'

५. कामिनी, निशि-वासर, ५५ — 'हलकी ध्वनि छन-छन-छन'

६. प्रभात फेरी, भावी पत्नी ३३ 'जिसके पग पायल की रुनझुन'

७. मिट्टी और फूल, मन में, ५८ — 'हथौड़ा ही तोड़े खनखन'

८. वही, रात और प्रभात, ८१ — 'शमशीर . . ललकी लपक-लहक'

९. पलाश-वन, कौसानी, ३३ — 'भागे ले धुप-धुप करता मन'

१०. मिट्टी और फूल, यहां की बरसात, ४० — 'सरपट टापों की पट पट'

११. वही, वही, ४० — 'छप-छप करते थे जूते जब'

१२. पलाश-वन, ज्येष्ठ का मध्याह्न, ७१ — 'धू-धू करती बहने वाली अहि-फूत्कार'

१३. प्रभात फेरी, चिता, १३७ — 'चिता का .....धांय-धांय बल पड़ी पवन'

१४. (क) पलाश-वन, कौसानी, ३३ — 'कर सांय-सांय चल पड़ी पवन'

(ख) कदली-वन, विजन-वीणा, ६६ — 'सघन वन की सायँ-सायँ'

१५. (क) पलाश-वन, ज्येष्ठ का मध्याह्न, ७१ 'लू हर-हर कर हरती चलती है'

(ख) वही, त्रिपथगा, १५ — 'हर-हर करती पर्वत तरती गंगा'

श्री रामेश्वर शुक्ल 'अँचल'

संज्ञा

कवि 'अंचल' के काव्य में विशेष रूप से उल्लेखनीय संज्ञाएं ये हैं—

आकाशी [1], आगमनी [2], कटन [3], कनकता [4], कामर [5], खिलन [6], जगमगी [7], जाग्रतपन [8], जाया [9], पुरुषोत्तमता [10], बहिया [11], बुझन [12], मधुमासी [13],

---

१. विराम-चि, ओ मेरे मन के अविनाशी, ७ — 'बरसो बरसो ओ मेरे **आकाशी**'
२. वर्षान्त के बादल, कांटा-पुजारिन से, ४९ — 'सुन वंशी-रव सी **आगमनी**'
३. विराम-चि, धरती की आग, ३० — 'सांझ भी लगती मुझे कैसी **कटन** सी'
४. वही, महाज्योति, ४८ — 'पुण्यों की चमकीली प्रखर **कनकता** बढ़ती'
५. वही, उनको भूल न जाना, ६६ — 'पलते रहे विलासी **कामर**'
६. वही, मैं मिली तुम से, २९ — 'न कह पाती भरे मन की **खिलन** में'
७. वही, पूरी बाजी लगी कहा !, २६ — 'ऐसी प्राणो में **जगमगी** कहां ?'
८. वही, जीवन-नौका, ३२ — '**जाग्रतपन** का मान तुम्हारा'
९. विराम-चिह्न, पथदान, १२२ — 'फूला फिरता धनपतियो का **जाया**'
१०. वही, महाज्योति, ४७ — 'जीवित मर्यादा की ऐसी **पुरुषोत्तमता**'
११. वही जीवन-नौका, ३२ — '**बहिया** में दो पतवार न कभी रुकेंगे'
१२. वही, एक कण दे दो न मुझ को, ८ — 'पिपासा की **बुझन** का एक क्षण दे दो'
१३. वही, ओ मेरे मन के अविनाशी, ७ — 'पतझड़ के फूलों में उतरो सब दिन के **मधुमासी**'

मनजीत [1], **मौनता** [2], **रंचिता** [3], **रीती** [4], **ललामी** [5] और **सृजेता** [6]।

'ईश्वर' के लिए '**आकाशी**' अभिनव सम्बोधन है। 'मेघ' अर्थ भी यहां संभव है।

'आगमन' या 'अवाई' अर्थ मे व्रजभाषा मे '**आगमनी**' संज्ञा का प्रचलन है।

कटने की क्रिया या भाव के लिए '**कटन**' संज्ञा का अधिक प्रचार नहीं है।

'**कनकता**' और '**मौनता**' क्रमशः 'कनक' और 'मौन' मे 'तल्' प्रत्यय जोड़ कर बनी हुई भाववाचक संज्ञाएं है। 'मौन' पहले ही भाववाचक संज्ञा है अतः 'मौनता' नव प्रयोग ही माना जाएगा।

यहां '**कामर**' सं० पु० शब्द का अर्थ 'कामी' है, कम्बल नहीं। 'पामर' के तौल पर 'कामर' नया शब्द घडा गया है।

'**खिलन**' और '**बुझन**' क्रमशः 'खिलने' और 'बुझने' के भाव प्रकट करते हैं। इसी प्रकार '**जगमगी**' संज्ञा 'जगमगाना' क्रिया से सम्बन्ध रखती है। 'जाग्रत' विशेषण में 'पन' प्रत्यय जोड़ कर '**जाग्रतपन**' भाववाचक संज्ञा बनी है। यहां '**जाया**' शब्द स्त्री० अर्थ मे सं० तत्सम नहीं है। अपितु 'पुत्र' अर्थ (सं० √ जन्) मे है। 'पुरुषोत्तम' में 'तल्' प्रत्यय जोड़ कर बनी हुई '**पुरुषोत्तमता**' भाववाचक संज्ञा भी नवीन ही है।

यहां '**बहिया**' सं० स्त्री० शब्द 'बाढ़' अर्थ में है।

---

१. वही, मांगे भी नही मिलते, १९ — 'प्राणो से न वह **मनजीत** मिलता है'
२. वही अलविदा, ७६ — 'छलकते **मौनता** के सिंधु'
३. वर्षांत के बादल, मै तुम्हारे साथ गाती, ४१ — 'ग्रीष्म-सरि जो **रंचिता** थी'
४. वही, तुम कितना मीठा गाती हो ६९, — 'मेरे मन की **रीती** को शुक्ति बनाती हो'
५. वही, गीत, ५२ — 'सब ओर **ललामी** छायी है'
६. आज के लोकप्रिय हिंदी कवि अंचल, धरती की आग, ७० — 'प्रलय-**सृजेता** को पहचाना'

'ईश्वर' के लिए 'आकाशी' की भांति 'मधुमासी' भी नया संबोधन ही है। 'मनजीत' इस नवीन समास का भी चिरंतन प्रियतम (ईश्वर) के अर्थ में प्रयोग किया गया है।

'रंचिता' भी नयी संज्ञा है। व्रजभाषा में 'रँचिबो'[1] सं० पुं० शब्द का अर्थ है 'लीन या मग्न होना'। यहां 'रंचना' क्रिया से ही 'रंचिता' सं० स्त्री० शब्द बनाया गया जान पड़ता है — अर्थ 'लीना, मग्ना'।

'रीतना' क्रिया से 'रीति' भी नयी संज्ञा गढ़ी गयी है। यहां 'खालीपन' अर्थ संभव है।

संस्कृत में 'ललामी'[2] शब्द 'ललाम' विशेषण का स्त्रीलिंग रूप भी है। किंतु यहां यह 'सुन्दरता' अथवा 'लाली' अर्थ में भाववाचक संज्ञा ही है।

'स्रष्टा' अर्थ में 'सृजना' सकर्मक क्रिया से 'सृजेता' बना है। इस का भी अधिक प्रचलन नहीं है।

संज्ञा-विकार

कुछ संज्ञाओं को विकृत रूपों में भी अपनाया गया है। कुछ उदाहरण पर्याप्त होंगे—

अघातो[3] (आ), अहर्निशि[4] (अहर्निश), आश[5] (शा), आशीष[6], आशीस[7] (शिस् या आशी),

---

१. तुल० — 'रे मन, छाँड़ि विषय को रँचिबो' (सूरसागर, १—५९)
२. संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, दे० ललाम
३. विराम-चिह्न, उतना तुम पर विश्वास बढ़ा, ११ — 'सब अघातों से'
४. वही, खेल यह कैसा तुम्हारा ?, ४ — 'बोल कर जैसे अहर्निशि'
५. वही, खुने शिशिर की श्याम घटा, २४ — 'तुम ने मेरी आश हरी'
६. (क) वर्षांत के बादल, दीपशिखा, ५८ — 'दो मुझ को आशीष'
   (ख) वही, कालिदास, ४५ — 'आशीष निशा-मस्तक पर'
७. (क) विराम-चिह्न, १ — 'आशीस अमावस लाई हो'
   (ख) वर्षांत के बादल, मौन ममता, ९ — 'अनकहे आशीस का स्वर'

उच्छवास [1] (च्छ्), जगत [2] (त्), नयारी [3] (तय्यारी या तैयारी), दिपाली [4] (दीपावली), नीहारका [5] (रि), पुन्यो [6] (पुण्यों), बुदबुदों [7] (बुद्बुदों), भवरों [8] (भंवरों), वातास [9] (बतास), विद्युत [10] (त्) विभ्राट [11] (ट्), शमसान [12] (श्मशान), सपन [13] (सपना या स्वप्न), सृष्टा [14] (स्र)।

कुछ उल्लेखनीय विशेषण ये हैं—

अंबियारी [15], अरुणारे [16], अवसादी [17], आकाशी [18],

---

१. (क) वही, कालिदास, ४४ — 'नभ ने ले घन-**उच्छवास**'

(ख) वही, वही, ४५ — 'किरणों से **उच्छवास** तुम्हारे'

२. (क) वही, मैं निरन्तर लड़ रहा हूं, ३८ — 'जो बदल देता **जगत** को'

(ख) विराम-चि, मैं मिली तुम से, २९ — 'कह दिया तुम ने **जगत** से'

३ वर्षांत के बादल, गीत, ४३ — 'पूजा की **तयारी** मे'

४. आज के लोकप्रिय..., जलती निशानी, २८ — 'रत्न-दीपों की **दिपाली**'

५. विराम-चिह्न दीप जल में बह चला, ३७ — 'तृषित वह **नीहारका**'

६. वही, वापू ४२ — 'जिसके **पुन्यों** की छाँह तले'

७. आज के लोकप्रिय..., तुम्हे न जाने दूंगी, १०४ — 'बिखरे हुए **बुदबुदों**-सा'

८. विराम-चि, उतना तुम पर विश्वास बढ़ा, ११ — '**भवरों** में भरमाया'

९. (क) वर्षांत के बादल, द्वार खोलो, २३ — 'ले सजल **वातास** आई'

(ख) आज के लोकप्रिय..., ११८ — 'कुसुमी चीर-सी **वातास**'

१०. वही, जलती निशानी, २७ — '**विद्युत** भरी-सी स्वप्न रेखा'

११. विराम-चिह्न, दलित उत्पीड़ित मनुज, ६० — 'यह दाह का **विभ्राट**...'

१२. वर्षांत के बादल, मेरा तुम, ६६ — 'उमंगों का तुम को **शमसान** कहूं'

१३. वही, स्वाती के मेह, ७४ — 'न **सपन** में भी आए'

१४. वही, दीपमुखी मुस्काए जा, २७ — '**सृष्टा** के अभिशापों की'

१५. विराम-चिह्न, यह फागुन की रात, ४० — '**अंबियारी** चोली'

१६. वर्षांत के बादल, गीत, ४३ — 'जागे तुम्हारे नैन **अरुणारे**'

१७. वही, गीत, ३४ — 'कलियां **अवसादी** हिमपात सहें मत'

१८. वही, नभ के तारे की क्या आशा, १८ — '**आकाशी** ज्योति-शिखा'

कपूरी [1], कलंकी [2], क्रांतिमुखी [3], गुमरते [4], जुड़ावन [5], नीलांजनी [6], बायस्कोपी [7], भँवराता [8], मिलनवती [9], मेघिल [10], मोरपखी [11], रेगिस्तानी [12], संगमरमरी [13], समाजी [14] और समीपी [15]।

इन विशेषणों में से अधिकांश कवि का 'ई' प्रत्यय के प्रति मोह सूचित करते हैं। विशेषत: रंगों में यह प्रत्यय जुड़ा है यथा **कपूरी, मोरपंखी, संगमरमरी**। अवसादी, आकाशी, कलंकी, बायस्कोपी, रेगिस्तानी और समीपी नये विशेषण हैं। अटारी, कजरारी, जुआरी और भिखारी की भांति 'आरी' प्रत्यय जोड़ कर 'अंबिया' संज्ञा से '**अंबियारी**' विशेषण बनाया गया है। उपर्युक्त चार उदाहरणों मे 'कजरारी' भी विशेषण ही है, शेष संज्ञाएं हैं। इसी प्रकार 'आरे' प्रत्यय जोड़ कर '**अरुणारे**' बना है।

संज्ञा 'काया' के विशेषण के रूप में '**क्रांतिमुखी**' नवीन और लाक्षणिक प्रयोग है।

---

१. आज के लोकप्रिय..., वनफूल, ५३ — '**कपूरी** पखुरियों में'
२. वर्षांत के बादल, आज मैं कुछ अनमनी हूं, ३६ — '**कलंकी** चाद-तारे'
३. विराम-चिह्न, बापू, ४३ — 'विप्लव की **क्रांतिमुखी** काया'
४. आज के लोकप्रिय..., ओ नैया के खेने वाले, ३० — 'एक **गुमरते** धुंधलेपन से'
५. वर्षांत के बादल, तीन बातें, २० — 'हवायें सुनें **जुड़ावन** बोली'
६. वही, शारदी सध्या, ४७ — 'बडी **नीलांजनी** छाया'
७. विराम-चिह्न, नहीं जलेगी, ७० — 'इतराते अपनी **बायस्कोपी** कृतियों पर'
८. वही, जीवन-नौका, ३२ — 'धुन्द उठा **भँवराता**'
९. आज के लोकप्रिय..., लगी रह गई मैं..., ११० — '**मिलनवती** को सजने में'
१०. विराम-चिह्न, खुले शिशिर की..., २४ — '**मेघिल** अभिराम छटा'
११. वर्षांत के बादल, वर्षा-गीत, ११ — '**मोरपंखी** किशमिशी चोली'
१२. वही, स्वाती के मेह, ७४ — 'जो **रेगिस्तानी** मिनी जलन'
१३. वही, शरद निशा, २१ — '**संगमरमरी** रूप के उन झरनों में'
१४. विराम-चिह्न, नवयुग की दीवारें, ७७ — 'जीर्ण **समाजी** धरती ने'
१५. वर्षांत के बादल, नभ के तारे की..., १८ 'रहा जो हरदम इतना बड़ा **समीपी**'

अरबी मे 'गुबार'[१] पु० शब्द के अर्थ रज, मनोमालिन्य आदि हैं। हिंदी मे दूसरे अर्थ मे '**गुमरना**' क्रिया बनाई गई है। यहां 'घुमड़ना' यह लाक्षणिक अर्थ भी संभव है।

व्रजभाषा मे **जुड़ावन**[२] वि० का अर्थ है 'सुखी-सतुष्ट करने वाला'। यहां भी यही अर्थ है।

'नीलांजन' कर्मधारय समास है — अर्थ, 'नीला सुरमा'। 'नीलाजन' स० पुं० शब्द मे 'ई' प्रत्यय जोड़ कर बना '**नीलांजनी**'। यहां अर्थ हुआ — 'नीली, सुरमई रग की'।

अंगरेजी मे '**बायस्कोप**' (Bioscope) सं० पु० शब्द का अर्थ है — 'थियेटर या चलचित्र का यन्त्र'। इसी मे यहां 'ई' संबधार्थक प्रत्यय जोड़ा गया है। अर्थ 'चलचित्र सबधी'।

'भँवर' सं० पु० शब्द का एक अर्थ है — 'लहरों के चक्राकार बढ़ने की स्थिति'। इसी से '**भंवराता**' वि० बना है। अर्थ — 'चक्कर खाता या घूमता हुआ'।

'**मिलनवती**' वि० यहां वासकसज्जा नायिका के लिए है। यह भी नया प्रयोग है।

'इल' मत्वर्थीय प्रत्यय जोड़ कर तोदिल, धूमिल, पकिल, फेनिल और बोझिल शब्दो की भांति '**मेघिल**' भी बना लिया गया है। अर्थ 'मेघ की, या मेघ की भांति'।

'**समाजी**' का अर्थ है 'समाज की' और '**समीपी**' का अर्थ है 'समीप का', 'घनिष्ठ'।

---

१. उर्दू-हिन्दी शब्दकोश, 'मद्दाह', दे० 'गुबार'।
२. तुल० देखत नैन **जुड़ावन** — (सूर० १० — २५१)

विशेषण-विकार

व्याकरण के नियमानुसार जो शब्द विकृत रूपों में हैं वे इस प्रकार हैं—

अविनासी [1] (शी), उच्छवसित [2] (च्छ्), उदभ्रांत [3] (उद्भ्रांत), गतिवान [4] (मान्), धराशाई [5] (यी), निर्वाक [6] (क्), प्रणवान [7] (न्), महान [8] (न्), विराट [9] (ट्) और साम्रमिक [10] (ग्रा)।

विशेषण विपर्यय

अवतारी [11] (दिन), ऊसरी [12] (संध्या), कपूरी [13] (कम्प, चितवन), कुआँरे [14] (बादल), चौमुख [15] (याद), जाफ़रानी [16] (प्यार),

---

१. विराम-चिन्ह, बापू, ४४ — ' विश्वास प्रकृति-सा **अविनासी** '
२. वर्षांत के बादल, बौरी यौवन की अमराइ, ७३ — ' मद **उच्छवसित** पवन '
३. वही, परिचय का प्रथम क्षण, ८४ — ' लहर **उदभ्रांत** होती '
४. विराम-चिह्न, जीवन-नौका, ३१ — ' **गतिवान** न कभी लुकेंगे '
५. विराम-चिह्न, नवयुग की दीवारें, ७७ — ' **धराशाई** तूफान मचाये '
६. वही, कब किस से, २७ — ' **निर्वाक** सहन सब था '
७. वही, गांधी जी, ४९ — ' शोषण मे और बड़े **प्रणवान** बने '
८. वही, वर्तमान, ५० — ' महालक्ष्य कितना **महान** '
९. (क) वही, बापू, ४५ — ' हम उस **विराट** के समयुगीन '
(ख) वही, दलित उत्पीड़ित मनुज, ६० — ' क्षुद्र या कि **विराट** '
१०. वही, नवयुग की दीवारें, ७७ — ' **सांम्रमिक** तृषा को '
११. आज के लोकप्रिय..., कसम, ८९ — ' कसम उस **अवतारी** दिन की '
१२. वर्षांत के बादल, शारदी सध्या, ४८ — ' यह कुंआरी **ऊसरी** सध्या '
१३. (क) विराम-चिह्न, करेंगे अब हम तुम को..., ३८ — ' तन में कम्प **कपूरी** '
(ख) वर्षांत के बादल, शरद निशा, ८६ — ' सिक्त **कपूरी** चितवन में तुम '
१४. विराम-चिह्न, तीन बातें, २० — ' नभ के सदा **कुआँरे** बादल '
१५. वही, यह फागुन की रात, ४० — ' **चौमुख** याद तुम्हारी आती '
१६. आज के लोकप्रिय, तुम न आये, ३९ ' **जाफ़रानी** प्यार मन के रेशमी पर्दे उठाते '

धराशाई [1] (तूफान), मोमी [2] (मोती), रोगी [3] (मोह) और लोभी [4] (बादल)।

क्रिया

कुछ विशेष क्रिया-प्रयोग ये हैं—

अनुमान [5], अनुमानते [6], अनुमाने [7], कफ़नाती [8], घूट [9], घूटो [10], छुड़े [11], टाँपी [12], दहाती [13], दीप [14], दूबती [15], मँझाने [16], लखाता [17]।

'कफ़नाना' स० क्रिया का अर्थ है — 'शव के चारो ओर कफ़न लपेटना'। यहां 'छाना' या 'ढकना' अर्थ मे लाक्षणिक प्रयोग है। यह क्रिया

---

१. विराम चिह्न, नवयुग की दीवारे, ७७ — 'धराशाई तूफ़ान मचाये'
२. आज के लोकप्रिय..., मधुमास, ११८ — 'मोमी मोतियो से गुथे'
३. विराम-चिह्न, नूतन अभियान, ७३ — 'चिथडो से ऐगा रोगी मोह'
४. वर्षांत के बादल, कैसे दीप जलेगा, १४ — 'चाद पर लोभी बादल छाये'
५. विराम-चिह्न, उतना तुम पर विश्वास बढा, १२ 'अनुमान तुम्हे मै कितना लू'
६. वही, नही जलगी, ७१ — 'उसे अनुमानते'
७. वही, ओ मेरे मन के अविनाशी, ७ — 'बिन अनुमाने'
८. वही, अपराजित सूर्य, ६ 'कफ़नाती है सांध्य ललिमा जल और थल गगन पर'
९. वही, मत टूटो, १७ — 'कल्पित रस जी भर घूंट चुके'
१०. पृष्ठ वही — 'अब जीवन के विष में मत घूंटो'
११. वर्षांत के बादल, विश्वास तुम्ही पर कर पाया, ९० — 'छोड़े न छुड़े...'
१२. वही, ज्योति तुम्हारी ही तो जलती, ९ — 'अंधियारे ने जब जलती लौ की आभा टाँपी'
१३. वही, नवयुग का दीप जलाये, ५७ — 'दहाती आती बढ़ी नाश की छाया'
१४. वही, यह फागुन की रात, ४० — 'चंद्र ज्वाल सी दीप रही तुम'
१५. वही, करेगे अब हम तुम को..., ३८ — 'आंचल को दाँतो से दूबती'
१६. वर्षांत के बादल, शारद निशा, ८६ — 'मन मर्मर का उल्लास मंझाने'
१७. विराम-चिह्न, मांझी, ५३ — 'न ओझल कूल लखाता'

इस अर्थ में सर्वथा नवीन है।

' **घूंटना** ' स० क्रिया का अर्थ है ' घूंट घूंट कर के गले के नीचे उतारना '।

' टापना ' अ० क्रि० का एक अर्थ ' लाँघना ' भी है। यहां ' **टांपना** ' क्रिया-विकार का ही भूत० रूप है — टाँगी।

' **दूबना** ' स० क्रि० ' दबाने ' के अर्थ में नयी ही है।

' **मंझाना** ' स० क्रिया के अर्थ हैं — ' बीच मे डालना, रखना या लाना '। अकर्मक रूप मे भी इस क्रिया का प्रयोग होता है।

व्रजभाषा मे लखाना और लखानो अ० क्रियाओं का अर्थ है दिखायी पडना। इन का सकर्मक रूप मे भी प्रयोग होता है किंतु यहां ' लखाना ' अ० क्रिया ही है। अर्थ दिखना, दिखाई पडता '।

क्रिया-विकार

विकृत क्रिया-रूप बहुत कम हैं। उदाहरणतः ऊगता [१] (उ) और देख [२] (दिखाई)।

क्रिया-प्रयोग

उर्दू भाषा-शैली से प्रभावित होकर भी कुछ क्रियाए लिखी गई है यथा तरसा किए [३], देखा किए [४]।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति अचल जी को भी अ, अन (सं० अन्), निर्, प्र, ब और सु उपसर्ग विशेष रूप से प्रिय है।

---

१. वर्षांत के बादल, मैं निरंतर लड़ रहा हूं, ३९ ' प्रगति का **ऊगता** खूनी सवेरा '

२. विराम-चिन्ह माधी जी के निधन..., ७४ — ' **देख** न पडनो कहीं विजय...'

३. वर्षांत के बादल, बरसों बाद ..., ५३ — ' एक युग तक बोल को **तरसा किए** '

४. विराम-चिह्न, नही जलेगी, ७० — ' **देखा किए** जिन्दगी भर सपना '

'**अ**' **उपसर्ग** के योग से बनने वाले शब्द-प्रयोग इस प्रकार हैं — अचिन्ही, अचीन्ही, अजन्मी, अचीन्हे, अजाने, अनीदी, अबूझ, अबूझी, अबोला, अबोली, अमोही, अबिजानित।

अन् (**अन**) उपसर्ग देखें — अनकही, अनकहे, अनगाये, अनदेखी, अनदेखे, अनमिल, अनमोली, अनहुई, अनहोना, अनाविल और अनावृत।

'**निर्**' **उपसर्ग** इन शब्दों में है निराश्रय, निरुपाय, निर्धूम, निर्बंध, निर्बल, निर्लज्जा, निर्वासित।

'**प्र**' **उपसर्ग** जोड़ कर प्रमूर्ति, प्रबोध और प्रमिहत जैसे शब्द बने है।

फारसी का 'बे' उपसर्ग इन शब्दों मे टंका है — बेकाबू, बेगाना, बेचैन, बेपरदा, बेपहिचान, बेबरसे, बेसहारे, बेसुध, बेस्वाद और बेहोशी।

'**सु**' **उपसर्ग** के योग देखे — सुकुमार, सुजाता, सुदूर, सुनिश्चित, समंत्रित, समधुर, सुमौन, सुत्राग और सुसंचित।

लिंग

लिंगों के क्षेत्र मे भी कवि ने अपने रुचि-स्वातंत्र्य का परिचय दिया है। उदाहरणत: हिंदी में बूंद [1], मझधार [2] और बाराम [3] स० स्त्री० ही है किन्तु कवि ने इन्हे पुल्लिंग मे लिखा है —। संस्कृत मे ' 'बिंदु' या बिन्दु ' अवश्य स० पु० शब्द है। हिंदी मे '**बूंद**' को तो कवि पंत ने पु० रूप मे भी लिखा है।

इस के विपरीत हिंदी मे थपेड़े [4], मीनार [5], विटपी [6], हिंडोला [7] और

---

१. विराम-चिह्न, मागे भी नहीं मिलते, १९ — 'हमें तो स्नेह के दो **बूंद** ..'

२. वही, जीवन-नौका ३३ — 'गर्जित मंझधार तुम्हारा ही तो'

३. वर्षांत के बादल, रूप-गीत, ७२ — 'जब तुम्हारे रूप का **बाराम** चलता'

४. विराम-चिह्न, जीवन-नौका, ३१ — 'कौन **थपेड़े** तूफानों के'

५. वर्षांत के बादल, मेरी तुम, ६६ — 'तुमको किरणों की **मीनार** कहूं'

६. विराम-चिह्न, परदेशी सौरभ चला गया, २५ '**विटपी-विटपी** बची पड़ी रह गई'

७. वर्षांत के बादल, तुम, ६० — 'प्रति इच्छा की चपल **हिंडोला** हो तुम'

हुंकार [१] शब्द सं० पुं० ही हैं जबकि कवि ने इन्हें स्त्री० माना है। उर्दू में 'मीनार' शब्द सं० पु० ही है जबकि हिंदी में कहीं कहीं स्त्री० में भी मिल जाता है। हिंदी में 'विटपी' (सं० विटपिन पुं०) भी सं० पु० शब्द ही है। कदाचित् ईकारांत के भ्रम से कवि ने इसे स्त्री० में लिखा है। ठीक इसी प्रकार हिंदी में हिंडोरा, हिंडोला (सं० हिन्दोल) आदि शब्द सं० पु० हैं। स्त्री० मे 'हिंडोली' अल्पार्थक विद्यमान है। किंतु कवि ने 'हिंडोला' शब्द ही स्त्री में लिखा है। सस्कृत और हिंदी में हुंकार सं० पु० शब्द ही है।

हिंदी में नये स्त्री० शब्द ये हैं — कुहराई [२], खगी [३], दर्पण [४], और दामिन [५]। सस्कृत मे 'दामिनी' स्त्री० शुद्ध शब्द-रूप है। 'दामिन' हिंदी में 'दानी' का नया स्त्री० रूप गढ़ा गया है। 'दपणी' सं० स्त्री० शब्द यहां अल्पार्थक जान पड़ता है। हिंदी मे 'कुहरी' सं० स्त्री० शब्द है, 'कुहराई' नव प्रयोग है।

वचन

अंचल जी ने बहुवचन की अपेक्षा एकवचन से भी कहीं कहीं काम चलाया है यथा कहानी [६] और कुरबानी [७] एकवचन शब्द देखे जा सकते हैं।

'अभिलाषें' [८] बहुवचन रूप सं० अभिलाष पुं० से बनाया गया है,

---

१. (क) वही, विदा के क्षण, ८० — 'मेरे संकल्पों की हुंकारें'

(ख) विराम-चिह्न, उनको भूल न जाना, ६६ 'विचलित करतीं उनकी हुंकारें'

२. विराम-चिह्न, पूरी बाजी लगी कहां!, २६ — 'भीगी भीगी कुहराई'

३. वर्षांत के बादल, मैं तुम्हारे साथ गाती, ४१ — 'मैं पुलक-पूरित खगी-सी'

४. वही, वर्षा-गीत, ११ — 'दर्पणी में देख अपना रूप मतवाली'

५ वही, मुझ से मेरा प्यार न छीनो, ३२ — 'विह्वलता-दामिन की नतमुखी'

६ वही, भूलने में सुख मिले, ८२ — 'बहुत-सी जो लड़कपन में कहानी ...'

७. विराम-चिह्न, नवयुग का दीप जलाये, ५७ — 'लिपटी असंख्य कुरबानी'

८. वही मन टूटो, १९ — 'उत्पीड़ित अभिलाषें मेरी'

'अभिलाषा' से नहो। यहां स्त्री० बहु० है।

संधि

कुछ **दीर्घ स्वर संधियां** ये हैं — अरुणाभ, अवरोहारोह, त्यागाहुति, नीड़ाकुल, नृत्यातुर, मेघानत, वाष्पाकुल, व्यथातुर, शब्दातीत, स्नेहाच्छन्न और होमानल।

गुण स्वर संधियां देखें — गर्वोक्ति, फेनोज्ज्वल, मरणोन्मुख, विजयोत्सव और विजयोन्मुख।

कुछ **विसर्ग संधियां** ये है — अन्तर्लक्ष्मी, अन्तर्यामी, निष्कामी, निष्प्राण, निस्तेज, निस्सग इत्यादि।

समास

कुज **संबंध तत्पुरुष** समास ये हैं —

किरण-उभार, कुसुम-गंध, घन-गर्जन, चरण-चिह्न **जन-एकता**, जन-पथ, जल-बूंदो, ज्योति-प्रसार, ज्योति-शिखा, तरु-शाखा, तीर्थ-सलिल, प्रणय-प्रकाश, भुज-बंधन, मधु-लोभी, मानव-प्रगति, मानव-ममता मानव-समाज मृग-दल, यौवन-वरण, रूप-राशि, वन-पथों, वन-फूलों, विप्लव-ज्वाला, शरद-निशा, शशि-ज्योति, स्वेद-कणो।

करण तत्पुरुष समास भी है — आतप-दग्ध, कुहर-म्लान, केशर-रंजित, गंध-विह्वल, चंदन-चर्चित, जलन-दग्ध, ज्योति-दग्ध, तुषार-रंजित, भय-विकल, मधु-गुंजित, यौवन-सज्जित, रक्त-रंजित, **लज्जा-कुंठिता**, लाज-रक्तिम, लास-सज्जित और सौरभ-भीनी।

द्वन्द्व समासों के कुछ नमूने ये हैं — आलोक-तिमिर, गंगा-यमुना, जीत-हार, झंझा-तूफानों, तृप्ति-प्यास, पाप-पुण्य, मरण-जीवन, मिलन-विरह, शैल-वनों, श्रद्धा-निष्ठा, संशय-दुविधा, सरिता-पर्वत, सुख-वैभव और हाड-मांस।

कर्मधारय समास तो कवि को सर्वाधिक प्रिय है यथा जीवन-नौका, जीवन-प्रहरी, **जीवन-बाती**, जीवन-रजनी, तृष्णा-सागर, दीपक-तन, प्राण-पपीहा, **बाहु-भुरमुट**,

मन-मंदिर, मुक्ति-समर, रवि-सारथि, वज्र-हृदय, विश्वास-वर्तिका, श्रद्धा-दीप, संकल्प-समुद्र संघर्ष-तक्षक, संघर्ष-सिंधु और समय-सिंधु ।

'स' जोड़ कर बने हुए अव्ययीभाव समास भी हैं यथा सजल, सदेह और सशंकित ।

अन्य शब्द-विकार

संज्ञा, विशेषण और क्रिया के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट शब्द-विकार ये हैं — चतुर्दिक [1], दिगदिगंत [2] (दिग्दिगत) ।

सम्बोधन में मधुवर्षिणी [3] की अपेक्षा मधुवर्षिणि शुद्ध रूप है ।

नव शब्द

अन्य कुछ शब्द-प्रयोग विशेष रूप से ध्यान देने योग्य हैं यथा गुलमिनियों [4], झलाझल [5] पथदान [6], बनानी [7], मधु-श्रवा [8], यामावर [9] ।

---

१. (क) विराम-चिह्न, मांगे भी नहीं मिलते, १९ — 'घिरी आती चतुर्दिक'

(ख) वही, अपराजित सूर्य, ६ — 'व्याप्त चतुर्दिक भय'

(ग) वही, महाज्योति, ४६, — जीवन का कल्लोल चतुर्दिक'

२. वही, वही, वही, — 'दिगदिगंत मन आलोकित हो'

३ वही, चांदनी, २३ — 'आज ओ मधुवर्षिणी !'

४. वर्षांत के बादल, मुझ से तो परदा न करो, २६ 'मुस्काती गुलमिनियों के जादू'

५ वही, आज बरसते बादल ... ७६ — 'बरसे नभ से नीर झलाझल'

६. आज के लोकप्रिय हिंदी कवि अचल, पन्थदान, १२२ 'युग मांग रहा है पंथदान'

७. वही जलती निशानी, २९ — 'न बन पाया कभी मेरा जवा ऊमर बनानी'

८. वही, मधुमास, ११२ — 'मधु-श्रवा उड़ती तितलियां'

९. विराम-चिह्न, अपराजित सूर्य, ६ — 'किरण पी गये ये तम के यामावर'

संस्कृत में ' गुल्मिन् ' वि० (गुल्म+इनि) का स्त्री० रूप ' गुल्मिनी ' है — अर्थ ' झाड़ बांध कर उगने वाला ' । झाड़ी अर्थ में हिंदी मे ' गुल्मी ' (गुल्मिनी स्त्री०) शब्द है । यहां ' झाड़ी ' अर्थ ही सभव है ।

' झलाझल ' वि० शब्द का अर्थ है ' बहुत अधिक चमक-दमक वाला ' । क्रिया विशेषण के रूप में अर्थ हुआ — ' प्रकाश के साथ, चमकते हुये ' । चन्दवरदाई के पृथ्वीराजरासो मे आरती के लिए ' झलहल ' शब्द आया है । दोनों शब्द अनुकरणात्मक हैं । अर्थ एक ही है ।

संस्कृत में ' अरण्यानि ' और 'अरण्यानी ' स्त्री० शब्दों का अर्थ है — ' बड़ा लम्बा-चौड़ा वन ' । यहा ' बनानो ' भी इसी के तौल पर गढ़ लिया गया जान पडता है ।

' यामावर ' शब्द ' याम ' और ' अवर ' के सयोग से बना है — संभवत: अर्थ है ' रात्रि के पिछले पहर ' ।

प्रिय शब्द

जो शब्द-संयोग कवि को सर्वाधिक प्रिय हैं उन में अध, आकुल और ज्योति का प्रयोग देखा जा सकता है ।

१. अध अधखिली, अधजगी, अधजला, अधजले, अधनींदी, अधपके, अधबना, अधबनी, अधबूझी. अधमरा, अधमरे, अधमिटी ।

२. आकुल चिंताकुल, तृषाकुल, तृष्णाकुल, नीड़ाकुल, प्रतीक्षाकुल, — भावाकुल, रूपाकुल, वाष्पाकुल, विरहाकुल, विषादाकुल, ।

३. ज्योति ज्योतिचरण, ज्योतिधारा, ज्योतिवाह, ज्योतिस्पर्श ।

अन्य प्रिय शब्द-प्रयोग इस प्रकार हैं—

अगति, अनमनी, कचूरी, कोकाबेली, छटपट, जगत, दीपमुखी, दुर्दम, पूरित, भयकारी, मृगजल और लहरिया ।

ध्वन्यात्मक शब्द

यहां भी बादलों के लिए छमछम [1] और बूंदों के लिए छनछन [2] शब्द हैं। चांदनी और मेघों के लिए 'झरझर' [3] ध्वनि है। दीप और मूर्तियां 'झलमल' [4] करती हैं और बाती 'झिलमिल' [5]। मांग 'झिलझिल' [6] चमकती है।

यहां कंपन की 'थर-थर' [7] है। पावस की 'रिमझिम' [8] भी है। पत्ते यहां भी 'हहर', 'हहर' [9] करते हैं। पवन यहां भी सन सन [10] और सरसर [11] करते चलती है। शून्य की ध्वनि 'सन सन' [12] है। गगन की 'सांय सांय [13] देखने योग्य है।

---

१. वर्षांत के बादल आज बरसते बादल..., ७१ 'क्या कहते छमछम तरुओं से'

२. पृष्ठ वही, 'छनछन गिरती बूंदों के स्वर'

३. (क) विराम-चिह्न, यह फागुन की रात, ४० — 'शोभा नभ से झरझर'

(ख) वर्षांत के बादल, द्वार खोलो, २३ — 'उल्लसित थे मेघ झर-झर'

४. (क) वही, तुम ने भी, १९ 'नयनों से झलमल मूर्ति...,

(ख) वही, दीपक-माला, २४ — 'दीपों से जलते झलमल'

५. आज के लोकप्रिय..., ओ नैया के खेने वाले, 'झिलमिल होती जीवन-बाती...'

६. वर्षांत के बादल, शरद-निशा, ८७— 'कर दो मांग धरा की झिलझिल'

७ विराम-चिह्न, अपराजित सूर्य, ६ — 'कंपन भी भूल गया है थर थर'

८. वर्षांत के बादल, चार कविताएं, ६३ — 'रिमझिम पावस की घड़ियों में'

९. आज के लोकप्रिय, भूलना मुझ को न प्रियतम, ३३ 'डोलते थे हहर पीपल-पर्ण'

१०. वर्षांत के बादल, कैसे दीप जलेगा, १४ — 'सनसन चलती पवन'

११. वही, स्वाती के मेह, ७४ — 'बहती है पुरवाई सर-सर'

१२. आज के लोकप्रिय, भूलना मुझ को न प्रियतम, ३३ 'शून्य सन्-सन् सी उदासी'

१३. वही, वही, ३४ — 'रो सांय-सांय गगन चला'

जलने की प्रसिद्ध ध्वनि 'धू-धू'[1] यहां भी है। दीप, निशानी, पामरता और प्राण सभी 'धू धू' कर के जल रहे हैं।

'मर्मर'[2] ध्वनि खेत, मन और सांस — तीनों की है। मन 'चमचम'[3] करते हुए यहां भी चमचमाता है।

पक्षियों में चातक की 'पी-पी'[4] यहां भी सुनी जा सकती है।

अत: कवि अंचल को नाद-चित्रों के अंकन में भी सफल माना जा सकता है।

---

१. (क) वही, धरती की आग, ७१ — 'बुझने दीप जलेंगे धू धू'

(ख) विराम-चिह्न, जलती निशानी, २७ — 'धू-धू उड़ चली जलती निशानी'

(ग) वही, महाज्योति, ४८ — 'धू-धू कर जलती पामरता'

(घ) आज के लोकप्रिय, धरती की आग, ७१ 'दिन भर प्राण जलाते धू-धू'

२. (क) वही, तुम कितना मीठा गाती हो ?, १०१ — 'खेतों के मर्मर में'

(ख) वर्षांत के बादल, गीत, ३४ — 'मन का रीता मर्मर न गुनूं मैं'

(ग) वही, आज बरसते बादल...७७ 'तुम्हारी सांसों का मर्मर'

३. (क) वही, परिचय का प्रथम क्षण, ८४ — 'चमचम चमकता मन'

(ख) विराम-चिह्न, यह फागुन की रात, ४० — 'चमक रहा मन चम-चम'

४. वही, नभ के तारे की क्या आशा !, १८ — 'चातक की पी-पी'

श्री गिरिजा कुमार माथुर

संज्ञा

श्री गिरिजा कुमार माथुर द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष संज्ञाएं इस प्रकार हैं —

इरा [1], एला [2], ऐपन [3], कठला [4], खार [5], खेरे [6], गुल [7], चंदरिमा [8], चंदिरा [9], चमकार [10], चिंदी [11], चुपके [12],

---

१. धूप के धान, नई भारती, १ — 'तुम इरामय इंदिरा सी चारुशीले'

२. धूप के धान, इन्दुमती, १२८ — 'एला गंधित मलय वनों में'

३. धूप के धान, सिंधु तट की रात, ७४ — 'चांद का ऐपन रँगा मंडल'

४. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'वायु का कठला खनकता'

५. धूप के धान, दो चित्र, ३३ — 'घरा जिसमें सदियों का खार बिंधा'

६. धूप के धान, लैंडस्केप, ५ — 'भर जाते खेरे और खेत'

७. धूप के धान, धूप का ऊन, ५७ — 'गुल-भरी सिगरेट के अंतिम धूएं ...'

८. धूप के धान, 'चंदरिमा' शीर्षक कविता

९. (क) धूप के धान, गीत, १०१ — 'हर चंदिरा में छिपी एक रात'

(ख) धूप के धान, चरित्र के केसर, ११४ — 'छू सकी न शांति चंदिरा को'

१०. धूप के धान, सावन की रात, १०९ — 'कंगन की चमकार-सी'

११. धूप के धान, प्रौढ़ रोमांस, २५ — 'चिंदी किए हुए कागज़'

१२. नाश और निर्माण, रेडियम की छाया — 'चुपके का वह रुका हुआ चुम्बन'

छुवन [1], झौंरों [2], टौरियां [3], झांग [4], बेस्टीलों [5], मेपिल [6], रावले [7], ललोई [8], संपाति [9]।

'इरा' सं० स्त्री० शब्द पृथ्वी, वाणी, सरस्वती आदि अर्थों में है। यहां 'सरस्वती' अर्थ अभीष्ट है।

'एला' सं० स्त्री० शब्द 'इलायची के दाने' अर्थ में है।

'ऐपन' सं० पुं० शब्द का अर्थ है — 'चावल और हल्दी का लेप जो देव-पूजा के समय मांगलिक द्रव्य के रूप में घड़े आदि पर लगाया जाता है।

'कठला' [10] पु० शब्द है। अर्थ — 'गले मे पहनने का एक आभूषण, जिस में सोने चाँदी के मनके गुंथे होते हैं।

---

१. (क) धूप के धान, रात हेमंत की, ५४ — 'वह छुवन, उकसन'
(ख) धूप के धान, मुहूर्त ज्वलितं श्रेयो:, ५९ — 'उंगलियों में छुवन'
(ग) धूप के धान, गीत, १०१ — 'भूली-सी एक छुवन'
(घ) धूप के धान, सावन की रात १०९ — 'अधर छुवन की सिहरन'

२. धूप के धान, लैंडस्केप, ४ — 'तालवृक्ष के झौंरों के आगे'

३. (क) धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'ढूह, टीले, टौरियों पर'
(ख) धूप के धान, ढाकबनी, ९७ — 'टौरियों की रास ऊंची'

४. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'झांग गाती फाग कजरी'

५. धूप के धान, पहिये, १९ — 'भीषण बेस्टीलों को'

६. (क) धूप के धान, न्यूयार्क की एक शाम, ६३ — 'झरीं उमंगे मेपिल सी'
(ख) धूप के धान, न्यूयार्क मे फॉल, ७२ — 'झरें ज्यों पात मेपिल के'

७. धूप के धान, लैंडस्केप, १३ — 'वे राव-रावले सामन्ती'

८. धूप के धान, चांदनी गरबा, ७३ — 'नयनों से मदभरी ललोई'

९. धूप के धान, दिवालोक का यात्री, ७७ 'तू उड़ा संपाति का अभिमान ले कर'

१०. तुल० 'कठुला कंठ बज्र केहरि-नख' — (सूरसागर, १०-८४)

'खार' फ़ा० पुं० शब्द कांटा द्वेष[1] आदि अर्थों में है।

हिंदी में 'खेडा'[2] (सं० खेट) पुं० शब्द छोटा गांव, बस्ती, कच्चा मकान आदि अर्थ रखता है। यहां 'खेरे' इसी का पर्यायवाची बहु० शब्द है।

फ़ारसी में 'गुल' का एक अर्थ अंगारा भी है। यहां यही अर्थ है।

यहां 'चंदरिमा' (सं० चन्द्रमस पुं०) स्त्री० शब्द 'चांदनी' अर्थ में नव निर्मित है।[3]

'चंदिरा' स्त्री० शब्द 'चांदनी' अर्थ में पंत जी द्वारा भी प्रयुक्त किया गया है। मानक हिंदी कोश में इसका सम्बन्ध सं० चन्द्रिका[4] से स्थापित किया गया है। हमारे विचार में 'चंदिरा' का सम्बन्ध संस्कृत के 'चदिर:, या 'चन्दिर:' शब्द रूपों से है जिसका एक अर्थ 'चांद' भी होता है। यह भी नया प्रयोग ही है।

'चमकार' स्त्री० शब्द यहां चमक, प्रकाश आदि अर्थों में है। व्रज० में चमकारा पुं० और चमकारी[5] स्त्री० शब्द-रूप हैं।

'चिंदी' देशज शब्द यहां 'किसी वस्तु का बहुत ही छोटा टुकड़ा' धज्जी, अर्थ में है।

'चुपके' यहां क्रि० वि० न हो कर संज्ञा रूप में नया प्रयोग है। अर्थ चुप्पी, मौन, नीरवता।

'छुवन' स्त्री० शब्द कवि को अत्यन्त प्रिय है। अर्थ — 'स्पर्श'।

'झौंरों'[5] पुं० बहु० शब्द का अर्थ है 'झुण्डो'।

---

१. मानक हिन्दी कोश, दूसरा खंड, दे० 'खार'

२. ,, ,, ,, , दे० 'खेड़ा'

३. ,, ,, ,, , दे० चंदिरा

४. तुल० 'अधर बिंब दसननि की सोभा दुति दामिनि चमकारी' (सूर०)

५. (क) तुल० माधुरी झौरनि फूलनि भौरनि बौरनि बेली बर्चा है (देव)

(ख) तुल० 'कहै रत्नाकर गुवालिनि की झौरि झौरि दौरि दौरि नन्द पौरि आवन तबै लगीं' (रत्नाकर)

'टौरियां' स्त्री० बहु० शब्द है। अर्थ—'छोटी, छोटी पहाड़ियां, टीले। हिंदी में टेकरी, टौरिया आदि शब्द-रूप इन्हीं अर्थों में विद्यमान हैं।

'डांग' स्त्री० शब्द यहां पहाड़ी, वनस्थली आदि अर्थों में जान पड़ता है।

Bestial 'बेस्टील' अंग्रेजी शब्द है। अर्थ क्रूर, जंगला, असभ्य, नृशंस इत्यादि।

'मेपिल' (Maple) का अर्थ है 'एक छायादार वृक्ष'।

'रावले' बहु० शब्द एक उपाधि का नाम है।

व्रज० में 'ललाई'[1] स्त्री० शब्द लालिमा, लाली अर्थ में है। यहां इसी का पर्याय 'ललोई' जान पड़ता है।

'संपाति' (सं०) पुं० शब्द है। अर्थ—'गृध्र जटायु का बड़ा भाई'।

संज्ञा-विकार

कुछ संज्ञाओं के विकृत रूप ये हैं —

अमरित[2] (अमृत), ककनों[3] (णों), कन[4] (ण), कनफूल[5] (कर्ण), कातिक[6] (ति), किरन[7] (ण), किरासिन[8] (कैरोसीन),

---

१. व्रजभाषा सूरकोश, तुल० 'मिटी बदन की ललाई' (सूर०, २००७)
२. धूप के धान, लैंडस्केप, ५— 'अमरित चंदा का'
३. मंजीर, कौन तुम, २४ — 'कंकनों के मृदु रव...'
४. (क) धूप के धान, एशिया का जागरण, १६ — 'मिट्टी का हर कन'
(ख) धूप के धान, सायंकाल, ४७ — 'तन का हर कन'
५. धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८५ — 'चिपक गये कनफूल'
६. (क) धूप के धान, नई दिवाली, ४२ — 'कातिक का रसवान महीना'
(ख) धूप के धान, धरा दीप, १३३ — 'कातिक का श्याम फूल'
७. (क) धूप के धान, शाम की धूप, २. — 'किरन तन को...'
(ख) धूप के धान, नई दिवाली, ४२ — 'पीत किरन तन'
८ धूप के धान, शाम की धूप, ३१ — 'किरासिन का तेल'

कुलिश [१] (कलश), गंग [२] (गंगा), चरन [३] (ण), चाँदिनि [४] (चांदनी), जगत [५] (त्), ज्वाल [६] (ला), तक्षिला [७] (तक्षशिला), तल्वार [८] (ल), तेजस [९] (स्), दामिनि [१०] (नी) दीपाली [११] (दीपावली), दुर्गण [१२] (गु), द्रोपदी [१३] (द्रौ), धूर्ज्जटी [१४] (टि), नाज [१५] (अनाज), नारि [१६], (री), पाख [१७] (पंख), पूरनमा [१८], (पूर्णिमा), प्रकास [१९], (श),

---

१. धूप के धान, एशिया का जागरण, ९ — ' यह कुलिश नवीन अस्थियों का '
२. धूप के धान, युगारंभ, ७ — ' गंग धार कूल नया पा गई '
३. धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८७ — ' धरो मुक्ति के चरन '
४. धूप के धान, देह की आवाज, १०४ -- ' चाँदिनि छाई '
५. धूप के धान, तैंतीसवीं वर्षगांठ, ९३ — ' जगत से प्यार हो '
६. मंजीर, प्यार बड़ा निष्ठुर था, ५६ — ' ज्वाल ही बरसी '
७. नाश और निर्माण, बुद्ध — ' तक्षिला, साँची, सारनाथ '
८. (क) धूप के धान, सायकाल, ४६ — ' तक्षक सी तल्वार '
(ख) नाश और निर्माण, बुद्ध, — ' क्रूसेडों की तल्वारें '
(ग) धूप के धान, तैंतीसवीं वर्षगांठ, ९२ — ' खिंची तल्वार है '
९. (क) धूप के धान, महाकवि, ३७ — ' तेजस अतर '
(ख) धूप के धान, इतिहास, ११८ — ' तेजस आदित्य '
१०. धूप के धान, एशिया का जागरण, ११ — ' चमक नहीं है दामिनि की '
११. धूप के धान, धरा दीप, १३४ — ' उठती है दीपाली '
१२. धूप के धान, देह की आवाज, १०३ ' — ' सारे भौतिक दुर्गण '
१३. मंजीर, प्रेम से पहले, ६१ — ' तुम वही द्रोपदी हो '
१४. धूप के धान, महाकवि, ३६ — ' लटे धूर्ज्जटी सदृश '
१५ धूप के धान, नये साल की सांझ, ८१ — ' बालियां नाज की '
१६. धूप के धान, चांदनी गरबा, ७३ – ' नवल नारि सी '
१७. धूप के धान, ढाकबनी, ९७ — ' पांख घोरे बंद करती '
१८. धूप के धान, चांदनी गरबा, ७३ — ' पूरनमा की चाँदनी '
१९. मंजीर, उस विश्व-पार, १७ — ' चिन्मय प्रकास '

प्रान [1] (ण), फफूंद [2] (दी), बान [3] (ण), मनाई [4] (मनाही), माल [5] (ला) लंक [6] (का), वक्षस्थल [7] (क्ष:), विद्युत [8] (त्), सागरगामिनि [9] (नी), सामराज [10] (साम्राज्य), सुरुज [11] (सूरज), स्राप [12] (शाप), स्वान [13] (श्वान) ।

विशेषण

कुछ विशेषण देखें —

ऊनी [14], चंगेजी [15], चंदीली [16], झावरी [17], झोरे [18],

---

१. धूप के धान, लडस्केप, ५ — ' ऐसी ठडक इन प्रानों मे '
२. धूप के धान, एशिया का जागरण, १४ — ' फफूंद से शहर उगे '
३. धूप के धान, दो चित्र, ३५ — ' आखों मे आग्नेय बान '
४. मंजीर, मैं जीवन से हार गया, २६ — ' मुझ को ही थी जहां मनाई ',
५. धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८५ — ' फूल की माल '
६. धूप के धान, धरा दीप, १४५ — ' जली स्वर्ण लंक '
७. धूप के धान, इन्दुमती, १२७ — ' वक्षस्थल का गोरा चदन '
८. (क) धूप के धान, मैन हैटन, ६६ — ' चरण विद्युत के रख कर '
(ख) मंजीर, बरसात आज, ३२ — विद्युत बन '
९. धूप के धान, इन्दुमती, १२७ — ' नदी कब सागरगामिनि '
१०. धूप के धान, पहिये, २१ — ' फैलाने सगीनों से अपना सामराज '
११. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८१ — ' चांद सुरुज के बारन '
१२. धूप के धान, ढाकबनी, ९६ — ' स्राप के कारण जली '
१३. मंजीर, गुप्त स्वागत, ३५ — ' स्वान गा रहे नीरद राग '
१४. मंजीर, याद यह हो आई ..., २ — ' ऊनी-सी पतली चांदना में '
१५. धूप के धान, युगारंभ, ७ — ' चंगेजी न्यायों के '
१६. धूप के धान, चाँदनी गरबा, ७३ — ' खिली चंदीली रात '
१७. धूप के धान, युगारंभ, ६ — ' दीपों की रेख पड़ी झांवरी '
१८. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — ' महकते हैं झाब झोरे '

दलदार [1], नखूनी [2], पारभीना [3], मेघमाती [4], मौथरे [5], रखौड़े [6], लालिम [7], संवलते [8], सांवर [9], साम्राजी [10], स्वर्णिल [11]।

इन में ऊनी, चंगेज़ी, नखूनी, साम्राजी आदि विशेषणों में 'ई' सम्बंधार्थक प्रत्यय है।

'ऊन' [12] (सं० ऊन्) का अर्थ है 'कम'।

'चंदेली' वि० यहां 'चांदनी' (रात) अर्थ में है। यह नया प्रयोग है।

'झांवरी' [13] स्त्री० (पुं० झांवर) शब्द का अर्थ है काली, झांवे के रंग की।

---

१. धूप के धान, चंदरिमा, ९४ — 'चमक का दलदार यह नहीं चेहरा'

२. धूप के धान, चांदनी गरबा, ७३ — 'नरम नखूनी रंग'

३. धूप के धान, न्यूयार्क में फ़ॉल, ६८ — 'नायलन-सा पारभीना'

४. धूप के धान, सावन के बादल, ४१ — 'उमगते उरज, मेघमाती भुजाएं'

५. धूप के धान, ढाकबनी, ९८ — 'मौथरे हैं हल-कुल्हाड़ी'

६. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८० — 'सावले रखौड़े हाथ'

७. (क) धूप के धान, रात हेमत की, ५४ — 'नयन लालिम स्नेह दीपित'

(ख) धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८४ — 'लालिम तन-दीपित चोर'

(ग) धूप के धान, देह की आवाज़, १०७ — 'लालिम चरणों में'

८. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८० — 'संवलते मैदानों से'

९. (क) धूप के धान, सावन की रात, ९०९ — 'सांवर सूनापन'

(ख) धूप के धान, नई दिवाली, ४३ — 'मेरी इस सांवर धरती पर'

(ग) धूप के धान, लैंडस्केप, ४ — 'सांवर, मटियाली, काली धरती'

१०. धूप के धान, सायंकाल, ४६, — 'साम्राजी बीजों से ऊगे'

११. मंजीर, कौन तुम, २४ — 'उसी लौ के कुछ स्वर्णिल कन'

१२. तुल० (i) शमित करने को स्वमद अति ऊन (दिनकर)

(ii) अब धरा के गान ऊने (महादेवी वर्मा)

१३. तुल० ब्रजनाथ बन गए जोवत मग यह दृष्टि झांवरी (सूर० २४४८)

'झोरे' पुं० बहु० का अर्थ है — 'गुच्छे'।

'दलदार'[1] का अर्थ है — जिसकी तह, दल या परत मोटी हो। यहाँ 'दार' फा० प्रत्यय है।

'पारझीना' नया सामासिक वि० है। अर्थ जो आरपारदेखने में झीना हो'।

'मेघमाती' नया कर्मधारय समास है। अर्थ— मेघ की भांति मतवाली।

ब्रज० में नहाँ, मांठना, बसूला, आदि औज़ार चलते चलते मोटी धार वाले हो जाते हैं और खुट्टल, खोटे या मोथरे कहलाते हैं।[2]

रखौड़ वि० ' सभवत: 'खुरदुरे' अर्थ मे है।

'साम्राजी' वि० 'सार्वभौम' अर्थ में नया है।

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

अखोरी[3] (आ), अरुन[4] (ण), गतिमान[5] (न्), गतिवान[6] (मान्), चक्रवान[7] (न्), छं[8] (छह), दीप्तिमान[9] (न्), धीरवान[10] (न्),

---

१. मानक हिंदी कोश, तीसरा खंड, दे० 'दलदार'।
२. कृषक जीवन सम्बंधी ब्रजभाषा शब्दावली, द्वितीय खंड, १९१, २१४, २१६।
३. (क) नाश और निर्माण, कौन थकान हरे जीवन की — 'गूंज अखोरी'
(ख) नाश और निर्माण, बुद्ध, — 'मधुरात अखोरी'
४. धूप के धान, पृथ्वी, प्रियतम, ८८ — 'दिन हों पलाश से अरुन बरन'
५. धूप के धान, पहिये, १८ — 'गतिमान चित्र'
६. (क) धूप के धान, पहिये, १७ — 'गतिवान मंज़िलें'
(ख) धूप के धान, सायंकाल, ४५ — 'संघर्ष हुआ गतिवान'
(ग) धूप के धान, मैनहैटन, ६५ — 'धारा बहती है गतिवान'
७. धूप के धान, पहिए, १८ — 'बढ़ते रथ चक्रवान'
८. धूप के धान, शाम की धूप, २२ — 'छं की गजर डूब रही'
९. धूप के धान, पन्द्रह अगस्त, ४० — 'इंदु तुम दीप्तिमान रहना'
१०. धूप के धान, दो चित्र, ३४ — 'गंगा-सा अतर धीरवान'

नितंबिनि[१] (नी), निरास[२] (श), पियारा[३] (प्या), महान[४] (न्) मूर्तिमान[५] (न्), रसवान[६] (न्), विराट[७] (द्), शक्तिवान[८] (मान्)' हिमवान[९] (न्)।

विशेषणार्थक-संज्ञाएं

इन में विशेषणों के अर्थों मे प्रयुक्त होने वाली संज्ञाएं आती हैं। यथा केसर[१०] (चरण), चंदन[११] (चांदनी), वियोगी[१२] (आंखें) और हिमानी[१३] (रात)।

इन सभी उदाहरणों में संज्ञाएं विशेषणो की भांति प्रयुक्त की गई हैं।

---

१. धूप के धान, सावन के बादल, ४१ — ' नितम्बिनि धरा '

२. मंजीर, मेरे मानस-सा आसमान, १८ — ' संध्या आई बनकर निरास '

३. मंजीर, याद यह हो आई, २ — ' मेल पियारा '

४. धूप के धान, युगारंभ, ६ — ' धरती के स्वर महान '

५. नाश और निर्माण, बुद्ध — ' शिव-सुंदर मूर्तिमान हो '

६. (क) धूप के धान, नई दिवाली, ४२ — ' रसवान महीना '

(ख) धूप के धान, सिंधु तट की रात, ७१ — ' सुधि होती अधिक रसवान '

७. धूप के धान, पहिये, १८ — ' तस्वीरें विराट '

८. धूप के धान, पहिये, १८ — ' ये शक्तिवान '

९. धूप के धान, सायंकाल, ४६ — ' बनी हिमवान '

१०. धूप के धान, नई भारती, १ — ' केसर चरण धर कर '

११. नाश और निर्माण, वसंत की रात — ' पूनो की चंदन चांदनी '

१२. मंजीर, अदन पर बम वर्षा, ६९ — ' बिछुड़ी हुई वियोगी आंखें '

१३. धूप के धान, न्यूयार्क मे फ़ॉल ६८ — ' हिमानी रात '

विशेषण-विपर्यय

कुछ उदाहरण ये हैं—

इंसानी [१] (जीवन, दीपक, युग, लौ), इस्पाती [२] (अंतर), कटीली [३] (हवा), कपूरी [४] (लौ), गोरे [५] (पार्क), ठण्डे [६] (सात बजे), तूफ़ानी [७] (अभियान), बूढ़ी [८] (गैल), मीठे [९] (प्रकाश), लज्जित [१०] (तस्वीरें), शरमीली [११] (गूंज), स्वप्निल [१२] (गगन) और हेमंती [१३] (चांद) ।

क्रिया

कवि द्वारा प्रयुक्त उल्लेखनीय क्रियाएं ये हैं—

---

१. (क) धूप के धान, मिट्टी के सितारे ८३ — ' इंसानी जीवन की रात '
(ख) धूप के धान, मिट्टी के सितारे, ८२ — ' दुख का इंसानी दीपक '
(ग) धूप के धान, मिट्टी के सितारे, ८३ — ' युग इंसानी '
(घ) धूप के धान, मिट्टी के सितारे, ८२ — ' उठे इंसानी लौ '
२. धूप के धान, एशिया का जागरण, ९ — ' मनु के इस्पाती अंतर का '
३. धूप के धान, हेमंती पूनो, १११ — ' हवा बहती कटीली '
४. धूप के धान नई भारती, १ — ' यह कपूरी लौ उठी '
५. नाश और निर्माण, मशीन का पुर्जा — ' गोरे पार्क बने हैं '
६. नाश और निर्माण, मशीन का पुर्जा — ' ठण्डे सात बजे हैं '
७. धूप के धान, एशिया का जागरण, १५ — ' अभियान मुक्ति के तूफ़ानी '
८. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — ' चुप पडी है गैल बूढ़ी '
९. नाश और निर्माण, मशीन का पुर्जा — ' मीठे बिजली के प्रकाश में '
१०. नाश और निर्माण, चूडी का टुकडा — ' तुम्हारी सब लज्जित तस्वीरें '
११. मंजीर, कौन तुम, २३ — ' नूपुरों की शरमीली गूंज '
१२. मंजीर, ' हृदय के स्वप्निल गगन में ' शीर्षक कविता
१३. धूप के धान, हेमंती पूनो, १११ — ' चांद हेमंती '

उछले [1], उजल [2], उजले [3], ओंछ [4], छुकने [5] जन्मती [6], मिज [7], मुरझ [8], रूंध [9], साजे [10] सिंक [11] और सुहला [12]।

'**उछलना**' अ० क्रि० यहां 'फिसलना' अर्थ में नयी है। 'सरकना' अर्थ भी हो सकता है।

'**उजलना**' अ० क्रि० 'प्रकाशित होना' अर्थ में है।

'**ओंछना**' स० क्रि० (हिं० पोंछना) का अर्थ है — 'कँघी से बाल सँवारना'।

'**छुकना**' क्रि० 'छौंकना' स० क्रि० का अकर्मक रूप है। 'अर्थ — 'छौंका जाना'।

'**जन्मना**' अ० क्रि० 'जन्म लेना' अर्थ रखती है।

'**मिजना**' क्रि० मीजना स० क्रि० का अकर्मक रूप है।

'**मुरझाना**' अ० क्रि० व्रजभाषा मे है। अर्थ — 'कुम्हलाना'

---

१. मंजीर, प्रेम से पहले, ६५ 'उछले थे धीरे ही चलने से रेती मे चंचल चुपचाप चरर

२. (क) धूप के धान, नये साल की सांझ, ८० — 'किरन उजल के डूब गई'
   (ख) मंजीर, लोरी, ६७ — 'चाँद के सोने का दीपक उजल गया'

३. मंजीर, दो यादें, ४. — 'जुग जुग उजलें पूनो तुम मे'

४. धूप के धान, तैंतीसवीं वर्षगांठ, ९१ — 'बाल पतली उँगलियों से ओंछ दो'

५. धूप के धान, शाम की धूप, २८, — 'खुशबू ताजी तरकारियों के छुकने'

६. धूप के धान, देह की आवाज, १०३ — 'घिन भरी जन्मती, जीती है'

७. मंजीर, अभी तो झूम रही है रात, ७० — 'नींद मे या मिज गये प्रवाल'

८ मंजीर, थोड़ी दूर और चलना है, १ — 'मुरझ चली प्राणों की गुंजन'

९. धूप के धान, एशिया का जागरण, १५ — 'जेलों के भीतर रूंध दिये'

१०. धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८० — 'सखी साजें बसती सिंगार'

११. धूप के धान, शाम की धूप, ३२ — 'जिंदगी सिंक के ताजा फूल बने'

१२. मंजीर मां, ४ — 'सुहला दो फिर बाल'

'रूंधना' स० क्रि० यहां 'ठूंसना, बंद करना' अर्थ में है।

'साजना' स० क्रि० का अर्थ है — 'सजाना'।

'सिकना' क्रि० 'सेकना' स० क्रि० का अकर्मक रूप है।

'सुहलाना' स० क्रि० (हिं० सहलाना) है। अर्थ — 'धीरे धीरे हाथ फेरना'। ब्रज० मे सुहराना, सुहरानो [१] क्रि० रूप भी है।

क्रिया-विकार

कुछ विकृत रूपो वाली क्रियाए ये है—

आँयँ [२] (आये या आएँ), आयँगे [३], आयगा [४], ऊगती [५] (उ), ऊगें [६], जायगा [७] (जायेगा या जाएगा), जायगी [८], जाव [९] (जाओ), झुलने [१०] (झू), पहिचाना [११] (ह), पहिचाने [१२],

---

१. ब्रजभाषा सूरकोश, द्वितीय खण्ड दे० 'सुहराना'।

२. (क) धूप के धान नये साल की सांझ, ८० — 'तैसे आँयँ जो'

(ख) धूप के धान, नये साल की सांझ, ८१ 'गाडियां हर बरस की आँयँ भरी'

३. मंजीर, सुनहला दिन, ३६ — 'आयँगे प्रिय आज'

४. धूप के धान धूप का ऊन, ५८ — 'आयगा जब तक'

५. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'ऊगती है शुक्र'

६. धूप के धान, चरित्र की केसर, ११५ — 'फसलों जैसे ऊगें विचार'

७. (क) धूप के धान, नीव रखने वालों..., १२० — 'छूट जायगा क्या'

(ख) मंजीर, तुलसी से, ३३ — 'मिट जायगा यह ग्राम्य जीवन'

८. मंजीर, गीत मैं प्रिय सीखता हूं, ९ — 'गूंज तक मिट जायगी सब'

९. धूप के धान, याज्ञवल्क्य और गार्गी, ७९ — 'हांक कर ले जाव तुम'

१०. मंजीर, जौहर की धूल, ४५ — 'पलने में झुलने वाली'

११. मंजीर, 'तुल ने प्यार नहीं पहिचाना' शीर्षक कविता ५०

१२. मंजीर, 'प्रिय मेरी आहें पहिचाने' शीर्षक कविता, १२

रक्खा [1] (रखा), रक्खो [2], लायँ [3] (लाएं या लायें), लेन [4] (लेने), समाय [5] (ए या ये)।

नवीन जी की भांति माथुर जी ने भी कहीं कहीं ' हो ' क्रिया के ऐसे प्रयोग किये हैं—

मुझ से क्या पूछो हो रानी ? ? [6]

उपसर्ग

कवि ने अ, अन (सं० अन्), दुर निर्, प्र, बे (फा०), और सु उपसर्गों के प्रति अपनी विशेष रुचि प्रकट की है। क्रमशः उदाहरण इस प्रकार हैं—

अक्षर, अगणित, अचल, अचीन्हा, अछोर, अजाने, अजेय, अधीर, अनीति अपलक, अपावन, अभय, अविजेय, अविलम्ब, अव्यक्त, अशांति।

अनगिन, अनछुए, अनमनी, अनमिली, अनाचार, अनादि, अनार्य।

दुर्गम, दुर्गुण, दुर्दम, दुर्धर्ष, दुर्योधन।

निरीह, निरुत्तर, निरुपम, निर्गन्ध, निर्गुण, निर्दय, निर्धनता, निर्बाध, निर्मूल।

प्रदीप, प्रदोष, प्रशांति।

फा० ' बे ' उपसर्ग देखें — बेकार, बेजान, बेजान, बेबस, बेबसी, बेशकल, बेसुध, बेहाल, बेहोश।

सुकुमार, सुदूर, सुनन्दा, सुनयने, सुवर्ण और सुशोभन।

उपर्युक्त उपसर्गों का ही अधिक प्राचुर्य है, अन्य उपसर्ग विरल हैं।

---

१. धूप के धान, एशिया का जागरण, १० — ' मेरी मानवता पर रक्खा '
२. धूप के धान, नींव रखने वालों का गीत, ११९ — ' रक्खो हाथ '
३. धूप के धान, नए साल की साँझ, ८२ — ' हाँक कर लायँ '
४. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८१ — ' छीन लेन को कली '
५. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८६ — ' उमर न समाय '
६. मंजीर, रेल का पहिया, २१

लिंग

अन्य कवियों की भांति माथुर जी ने भी लिंग-निर्धारण मे रुचि-स्वातन्त्र्य का परिचय दिया है। उदाहरणतः जो शब्द हिंदी में प्रायः पुं० ही रहते है कवि ने उन्हें स्त्री० मे लिखा है। यथा अभिलाष [१], कम्पन [२], केसर [३], गजर [४], गुंजन [५], गुंजार [६], निःश्वासो [७], पवन [८], बारूद [९], भोर [१०], मोड़ [११], समीर [१२], और सरगम [१३]।

---

१. मंजीर, उर गगन की छाँह मे, ४० — 'अमर **अभिलाष** आई'

२. मंजीर, थोडी दूर और चलना है १ — 'थकती जाती स्वर की **कम्पन**'

३ (क) धूप के धान देह की आवाज, १०७ — 'बिछी प्रकृति की **केसर**'

(ख) धूप के धान, चरित्र की **केसर**, शीर्षक कविता. ११५

४. धूप के धान, शाम की धूप, २८ — 'छै की **गजर** डूब रहा'

५. (क) मंजीर, तुम इन गीतो मे..., ५ — 'है मूक पड़ी सांनी **गुंजन**'

(ख) मंजीर, थोडी दूर और चलना है, १ — 'मुरझ चली प्राणों की **गुंजन**'

६. धूप के धान, सावन की रात, १०९ — 'झींगुर की **गुंजार**'

७. मंजीर, प्रिय मेरी आहे पहिचाने, १२ — 'धीमी **निःश्वासों**'

८. मंजीर, प्यार बडा निष्ठुर था — 'रुकती-गिरती दबी **पवन** है'

९. (क) धूप के धान. एशिया का जागरण, १३ — 'तोपों से जो **बारूद** उडी'

(ख) धूप के धान, तैमीमवी वर्षगांठ ९२ — 'आदमी बंदूक की **बारूद** है'

१०. नाश और निर्माण, बुद्ध, — 'तप की पहली **भोर** बनी थी'

११. मंजीर. रेल का पहिया. २१ — 'न कभी आ पायेगी विसराम देश की **मोड़**'

१२. धूप के धान, तीन ऋतु-चित्र, ८४ — 'उडाती आँचल सुमन **समीर**'

१३. (क) मंजीर, तुम इन गीतो मे..., ५ — 'करुणा की कम्पित **सरगम** पर'

(ख) मंजीर, गीत मैं प्रिय सीखता हूं, ८ — 'अब व्यथा की मूक **सरगम**

इन में अभिलाष **कंपन**, **नि:श्वास**, **पवन और समीर** सं०, हिं० और ब्रज० में पुं० ही हैं। '**कम्पन**' संस्कृत में नपुं० भी है। '**गुंजन**' सं० में नपुं० और हिंदी में पुं० ही है। इसी प्रकार '**केसर**' संस्कृत में नपुं० और पुं० दोनों रूपों में है। **गजर**, **गुंजार**, **भोर**, **मोड़** और **सरगम** भी हिंदी मे प्राय: पुं० ही हैं। '**बारूद**' फ़ा० मे अवश्य स्त्री० ही है।

इस के विपरीत स्त्री० शब्दों को कहीं भी कवि ने पुं० रूप में नहीं लिखा है। कहीं कहीं **वल्मीकी** [1] जैसे नये स्त्री० शब्द-रूप अवश्य मिल जाते हैं।

वचन

वचनों के निर्धारण में भी कवि निरंकुश रहा है। **यह** [2] और **वह** [3] एक-वचन सर्वनामों को उस ने बहुवचन में प्रयुक्त किया है। इस के विपरीत **ये** [4] और **वे** [5] बहु० सर्वनाम एकवचन मे लिखे गए है।

इन शब्दों को कवि ने बहु० मे भी एकवचन मे ही रहने दिया है — **ऋतु** [6], गाय [7], टोकरी [8], नारी [9], न्योछावर [10], पूनो [11], रानी [12], और सौगात [13]।

---

१. नाश और निर्माण, बुद्ध — 'वल्मीकी से कच्चे मंदिर'
२. धूप के धान, प्रौढ रोमांस, २५ — 'उजली बांहों सी **यह** दीवारें'
३. (क) धूप के धान, पहिये, १८ — '**वह** पथ मे पंक्ति बाँध बढ़ते रथ'
   (ख) धूप के धान पहिये, १९ — 'वह कत्लगाह तहखाने जिन मे'
४. धूप के धान, नये साल की सांझ, ८० — '**ये** नये साल की है साँझ नई'
५. मंजीर, कौन तुम २५ — 'मैं क्या समझू **वे** बात'
६. धूप के धान, मुहूर्त्त ज्वलित श्रेयो:, ६१ — 'रंग लाती **ऋतु** हजारों'
७. धूप के धान, याज्ञवल्क्य और गार्गी, ७९ — 'सारी दुधारू **गाय**'
८. धूप के धान, शाम की धूप, ३० — ऐसी किस्मत की **टोकरी** कम हैं'
९. मंजीर, जौहर की धूल, ४५ — 'कोटि २ पद्मिनी हो गई इस भारत की भोली **नारी**'
१०. आज के लोकप्रिय हिंदी कवि माथुर, विदा समय, ४५ 'जाने कितनी **न्योछावर**'
११. मंजीर, दूर की आशा, १५ — 'कितनी **पूनो** तुम पर छाईं'
१२. मंजीर, सात सागर का महाविष, ४६ — 'सैकडों बुंदेल **रानी**'
१३. धूप के धान, तीसवीं वर्षगांठ, ९१ — '**सौगात** सारी वार दी'

संधि

संधिज शब्द बहुत कम हैं।

कुछ दीर्घ स्वर संधियां देखे — कालांतर, गोलार्ध, चद्रानन, चित्रांकन, तिमिरांचल, दूरागत देशांतर, धूमारुण, नरकासुर, बालातप, बालारुण, भस्मावृत, भावाकृतियां, मिलनातुर, रक्ताभ, रागारुण, विमलांग, विश्वानुभूति, सत्यादर्शी, सीमांत, हिमांशु, हिमाचल, हुताग्नि, हेमागद।

गुण संधियां भी है यथा चद्रोदय, तेजोज्ज्वल, रगोत्सव और सुरेद्र।

कुछ **विसर्ग संधियां** देखें — ज्योतिब्रह्मांड, ज्योतिरेखा, तपोवन, निश्छल, निस्संकोच, निस्सार, नीरस।

'शरच्चन्द्र' जैसी व्यजन संधिया विरल ही है।

समास

समास-रचना में वैविध्य मिलता है।

कुछ **सम्बंध तत्पुरुष समास** देखें — अग्नि-गूजों, ओस-कनियां ऋषि-रत्न, गगन-रेखा. गुलाब-कली, ग्राम-धूप, चरण-ध्वनि, तन-गंध, तारक-किरण, नयन-जल, प्रकाश-धाराएं, बिदा-समय, मिलन राग, रूप-कल्पना, रूप-राशि, वन-पथ, विरह गीत विश्व-पार, सुमन-रथ, सुरभि-बोझ, सौदर्य-निशानी और हेम-मदिर।

करण तत्पुरुष समास भी हैं — आलोक-हत, गुल-भरी, छेद-भरा, नींद-भरी, मोह-भरी, रंग-रंगे, रक्त-रगे, रेत-भरे, सुधि-धुले।

इन में **भरा, भरी** और **भरे** शब्दो के समास कवि की विशिष्ट रुचि का पता देते हैं।

कर्मधारय समास सब से अधिक हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं — अभाव-निशि, अश्रु-घन, आंसू-सागर, इतिहास-घूरा, इतिहास-सूर्य, उर-गगन, कविता-परी, कुसुम-पियाले, चांद-कटोरे, जन-फूल, जीवन-पल्लव, जीवन-सग्राम जीवन-सितार, ज्वाला-सागर, तम-सागर, तारक-चावलों, दर्शन-चांद, दीप-तन, दीपक-सुमन, धरा-

सीता, परिचय-तट, भूमि-स्वर्ग, मणि-दिनेश, मन-क्षितिज, मनुज-राहु, रूप-इन्दु, रूप-चांद, रूप-सुधा, विद्युत-अक्षर, श्रावन-शिशु, संस्कृत-रवि, सुख-सेज, सुधि-कमलिनी, सुधि-गंध, स्मित-सुरधनु और स्वर-डारी।

कवि ने प्राय: समास-चिह्न (-) नहीं लगाये हैं।

इन में इतिहास, जीवन, रूप, सागर और सुधि शब्दों के समास प्रचुर हैं। कवि ने रूप-इन्दु और विद्युत-अक्षर जैसे समासों में स्वर-संधियां नही की हैं।

बहुव्रीहि समास नये हैं यथा गंध-घोड़े, रंग-केतन, रंग-गंध, रंग-छाप। इन में 'रंग' शब्द के प्रति कवि का रुझान स्पष्ट है।

द्वन्द्व समास भी हैं यथा उषा-सांझ, तरु-लता, दिन-रात, तन-मन, दिया-बत्ती, धप-छाया, विष-सुधा, स्याह-सुर्ख।

'स' जोड़ कर बने हुए अव्ययीभाव समास कम हैं। उदा० सजल, समोद, सलज्ज और सस्मित।

अन्य विविध समास ये हैं —

अग्नि-गरज, अग्नि-दिन, उड़न-बम, ऋतु-बीज, कांचन-माला, ध्यान-मग्न, नभ-पोंछ, प्रकाश-चरण, रक्त-यंत्र, रवि-रथ, रस-फूल, रस-वसंत, रूप-चिता रैन-हीन, शरण-बिम्ब, शिखि-पंख, संगीत-सिंधु, सुरभि-धूप, सुरभि-राख, सुहाग चांदनी।

इन समासों में से अधिकांश नये ही हैं।

शब्द-लोप

कवि ने की[1],

---

१. (क) मंजीर, मां, ३ — 'सोते आंचल (की) ओट तुम्हारे'

(ख) मंजीर, विदा, ७ — 'तुम ने भी आंचल (की) कोर लगाई'

(ग) मंजीर, व्योम के पार, १४ — 'गीत (की) गुनगुन आ रही है'

के [1], को [2] और में [3] शब्दों के लोप वाले वाक्यों का भी विन्यास किया है। प्राय: ये लोप पद्य की लय, गति आदि आवश्यकताओं के अनुकूल ही हैं।

अन्य शब्द-विकार

कुछ शब्दों के विकृत रूप ये हैं — कारन [4] (ण), कालस [5] (कालिख), तुमही [6] (तुम्ही), मुझ [7] (अपने), सुम सुम [8] (सिम सिम)।

---

१. (क) नाश और निर्माण, रेडियो कवि-सम्मेलन — 'लहरो (के) ऊपर'
(ख) नाश और निर्माण, बुद्ध — 'अशोक-साम्राज्यो (के) ऊपर'
(ग) मजीर, कौन तुम, २३ — 'एक झीने से परदे (के) पार'
(घ) मंजीर, प्रेम से पहले, ६४ — 'उस गगा (के) किनारे पर'

२. आज के लोकप्रिय ..., दूर की आशा, ४२ 'दूर देश की सीमा (को) घेरे'

३. (क) धूप के धान, नई भारती, १ — 'हाथ (में) ले कर सभ्यता का रग-केतन'
(ख) धूप के धान, सावन की रात, १०९ — धरा-कठ (में) जब इन्द्र डालता बांह'
(ग) धूप के धान, इन्दुमती, १२८ 'लौग के फूलों (में) डूबा द्वीप'
(घ) नाश और निर्माण, मेरे सपने..., 'बिखरी छितरी छांहों (में) डूबा'
(ङ) मजीर, तुम इन गीतो में..., ५ — 'आंखों ही आंखों (में) हंस जाना'

४. धूप के धान, ढाकबनी, ९६ — 'ताप के **कारन** जली'

५. नाश और निर्माण, मशीन का पुर्जा — 'रातो जगी हुई **कालस** है'

६. मंजीर, प्रिय मेरी आहे पहिचाने, १३ — '**तुमही** से तो भरा हुआ है'

७. मंजीर, तुम ने प्यार नहीं पहिचाना. ५१ — 'मै ने नही सुनाई **मुझ** मे मिटने वाली कथा'

८. धूप के धान, पहिये, २० — 'खुल **सुम सुम**' जैसे मिल गये'

नव शब्द

कुछ अन्य विशेष रूप से उल्लेखनीय शब्द ये हैं — एम्बर [1], औंगन [2], गढ़-बाटों [3], चरी [4], जीति-स्तंभ [5], झकाझक [6], तेंदु [7], दुकेला [8], निंदिया-कुमारी [9], नियन [10], पार [11], बक्खर [12], मलयज [13], सकारे [14] और सिलहुट [15]।

'एम्बर' (अं० Amber) अगरेजी शब्द है। अर्थ—एक प्रकार का पीला पुराना तेल।

व्रजभाषा में 'औंग' शब्द प्रचलित है। पहिया धुरी पर हल्का चले इसलिए कूम मे और धुरी पर अंडी का तेल चुपड़ दिया जाता है जिसे 'औंग' (सं० अभ्यंग) कहते हैं।

---

१. धूप के धान, मैनहैटन, ६४ — 'हो रहे दीप्त एम्बर-प्रकाश से'
२. धूप के धान, ढाकबनी, ९८ — 'राख, गोबर, चरी, औंगन'
३. धूप के धान, लेंडस्केप, ४ — 'गढ़बाटों की रेखा गहरी'
४. धूप के धान, ढाकबनी, ९८ — 'राख गोबर, चरी'
५. नाश और निर्माण, बुद्ध — 'जीति-स्तंभ धर्म के बोल रहे हैं'
६. धूप के धान, चदरिमा, ९८ — 'यह झकाझक रात'
७. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'ताड़, तेंदु, नीम...'
८. मजीर, प्रिय मेरी आहें पहिचाने, १३ — 'दुकेला बन बन जाता'
९. मंजीर, लोरी, ६७ — 'सेजों पै आ जाना निंदिया-कुमारी'
१०. धूप के धान, मैनहैटन, ६४ — 'नियन-गैस रंजित शीशे'
११. धूप के धान, ढाकबनी, ९७ — 'ताल की है पार ऊँची'
१२. धूप के धान, ढाकबनी, ९८ — 'बैल, बक्खर'
१३. (क) मंजीर, उस विश्व-पार, १७ — 'बहती सुधि की मलयज समीर'
(ख) मंजीर, उर-गगन की छाँह में, ४० — 'मलयज पवन बन'
१४. मंजीर, मां, ३ — 'सोये जागे सांझ सकारे'
१५. नाश और निर्माण, मशीन का पुर्जा — 'चलता मशीन की सिलहुट जैसा'

तेल लगाने के लिए '**ओंगना**' क्रिया भी प्रचलित है। जिस बर्तन में '**औंग**' रहता है वह **उंगेड़ी** अथवा **औंगड़ा** कहाता है।'[१]

'**गड़बाट**' स्त्री० शब्द यहां 'गड़वात' स्त्री० का पर्याय जान पड़ता है। 'गडवात' के अर्थ हैं — गाडने की क्रिया, गड्ढा खोदने की क्रिया, भूमि पर पड़े गाड़ी के पहियों के निशान।[२]

'**चरी**' स्त्री० शब्द व्रज० का है। हरी जौडरी (ज्वार) को पौहे (पशु) खाते हैं अत: उसे '**चरी**' (सं० चारि, प्रा० चारि=चारा) नाम से पुकारते हैं।[३]

'**जीति-स्तंभ**' नया सामासिक शब्द है। यह विजय-स्तभ का ही नया पर्याय है।

'**झकाझक**' नया ध्वन्यात्मक शब्द है। अर्थ — चमकदार, चमकीली।

'**तेंदु**' (सं० तिंदुक) आबनूम के वृक्ष को कहते हैं। इसके पत्ते शीशम की तरह गोल, नोकदार और चिकने होते हैं। इसकी लकड़ी काली और मजबूत होती है।[४]

'**दुकेला**' शब्द 'अकेला' के अनुकरण पर नया घड़ा गया है। अर्थ — 'केवल दो'।

'**निंदिया-कुमारी**' स्त्री० शब्द नितान्त नवीन है। यहां 'कुमारी' वि० शब्द 'निंदिया' संज्ञा का है। यह नया समास है।

'**नियन**' (अं० Neon) एक नवाविष्कृत गैस का नाम है।

'**पार**' पु० शब्द का यहां स्त्री० रूप में प्रयोग है। अर्थ — 'दूसरी ओर', तट का दूसरा किनारा।

'**बक्खर**' उस स्थान का नाम है जहां गाय-बैल बांधे जाते हैं।

संस्कृत मे '**मलयज**' स० पुं० शब्द के अर्थ हैं — चन्दन वृक्ष, राहु का

---

१. कृषक जीवन सम्बंधी व्रज० शब्दावली, द्वितीय खण्ड, २९६
२. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० '**गड़वात**'
३. कृषक जीवन सम्बंधी व्रज० शब्दावली, प्रथम खण्ड, ४३
४. मानक हिंदी कोश, दूसरा खण्ड, दे० '**तेंदू**'

नामान्तर। हिन्दी में 'मलय पर्वत से आई हुई (हवा)' यह नया अर्थ भी विकसित हुआ है।

'सकारे' पुं० शब्द (सं० सकाल) 'सवेरे' अर्थ में है। व्रज०[1] और बंगला में इस का अधिक प्रचलन है।

'सिलहुट' (अं० Silhouette) शब्द अंगरेजी का है। अर्थ — 'काला रेखा-चित्र'।

उपर्युक्त शब्दों में **आँगन, तँबू, पार** और **बखर** शब्द बुंदेलखंडी भाषा में भी प्रचलित हैं।

प्रिय शब्द

कवि ने निम्नलिखित शब्दों के प्रति अपना विशेष मोह-भाव प्रकट किया है—

अतल, आरती, कटीली, कन, कृतान्त, चंदिरा, चूनर, छबि, छुवन, झनकार, झुरमुट, नाग, नागकेसर, नागलोक, पहरुए, पँ, बनैला, बेबस, बोझीला, बोझीले, भुजबंध, मंद, रसवती, रूपराशि, लालिम, विद्युत, विराट, संक्रांति, संधियुग सजल, सलोनी, सुमनवती।

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि ने ऐसे शब्दों की सहायता से चित्र-विधान किया है। चांद **चमचमाता**[2] है, बरसात **रिमझिम**[3] करती है। पत्ते **खर-खर**[4] और **मर्मर**[5] करते हैं। गीतों की **गुनगुन**[6] यहां भी है।

---

१. तुल० 'पुनि खेलिहौ **सकारे**' (सूर० १० — २२६)

२. धूप के धान, एशिया का जागरण, ९६ — 'चाँद...जल में **चमचमाता**'

३. मंजीर, बरसात आज, ३२ — '**रिमझिम** स्वरों में गा'

४. नाश और निर्माण, रेडियम की छाया — 'पत्ता **खर खर** करता'

५. (क) धूप के धान, इन्दुमती, १२८ — 'झरता ताल वनों में **मर्मर**'

(ख) मंजीर, कौन तुम, २३ — 'अधखुला **मर्मर** वातायन'

(ग) मंजीर, बिदा-बेला में, ३० — 'जहां धीमी **मरमर**'

६. (क) मंजीर, नीराजन, १० — 'सजा गीत **गुनगुन** जीवन की'

(ख) मंजीर, व्योम के पार, ३४ — 'गीत **गुनगुन** आ रही है'

मधुपरियां 'गुनगुन'[1] करती हैं। बीहड़ वन झनकता[2] है। दीप झिलमिल[3] करते हैं। अग्नि धू धू[4] जलती है। चरणों की रुनझुन[5] यहां भी है। साँझ यहां भी सनसनाती[6] है।

समग्रत: कवि की ध्वनि-सपत्ति भी समृद्ध मानी जा सकती है।

---

१. मंजीर, दो गीत, ३७ — 'मधुपरियों से कह दे कोई वे बंद करें अपनी गुनगुन'

२. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'साँझ-सा बीहड़ झनकता'

३. (क) धूप के धान, धरा दीप, १३३ — 'झिलमिल जलते दीप'

(ख) मंजीर, मैं जीवन से हार गया, २६ — 'दीपक झिलमिल'

४. धूप के धान, एशिया का जागरण, १६ — 'धू धू जलते हैं अस्त्र-शस्त्र'

५. मंजीर, लोरी, ६७ — 'चरणों की रुनझुन बेहोश सो रही'

६. धूप के धान, ढाकबनी, ९५ — 'सनसनाती साँझ सूनी'

डॉ० धर्मवीर भारती

संज्ञा

कवि भारती द्वारा प्रयुक्त कुछ विशिष्ट संज्ञाएं ये हैं—

अनबोला [1], अन्हियारी [2], कटानों [3], गदराहट [4], गहराव [5], गुंजलक [6], गुंजलिका [7], चेत [8] थक्कों [9], थाले [10],

१. कनुप्रिया, आम्र-बौर का अर्थ, ३१ — 'कभी खिन्न हो कर, कभी अनबोला ठान कर'

२. सात गीत-वर्ष, कस्बे की शाम, ६१ — 'खेतों पर अन्हियारी घिर आई'

३. वही, घाटी का बादल, १३७ — 'मुड़े कटानों मे, दर्रों में भटके'

४. वही, नवम्बर की दोपहर, ३२ — 'गदराहट बन बन ढली होगी अंगों में'

५. (क) कनुप्रिया, समुद्र-स्वप्न, ८० — 'मेरे वक्ष के गहराव में'

(ख) वही, वही, ८१ — 'मेरे वक्ष का गहराव'

६. (क) वही, आदिम भय, ५१ — 'गुंजलक बांध कर बैठ गया है'

(ख) वही, केलिसखी, ५४ — 'नागवधू की गुंजलक की भांति'

७. अंधा युग, अंक १, १७ — 'अजगर-सी गुंजलिका में'

८. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो ?, ३९ — 'जब मुझे चेत हुआ'

९. अंधा युग, अक ४, ८३ — 'रक्त काले काले थक्कों मे जमा हुआ है'

१०. सात गीत-वर्ष, इतने दिन बाद, ६० — 'थाले की जूही कुछ डाली'

पोई [1], प्रास [2], बांझो [3], सहयात्री [4], सांझी [5], सुनहरिया [6]।

'**अनबोला**' संज्ञा पुं० शब्द 'मौन' अर्थ में बिल्कुल नया है।

'**अन्हियारी**' स्त्री० शब्द 'अधियारी रात' अर्थ में है। अवधी में 'अन्हिआर' पुं० शब्द 'अंधेरा अर्थ में है। वैकल्पिक शब्द-रूप 'अन्हियार' भी चलता है (सं० अंधकार)। वहां 'अन्हिआरी' का अर्थ 'अंधेरी रात' ही है।

'**कटानों**' बहु० शब्द का अर्थ है 'कटावों'।

'**गहराना**' अ० क्रि० का अर्थ है — 'जवानी में शरीर के अंगों का भर कर सुंदर और सुडौल होना'। 'गदराहट' भाव० संज्ञा है। 'आहट' हिं० का पर-प्रत्यय है।

'**गहराव**' भाव० संज्ञा का अर्थ है 'गहराई का भाव'। 'गहराना' स० क्रि० या 'गहरा' वि० में 'आव' प्रत्यय जुड़ कर 'गहराव' बना है। 'गहराना' क्रि० मे प्रत्यय जोड़ने पर 'ना' का लोप हो जायेगा।

'**गुंजलक**' (फा० गुजल्क) के अर्थ हैं — 'गुत्थी, सिलवट, कुण्डली' आदि।

'**गुंजलिका**' नया स्त्री० शब्द-रूप है। अर्थ वही — 'सिलवट, कुंडली'

'**चेत**' पु० (स० चेतस्) 'यहां 'होश, ज्ञान' आदि अर्थों मे है।

'**थक्कों**' बहु० शब्द 'परतों, मोटी तहों' आदि अर्थों में है।

'**थाला**' पु० शब्द का अर्थ है — 'पेड़, पौधे आदि के चारो ओर का वह गोल गड्ढा जिस में पानी भरा जाता है। आल-बाल।'

---

१. कनुप्रिया, आम्र-बौर का गीत, २५ — '**पोई** की जगली लतरो के पके फलो'
२. अंधा युग, अंक ४, ७८ — 'शर, शक्ति, **प्रास**, नाराच गदाए सारी'
३. (क) सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३९ — '**बांझों** के छितरे छितरे वन'
(ख) पृष्ठ वही — '**बांझों** के नोकीले पत्ते'
४. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो, ३९ — 'मेरे **सहयात्री**'
५. सात गीत-वर्ष, सांझ के बादल, १०४ — 'नीलम पर किरनो का **सांझी**'
६. वहीं, कस्बे की शाम, ६१ — 'पश्चिम की **सुनहरिया** घुघराई'

'**पोई**' (सं० पोतकी या पोदकी) स्त्री० शब्द है। अर्थ — वर्षा तथा शिशिर ऋतु में होने वाली एक प्रसिद्ध लता।

'**प्रास**' पुराने ढंग का एक प्रकार का भाला है। यहां 'अनुप्रास' अलंकार के अर्थ मे 'प्रास' नहीं है।

'**बांझ**' एक प्रकार का पहाड़ी वृक्ष है।

'**सहयात्री**' नव पुं० शब्द है। उर्दू के 'हमसफर' शब्द का यह नया हिंदी समानक शब्द है। फ़ा० और अरबी मे 'हमसफर' वि० के रूप में भी चलता है।

'**सांझी**' स्त्री० (हिं० सांझ) शब्द है। यह प्रायः स्त्री जाति में प्रचलित एक लोक-कला है जिसमे फर्श पर चित्रकारी की जाती है। इसी को गुजरात में 'सथिया', महाराष्ट्र मे 'रंगोली', बंगाल में 'अल्पना' तथा दक्षिण भारत में 'कोलम्' कहते है।

'**सुनहरिया**' भाव० संज्ञा का अर्थ है 'सुनहलापन'। अवधी में 'अन्हुअरिया'[1], भाव० संज्ञा 'अंधेरा' या कालापन अर्थ मे विद्यमान है। हिंदी में 'सुनहरिया' शब्द उसी के तौल पर है।

संज्ञा-विकार

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष संज्ञा-विकार ये हैं —

अजुरी[2] (अञ्जलि), कन[3] (ण), कनु[4] (कान्ह), काजर[5] (ल),

---

१. अवधी कोष, 'समीर', दे० 'अन्हिआर'।

२. (क) कनुप्रिया, शब्द : अर्थहीन, ७१ — 'हर शब्द को अंजुरी बना कर'

(ख) सात गीत-वर्ष, सांझ के बादल, १३४ — 'अंजुरी भर धूप'

३. ठण्डा लोहा, जागरण, ३२ — 'शबनम के आंसू कन'

४. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो ?, ३७ — 'बताऊं तुझे कनु सांवरे'

५. ठण्डा लोहा जागरण, ३२ — 'पुतरी पर फैला काजर'

किरन [1] (ण), केस [2] (श), जगत [3] (त्), दरस [4] (दर्शन), द्वारे [5] (र), निमंत्रन [6] (ण), परिवर्तक [7] (प्रवर्त्तक), प्रान [8] (ण), बंसवट [9] (वंशीवट), बान [10] (ण), बुदबुद [11] (बुद्बुद), भगवान [12] (न्), मायाविनि [13] (नी), मृनालों [14] (ण), सपन [15] (स्वप्न या सपना), समर्पन [16] (ण), सम्राट [17] (ट्), हिरने [18] (न) ।

---

१. वही, उदास तुम, १५ — ' उड कर थकी **किरन** '

२. वही, तुम, ३१ — ' काले **केस** '

३. थके हुये कलाकार से, ५७ — ' **जगत** का सृजन '

४. वही, एक पत्र, ३९ — ' तुम्हारे सौ सौ **दरस** निसार '

५. सात गीत-वर्ष दो मनस्विनियां ११० — ' अजनबी लौट चुके **द्वारे** से '

६. ठण्डा लोहा, बसंती दिन, २७ — ' मनहरन **निमंत्रन** '

७. वही, निराला के प्रति. ५२ — ' युग **परिवर्तक** कवि ने '

८. (क) वही, तुम, ३१ — ' बादल दल में **प्रान** '

(ख) पृष्ठ वही — ' सच पूछो मेरी **प्रान** '

(ग) वही, एक पत्र, ३९ — ' जैसे तन मन-जीवन-**प्रान** '

९. वही, फागुन की शाम, २० — ' उस **बंसवट** में '

१०. वही, तुम्हारे चरण, ११ — ' ये दो मदन के **बान** '

११. वही, मुग्धा, ३० — ' निर्झर से उठने **बुदबुद** '

१२. ठण्डा लोहा, तुम, ३१ — ' तुम्हारे आंसू में **भगवान** '

१३. वही, एक पत्र, ३८ — ' बनी **मायाविनि**-सी '

१४. वही, फ़ीरोज़ी होंठ, २६ — ' **मृनालों** की मुलायम बांह '

१५. (क) वही, थके हुए कलाकार से, ५७ — ' सृष्टि का सातरंगी **सपन** '

(ख) वही, झील के किनारे, ७९ — ' एक जादू के **सपन**-सा '

१६. वही, फीरोजी होंठ, २६ — ' गुनाहों का **समर्पन** भी '

१७. अंधा युग, अंक ५, ११५ — ' चक्रवर्ती **सम्राट** का '

१८. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १४३ — ' बादल चांदी के **हिरने**-सा '

विशेषण

कुछ शब्द-प्रयोग द्रष्टव्य है—

गझिन [1], गोर [2], धुंईली [3], निचाट [4], फूलबसे [5], रसमसाती [6], लोखरिया [7], शबनमी [8], सांवर [9], सुबुक [10]।

यहां 'गझिन' घना, मोटा, सघन आदि अर्थों में है।

'गोर' (स० गौर) का अर्थ है — 'गोरी'।

'धुंईली' वि० 'धुंधली' अर्थ रखता है। यह नया वि० शब्द-रूप है।

'निचाट' वि० अवधी में 'सुनसान, निर्जन' आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है। यहां यही अर्थ है।

'फूलबसे' नया सामासिक वि० है। अर्थ — 'फूल की सुगंध में बसे हुए, सुगंधित'।

'रसमसाती' वि० 'सुखद' या 'पसीने में तर कर देने वाली' अर्थ में जान पड़ता है। 'रसमसा' [11] वि० भी इन्हीं अर्थों में है यथा रसमस दिन।

'लोखरिया' वि० भी नया ही है। अर्थ — 'लौखर' की भांति नाक और

---

१. (क) सात गीत-वर्ष, आंगन-बेरी, ११६ — 'एक गझिन गुच्छा'

(ख) वही, वही, ११७ — 'गझिन गुच्छ फूल होंगे'

२. वही, अन्धेरे का फूल, ११३ — 'गोर-सांवर उंगलियां'

३. वही, घाटी का बादल, १४२ — 'दिव्य ज्योति-सी धूप धुंईली'

४. वही बाणभट्ट, ८७ — 'शोण का निचाट कूल'

५. वही, एक छवि, १२७ — 'छोटे फूलबसे घर'

६. ठण्डा लोहा, तुम्हारे चरण, ११ — 'रसमसाती धूप का ढलता पहर'

७. सात गीत-वर्ष, फागुन के दिन की .., ३४ — 'चौकन्नी लोखरिया मछली'

८. ठण्डा लोहा, जागरण, ३२ — 'ढलक गई शबनमी नजर'

९. सात गीत-वर्ष, अंधेरे का फूल, ११३ — 'तुम्हारी गोर-सांवर उंगलियां'

१०. वही, एक छवि, १२७ — 'सुबुक हठीली'

११. मानक हिंदी कोश, चौथा खंड, द० 'रस-मसा'

चमक रखने वाली '। ठठेरी में काम आने वाले औजारों को 'लोखर' कहते हैं।

'**शबनमी**' वि० 'अश्रुपूर्ण' अर्थ में नया प्रयोग ही है। फ़ा० में 'शबनम' स्त्री० का अर्थ है ओस, आकाश-जल। वहां 'शबनमी'[1] स्त्री० शब्द 'मच्छरदानी' अर्थ में भी है। किंतु यहां अश्रुपूर्ण, भीगी, चमकती आदि अर्थ ही हैं।

'**सांवर**' वि० यहां सांवली अर्थ मे है। 'सावरी' स्त्री० शब्द का ही यह संक्षिप्त रूप है।

'**सुबक**' वि० यहां 'चुस्त, हल्की' आदि अर्थों में है। फा० में 'सबुक' (या 'सुबक) शब्द-रूप इन्हीं अर्थों में है।

विशेषण-विकार

कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

अधखुल[2] (ली), अनचित्ते[3] (चीने), आखीरी[4] (खि), आस्थावान[5] (न्), जादू[6] (जादुई), नसीली[7] (शी), पर्वती[8] (तीय), महान[9] (न्),

---

१. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, मद्दाह, दे० 'शबनमी'
२. ठण्डा लोहा, समापन, १२० — 'पलकें दोनों तन्द्रालस थीं, **अधखुल** थीं'
३. वही, बेला महका, २४ — '**अनचित्ते** चुम्बन में'
४. कनुप्रिया, विप्रलब्धा, ६३ — 'पात्र की **आखीरी** बूंद-सा'
५. (क) अंधा युग, समापन, १२५ — 'तुम तो हो **आस्थावान**'
   (ख) पृष्ठ वही — '**आस्थावान** शेष नहीं है'
६. सात गीत-वर्ष, बातें, १०१ — 'चंदन का **जादू** दरवाज़ा खुल जाता है'
७. ठंडा लोहा, तुम, ३१ — '**नसीली** गीली काली रात'
८. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३८ — 'छोटे **पर्वती** गांव थे'
९. (क) कनुप्रिया, उसी आम के नीचे, ६७ — 'कितना **महान** हो गया है'
   (ख) पृष्ठ वही — 'तुम्हारे **महान** बनने में'
   (ग) वही, अमंगल छाया, ७१ — 'जिसके **महान** प्रिय की'
   (घ) वही, एक प्रश्न, ७२ — 'मेरे **महान** कनु'

विराट [1] (ट्), शक्तिवान [2] (मान्), सलज [3] (ज्ज), साँवल [4] (ला), सोरह [5] (सोलह), हज्जारों [6] (ज)।

विशेषण-विपर्यय

भारती जी ने विशेषण-विपर्ययों के बड़े ही सुन्दर प्रयोग किये हैं। कदाचित् सब कवियो में इस दृष्टि से वे प्रथम स्थान के अधिकारी हैं। कुछ उदाहरण ये हैं —

अन्धा [7], (निश्चय, युग, समुद्र), अन्धी [8] (आशा, गुफ़ा, प्रतिहिंसा, संस्कृति) अन्धे [9], (आदेश, दर्शन), आवारा [10] (पांव), कटीली [11] (लहरियों),

---

१. (क) ठंडा लोहा, यह आत्मा की खूंखार प्यास, ६९ — 'विराट अज्ञात सत्य'
   (ख) वही, प्रथम प्रणय, ७४ — 'यह विराट चक्की'
   (ग) वही, फूल, मोमबत्तियां, सपने, ९० — 'जीवन है कुछ इतना विराट'
२. सात गीत-वर्ष, निर्माण-योजना, ८१ — 'शक्तिवान घोड़े हैं सोये हुये'
३. ठण्डा लोहा, मुग्धा, ३० — 'सलज निगाहों पर'
४ अंधा युग, समापन, १२० — 'नील मेघ-सा तन साँवल'
५. सात गीत-वर्ष, यह ढलता दिन, १०६ — 'सोरह सिंगार सजे'
६. ठण्डा लोहा, यह आत्मा की खूंखार प्यास, ७१ — 'हज्जारों भूखी बांहें'
७. (क) सात गीत-वर्ष, सैरिक वाणी, ५२ -- 'इतिहासों का अन्धा निश्चय'
   (ख) अंधा युग, समापन, १२६ — 'अंधा युग पैठ गया था'
   (ग) अन्धा युग, अन्तराल, ७२ — 'यह युग एक अन्धा समुद्र है'
८. (क) अंधा युग, अंक १, २७ — 'अन्धी आशा माता गान्धारी की'
   (ख) अंधा युग, अंक १, ३५ — 'एक अन्धी गुफ़ा में हूं'
   (ग) अंधा युग, समापन, १२६ — 'अन्धी प्रतिहिंसा बना'
   (घ) अंधा युग, कौरव नगरी, १३ — 'उस अंधी संस्कृति'
९. (क) अंधा युग, अंक ५, १०८ — 'अन्धे आदेश मिलें'
   (ख) अंधा युग, अंक १, २७ — 'राजा के अन्धे दर्शन की'
१०. सात गीत-वर्ष, संक्रान्ति, ४० — 'ये आवारा पांव...'
११. ठण्डा लोहा, झील के किनारे, ७९ — 'कटीली लहरियों को...'

कामातुर [१], (मेघधूम), कुमारी [२] (घाटी), क्वांरा [३] (वट-पत्र), क्वांरी [४] (मांग, सीपी), गरवीला [५] (पर्वत), गुनगुने [६] (स्पर्श), गूंगे [७] (झकोरे), गोरे [८] (जादू), घायल [९] (फूल) चिंतित [१०] (माथे), जहरीली [११] (गुफ़ा), ज़हरीले [१२] (बाल), तरल [१३] (घुमाव), नपुंसक [१४] (अस्तित्व), नाज़ुक-मृदुल [१५] (तूफ़ान), निहत्थी [१६] (आवाज़), पथरीला [१७] (दर्द), बीमार [१८] (गुलाब), मासूम [१९] (धरती, बादल),

---

१. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३७ — ' इस **कामातुर** मेघधूम '

२. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३७ — ' नितांत **कुमारी** घाटी '

३. कनुप्रिया, समुद्र-स्वप्न, ८१ — ' **क्वांरा** मुलायम गुलाबी वटपत्र '

४. (क) कनुप्रिया, आम्र-बौर का गीत, २५ — ' **क्वांरी** उजली पवित्र मांग '

(ख) सात गीत-वर्ष, फूल, सागर, सीपी, १३१ ' **क्वांरी**,हल्की रतनारी सीपी '

५. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३९ — ' **गरवीला** पर्वत '

६. कनुप्रिया, सृजन संगिनी, ४६ — ' **गुनगुने** स्पर्शों...'

७. कनुप्रिया, समुद्र-स्वप्न, ८२ — ' हवा के **गूंगे** झकोरे '

८. सात गीत-वर्ष, धूल भरी आंधी का गीत, ६४ — ' अगों के जादू **गोरे** '

९. सात गीत-वर्ष, नवम्बर की दोपहर, ३२ — ' **घायल** फूलों की माला '

१०. (क) अंधा युग, अंक ५, १०३ — ' जिनके **चिंतित** माथे पर '

(ख) सात गीत-वर्ष, संक्रान्ति, ४१ — ' **चिंतित** माथे...'

११. सात गीत-वर्ष, निर्माण योजना, ८० — ' अंधी **ज़हरीली** गुफ़ाओं '

१२. ठण्डा लोहा, तुम, ३१ — ' ये **ज़हरीले** बाल ...'

१३. कनुप्रिया, सृजन-संगिनी, ४५ — ' नदियों जैसे **तरल** घुमाव '

१४. अंधा युग, अंक २, ३५ — ' इस **नपुंसक** अस्तित्व से '

१५. ठण्डा लोहा, तुम्हारे चरण, ११ — ' दो **नाज़ुक मृदुल** तूफ़ान '

१६. सात गीत-वर्ष, टूटा पहिया, ९३ — ' अकेली **निहत्थी** आवाज़ '

१७. ठण्डा लोहा, यक्ष का निवेदन, ६१ — ' यह **पथरीला** दर्द काव्य का '

१८. ठण्डा लोहा, उदास मैं, १७ — ' ज्यों गुलाब **बीमार** '

१९. (क) ठण्डा लोहा, झील के किनारे, ५८ — ' **मासूम** धरती की '

(ख) ठण्डा लोहा, तुम्हारे चरण, ११ — ' दो बड़े **मासूम** बादल '

रसवंती [1] (आग), रेतीली [2] (वेला), सर्पीला [3] (कसाव) ।

क्रिया

कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ उल्लेखनीय संज्ञाएं ये हैं —

उचटाती [4], उतराते [5], गहराती [6], चिता [7], चीथ [8], छीज [9], ढील [10], घुंघराई [11], पटा [12], पिरा [13], पुर [14], बतियाती [15], रिता [16], रीत [17],

---

१. सात गीत-वर्ष, नया रस, ३० — ' इन पिघले फूलों की रसवंती आग...'

२. सात गीत-वर्ष, दिन ढले की बारिश, १२१ — ' इस रेतीली वेला पर '

३. कनुप्रिया, विप्रलब्धा, ६२ — ' सर्पीला कसाव एक '

४. सात गीत-वर्ष, ढीठ चाँदनी, ११९ — ' निंदिया उचटाती है '

५. ठण्डा लोहा, फूल, मोमबत्तियां, सपने, ९० — ' लहरों पर उतराते हुये कफ़न '

६. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो, ३८ — ' गहराती हुई गोधूली वेला में '

७. कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, ३३ — ' तो क्या तुम चिता रहे थे '

८. अंधा युग, अंक २, ३६ — ' बिन दांतो के चीथ खायें '

९. सात गीत-वर्ष, अवशिष्ट, ६७ — ' कन कन में छीज गया '

१०. सात गीत-वर्ष, शाम, एक थकी लड़की, १२३ — ' कसे हुये अंग ढील '

११. सात गीत-वर्ष, कस्बे की शाम, ६१ — ' पश्चिम की सुनहरिया घुंघराई '

१२. अंधा युग, समापन, १२३ — ' सड़ा रक्त निकल जाने से फोड़े की टीस पटा जाती है '

१३. सात गीत-वर्ष, आंगन, ६५ — ' यादों से पिरा पिरा उठना '

१४. सात गीत-वर्ष, प्रमथ्यु गाथा, २२ — ' सारा घर फिर से पुर जाता है '

१५. सात गीत-वर्ष, ढीठ चांदनी, ११९ — ' घण्टों बतियाती है '

१६. कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, ३० — ' जिसे तुम रिता देना चाहते थे '

१७. (क) कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, २९ — ' मुझे तुम तक पहुंचा कर रीत जाती हैं '

(ख) पृष्ठ वही — ' रीत-रीत जाती हैं '

रीतता [१], रीते [२], व्यापी [३], सहेज [४], साल [५], सालता [६], सालतीं [७], स्वीकारते [८], स्वीकारा [९], हुमच [१०]।

'**उचटाना**' स० क्रि० (सं० उच्चाटन) है अर्थ 'उखाड़ना तोड़ना, विरक्त करना' इत्यादि। यहां 'तोड़ना' अर्थ है।

'**उतराना**' अ० क्रि० (स० उत्तरण) का अर्थ है — 'पानी में पड़ी हुई चीज का उस के ऊपर तैरना'। यहां केवल 'तैरना' अर्थ है।

'**गहराना**' अ० क्रि० का अर्थ है — गहरा होना। तुल० — 'सध्या का गहराया झुटपुट, भीलों का-सा धरे सिर मुकुट' (पत)

'**चिताना**' या चेताना स० क्रियाएं (हिं० चेतना का स० रूप) हैं। अर्थ — 'किसी विस्मृत बात की ओर ध्यान दिलाना', चेतावनी या उपदेश देना'।

'**चीथना**' स० क्रि० 'टुकड़े टुकड़े करना, फाडना' आदि अर्थों मे है। प्राय: दांतों द्वारा ही यह क्रिया सपन्न होती है।

'**छीजना**' अ० क्रि० (सं० क्षीण) 'घिस जाना, कम हो जाना' आदि अर्थों में है।

---

१. कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, २९ — 'इन सब को **रीतता** हुआ पाया है'
२. कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, ३१ — 'मान लो न भी **रीते**'
३. (क) ठण्डा लोहा, फ़ीरोज़ी होठ, २६ — '**व्यापी** अमा की घोर कजराई'
(ख) अंधा युग, अंक १, १६ — 'आज मुझे आशंका **व्यापी** है'
४. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो, ३६ — 'फूल की थाली-सी **सहेज** कर उठा लिया'
५. कनुप्रिया, आम्र-बौर का गीत, २६ — 'बुरी तरह **साल** रहे हैं'
६. कनुप्रिया, पूर्वराग, १९ — 'हर क्षण **सालता** रहता है'
७. सात गीत-वर्ष, वृहन्नला, ८९ — '**सालतीं** टंकारें थी'
८. कनुप्रिया, पूर्वराग, गीत ३, १६ — 'प्रणाम मात्र को क्यों **स्वीकारते**'
९. कनुप्रिया, पूर्वराग, गीत ३, १५ — 'कभी उसे **स्वीकारा** ही नही'
१०. ठण्डा लोहा, डोले का गीत, १९ — 'चल पड़े डोला **हुमच** कर'

'क्रीलना' स० क्रि० का अर्थ है — 'क्रीला करना'।

'धुंधराना' अ० क्रि० 'धुंधला होना' अर्थ में है।

'पटाना' अ० क्रि० पूरबी बोली में 'कम होना, घटना' अर्थ में है यथा रोग या सूजन पटाना[1]। यहां यही अर्थ है।

'पिराना' अ० क्रि० का अर्थ है — पीड़ा होना।

'पुरना' अ० क्रि० का अर्थ है — पूर्ण होना।

बतियाना' अ० क्रि० का अर्थ है — बातचीत करना।

'रिताना' स० क्रि० 'खाली करना' अर्थ में भी है। इसी अर्थ में 'रितवना' क्रि० भी है।

'रीतना' स० क्रि० 'खाली होना' अर्थ में है। इसी से रीत, रीतता और रीते क्रियाओं का संबंध है।

'व्यापना' अ० क्रि० (सं० व्यापन) 'चारों ओर फैलना, किसी में समाना' अर्थों में है।

'सहेजना' स० क्रि० का अर्थ है — 'संभाल कर रखना'। इसका संबंध 'सहेज' देशज पुं० शब्द से है जिसका अर्थ है 'जामन'। चूंकि जामन लगाए हुए दूध को दही बनने तक 'सभाल कर' रखा जाता है अतः 'सहेजना' स० क्रि० में भी इसी अर्थ का समावेश हो गया है। 'मानक हिंदी कोश' में न केवल इस की व्युत्पत्ति ही संदिग्ध है अपितु अर्थ भी कम दिये गए हैं।[2] वहां अर० 'सही' शब्द से इसकी व्युत्पत्ति सिद्ध की गई है जोकि ठीक नही जान पड़ती।

'सालना अ० क्रि० (सं० शूल) का अर्थ है 'किसी' वस्तु का चुभ कर पीड़ा देना। कष्ट देना'। यह क्रि०स० रूप में भी है।

'स्वीकारना' अ० क्रि० 'स्वीकार करना' अर्थ में है।

'हुमचना'[3] या हुमचनो अ० क्रि० व्रजभाषा की है। अर्थ — 'उछलना,

---

१. मानक हिंदी कोश, तीसरा खंड, दे० 'पटाना'।

२. मानक हिंदी कोश, पाचवां खण्ड, दे० 'सहेजना'।

३. व्रजभाषा सूरकोश, द्वितीय खण्ड।

ठुमकना, ज़ोर से नीचे दबाना ' । यहां पहला अर्थ ठीक जान पड़ता है । ' हुमकना ' क्रि० भी इसी अर्थ में है । ये क्रियाएं अनुकरणात्मक हैं ।

क्रिया-विकार

कुछ विकृत रूपों वाली क्रियायें द्रष्टव्य हैं —

जायँ [1] (एं या यें), जाय [2] (ए या ये), पाय [3], मड़राए [4] (मं) मड़राएगी [5] (मं), मड़राती [6] (मं) रक्खा [7] (रखा), रक्खूं [8], रक्खे [9], रक्खो [10] ।

उपसर्ग

अन्य कवियों की भांति भारती जी ने भी अ, अन (सं० अन्), दुर्, निर्,

---

१. (क) ठण्डा लोहा, गुनाह का गीत, २८ — ' होठ पर झुक जायँ '

(ख) अंधा युग, अंक ३, ६७ — ' ये सारे वनपशु चबा जायँ '

२. (क) ठण्डा लोहा, एक पत्र, ३८ — ' रुक जाय न '

(ख) अंधा युग, अंक ३, ५४ — ' दुख भूल जाय '

३. अंधा युग, अंक २, ४० — ' कोई भी देख पाय '

४. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३७ — ' शिखरों से टकरा कर मड़राए '

५. ठण्डा लोहा, मेरी परछांही, ८५ — ' तड़पेगी, मड़राएगी '

६. ठण्डा लोहा, यह आत्मा की खूंखार प्यास, ७१ — ' गतिरोधों से टकराती मड़राती '

७. (क) सात गीत-वर्ष, अंधेरे का फूल, ११३ — ' फूल ने जिसको न रक्खा क़ैद '

(ख) कनुप्रिया, सृजन संगिनी, ४३ — ' भेज रक्खा है......'

८. कनुप्रिया, आम्रबौर का अर्थ, ३३ — ' मर्यादित रक्खूं '

९. अंधा युग, अंक ५, १०४ — ' घुटनों पर माथा रक्खे '

१०. ठण्डा लोहा, एक पत्र, ३९ — ' न मुझ से आशा रक्खो '

प्र, और सु उपसर्गों का प्रयोग किया है। 'बे' उपसर्ग भी कई शब्दों से पूर्व आया है। सब के उदाहरण क्रमशः इस प्रकार हैं —

अचेतन, अटूटी, अपरंपार, अबूझ, अस्फुट आदि

अनउगे, अनकहनी, अनकही, अनचित्ते, अनछुए, अनजनमी, अनदेखा, अनबांधे, अनबोला, अनबोले, अनमापी, अनलिखे, अनहुई, अनास्था, अनिच्छ आदि।

दुरुपयोग, दुर्गंध, दुर्दान्त, दुर्लंघ्य, दुर्विनीत।

निरुत्तर, निर्निमेष, निर्वसना, निर्वासित, निर्व्याख्या।

प्रगाढ़, प्रगाढ़ता, प्रदीप्त, प्रसुप्त, प्रस्फुटन।

सुकुमार, सुकोमल, सुगंध, सुदूर।

फा० 'बे' उपसर्ग देखें — बेकली, बेकाबू, बेजान, बेतरतीबा, बेगाल बेमहत्त्व, बेमानी, बेस्वाद, बेहिसाब इत्यादि।

लिंग

अन्य कवियों की तरह भारती जी ने भी लिंगों के निर्धारण में रुचि-स्वातन्त्र्य का परिचय दिया है। उदाहरणतः जो शब्द हिंदी में प्रायः पुं० ही चलते हैं उन्हें कवि ने स्त्री० माना है यथा प्रलय [1], महावर [2], मित्र [3], श्वास [4], सामर्थ्य [5] और हलक [6]।

संस्कृत में 'मित्र' नपुं०, हिं० में पुं० शब्द है। प्रलय और श्वास शब्द सं०, हिं० और व्रज० में प्रायः पुं० ही रहते हैं। 'सामर्थ्य' शब्द स० मे नपुं०, और हिं० व्रज० मे पुं० रहता है। 'महावर' शब्द हि० और व्रज० मे पु० ही है। 'हलक'

---

१. कनुप्रिया, समुद्र-स्वप्न, ८२ — 'प्रलय फिर शुरू हो जाती है'

२. ठण्डा लोहा, तुम्हारे चरण, १२ — 'सात रंगों की महावर से रचे'

३. (क) कनुप्रिया, एक प्रश्न, ७३ — 'तुम्हारी बावरी मित्र'

(ख) कनुप्रिया, आम्र बौर का अर्थ, ३२ — 'मुंहलगी, जिद्दी, नादान मित्र'

४. ठण्डा लोहा, उदास मैं, १७ — 'चलती श्वास झकोर'

५. कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो ?, ३७ — 'बचाने की सामर्थ्य रखते हो'

६. अंधा युग, अंक ४, ८३ — 'हलक भी जमी होगी...'

अरबी में पुं० है और हिं० में भी पुं० ही है। अरबी में इसका उच्चारण 'हल्क़'[1] है।

इसके विपरीत फेना[2] और सिवार[3] शब्द हिंदी में स्त्री० ही हैं किंतु कवि ने इन्हें पुं० रूप मे लिखा है। 'फेना'[4] शब्द 'फेन' पुं० का ही नव स्त्री० रूप है। 'सिवार' और 'सेवार' शब्द (सं० शैवल, पुं०, शैवाल नपुं०) भी स्त्री ही हैं।

वचन

वचनों के संबंध में नियम-भंग बहुत कम मिलेगा। कही कही बहुवचन की अपेक्षा एकवचन लिख कर ही काम चला लिया गया है। यह[5] सर्वनाम और 'है'[6] एक० क्रिया का प्रयोग इसी के उदाहरण हैं।

'सबों'[7] नया बहुवचन है।[8]

---

१. उर्दू-हिंदी शब्दकोश, 'मद्दाह', दे० 'हल्क़'

२. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १३८ — 'महासागर सा फेंक रहा है उजला फेना'

३. कनुप्रिया, आदिम भय, ५२ — 'केशों से सिवार लिपटा है'

४. तुल० — 'सलिल राशियां उमड़ी फैलाकर फेना' — (मैथिलीशरण गुप्त, प्रदक्षिणा, ५८)

५. (क) ठण्डा लोहा, प्रतिध्वनि, ७३ — 'यह थके कदम'

(ख) ठण्डा लोहा, फूल, मोमबत्तियां, सपने, ९० — 'यह फूल, मोमबत्तियां और टूटे सपने'

६. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १४० 'जिस को केवल दो पग दीख रहा है'

७. (क) ठण्डा लोहा, झील के किनारे, ७९ — 'इन सबों से सर्वथा निरपेक्ष'

(ख) ठण्डा लोहा, झील के किनारे, ८० — 'इन सबों के बंधन से'

(ग) सात गीत-वर्ष, धुंधली नदी मे, १०७ — 'इन सबों से बड़ा सहारा है'

८ हिन्दी प्रयोग, रामचन्द्र वर्मा, परि० वचन, १३६

'ये'[1] बहु० सर्वनाम शब्द का प्रयोग एकवचन के रूप में करना कवि को अत्यंत रुचिकर लगता है।

संधि

व्यंजन संधियों और वृद्धि संधियों के प्रति कवि का आकर्षण नहीं है। शेष संधियां मिल जाती हैं।

कुछ दीर्घ स्वर संधियां ये हैं — कटूक्तियों, गगावतरण, दैत्याकार, भयाक्रांत, शरदातप, सूर्यास्त।

गुण संधियों के नमूने देखें — अर्द्धोन्मीलित, गर्वोन्नत, पतनोन्मुख, प्रणयोन्माद, मदोन्मत्त, मरणोन्मुख, युद्धोपरांत, वज्रोपम, सहोदर और ह्रासोन्मुख।

कुछ विसर्ग संधियां द्रष्टव्य है — अन्तर्मन, अन्तर्द्वन्द्व, ज्योतिर्माला, धनुर्धारी, निश्चल, निश्छल, निश्शब्द, निष्कपट. निष्फल, निस्सीम, मनोग्रंथि, मनोबुद्धि, मनोवृत्तियां, शिरस्त्राण इत्यादि।

समास

भारती जी की कविताओं में विविध प्रकार के समास मिल जाते हैं।

कुछ संबंध तत्पुरुष समास ये हैं — अन्तर-मंथन, आंगन-बेली, कथा-गायन,

---

१. (क) ठण्डा लोहा, फागुन की शाम, २० — 'उन्मन ये फागुन की शाम है'

(ख) ठण्डा लोहा, फागुन की शाम, २१ — 'ये ऋतु इतनी बदनाम है'

(ग) ठण्डा लोहा, मुक्तक, ३५ — 'तुम कभी ये दर्द सहो'

(घ) पृष्ठ वही — 'ये और भी बेदर्द सजा है'

(ङ) ठण्डा लोहा, एक पत्र, ३८ — 'ये माना जब थी मेरे पास'

(च) सात गीत-वर्ष, शाम : दो मनःस्थितियां, ११० — 'देखिये ये लहर डुबोये'

कौरव-दल, गृह-काज, जल-बूंदों, दंत-पंक्तियों, प्रभु-चक्र, बन-तुलसा, मर्म-पुकार, मानव-निर्णय, मानव-भविष्य, युद्ध-कथा, रस-बूंदों, वक्ष-स्पन्दन, सांझ-तरंगों, सृजन-योजना, सौभाग्य-बिंदु।

करण तत्पुरुष समास देखें — छांह-लिपी, जावक-रचित, ज्वार-धुले, दायित्व-युक्त, धूप-धुली, पीड़ा-सिक्त, मन्त्र-मुग्ध, रंग-रचे, रंग-लिखी, लज्जा-भीत, विष-भरे, शाप-ग्रस्त, स्नान-शीतल।

उपमान-पूर्वपद और उपमानोत्तरपद कर्मधारय समास ये हैं — अलक-पाश, कंचन-तन, गगन-पट, गुलाब-तन, चंदन-बाँहों, चंदन-मन, चंदन-शीतल, तरंग-मालाओं, पलक-सीपी, प्रवाल-द्वीप, फूल-यौवन, रेशम-लहरें, शंख-ग्रीवा, सेतु-जिस्म, स्वर्ण-धूल।

कुछ द्वन्द्व समास द्रष्टव्य हैं — क्षमा-शील, गांव-खेत, तड़पन-बेचैनी, सेज-पलंग।

'स' जोड़ कर बने अव्ययीभाव समास ये हैं —सचेत, सजल, सबल, सशक्त और सस्पन्द।

अन्य विविध समास इस प्रकार हैं —

अग्नि-पुष्प, चन्दन-कसाव, चन्दन-फूलों, चन्दन-शय्या, छाया-तन, छाया-मग्न, जल-निमग्न, जादू-फूल, दान गृह, धर्म शून्यता, प्रेत-काया, फूल-पाश, फौलाद-ढले, भय-डूबे, मंजरी-परिणय, मंत्र-पढ़े, मधु-देवता, मृत्यु-घाटियों, मेघ-दुपहरी, युग-संध्या, युद्ध-मुद्रा, रजत-फूल, रहस्य-मरण, लीला-तन, लीला-बंधन, विष-चुंबन, व्यंग्य-वचन, शोभा-चक्र।

अन्य शब्द-विकार

कुछ विशेष शब्द-विकार ये हैं —

अकस्मात[1] (त्), किंचित[2] (त्), तुम्ही[3] (तुम+ही).

---

१. (क) सात गीत-वर्ष, प्रमथ्यु गाथा, ३२ — 'अकस्मात नाले खतों म...'
(ख) सात गीत-वर्ष, आँगन, ६६ — 'अकस्मात मडरा के'

२. अंधा युग, शब्द : अर्थहीन, ७१ — 'किंचित मुड़ी हुई'

३. सात गीत-वर्ष, प्रमथ्यु गाथा, २३ — 'तुम्ही जीवन हो'

पृथक[1] (क्), मुझी[2] (मुझ+ही), युग-युगों[3] (युगयुग)।

इन में तुम्ही और मुझी शब्द तो 'ह' लोप के उदाहरण हैं जो कि राष्ट्रभाषा (खड़ी बोली) की एक प्रमुख विशेषता है।

शब्द-लोप

कहीं कहीं वाक्यों में के[4], में[5] और 'से'[6], शब्द लुप्त से जान पड़ते हैं। अतः शब्द-लोपी वाक्यों का विन्यास भारती जी ने भी किया है, ऐसा कहा जा सकता है।

नव शब्द

अन्य विशेष रूप से उल्लेखनीय शब्द ये हैं — कुबेला[7], खोया-सा-पन[8],

---

१. (क) ठण्डा लोहा, पशु का उदय, ३५ — 'उन्होने पृथक नहीं किया'
(ख) अंधा युग, अक ३, ६० — 'पाण्डवो से हो पृथक'
(ग) अंधा युग, समापन, १२५ — 'कर्म से पृथक'

२ (क) कनुप्रिया, शब्द : अर्थहीन, ७८ — 'उन शब्दों से मुझी को'
(ख) ठण्डा लोहा, घबराहट की शाम, ६३ — 'मुझी से बदला लेती'

३. (क) ठण्डा लोहा, झील के किनारे, ८१ — 'युग युगों के स्वप्न ....'
(ख) अंधा युग, समुद्र-स्वप्न, ७९ — 'युग युगों तक क्रीड़ा'

४. (क) ठण्डा लोहा, जागरण, ३२ — 'तुम्हारी पलकों (के) बीच विहान'
(ख) सात गीत-वर्ष, कौन — चरण ?, ४७ — 'पांवों (के) नीचे तक की धरती'

५. (क) कनप्रिया, पुर्वराग, गीत २, १४ — 'इस वेला (में) जब अपने को'
(ख) सात गीत-वर्ष, अवशिष्ट, ६७ — 'मन मन (में) मैं खीज गया'

६. कनुप्रिया, अमंगल छाया,, ७० — 'तू उसकी रोम रोम (से) परिचित है'

७. ठण्डा लोहा, डोले का गीत, १८ — 'अगर डोला कभी इस राह से गुजरे कुबेला'

८. ठण्डा लोहा, यह आत्मा की खूंखार प्यास, ६८ — 'टीस भरा खोया-सा-पन'

फूलसांप [1] और रुमझुमा [2]।

' कुबेला ' स्त्री० शब्द सं०, हिं० और व्रज० में ' बुरा समय ' अर्थ में है।

' खोया-सा-पन ' नितांत नवीन शब्द-प्रयोग है।

' फूलसांप ' नया सामासिक शब्द है। अर्थ — ' फूल जो सांपों के आकार में बने हों '। हिंदी में ' फूलसांप ' और ' फूलसंपेल ' शब्दों का एक अन्य अर्थ भी है — ' बैल या गाय, जिसका एक सींग दाहिनी ओर और दूसरा बाईं ओर गया हो [3]। किंतु यहां यह अर्थ अभिप्रेत नहीं है।

' रुमझुमाना ' स० क्रि० भी नयी ही है। हिंदी में ' रूमना ' और ' झूमना ' दो अ० क्रियाएं पहले से वर्तमान हैं। इन्हीं के योग से ' रूमझूम ' [4] अ० क्रि० भी घड ली जाती है। इसी ' रूमझूमना ' का स० रूप है ' रुमझुमाना ' — जिसका अर्थ है ' किसी को झूमने मे प्रवृत्त करना '।

प्रिय शब्द

प्रत्येक कवि की भांति भारती जी के भी कुछ विशेष प्रिय शब्द हैं। उदाहरण ये हैं —

अंधा, अंधी, अधे, अगणित, अनासक्त, अनास्था, अमंगल, असमय, आकाशगंगा उद्दाम, एकांत, कनु, किरन, गुनगुना, छिन, जगत, जिस्म, दावाग्नि, निभृत, निरपेक्ष, निरर्थक, निरापद, निर्वासन, प्रगाढ़, प्रदीप्त, बेदाग़, बेबस, बेसुध, बेहद, बेहोश, लीला-तन, लीलाबंधु, विराट (ट्), सरीखा, साँवरे, सिवार, सुकुमार, स्वर्णवर्णी।

---

१. सात गीत - वर्ष, अर्द्धस्वप्न का नृत्य, ९९ — ' वेणी के फूलसांप झूम गये '

२. ठण्डा लोहा, बादलों की पांत, ' कहर उस वक्त कोई रुमझुमा कर और ढाता हो '

३. मानक हिंदी कोश, चौथा खण्ड, दे० ' फूलसंपेल '

४. तुल० ' जाने किसकी स्मृति रूमझूम ' (महादेवी वर्मा)

ध्वन्यात्मक शब्द

कवि द्वारा प्रयुक्त शब्द-चित्रों की संख्या बहुत कम है। फिर भी झरनों की झर झर [१], मेघों की रिमझिम [२], चीड़ों की सनसन [३], पत्तों की खड़खड़ [४], भंवरों की गुन-गुन [५], फूलों की टप-टप [६], लपटों और लहरों की 'हहराना' [७] क्रिया यहां भी देखी जा सकती है।

'चुनरी' यहां भी चमचम [८] चमकती है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि ध्वनि-मूर्त चित्रों का भी भारती जी ने अंकन किया है किन्तु उन की संख्या बहुत कम है।

---

१. सात गीत-वर्ष, रात अंधियारी..., ७६ — 'झरने झरते झर झर'
२. ठण्डा लोहा, बसती दिन, २७ — 'अम्बर से बरस रहे रिमझिम'
३. सात गीत-वर्ष, घाटी का बादल, १४१ — 'चीड़ों ने सन सन कर'
४. अंधा युग, समापन, ११९ — 'खड़ खड़ खड़ कर उठे ताड़'
५. ठण्डा लोहा, उदास तुम, १६ — 'भंवरों की पाँतें गुन गुन कर'
६. कनुप्रिया, शब्द : अर्थहीन, ७७ — 'फूलों की तरह टप-टप'
७. (क) कनुप्रिया, तुम मेरे कौन हो ?, ३६ — 'हहराती हुई लपटों...'
   (ख) कनुप्रिया, केलिसखी, ५५ — 'हहराती लहरों के...'
८. ठण्डा लोहा, मुग्धा, ३० — 'बिजुरी की नव चमचम चुनर'

कवि-नामों के शब्द-संक्षेप

१. अं० — अंचल, रामेश्वर शुक्ल
२. अ० — अज्ञेय, सच्चिदानन्द वात्स्यायन
३. उ० — उदयशंकर भट्ट
४. गि० — गिरिजा कुमार माथुर
५. ज० — जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद
६. दि० — दिनकर, रामधारीसिंह
७. न० — नवीन, बालकृष्ण शर्मा
८. नि० — निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी
९. प० — पंत, सुमित्रानन्दन
१०. प्र० — प्रसाद, जयशंकर
११. ब० — बच्चन, हरिवंश राय
१२. भ० — भगवतीचरण वर्मा
१३. भा० — भारती, धर्मवीर
१४. म० — महादेवी वर्मा
१५. मा० — माखन लाल चतुर्वेदी
१६. मैं० — मैथिलीशरण गुप्त
१७. रा० — रामकुमार वर्मा
१८. श० — शर्मा, नरेन्द्र
१९. सि० — सियारामशरण गुप्त
२०. ह० — हरिकृष्ण प्रेमी

निष्कर्ष

आधुनिक काल के बीस प्रमुख हिंदी कवियों के शब्द-प्रयोगों का अध्ययन करने के पश्चात् हम जिन निष्कर्षों पर पहुँचे हैं उन को आगे प्रस्तुत किया जा रहा है। चूंकि हम ने सन् १९१५ से ले कर सन् १९६० तक लिखी हुई कविताओं को ही अपनी शोध-परिधि मे सम्मिलित किया है अत: हमारे निष्कर्ष भी इसी कालावधि पर निर्धारित समझे जाने चाहिए।

अब हम शोध-ग्रथ मे अपनाये हुये शीर्षको के अनुसार ही सारा विवेचन करेगे —

संज्ञा

जिन बीस हिंदी कवियों के शब्द-प्रयोगों का हम ने अनुशीलन किया है उन के द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष रूप से उल्लेखनीय सज्ञाएं ये है —

नव संज्ञाएं

अंतरतर ('अंतरात्मा' अर्थ में, न०), अधड (ब०), अनबोला (भा०), आकाशी (अँ०) आशी (पं०), उपनग (प०), उपमानव (न०), ओरें (म०), कामर (अँ०), क्रेंकार (अ०) चदरिमा (गि०), चंदिरा (गि०, पं०), चन्द्रकार (न०), झरोखेबाज (ब०), तनातनी (उ०), तरुवासिनी (कोयल, पं०), तोड़ (ह०), त्राहि (ब०), दुखमन (ब०), धरारमण (पं०), धुनी (सि०), नयनिमा (पं०), नैष्कर्म्य (नि०), प्रभापूर्य (नि०), मधुमासी (ईश्वर या वसंत,

अं०), मल्लरियां (न०), रंगिणी (पं०), शहरातियो (अ०), श्रेष्ठतमना (मा०), शशिहासिनी (चांदनी. पं०) सिताबी (प्र०), सुगबुगी (दि०) और सुगसुग (मै०) ।

विशेषणार्थक संज्ञाएं

इन मे विशेषणों को ही संज्ञाओं के रूप में प्रयुक्त किया गया है यथा ऊँचा (उ०) ऊंचे (उ०), ऊचों (मा०), चुरका (गि०), निराले (प्र०), नीचा (उ०), भरपूरों (सि०), मदमातों (भ०), मनचाही (मा०) ।

क्रियार्थक संज्ञाएं

कवियों ने क्रिया-रूपों को भी संज्ञाओं की भांति प्रयुक्त किया है यथा अकुलातो (मा०) उंडेल (मा०), उजडतों (मा०), उठनो (मा०), कटन (अं०), कलपने (पं०). कहन (मा०), काट (भ०), कोपना (मि०), खिलन (अं०, मा०), खींचों (अ०) गई (ब०), गिरों (ब०), चटखन (मा०), छीज (मै०), जगमग (मि०) डूबतो (मा०), पछेडा (प्र०). पसारा (श०), पिछडन (मा०) पिसतों (मा०), पिसना (नि०), बरस, बरसन (मा०), बुझन (अं०), मरना (उ०, ह०), मिमा (मै०) रटना (प्र०), रोने (न०), होनी (रा०) ।

समास

अग्निबीज(पं०), आरकाटी (मै०), इच्छा-द्रुम (न०), गुनगाहक (मै०), परधारी (व०), फेनाचल (उ०), बनोबास (नि०), मधुबाल (प०), मनजीत (अं०). मेघचर (ब०), रणछोडो (ह०) हीतल (मा०) ।

प्रत्यय	प्रत्यय लगा कर बनने वाले कुछ संज्ञा-रूप निम्नलिखित हैं :—
१. अड़	धाकड़ (ब)
२. आई	तरलाई (मा०), बदलाई (ब०), भरपाई (मा०)
३. आव	गहराव (भा०), मथाव (ब०)
४. आहट	गदराहट (भा०), दुहराहट (मा०)

५. औती चढ़ौती (मैं०), जुझौती (मै०)

६. औनी जगौनी (मैं०)

७ तम अतितम (प०), श्रेष्ठतम (मा०)

८. ता (सं० तल्) अजानता (पं०), अज्ञातशीलकुलता (दि०) कनकता (अँ०) गमता (न०), चैतन्यता (ब०), नयनता (पं०) निर्देहता (दि०), पुरुषोत्तमता (अँ०), फलभरता (प्र०), महानता (अ०), महा-प्राणता (मि०), मौनता (अँ०)।

९. पन किरनीलेपन (मा०), घरघुसनेपन (श०), नितेरापन (ह०), जागृतपन (अँ०, रा०), पूरेपन (ब०), मेरापन (उ०, मैं०, श०) शिशुपन (रा०)।

१०. पना अडिगपना (न०), भौंडपने (अ०)।

भाषाएं कवियों ने अनेक भाषाओं और उपभाषाओं से संज्ञाएं ग्रहण की हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :—

(क) संस्कृत तत्सम शब्द अत्यन्तगता (अ०), अवशंसी (दि०), आघानी (ब०), इरा (गि०), एकायन (अ०), एना (गि०), किञ्जल्किनी (उ०), खनक (अर्थ खोदने वाला, मि०), जन्मी (न०), नृग (नि०), भार (अर्थ ' परिमाण ', मैं०), मेघाली (अ०), यौतुक (मै), ललामी (अँ०), विनिर्जन (नि०), लहरी (मा०), बर्बरक (रै०), शोणिपा (नि०), सकाल (प०)।

(ख) तद्भव शब्द अजान (न०), अनी (अ०), पन्था (उ०), पूंगीफल (सि०), लून (मैं०), वनानी (मैं०), विभूत (म०), स्वागतकार (ब०)।

इन में से कुछ संज्ञाएं तो परिवर्तित शब्द-रूपों में संस्कृत मे भी हैं।

(ग) व्रजभाषा अगवैया (अ०), अपनपा (मा०), आगमनी (अँ०, दि०), उजागरिया (प०), ओसरे (मैं०), कचुल्ले (सि०), कठला (मि०), कत्तिन (दि०), घमछैयां (मैं०), घूम (मैं०), चंगे (नि०), चमकार (गि०), झरों (उ०), झूलनियां (मा०), डरियां (न०), थरिया (न०), नखी (नि०), नेतों (नि०), पंखियां (न०), पिसना (नि०), बक्खल (मैं०),

भूलनियां (मै०), मंगन (ब०), रनिया (न०), लरियां (न०), लिखन (सि०), सवाई (मै०), सीरे (सि०) ।

(घ) **अवधी** अन्हियारी (भा०) घरजानी (उ०), निचाट (मै०), लहरा (ब०), सुनहरिया (भा०) ।

(ङ) **अरबी-फ़ारसी और उर्दू** आगाही (दि०), ख़ार (गि०), ख़्याली (मा०), गुल ('अँगारा' अर्थ मे, गि०), मिबर (ब०), हिंदवाना (मै०) ।

(च) **तद्भव या अन्य प्रभावित शब्द-रूप** गुजलक (भा०), गुजलिका (भा०), चलाचली (सि०, ह०) दरदी (मा०), मालिकी (मै०), सहयत्री (हमसफर, भा०), सिरोपा (अ०), सफ़ेदी (सपेदी, या सफ़ेदी, मा०), सायते (मै०) ।

(छ) **बुंदेलखण्डी** टौरियां (गि०), डांग (गि०), पोर (मै०), बावना ताल (मै०) ।

(ज) **अन्य देशज शब्द** उटघे (ब०), ऐपन (गि०), ओली (सि०), एरी (नि०), कनबतियां (अ०), कमकरो (अ०), कांदि (अ०), खोबा (सि०), झटिका (नि०), झीम (मै०), तीसी (अ०), दौगरा (अ०), निछक्का (सि०), बाँझ (एक वृक्ष, भा०), बारस (अ०), मालञ्च (अ०), मुंहजोह (अ०), रावले (गि०), ललोई (गि०), साँझी (भा०), मेट (सि०) ।

(झ) **पद्य-सीमित शब्द-रूप** कोजागरी (अ०), फुनगी (अ०), बुन्ले (प्र०), सिरिस (अ०) ।

(ञ) **अंगरेजी शब्द** नियन (गि०), पुलपिट (ब०), बेस्टील (गि०) मेपिल (गि०), सिलहुट (गि०) ।

इन के अतिरिक्त अल्पना (पं०, श०), मझधारे (ब०) जैसे बंगला शब्द ; दूखों (मा०) जैसे दक्खिनी हिंदी के और गोखों (अ०) जैसे राजस्थानी भाषा के शब्द भी यत्रतत्र उपलब्ध हो जाते है ।

संज्ञा-विकार

व्यवहार-खण्ड मे कवियों द्वारा प्रयुक्त संज्ञाओं के विकृत रूपों का अध्ययन प्रस्तुत किया जा चुका है । हम ने शब्दों के लिखित रूपों पर ही ध्यान रखा है, उच्चार्य-

माण रूपों पर नहीं। शब्दों के उच्चरित रूपों का अध्ययन शुद्ध भाषा-विज्ञान का क्षेत्र है। यद्यपि अब हम भाषावैज्ञानिक विवेचन करने जा रहे हैं तथापि काव्य-भाषा की सीमाओं के कारण केवल लिखित संज्ञा-रूपों के विकारों का ही उल्लेख कर रहे हैं। जहां तक उच्चार्यमाण शब्द-रूपों का प्रश्न है उनका अध्ययन काव्य-भाषा की अपेक्षा गद्य-भाषा के अन्तर्गत करना ही अधिक समीचीन जान पड़ता है। अतः हमारे विवेचन की सीमा को ध्यान में रखना चाहिए।

सामान्य-परिवर्तन

सब से पहले हम संज्ञाओं के कुछ सामान्य परिवर्तनों को देखते हैं —

१. **हल्-लोप** प्रायः कवियों ने व्यजनांत शब्दों को स्वरान्त रूपों में लिखा है यथा 'अन्तर्' > 'अन्तर'। बोलचाल की दृष्टि से चाहे कोई रूप शुद्ध हो, कविता में अन्त्य व्यंजन के बाद स्वर 'अ' का आगम हो जाता है। निम्नलिखित उदाहरणों में भी 'हल्' के लोप की यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है —

अन्तस, असत, अहम, उपनिषद, चित, चेतस, जगत, तड़ित, तपस, तेजस, दिक, परिषद, प्रावृट, प्रेयस, बलवान, भगवान, भविष्यत, राजन, विद्वान, विद्युत, विपद, विभ्राट, शक्तिमान, सपत, सपद, सत, सम्राट, सरित, हनुमत, हनूमन, हिमवान।

हिंदी गद्य में भी 'हल्-लोप' की यह प्रवृत्ति बढ़ रही है।

२. **विसर्ग-लोप** 'हल्' की भाति 'विसर्ग' का लोप भी कविताओं में हुआ है यथा उच्चैःश्रवा > उच्चश्रवा, निःश्वास > निश्वास, वक्षःस्थल > वक्षस्थल।

३. **णत्व का नत्व** प्रायः कविताओं में मध्य या अंत्य 'ण' को 'न' में परिवर्तित कर दिया गया है। उदाहरण देखें —

अन्वेषन, कंकन, कन, करुना, किरन, कनु, (< कृष्ण), क्षन, गन, गुन, चरन, तोरन, दर्पन, निमंत्रन, पुन्यों, पूरनमा, पूरनमासी, प्रन, प्रमान, प्रान, बान, मनी, मृनालो, वरन, विरहिन, वीन, श्रवन, समर्पन, समीरन।

४. **नत्व का णत्व** इसके उदाहरण विरल हैं।

एक उदाहरण देखें भान > भाण।

५. 'ब' का 'व' संस्कृत में इन दोनों शब्दों मे प्राय: कोई अन्तर नहीं है। कवियों ने भी इन के प्रयोग में निरंकुशता का परिचय दिया है। उदाहरण ये हैं — तबाही > तवाही ; बतास > वातास ; बांबी, बामी > वामी ; बुभुक्षा > वुभुक्षा, बेर > वेर।

६. 'व' का 'ब' निर्वाह > निर्बाह, वंशीवट > बसवट, विश्वास > बिस्वास।

७. अनुस्वार-लोप संन्यासी > सन्यासी

८. अनुस्वारागम आदि पुच्छल > पुंछल

अन्त सामान > सामां

९. चन्द्रबिन्दु-लोप पाँखी > पाखी, भँवरों > भवरों

१०. चन्द्रबिन्दु का आगम नाच > नाँच

११. चन्द्रबिन्दु का स्थानांतरण मुँह > मुहँ

स्वर-परिवर्तन

१. स्वर-लोप गद्य मे कुछ शब्दों में स्वर वर्तमान रहने पर भी कविताओं में उनका लोप देखने में आया है उदाहरण :—

आदि अनाज > नाज, अफलातून > फलातूं, अमावस्या > मावस, कृष्ण > कनु।

मध्य आरती > आर्ति, किंकिणी > किंकणी, चिनगारी > चिन्गारी, तलवार > तल्वार, तैयारी > तयारी, दुर्गुण > दुर्गण, मुसकी > मुस्की, संघा-आरती > संघार्ति, स्रोतस्विनी > स्रोतस्वनी।

अन्त अन्देशा > अन्देश, आशा > आश, फफूंदी > फफूंद, माथा > माथ, माला > माल, सीमा > सीम। यहां वस्तुत: अत्य स्वर का लोप नही हुआ है अपितु 'आ' के स्थान पर 'अ' लघु स्वर रह गया है। भाषावैज्ञानिक दृष्टिकोण से कई शब्द फिर भी 'व्यंजनांत' ही हैं इसीलिए हम ने ये उदाहरण प्रस्तुत किए हैं।

२. स्वरागम आदि प्यालों > पियालों, प्रतीति > परतीति, प्रवर्तक > परिवर्तक (अर्थ वही), श्मशान > शमशान, स्नेह > सनेह।

मध्य अर्चा > अरचा, उच्छ्वास > उच्छवास, कर्त्ता > करता, निर्दय > निरदई, प्रह्लाद, > प्रहलाद मर्म > मरम, मर्मी > मरमी, रत्न > रतन, रत्नाकर > रतनाकर, वर्ण > वरण या वरन, साम्राज्य > सामराज, स्वार्थ > स्वारथ ।

अन्त विद्युत् > विद्युति

३. **स्वर-समीकरण** निकटस्थ स्वर का प्रभाव ग्रहण करके भी अन्य स्वर का आगम हो जाता है। कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्दों के ही उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं —

आदि भड़ुओं > भुडुओं, स्वकीयता > स्वीकीयता

मध्य आकाशदीप > आकाशीदीप, आपाधापी > आपाआपी, सूरज > सुरुज

अन्त कामिनी > कामिनि, प्रणयिनी > प्रणयिनि, मानिनी > मानिनि

४. **गुरु से लघु स्वर** **आदि** आकाश > अकाश, आघातों > अघातों, आधार > अधार, आलोक > अलोक, आशीषें > असीसें, आह्लाद > अह्लाद, आह्वान > अह्वान, उर्मि > उरमि, कापालिक > कपालिक, कीटाणु > किटाणु, गागर > गगर, चूड़ियां > चुडियां, छाननी > छननी, दावानल > दवानल, दीपावली > दिपाली, बीघा > बिघा, सीकचों > सिकचों, सूरज > सुरुज ।

मध्य असिधाराव्रत > असिधारव्रत, करोसीन > किरासिन, पटबीजना पटबिजना, परीक्षित् > परिक्षित, महारानी > महरानी, महीने > महिने, युधाजित् > युधजित, सिंदूर < सिंदुर ।

अन्त केवल परिवर्तित शब्द-रूप दिये जा रहे है —

कल्लोलिनि, कादम्बिनि, कामिनि, किंकिणि, कुमुदिनि, गंग, चक्रवर्ति, चांदिनि, ज्वाल, झुरपुट, डालि, तपस्वि, तरंगिनि, तिरग (< तिरगा), दामिनि, नदि, नारि, प्रणयिनि, प्राणि, भागीरथि, मंत्रि, मदाकिनि, मानिनि, मायाविनि, माल, मृगनयनि, यमुन, याज्ञसेनि, रेणुक (< रेणुका), रोहिणि, लंक, वाणि, विटपि (< विटपी), विरहिणि, विहंगिनि, विहगि, वीण, शताब्दि, शिल्पि, शैवालिनि, सपन, सागरगामिनि, सुषम, सौदामिनि (< सौदामनी या सौदाम्नी) , स्वामि ।

५. **लघु से गुरु स्वर** **आदि** असिधाराव्रत > आसिधारव्रत, उलझनों > ऊलझनों, झड़ी > झाड़ी (' झड़ी ' अर्थ में), पंख > पांख, बतास > बातास, सम्राज्ञी > साम्राज्ञी।

मध्य अभिमान > अभीमान, कर्णधार > कर्णाधार, गिरहकट > गिरहकाट, निशिकर > निशीकर, प्रकृति > प्राकृति, बाँकपन > बाँकापन, वातुल > वातूल।

अन्त सं० अलि > अली (' भौंरा ' अर्थ में), गिरि > गिरी, ग्लानि > ग्लानी, तरु > तरू, ज्योति > ज्योती, धूर्जटि > धूर्जटी, नयन > नयना, नीलगिरि > नीलगिरी, प्रतिकृति > प्रतिकृती, बहन > बहना, ब्रह्मपुत्र > ब्रह्मपुत्रा, राशि > राशी, शकुनि > शकुनी, सुरभि > सुरभी, सुरसरि > सुरसरी, हानि > हानी।

६ अन्य स्वर-परिवर्तन

आदि कोलाहल > कुलाहल, खेतिहर > खितिहर, चुनौती > चिनौती, झटका > झिटका, झर > झिर, झोंको > झौंकों, झोंपड़ी > झौपड़ी, धोती > धौती, नोकों > नौंको, पत्थर > पाथर, फेनों > फैनों, भौंरों > भोंरों, भौंहों > भोंहों, ममाखियां > मोमाखियां, मुगल > मोगल, लहू > लोहू, व्रण > व्राण, सेनानी > सैनानी।

मध्य अञ्जलि, > अजुरी, अनहोनी, < अनहौनी, उजाला > उजेला, कलश>कुलिश, (' कलश ' अर्थ मे), कल्लोल>कलिल, कारोबार>कारबार, कुमुदिनी > कुमुदनी, चांदनी > चांदिनि, चाकचक्य > चाकचिक्य, छलछिद्र > छल-छुद्र, दारुयोषित् > दारुयौसत, नागिन > नागन, निर्झरिणी > निर्झरनी, नीलिमा > नीलमा, नीहारिका > नीहारका, पतंगा > पतिगा, पुहुप > पुहप, बिजली > बिजुली, भंगों > भंगियों, मचिया > मचैया, महरी > महिरी, रजनी > रजिनी, विरहिणी विरहणी, सरगम > सरिगम, सरोवर > सरवर, सुबतास > सुबातास।

अन्त अहर्निश > अहर्निशि, आग > आगी, किंकिणी > किंकिण, कृष्ण > कनू, कौस्तुभ > कौस्तुभी, खड्ग > खड्गे, गगरी > गगर, घात > घाते,

चकाचौंध > चकचौंधी, तपोधन > तपोधनी, तरतीब > तरतीबी, तामील > तामीली, द्वार > द्वारे, धुंध > धुंधी, बंगाल > बंगाले, बहन > बहनी, माथा > माथ, रंगरेलि या रगरेली > रंगरेल , वाचाल > वाचाली, हलचल > हलचली, हार > हारी, हिरन > हिरने ।

७. व्यंजन नीचे हम व्यंजनों के कुछ परिवर्तन प्रस्तुत कर रहे है —

(क) व्यजन-लोप

आदि स्टेशन > टेसन

मध्य आपाधापो > आपाआपी, उल्लू > उलू, उल्लास > उलास, कल्लोल > कलोल, कोयल > कोइल, खंडहर > खँडर, गलबहियां > गलबय्यां, गुलमुहर > गुलमोर, तक्षशिला > तक्षिला, तितली > तिला, त्रिशूल > तिसूल, दीपावली > दिपाली या दीपाली, निर्दयी > निरदई, पुच्छल > पुछल, मजदूरों > मजूरों, मनाही > मनाई, राष्ट्रीयता > राष्ट्रता, स्फुल्लिग > स्फुलिंग, स्वप्नागार > स्पनागार ।

अन्त उकसन > उकस, गुंजन > गुंज, परवाह > परवा, सिहरन > सिहर ।

(ख) **व्यंजनागम**
आदि कोई उदाहरण नही है।
मध्य अहिंसा > अनहिंसा, रेलपेल > रेलमपेल, वंशी > वंशरी।
अन्त कसक > कसकन

(ग) **व्यंजन-समीकरण**
आदि सिफ़ारिश > शिफ़ारिश
मध्य अनिवार्यता > अनिर्वार्यता, आवाहन या आह्वान > आह्वाहन, उडुगन > उड्डुगन, गलबहियां > गलबय्यां, तलवार > तरवार, नदी > नद्दी, नैया > नय्या, बादल > बद्दल, मशाल > मश्शाल, शासन > शाशन, संशय > संसय ।

अन्त बुद्बुद > बुद्बुद्, हृद > हृद्

(घ) व्यंजन-विकार आदि थेर > ठेर, शिरस्त्राण > सिरस्त्राण, सूरमा > शूरमा

मध्य अंधेरा > अंधेला, अभिशाप > अभिषाप, अषाढ़ या आषाढ > असाढ़, आशीषें > असीसें, पीढ़ियों > पीड़ियो, भुजदण्ड > भुजड्ण्ड, वंशीवट > बंसवट, वैशाख > वैषाख, शासन > शाशन, सुषमा > सुखमा ।

अन्त कविताओं मे 'श' का 'स' मे परिवर्तन बहुत देखने में आता है यथा आकाश > अकास, केश > केस, प्रकाश > प्रकास। इसका विलोम भी मिल जाता है यथा कस > कंश। 'ल' का 'र' में परिवर्तन देखे — अञ्जलि > अजुरी, काजल > काजर, झोली > झोरी। प्राय: ब्रजभाषा के शब्द रूपो मे यह परिवर्तन हो जाता है। 'ड' से 'र' भी बनता है। पाँवड़े > पाँवर, मरोड़ > मरोर और 'र' से 'ड़' भी—यथा कीकर > कीकड़। अन्त्य व्यंजन महाप्राण मे अल्पप्राण भी हो जाता है यथा जंग > जक, और अल्पप्राण से महाप्राण भी : दाप > दाभ। अन्य उदाहरण : शीर्ष या शीश > शीस।

(ङ) व्यंजन-विपर्यय प्राय: सघोष ऊष्म व्यंजन 'ह्' के संयोग या सामीप्य से व्यंजनो मे क्रम-विपर्यय हो जाता है यथा आह्लाद > आल्हाद, तुम्ही > तुह्मी, ब्रह्मचर्य > ब्रम्हचर्य वह्नि > वन्हि, सिहरन > सिरहन।

(च) व्यंजन-लोप और स्वरागम जय > जै, दुर्भाग्य > दुर्भाग, पवन > पौन, बारहमासा > बारामासा, व्रण > वृण, व्रती > वृती, स्वप्न > सप्न।

(छ) स्वर-लोप और व्यंजनागम कारागृह > काराग्रह, नाओं > नावों, माथे > मत्थे, शृंगार > श्रंगार।

(ज) दो समान व्यंजनो में एक का लोप फफोला > फोला, फफोले > फोसू, मानससर > मानसर, मानससरोवर > मानसरोवर।

(झ) अल्पप्राण और महाप्राण व्यंजन इन में जो परिवर्तन आये हैं उनके छह् प्रकार हैं —

(i) अघोष अल्पप्राण से अघोष महाप्राण : अन्तस्तल > अन्तस्थल, अलकनदा

> अलखनंदा, शलाकाएं > शलाखाएं ।

(ii) **अघोष महाप्राण से अघोष अल्पप्राण** फा० सीखचों > सीकचों

(iii) **अघोष अल्पप्राण से सघोष महाप्राण** दाग > दाभ

(iv) **अघोष अल्पप्राण से सघोष अल्पप्राण** रंक > रग (रंक के ही अर्थ में)

(v) **सघोष अल्पप्राण से अघोष अल्पप्राण** यह उपर्युक्त परिवर्तन का विलोम है — जंग > जंक, मर्यादा या मरजाद > मरजात, विपद या विपदा > विपता या बिपता ।

(vi) अल्पप्राण और महाप्राण का संयोग हो तो प्राय: अल्पप्राण का लोप हो जाता है — सं० कुज्झटिका > कुंझटिका ।

८. संयुक्त व्यंजन

संस्कृत शब्दों मे जहां संयुक्त व्यंजन हों वहा हिंदी मे एक व्यंजन ही शेष रहता है । कुछ मुख्य प्रवृत्तियां देखे —

(क) **स्पर्श + अनुनासिक** ऐसी स्थिति मे प्राय: मध्य मे ' अ ' स्वर का आगम और अतिम स्वर का लोप हो जाता है : अग्नि > आग

(ख) **स्पर्श + अन्तस्थ** ऐसी स्थिति मे अन्तस्थ लुप्त हो जाता है : निर्बलता > निबलता । इसके अतिरिक्त **दंत्य स्पर्श** ' त्, थ्, द्, ध् ' का ' य्, र्, व् ' से संयोग होने पर निम्नलिखित परिवर्तन होते है —

(i) ' य् ' से सयोग आराध्य > आराध

(ii) ' र ' से सयोग अतर्धान > अतर्ध्यान । यहा एक अन्तस्थ ने अपने लोप की बजाय दूसरे अन्तस्थ का आगम कर लिया है । कभी मध्य में स्वर का आगम हो जाता है कर्ता > करता, स्वार्थ > स्वारथ । कभी मात्र अन्तस्थ का लोप होता है कार्तिक > कातिक । कभी अन्तस्थ-लोप के पश्चात् स्वरागम भी हो जाता है द्रष्टा > दृष्टा ।

(iii) ' व् ' से सयोग किसी दंत्य स्पर्श से अन्तस्थ ' व् ' संयुक्त होने पर उच्चारण की सुविधा के लिए ' व् ' का लोप हो जाता है — प्रतिद्वन्द्वी > प्रतिद्वन्दी ।

(ग) **स्पर्श + ऊष्म** स्पर्श व्यंजन यदि कंठ्य और अल्पप्राण हो तो ' ऊष्म '

व्यजन लुप्त हो जाता है तथा अल्पप्राण महाप्राण में बदल जाता है क्षण क्षण > खन खन।

यदि स्पर्श व्यंजन 'दत्य' हो तो ऐसी स्थिति में अघोष ऊष्म व्यंजन (श्, ष्, म्) अन्य अघोष ऊष्म व्यंजन में बदल जाता है यथा: ज्योत्स्ना > ज्योतिष्न।

(घ) अन्तस्थ + तालव्य स्पर्श — ऐसी स्थिति में मध्य में स्वर का आगम हो जाता है — अर्चा > अरचा

(ङ) अंतस्थ + कंठ्य — यहां भी मध्य मे 'अ' स्वर का आगम होता है मार्ग > मारग।

(च) अतस्थ + ऊष्म — ऐसी स्थिति मे कही अन्तस्थ लुप्त हो जाता है अट्टहास्य > अट्टहास, आश्विन > आसिन, उद्देश्य > उद्देश, स्रोत > सोत, स्वप्न > सपन। कही अतस्थ वर्तमान रहता है किंतु अघोष ऊष्म व्यजन अन्य अघाष ऊष्म व्यंजन में परिवर्तित हो जाता है अथा विश्व > विस्व, विश्वास > बिस्वास, श्व न > स्वान। कही ऊष्म व्यंजन वर्तमान रहता है और अन्तस्थ के स्थल पर किसी स्वर का आगम हो जाता है स्रष्टा > सृष्टा। इमी प्रकार के परिवर्तनों मे कही अन्तस्थ के लोप के पश्चात् ऊष्म बदल जाता है आश्विन > आसिन, सं० शीर्ष > शीस। अन्य स्थिति में मध्य मे स्वरागम और ऊष्म का अन्य ऊष्म व्यजन में परिवर्तन देखने में आता है :— दर्शन > दरस।

(घ) अंतस्थ + अंतस्थ — ऐसी स्थिति मे एक या एक से अधिक अंतस्थ लुप्त हो जाते है तय्यारी > तयारी, दारिद्र्य > दारिद।

(ज) द्वित्व व्यंजन — सयुक्त व्यंजनों मे जब एक ही व्यंजन का द्वित्व हो तो प्राय: कविताओं में एक का लोप हो जाता है —

(i) मूर्धन्य + मूर्धन्य — चट्टान > चटान

(ii) दंत्य + दत्य — कवित्त > कवित, चित्त > चित, पश्चात्ताप > पश्चाताप, प्रायश्चित्त > प्रायश्चित, विपत्ति > विपति या बिपत, सम्पत्ति > सम्पति।

(झ) अनुनासिक का संयोग — संयुक्त व्यंजनों में जब एक अनुनासिक व्यंजन हो तो अधोलिखित परिवर्तन होते हैं —

(i) **अनुनासिक + अनुनासिक** ऐसी स्थिति में मध्य में स्वर ' अ ' का आगम होता है उन्माद > उनमाद, जन्म > जनम, तन्मयता > तनमयता । कहीं स्वर ' अ ' का लोप भी हुआ है — घननाद > घन्नाद ।

(ii) **अनुनासिक + अंतस्थ** कहीं अन्तस्थ का लोप अहर्निश > अहनिशि, कहीं साथ ही अनुनासिक में भी परिवर्तन कर्णफूल > कनफूल, कहीं मध्य मे ' अ ' स्वर का आगम — मर्म > मरम ।

(iii) **अनुनासिक + ऊष्म** अरबी शब्द तस्नीअ > तिस्ने । ऐसे उदाहरण विरल हैं ।

(iv) **अनुनासिक + सघोष ऊष्म ' ह् '** ऐसी स्थिति में दोनों व्यंजनों का क्रम बदल जाता है । इस प्रकार के व्यंजन-विपर्यय देखे —

ब्रह्मचर्य > ब्रम्हचर्य, वह्नि > वन्हि ।

विशेषण

विवेच्य बीस कवियो द्वारा प्रयुक्त विशेषणो के निष्कर्ष ये हैं —

नव विशेषण

उडने (अ०), गोर (भा०), चंदीली (गि०), तोतापरी (अ०), सवलते (गि०), सलग (' अलग ' का विलोम, अ०), सौंवर (गि०, भा०) ।

समास

अग्निपंथी (म०), अन्धाकार (श०), कटखनी (अ०), किरणवपु (दि०) क्रांतिमुखी (अं०), चाराचोर (उ०), चितचाही (मैं०), चितचीते (मैं०), चौमापी (ब०), चौमुख (श०), तिमिरवेधी (म०), दगमारी (ब०), दलदार (गि०), नयनीन (मैं०), पारझीना (गि०), फूलबसे (भा०), मतमारे (ब०) मदढाले (ब०), मधुमुख (प्र०), मुवचूमी (सि०) ।

उपर्युक्त सामासिक विशेषणों मे से अधिकांश नये हैं । **संकर समास** वे हैं जो तत्सम और तद्भव शब्दों के मेल से बने हैं यथा आहटहीन (म०), चेतहर (अ०), चौमुख (श०), छटाधूत (उ०), जलसिंचे (ब०), पारझीना (गि०), बलतोड़

(नि०), बेबसवती (मा०), मनमलीन (ब०), मेघमाती (गि०), रणराते (मा०), शुक्लपाखी (श०), हरित्-द्युत (श०), सतजल (प०)।

उपसर्ग

'अ' अटूटे (मा०), अडूब (अ०), अपरिम (अ०), अमंदी (उ०), अरुक (उ०), अरोक (नि०)।

'अध' अधचबी (रा०), अधबने (मा०)

'वि' विश्रम (न०)

प्रत्यय

प्राय: कवियों ने अई, अल, आ, आई, आनी, आरी, आरे, आली, आलु, आवनी, इत इम, इया, इल, ई ईली, ईले, ऐला, ऐली आदि हिंदी के प्रत्यय-युक्त शब्द लिखे हैं। क्रमश: उदाहरण आगे दिए जा रहे हैं —

...अई धनुपई (श०)

...अल (स० मत्वर्थीय 'ल' प्रत्यय)

देशल(मै०). प्रेमल (न०)

वेशल (मै०), स्नेहल (ह०)

...आ अठमहला (भ०), हिंदुआ (मै०), हरिहारा (न०)

...आई अंधराई (श०), पगलाई (ब०)

...आनी हिमानी (उ०)

...आरी अंबियारी (अँ०)

...आरे अरुणारे (अँ०)

...आली अरुणाली (अ०), धूमाली (पं०)

... आलु स्नेहालु (ब०)

...आवनी भावनावनी (उ०)

... इत आकुलित (दि०), आवेशित (दि०), उपलित (सि०),

कर्पूरित (ब०), कुवलयित (पं०), कुहरित (उ०), मयंकित (उ०), रणरणित (अं०) लहरित (उ०), विहँसित (ब०), सनाथित (उ०), सन्धानित (दि०), हुंकरित (दि०)।

...इम नीलिम (अं०), मधुरिम (मा०), लालिम (अं०, गि०)

...इया हल्दिया (श०)

...इल मेघिल (अं०), लहरिल (अं०), मर्मिल (अं०), स्नेहिल (मा०), स्वप्निल (अं०, उ०, न०, ब०, भ०), स्वर्णिल (गि०)।

...ई प्राय: यह प्रत्यय सम्बंधार्थक ही होता है। कवियों ने 'ई' प्रत्यय वाले अनेक शब्दों का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

अखबारी (ब०), अगस्ती (ब०), अज्ञानदेशी (म०), अट्टहासी (दि०, ब०), अनगिनती (ह०), अनमी (श०), अरबी (दि०), अरमानी (ब०), अवसादी (अं०), आकाशी (अं०, ब०), आवागमनी (पं०), आषाढ़ी (ह०), आसमानी (ब०), इन्दीवरी (श०), इन्सानी (श०), ऊनी (गि०), कपूरी (अं०), कलकी (अं०), कलजुगी (नि०), चंगेजी (नि०) झुटपुटी (न०), तकदीरी (ब०), तिरस्कारी (अ०), नखूनी (गि०), निझरी (नि०), निराशी (न०), नीलांजनी (अं०), पलायनी (ब०), पहाड़ी (ब०), बसंती (ब०), बहारी (ब०) बायस्कोपी (अं०), बासंती (न०), भूकंपी (उ०), मोरपंखी (अं०), मौसमी (ब०), यादवी (मै०), रेगिस्तानी (अं०), वज्री (उ०), शंकरी (न०), शहीदी (ह०), श्मशानी (उ०), संगमरमरी (अं०), समाजी (अं०), समीपी (अं०), सरोजी (उ०), साम्राजी (गि०), हेमंती (अ०)।

...ईली किरनीली (मा०), मधुरीली (मा०), ललचीली (मा०)।

...ईले किरनीले

...ऐला वनैला (अ०)

...ऐली घूमैली (दि०)

भाषाएं

कवियों ने विभिन्न भाषाओ के विशेषण शब्द ग्रहण किये हैं। उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं —

(क) **संस्कृत तत्सम विशेषण** आलुलायित (दि०), कुशली (म०), ग्राहमुखी (पं०), घोरमय (न०), ज्वालवाही (म०), दुर्मिल (म०), दूग्वाही (दि०), निर्निमेषी (म०), प्रपातित (अ०), भस्मकरी (अ०), मदनायित (दि०), मिलनवती (अँ०) मेघिनी (उ०) लहरधर (ब०) लेलिहान (प्र०), लोलक (अ०), वानगी (दि०), शतरंगी (म०), शिलित (अ०), सशक्तिक (नि०), सार्थवाही (म०), स्वप्नप्रभ (प०), हामी (उ०)।

(ख) **व्रजभाषा** अलसाने (न०), उकठ (न०), कठैठा (अ०), छीट (नि०), जुडावन (अँ०), झांवरी (गि०), झोरे (गि०) घूमरिया (मा०), निथुरे (अ०), बिछलती बिछली (अ०), भँवराता (अँ०), भावरिया (मा०), मदभोरी (दि०), लोखरिया (भा०), सीरे (म०)।

(ग) **अवधी** निचाट (मैं०), निहोरे (अ०), लखोखा (ब०), हरखाई (अ०)।

(घ) **अरबी-फारसी और उर्दू** परकाले (श०), पुरनम (अ०), शबनमी (भा०), सुबुक (भा०)।

(ङ) **तद्भव या अन्य प्रभावित शब्द** ऊने (म०), त्रासी (मैं०), नीलिम (अ०), पश्चिमीय (नि०), मधुरिम (मा०), लालिम (अ०)।

(च) **अन्य देशज शब्द** अगोरते (अ०), कनौखी (मैं०), कर्री (अ०), गझिन (भा०), गुमरते (अँ०) चतरा, (मैं०), झौंसी (अ०), निपूता (मैं०), निवट (दि०), फटियल (अ०), बढ़का (मैं०), बेड़ी (सि०), भभरा (मैं०), रखोड़े (गि०), रपटना (अ०), रुखड़ी (दि०), लँढूरी (अ०), ललाली (अ०), सीठी (अ०)।

विशेषण-विकार

संज्ञा-विकारों की भांति अब हम विशेषण-विकारों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करेंगे। पहले गद्य में प्रचलित शब्द-रूप दे कर बाद में कवियों द्वारा पद्य में प्रयुक्त शब्द-रूप लिखेंगे।

सामान्य परिवर्तन

१. **हल्-लोप** सञ्ज्ञाओं की भांति विशेषणों में भी प्राय: कविताओं में अन्त्य 'हल्' लुप्त हो जाता है। उदाहरण देखें—

अवाक, अमत, आस्थावान, कांतिमान, कीर्तिमान, गतिमान, गौरववान, चक्रवान, छविमान, ज्योतिमान, दयावान, दीप्तिमान, द्युतिमान, धनवान, धीरवान, निर्वाक, निष्ठावान, प्रणवान, प्रतापवान, प्राणवान, प्रेयस, बलवान, बुद्धिमान, भाग्यवान, भूतिमान, मतिमान, महत, महान, मूर्तिमान, मूल्यवान, मृत्युंजित, रसवान, विभ्राट, विद्वान, विराट, शक्तिमान, शीलवान, श्रीमान इत्यादि।

२. **णत्व का नत्व** अरुण > अरुन, पूर्ण > पूरन, प्रवीण > प्रवीन, विरहिणी > विरहिनि। यहां यदि 'ण' से पहिले अन्तस्थ का संयोग हो (यथा 'पूर्ण') तो अन्तस्थ के आगे 'अ' स्वर का आगम ('पूरन') भी हो जाता है अन्य उदाहरण पूर्णिमा > पूरनमा।

३. **अनुस्वार-लोप** **आदि** निंद रे > निदारे

स्वर-परिवर्तन

१. **स्वर-लोप** **आदि** कोई उदाहरण नहीं है

मध्य अनमोल > अन्मोल, सुखदायिनी > सुखदायनी

अन्त चौगुनी > चौगुन (यहां लिखित रूप में अन्त्य स्वर 'अ' वर्तमान है), विशद > विशद् या विषद्

२. **स्वरागम** **आदि** प्यारा > पियारा

मध्य अवतीर्ण > अवतीरण, आर्त्त > आरत,

उच्छ्वसित > उच्छवसित, उद्भ्रान्त > उदभ्रांत, जीवन्मृत > जीवनमृत, त्याज्य > त्याज, पूर्ण > पूरन, मग्न > मगन ।

अन्त कोई उदाहरण नहीं है ।

३. **स्वर-समीकरण** आदि मधुर > मुधुर

४. **गुरु से लघु स्वर** आदि आखीरी > अखीरी, आपबीती > अपबीती, नारकी या नारकीय > नरकी ।

मध्य अनचीते > अनचित्ते, आक्रांता > आक्रंता, उन्नीस > उन्निस, किमाकार > किमाकर, झिलमिलाती > झिलमिलती, सांग्रामिक सांग्रमिक ।

अन्त अनुगामिनि, अनूठ, आगामि, आह्लादिनि, उन्मादिनि, कुहुकिनि, कृपाकांक्षिणि, गहर, गोरसधारिणि, ठगिनि, तेजस्वि, दिगन्तवासिनि, धर्षिणि, नादिनि, निजि, नितंबिनि, भावि, मधुवर्षिणि, मानिनि, मायाविनि, मुक्तहासिनि, मृदंगिनि, वरदायिनि, वाग्मि, विकासिनि, विमोहिनि, विरहिनि, विलासिनि, शताब्दि, शुभाकांक्षिणि, संगिनि, संहारिणि, सावल, सुखदायिनि, सुहासिनि, हिरण्यमयि ।

उपर्युक्त उदाहरण ' सम्बोधन ' में नहीं हैं ।

लघु से गुरु स्वर आदि सतरंगी > सातरंगी

मध्य अधमरी > अधमारी, अनुपम > अनूपम, अम्रियमाण > अम्रीयमाण, मलिन > मलीन ।

अन्त बोधि > बोधी

अन्य स्वर-परिवर्तन

आदि एकाग्र > ऐकाग्र, बेचारा > बिचारा, बेचारे > बिचारे, बेसुध > बिसुध ।

मध्य अनोखा > अनौखा, गहरा > गहिरा, चौगुनी > चौगन, प्लावित > प्लावत, बहुत > बहोत, भस्मीभूत > भस्मभूत ।

अन्त अधखुली > अधखुल, अनमोल > अनमोली, बेडौल < बेडौले, बेताल > बेताले, अनमोले, कृतघ्न > कृतघ्नी, बुद्धिजीवी > बुद्धि-जीव, मद > मंदो, मुमूर्षु > मुमूर्ष, विश्वासी > विश्वासू ।

उपर्युक्त उदाहरणों में उच्चार्यमाण रूपों की बजाय केवल लिखित रूपों पर ही ध्यान दिया गया है । अतः इसी दृष्टिकोण से इन का अध्ययन करना चाहिए ।

व्यंजन

(क) **व्यंजन-लोप** आदि कोई उदाहरण नहीं है

मध्य अन्यायी > अन्याई, उज्ज्वल > उज्वल उत्तरदायी > उत्तरदाई, उन्नीस > उनीस, दुखदायी > दुखदाई, निर्लज्ज > निर्लज निलज, सलज्ज > सलज, सुखदायी > सुखदाई ।

अन्त छह > छै, परवाह > परवा, पर्वतीय > पर्वती बोझिल > बोझी ।

(ख) **व्यंजनागम** आदि कोई उदाहरण नहीं है ।

मध्य चकित > चक्कित, चुप > चुप्प ।

अन्त अधीर > अधीरज, दैवी > दैवीय ।

(ग) **व्यंजन-समीकरण** आदि कोई उदाहरण नहीं है ।

मध्य चुप > चुप्प, हजारों > हज्जारों ।

अन्त नृशंस > नृशंश ।

(घ) **व्यंजन-विकार** आदि ठूठ > ढूंठ ।

मध्य अविनाशी > अविनासी, गतिमान् > गतिवान, नशीली > नसीली, निधड़क > निधरक, पढ़े > पड़े, मटियाया > मतियाया, मानसी > मानषी मुस्टडा > मुस्तडा, रुआंसा > रुआंधा, रुद्ध > रुध, विसद > विषद, विषाक्त > विशाक्त, शक्तिमान् > शक्तिवान ।

अन्त निराश > निरास, महत् > महद, रुष्ट > रुष्ठ, वरिष्ठ > वरिष्ट, वृहत् > वृहद ।

(ङ) **व्यंजन-विपर्यय** विह्वल > विव्हल।

संयुक्त व्यंजन

कुछ उदाहरण देखें—

(क) **स्पर्श + अन्तस्थ** ऐसी स्थिति में अन्तस्थ लुप्त हो जाता है। यथा असख्य > असंख, त्याज्य > त्याज, । 'य' का लोप होने पर अंत्य व्यजन में 'अ' स्वर जुड जाता है। यदि 'र' से संयोग हो तो उस का भी लोप हो जाता है यथा निर्बल > निबल।

यदि स्पर्श दंत्य हो आवृत्ति होने की स्थिति मे एक अ तस्थ लुप्त हो जाता है— निर्द्वन्द्व > निर्द्वन्द।

(ख) **स्पर्श + ऊष्म** ऐसी स्थिति में प्राय: अघोष ऊष्म व्यजन अन्य अघोष ऊष्म व्यंजन में बदल जाता है यथा निष्फल > निस्फल।

(ग) **अंतस्थ + ऊष्म** ऐसी स्थिति में कही अन्तस्थ का लोप हो जाना है हिंस्र > हिंस। कही अघोष ऊष्म अन्य अघोष ऊष्म मे परिवर्तित हो जाना है शाश्वत > शास्वत।

(घ) **अंतस्थ + अंतस्थ** ऐसी स्थिति मे एक अन्तस्थ लुप्त हो जाता है—निर्लज्ज > निलज।

(ङ) **दंत्य + दंत्य** ऐसी अवस्था मे या तो एक (प्राय: प्रथम) दत्य व्यजन लुप्त हो जाता है — विबुद्ध > विबुध, या एक (प्राय: प्रथम) दत्य व्यंजन कंठ्य मे बदल जाता है रुद्ध > रुग्ध।

(च) **अनुनासिक + अनुनासिक** ऐसी स्थिति में एक का लोप देखा जाता है उन्नीस > उनीस।

(छ) **अन्तस्थ + अनुनासिक** ऐसा होने पर दोनों वर्तमान रहते हैं किन्तु मध्य में स्वर का आगम हो जाता है अवतीर्ण > अवतीरण।

क्रिया

आधुनिक कवियों द्वारा प्रयुक्त कुछ विशेष रूप से उल्लेखनीय क्रियाएं निम्न-लिखित हैं —

नयी क्रियाएं अड़डाना (अ०), आंचना (नि०), आरना > आरोगे (मा०), अव० उअना (ब०), कफ़नाना (अँ०), कुरमुराना (अ०), खिझलाना (प्र०, 'ज' के स्थल पर 'झ' नया है), गुंगुग्राना > गुँगाना (सि०), चकचौंक (सि०), झींकना (अ०, 'ख' के स्थल पर 'क' नया है), तड़ना (भ०), तलफना > तलझना (ब०), तागना > तागी (नि०), अव० दुपदुपाब > दुपकना (ब०), दुक़ाना (ब०), धगड़ना (मं०), धौराना (श०), निर्मांना (पं०), अव० पिछुआईब > पिछुआना (ब०), बदराना (ब०), बुबकना (अ०), भंभाना (ब०), अव० मुरझुराब > मुरझुराना (ब०), मुसक्या (प्र०), मोंगाना (सि०), रूँध (गि०), लपटना (ह०), लांघना (ब०), लेखना (म०), संचना > सँची (अ०), सकड़ना > सकड़े (मं०), सुलसा (न०), सुलसो (नि०), स्वीकारना (अ०, भा०), हिंडोलना (मा०), हूदना > हूदें (मैं०)।

पुरानी क्रियाओं के नये अर्थ उदाहरण ये हैं :—

अनुलेखना (न०), आंजना (अ०), उतराना (दि०, प्र०, भ०), झाँकना > झाँको (मै०), 'ढँकना' अर्थ में 'कफ़नाना' (अँ०), 'दबाना' अर्थ में 'दूबना' (अँ०), 'दिखलाई' अर्थ में 'देख' (न०), पूरबी प्रयोग, धाँधना (मै०), 'गई' अर्थ में 'सिधारी' (प्र०)।

नयी सकर्मक क्रियाएं कुछ क्रिया-रूप विचारणीय हैं :—

अनखाना (प्र०), कुंचना > कुंचे (नि०), गसना (उ०), गुड़ना > गुड़ें (मै०), घुँदना (अ०), छुकना (गि०),

झुंकना > झुंके (मै०), निरना (मै०), परचना (अ०), फिकना (श०), बरसना > बरसती (प्र०), मनना (ब०), मंझाना (अं०), रुपना (श०, सि०), संचना (अ०), सजना (पं०), सिकना (गि०)।

इन में अधिकतर क्रियाएं अब तक अकर्मक ही मानी जाती रही हैं किंतु कवियों ने उन्हें सकर्मक रूपों में भी लिखा है।

प्रिय क्रियाएं कवियों ने जिन क्रियाओं के प्रति विशेष आकर्षण प्रकट किया है वे इस प्रकार है :—

अनुमानना (अं०, ब०), अनुरागना (अ०, भ०), अनुहारना (मा०), अवतरना (अ०), आराधना (दि०, पुं०), उजलना (गि०, सि०), उमंगना (सि०), गहना (पं०), गहराना (पं०, भा०), छीजना (भा०), छेंकना (अ०) जुगाना (दि०), ढोलना (मा०), दिपना (दि०, पं०, श०), ध्याना (अ०), निर्माणना (ह०), पैरना (पं०), प्रकटाना या प्रकटान (अ०, दि०, न०, प०), बतियाना (दि०, पं०), अव० बिलटब > बिलटना (ब०, मै०, सि०), बिला (प०) मुरझना (अ०, गि०), लखना (अ०), विकसना (प०), विरमना (दि०), व्यापना (भा०), सन्धानना (भ०, रा०), सहेजना (भा०), सालना (अ०), सुलसना या सुलसाना (न०, नि०), सिरजना (दि०), सृजना (भ०), स्रजना (अ०), हहरना या हहराना (न०, रा०) और हुंकरना (दि०)।

देशज क्रियाएं अड़ड़ाना (अ०), कीजियो (मै०), कीजे (मै०), गालना (अ०), जानूं (अ०, दि० झीकना (अ०), झोंकना (अ०), दीजे (प्र०), दीजो (मै०), पटाना (भा०), फीचना (अ०), ललाना (अ०), लीजियो (मै०), लीजे (प्र०, मै०), हूजिए (प्र०, मै०), हूजे (मै०, सि०)।

विदेशी क्रियाएं तु० कुलाच > कुलांचना (प्र०), बंग० डाकिबा > डाकना (अ०, श०); बंग० भंसाना (अ०)।

पद्य-सीमित क्रियाएं अव० अँखुआ > अखुआना (ब०) उन्मीलना (पं०), चाखना (प्र०), चालो (पं०), चिताना (भा०), चुपाना (म०), झीमना (प्र०), धाना (म०), नशाना (दि०), निर्माना (पं०), निवसना (दि०), पिराना (भा०), पुरना (भा०), पूरना (पं०), पैरना (पं०), बतियाना (भा०), लखना (अ०), लेखना (म०), बितरना (पं०), बिवाहना (प्र०), शिथिलाना (म०), साजना (गि०, दि०), सुहलाना (गि०), सेबना (दि०), हरसना (प०), हर्षना (ह०), हलराना (दि०) ।

क्रिया-विकार

अब हम क्रियाओं के विकृत रूपों का अध्ययन करेंगे :—

सामान्य परिवर्तन

१.	अनुस्वार-लोप	आदि	धुंधुआ > धुधुआ, मंडराए > मड़राए, मडराएगी > मड़राएगी, छेंको > छेको ।
		मध्य	कोई उदाहरण नहीं है ।
		अन्त	कोई उदाहरण नहीं है ।
२.	अनुस्वारागम	मध्य	सनेगा > सनेंगा, सुनो > सुनों ।
		अन्त	जानो > जानों, बने > बनें, बनो > बनों ।
३.	चन्द्रबिंदु का आगम	आदि	आय > आँयें, मुठला > मुंठला, लाये > लाँयें, सजा > सँजा ।
		अन्त	आय > आँयें, लायं > लाँयें ।

स्वर-परिवर्तन

१.	स्वर-लोप	आदि	कोई उदाहरण नहीं है ।

मध्य आएंगे > आयेंगे, उठाएगा > उठायगा, खाएगी > खायगी, चुकाएंगे > चुकायेंगे, छाएगी > छायगी, नहलाना > न्हिलाना, नहाना > न्हाना, पछताएंगे > पछतायेंगे, पाएगे > पायेंगे, सताएगी > सतायगी, समाएगा > समायगा।

हिंदी मे 'ए' और 'ये' उभय रूप चल रहे हैं।

अन्त आए > आय। इसी प्रकार अन्य क्रिया-विकार देखें -- उतरायें, खायें, गहराय, जाय, पाय, बोयें, मुस्काय, लाय, शरमाय, सताय और समाय।

२. गुरु से लघु स्वर आदि आजमाते > अजमाते, आजमाने > अजमाने, गूंथती > गुंथती, चाहना > चहना, छाई > छई, छाये > छये, छीलने > छिलने ('छीलने' अर्थ में). जीतू > जितू, झूलने > झलने, टूटा > टुटा, फूटा > फुटा, बीनी > बिनी, भूलने > भुलने, सीख > सिख।

मध्य चढ़ाता अर्थ मे चढ़ता, चलाने अर्थ मे चलने, सजाना अर्थ में सजना।

अन्त हुमसा > हुमास।

३. लघु से गुरु स्वर आदि उगता > ऊगता, उगती > ऊगती, उगा > ऊगा, उगें > ऊगें, गुंजा > गूंज, गुंजाता > गूंजता।

मध्य कहरती > कहराती, दिखते > दिखाते।

अन्त कोई उदाहरण नहीं है।

अन्य स्वर-परिवर्तन

आदि चखा > चिखा, जायेंगे > जेयेंगे, झरता > झिरता।

मध्य उगलना > उगिलना, उभार > उभर,

(' उभार ' अर्थ में), करोगे > करौगे, देखोगे > देखौगे, पढ़ोगे > पढ़ौगे, पहचानना > पहिचानना, बगारे > बगेरे, भरोगे > भरौगे, रहोगे > रहौगे, रेंग > रैंग ।

अन्त करे > करै, घहरे > घहरै, चले > चली (' चले ' अर्थ में), छहरे > छहरै, जाओ > जाव, ठहरे > ठहरै, नहाओ > नहाव, पाओ > पाव, पावे > पावै, फहरे > फहरै, बसाए या बसाये > बसाय, बहाओ > बहाव, बुलवाओ > बुलवाव, मरो > मरौ, लहरे > लहरै, लाओ > लाव ।

व्यंजन

(क) व्यंजन-लोप — मध्य — ढुलकते > ढुलते ।

(ख) व्यंजन-विकार — आदि — बिखराए अर्थ में निखराएं ।

मध्य — खलबलाना > खलमलाना, ठिठकी > ठिटकी, निथारा > नितारा, फड़क > फरक, बड़बड़ाओ > बरबराओ ।

अन्त — खोल > खोर, गूधी > गूदी, चीर > चीड़ जोड़ > जोर, झाड़ें > झारें, तरासी > तराशी, रौंद > रौंघ ।

(ग) व्यंजन-विपर्यय — मध्य — अकचकाना > अचकचाना, पहनाता > पिन्हाता, पहनाये > पिन्हाये ।

(घ) व्यंजनागम — मध्य — आओ > आवो, उठा > उट्ठा, उठे > उट्ठे, चलें > चल्लें, चखी > चक्खी, चखोगे > चक्खोगे, चढ़ाओ > चढ़ावो, जाओगे > जावगे, डराती > डरपाती, नशाई > नशाही, बकता > बहकता, रखा > रक्खा, लिखा > लिक्खा, लिखी > लिक्खी, लिखूं > लिक्खूं, सज > सज्ज, समझा

> समझता, सुख > सुखला।

अन्त जाओ > जाव।

उपसर्ग

प्राय: संस्कृत मे २२ उपसर्ग हैं —

अति, अधि, अनु, अप, अपि, अभि, अव, आ, उद्, उप, दुर्, दुस्, नि, निर्, निस्, परा, परि, प्र, प्रति, वि, सम्, और सु।

इन के अतिरिक्त भी कई उपसर्ग हैं।

हिंदी ने इन उपसर्गों में से अधिकांश को अपनी प्रकृति के अनुकूल ढाल लिया लिया है। कहीं कवियों ने संस्कृत उपसर्गों के साथ तत्सम शब्दों का योग किया है तथा अनाकामित (नि०), अविजानित (अँ०), दुर्विदग्धी (उ०), दुर्विलंघ्य (सि०), निर्विशंक, (सि०), विनीरव (पं०), सुदुस्तर (पं०, सि०)।

और कहीं तद्भव शब्दो के साथ संस्कृत उपसर्ग जाड़ दिए हैं यथा अकथ (अ०, न०, प्र०, मा०, मै०), अकन्थ (मै०), अकाज (दि०, ब०), अगिन (अ०), अचीती (मै०), अचीन्हा (गि०), अचीन्ही (अँ०), अछोर (गि०), अजन्मे (अ०), अजान (रा०, ह०), अजानी (ब०), अटूटी (भा०), अथक (भ०, मि०), अथिरता (ब०), अथोर (न०, ब०), अधीमी (न०), अनीदी (अँ०), अनियारे (ब०), अबदी (रा०), अबुझ (अँ०, उ०, भा०), अबूझी (अँ०), अबोल (श०) अबोला (अँ०), अबोले (न०), अमलीन (रा०), अयानी (अ०), अरसीले (न०), अलख (मि०), अलेखे (ब०)।

संस्कृत में ' अन् ' उपसर्ग केवल स्वरादि शब्दों के पूर्व लगाया जाता है जब कि कवियों ने व्यंजनादि शब्दों से पूर्व हिंदी का ' अन ' उपसर्ग जोड़ा है।

उदाहरण निम्नलिखित हैं —

अनगाये (अँ०, म०, श०), अनकथ (मा०), अनकही (अँ०), अनकहे (मा०), अनगढ़ (न०), अनछुए (गि०, भ०), अनडिग (मै०), अनदेखे (म०, मै०), अनदेखों (श०), अनधीर (दि०), अनपावन (न०). अनबन (प्र०), अनबांधे (मा०), अनबूझ (ब०), अनब्याही (दि०), अनमांगी (म०), अनमापी (भा०), अनमिली (गि०), अनरुक (उ०), अनलिखे (भा०), अनसंगी (अ०), अनसुनी (ब०), अनसुलझ (अ ०), अनसूघे (पं०), अनहारी (नि०), अनहुई (अँ, भा०)।

इन शब्दों में से अधिकतर नञ बहुव्रीहि समास नये ही हैं। कही कही 'अन' उपसर्ग सं० 'अन् + अ' दो उपसर्गों का भ्रम उत्पन्न करता है यथा 'अधीर' अर्थ में 'अनधीर' (दि०)। अन्य उदाहरण देखें — अनबद्ध (भ०), अनरक्षित (ब०), अनश्रुत (न०), अनस्पृश्य (उ०), अनहिंसा (न०), अनहित (म०)।

उपर्युक्त सभी उदाहरणों में 'अन' नकारात्मक ही है अत: 'अन' को 'अन् + अ' इन दो उपसर्गों का योग नही समझना चाहिये।

संकर शब्द कुछ शब्दों के योग देखे —

बेअंत (अ०, उ०), बेअनुपात (मा०), बेकल (प्र०), बेमन (न०, प्र०), बेमहत्त्व (भा०)।

इन में बे फ़ा० का उपसर्ग है जो हिंदी ने अपना लिया है। यहां यह उपसर्ग सं० तत्सम शब्दो के साथ टाँक दिया गया है। अन्य उदाहरण देखे सुछाँह (नि०), सुनेम (रा०), सुपरस (न०),सु पास (मै०, सि०), सुमनुहार (न०), सुसाथी (मै०)।

यहां 'सु' सं० उपसर्ग हिंदी के तद्भव शब्दों के साथ जोड़ दिया गया है।

अन्य उपसर्ग-युक्त नये शब्द

कुछ शब्द-योग निश्चित रूप से नये जान पड़ते हैं —

अहीन (उ०), कुछाल (रा०), बेथाह (अ०), बेपर्द (ह०), बेमहत्त्व (भा०), बेलाख (मा०), सुमहत्ता (मै०)।

' नि ' उपसर्ग

सं० निर् या निस् से विकसित् हिं० ' नि ' उपसर्ग भी अनेक शब्दों में जुड़ा है — निकाम (प०), निचिन्त (अ०), निबल (अ०), निरस (अ०), निलज (अ०)।

असंधिज शब्द

कुछ सोपसर्ग शब्दों में कवियों ने सधियां संभव होने पर भी नही की हैं यथा अनउगे (भा०), कुअंक (रा०), बेअंत (उ०), बेआप (पं०), सुअक (दि०, ब०), सुअंकित (न०), सुअंकुरित (ब०), सुअग (रा०), सुअंचल (सि०), सु-अवसर (उ०, सि०)।

प्रिय सोपसर्ग शब्द

जो सोपसर्ग शब्द कवियो को विशेष रूप से प्रिय रहे हैं वे ये हैं —

अकथ (न०, प्र०, मा०, मै०), अगीत (दि०, ब०), अजान (दि०, ब०), अजाने (मा०), अडोल (मा०, मै०) दुर्दृश्य (सि०), दुर्मद (अ०, सि०), बेपीर (अ०, प्र०, ब०, भ०, म०)।

लिंग

लिंगो के निर्धारण में लगभग सभी हिंदी कवियों ने निरंकुशता का परिचय दिया है। कुछ निष्कर्ष नीचे दिये जा रहे है —

पुं० शब्दों के स्त्री० प्रयोग

जो शब्द हिंदी और व्रज० में प्रायः पुं० ही माने जाते हैं उन्हें कवियों ने स्त्री० में लिखा है। कुछ शब्दों के उदाहरण ये हैं —

अंचल, अजन, अंधेर, अतिरेक, अनल, अभिलाष, अमृत, अवगुण्ठन, असमञ्जस, इन्तजार, उच्छ्वास, एशिया, औषध, कदुक, कंपन, कल, काजल कीच, कुंज, कुठार, केशर, क्षेम, खडग, खेल, खेवा, खोल, खौर, गजर, गर्जन, गात, गिरि, गुंजन गुंजार, गुनिया, घूंट, चाबुक, चीत्कार, चैत, छाता, जक, जय, जाल, ज्वाला, मुखिया झंझावात, झुरमुट, ठौर, डग, तन, ताप, तारा, ताल, तावीज, तोल, तौक, थपेड़े, दम दरिया, दस्तूर, दाह, दीप, देवता, धन्वा, धाना, नवनीत, नाद, निःश्वास, पवन, पिक, पेच, प्रभात, प्रलय, प्रवाह, प्राचीर, फाग, बनवास, बरसें, बांध, बाजार, बाजुओं, बाजू बारूद, बिल, बीज, बेर, बोल, भंवर, भोर, मलयानिल, महावर, माप, मित्र, मीनार, मृदग, मोड़, मौसम, यौवन, रव, रसायन, रागें, रागों, रुझान, लालच, लेख, वरदान, वात, विटपी, विरह, वेणु, व्यष्टि, शोध, श्वास, समीर, समीरण, सरगम, साकी, साख, सामर्थ्य, सार, स्पदन, हठ, हरमे, हलक, हिंडोला, हुंकार और हुलास।

स्त्री० प्रयोग के कारण

इन शब्दों मे से अधिकांश ऐसे हैं जो अन्य भाषाओं के लोक प्रचलित स्त्री० पर्यायों के प्रभाव से ही स्त्री० हो गए हैं। आगे कोष्ठकों में कवि और अन्य भाषाओं के वे शब्द दिए जा रहे हैं जिन्होंने काव्य में पुं० शब्दों को स्त्री० बना दिया है —

अतिरेक (न०; हिं० अधिकता स्त्री०), **अनल** (प्र०; हिं० आग स्त्री०), **अभिलाष** (उ०, ब०, म० श०; हिं० अभिलाषा स्त्री०), **अमृत** (श०; सं० सुधा स्त्री०) **असमञ्जस** (दि०; हिं० द्विविधा स्त्री०), **अवगुंठन** (म०; हिं० घूंघट स्त्री०), **इंतजार** (उ०; सं० प्रतीक्षा स्त्री०), **औषध** (अ०; अर० दवा स्त्री०), **कंपन** (गि०; हिं०

कंपकंपी स्त्री०), **कंदुक** (उ०, हिं० गेंद स्त्री०), **कीच** (दि०, प्र०, म०, श० ; हिं० दलदल स्त्री०), **कुठार** (श०; हिं० कुल्हाड़ी स्त्री०), **खड्ग** (ब०; हिं० तलवार स्त्री०), **खेल** (अ०; सं० खेला स्त्री०), **खेवा** (श०; हिं० नाव स्त्री०), **गर्जन** (अ०; हिं० गरज स्त्री०), **गात** (नि०; हिं० देह स्त्री०), **गिरि** (श०; हिं० पहाडी स्त्री०), **गुंजार** अ०; हिं० गूंज स्त्री०, सं० गुंजा स्त्री०), **चीत्कार** (दि०; हिं० चीख स्त्री०), **छाता** (पं० हिं० छतरी). **जंक** (मै०; हिं० मैल स्त्री०), **जय** (प्र० ; हिं० जीत स्त्री०), **झंझावात** (भ०; हिं० आंधी स्त्री०) **झुरमुट** (प्र०; हिं० झाड़ी स्त्री०), **ठौर** (मै०; फा०) जा उर्दू जगह स्त्री०), (**तन** नि०; स० तनु, तनू स्त्री०), **ताप** (ब०, ह०, हिं० गर्मी स्त्री०). **तारा** (मै० ; सं० तारा स्त्री०), **ताल** (ब०; हिं० ताली स्त्री०), **दम** (मै०; हिं० सांस स्त्री०), **दस्तूर** (दि०; सं० प्रथा स्त्री०), **दाह** (प्र० मि० ; हिं०जलन स्त्री०), **देवता** (मै०; स० देवता स्त्री०), **नाद** (मा०; फा० आवाज स्त्री०), **पवन** (गि०, म०, मै० सि०; हिं० हवा स्त्री०), **पिक** (भ०, श०; हिं० कोयल स्त्री०), **प्रभात** (पं०; अर० सुबह स्त्री०), **प्राचीर** (प्र०, श०; फा० चारदिवारी स्त्री०), **फाग** (न०, मै०, श० ; हिं० होली स्त्री०), **बरसें** (मै०; हिं० वर्षा स्त्री०, स० वर्ष से विकसित), **बारूद** (गि०; फा० बारूद स्त्री०), **बेर** (ब०; सं० बदरिका स्त्री०), **बोल** (प्र० ; फा० आवाज़ स्त्री०), **भय** (पं० ; सं० भीति स्त्री०), **भोर** (गि०, पं०; अर० सुबह स्त्री०), **माप** मै०; समास माप-तोल स्त्री०), **मौसम** (मा०; हिंदी ऋतु स्त्री०), **यौवन** (मा०; फा० जवानी स्त्री०), **रसायन** (मै०; हिं० औषधि स्त्री०), **लेख** (अ०; हिं० लिखावट स्त्री०), **वात** (प्र०, ब०, श०; हिं० हवा स्त्री०), **वेणु** (सि०; सं० वशी, वेणुका स्त्री०), **व्यष्टि** (मै०; सं० व्यष्टि स्त्री०), **शोध** (अ०; हिं० खोज स्त्री०), **श्वास** (भा०; उर्दू सांस स्त्री०), **समीर, समीरण** (गि०, नि०, म०, श०; हिं० हवा स्त्री०), **सांस** (मि०; उर्दू सांस स्त्री०), **साकी** (उ०, म०; अर० साकिय: स्त्री०), **सामर्थ्य** (दि०, भ०, भा०; अर० बिसात स्त्री० सं० शक्ति स्त्री०), **स्पंदन** (म०; हिं० धड़कन स्त्री०), **हठ** (अ०, म०, मा०, अर० जिद स्त्री०) और **हुंकार** (प्र०, श०; सं० हुंकृति स्त्री०)।

कुछ शब्दों में हमारा अनुमान अशुद्ध भी हो सकता है किंतु फिर भी हमारा यह निश्चित मत है कि लोक में प्रचलित स्त्री० पर्यायवाची शब्दों के प्रभाव से हिंदी कविताओं मे प्रयुक्त शब्दों के लिंग बदल जाते हैं।

नये या कम प्रचलित स्त्री० शब्द-रूप

अगवानिन (मा०), अठखेल (ब०), अनाथन (मा०), आश्वासना (अ०), इन्द्रधनुषी (दि०) उजाड़ियां (मा०), करौंदी (मैं०), कुड़राई (अं०), केहरिणी (दि०), क्रन्दना (अ०), खगी (अं०, दि०, न०, ह०), खड्डी (भ०), घेरी (मा०), चित्रकारिन (मा०), छाती (पं०), डाइनी (मैं०), दर्पणी (अं०), दानिन (अं०), धनुषी (दि०), धुग (अ०) पखिनियां (मा०), पथिनो (मा०), पक्षियां (ब०), पथिकिनी (पं०), फंदी (न०), फेना (मैं०), बटमारन (मा०), बिंदुएं (मा०), बीजा (मा०), बुध (मैं०), रगरेज (ब०), रणता (मैं०), विहँगिन (अं०), विहगी (म०), व्यालिनियां (मा०), शिखरणियां (मा०), शिखरियां (मा०), शोषणा (मैं०), संगिन (ब०), सागरी (मा०), सिपाहिनी (मा०)।

स्त्री० शब्दों के पुं० प्रयोग

जिन स्त्री० शब्दों को कवियो ने पु० रूपों में प्रयुक्त किया है उन के कुछ उदाहरण ये हैं —

अग्नि, अलक, आत्मा, आय, ईंटे, उठान, उड़ान, उथल-पुथल, उल्का, करतूत, कलम, कारा, कालिख, खाद, खान, खील, गन्ध, चकचौंधे, जय, ज्वार, झंकार, झञ्झा, डोर, ढाल, तरग, तारका, तारा, थाह, दलदल, दाख, बाढ़, देह, निधि, पतवार, पदचाप, पराजय, पलक, फिटकार, फुंकारों, फुहार, फेना, बरफ़, बलाका, बिसात, बूँद, मझधार, महक, माप, मीनार, वय, बातास, विनय, शरण, शान, सजधज, साँस, सिवार, सिसकन, सिहरन, सुगंध, सुरंग, सेज और हाट।

पुं०-प्रयोग के कारण

आगे कोष्ठकों में कवि और वे पर्याय दिये जा रहे हैं जिन के प्रभाव से उपर्युक्त शब्दों में से कुछ शब्द पुं० हो गए हैं —

अग्नि (दि०, मै० ; स० अग्नि पुं०), **अलक** (प्र०, सि०; सं० अलक पुं०, हिं० केश पुं०) **आत्मा** (मै०; सं० आत्मा पु०), **आय** (मै०; सं० आय पु०), **उठान** (उ०, भ०; सं० उत्थान नपुं०), **उड़ान** (ब०; स० उड्डयन नपुं०), **औषधि** (म०; सं० औषध नपुं०). **कलम** (ब०; स० अर० कलम पुं०), **कारा** (ह०; अं० जेल पुं०) **क्रोड़** (मै०; सं० क्रोड़ पुं०), **खान** (दि०, न०; फा० खान: पुं०), **गंध** (मै०, सं० गंध पुं०). **जय** (मै०; स० जय पुं०), **झंकार** (मै०; स० झङ्कार पुं०). **झंझा** (अ०; सं० झंझावात ' समास पुं०), **डोरों** (उ०; हिं० धागों पु०), **ढाल** (मै०; सं० ढाल नपुं०), **तरंग** (प्र०, मै०, मि०; सं० तरग पुं०), **तारका** (प्र० ; हिं० तारे पु०), **दलदल** (श०; स० दलाढक पु०, हिं० कीच पु०), **दाख** (प्र०; फा०, अंगूर पुं०). **देह** (न०, मै०, सि०; सं० नपुं० पु०). **धुंधो** (नि०; हिं० कोहरा पुं०), **निधि** (मै०; सं० निधि पुं०), **पतवार** (प्र०, श०; सं० पत्रवाल पु०), **पताक** (नि०; हिं० झंडा पुं०), **पराजय** (मा०; स० पराजय पु०), **पलक** (मै०, श०; फा० पल्क पुं०), **फिटकार** (प्र०; सं० तिरस्कार पु०), **फुंकार** (सि०; सं० फूत्कार पुं०) **फुहार** (प्र०; अर० फव्वार : पु०), **बरफ़** (ब०; फा० बर्फ़ पुं०), **बिसात** (सि०; स० सामर्थ्य नपुं०), **बूंद** (अं०, प्र०, ब०, भ०, मै०; सं० बिंदु पुं०), **भोर** (सि०; सं० प्रभात नपुं०), **माप** (सि०; सं० मापन नपुं०), **मीनार** (प्र०; उर्दू मीनार पुं०), **वय** (न०; सं० वयस् नपुं०). **वायु** (मै०; स० वायु पुं०) **विनय** (मै०, सं० पुं०), **शरण** (मै०, सं० शरण नपुं), **सिवार** (भा०; सं० शैवल पुं०, शैवाल नपुं०). **सुगंध** (सि०; सं० सुगंध पु०) **सेज** (प्र०; फा० बिस्तर पुं०), **हाट** (न०; फा० बाजार पुं० सं० हट्ट पु०)।

नये या कम प्रचलित पुं० शब्द-रूप

इन के उदाहरण बहुत कम हैं यथा पहेला (न०), प्रवंचन (ब०), बहेली (अ०), मंजूष (अ०), मनौता (भ०), हरियाला (मा०) ।

वचन

लिंगो की भांति वचनो के क्षेत्र में भी कवियों ने रुचि-स्वातन्त्र्य का प्रदर्शन किया है । कुछ उदाहरण देखे—

अविकारी वचन

प्रसग के अनुमार बहुवचन बनाने की अपेक्षा जहां शब्दों को एकवचन में ही रहने दिया गया है —

अश्रु (ह०), आंख (नि०, प०, ब०, मा०), आशा (ब०), इन्द्रिय (न०), ऋतु (गि०), कथा (श०), कली (श०), कहानी (अं०), कान (ब०), किन्नरकठी (नि०), किरण (ब०), कुंठा (नि०), कुरबानी (अं०), गाथ (गि०, प्र०), गाली (मा०), गोपबाला (मा०), घंटी (न०), चाह (बा०), चीत्कार (मै०), जहांगीर (दि०), टोकरी (गि०), डाल (प्र०), तान (प्र०), तारा (प्र०), दिशा (अ०, श०,), दीवार (ब०), दुनिया (ब०), धार (ब०), धृष्ठता (ब०), धेनु (मै०), नयन (दि०), नारी (गि०), नौबत (ब०), न्योछावर (गि०), पंख (श०), पगधारी (न०) पूनो (गि०), बात (मा०), बिजली (नि०), बूंद (न०, ब०), बेटी (न०), भारत (मै०), भुजा (मा०), मां (सि०), मुट्ठी (ब०, मा०), मुद्रा (पं०), मोती (दि०) यह (गि०, प्र०, ब०, भा०, म०, मा०, मै०), योजना (पं०), रजनी (ब०), रागिनी (नि०), रीति (ब०, रा०), लपट (श०), लाठी (न, ब०), लैला

(दि०), वह (अं०, प्र०), वायु (मै०), वेणी (मा०), शब्द (ब०), शीरीं (दि०), श्रवण (दि०), सध्या (ब०), समस्या (ब०), सांस (नि०, ब०, ह०) सौगात (गि०, मा०), हथेली (ब०), हाथ (नि०), हाथी (मा०) है (भा०)।

इन में यह और वह तो सर्वनाम हैं और ' है ' क्रिया है।

बहु० शब्दों के एक० प्रयोग

सदा बहुवचनों में प्रयुक्त होने वाले शब्द एकवचन में लिखे गए है यथा अश्रु (ह०), आंसू (अ०, ब०), दर्शन (ब०), प्राण (अ०, दि०, नि०, प्र०, ब०, भ०, मा०, मि०, मै०, सि०), ये (अं०, न०, प०, प्र०, भा०), वे (गि०)।

इन में ये और वे बहु० सर्वनाम हैं जो एकवचन में लिखे गए है।

नये पुं० बहु० शब्द-रूप

अधनों (मै०), अनर्थों (ब०), अनेकों (अ०, दि०, न०, नि०, प्र०, भ०, मै०, श०, सि०), आशान्वितों (मि०), उजाडो (सि०), चतुरो (मि०), छलों-छदों (मै०, समास), देवतों (मा०), पताके (ब०), पुरुषाओ (मा०), प्रतिद्वारों (प्र०), प्रतिपन्नो (प्र०), प्रतिरोमों (म०), बुदबदे (म०), भरपूरो (सि०) योधों (मै०), राजे (दि०, नि०, मै०), राजों (ब०, मं०, मि०), शत्रों (अ०) सबों (भा०), सिसको (मा०), हरएक पत्थरो (प्र०)।

इन में ' सबों ' नया बहु० सर्वनाम है। प्रति और हर-एक के साथ आने वाले संज्ञा शब्दो के बहुवचन नही बना करते किंतु कवियो ने बनाये हैं।

नये स्त्री० बहु० शब्द-रूप

अभिलाषें (अं०, म०), अभिलाषों (मा०), आकृतिएं (पं०), औषधें

(मै०), गूंजें (प्र०), चकचौंधों (मै०), जवाबदेहियां (ब०), जातें (पं०), ज्वालें (पं०), तडिताएं (मै०), तरलाएं (मै०), ताराएं (मै०), निशिएं (पं०), पंखिनियां (मा०), पतझारें (म०), पूनें (मै०), प्यारियां (अ०), बालें (मै०), बाहुए (पं०) बिंदुएं (मा०) बुढ़ियें (ब०), भरियां (अ०), मालनियां (मा०), मालें (पं०), रागें (मा०), लूहे (अ०), व्यक्तियां (मै०), व्यालिनियां (मा०), शाखे (अ०, नि०), शिखरणियां (मा०), शिखरियां (मा०), शिखरें (न०), संस्कृतिएं (प०), सत्ये (प०), सलिलाओं (अ०), हृसिय। (म०), हरियां (अ०), हिलकोरियां (मा०)।

संधि

कवियों ने संधिज शब्दों का प्रयोग करते समय भी अपने रुचि-वैचित्र्य का प्रकाशन किया है। कुछ उदाहरण आगे दिए जा रहे हैं :—

नयी संधियां

गंगोजमुन (ब०), जनर्लोक (न०), तपर्लोक (न०), पियच्छवि (नि०), मनोकाम (सि०), मनोकामना (श०), मस्तिष्कोहृदय (ब०), वियुत्द्युति (नि०), सुखमाकार (पं०), सद्योज्ज्वल (पं०), स्वत्वाधिकार (न०)।

इन में गंगोजमुन और मस्तिष्कोहृदय शब्द उर्दू के 'वाओ' (जिसका द्वन्द्व समास में उच्चारण 'ओ' की भाति होता है) से प्रभावित हो कर लिखे गए हैं। पियच्छवि, विद्युत्द्युति, सुखमाकार शब्द तो तत्सम और तद्भव शब्दों के मेल से बने हैं।

कम प्रचलित संधि-रूप उदाहरण देखें :—

अधश्चोर्ध्व (न०), अपूर्णोत्क्रमण (न०), अर्थागमोपाय (नि०), कुसुमोद्‌गम (प्र०), क्रांत्यांदोलन (न०), गंधोच्छ्‌वास (भ०), चिच्छक्ति (पं०), चात्कारोत्पल (नि०), जगन्नायक (न०), जन्मनिरोधातुर (दि०), डमन्निनाद (रा०), तड़िल्लता (अ०), नीड़ोन्मुखता (अ०), पश्चिमाभिमुख (उ०), पानेच्छुक (मैं०), प्रमोदोन्माद (सि०), प्रलयोल्का (प्र०), बलिदानोत्कंठा (न०), बहिस्साधनावलम्बित (न०), भविष्यच्चिन्ता (मैं०), महच्छक्ति (अ०), यथेप्सित (प्र०), यशोग्रंथियां (उ०), विद्युद्बाष्प (म०), विद्युल्लता (अ०), विद्युल्लतिका (पं०), वियल्लोक (दि०), शरन्निशा (मैं०), सच्छास्त्र (पं०), सदुच्च (पं०), सन्न्याय (उ०), सम्मिलनोत्सुकता (न०), सुहृज्जन (सि०), स्नेहानुराग (श०), स्वच्छच्छवि (उ०), स्वप्नागतुक (श०) ।

विवादास्पद संधि-रूप

जगड्वाल (मा०), ज्योतिमय (ब०), तपोअग्नि (रा०), तमोपत्र (मा०), मनोकाम (सि०), मनोकामना (श०), मरुताकाश (पं०), मारुतामोद, (पं०), सहजनुभूति (ब०) ।

स्वर संधियां न करना

गतआश (न०), महाअनल (ह०), श्वासउच्छ्‌वास (न०), सुअंकित (न०), सुअर्जित (ह०), सुआसन (न०), स्वइच्छित (ह०)' हतआश (न०) ।

व्यंजन संधियां न करना

मरुताकाश (प०), मारुतामोद (पं०), हरिताधकार (पं०) ।

विसर्ग संधियां न करना

ज्योतिमय (ब०) ।

कम प्रचलित व्यंजन संधियां

कुछ व्यंजन संधियां विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं :—

अशेषच्छवि (उ०), जगज्जन (न०), तड़िल्लता (अ०), दिग्दाहों (प्र०), प्रतिच्छवि (प्र०), मदनुष्ठानों (न०), विद्युदग्नि (सि०), सच्चरित्र (प्र०), स्वच्छच्छवि (उ०)।

संधियों के लिए प्रिय शब्द

जिन शब्दों से संधियां करना कवियों को विशेष रूप से प्रिय है वे ये हैं :—

अचल (नि०), अंतर (अ०, दि०, मि०), अतीत (अ०), अरुण (गि०), अर्थ (मै०) आकुल (अँ०), आतुर (अ०), आभ (ब०), आहत (अ०), उच्चार (दि०), उज्ज्वल (सि०) उत्पल (नि०), उत्थान (ब०), उत्सव (सि०), उद्गार (ब०), उन्मुख (मि०), ज्योतिः (गि०, दि०, पं०, ब०), तेजः (अ०), नयन (श०), निः (अ०, गि०, प्र०, भा०, मै०, श०), मनः (उ०, नि०, प्र०, भा०, मै०), यशः (उ०), शिरः (नि०)।

समास

कवियों द्वारा प्रयुक्त समासों के सम्बंध में कुछ निष्कर्ष इस प्रकार हैं —

नये समास

जो समास हिंदी गद्य में अधिक प्रचलित नहीं हैं उन्हें पद्य में देखा जा सकता है। निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

अंतर-पीर (ह०), अंतरिक्ष-विलीन (ब०), अग्नि-परी (ह०), अनिल

कुसुम (पं०), **अनुभव-डलिया** (अ०), **अपमापन-पथ** (रा०), **अभिमान-भरोसे** (अ०), **अमरता-सुत** (म०), ओस-गीले (म०), कचन-पीले (ब०), **किरण-गान** (रा०), **किरण-साँस** (रा०), क्रांति-कोकिला (ब०), **खोज-खग** (म०), **गंध-कुंतल** (पं०), गागर-यौवन (दि०), गान-विहग (ब०), गीत-विहँग (रा०), **चीन-दीवार** (ब०), जावक-रचे (म०), तेज-भस्म (अ०), दिन-बीच (ब०), **दुःख-अतिथि** (म०), **दुःख-पथिक** (म०), दुख-प्यास (म०), दूर-खग (म०), धुंध-ढकी (अ०), निशि-मूक (म०), पग-पायल (ब०), पीयूष-अक्षर (ह०), पूर्णता-भाव (ह०), बाहु-झुरमुट (अं०), **बीन-बंदी** (म०), भार-बोझिल (म०), मधु-माते (म०), मिलन-मार्ग (ह०), मिलन-समय (ह०), मृत्यु-धूम्र (भ०) **मेघ-रूँधे** (म०), **रंग-बादल** (प०), रव-रत (ब०), रिक्ति-भरे (अ०), **रूप-केकी** (अ०), **वेदना-पुत्र** (दि०), समीर-परिया (म०), साड़ी-द्युति (दि०), **साधना-प्रदीप** (मि०), सिंधु-ओर (मै०), सुधि-बसे (ब०), **सुधि-सारिका** (श०), स्वप्न-**वणिक** (श०)।

पर्यायवाची शब्दों के समास

कीच-दलदल (अ०), पल-छिन (अ०), प्रेमी-प्रिय (अ०)।

सँकर समास

कवियो ने तत्सम और तद्भव शब्दो के मेल से बने कई सँकर समास प्रयुक्त किए हैं। प्रायः संस्कृत और फ़ारसी के 'तत्सम' शब्दों को हिंदी के 'तद्भव' शब्दों से जोड़ दिया है। मिले जुले कुछ उदाहरण देखें —

अंतर-पीर (ह०), अमिय-धार (दि०), आँसू-कन (अ०), आनंद-बीन (श०), ओस-जल (ब०), क्षितिज-रेख (म०), गम-भरा (ब०), **गुण-गेह** (सि०), गृह-काज (भा०), घन-पाहुन (दि०), घुटनें-बल (दि०), **चाह-क्रीत** (मा०), चिता-राख (ब०), जग-हिय (अ०), जीवन-क्यारी (ब०), जीवन-गगरी

(म०) जीवन-जुलूस (दि०), जीवन-झोला (मि०), जीवन-वार्ता (अँ०), जीवन-बीन (म०), दर्शन-ओझलता (न०), दाग-पराग (ब०), दूज-कला (दि०) देह-गेह (प्र०), नीलम-मंदिर (म०), पद-आहट (मा०), पद-चाप (म०), पर-स्वर (ब०), पलक-पांखुरी (ब०), पलक-प्रवाप (मि०), पुलक-पंखी (म०), प्रेम-गली (ह०), प्रेम-बिरवा (दि०), बादल-सेज (अ०), बीन-बंदी (म०), ब्रिटिश-सिंह (मै०), मधु-प्याले (म०), मानस-बसेरा (न०), मुमताज-विरह (दि०), मोम-दीप (मा०), याद-दामिनी (ह०), रंग-लिखी (भा०), लपट-झंकार (न०), विदा-काल (मि०), वियोग-अंधड़ (ह०), वृक्ष-पाँत (प्र०), शारद-छौनी (मा०), सांझ-तरैयों (भा०), साड़ी-द्युति (दि०), सिंगार-मंजूषा (न०), सुख-सेज (सि०), सुख-सेज (गि०), सौंदर्य-निशानी (गि०), स्नेह-तरी (अ०), स्मृति-पतवार (ह०), स्वाति-बूंद (श०), हिय-हार (दि०)।

स्वर-संधियां न करना

अंधड़-आग (दि०), आलोक-अंकुर (म०) ईश्वर-आश्रय (अ०), कर-उंगलियों (न०), कवि-उर (ब०), किरण-अंगुलियों (अ०), किरण-उभार (अँ०), घन-अवगुंठन (ब०), घर-आंगन (श०), छवि-अनल (ह०), छाया-अभिनय (पं०), जग-आंगन (म०), जन-एकता (अँ०), जीवन-अभाव (ब०), तम-अंचल (मि०), तरुणी-उर (दि०), तिमिर-अवसाद (ब०), दुःख-अतिथि (म०), दुग्ध-उज्ज्वल (ब०), दृष्टि-अधरों (ह०), पतन- उत्थान (ह०), पद-आहट (मा०), पीयूष-अक्षर (ह०), प्रेमी-उर (अ०), मन-अंबर (न०), मरन्द-उत्सव (प्र०), मरु-उर (ह०), मानस-अलि (म०) मिलन-इंदु (म०), मुकुर-उर (ब०), मुक्ति-आवाहन (अ०), मेघ-आकुल (अ०), रूप-आरती (दि०), रूप-इन्दु (गि०), लौह-अर्गला (दि०), विद्युत-अक्षर (गि०), विश्व-ईमान (मा०), शक्ति-अशक्ति (मि०), संध्या-अंशुक (म०), सित-असित (म०), सौंदर्य-उदधि (उ०), स्मरण-

अंबर (न०), स्मृति-अंबर (ह०), हीरक-ओस (दि०) ।

कर्मधारय समास

इन समासों में उपमानाश्रित कर्मधारय समासों का ही प्राचुर्य है । उपमानाश्रित समासों के उभय प्रकार मिल जाते हैं —

(क) **उपमानपूर्वपद समास**

नीलम-निर्मल(सि०), फूल-यौवन (भा०), मुकुर-उर (ब०), मृग-मन (प्र०), मोती-आंसू (ब०), मोती-बीज (दि०), रेशम-लहरें (भा०), वज्र कठोर (अ०), वज्र-हृदय (अं०, मि०), व्याध-जग (ब०), शंख-ग्रीवा (भा०), सुमन-मन (ह०), सेतु-जिस्म (भा०), सौरभ-यश (ब०); स्वर्ण-धूल (भा०), हिम-शीतल (अ०) ।

(ख) **उपमानोत्तरपद समास** कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं —

अश्रु-सिंधु (मै०), काल-पशु (मै०), किरन-उंगलियो (प्र०), मन-मयूर (मै०), लगन-घन (न०) स्वर-प्रसून (न०) ।

उल्टे समास

इन्हें '' समास-विपर्यय' भी कहा जा सकता है । कतिपय उदाहरण देखें —

दण्ड-भुज (ब०), दण्ड-माप (ब०), प्यास-प्रणय (ब०), बीच-बाग (अ०), मग्न-नीर (ब०), मालिक-मधुशाला (ब०), लग्न-समाधि (ब०) ।

केवल ' बीच-बाग ' समास को छोड़ कर शेष सभी समास कवि बच्चन द्वारा लिखे गए हैं —

समासों के लिए प्रिय शब्द

अग्नि, अनल (न०), अनुभव (अ०), इतिहास (गि०), उदर (ब०), कण (अ०, म०), करुणा (सि०, ह०), काल (उ०), खचित (प्र०), छवि

(ह०), जीवन (अँ०, दि०, न०, प्र०, ब०, म०, मि०, रा०,) ज्वाला (अ०), दल (ब०), दुःख (म०), द्वार (अ०), नभ (न०), नयन (श०), निकट (मै०), निराशा (ह०), प्रणय (अ०), प्राण (अ०), प्रेम (दि०, ह०), बीच (दि०, सि०), भरा भरी, भरे (अ०, गि०, मै०), भाव (मि०), भीत (प्र०), भ्रष्ट (भ०), मन (न०, प्र०, ह०), मानव (अँ०), मानस (अ०, म०) मिलन (ह०), मृत्यु (अ०), रग (गि०), रंगे (गि०), रचित (प्र०), रथ (न०), वन (अँ०), विद्ध (मै०), विभोर (प्र०), विश्व (ब०), विहीन (प्र०), वेदना (मि०), शूर (सि०), संघर्ष (अँ०), सत्य (सि०), समय (न०, मि०), समीप (मै०), सिंधु (अँ०, भ०), सुरभि (गि०), सौरभ (अ०), स्मरण (न०), स्मृति (अ०, न०), स्वप्न (अ०), हृदय (मि० , सि०) ।

प्रिय समास

अग्नि-परीक्षा (सि०), कर-उगलियां (न०, प्र०), काल-चक्र (भ०, मि०) किरण-उंगलियां (अ०), किरण-कर (अ०), छाया-तन (पं०, भा०) ।

समासों के प्रकार

कवियों के द्वारा प्रयुक्त समासों में पदों के योग की दृष्टि से कुछ प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं —

१. **संज्ञा + संज्ञा = संज्ञा** ऐसे समासों में समस्त पदों के लिंग और वचन दूसरे पद के अनुसार निर्धारित होते हैं। यदि दूसरा पद पुं० हो तो समस्त पद संज्ञा पुं० और बहुवचन हो तो समस्त पद भी संज्ञा बहुवचन ही होता है। कुछ उदाहरण देखें —

अन्न-वस्त्र, अश्रु-मोतियों, गंध-कुंतल, झष-केतु, तरंग-रथों, देह-रथ, दैत्य-काय धर्म-कर्म, नभ-धाराएं, नेह-पाती, पग-रेखाएं, पथ-कणों, मोक्ष-प्राप्ति, यौवन-रंगरेलियों,

रंग-विहंगों, रैन-बसेरा, बैर-विरोध, शायक-संधानों, समय-प्रकारों, सीमा-बंधनों, सुख-नीड़ों, सुख-सीमा, स्वर-सुमनों, हाथ-हथौड़े, हानि-लाभ।

२. संज्ञा + संज्ञा = वि० इसके उदाहरण विरल हैं। यथा मुंह-चुराने (अ०)।

३. संज्ञा + संज्ञा = अव्यय प्राय: इस में बहुव्रीहि समास आते हैं यथा मुहोमुह, रातोरात। समस्त पद ' अव्यय ' होते हैं।

४. संज्ञा + वि० = वि० ऐसे समासो की संख्या सर्वाधिक है। कुछ उदाहरण देखें — अधिकार-क्षुब्ध, अनुराग-भरी, आग-लगे. आलोक-अधीर, उमँग-भरा, ओस-गीले, ओस-भरा, कंचन-पीले, करुणा-प्लावित, कंटक-विद्ध , कर्त्तव्य-भ्रष्ट, कर्त्तव्य-विमुख, कल्पना-निर्मित, खेद-खिन्न, गंध-अंध, गंध-दूषित, गौरव-युक्त, घर-बिछुड़े, चित-चीते, छेदन-समर्थ, ताप-तप्त, दाह-दग्ध, प्रतीक्षा-स्तब्ध, प्रलय-भीत, बंधन-मुक्त, मधु-प्यासे, मधु-मिश्रित, मर्यादा-रहित, मुख-चूमी, रागिनी-विह्वल, राहु-ग्रस्त, वज्र-खचित, विरह-विधुर, विरह-व्यथित, विष-दग्ध, व्यथा-सिक्त, सदेश-विहीन, सुधा-सने, स्वर्ग-च्युत, वसत-सेवित।

इन मे करण और अपादान तत्पुरुष समासो की अधिकता है।

५. संज्ञा + क्रि० = अव्यय

इस के उदाहरण बहुत कम हैं यथा मन-भर।

६.	संज्ञा + वि० = संज्ञा	धर्मधीर।
७.	वि० + संज्ञा = संज्ञा	छिन्न-पत्र, प्रसन्न-मन, भग्न-ध्यान।
८.	वि० + संज्ञा = वि०	कान्त-मुख, खिन्न-वदन, हत-प्र ।
९.	वि० + संज्ञा = अव्यय	आठोगांठ, बारहोमास।
१०.	क्रि० + क्रि० = संज्ञा	तनातनी।

अन्य शब्द-विकार

इस से पूर्व हम ने संज्ञा, विशेषण और क्रिया का अध्ययन करते समय कुछ शब्द-विकार प्रस्तुत किए थे। अब कुछ और विकृत शब्द-रूप प्रस्तुत किए जा रहे हैं —

१. संज्ञा

अनुरक्ति > ऽनुरक्ति (उ०), अनुराग > ऽनुराग, (उ०), आधार > अधार, (म०), आनन्द > अनन्द (रा०), आराधना > अ'राधना (प्र०), आयुर्वेद > ऽऽयुर्वेद (उ०), कारण > कारन (गि०), कालिख > कालस (गि०), अवगुंठन > गुंठन (म०), गृही > गृहि (नि०), गांधी > गैंडी (ब०), दरवाजे > दरवज्जे (श०), प्रिया-आह्लाद > प्रि-आह्‌लाद (प०), भाग-दौड़ > भागा-दौड़ी (ब), भारतमाता > मांभारत (ब०), युगयुग > युगयुगों (अ०, भा०, ह०), विद्युत् > विद्यु (म०), सर्वस्व > सरबस, सर्वस (दि०, न०), हेरफेर > हेरफेरा (ब०), आह्‌लाद > ह्लाद (पं०)।

२. विशेषण

अनिर्वचनीय > अनिर्वच (पं०), अवाक् > अवाक (सि०), अधीन > आधीन (अ०, उ०, पं०), कई > कयी (उ०), कृश > कृष (म०), नजदीक > नगीच (न०), निन्दित > निनदित (पं०), प्रतिध्वनित > प्र'ध्वनित (ब०), बारहों > बारों (सि०), विवश > विवस (प्र०), शाश्वत > शास्वत (दि०), हीन > हीने (उ०)।

३. क्रिया

चाहे > चहे (मा०), दिया > दी (प्र०, 'दिमा' अर्थ में), हो > हौ (सि०)।

४, क्रिया-विशेषण

अकस्मात् > अकस्मात (ब०, भा०, मै०, सि०), अहोरात्र > अहोरात्रि (मि०)।

५. सर्वनाम

इन्होंने > इनने (न०), उन्होंने > उनने (दि०, न०) कितनी > कितने (' कितनी ' अर्थ में; नि०), किन्होने > किनने (न०), जिन्होंने > जिनने (न०, प्र०, मा०), जो > जिसे (' जो ' की अपेक्षा, ब०), तुम्हें > तुम को (ब०), तुम्हारे > तमारे (ह०), अपना > तुम्हारा (अ०), तू ही > तुही (मा०), तुम्ही > तुह्मी (न०), अपनी > तेरी (मा०), अपने > मुझ (अ०, गि०), अपने > मेरे (ह०), वह या वे की बजाय > व' (दि०), वह > वो (प्र०), सब > सबों (ब०), हमें > हम को (ब०)।

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम शब्दो के स्थलों पर कवियों द्वारा द्वितीय (> के बाद लिखे हुए) शब्द प्रयुक्त किए गए हैं।

६. अव्यय

अलम् > अलम (श०), अहर्निश > अहर्निशि (उ०, श०, सि०), अहोरात्र > अहोरात्रि (मि०), आद्यन्त > आदन्त (न०), कदाचित् > कदाचित (उ०, मै०), किंचित् > किंचित (भा०), क्यो>क्यूं (मा०), चतुर्दिक् > चतुर्दिक (अं०, उ०, दि०, प्र०, ब०, श०, सि०, ह०), उच्छ्वास > उच्छवास (पं०), तनिक > तनक (प्र०), तो > तौ (सि०), धिक् > धिक (मै०), नहीं > नहिं (प्र०), न > ना (अ०, प्र०, श०), निशिदिन > निशदिन (भ०), प्रति > प्रती (मै०), पृथक् > पृथक (अ०, भ०, भा०, श०, ह०), फिर > फेर (अ०), यद्यपि > यदपि (अ०, उ०, दि०, न०, प्र०, सि०), यहां > यां (न०), वहां > वां (न०), विधिवत् > विधिवत (प्र०, ब०), शनैः > शनै (उ०), साक्षात् > साक्षात

(प्र०), स्वयम् > स्वयम (भ०), हठात् > हठात (मैं०), ही > हि० (प्र०)।

७. सम्बोधन

मधुवर्षिणि > मधुवर्षिणी (अं०), राजन् > राजन (मैं०)।

८. शब्द संयोग

इन्ही (मैं०), उधरी (न०), तुझी (अ०, मि०), तुम्हीं (प्र०, भा०, मै०), मनीमन (रा०), मुझी (उ०, दि०, प्र०, ब०, भा०, म०, मा०, मै०, श०, सि० ह०), हमी (अ०, उ०, न०, प्र०, ब०, मा०, मि०, मैं०, सि०, ह०)।

९. शिशु-भाषा

असुर > अचुल (मैं०), खाली > काली (नि०), गाय > गाअ (रा०), चारपाई > चालपाई (नि०), दूध > दूद (रा०), महाराज > मआलाज (रा०), मारूं > मालू (मैं०)।

१०. अन्य विकार

आ गया > ऽऽगया (उ०), पर > प (दि०)।

व शब्द

कवियों ने ऐसे अनेक शब्द लिखे हैं जो विशेष रूप से विचारणीय हैं था :—

नव प्रयोग

अंखमुदौल (ब०), अनीनिका (न०), अमरौती (भ०), अलफ़ंजों (भ०), ी (अ०), एकलव (रा०), एम्बर (गि०), खोया-पा-पन (भा०), गढ़बाटों ा०), घरवे (अ०), चिनियाहट (अ०), चुनमुन (न०), छिगुन (दि०) हुबाल (न०), जुलाहेशाह (ब०) ठट्ठिमठट्ठा (ब०), दम्व (भ०), दीख (मा०),

दुकेला (गि०), दुपद (सि०), दे-ले (ब०), न-कुछ (ब०, सि०), निंदिया कुमारी (गि०), नियन (गि०), पाड़ (न०), पुस्तक-कीट (मा०), प्रास (प०), बाजंतर बाजतरी (ब०), बिरात (न०), मनकाम (दि०), मिट्टी (चुबन, अ०), यन्त्र-गरुड़ (वायुयान, अ०), लवणचोर (गांधी, न०), वीरबहू (अ०), सिलहुट (गि०), सीधेमगगामी (प०)।

प्रचलित शब्द-प्रयोग

कुछ प्रयोग तो प्रचलित हो चुके हैं यथा— 'मलयानिल' अर्थ में मलयज (गि०, प्र०), लहरात्र (ब०), हरीतिमा (नि०, दि०, पं०, मा०, रा०), हेमांचल (हिमालय, मा०)।

संधिज शब्द

तमस्तूर्य (नि०), द्रुमाली (दि०) पयोनद (उ०), वृक्षाली (मैं०), 'ध्वंसावशेष' के तौल पर 'शा आवशेष' (ब०)।

सामासिक शब्द

अघजन्मा (दि०), अनिल-कुसुम (तितली, पं०), अभीक (दि०) अश्रुगीली (श०), आलोक-चित्र-पट (फोटो खींचने के प्लेट, मैं०), ऊनल-पतन (श०), करुणापीन (ब०), कारुत्राद्य (अ०), किरणांखी (श०), खमंडल (न०), खूनाखून (मा०), गान-घनी (मैं०), चितापीन (ब०), जट-लठ (मैं०), जीति-स्तभ (गि०), दूध-धोई (श०), दीप्ति-सक्रिय-तत्त्व (रेडियम जैसे पदार्थ, न०), नयन-शिशु (आंसू, पं०), नौ-बंधन-कील (लंगर, न०), पंथदान (अं०), पद-लगा (ब०), परकैंच (श०), पलबांहे (उ०), फुट्टफैयल (न०), बंदर-बांट (मैं०), बूंदोंबीनी (श०), भयपीन (ब०), मतिमंशा (ब०), मृग-भ्रम (ब०), यश-अकामी (ब०), रात्रि-पर्यटन बंधन-आज्ञा (कर्फ्यूआर्डर, न०), रीत-बदल (श०) वात-वसन (पाल, न०), सब-ओरन (अ०), समरजीत (उ०), सिंधु-रुखी (ब०),

सुधहारी (मैं०), सुमन-चेतन (तितली, प०), सोनाधूल (श०), सोनापीली (श०) ।

ध्वन्यात्मक शब्द

किनमिन (श०), किलकिल (न०), कूहू (कोयल, भ०), गन्नाटा (न०) घुर्घुर (अ०), छपकछैया (ब०), झराझर (ब०), झलाझल (अं०), थुपथुपी (पं०), पिनपिन (नि०), रमझुम (भा०, मा०), रूमझूम (भ०, म०) हुक्का (एक ध्वनि, अ०) ।

उपसर्ग

अनुग्लानि (मैं०), अनुपक्षी (भ०), उपमानव (न०), कुबेला (भा०), दुरुपेक्षा (ब०), परिगण (अ०), परिप्रोत (प०), बेदर्द (ह०), विबध (दि०), विसुधबुध (ब०), सुनिर्धार (नि०) ।

प्रत्यय

कृषिकर (मैं०), दूरक (मैं०), पीलिमा (ब०), श्रेष्ठतम (मि०) ।

भाषाएं

संस्कृत-प्रभाव

कुछ हिं० शब्द संस्कृत के तत्सम शब्दों से प्रभावित हैं यथा अतिमा (सं० अतिमय, प०), एकघ्नी (दि०), क्षेपणियां (न०), गुल्मिनियों (अं०), दिशाभूल (सं० दिग्भ्रम, श०) नतमाथ (सं० नतमस्तक, ब०), नवधांगण (मा०), पन्था (सं० पन्थाः, प्र०, सि०), बनानी (अं०). बिहान (सं० विहान, गि०), वनानी (सि०), वनाली (सं० वनालिका), वर्तरी (सं० वर्ति, श०), सकारे (सं० सकाल, गि०), सीबल (सं० सम्बल), हिमावत (सं० हिमवत्, श०) ।

ब्रजभाषा

ऊभासांसी (न०), ऐल (न०), औंगन (गि०), औलाती (श०), खोजनहार (ब०), गुंजरण (पं०), चरी (गि०), छाली (दि०), झकाझक (गि०), डरौने (अ०), निबुक (मैं०), निहुरे (मैं०), न्यार (श०), पछइया (श०), पैछर (श०), फुलक (श०), बक्खर (गि०), बटिया (श०), रुठार (श०), सिरोही (मैं०)।

अवधी

आयसु (दि०), उलरना (दि०), थाक (अ०), सुरुआ (शोरबा, ब०)।

राजस्थानी

गोखों (अ०), हम्बा (मैं०)।

अरबी-फ़ारसी-प्रभाव

गाहे गाहे (न०), बूदम (बूदमे वेदाल, ब०), समदुःखी (हमदर्द, अ०), सरजात (फा० सरजाह, भ०), सहपथिक (हमसफ़र, भ०), सहयात्री, (हमसफ़र सि०)।

बंगला

अल्पना (पं०), भेला (छोटी डोंगी, नि० (।

देशज

अड़गड़ों (न०), कन्था (अ०), करारे (अ०), कुहू (कोयल, भ०), खंगर (श०), चगन (मा०), छिया-छी (मा०), झुकमुके (सि०) तू-तुकार (मि०), पपमी (दि०), फटूफैयल (न०), बोदर (पतली छड़ी, मैं०), मालंच

(श०), लरछे (दि०), सतभैये (अ०), हड़कल (श०)।

अँगरेजी शब्दों का संस्कृतीकरण

अन्तिकिनी (एन्टिगोनस, उ०), अन्त्यालकादश (एन्टियाक्लिडस, उ०), अलक्षेन्द्र, अलिसुंदर (अलेक्जेंडर उ०) पौरुष (पोरस उ०), लंकासुर (लंकाशायर, मै०)।

प्रिय शब्द

कुछ शब्द ऐसे हैं जिन की लगभग सभी कवियों ने आवृत्तियां की हैं। उदाहरणत: निम्नलिखित शब्द देखे जा सकते हैं —

अजान (न०, भ०, श०, ह०), अडोल (मै०), अनगिन (अ०, मा०), अनमोल (मा०, मि०), अनेकों (न०), अल्पना (पं०, श०), असमय (भा०, मै०) असीस (मै०), आगी (भ०, मा०), आलबाल (नि०), आश (अँ०, दि०, ब०, म०, मै०, श०), आशीष (उ०, ब०, भ०, मि०, श०, सि०), इन्द्रधनुषी (पं०, रा०), इमन (न०, नि०), उच्छ्वास (उ०, न०, ब०, भ०, श०, ह०), उज्ज्वल (उ०, मि०, स०, ह०), उट्ठा (मा०), कन (उ०, गि०, प्र०, ब०, भा०, म०), चतुर्दिक (उ०, दि०, मै०, श९), जगड्वाल (न०), जगत (अँ० अ०, उ०, गि०, दि०, प्र०, ब०, ब०, भा०, मै०, श०, सि०, ह०), ज्योति (अँ०, नि०, पं०, स०), टुक (उ०, दि०, न०, मा, मै०), तारा ('पुतली' अर्थ में, प्र०), दूजा (न०), दूरागत (दि०, प्र०, श०), निश्वास (प्र०), निस्वन (उ०, प्र०), पिन्हाना (दि०, ब०), फाग (न०), फेनिल (ब०), बलिंमय (मा०, मि०), बुद्बुद (अँ०, अ०, उ०, प्र०, भा०, मै०, श०), भरपाई (मा०, मै०), भावुक (दि०,

मैं०), मरन्द (प्र०), मरमर (ब०), मलयज (प्र०), माथ (उ०), मुझी (दि० मैं०), यदपि (अ०, उ०, न०, मैं०), रुमझुम (भा०, म०, मा०), रेख (ब०, रा०), ललाम (उ०, प्र०, ब०, म०), वक्षस्थल (दि०, ब०, भ० श०, ह०), वातास (अँ०, अ०, ब०, भ०, श०), विहान (ब०), सकरुण (भ० म०), सकाल (नि०, पं०, श०), सनेह (दि०, न०), सम्राट् (ब०, भा०, मि०, मैं०); सुकुमार (ब०, भा०, मि०, श०), सुखमा (प्र०, ब०), स्वप्निल (पं०), हरित (प्र०, श०), हमी (ब०, मैं०, सि०), हरीतिमा (दि०, पं०, मा०), हहराना (न०) ।

ध्वन्यात्मक शब्द

प्रायः सभी कवियों ने ध्वन्यात्मक शब्दों की सहायता से बिम्बों का निर्माण किया है । उन के द्वारा प्रयुक्त ध्वनियों के कुछ प्रकार आगे दिए जा रहे हैं —

१. ध्वन्यावृत्ति (क) प्रायः एक ही ध्वनि की दो बार आवृत्ति होती है । उदाहरण देखें —

किणकिण (नि०), कड़कड़ (नि०), कलकल (मा०), किचकिच (सि०), कुऊ-कुऊ (नि०), कुलकुल (प्र०), खड़खड़ (मा०), खनखन (मैं०), खरखर (उ०), गुनगुन (मैं०), घनघन (नि०), घर्घर (उ०, नि०), घुरघुर (मैं०), चटचट (उ०), चमचम (मैं०), चीचीं (सि०), छनछन (नि०), छपछप (प्र०, सि०), छरछर (सि०), छलछल (मा०, सि०), छहर छहर (उ०), झकझक (मैं०), झनझन (प्र०), झमझम (उ०), झर-झर (मैं०), झिमझिम (पं०), झिर झिर (प्र०), टपटप (मैं०), टरटर (मैं०), टिक-टिक (सि०), टिपिर-टिपिर (न०), टिप-टिप (उ०, मा०), टुट-टुट (पं०), टुनटुन (न०, मा०),

ठायँ ठायँ (उ०), डमडम (मैं०), डिमडिम (न०), ढचर-ढचर (न०), थप-थप (पं०), धक-धक (मैं०), धर-धर (नि०), धायँ-धायँ (उ०, न०), धुक-धुक (उ०), पिऊ-पिऊ (पं०), पिहु-पिहु (भ०), पी-पी (म०, मैं०), फड़-फड़ (सि०), फर-फर (न०), फुर-फुर (नि०), भकभक (न०), भन-भन (मैं०), भर-भर (मैं०), भ्रम-भ्रम (पं०), मर-मर (मा०), मैं-मैं (मा०), रिन-रिन (नि०), सन-सन (न०, मैं०), सन्नाती (मि०), सर-सर (न०, मा०), सी-सी (पं०), हर-हर (ब०, श, सि०), हा-हा (न०), हुआ-हुआ (न०)।

(ख) कभी एक ही ध्वनि के अंतिमांश में आवृत्ति देखी जाती है यथा—

अर्र (न०), घनन (मैं०), चरर (भ०). छनन (ब०), झनन (ब०, मैं०), झरर (नि०). मरर (भ०), रणन (पं०), रुनन (पं०, मा०)।

२. ध्वनि-वैषम्य (क) पहली स्थिति वह है जिसमें पहली ध्वनि दूसरी ध्वनि से भिन्न होती है —

खलभल (मैं०), गिटपिट (ब०), चरमर (सि०), चुनमुन (गि०). चुरमुर (उ०), जगमग (प्र०), झकमक (सि०), झिलमिल (मैं०), टलमल (ब०), डगमग (प्र०, ब०), डुगडग (दि०), ढलमल (मैं०), धाधिन-धातिन (पं०), रणमण (पं०), रनझन (नि०), रलमल (पं०), रिमझिम (मैं०), रुनझुन (गि०, मा०), रुनरिन (नि०), लपझप (उ०)।

इन सभी उदाहरणों में पहली ध्वनि का अंत्य व्यंजन दूसरी ध्वनि के अंत्य व्यजन की ही आवृत्ति है यथा 'खलभल' में 'ल' की पुनरावृत्ति है।

(ख) दूसरी स्थित्ति वह है जिस में एक ही ध्वनि के प्रथम और अंतिम व्यंजन एक जैसे होते हैं तथा मध्य का व्यंजन भिन्न रहता है यथा कड़क (ब०, म०), टी-वी-टी. (पं०)।

(ग) तीसरी स्थिति वह है जिस में ध्वनियों का पूर्णरूपेण वैषम्य रहता है और किसी ध्वनि की भी आवृत्ति नहीं होती —

कुकड़ूँ कूँ (पं०), कुड़ुम (पं०), गुड़ूप (अ०), चरंक चूँ (मा०), झनकता (गि०), टप-थव (अ०), टमकना (अ०), धड़ाम (सि०), धम (सि०), धम्मेर (न०), धुतू-धकर (ब०), पटर (ब०), हाक् (अ०)।

३. प्रत्यय प्राय: ना, आना, कना, सना, कारना आदि विभक्तियां जोड़ कर भी ध्वनियां बनाई जाती हैं। श्री माईदयाल जैन ने इस प्रकार की कई ध्वनियां गिनाई हैं यथा छींकना, गुर्राना, चटकना, खांसना, झटकारना। परन्तु हम ने शोध-ग्रंथ मे इस प्रकार की ध्वनियों का संग्रह नहीं किया है।

४. मस्तिष्कीय कल्पित ध्वनियां कुछ ध्वनिया श्रवणेंद्रिय का विषय नही होती यथा झिलमिल, टिमटिम इत्यादि। कवियो ने ऐसी अनेक ध्वनिया प्रयुक्त की हैं। उदाहरण देखें —

चमचम (अँ०, मि०, मैं०, श०), झकझक (मैं०), झलझल (सि०), तर-तर (सि०), तिप्-तिप् (अ०), थर-थर (दि०, ब०, ह०), दुपदुप (ब०), मह-मह (दि०, सि०), लकदक (दि०), लँकलक (नि०), लपक (श०), लपझप (न०), लपलप (न०, पं०, प्र०, सि०), लहलह (ब०)।

उपर्युक्त उदाहरणों के अतिरिक्त ध्वनियों के और भी अनेक प्रकार खोजे जा सकते हैं। वस्तुत: अभी इस क्षेत्र में अधिक शोध-कार्य नहीं हुआ है।

विशेष शब्दों की अनुक्रमणिका

विशेषत: 'संज्ञा', 'विशेषण', 'क्रिया' और 'नव शब्द' इन शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किये गये शब्दों की तालिका ! / से पहले शब्द और उसके संदर्भ का पृष्ठ अंकित है और / के बाद शब्द की व्याख्या का पृष्ठ दिया गया है।

(अ)

अगस्ती ब० ३८४/३८६
अगोरते अ० ४४९/४५१
अग्निपंथी म० ३५०
अग्निबीज पं० ३०४/३०५
अघजन्मा दि० ४३५/४३६
अचकच अ० ४६९/४७१
अजान न० २४७/२४८
अजानता पं० ३०४/३०५
अज्ञातदेशी म० ३५०
अज्ञातशीलकुलता दि० ४१५/४१५
अटता मैं० ११९/१२१
अट्टहासी दि० ४१९, ब० ३८/४३८६
अठखेल ब० ४००
अठमहला भ० ३२७
अड़गड़ों न० २७१/२७२
अड़ाता अ० ४५६/४५७
अड़िगपना न० २४७/२४८
अडूब अ० ४४९/४५१
अतिलम पं० ३०४/३०५
अत्यंतगता अ० ४४१/४४३
अधचबी रा० ३३६
अधड़ ब० ३७६/३-७
अधबने मा० १५५
अधेली मा० १५५/१५५

अनंती श० ४८४/४८५
अनखा प्र० १८४/१८५
अनगिनती ह० ३६४
अनबोला मा० ५३९/५४०
अनिर्बंच पं० =१८
अनिल-कुसुम पं० ३१९
अनी अ० ४४१/४४३
अनीनिका न० २७१/२७२
अनुकूली न० २५६
अनुकूलें नि० २३३
अनुकूलो न० २५६
अनुग्लानि मैं० १३७/१३८
अनुपक्षी भ० ३३२/३३३
अनुमान अं० ५०८, भ० ३२८, मा १५९
अनुमानते अं० ५०८, न० २५६
अनुमाना ब० ३८९
अनुरागे ब० ३८९, भ० ३२८, म० १५९
अनुलेखी न० २५६/२५८
अनुसरते ब० ३८९
अनुहार मा० १६०/१६१
अन्तरतर न० २४७/२४८
अन्तिकिनी उ० २९८
अन्त्यलकादश उ० २९८
अन्धाकार श० ४८४/४८५

(इ)

(उ)

(ऊ)

(ए)

एकघ्नी दि० ४३५/४३६
एकलव रा० ३४०
एकस्वर अ० ४६९/४७१
एकायन अ० ४४१/४४३
एम्बर गि० ५३५/५३५
एरी नि० २२७/२२८
एला गि० ५१७/५१८

(ऐ)

ऐंचीला पं० ३०९
ऐकायनिक दि० ४१९
ऐपन गि० ५१७/५१८
ऐल न० २७१/२७३

(ओ)

ओंछ गि० ५२७
ओडे ब० ३९०
ओरें म० ३४८
ओली सि० २०२/२०३
ओसरे मैं० १०७/१०९

(औ)

औंगन गि० ५३५/५३६
औंछ उ० २८९/२९०
औलाती श० ४९५/४९६

(क)

कचनारी पं० ३०९
कचुल्ले सि० २०२/२०३
कटकटाती न० २५७
कटखनी अ० ४४९/४५१
कटन अँ० ५०१/५०२
कटनी पं० ३०४/३०६
कटानों भा० ५३९/५४०
कटिनी पं० ३०४
कठला गि० ५१७/५१८
कठैठे अ० ४४९/४५१
कढ़िल ब० ३९०/३९२
कत्तिन ब० ४१५/४१६

(ख)

(ग)

(घ)

(च)

(छ)

(ज)

(थ)

(द)

धीरा श० ४८९/४८९

ध्वंसभ्रंस पं० ३२०

(न)

न-कुछ ब० ४०८/४०९, सि०२२१/२२१

नखर पं० ३०९

नखूनी गि० ५२३

नतमाथ ब० ४०८/४०९

नपने म० ३५२

नयनता पं० ३०५/३०६

नयन-शिशु पं० ३१९/३२०

नयनिमा पं० ३०५/३०६

नयनीत म० ११६/११७

नर्ममय प्र० १८२/१८२

नवधांगण मा० १७१/१७२

नवनी न० २४८

नशाने दि० ४२३/४२५

नसी नि० २२७/२२८

नाघो नि० २३४

निंदियाकुमारी गि० ५३५/५३६

निचाट मा० ५४३, मै० १०८/११०

निछक्का सि० २०२/२०४

निझरी नि० २३२/२३२

निधुरे अ० ४४९/४५२

निपूता मै० ११६/११७

निबुक मै० १३७/१३८

नियन गि० ५३५/५३६

नियराया ब० ३९०

निर मै० १२०/१२२

निराले प्र० १७६/१७७

निराशी न० २५३/२५४

निर्जीवित पं० ३०९

निर्देहता दि० ४१५/४१६

निर्निमेषी म० ३५०

निर्माण भ० ३२८/३२९, ह० ३६५/३६६

निर्माऊ पं० ३११

निर्माणकाज पं० ३१९

निर्विलम्ब ब० ४०८

निवट दि० ४१९/४२०

निवसती दि० ४२३

निशिएं पं० ३१५

निहुरे मै० १३७/१३९

निहोरे अ० ४४९/४५२

नीधा उ० २८१/२८२

(फ)

(ब)

(भ)

(म)

(य)

(र)

(ल)

(व)

(श)

(स)

(ह)

सिद्धांत खण्ड की संदर्भिका

और अन्य सहायक पुस्तकें

संस्कृत ग्रंथ

१ अमरकोश

२ अष्टाध्यायी, पाणिनि

३. ऋक्प्रातिशाख्य, शौनक

४. ऋग्वेद

५. काव्यप्रकाश, आचार्य मम्मट

६. तर्कभाषा, डॉ० जगन्नाथ प्रसाद

७. तैत्तिरीय संहिता

८. निरुक्त, आचार्य यास्क

९. निरुक्तम्, प्रो० उमाशंकरशर्मा 'ऋषिः'

१०. न्यायमंजरी, जयन्त भट्ट

११. न्यायसूत्र

१२. परमलघुमंजूषा, चौखम्बा सं० सी० आ० बनारस सन् १९१७ ई०

१३. परिभाषेन्दु टीका

१४. परिभाषेन्दु शेखर, नागेश भट्ट, बनारस, १९८१

१५. पाणिनीय शिक्षा, पाणिनि

१६. मंजूषा

१७. महाभारत, महर्षि वेदव्यास

१८. महाभाष्य, आचार्य पतञ्जलि

१९ मीमांसा दर्शन, शाबर भाष्य

२०. यजुर्वेद

२१. रघुवंश, कालिदास

२२. लघुसिद्धान्तकौमुदी, श्री धरानन्द शास्त्री

२३. वाक्यपदीय, (व्याकरण-दर्शन), भर्तृहरि, (बनारस १९०५) हेलाराज पुण्यराज की टीकाएं

२४. बृहद्देवता, शौनक

२५. वेदान्त परिभाषा

२६. वैयाकरणभूषण, भट्टोजिदीक्षित तथा कौण्डभट्ट

२७. शतपथब्राह्मण

२८. शब्दशक्तिप्रकाशिका, आचार्य जगदीश भट्ट

२९. श्लोकवार्तिक, कुमारिल भट्ट (पार्थसारथि मिश्र की टीका)

३०. संस्कृत व्याकरण प्रबोध, डॉ० संसारचन्द्र एव प्रो० विजयचन्द्र शास्त्री

३१. साहित्यदर्पण, आचार्य विश्वनाथ

३२. हरचरितचिन्तामणि, श्री जयद्रथ

हिंदी ग्रंथ

१. अच्छी हिंदी, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा

२. अच्छी हिंदी का नमूना, पं० किशोरीदास वाजपेयी

३. अच्छी हिंदी कैसे लिखें, डॉ० भगीरथ मिश्र एवं डॉ० कुमकार कपूर

४. अर्थतत्त्व की भूमिका, डॉ० शिवनाथ

५. अर्थविज्ञान और व्याकरणदर्शन, आचार्य कपिलदेव द्विवेदी

६. आज की हिंदी कहानी, प्रगति और प्रयोग, डॉ० इन्द्रनाथ मदान

७. कवि-समय-मीमांसा, डॉ० विष्णुस्वरूप

८. काव्य में अप्रस्तुत योजना, पं० रामदहिन मिश्र

९. टैगोर का साहित्य-दर्शन, राधेश्याम पुरोहित

१०. नया साहित्य : नये प्रश्न, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी

११. भाषा-रहस्य, बाबू श्यामसुंदरदास

१२. राष्ट्रभाषा हिंदी : समस्याएं और समाधान, श्री देवेंद्रनाथ शर्मा

१३. शब्द और अर्थ, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा

१४. शब्दों का अध्ययन, डॉ० भोलानाथ तिवारी

१५. शब्दों का जीवन, डॉ० भोलानाथ तिवारी

१६. सामान्य भाषा-विज्ञान, डॉ० बाबूराम सक्सेना

१७. सावयधम्म दोहा, सं० डॉ० हीरा लाल जैन

१८. साहित्य की मान्यताएं, (निबन्ध-संग्रह), भगवतीचरण वर्मा

१९. हिंदी की वर्तनी तथा शब्द-विश्लेषण, आचार्य किशोरीदास वाजपेयी

२०. हिंदी प्रयोग, आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा

२१. हिंदी भाषा, डॉ० भोलानाथ तिवारी

२२. हिंदी भाषा, अतीत और वर्तमान, डॉ० अम्बाप्रसाद ' सुमन '

२३. हिंदी भाषा और लिपि का ऐतिहासिक विकास, सत्यनारायण त्रिपाठी

२४. हिंदी में प्रयुक्त संस्कृत शब्दों मे अर्थ-परिवर्तन, डॉ० केशवराम पाल

२५. हिंदी शब्द-रचना, श्री माईदयाल जैन

२५. हिंदी शब्दानुशासन, प० किशोरीदास वाजपेयी

२६. हिंदी समास-रचना का अध्ययन, डॉ० रमेशचन्द्र जैन

अंग्रेजी पुस्तकें

1. A comparative Grammer of Modern Aryan Languages, John Beams.
2. A Dictionary of selected Synonyms in the Principle Indo-European Languages, C. D. Buck.
3. All About Language, Mario Pei.
4. An Approach to Poetry, Phosphor Mallam.
5. How to Double your Vocabulary, S. Stephenson Smith.
6. Language, Its Nature, Development & Origin.
7. I anguage, Leonard Bloomfield.
8. Language & Reality. W. M. Urban.
9. Poetic Diction : A study in Meaning Owen Barfield.
10. Principles of History of Language, Hermann
11. Semantics, Michael Breal.
12. The Art of Writing, W. J. Merry.
13. The Convention & Revolt in Poetry, John Livingstone Lowes.
14. The Gift of Tongues, Margaret Schlauch.
15. The Grammer of Hindi Language, S. H. Kellog.
16. The Life of Words, Darmesteter.
17. The Meaning, of Meaning, Ogden & Richards.
18 The Natural History of Language.

19 The Nighantu & the Nirukta, Lakshman Sarup, 1928.

20. The Philosophy of Word and Meaning, Gauri Nath Shastri.

21. The Tyranny of Words, Stuart Chase.

22. The World of Words, P. E. Dastoor.

23. Words, Reminiscences, Jean Paul Sartre.

24. Words & Their, Use, Stephenson Ullmann.

DICTIONARIES

1. Sanskrit-English Dictionary, Vaman Shivram Apte.

2 Nalanda Current Dictionary.

अन्य कोश

१ अवधी कोष, श्री रामाज्ञा द्विवेदी 'समीर'

२. उर्दू-हिंदी शब्द-कोश, मुहम्मद मुस्तफा खाँ 'मद्दाह'

३. कृषक-जीवन-सम्बंधी व्रजभाषा शब्दावली, दो खण्ड, डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन'

४. व्रजभाषा सूर-कोश, (दो भाग), सं० डॉ० प्रेमनारायण टंडन

५. मानक हिंदी कोश, पांच खण्ड, प्रधान सम्पादक आचार्य रामचन्द्र वर्म्मा, सहायक सम्पादक बदरीनाथ कपूर।

६. वृहत् पर्यायवाची कोश, डॉ० भोलानाथ तिवारी

७. संस्कृत-शब्दार्थ-कौस्तुभ, सं० स्व० चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा एवं पं० तारिणीश झा।

व्यवहार-खण्ड की संदर्भिका

कवि और काव्य

१ मैथिलीशरण गुप्त

१. रंग में भंग (*i*) प्रथम संस्क०, संवत् १९६६ वि०

(*ii*) संस्क० सं २०१२ वि०

२ जयद्रथ-वध (*i*) प्रथम संस्क० सं १९६७ वि०

(*ii*) ४८वां संस्क० सं० २०१५ वि०

३. भारत भारती (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९६९ वि०

(*ii*) २६वां संस्क० स० २०१३ वि०

४. शकुंतला (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९७१ वि०

(*ii*) १३वां संस्क० सं० २०१३ वि०

५. पत्रावली (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९७३ वि०

(*ii*) संस्क० २००[illegible] वि०

६. वैतालिक (*i*) प्रथम संस्क० सं० १ ७३ वि०

(*ii*) संस्क० २० ४ वि०

७. किसान (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९७३ वि०

(*ii*) संस्क० २००३ वि०

८. पंचवटी (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८२ वि०

(*ii*) ४१वां संस्क० सं० २०१६ वि०

९. स्वदेश-संगीत प्रथम संस्क० स० १९८२ वि०

१०. हिंदू (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८४ वि०

(*ii*) चौथा संस्क० स० २०१३ वि०

११. सैरंध्री (*ii*) प्रथम संस्क० सं० १९८४ वि०

(*ii*) नवम संस्क० सं० २०१३ वि०

१२. बक-संहार (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८४ वि०

(*ii*) संस्क० २०१३ वि०

१३. वन-वैभव प्रथम संस्क० सं० १९८४ वि०

(*ii*) संस्क० २००२ वि०

१४. शक्ति (*ii*) प्रथम संस्क० सं० १९८४ वि०

(*ii*) संस्क० २०१२ वि०

१५. विकट भट (*i*) प्रथम संस्क० स० १९८५ वि०

(*ii*) पंचम संस्क० स० २०१० वि०

१६. गुरुकुल (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८५ वि०

(*ii*) संस्क० सं० २००४ वि०

१७. झंकार (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८६ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २०१४ वि०

१८. साकेत (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८८ वि०

(*ii*) संस्क० २०२४ वि०

१९. यशोधरा (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८९ वि०

(*ii*) संस्क० २०१५ वि०

२०. **सिद्धराज** (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९३ वि०

(*ii*) संस्क० २०१६ वि०

२१. **द्वापर** (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९३ वि०

(*ii*) संस्क० २०१५ वि०

२२. **नहुष** (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९७ वि०

(*ii*) १वा संस्क० २०१४ वि०

२३. **कुणाल-गीत** (*i*) प्रथम संस्क० १९९८ वि०

(*ii*) संस्क० २००२ वि०

२४. **अर्जन और विसर्जन** (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९९ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० २०१४ वि०

२५. **काबा और कर्बला** (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९९ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २०१२ वि०

२६. **अजित** प्रथम संस्क० सं० २००३ वि०

२७ **प्रदक्षिणा** (*i*) प्रथम संस्क० सं० २००७ वि०

(*ii*) १४वां संस्क० सं० २०१५ वि०

२८. **युद्ध** प्रथम संस्क० सं० २००७ वि०

२९. **अंजलि और अर्घ्य** (*i*) प्रथम संस्क० सं० २००७ वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० २०१२ वि०

३०. **जयभारत** प्रथम संस्क० सं० २००९ वि०

३१. **राजा-प्रजा** संस्क० सं० २०१३ वि०

३२. **विष्णुप्रिया** प्रथम संस्क० सं० २०१४ वि०

२· माखन लाल चतुर्वेदी

१. हिमकिरीटिनी (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४३

(*ii*) तृतीय संस्क० २००५ वि०

२. हिमतरंगिनी (*i*) प्रथम संस्क०, सन् १९४९

(*ii*) द्वितीय सस्क०, स० २०१८ वि०

३. माता प्रथम संस्क० स० २००८ वि०

४. युग-चरण प्रथम संस्क० सं० २०१३ वि०

५. समर्पण प्रथम सस्क० सं० २०१३ वि०

६. वेणु लो गूंजे धरा प्रथम सस्क०

७. आधुनिक कवि प्रथम सस्क० स० २०१७ वि०

८. मरण-ज्वार प्रथम सस्क० सन् १९६३ ई०

३. जयशंकर प्रसाद

१. कानन-कुसुम षष्ठम संस्क० सं० २०१३ वि०

२. करुणालय तृतीय संस्क० सं० २०११ वि०

३. महाराणा का महत्त्व (*i*) प्रथम प्रकाशन इंदुकला ५, खंड १, किरण ६, जून सन् १९१४

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सं० २०१२ वि०

४. प्रेमपथिक (*i*) व्रजभाषा में प्रकाशित सं० १९६२ वि०, खड़ी बोली मे, सं० १९७० वि०

(*ii*) द्वितीय सस्क० १९७० वि०

(*iii*) तृतीय सस्क०

५. झरना (i) प्रथम प्रकाशन सं० १९७५ वि०

(ii) ७वां संस्क०

(iii) ८वां संस्क० सं० २०१६ वि०

६. आँसू ११वां संस्क० सं० २०१५ वि०

७. लहर षष्ठम संस्क० सं० २०१६ वि०

८. कामायनी दशम संस्क० सं० २०१५ वि०

९. प्रसाद-संगीत संस्क० स० २०१३ वि०

४. सियारामशरण गुप्त

१. मौर्य-विजय (i) प्रथम सस्क० सं० १९७१ वि०

(ii) संस्क० २००६ वि०

२. अनाथ (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९७४ वि०

(*ii*) संस्क० २०१२ वि०

३. दूर्वादल (*i*) सं० १९७२-८१ की रचनाएं

(*ii*) तृतीय संस्क० २०१३ वि०

४ विषाद (*i*) प्रथम सस्क० स० १९८२ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २००८ वि०

५. आर्द्रा (*i*) प्रथम सस्क० स० १९८४ वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० सं १९९५ वि०

६. आत्मोत्सर्ग (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९८८ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २००४ वि०

(*iii*) चतुर्थ संस्क० सं० २०१३ वि०

७. पाथेय (*i*) प्रथम संस्क० सं० १९९० वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० सं० १९९५ वि०

(*iii*) तृतीय संस्क० सं० २००८ वि०

८ मृण्मयी प्रथम संस्क० स० १९९३ वि०

९. बापू (*i*) प्रथम संस्क० सं १९९४ वि०

(*ii*) षष्ठम सस्क० म० २००४ वि०

(*iii*) नवम संस्क० स० २०१३ वि०

१०. दैनिकी (*i*) प्रथम मस्क० म० १९९९ वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० २००३ वि०

११. नकुल (*i*) प्रथम संस्क० २००३ वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० सं० २०१२

१२ नोआखली में (*i*) प्रथम संस्क० २००३ वि०

(*ii*) द्वितीय संस्क० २००९ वि०

१३ जयहिंद (*i*) प्रथम संस्क० स० २००५ वि०

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २०१३ वि०

५. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

१. अनामिका प्रथम सस्क० सन् १९२३ ई०

२. परिमल (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३० ई०

(*ii*) पंचम सस्क० सं० २००७ वि०

३. गीतिका (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३६ ई०

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सं० २०१२ वि०

४. तुलसीदास (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३८ ई०

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सं० २००८ वि०

५. कुकुरमुत्ता प्रथम संस्क० सन् १९४२ ई०

६. अणिमा प्रथम संस्क० सन् १९४३ ई०

७. ढ़्पारा (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

(*ii*) द्वितीय संस्क० सं० २००९ वि०

(*iii*) पंचम संस्क० सन् १९६३ ई०

८. नये पत्ते प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

९. बेला प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

१०. आराधना प्रथम संस्क० सन् १९५३ ई० (सं० २०१० वि०)

६. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

१. रश्मि-रेखा प्रथम संस्क० अगस्त सन् १९५१ ई०

२. अपलक प्रथम संस्क० सितम्बर सन् १९५१ ई०

३. क्वासि प्रथम संस्क० सितम्बर १९५२ ई०

४. विनोबा-स्तवन प्रथम संस्क० सं २०१० वि० (सन् १९५३ ई०)

५. हम विषपायी जनम के प्रथम संस्क०

६. प्राणार्पण प्रथम संस्क० सन् १९६२ ई० (रचनाकाल सन् १९३१)

७. उदयशंकर भट्ट

१. तक्षशिला (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९२८

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९३५

२. विसर्जन प्रथम संस्क० सन् १९३१

३. मानसी (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३३

(*ii*) तृतीय संस्क० सन् १९६१

४. युगदीप (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४४ (संवत् २००१ वि०)

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९६३

५. यथार्थ और कल्पना (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४८

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९६३

६. विजय-पथ संस्क० सन् १९५०

७. अन्तर्दर्शन : तीन चित्र प्रथम संस्क० सन् १९५८

८. कणिका प्रथम संस्क० सन् १९६१

९. इत्यादि प्रथम संस्क० सन् १९६१

८. सुमित्रानन्दन पंत

१. पल्लव (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९२६

(*ii*) छठा संस्क० सन १९५८

(*iii*) सातवाँ संस्क० सन् १९६३

२. वीणा प्रथम संस्क० सन् १९२७

३. ग्रंथि प्रथम संस्क० सन् १९२९

४. वीणा-ग्रंथि द्वितीय संस्क० सं० २००७ वि०

५. गुंजन (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३२

(*ii*) सातवां संस्क० सं० २०१० वि०

(*iii*) दशम संस्क० सं० २०१८ वि०

६. युगांत प्रथम संस्क० सन् १९३६

७. युगवाणी (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३९

(*ii*) तृतीय संस्क० सं० २००४ वि०

८. ग्राम्या (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४०

(*ii*) पंचम संस्क० सं० २०१३ वि०

९. आधुनिक कवि (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४१

(*ii*) द्वितीय संस्क० सं० २००१ वि०

(*iii*) सप्तम संस्क०

१०. **स्वर्णकिरण** (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४७

(*ii*) द्वितीय सस्क० स २०१३ वि०

११. **स्वर्णधूलि** (*i*) प्रथम सस्क० सन् १९४७

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९५९

१२. **मधुज्वाल** प्रथम संस्क० सन् १९४८ (स० २००५ वि०)

१३ **युगपथ** प्रथम संस्क० सन् १९४९ (सं० २००६ वि०)

इस में ' युगांत ' और ' खादी के फूल ' (प्रथम संस्क० सन् १९४८) की कविताएं सम्मिलित हैं ।

१४. **उत्तरा** (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४९

(*ii*) द्वितीय सस्क० सं० २०१२ वि०

१५. **रजत शिखर** प्रथम संस्क० सन् १९५१ (स० २००८ वि०)

१६. **शिल्पी** प्रथम संस्क० सन् १९५२

१७. **अतिमा** (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५५ (*ii*) द्वितीय संस्क० सं० २०१५ वि०

१८. **सौवर्ण** प्रथम संस्क० सन् १९५७ ई०

१९. **वाणी** प्रथम संस्क० सन् १९५८ ई०

२०. **कला और बूढ़ा चांद** प्रथम संस्क० सन् १९५९ ई०

९. भगवतीचरण वर्मा

१. **मधुकण** प्रथम संस्क० सन् १९३२ ई०

२. **प्रेम संगीत** (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३७ ई०

(*ii*) चतुर्थ संस्क० जुलाई सन् १९४९ ई०

३. **मानव** द्वितीय संस्क०, जून सन् १९४८ ई०

४. त्रिपथगा, प्रथम संस्क० सं० २०११ वि०

५. रागों से मोह, प्रथम संस्क० सं० २०१९ वि०

(सन् १९३९-६१ की रचनाएं)

१०. डा० रामकुमार वर्मा

१. चित्ररेखा (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३५ ई०

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सन् १९४६ ई०

२ आधुनिक कवि, प्रथम संस्क०, सं० १९९८ वि०

(इस में अञ्जलि, प्रथम संस्क० सन् १९२९, अभिशाप, प्रथम संस्क० सन् १९३०, रूपराशि, प्रथम संस्क० सन् १९३१, चित्ररेखा, प्रथम संस्क० सन् १९३५, चन्द्रकिरण, प्रथम संस्क० सन् १९३७ और संकेत, प्रथम संस्क० सन् १९३९ इन संग्रहों की सभी महत्त्वपूर्ण कविताए संकलित हैं)

३. एकलव्य, प्रथम संस्क० सं० २०१५ वि०

११. जगन्नाथ प्रसाद ' मिलिन्द '

१. जीवन-संगीत, प्रथम संस्क०, मार्च सन् १९४० (सन् १९२२-३६ की रचनाएं)

२. बलिपथ के गीत, प्रथम संस्क०, अक्टूबर सन् १९५० (सन् १९४२-४९ की रचनाएं)

३. भूमि की अनुभूति (*i*) प्रथम संस्क० अक्टूबर सन् १९५२

(*ii*) द्वितीय संस्क०, सितम्बर सन् १९५८

१२. महादेवी वर्मा

१. नीहार, तृतीय संस्क० सन् १९५१ ई०

२. रश्मि, चतुर्थ संस्क० सन् १९५१ ई०

३. नीरजा, संस्क०, सन् १९५१ ई०

४. सांध्यगीत, पंचम संस्क० सं० २०१७ वि०

५. यामा (*i*) प्रथम संस्क० (*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९४७ ई०

६. दीपशिखा, चतुर्थ संस्क० सं० २०११ वि०

७. सप्तपर्णा, प्रथम संस्क० सन् १९६० ई०

१३. हरिकृष्ण 'प्रेमी'

१. आँखों में (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९२८ ई०

(*ii*) दूसरा संस्क० सन् १९५२ ई०

२. अनन्त के पथ पर (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३५ ई०

(*ii*) द्वितीय संस्क०

३. अग्नि-गान, द्वितीय संस्क० सन् १९४६ ई०

४. रूपदर्शन, प्रथम संस्क० सन् १९५१ ई०

५. रूपरेखा, प्रथम संस्क० सन् १९६२ ई०

१४. डा० हरिवंशराय 'बच्चन'

१. मधुशाला, प्रथम संस्क० सन् १९३५

२. मधुबाला, (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३६

(*ii*) ७वां संस्क० सन् १९५१

३. मधुकलश (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३७

(*ii*) ७वां संस्क० अगस्त सन् १९६०

४. निशा-निमंत्रण (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३८

(*ii*) ५वां संस्क० सन् १९४६

५. एकांत संगीत, प्रथम संस्क० सन् १९३९ ई०

६. आकुल अन्तर (*i*) प्रथम संस्क०, सन् १९४३

(*ii*) चतुर्थ संस्क० जनवरी सन् १९५८

(*iii*) पंचम संस्क०, सन् १९६१

७. प्रारंभिक रचनाएं भाग १ (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४३

(*ii*) द्वितीय संस्क०

८. प्रारंभिक रचनाएं भाग २ (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४३

(*ii*) द्वितीय संस्क०

९. सतरंगिनी, प्रथम संस्क० सन् १९४५ ई०

१०. बंगाल का काल (*i*) प्रथम सस्क० मार्च सन् १९४६ ई०

(*ii*) तृतीय संस्क०, अक्टूबर सन् १९५९ ई०

११. हलाहल (*i*) प्रथम संस्क० जुलाई सन् १९४६ ई०

(*ii*) द्वितीय सस्क०, नवम्बर सन् १९५७

(*iii*) तृतीय सस्क०

१२. खादी के फूल, प्रथम संस्क० सन् १९४८ ई०

१३. सूत की माला (*i*) प्रथम संस्क० जुलाई सन् १९४८ ई०

(*ii*) तृतीय संस्क० मार्च सन् १९५९

१४. मिलन यामिनी, प्रथम संस्क० जुलाई सन् १९५० ई०

१५. प्रणय पत्रिका (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५५

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९६१

१६. धार के इधर उधर, प्रथम संस्क० सन् १९५७ ई०

१७. आरती और अंगारे, प्रथम संस्क० मार्च सन् १९५८ ई०

१८. बुद्ध और नाचघर, प्रथम संस्क० सितम्बर सन् १९५८ ई०

१५. डा० रामधारीसिंह 'दिनकर'

१. रेणुका (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३५

(*ii*) तृतीय संस्क० सन् १९५६

२. हुंकार (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३९

(*ii*) ११वां संस्क० सन् १९५७

३. रसवन्ती (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४०

(*ii*) तृतीय संस्क० सन् १९४६

४. द्वन्द्व-गीत (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४० ई०

(*ii*) संस्क० सन् १९५४ ई०

५. कुरुक्षेत्र (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४६

(*ii*) १३वां संस्क० सन् १९६२

६. सामधेनी प्रथम संस्क० सन् १९४७ ई०

७. धूप-छांह (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४७ ई०

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सन् १९५६ ई०

८. बापू (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४७ ई०

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९४८

९. इतिहास के आंसू (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५१

(*ii*) तृतीय संस्क० सन् १९५७

१०. रश्मिरथी (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५२

(*ii*) पंचम संस्क० सन् १९६०

११. दिल्ली प्रथम संस्क० सन् १९५४ ई०

१२. नीम के पत्ते (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५४

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९५६

१३. नील कुसुम (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९५४

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९५६

१४. उर्वशी प्रथम संस्क० सन् १९६१ ई०

१६. अज्ञेय

१. चिंता (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४२

(*ii*) द्वितीय संस्क० सन् १९४६

२. इत्यलम् प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

३. हरी घास पर क्षण भर प्रथम संस्क० सन् १९४९ ई०

४. बावरा अहेरी प्रथम संस्क० सन् १९५४ ई०

५ इन्द्रधनु रौंदे हुये ये प्रथम संस्क० सन् १९५७ ई०

६. अरी ओ करुणा प्रभामय प्रथम संस्क० सन् १९५९ ई०

७. आँगन के पार द्वार प्रथम संस्क० सन् १९६१ ई०

१७. नरेन्द्र शर्मा

१. प्रभातफेरी (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३९

(*ii*) संस्क० सन् १९५३ ई०

२. प्रवासी के गीत (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९३९

(*ii*) चतुर्थ संस्क० सं० २००९ वि०

३. **पलाश-वन** (*i*) प्रथम संस्क० सन् १९४०

(*ii*) द्वितीय सस्क० सन् १९४६ ई०

४. **मिट्टी और फूल** द्वितीय सम्क० सं० २००२ वि०

५. **हंसमाला** प्रथम सस्क०, स० २००३ वि०

६. **अग्निशस्य** प्रथम संस्क० स० २००८ वि०

७. **कामिनी** सस्क० सन् १९५३ ई०

८. **कदली-वन** प्रथम सम्क० मन् १९५४ ई०

९. **द्रौपदी** प्रथम संस्क० सन् १९६० ई०

१८. रामेश्वर शुक्ल ' अँचल '

१. **वर्षान्त के बादल** प्रथम सस्क० सन् १९५७ ई०

२. **विराम-चिह्न** प्रथम सस्क०, दिसम्बर सन् १९५७ ई०

३. **आज के लोकप्रिय हिंदी कवि अंचल** (सकलन)

(इस में उन के पूर्ववर्ती सग्रहों की सभी लोकप्रिय कविताएं सगृहीत हैं)

१९. गिरिजा कुमार माथुर

१. **मंजीर** प्रथम संस्क० सन् १९४१ ई०

२. **नाश और निर्माण** प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

३. **धूप के धान** प्रथम संस्क० सन् १९५५

४. **आज के लोकप्रिय हिंदी कवि गिरिजा कुमार माथुर** (संकलन) प्रथम संस्क० नवम्बर सन् १९६१

(इस में ' मंजीर ', ' नाश और निर्माण ', ' धूप के धान ', और ' शिलापंख

चमकीले ', प्रथम संस्क० सन् १९६१ की सभी महत्वपूर्ण कविताए संकलित हैं ।)

२०. डा० धर्मवीर भारती

१. ठण्डा लोहा प्रथम संस्क० सन् १९५२ ई०

२. अंधा युग प्रथम संस्क० सन १९५५ ई०

३. सात गीत-वर्ष प्रथम संस्क० सन १९५९ ई०

४. कनुप्रिया प्रथम संस्क० सन् १९५९ ई०

(उपर्युक्त कविता-संग्रहों के अतिरिक्त कवियों के शेष संग्रह भी पढ़े गये हैं परन्तु उनके शब्द-सदर्भ इस शोध-प्रबन्ध मे नहीं आ सके हैं। कुछ संग्रह तो कवियों के पूर्ववर्ती सग्रहो की विशिष्ट रचनाओं के संकलन मात्र होने के कारण छोड़ देने पड़े हैं ।)

— लेखक

(समाप्त)

अशुद्धि-शोधन

(शीर्षकों को छोड़ कर)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
१४	७	६५	६६५
१८	९	उ का	उसका
१८	१३	दो ों	दोनो
१८	१६	मतानु ार	मतानुसार
२०	१३	स ोइक	स्टोइक
२०	१४	ीपिका	दीपिका
२८	१	हाता	होता
४५	१२	वणी	वाणी
४६	२३	पु राज	पुण्यराज
५०	१	हमार	हमारा
५७	१८	अतिरक्ति	अतिरिक्त
५९	१	अर्थ	अर्थ में
६१	६	कु्द्ध	क्रुद्ध
७२	८१	दरहकीकता	दरहकीकत

९३	१४	परिवर्तन	परिवर्तन
९६	४	नया	नयी
१०९	१६	छमछैयां	घमछैयां
११०	८	स०	स०
११०	१०	भांववाचक	भाववाचक
११२	अंतिम पंक्ति	कैंकइ	केकइ
११६	११	चि चिता	चितचिता
११९	संदर्भ १४	कोडा	कोड़ा
१२०	संदर्भ ७	ि मिर	तिमिर
१२०	सदर्भ १६	लीज	लीज
१२१	सदर्भ २	समवारे	समाचरे
१२४	संदर्भ १६	घहरै	छहरै
१२५	३	बनो	बनों
१२५	४	बुलबाव १७	बुलवाव १८
१२८	संदर्भ ७ (ख)	अव ीर्ण	अवतीर्ण
१३०	७	चलाते है	चलते हैं
१३०	९	हैं	है
१३१	संदर्भ ९	स केत	साकेत
१३२	३	व्याक ण	व्याकरण
पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
१३२	७	तड़िताएं	तड़िताए
१३७	सदर्भ ९	आ	आप
१४०	१२	उदाह ण	उदाहरण
१४२	१	व्याला	व्याल

१४६	सदर्भ १	तो ली	तोतली
१४६	संदर्भ ३	ीत	गीत
१४६	,, ६	दा	दाग़
१४६	,, १२	सै य	सैन्य
१४६	,, १३	भलनियां	भूलनियां
१४६	,, १५	लह	लहर
१४७	१३	कि नीले	किरनीले
१४८	४	चंच ता	चचलता
१४८	६	सार्थ ा	सार्थकता
१४८	८	द दी	दरदी
१४९	१०	त प्	तरप्
१४९	१५	संज ए	सजाए
१४९	१९	हरि याला	हरियाला
१५०	संदर्भ २	हिमकि ीटिनी	हिमकिरीटिनी
१५३	२	क्षेत्रध	क्षेत्रधर
१५३	१३	स०	स०
१५३	१६	प्रच न	प्रचलन
१५३	संदर्भ २	तौअ	तौअर
१५५	१	कि नीले	किरनीले
१५५	२	मधुरि म, मधु ीली	मधुरिम, मधुरीली
१५५	संदर्भ २	अघवने	अघवने
१५६	१४	प्रका , अ तर	प्रकार, अन्तर
१५६	१९	ोड़ क	जोड़ कर
१५६	संदर्भ १ (अ)	मरि	घूमरि

१५७	१	णधीर, णमत	रणधीर, रणमत्त
		त्पुरुष	तत्पुरुष
१५७	४	औ	और
१५७	८	मृदगिनि	मृदगिनि
१५७	संदर्भ ६	तो ली	तोतली
१५८	१३	बन ।	बनता
१५९	९	मेह बानी	मेहरबानी
१५९	संदर्भ ११	रव०	स्व०
१६०	३	प्रकट ओगे, प्रकट ना	प्रकटाओगे, प्रकटाना
१६०	संदर्भ १३	ुग-चरण	युग-चरण
१६०	संदर्भ २०	उ में	उस में
१६१	१८	मक	घुमक
१६३	९	हैं	है
१६३	१३	स्व न्त्र	स्वतन्त्र
१६५	५	रागो	रागों
१६६	८	पुंलिग	पुंलिग
१६७	८	वजभाषा	ब्रजभाषा
१६७	८	पुंलिग	पुंलिग
१६७	१०	पांखिनियां	पंखिनियां
१६८	४	स०	स०
१६८	९	गोपवाला	गोपबाला
१७१	संदर्भ ८	क	कर
१७१	संदर्भ ११ (ख)	प	पर
१७२	६	अ ं	अर्थं

१७६	५	छलघात	छलछात
१७६	संदर्भ ५	गीम	गीत
१७६	संदर्भ ६	झरपा	झरना
१८०	संदर्भ १७ (ख)	बासना	वासना
१८१	१	वाणि ^	वाणि ४
१८१	१	वक्षस्थल ४	वक्षस्थल ३
१८१	संदर्भ १२	बड़ते	बढ़ते
१८१	संदर्भ १६	बिशाख	विशाख
१८१	संदर्भ १६	सिया ने	सियाने
१८४	संदर्भ १२ (ख)	प्रसार	प्रसाद
१८५	१४	हिदों	हिंदी
१८५	संदर्भ १	मुसक ।ये	मुसक्याये
१८६	८	विचरन	विचलन
१८६	१४	के भी	के अर्थ मे भी
१९१	संदर्भ ७	संस्सृति	संसृति
१९१	संदर्भ १२	आंके सू	आंसू के
१९२	संदर्भ ४	कलख	कलरव
१९३	१	बहुबचन	बहुवचन
१९३	१३	निरतंद्र	निस्तंद्र
१९४	१७	उपमान्	उपमान
१९४	९	नव ीत	नवनीत
१९५	७	भीं	भी
१९५	११	क्षुब्द	क्षुब्ध

१९७	संदर्भ ७	वनी	बनी
१९८	२	करा	का
१९९	संदर्भ १ (घ)	गाण	गण
२०४	संदर्भ २	कृशक	कृषक
२०६	संदर्भ १५ (ग)	मुहूँ	मुहँ
२०७	२	शुभशीष	शुभाशीष
२०७	संदर्भ ५	सुभाशीष	शुभाशीष
२०७	संदर्भ ८ (क)	मौर्य्य	मौर्य्य
२०८	१	बेड़ी	बेंड़ी
२०८	१३	आ त	आरत
२१२	१४	अ	अर्थ
२१४	सदर्भ ५	बांध रक्खो	बाध रक्खो
२१८	१३	निमित	निर्मित
२१८	२२	बधिक	बधिक
२१८	२३	तरग	तरंग
२२०	१	सुम्री	मुम्री
२२१	सदर्भ ६	सहयात्र	सहयात्री
२२१	संदर्भ ६	नवीनी	नवीन
२२४	संदर्भ ९	चान	जान
२३३	संदर्भ १	पर ग, अ स्तल	पराग, अंतस्तल
२३४	संदर्भ १२	डुलें	ढुलें
२३६	संदर्भ ३	भाजन	भोजन
२३६	संदर्भ ६	गीि का	गीतिका
२३६	संदर्भ १०	पि मल	परिमल

२३८	संदर्भ ४	कुंठ	कुंठा
२३९	७	समद	सुमद
२३९	संदर्भ २	अनुद्दव	अनूद्दव
२४०	संदर्भ ५	गहि	गृहि
२४४	१	' मरहृट '[१]	' मरहर '[१]
२४८	२	सूर्यकार [१२]	सूर्यकार [१३]
२५०	संदर्भ ४	मत्रद्रष्टा	मंत्रद्रष्टा
२५१	४	ध्या	संध्या
२५७	संदर्भ २३	हह ने	हहरने
२५८	७	भतकालिक	भूतकालिक
२५८	१६	लिक्खं [८]	लिक्खूं [८]
२५९	संदर्भ ७	अभदूर	अभी दूर
२६०	संदर्भ ४	पड़ुं	पड़ूं
२६६	संदर्भ ८	च र	चार
२६४	२	स्थान के	के स्थान
२६४	७	अधीनी	अघामी
२६४	१०	अनगाढ़	अनगढ़
२६७	१२	सदेश	संदेश
२६८	६	ाती	पाती
२६९	८	क्रियाए	क्रियाए
२६९	७ (क)	भडार	भंडार
२७१	संदर्भ १२	अगणि	अगणित
२७२	१	नो	नौ
२७२	संदर्भ ६	निर्वाण	निर्वाण

२७८	संदर्भ १४	टपक चले	टपक टप-टप चले
२८२	१७	पन्थ :	पन्था:
२८६	२	हनुमान	हनूमान
२८६	४	अ ंदी	अमदी
२८८	संदर्भ ३	अ क्रन्ता	आक्रान्ता
२९०	४	गसनों	गसना
२९२	संदर्भ ७	फुल	फूल
२९४	,, ५ (क)	स्वं	स्वयं
२९४	, ८ (ङ)	ुग	युग
२०८	५	अतिसुंदर	अलिसुंदर
३०४	३	कंदिरा	(नही चाहिए)
३०५	२	रगिणि	रगिणि
३०५	संदर्भ १ (ग)	चदिरा	चदिरा
३२०	११	सस्कृत	संस्कृत
३२४	२	सज्ञाए	संज्ञाएं
३२६	२	ससय	संसय
३२६	४	(साम्राज्ञी)	(सम्राज्ञी)
३२९	५	भा	भी
३३०	३	झांझवात	झंझावात
३३०	७	भलें	भूलें
३३१	१६	भमि	भूमि
३३४	९	सख्या	संख्या
३३५	६	है	हैं

३३६	संदर्भ ६ (क)	में	ने
३३८	७	स-अंग	सुअंग
३३८	१०	सस्कृत	संस्कृत
३३८	संदर्भ १	सख	सुख
३४०	संदर्भ ५	अजलि	अंजलि
३४१	१३	कलमल	कलकल
३४२	५	है अर्थ	अर्थ है
३४४	७	दुर्निवार	(आवृत्ति हुई है)
३४५	७	चरणादक	चरणोदक
३४५	१७	सकप	सकप
३४८	सदर्भ ३ (ख)	था	थी
३४९	२	मज्ञाए	सज्ञाए
३४९	९	आश (आ)	आश (शा)
३५१	५	अच्छा	अच्छी
३५१	१४	विन्यम	विन्यास
३५२	संदर्भ १	प०	प०
३५४	६	लिगां	लिगों
३६७	संदर्भ ६ (ख)	हैशासन	है शासन
३६८	५	सस्कृत	संस्कृत
३७४	२	पसद	पसद
३७९	१३	कतराइ	कतराई
३७९	१५	स०	सं०
३८३	संदर्भ ११	तल०	तुल०
३८५	३	सदढाले	मदढाले

३८८	संदर्भ ३	सगीत	संगीत
३९८	सदर्भ ९	अतर	अतर
४०१	१	है	हैं
४०२	१	धृष्ठता	धृष्टता
४०२	संदर्भ १	बन ाया	बनाया
४०२	सदर्भ २	निमत्रण	निमंत्रण
४०४	१	सम्बध	सम्बंध
४०८	२	मंबा	मंशा
४०८	संदर्भ ३	उध	उधर
४०९	१३	अगरेजी	अंगरेजी
४१५	शीर्षक	' डॉ रामधारी सिह दिनकर '	डॉ० रामधारी सिंह ' दिनकर '
४३३	५	चदा	चदा
४३५	संदर्भ ५ (क)	एकध्नी	एकघ्नी
४३५	,, ५ (ख)	एकध्नि	एकघ्नि
४४२	२	फुनगा	फुनगी
४४७	संदर्भ २	सभाव्य	संभाव्य
४४८	२	मचया	मचैया
४४८	३	मनिनि	मानिनि
४४८	६	सौदामनि	सौदामिनि
४४८	संदर्भ ६	भकी	झुकी
४५१	७	हेमंती ' ।	यह शब्द पृष्ठ के आरंभ मे चाहिए ।

४५१	१९	यहा	यहां
४५१	१६	ढूंठ ३	ढूंठ १
४५९	४	क्रियाए	क्रियाएं
४५९	संदर्भ १५	,थे	ये,
४६१	संबर्भ १२ (ख)	विश्वप्रिय	विश्वप्रिया
४६२	संदर्भ ४ (क)	मंजष	मंजूष
४७२	७	घुंघुर	घुघुंर
४७६	सदभ २	हुग	हरी
४७७	सदर्भ ७	उ डा	उमड़ा
४७८	संदर्भ ४	जीम	जीभ
४८५	१०	भाति	भाति
४९०	१	उद्दू	उर्दू
४९०	सदर्भ १	फल	फूल
४९३	४	हर्षो मत्त	हर्षोन्मत्त
४९५	३	खगर	खगर
४९५	५	मालच	मालंच
४९७	१४	बुदकीदार	बुंदकीदार
५०१	संदर्भ ९	चिह्न,	चिह्न
५०३	७	रीति	रीती
५०४	संदर्भ ८	चि	चिह्न
५०६	९	पु०	पुं०
५१७	सदर्भ ३	च द	चाँद
५१८	संदर्भ २	घूप	धूप
५१९	५	चन्द्रमस	चन्द्रमस्

५१९	७	भो	भी
५२०	४	क्रर	क्रूर
५२२	संदर्भ १०	सगीनों	संगीनो
५२३	सदर्भ ७ (क)	हेमत	हेमंत
५२३	सदर्भ ७ (ख)	श्रृतु	ऋतु
५२३	संदर्भ ९	९०९	१०९
५२५	५	चदन	चंदन
५३१	५	स्त्र	स्त्री०
५३१	संदर्भ ४	पे	ये
५४०	७	गहराना	गदराना
५४६	सदर्भ ११	अधी	अधी
५५७	सदर्भ ८	चुनर	चुनरी
५६३	२४	प०	प०
५६५	१९	न व	नत्व
५७०	४	अधला	अंधेला
५७०	२३	फोसू	फोले
५७९	३	अनमोले	पंक्ति के आरंभ में चाहिए
५७९	२१	मुस्तडा	मुस्तंडा
५८२	१२	प्रकटाना या प्रकटान	प्रकटना या प्रकटाना
५८९	१३	स्पदन	स्पदन
५९०	१	म०	मै०
५९९	४	प्रदाप	प्रदीप
६०७	८	प०	पं०

६१४	१२	३८/४३८६	३८४/३८६
६२४	९	५ ३/	५१३
६२४	१४	अ०	अँ०
६२५	१	डूबती	डूबतीं
६३५	८	ग० ४९९	श० ४९६
६३५	९	राती	रीती
६३७	६	वादरी दि २	वानगी दि०
६४०	१०	स्व० प्रभ	स्वप्नप्रभ
६४८	६	स०	स०
६४८	११	१ ७३	१९७३
६५१	४	स० २०१८	सं० २०१२

लेखक का प्रकाशित साहित्य

शोध-पत्र

१. ' आधुनिक हिंदी काव्य में अस्त्र-शस्त्र-औजार और वाद्य-यन्त्र '

— सप्तसिंधु, अक्तूबर सन् १९६५ (पृष्ठ १८-२६)

२. ' अज्ञेय के काव्य में अलंकारों का अनुसंधान '

— सप्तसिंधु, मार्च सन् १९६६ (पृष्ठ ६०-७४)

३. ' कवि नवीन की शब्द-योजना '

— सप्तसिंधु, जुलाई सन् १९६६ (पृष्ठ ४२-७२)

४. ' आधुनिक हिंदी काव्य में जलाशय, पर्वत और रंग '

— सप्तसिंधु, जुलाई सन् १९६७ (पृष्ठ ७९-८६)

५. ' व्यक्तित्व और संस्कृति '

— विश्वज्योति, मई सन् १९६६ (पृष्ठ १०-१२)

६. ' आधुनिक हिंदी कविता मे क्षणवादी दर्शन '

— विश्वज्योति, जुलाई सन् १९६६ (पृष्ठ ३९-४१)

७. ' आधुनिक हिंदी काव्य में वस्त्र '

— ' परिशोध ', पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़ (पृष्ठ ७७-८१)

८. 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी का शब्द-चातुर्य'

— 'परिशोध', पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़ (पृष्ठ २७-४१)

अ·य पुस्तकें

१. आधुनिक हिंदी कवि और वैयक्तिक चेतना

(पी-एच० डी० का शोध-प्रबन्ध) (प्रकाश्य)

२. 'खजुराहो की अग्निपरीक्षा' और अन्य प्रतीकवादी कहानियां (प्रकाश्य)

३. अद्यतन हिंदी कहानिया : एक मूल्यांकन (प्रकाश्य)

पत्रिका में प्रकाशित

मासिक पत्रिका 'कादंबिनी' में सन् १९६६ और १९६७ दो वर्षों तक 'शब्द सामर्थ्य बढ़ाइये' शीर्षक स्थायी स्तंभ के अन्तर्गत आधुनिक हिंदी कवियों द्वारा प्रयुक्त शब्दों के उद्धरण दिए गये ।

१८०

कहानियां

१. **टपका आम** (माया मार्च ' ६८)

२. **मेन लाइन** (नई कहानियां , अप्रैल ' ६८)

३. **रिंगमास्टर** (कथा-भारती, दिसंबर ' ६८)

४. एक कहानी इसी वर्ष ' सुलेखा लघु कहानी प्रतियोगिता ' में पुरस्कृत ।

५. **मनीप्लांट** (शाकंभरी , मार्च ' ६९)

६. **गिद्ध और गिद्ध** (माया , मई ' ६९)

७. **सब नपुंसकों से अच्छा** (रक्ताभ , जून ' ६९)

८. **ट्रांसफ़र** (आरती , जुलाई ' ६९)

९. **विद्वान्** (शाकंभरी , जुलाई ' ६९)

१०. **रिहर्सल** (नई सदी , जुलाई ' ६९)

११. **चांद-सितारे** (कहानी , जुलाई ' ६९)

१२. **डिक्टेटर और डिक्टेटर** (ज्ञानोदय , जुलाई ' ६९)

१३. **फॉसिल** (सारिका , जुलाई ' ६९)

१४. **बोतल भरी हुई** (नीहारिका , अगस्त ' ६९)

DATE DUE

This book is due on the date last stamped. An overdue charge of 10 P. will be charged for each day the book is kept over-time.
